मूलग्रन्थ कर्ता

श्री रविषेणाचार्य विरचित

पद्मपुराण

(हिन्दी जैन रामायण)

प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद

गणिनी आर्यिका 105 श्री चन्द्रमति माताजी

ढुंढाहड़ी भाषा से हिन्दी अनुवाद

आर्यिका 105 श्री दक्षमति माताजी

प्रकाशक

पारस प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशन सहयोगी

श्री भावेश गांधी

पीपावाव शिपयार्ड लि., मुम्बई

ISBN 978-93-80216-02-7

- **प्रकाशक**

  पारस प्रकाशन

  एन-81, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

  फोन 9818394651, 9811374961, 9811011018

- **प्राप्ति स्थल**

  1 श्री जैन साहित्य सदन, लाल मन्दिर, दिल्ली-110006
  फोन 011-23253638, 09311168299

  2 श्री चन्द्र ज्योति दिव्य सस्थान, दिल्ली-110001
  फोन 9810891450

  3 श्री सम्मेद शिखर जी, श्री पद्मपुरा जी, श्री महावीर जी, श्री तिजारा, श्री दिगम्बर जैन अतिशय मन्दिर सघीजी सागानेर, जयपुर मे भी उपलब्ध।

- **न्यौछावर राशि** रु 300/-
- **सस्करण** प्रथम 2009
- **प्रतियाँ** 1,100
- **मुद्रक** पारस एन्टरप्राइजेज, दिल्ली-32

PADAM PURAN (HINDI JAIN RAMAYAN)

AARYIKA 105 SHRI DAKSHMATI MATAJI

समर्पण

परम पूज्य 'गणिनी' आर्यिका
'विदुषी रत्न' धर्म प्रभाविका 'प्रशान्त वाणी'
विद्या वाचस्पति 'रत्नत्रय चंद्रिका'
चारित्र शिरोमणि 105 श्री चन्द्रमती माताजी
के 33वें दीक्षा जयन्ति समारोह
कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा मध्ये
शुभ अवसर समये,
मम ज्ञान वृद्धि प्राप्ति हेतु
माताजी के कर कमलों में
"ग्रन्थराज"
समर्पित।

मंगल भावना

श्री १००८ परम पावन ग्रन्थराज श्रीपद्मपुराणजी

यह ग्रन्थराज प्रथमानुयोग का है, परन्तु प्रसगानुसार अन्य तीन अनुयोगो का भी बहुत ही उत्तम वर्णन किया है।

इस ग्रन्थराज मे 6 महा अधिकार है और सामान्य उत्तर अधिकार 123 है। इनमे चार तीर्थकरो का विशेष वर्णन है। 1 श्रीआदिनाथजी का, 2 श्रीअजितनाथजीका, बीसवे श्रीमुनिसुव्रतनाथजीका, चौबीसवे श्रीमहावीरस्वामीजीका और चार सामान्य केवलीयो की गधकुटी का विशेष वर्णन है। अनतवीर्यस्वामी की कुलभूषण—देशभूषणस्वामी की, सकलभूषणस्वामी की, 4 श्रीरामकेवली की। इस महान ग्रन्थराज मे सौ से अधिक वैराग्य के प्रसग है, उनमे परिणामो की निर्मलता एव सम्यक्त्व प्राप्ति का कारण है। लगभग 21 युगलो के पूर्व भवो का अति सुन्दर कथन है, जैसे राम-लक्ष्मण, रावण-विभीषण, सीता-भामण्डल, बाली-सुग्रीव, शत्रुघ्न-कृतातवक्र, भरत-त्रिलोकमण्डन हाथी, लवणाकुश-मदनाकुश, हस्त-प्रहस्त, नल-नील, इन्द्रजीत-मेघनाद, सूर्यरज-रक्षरज, सहस्ररश्मी-राजा अनरण्य, जनक-कनक आदि। यह ग्रथराज तीन शिक्षाये प्रदान करता है। किसी के साथ शत्रुता अच्छी नहीं जैसे रावण-लक्ष्मण के समान, कभी भी निदानबन्ध नहीं करना, जैसे रावण के समान। और दूसरो की निदा नहीं करना जैसे सीता (गुणवती-वेदवती के समान)। विधीपूर्वक नियम से मौन सहित सात दिन मे इस ग्रन्थराज की स्वाध्याय करने से सात भव मे निर्वाण की प्राप्ति अवश्य ही होती है। यह गुरु परम्परा का एव पद्मपुराण के स्वाध्याय कर्ताओ का कथन है। इस पुराण के अतिम पर्व 123 मे लगभग 31 महान फलो की प्राप्ति का वर्णन है। यह वर्णन पूज्य आचार्य श्री रविषेण महाराज ने स्वय ही बताया है। सम्यक्दर्शनादि रत्नत्रय की प्राप्ति कराकर शीघ्र ही सिद्धपद की प्राप्ति होती है। यह ग्रन्थराज 18501 हजार अनुष्टुप श्लोको मे रचा गया है। उसकी जयपुरी (ढूढाहडी) भाषा वचनिका पडित जी दौलतराम जी ने 22501 श्लोको मे की है।

अनेक भव्य जीवो ने सैकडो बार इस महान ग्रन्थ की स्वाध्याय की है वर्तमान मे कर रहे है, भविष्य मे भी करेगे। उनको महा पुण्य प्राप्त होगा।

अगर जीवन मे किसी भी प्राणी को किसी भी प्रकार से अशाति, रोग, शोक, सकट, कष्ट असाध्य रोग, दरिद्रता, नवग्रहो की बाधा आदि सभी उपसर्ग नष्ट होते है। सन्तानहीन को सन्तान की प्राप्ति अपुत्रवती को पुत्र प्राप्ति, विवाह कामना पूर्ति, धन इच्छुक को धन प्राप्ति, यश की प्राप्ति, जेल से मुक्ति, व्यापार वृद्धि, मनोरथ सिद्धि, परस्पर शत्रुता का नाश, सम्यक्त्व एव वैराग्य की प्राप्ति निर्विघ्न समाधि मरण की प्राप्ति, शुभोपयोग से सातिशय पुण्य की प्राप्ति। इस ग्रथराज की स्वाध्याय करते समय अपूर्व आनन्द एव शाति की प्राप्ति होती है, वह शाति एव आनन्द वचनातीत है। विधिवत् नियम पूर्वक मौन सहित, सात दिन का सप्ताह भावो सहित मन लगाकर जो इस ग्रथराज की स्वाध्याय करता है उसके सभी मन की अभिलाषाये पूर्ण होती है, इसमे कोई सन्देह नहीं। अगर कोई कारण वश सप्ताह मे पूर्ण नहीं कर सकता तो वह, 9, 11, 13, 15, 17, 19, 21, 25 एव 31 दिनो मे स्वाध्याय कार्य सिद्धि के लिये पूर्ण कर सकता है।

इस ग्रथराज की दूढारी भाषा से हिन्दी करने का एक ही उद्देश्य है कि इस ढुंढारी भाषा को समझना बाल गोपालो को एव नई युवा पीढी को अति कठिन था, कई लोगो की माग थी कि माता जी इस ग्रथराज की प्रचलित शुद्ध हिन्दी हो जाये तो हम सबको स्वाध्याय करने का विशेष लाभ होगा। इसलिये मेरी इच्छा हुई कि यह ग्रथराज ढुढारी भाषा का इसको हिन्दी भाषा मे परिवर्तन करले, परम पूज्य विदूषी रत्न, गणिनी आर्यिका 105 श्री चन्द्रमती माताजी का मगल आशीर्वाद एव लेखन कार्य का पूर्ण सहयोग रहा।

अमूल्य समय का सदोपयोग करते हुये स्वाध्याय प्रेमी श्री मान रजन कुमार जैन दिल्ली (रेलवे डायरेक्टर) ने इस ग्रथ के सपादन का कार्य किया। एव ग्रन्थराज के लिये द्रव्यराशी की प्रेरणा का कार्य भी उन्हीं के द्वारा हुआ है। ऐसे स्वाध्याय प्रेमी, गुरु भक्त श्री मान रजन कुमार जी जैन, समय के अभाव मे भी, उन्होने समय निकालकर रूची पूर्वक "पद्मपुराण का सयोजन आदि सभी कार्य अपने हाथ मे लिया, ऐसे सज्जन पुरुष, धर्म प्रेमी, हमारे परम भक्त रजन कुमार जी को एव उनके परिवार को हमारा मगल मगल महा आशीर्वाद है कि आपकी स्वाध्याय रूपी वाचना से ज्ञान वृद्धि हो और आपके सभी मनो कामनाये शीघ्रता शीघ्र पूर्ण होकर आपका जीवन सुखमय हो। जिन्होने इस चचला लक्ष्मी का इस ग्रथराज के लिये सदुपयोग किया उनको हमारा बहुत-बहुत मगलमय आशीर्वाद वे धन्यवाद के पात्र है।

जो भव्य जीव श्री पद्मपुराण इस ग्रथराज की स्वाध्याय करेगे उनको अपूर्व पुण्य की प्राप्ति होगी एव पारस प्रकाशन परिवार को हमारा मगल आशीर्वाद जिन्होने इस ग्रन्थराज को जिस समर्पण और श्रद्धा भाव से अल्प समय मे प्रकाशित किया है उससे हमारा हृदय प्रमुदित हुआ है।

मैने देव शास्त्र, गुरु की भक्ति से स्वाध्याय प्रेमी भव्यात्माओ की मगल भावनाओ का आदर करते हुये यह हिन्दी भाषा का कार्य किया। इसमे कहीं प्रमाद के वश अल्प बुद्धि से अशुद्धि रह गई हो तो विद्वान लोग मुझे क्षमा करते हुये सुधार कर पढे। और मै श्री 1008 चन्द्रप्रभु भगवान से यही प्रार्थना करती हूँ कि पूज्य गणिनी आर्यिका चन्द्रमती माताजी का एव मेरा स्वास्थ निरोग रहे और मै इसी प्रकार जिनवाणी की भक्ति करती रहूँ।

गुरूवर्य-परम पूज्य आचार्य रत्न 108 श्री अजितसागर जी महाराज के चरणो मे एव जिनवाणी माता को बारम्बार नमोस्तु आपकी सेवा से मुझे केवलज्ञान (आरोग्य ज्ञान) की प्राप्ति हो।

चन्द्रप्रभु भगवान के चरणो मे कोटी कोटी नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु
शत शत बार नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु

एव शिक्षा गुरु परम पूज्य गणिनी आर्यिका 105 श्री चन्द्रमती माता जी के चरणो मे त्रिवार वन्दामि वन्दामि वन्दामि

जिन जिन भव्यात्माओ का प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप मे हर प्रकार से सहयोग है उन सभी को हमारा आशीर्वाद है।

गुडगावॉ
04-10-09

आर्यिका
105 दक्षमती
सघस्थ—पूज्य गणिनी आर्यिका 105 श्री चन्द्रमती माताजी

— : मंगल आशीर्वाद : —

इस पद्मपुराण में भगवान राम का पूर्ण चरित्र कहा है। यह भगवान तीर्थंकर के मुख से निकली हुई दिव्यवाणी जो की गणधरों ने ग्रहण किया, आज इस पंचम काल मे साक्षात केवली भगवान इस भरत क्षेत्र में नहीं है, फिर भी भगवान की वाणी साक्षात मौजूद है।

यह रविषेणाचार्य का लिखा हुआ पद्मपुराण महा अतिशय कारि पुण्य प्राप्ति का साधन है। मानव को सर्व कार्य की सिद्धि का उपाय है। यह पुराण ढुंढारी भाषा से हिन्दी भाषा में आर्यिका श्री दक्षमती माताजी ने हमारी प्रेरणा से किया। क्यों कि संसारी प्राणी संसार के दुखो से घबरा कर माताजी के पास आते तब माताजी उनको पद्मपुराण का सप्ताह करने को कहते हैं। तब वे कहते की माता जी यह भाषा हमें समझ मे नहीं आती, तब हमारी इच्छा हुई की माता जी आप इस पद्मपुराण की शुद्ध सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद करलो। तब माताजी ने आज्ञा का पालन करते हुये ढुंढारी भाषा से हिन्दी अनुवाद किया। आगे आने वाली नई पीढ़ी के लिये, यह पद्मपुराण महा पुण्य का साधन बने। इसीलिये आर्यिका दक्षमती माताजी को हमारा मंगलमय आशीर्वाद।

इस पद्मपुराण के प्रकाशन में श्री रंजनकुमार जी जैन (रेलवे डायरेक्टर) दिल्ली वालों का पूर्ण सहयोग अथवा सच्ची लगन से अपना अमूल्य समय निकाल कर सर्व सहयोग रूप कार्य किया, अतः उनको ज्ञान एवं पुण्य की वृद्धि हो यही हमारा मंगल मय आशीर्वाद। जिन दातारों ने अपनी चांचला लक्ष्मी का सदुपयोग किया, उनको और पद्मपुराण की स्वाध्याय करने वाले भक्तों को हमारा मंगल मय शुभाशीर्वाद।

(गणिनी आर्यिका चन्द्रमती)

अपनी बात

आचार्य रविषेण नित्य जयवत है। जिन्होने द्वदाशग श्रुत रूपी सागर से मथन करके यह रत्न निकाला है। आचार्य ने इस पद्मपुराण मे, पुराण पुरुषो का चारित्र एव तीर्थकरो के चारित्र के साथ-साथ करनानुयोग और चरणानुयोग के सिद्धात को भी प्रकाशित किया है। यह शास्त्र गृहस्थ श्रावको और मुनि धर्म पालन करने वालो के लिये अध्यात्म का मूल है। यह स्वानुभव की प्राप्ति मे सहायक है। यह भव्य जीवो को ससार रूपी समुद्र से उद्धार करने के लिए अवलम्बन है।

तीर्थकर महावीर और गोतम गणधर के बाद की उत्तरवर्त्ती आचार्यो की विशाल परम्परा मे अनेक महान आचार्यो का नाम श्रद्धापूर्वक लिया जाता है। इस परम्परा मे रविषेण आचार्य, जिनसेन आचार्य के पूर्ववर्त्ती आचार्यो मे एक महान अध्यात्मिक चितन वाले विद्वान हुए। आचार्य जिनसेन ने आचार्य रविषेण को स्मरण करते हुए इनकी प्रशसा की है। पद्मपुराण की श्रुतिसुखद और हृदयहारी रचना कर आपने राम कथा को अपने ढग से समाज के समक्ष उपस्थित किया है। आप विक्रम की आठवीं सती के मध्यवर्ती विद्वान थे। आपने पद्मपुराण की रचना वि स 733 मे पूर्ण की है।

इस ग्रथ की टीका प दौलत राम जी ने लगभग वि स 1829 मे की थी। इसकी भाषा क्षेत्रीय हिंदी है। जो आज कल उपयोग मे आने वाली हिंदी भाषा से भिन्न है। अत इस शास्त्र के स्वाध्याय का लाभ आज की पीढी के लोग पूर्ण रूप से नहीं उठा पा रहे है। आज के युग मे जब जैन दर्शन के गूढ और सूक्ष्म सिद्धातो को समझने वाले लोगो की सख्या घटती जा रही है, पद्मपुराण, धर्म के सिद्धातो को सरलता पूर्वक महापुरुषो क चारित्र की कथाओ के द्वारा हृदय मे उतारने के लिए सबल एव सक्षम ग्रथ हे

गणिनी आर्यिका 105 श्री चन्द्रमती माता जी एव मार्गदर्शिका आर्यिका 105 श्री दक्षमती माता जी ने श्रावको के अनुरोध पर इस पुराण की टीका सरल हिन्दी मे करने का अनुपम कार्य अपनी लेखनी से सतत परिश्रम द्वारा क्रियन्वित किया। आर्यिका युगल, परम पूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्य 108 श्री शाति सागर जी महाराज की परम्परा मे आचार्य कल्प 108 श्री सन्मतिसागर जी महाराज और आचार्य 108 श्री अजित सागर जी महाराज से दीक्षित है। इनको आगम का अनूठा और गहन ज्ञान ह। इनके सान्धिय मे जो भी श्रावक गण आये वे श्रुतज्ञान से प्रकाशित भी हुए और प्रभावित भी हुए। पद्मपुराण की इस नई रचना से लाखों जिनधर्म के प्रेमी लाभान्वित होगे और मोक्षमार्ग पर अग्रसर होगे। यह माताजी का समस्त जैन समाज पर असीम अनुग्रह है। इस पुराण के प्रकाशन मे श्री भावेश गाधी, वाइस चेयरमेन, पीपावाव शिपयार्ड लिमिटेड ने आर्थिक सहयोग प्रदान किया। इस कार्य से उन्होने ज्ञान दान एव शास्त्र दान देकर महान पुण्य अर्जित किया। उनको हमारी ओर से साधुवाद।

सभी जीव इस पुराण की स्वाध्याय कर कर्म क्षय के लिये सम्यक्त्व को ग्रहण करे।

-रजन कुमार जैन

प्रस्तावना

पद्मपुराणका रचना-काल

सस्कृत पद्मचरितकी रचना भ महावीरके निर्वाणसे 1230 वर्ष बाद हुई है । यदि वीर नि से 470 वर्ष बाद विक्रम सवत का प्रारम्भ माना जाये तो पद्मपुराणका रचनाकाल विक्रम स 734 मे समझना चाहिये।

पद्मपुराणके रचयिता आचार्य रविषेण

सस्कृत पद्मपुराणके रचयिता आचार्य रविषेण हैं प्रस्तुत पदमपुराणका स्वाध्याय करने पर पता चलता है कि रविषेणाचार्य को प्रथमानुयोग–सम्बन्धी कथा–साहित्यका कितना विशाल ज्ञान था। उन्होने अपने इस ग्रन्थमे सहस्त्रो उपकथाए निबद्ध की हैं। इसके अतिरिक्त चरणानुयोग करणानुयोग और द्रव्यानुयोग–सम्बन्धी ज्ञान भी अत्यन्त बढा–चढा था जिसका पता हमे उनके कथानकोके बीच–बीच दिए गए स्वर्ग–नरकादिके वर्णन द्वीप–समुद्रोके चित्रण आर्य–अनार्योके आचार–विचार रात्रि–भोजनादि और पुण्य–पापके फलादिसे चलता है। शान्त और करुण रसका तो इतना सुन्दर चित्रण शायद ही अन्यत्र देखनेको मिलेगा। सीताके हरे जानेके पश्चात रामकी दयनीय दशाका लकाके उपवनमे और देश–निष्कासनके पश्चात् वनमे छोड दिए जाने पर तथा अग्निकुण्डकी परीक्षा मे उत्तीर्ण होनेके बाद वर्णन तो अलौकिक चमत्कारपूर्ण हैं उन्हे पढते हुए एक बार ऑखो से ऑसुओ की धारा बहने लगती है और हम जब लक्ष्मणके दिवगत होने पर रामकी दशाको देखते है उनके अकृत्रिम और लोकोत्तर भ्रातृप्रेमको पढते है तो उस समयका वर्णन करना हमारे लिये असभवसा हो जाता है। सक्षेपमे कहा जाये तो इस पदमपुराणो हम सभी रसोका यथास्थान सन्निवेश मिलेगा पर इसमे प्रधानता करुण और शान्त रसकी ही है।

रामका व्यक्तित्व

यद्यपि पदमचरित या पदमपुराण नाम होनेसे इसमे मुख्यत श्री रामका चरित्र चित्रण है पर उनकी जीवन–सहचरी होनेके नाते सारे राम–चरित्रमे सीता सर्वत व्याप्त है। सीताके पिताकी सहायता करनेके कारण ही राम सर्वप्रथम सिह–तनय या वीर–पुत्रके रूप मे लोगो के सामने आये। सीता के स्वयवर द्वारा रामके पराक्रमका यश सर्वत्र फैला। रावणपर विजय पानेके कारण वे जगत्प्रसिद्ध महापुरुषके रूप मे विख्यात हुए। इसके बाद लोकापवादके कारण सीताका परित्याग करनेसे तो वे इतने अधिक प्रकाशमे आए कि आज हजारो वर्षों के बाद भी लोग राम–राज्यकी याद करते है। जब लोकापवादकी चर्चा रामके सामने आई–तो वे विचारते हैं कि–

जिस सीताको क्षणमात्र भी देख बिना मैं विरहसे आकुल–व्याकुल हो जाता हूँ उस अनुरक्त प्राणप्यारी सीताका मै कैसे परित्याग करू? जो मेरे नयन और मानसपर सदा अवस्थित है गुणोकी राजधानी है सर्वथा निर्दोष है, उस प्यारी जानकीको मै कैसे तजू?

एक ओर लोकापवाद सामने खडा है और एक ओर निर्दोष प्राण–प्रियाका दु सह वियोग? कितनी विकट स्थिति हे राम अत्यन्त असमजसमे पड जाते है कुछ समयके लिये किकर्त्तव्यविमूढ होकर सोचते है एक ओर जनापवाद और एक ओर दुस्त्यज स्नेह। अहो मै दोनोकी द्विविधामे पडा हुआ गहन वनके मध्य फैक दिया गया हूँ। जो सीता देवागनाओ से भी सर्व प्रकार श्रेष्ठ है सती साध्वी है मेरे प्राणोके साथ एकत्वको प्राप्त हो रही है उस सीताको मै कैसे तजू?

परन्तु लोगोमे फैले हुए अपवादको दूर करनेके लिए अपनी प्राणोसे भी प्यारी वस्तु सीताका यदि मै परित्याग नही कर सकता तो मेरेसे बडा और कौन कृपण होगा। कितना यथार्थ चित्रण है रामकी मानसिक दशाका।

अर्थात्–एक ओर जिनका चित्त गाढ स्नेहसे वशीकृत है और दूसरी ओर लोकापवादसे जिनका हृदय व्याकुल है ऐसे स्नेह और अपवादसे व्याप्त चित्त रामका वह समय अत्यन्त कष्टप्रद था जिसकी उपमा अन्यत्र मिल नहीं सकती है।

इस स्थितिमे सीताका परित्याग रामके लिये सचमुच महान् त्यागका आदर्श उपस्थित करता है। यह एक ऐसी घटना है कि जिससे राम सच्चे राम बने और कल्पान्त–स्थायी उनका यश आज भी दिग्दिगन्त–व्यापी है। यदि उनके जीवनमे यह घटना न घटती तो लोग राम–राज्यकी याद भी इस प्रकार न करते।

सीताका आदर्श

जिस सम्यग्दर्शन के प्रभावसे भव्य जीव घोर ससार–सागरसे पार उतरते है हे राम आप उस सम्यग्दर्शनकी भलीभॉति आराधना करना। हे पद्माभ–पद्म वह सम्यग्दर्शन साम्राज्यसे भी बढकर है। राज्य तो नष्ट हो जाता है, पर वह सम्यग्दर्शन स्थायी अविनश्वर सुखको देता है। सो हे पुरुषोत्तम राम ऐसे सम्यग्दर्शनको तुम किसी अभव्य पुरुषके द्वारा निन्दा किये जाने पर छोड मत देना–जैसा कि लोकापवादके भयसे मुझे छोड दिया है!!!

कितना मार्मिक सन्देश है। धन्य सीते धन्य? जो तू इतनी बडी विपत्तिमे पडनेपर भी अपने प्रियको इतना दिव्य सन्देश दे रही है। सचमुच मे तू सती–शिरोमणि और पतिव्रताओमे अग्रणी है।

इसके बाद हम सीताके अतुल धैर्यको उस समय देखते हैं जब भामडलादि जाकर पुडरीक नगरसे सीताको अयोध्या लाते हैं सीताके रामके पास भरी सभा मे सामने जाती है चिर–वियोगके बाद पति–मिलनकी आशाए हृदय मे हिलोरे भर रही हैं ऐसे समयमे राम कहते हैं–

सीते सामने क्यो खडी है यहॉ से हट जा मैं तुझे नहीं देखना चाहता।

सैकडो वर्षों के बाद और प्रियजनोके द्वारा अत्यन्त स्नेहपूर्ण आग्रहके साथ लाई जाने पर भी सीताने जब रामके ये वचन सुने होगे तो पाठक स्वय ही सोच उसकी उस समय क्या दशा हुई होगी?

अन्तमे अपनेको सभालकर और किसी प्रकार शक्ति बटोरकर सीताने रामसे कहा–हे नाथ यदि तुम्हे छोडना ही था तो आर्यिकाओके पास क्यो नहीं छुडवा दिया। दोहलाके पूरा करनेका बहना क्यो किया क्या मेरे साथ भी तुम्हे यह मायाचार करना चाहिये था? तब राम निरुत्तर हो जाते है और कहते है–

हे देवि मैं तेरे निर्दोष शीलव्रतको भले प्रकार जानता हूँ, तुम्हारे भावो की विशुद्धता और मेरे अनुकूल पतिव्रत्यको भी खूब जानता हूँ, पर क्या करूँ तुम लोकापवादको प्राप्त हुई प्रजा स्वभावसे ही कुटिल चित्त होती है उसे विश्वास पैदा करानेके लिये ऐसा करना पडा है।

अन्तमे सीता कहती है कि लोकमे सत्यकी परीक्षाके जितने प्रकार है मै उन्हे करनेके लिये तैयार हूँ। आप कहे तो मैं कालकूट विषका पान करूँ आप कहे तो मै आशीविष सर्पके मुखमे हाथ डालू, और यदि कहे तो प्रज्वलित अग्निकी ज्वालामे प्रवेश करू आप हर प्रकारसे मेरे शीलकी परीक्षा कर सकते हैं पर इस प्रकार मेरा परित्याग समुचित नही। तब राम क्षण–एक चुप रहकर कहते हैं कि तू अग्निकुडमे प्रवेशकर अपने शीलकी परीक्षा दे। तब सीता अति हर्षित होकर अपनी स्वीकृति देती है। रामकी आज्ञानुसार तीन सौ हाथ लम्बा चौडा चौकोन अग्निकुड तैयार किया गया और चारो ओर से उसमे अग्नि लगा दी गई। सहस्त्रो नर–नारी सीताका सत्य देखनेके लिये एकत्रित हुए। अग्निकुड के चारो ओर से प्रज्वलित हो जानेपर सीता अपने शीलकी परीक्षा देनेके लिऐ उद्यत हुई। लोगो मे हाहाकार मच गया। नाना मुखोसे नाना प्रकारकी बाते होने लगी। उस समय सीता परमेश्वरका ध्यान करके कहती है

यदि मैंने मन–वचन–कायसे जागते हुये या स्वप्नमे भी रामचन्द्रको छोडकर अन्य पुरुषका चिन्तवन भी किया हो तो यह अग्नि मेरे शरीरको क्षण भरमे भस्म कर डाले। हे भगवान मेरे भले–बुरे कार्यों के विषयमे तुम्हीं साक्षी हो।

ऐसा कहकर सीताने अग्निकुडमे प्रवेश किया। उसके बाद जो कुछ हुआ सो सर्व विदित है। इसमे कोई सन्देह नही कि जो मनसा वाचा कर्मणा शुद्ध शीलके धारक है उन्हे ससारका कोई बडे से बडा भी भय विचलित नहीं कर सकता।

धन यौवन जीतव्य सब अस्थिर हैं। जो इनकू अस्थिर जान सर्व परिग्रह त्यागकर आत्मकल्याण करे सो भवसागरमे न डूबे अर विषयाभिलाषी जीव भवविषै कष्ट सहे। हजारो शास्त्र पढे अर शान्तता न उपजी तो क्या? अर एक ही पद कर शान्त दशा होय तो प्रशसा योग्य है। जो नाना प्रकार के अशुभ उद्यम कर व्याकुल हैं उनकी आयु वृथा जाय है जैसे हथेली मे आया रत्न चला जाता। ऐसा जान समस्त लौकिक निरर्थक मान दु खरूप इन्द्रियो के सुख तिनकू तब कर परलोक सुधारवेके अर्थ जिनशासनमे श्रद्धा करे।

दोषसे कोई अशुद्धि रह गई हो तो उसे पाठकगण शुद्ध कर पढनेका प्रयत्न करेगे और साथ ही हमे भी सूचित करेगे जिससे कि आगामी सस्करणमे उन्हे सुधारा जा सके।

अनुक्रम

मंगलाचरण

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ जय जय जय नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ओंकारं बिन्दुसंयुक्त नित्यं ध्यायन्ति योगिन.।
कामदं मोक्षद चैव ओंकाराय नमो नमः।।१।।

अविरल-शब्दघनौघ-प्रक्षालित-सकलभूतल-कलङ्का।
मुनिभि-रुपासित-तीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितम्।।
अज्ञान-तिमिराधानां ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।२।।

श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नम. सकलकलुष विध्वसक, श्रेयसा परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं भव्य जीवमनः प्रतिबोध-कारकमिद शास्त्र श्री पद्मपुराण नामधेयं, अस्य मूलग्रन्थकर्तार· श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तर-ग्रन्थकर्तारः श्रीगणधर-देवा· प्रतिगणधरदेवास्तेषा वचोऽनुसार मासाद्य श्री (आचार्य का नाम) आचार्येण विरचित, श्रोतारः सावधानतया श्रृण्वन्तु।

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गोतमो गणी।
मंगल कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्।
सर्व मङ्गल्य-माङ्गल्यं सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणा जैनं जयतु शासनम्।।

नोट—शास्त्रजी को विनयपूर्वक चौकी पर विराजमान करके मंगलाचरण बोलकर पढना चाहिये। बाद में जिनवाणी स्तुति विनयपूर्वक बोलकर पीछे विराजमान करना चाहिये।

卐 श्री 1008 चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय नमः 卐

पद्म-पुराण-भाषा

(ढुंढारी भाषाकार-स्वर्गीय पण्डित दौलतरामजी)

हिन्दी भाषाकार आर्यिका दक्षमती माताजी

पर्व-1

।। मंगलाचरण ।।

दोहा- चिदानद चैतन्यके, गुण अनन्त उरधार।
भाषा पद्मपुराणकी, भाषूं श्रुति अनुसार।।1।।
पच परमपद पद प्रणमि, प्रणमि जिनेश्वर वानि।
नमि जिन प्रतिमा जिनभवन, जिन मारग उरआनि।।2।।
ऋषभ अजित सभव प्रणमि, नमि अभिनन्दनदेव।
सुमति जु पद्म सुपार्श्व नमि, करि चन्दाप्रभु सेव।।3।।
पुष्पदत शीतल प्रणमि, श्रीश्रेयासको ध्याय।
वासुपूज्य विमलेश नमि, नमि अनंतके पाय।।4।।
धर्म शांति जिन कुन्थु नमि, अर मल्लि यश गाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि नमि, नमि पारसके पाय।।5।।
वर्द्धमान वरवीर नमि, सुरगुरुवर मुनि बंद।
सकल जिनंद मुनिंद्र नमि, जैनधर्म अभिनन्द।।6।।
निर्वाणादि अतीत जिन, नमों नाथ चौबीस।
महापद्म परमुख प्रभू, चौबीसो जगदीश।।7।।

होंगे तिनको बंदिकर, द्वादशाग उरलाय।
सीमंधर आदिक नमूं, दश दूने जिनराय।।8।।
विहरमान भगवान ये, क्षेत्र विदेह मझारि।
पूजैं जिनको सुरपति, नागपति निरधार।।9।।
द्वीप अढाईके विषैं, भये जिनेन्द्र अनंत।
होगे केवलज्ञानमय, नाथ अनन्तानन्त।।10।।
सबको बंदन कर सदा, गणधर मुनिवर धाय।
केवलि श्रुतिकेवलि नमू, आचारज उवझाय।।11।।
बंदू शुद्ध स्वभावको, धर सिद्धनको ध्यान।
संतनको परणामकर, नमि दृग व्रत निज ज्ञान।।12।।
शिवपुर दायक सुगुरु नमि, सिद्धलोक यश गाय।
केवलदर्शन ज्ञानको पूजू मन वच काय।।13।।
यथाख्यात चारित्र अरू, क्षपकश्रेणि गुण ध्याय।
धर्म शुक्ल निज ध्यानको, बदू भाव लगाय।।14।।
उपशम वेदक ज्ञायिका, सम्यग्दर्शन सार।
कर वदन समभावको, पूजू पचाचार।।15।।
मूलोत्तर गुण मुनिनके, पच महाव्रत आदि।
पच समिति और गुप्तित्रय, ये शिवमूल अनादि।।16।।
अनित्य आदिक भावना, सेऊ चित्त लगाय।
अध्यात्म आगम नमूं, शातिभाव उरलाय।।17।।
अनुप्रेक्षा द्वादश महा, चितवे श्रीजिनराय।
तिनकी स्तुति करि भावसो, षोडश कारण ध्याय।।19।।
दशलक्षणमय धर्मकी, धर सरधा मन माहि।
जीवदया सत शील, तप, जिनकर पाप नसाहिं।।19।।
तीर्थकर भगवानके, पूजू पच कल्याण।
और केवलनिको नमू, केवल अरू निर्वाण।।20।।
श्रीजिन तीर्थ क्षेत्र नमि, प्रणमि उभय विधि धर्म।
थुतिकर चहुं विधि सघकी, तजकर मिथ्याभर्म।।21।।

बंदूं गौतम स्वामिके, चरण कमल सुखदाय।
बंदूं धर्म मुनीन्द्रको, जम्बूकेवलि ध्याय।।22।।
भद्रबाहुको कर प्रणमि, भद्रभाव उरलाय।
बंदू समाधि सुतंत्रको, ज्ञानतने गुण गाय।।23।।
महा धवल अरू जयधवल, तथा धवल जिनग्रन्थ।
बदूं तन मन वचन कर, जे शिवपुरके पंथ।।24।।
षट्पाहुड नाटक जुत्रय, तत्वारथ सूत्रादि।
तिनको बंदू भाव कर, हरैं दोष रागादि।।25।।
गोमटसार अगाधि श्रुत, लब्धिसार जगसार।
क्षपणसार भवतार है, योगसार रस धार।।26।।
ज्ञानार्णव है ज्ञानमय, नमूं ध्यानका मूल।
पद्मनदिपच्चीसिका, करे कर्म उन्मूल।।27।।
यत्नाचार विचार नमि, नमूं श्रावकाचार।
द्रव्यसग्रह नयचक्र पुनि, नमू शांति रसधार।।28।।
आदिपुराणादिक सबै, जैन पुराण बखान।
बदू मन वच काय कर, दायक पद निर्वाण।।29।।
तत्वसार आराधना-सार महारस धार।
परमातमपरकाशको, पूजू बारम्बार।।30।।
बदू विशाखाचार्यवर, अनुभवके गुण गाय।
कुन्दकुन्द पदधोक दे, कहूँ कथा सुखदाय।।31।।
कुमुदचंद्र अकलक नमि, नेमिचन्द्र गुण ध्याय।
पात्रकेशरीको प्रणमि, समंतभद्र यश गाय।।32।।
अमृतचन्द्र यतिचन्द्रको, उमास्वामिको बद।
पूज्यपादको कर, प्रणमि पूजादिक अभिनंद।।33।।
ब्रह्मचर्यव्रत बंदिके, दानादिक उर लाय।
श्रीयोगीन्द्र मुनीन्द्रको, बंदू मन वच काय।।34।।
बदूं मुनि शुभचंदको, देवसेनको पूज।
करि बदन जिनसेनको, जिनके सम नहिं दूज।।35।।

पद्मपुराण निधानको, हाथ जोडि सिर नाय।
ताकी भाषा वचनिका, भाषू सब सुखदाय।।36।।
पद्म नाम बलभद्रका, रामचन्द्र बलभद्र।
भये आठवे, धार नर, धारक श्री जिनमुद्र।।37।।
ता पीछे मुनिसुव्रतके, प्रगटे अतिगुणधाम।
सुरनरवंदित धर्ममय, दशरथके सुत राम।।38।।
शिवगामी नामी महा,-ज्ञानी करुणावत।
न्यायवंत बलवंत अति, कर्महरण जयवत।।39।।
जिनके लक्ष्मण वीर हरि, महाबलि गुणवन्त।
भ्रातभक्त अनुरक्त अति, जैनधर्म यशवत।।40।।
चन्द सूर्यसे वीर ये, हरै सदा पर पीर।
कथा तिनोकी शुभ महा, भाषी गौतम धीर।।41।।
सुनी सबै श्रेणिक नृपति, धर सरधा मन माहिं।
सो भाषी रविषेणने, यामे सशय नाहि।।42।।
महा सती सीता शुभा, रामचन्द्रकी नारि।
भरत शत्रुघ्न अनुज है, यही बात उर धारि।।43।।
तद्भव शिवगामी भरत, अरु लव-अकुश पूत।
मुक्त भये मुनिवरत धरि, नमै तिने पुरहूत।।44।।
रामचन्द्रको करि प्रणमि, नमि रविषेण ऋषीश।
रामकथा भाषू यथा, नमि जिन श्रुति मुनिईश।।45।।

(मूलग्रथकार का मगलाचरण)

सिद्ध सम्पूर्ण भव्यार्थ-सिद्धे कारणमुत्तमम्।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्रति पादनम्।।1।।
सुरेन्द्र मुकुटाश्लिष्ट-पाद पद्माशु-केसरम्।
प्रणमामि महावीर, लोक त्रितय मगलम्।।2।।

सिद्ध परमेष्ठी कृत कृत्य है और सम्पूर्ण हुये है सुन्दर अर्थ जिनके अथवा भव्य जीवों के सर्वकार्य पूर्ण करते हैं, आप उत्तम अर्थात् मुक्त हैं और भव्य जीवों

को मुक्ति प्राप्त कराने में कारण हैं। प्रशंसा योग्य दर्शन, ज्ञान चारित्र का प्रकाश करने वाले हैं। देवो के मुकुटों से पूज्य हैं किरण रूपी केसर से युक्त चरण कमल जिनके, ऐसे भगवान महावीर तीन लोक के प्राणियो को मंगल रूप हैं, उनको हम नमस्कार करते हैं।

भावार्थ—सिद्ध कैसे हैं? मुक्त है। अर्थात् सर्व बाधा रहित उपमा रहित अनुपम अविनाशी सुख की प्राप्ति के कारण श्री महावीर स्वामी—काम, क्रोध, मान, मद, माया, मत्सर, लोभ, अहंकार, पाखण्ड, दुर्जनता, क्षुधा, तृषा, व्याधि, वेदना, जरा, भय, रोग, शोक, हर्ष, जन्म, मरणादि से रहित—अविनश्वर हैं। द्रव्यार्थिक नय से आदि और अन्त नहीं है। अछेद्य, अभेद्य, क्लेश व शोक रहित, सर्वव्यापी, सर्व सम्मुख, सर्व विद्या के ईश्वर है। यह उपमा अन्य देवों में नहीं है, जो मीमासक, साख्य, नैयायिक, वैशेषिक, बौद्धादिक मत है उनके कर्ता जैमिनि, कपिल, काणभिक्ष, अक्षपाद, कणाद और बुद्ध हैं। वे मुक्ति के कारण नहीं है। जटा, मृगछाला, वस्त्र, अस्त्र, शस्त्र, स्त्री, रुद्राक्ष और कपालमाला के धारी है, जीवो को मार काट करते हैं और विरुद्ध अर्थ का कथन करने वाले है। मीमासक तो धर्म का अहिसा लक्षण बताकर भी हिंसा का कार्य करते है। सांख्य मत मे आत्मा को अकर्ता और निर्गुण भोक्ता मानते है, प्रकृति को ही कर्ता मानते है और नैयायिक वैशेषिक आत्मा को ज्ञान रहित जड मानते है, जगत के कर्ता ईश्वर मानते हैं। बौद्ध क्षणभगुर मानते हैं। शून्यवादी शून्य मानते है। वेदान्तवादी एक ही आत्मा को तीन लोक मे रहने वाले नर, नारक, देव, तिर्यच, मोक्ष, सुख, दु खादि अवस्था मे मानते हैं। इसीलिये यह सब मत मुक्ति के कारण नहीं है। मोक्ष का कारण एक जिनशासन ही हैं, जो सब जीव मात्र का मित्र है। और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त कराने वाला है ऐसे जिनशासन को श्री वीतराग प्रभु ने प्राप्त कर दिखाया है। कैसे है श्री वर्द्धमान वीतराग प्रभु? सिद्ध है, जीवन मुक्त है, सर्व अर्थ से पूर्ण हैं, मोक्ष के कारण हैं, सर्वोत्तम हैं और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र को प्राप्त कराने वाले हैं। इन्द्रों के मुकुट से स्पर्श हैं, प्रभु के चरण ऐसे श्रीमहावीर, वर्द्धमान, सन्मति अन्तिम तीर्थंकर को नमस्कार करता हूँ। तीन लोक के सब प्राणियों के लिये महामंगल रूप हैं, महायोगीश्वर है, मोहरूपी शत्रु को जीत लिया हैं, अनन्तबल के धारी है, ससार में भ्रमण करते हुए जीवों को सन्मार्ग दिखाते हैं। शिव, विष्णु, दामोदर, त्र्यम्बक, चतुर्मुख, बुद्ध, ब्रह्मा, हरि, शंकर, रुद्र, नारायण, भास्कर, परममूर्ति इत्यादि भगवान महावीर के

अनेकनाम हैं, ऐसे श्रीवीरप्रभु का यह शास्त्र उसके आदि में महामगल के कारण और सर्व विघ्नों को नाश करने मे जो निमित्त हैं उनको मैं मन, वचन, काय से नमस्कार करता हूँ। इस अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव प्रभु सर्व योगीश्वरो के नाथ, सर्व विद्या के निधान ऐसे स्वयभू भगवान को हमारा नमस्कार हो। आपकी कृपा से अनेक भव्यजीव ससार से तिरते है। बाह्य और अभ्यंतर शत्रु को जीत लिया है ऐसे अजितनाथ स्वामी हमारे रागादि दूर करते हैं। तीसरे संभवनाथ भगवान जीवन को सुख मय बनाते है। चौथे अभिनन्दन स्वामी आनन्द को देते हैं। पांचवे सुमतिनाथ स्वामी मिथ्यात्व के नाशक सुमति को देने वाले हैं। छट्ठे पद्मप्रभु स्वामी निकलते हुये सूर्य की किरणो के समान प्रभा से युक्त है। सातवें सुपार्श्वनाथ स्वामी सर्वज्ञ देव सबके हृदय कमल में ही है। आठवे चदाप्रभु भगवान् शरद की पूर्णिमा के, चन्द्रमा समान प्रभा से युक्त हमारे ससार का नाश करे। कुद के पुष्प समान श्वेत दात है ऐसे पुष्पदत भगवान जगत के ईश्वर है। दशवें शीतलनाथ स्वामी शुक्लध्यान के दाता-हमारे क्रोधादि नष्ट करो। सब जीवो को कल्याण के कर्ता, धर्मोपदेशक ग्यारहवे श्रेयासनाथ स्वामी हमको परम आनन्द दें। देवो से पूज्य, सन्तो के ईश्वर, कर्म शत्रु को जीतने वाले बारहवे वासुपूज्य स्वामी हमको मोक्ष स्थान दे। ससार के मूल, रागादि मल से रहित तेरहवे विमलनाथ देव हमारे कर्म कलक हरो। अनन्तज्ञान के धारक चौदहवे श्रीअनन्तनाथ स्वामी हमको अनन्तज्ञान की प्राप्ति कराये। धर्म के धारक पंद्रहवे श्रीधर्मनाथ स्वामी हमारे अधर्म दूर कर परमधर्म की प्राप्ति कराये। ज्ञानावरणादि शत्रु को जीतने वाले श्रीशान्तिनाथ स्वामी परमशात हमको शान्ति प्राप्त कराये। कुथु आदि सब जीवो के हितकारी सत्तरहवे श्री कुथुनाथ प्रभु हमको भव भ्रमण से रहित करे। समस्त क्लेश से रहित, मोक्ष के मूल, अनन्त सुख के भडार अठारहवें श्री अरहनाथ स्वामी हमको कर्मो से रहित करे। ससार से तारने वाले मोह मल्ल को जीतने वाले, बाह्य अभ्यन्तर मल रहित उन्नीसवे श्रीमल्लिनाथ स्वामी हमे अनंतवीर्य की प्राप्ति कराये। उत्तम व्रतो के उपदेशक सर्व दोषों के नाशक बीसवे श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामी के तीर्थकाल मे श्रीरामचन्द्रजी का शुभ चारित्र प्रगट हुआ, ऐसे प्रभु हमारे अव्रत दूरकर महाव्रत की प्राप्ति कराये। देव, मनुष्यादि शत इन्द्रो से पूज्य इक्कीसवें श्री नेमिनाथ स्वामी हमको निर्वाण की प्राप्ति कराये। अशुभ कर्मरूपी शत्रु के नाशक बाईसवे श्री अरिष्टनेमि भगवान हरिवश के तिलक नेमि प्रभु हमारे यम, नियमादि अष्टाग योग की सिद्धि कराये। तेईसवे श्रीपार्श्वनाथ देवाधि-देव,

इन्द्र, नागेन्द्र, चन्द्र, सूर्यादि से पूज्य हमारे भव संताप दूर करे। चौबीसवे श्रीमहावीर स्वामी चतुर्थकाल के अत में हुए है ऐसे प्रभु हमारा महामंगल करे। और जो महामुनि, गणधरादिक हुये हैं उनको मन वचन, काय से बारम्बार नमस्कार कर श्रीरामचन्द्र स्वामी के चारित्र का व्याख्यान करता हूँ

कैसे हैं श्रीराम? लक्ष्मी से युक्त है हृदय जिनका, मुख मुद्रा रूपी कमल से प्रसन्न है, महापुण्याधिकारी, महाबुद्धिमान, गुणो के मदिर, उदार चरित्र के धारक, केवलज्ञान के गम्य ऐसे महापुरुष श्रीरामचन्द्र उनका चरित्र श्रीगणधर देव भी किचित् मात्र कहने में समर्थ है। यह बडा आश्चर्य है कि हम जैसे अल्पबुद्धि पुरुष भी उनके चरित्र को कहते है। यद्यपि हम इस चरित्र को कहने मे समर्थ नहीं है। तो भी परम्परा से महामुनि जिस प्रकार कहते आये है, उनके कहे अनुसार कुछ यहॉ सक्षेप से कह रहे है। जैसे जिस मार्ग मे हाथी चलते है उसी मार्ग मे हिरण भी गमन करते है। जैसे युद्ध मे महासुभट आगे होकर शस्त्रपात करते है, उनके पीछे अन्यपुरुष भी रण मे जाते हैं। ऐसे ही ज्ञानीपुरुषो के द्वारा कहा हुआ जो राम सबधी चरित्र उसको कहने के लिये भक्ति से प्रेरित होकर हमारी अल्पबुद्धि भी जाग्रत हुई है। बडे पुरुषो के चिंतवन से उत्पन्न हुआ जो पुण्य, उसके प्रसाद से हमारी शक्ति उत्पन्न हुई है। महापुरुषो के यश कीर्तन से बुद्धि की वृद्धि होती है और यश की प्राप्ति होती है, पाप नष्ट होते है। ससारी जीवो का शरीर अनेक रोगो से भरा है, इसकी स्थिति अल्पकाल है और सत्पुरुषो की कथा से उत्पन्न हुआ जो यश, जब तक चाद सूर्य रहेगे तब तक रहेगा, इसीलिये जो आत्मध्यानी पुरुष है, वे सब महापुरुषो के यश से अपना यश सुरक्षित करते है। जिसने सज्जनो को आनन्द देने वाली महापुरुषो की प्रशस्त कथा का प्रारम्भ किया, उसने दोनो लोक का फल प्राप्त किया।

जो कान सत्पुरुषो की कथा सुनने मे लीन है वही कान उत्तम हैं, और जो निदादि कुकथा सुनते हैं वे कान नहीं, केवल आकार है। और जो मस्तक सत्पुरुषो के चरणो मे झुके एवं उनके गुणो के वर्णन में झूमें वही मस्तक उत्तम है, शेष मस्तक खोटे नारियल के समान जानना चाहिये। महापुरुषो के यशकीर्तन मे तत्पर होठ ही श्रेष्ठ है शेष होंठ जोक की पीठ समान निष्फल जानना चाहिए। जो मानव महासतो की कथा का वर्णन करते है उनका जीवन सफल है। मुख्य पुरुषों का गुणगान करता हैं वही मुख श्रेष्ठ हैं शेष मुख दांतरूपी कीडो से भरा हुआ बिल समान जानना। जो महापुरुषो की कथा करते एवं सुनते हैं, वही श्रेष्ठ

पुरुष प्रशंसा योग्य है, अन्य पुरुष चित्रसमान जानना चाहिये। गुण और दोष के सग्रह में जो उत्तम पुरुष हैं वे गुणो को ही ग्रहण करते हैं, जैसे दूध व पानी मिला होने पर हंस दूध ही ग्रहण करता है, और गुण-दोष के मिले हुए में नीच पुरुष दोष को ही ग्रहण करते है जैसे गज के मस्तक मे मोती मास दोनो है, उनमे कौआ मोती को छोड मास ही ग्रहण करता है। जो दुष्ट पुरुष-निर्दोष रचना को भी दोष रूप देखते हैं, दुर्जन गुणों को छोड दोष को ग्रहण करते है, इसीलिये सज्जनो और दुर्जनों का ऐसा स्वभाव जानकर जो साधु पुरुष हैं, वह अपने कल्याण निमित्त महापुरुषों की कथा करने मे ही लीन रहते हैं। सत्पुरुषो की कथा सुनने से, परमसुख की प्राप्ति होती है। जो विवेकी पुरुष है उनको धर्म कथा पुण्य की उत्पत्ती का कारण है। जैसा वर्णन श्रीवर्द्धमान स्वामी की दिव्यध्वनि में खिरा उसका अर्थ गौतम गणधर ने धारण किया। गौतमस्वामी से सुधर्माचार्य पुन· जम्बूस्वामी पश्चात् क्रम से पांच श्रुतकेवली हुए उन्होने भी उसी तरह वर्णन किया। इसी प्रकार आचार्यो की परम्परा से कथन चला आया उसके अनुसार रविषेणाचार्य का व्याख्यान हुआ। यह श्रीरामचन्द्रजी का चरित्र सभी सज्जन पुरुष सावधान होकर पढों, सुनो। यह चरित्र सिद्धपद रूप मदिर की प्राप्ति का कारण है सर्वसुख को देने वाला है, और जो मनुष्य श्रीरामचन्द्रजी आदि महापुरुषो का ध्यान चितवन करते हैं, वे अतिशय युक्त प्रमोद, प्रसन्न भाव को प्राप्त करते है, अनेक जन्मों में किया हुआ पाप भी नाश होता है, जो सम्पूर्ण पुराण को पढता एव सुनता है उनका पाप अवश्य दूर होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल हैं, इसीलिये जो विवेकी चतुर पुरुष है वही इस चरित्र को धारण करते है, यह चरित्र महापुरुषो को प्राप्त करने योग्य है।

इस ग्रन्थ मे छह महाअधिकार है उनके छोटे अधिकार बहुत हैं। मूल अधिकार के नाम—(1) लोक स्थिति, (2) वश की उत्पत्ति (3) वन विहार और सग्राम (4) लव-अकुश की उत्पत्ति (5) भव वर्णन (6) रामचन्द्र जी का निर्वाण। श्रीवर्धमान देवाधिदेव सर्व कथा के वक्ता है। उनको अतिवीर, महावीर कहते है। श्रीराम के चरित्र का वर्णन करने मे कारण श्री महावीर स्वामी है, इसीलिये सबसे पहले उनका वर्णन करते हैं। राजगृही नगरी में विपुलाचल पर्वतपर समोशरण मे वर्धमान स्वामी विराजमान है, वहां राजा श्रेणिक गौतमस्वामी से प्रश्न करते हैं। कैसे हैं गौतमस्वामी? भगवान महावीर के मुख्य गणधर, महामहत जिनका इद्रभूति भी नाम है। गौतमस्वामी कहते है, पहले—युग का कथन, पुन· कुलकर

की उत्पत्ति, फिर अकस्मात चन्द्रसूर्य को देखने से, भोगभूमि के युगल जीवो को भय उत्पन्न होना, तब प्रथम कुलकर प्रतिश्रुत के उपदेश से भय दूर होता है, पश्चात् नाभिराजा अन्त के कुलकर रानी मरुदवी से श्रीऋषभदेव का जन्म, सुमेरुपर्वत के ऊपर इद्रादि देवो द्वारा जन्माभिषेक, बालक्रीडा, राज्याभिषेक, कल्पवृक्ष के नष्ट होने पर उत्पन्न हुआ प्रजा को दुख, वह कर्मभूमि की विधि बताने से दूर हुआ, पुन भगवान को वैराग्य, केवलज्ञान की उत्पत्ति, समोशरण की रचना, धर्मोपदेश, भगवान का निर्वाण, भरत चक्रवर्ती और बाहुबली का परस्पर युद्ध, ब्राह्मणों की उत्पत्ति, इक्ष्वाकुवंश आदि का कथन, विद्याधरो का वर्णन, उनके वशो मे राजा विद्युदृष्ट्र का जन्म, सजयंत मुनि पर विद्युदृष्ट्र ने उपसर्ग किया, वे मुनि, उन उपसर्ग को जीतकर अतकृतकेवली होकर निर्वाण को प्राप्त किया। विद्युदृष्ट्र पर धरणेन्द्र ने क्रोधकर उसकी विद्या का नाश कर दिया। पुन अजितनाथ स्वामी का जन्म हुआ, पूर्णमेघ विद्याधर भगवान के शरण में आया, राक्षस द्वीप का स्वामी व्यंतरदेव ने प्रसन्न होकर पूर्णमेघ को राक्षस द्वीप दिया। पुन सगर चक्रवर्ती की उत्पत्ति का वर्णन, पुत्रों के वियोग से दीक्षा और मोक्ष प्राप्ति, पूर्णमेध के वंश मे महारक्ष का जन्म, वानरवंशी विद्याधर का कथन, पुन· विद्युत्केश विद्याधर का चरित्र, उदधिविक्रम-अमरविक्रम विद्याधर का वर्णन, वानरवशी के किष्किंधापुर का निवास और अधक विद्याधर का वर्णन, श्रीमाला विद्याधरी का संयम, विजयसघ के मरण से अशनिबेग को क्रोध उत्पन्न और सुकेशी के पुत्र का लका मे आने का वर्णन, निर्घात विद्याधर के वध से माली विद्याधर के संपदा की प्राप्ति का वर्णन, विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी के रथनूपुर नगर मे इन्द्रनाम के विद्याधर का जन्म, सर्व विद्याधरो का अधिपति राजा। इन्द्र और माली के युद्ध मे माली का मरण, लका मे इन्द्र का राज्य, वैश्रवण विद्याधर का रहना, सुमाली के पुत्र रत्नश्रवा का पुष्पातक नाम का नगर बसाना, केकसी से विवाह, केकसी का शुभस्वप्न देखना, रावण का जन्म और विद्या का साधन, अनावृत देव का आकर विध्न करना, रावण का दृढ रहना, विद्या सिद्ध होना, अनावृत देव का वश होना, अपने नगर में आकर माता-पिता से मिलना, बावा (दादा) सुमाली को आदर से बुलाना, रावण से मंदोदरी का विवाह, अनेक राज पुत्रियों से विवाह करना, कुभकरण का चरित्र, वैश्रवण का कोप, यक्ष राक्षस विद्याधरों का संग्राम, वैश्रवण का भागना, दीक्षा लेना और रावण को परिवार सहित लका मे आना, सर्व राक्षसों को धैर्य धारण करवाना, जगह-जगह जिनमंदिर

बनवाना, जिनधर्म की प्रभावना करना और श्रीहरिषेणचक्रवर्ती का चरित्र, राजा सुमाली का रावण से कहना, भाव सहित सुनना। कैसाहैहरिषेण चक्रवर्ती का चरित्र? पापो का नाशक, तिलोकमण्डन हाथी को वश करना, और राजा इन्द्र का लोकपाल, यमनामकाविद्याधर उसने वानरवशी के राजा सूर्यरज को पकडकर बंदी खाने मे डालना, रावण का सम्मेद शिखर की यात्रा कर अपने स्थान पर आना, सूर्यरज के समाचार सुनकर शीघ्र ही वहॉ पहुॅचकर यम को जीताना। राजा सूर्यरज को बंधन से छुडाकर किष्किधापुर का राज्य देना। रावण की बहिन सूपर्नखा को खरदूषण हरकर ले गया सो उससे विवाह कराना, और पाताल लका का राज्य देना। खरदूषण ने पाताललका मे चद्रोदर को युद्ध मे मारना, चद्रोदर की रानी अनुराधा का पति वियोग से महादुखी होना। चद्रोदर राजा का पुत्र विराधित, राज्य भ्रष्ट होकर अन्य स्थानपर रहना, बालीराजा का वैराग्य, सुग्रीव को राज्य प्राप्ति, कैलाशपर्वतपर बालीमुनि का विराजना, रावण बाली मुनिपर क्रोधकर कैलाशपर्वत को उठाना, चैत्यालयो की भक्ति से बाली मुनि को अपने पैर का अंगूठा दबाना, रावण का पर्वत के नीचे दबकर रोना, तब रानी की विनती से मुनि का अगूठा ढीला करना। और सुग्रीव का सुतारा से विवाह और साहसगति विद्याधर का सुतारा के साथ विवाह न होने से दुखी होना। राजा अरण्य और सहस्ररश्मि का वैराग्य, रावण ने यज्ञ नाश किया उसका वर्णन, राजा मधु के पूर्वभव का वर्णन, और रावण की बेटी उपरभा का मधु से विवाह, रावण का इन्द्र के नगर मे जाना, इन्द्रविद्याधर से युद्धकर जीतना, इन्द्र को पकडकर लंका मे लेकर आना और छोडना, इद्र को वैराग्य व मोक्ष, रावण का प्रताप, सुमेरुपर्वत पर गमन पुन आना, अनन्तवीर्य मुनि को केवलज्ञान होना, रावण का नियम ग्रहण करना ''जो परस्त्री मुझे नहीं चाहे उसे मै ग्रहण नहीं करूगा,'' पुन हनुमान की उत्पत्ति। कैसे है हनुमान? वानरवश के महात्मा है कैलाश पर्वत ऊपर अजना के पिता राजा महेन्द्र का पवनजय के पिता राजा प्रहलाद से चर्चा करना कि हमारी पुत्री का विवाह तुम्हारे पुत्र से करे। तब राजा प्रहलाद का प्रमाण करना। अंजना का पवनजय से विवाह, पवनजय का अजना पर क्रोध और चकवा चकवी के वियोग को देख अजना पर प्रसन्न होना, पुन. अजना को गर्भ रहना, हनुमान के पूर्वभव का वर्णन, वन मे मुनिराज का अजना को कहना। गुफा मे हनुमान का जन्म, और हनुरुह द्वीप मे वृद्धि, प्रतिसूर्य मामा का अजना को आदर सहित रखना, पवनजय का भूताटवी नाम के जगल मे प्रवेश, पवनजय के

हाथी को देखकर प्रतिसूर्य राजा का आना, पवनंजय का अंजना से मिलकर खुश होना, पुत्र को देखकर प्रसन्न होना, पवनंजय का रावण के पास जाना, रावण की आज्ञा से वरुण को युद्ध मे जीतना, रावण के राज्य का वर्णन, तीर्थकरो की आयु, काय एव अन्तराल का वर्णन, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, चक्रवर्ती आदि का वर्णन। राजा दशरथ की उत्पत्ति, केकई को वरदान, राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न का जन्म, भामण्डल एव सीता का जन्म, भामण्डल का हरण व माता का शोक और नारद ने सीता का चित्र भामण्डल को दिखाना, भामण्डल का मोहित होना, जनक के यहॉ स्वयंवर मडप का वृतांत, श्रीरामचन्द्रजी का धनुष चढाना, सीता के साथ विवाह, सर्वभूतशरण्य मुनि के पास दशरथ का दीक्षा लेना, भामण्डल का जातिस्मरण, माता पिता सीतादि सब परिवार से मिलना, और केकई के वरदान से भरत का राज्य, और राम लक्ष्मण सीता का दक्षिणदिशा की ओर वनवास के लिये गमन, वज्र किरण का चरित्र, लक्ष्मण के साथ कल्याणमाला का विवाह, रुद्रभूत को वश करना, बालरिवल्य को छुडाना, अरुणग्राम मे श्रीराम के लिये देवो का नगरबसाना, चौमासा करना, लक्ष्मण के साथ वनमाला का विवाह, अतिवीर्य का वैराग्य, लक्ष्मण के साथ जितपद्मा का विवाह, कुलभूषण देशभूषण मुनि का चरित्र, श्रीराम ने वशस्थल पर्वतपर जिनमदिरबनवाये उनका वर्णन, जटायु पक्षी का व्रत पालन करना, पात्रदान के फल की महिमा, सबूक का मरण, सूपर्नखा का विलाप, खरदूषण के साथ लक्ष्मण का युद्ध, सीता का हरण, सीता का राम के वियोग का दुख, राम को सीता के वियोग का दुख, विराधित विद्याधर का आना, खरदूषण का मरण, रावण द्वारा रत्नजटी का विद्या छेद, सुग्रीव का राम के समीप आना, सुग्रीव के कारण श्रीराम ने साहसगति को मारा, सीता का वृतात रतनजटी का राम से कहना, श्रीराम का लका मे जाना, राम रावण का युद्ध, राम लक्ष्मण को सिहवाहिनी, गरुडवाहिनी विद्या की प्राप्ति। लक्ष्मण को रावण की शक्ति का लगना, विशल्या के कारण शक्ति का दूर होना, रावण का शान्तिनाथ के मंदिर मे बहुरुपिणी विद्या की साधना करना। राम की सेना के विद्याधर कुमारो का लका में प्रवेश, विद्यासाधन के समय रावण के मन को डिगाने का प्रयत्न करना, पूर्णभद्र-मणिभद्र के प्रभाव से विद्याधर कुमारो का पुन सेना के पडाव में आना, रावण को विद्या सिद्ध, पुन राम रावण का युद्ध, रावण का चक्र लक्ष्मण के हाथ में आना, रावण का मरण, रानियों का विलाप, केवली का लंका में प्रवेश, इन्द्रजीत कुभकरण का दीक्षा

ग्रहण, रावण की रानियो का दीक्षा ग्रहण, श्रीराम का सीता से मिलना, विभीषण के यहाँ भोजन, कईदिन लंका मे निवास और रामके पास नारद का आना, राम का अयोध्या की ओर विहार, भरत और त्रिलोकमण्डनहाथी के पूर्वभव का वर्णन, भरत का वैराग्य, राम लक्ष्मण का राज्य, मथुरा मे राजा मधु एव लवण का युद्ध मे मरण। मथुरा मे शत्रुघ्न का राज्य, मथुरा नगर मे धरणेद्र के क्रोध से रोग की उत्पत्ति। पुनः सप्तऋषियो के तप के प्रभाव से रोग नाश और लोकापवाद से सीता का वनवास, वज्रजध राजा का वन मे आना, सीता को बडी बहन बनाकर ले जाना, लव अकुश का जन्म, बडे होकर राजाओ को जीतना, वज्रजंघ के राज्य का विस्तार, अयोध्या मे राम लक्ष्मण के साथ लव अकुश का युद्ध, पिता पुत्र का मिलन और सर्वभूषण मुनिको केवलज्ञान की प्राप्ति, देवों का आना, सीता के शील के प्रभाव से अग्निकुड का शीतलजल होना, विभीषण के पूर्वभव का वर्णन, कृतातवक्र का दीक्षा लेना, स्वयवर मडप मे राम लक्ष्मण के पुत्रो का विरोध, लक्ष्मण के पुत्रो का वैराग्य, विद्युत्पात से भामण्डल का मरण, हनुमान का वैराग्य, लक्ष्मण की मृत्यु, राम के पुत्र का दीक्षाग्रहण, श्रीराम को लक्ष्मण के वियोग से अत्यन्त दुख एव शोक, देवो द्वारा प्रतिबोध और राम का मुनिव्रत धारण, केवलज्ञान की प्राप्ति, निर्वाणगमन।

यह सब रामचन्द्रजी का चरित्र सज्जन पुरुष मन लगाकर शान्ति पूर्वक पढो-सुनो। यह चरित्र सिद्ध पद-मोक्ष प्राप्ति का कारण है सभी प्रकार के सुखो को देने वाला है। श्रीरामचन्द्रजी आदि महामुनियो का चितवन अतिशय पुण्य प्राप्ति का कारण है अनेक जन्मो मे किया गया पाप नष्ट होता है। सम्पूर्ण पुराण को जो कोई पढता है, सुनता है उनका पाप अवश्य दूर होता है। मनोवाछित फल की प्राप्ति होती है। कैसा है पुराण? चन्द्रमा समान उज्ज्वल है इसीलिये विवेकी पुरुषो को चारित्र की प्राप्ति करना चाहिये। कैसा है चारित्र? महापुरुषो को धारण करने योग्य है। जैसे सूर्य के प्रकाश मे बुद्धिवान, नेत्रवाले पुरुष ससार मे भटकते नहीं है।

इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे पीठबध नाम का प्रथम पर्वपूर्ण हुआ।।१।।

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-2

अथ लोकस्थिति महाअधिकार

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में मगधदेश महासुन्दर है, वहां पुण्यशाली पुरुष इन्द्रलोक के समान हमेशा भोगोपभोग करते है, वहा योग्य व्यवहार से मानव पूर्ण मर्यादा से युक्त है, सरोवर में कमलखिले रहते है, भूमिपर मीठे मीठे रस के भरे गन्ने है, अनेक प्रकार के अनाजो का पर्वत बना हुआ हैं, खेतों मे चारो ओर हरियाली ही हरियाली हो रही है, भूमि अत्यन्त श्रेष्ठ है, सभी वस्तुये उत्पन्न होती है, चावलों के खेतों की शोभा जगह जगह मूग गेहूँ आदि फल रहे हैं, भैस की पीठपर बैठ ग्वाले घूम रहे है, अनेक रंग की गाये हैं, गले में घण्टा बजते है, दूध रूप धरती हो रही है, मीठी रस से भरी तृण को खाकर गाय भैंस पुष्ठ होते है। हिरण भी विचरण करते है, किसी जीव को कोई दुख नहीं, जिन धर्मात्माओं का ही राज्य है, और वन के प्रदेश गंगा के पुलसमान उज्ज्वल शोभा युक्त हो रहे हैं, केसर की क्यारिया मनोहर है, जगह जगह नारियल के वृक्ष लगें हैं, वनपाल नारियल मेवादि के वृक्षों की सम्भाल करते हैं, अनार अंगूर केलादि के अनेक वृक्ष है, पक्षी फलो को खाते है, बदर क्रीडा करते है, वन या बगीचो में देव विहार करते है, ऊचे ऊंचे अर्जुन के वृक्ष सुशोभित हैं, नदियों मे तरगे लहरा रही है, जैसे नदी नृत्य ही करती हैं, ऐसा सुन्दरदृश्य मनमोहक है। सरोवर के किनारे हंस खेल रहे है, कई प्रकार के रग बिरंगे वस्त्र आभूषणों से युक्त मनुष्यों का मन प्रसन्न हो रहा है, वहां तोते की मधुर ध्वनि, भवरों का गुजार, मोर की मनोहरवाणी, बीनमृदंगों की ध्वनि से दशो दिशाये सुरभित हो रही हैं, उसदेश में गुणवान, दयावान् क्षमावान, शीलवान्, उदारचित्त, तपस्वी, त्यागी, संयमी पुरुष रहते हैं, मुनि आर्यिकायें विहार करते है, उत्तम श्रावक श्राविकाओं का निवास है। आनन्द को देने वाले हैं, वह देश बडे-बडे गृहस्थों से मनोहर है, कल्पवृक्ष समान है, किसान लोग सज्जन भावों से रहते है, उस देश में कर्पूर कस्तूरी आदि सुगंधित अनेक द्रव्य हैं। अनेक प्रकार के आभूषणो से सहित नर नारी भ्रमण करते हैं, तो ऐसा लगता है जैसे देव-देवी ही हैं, वहा गुरुओं के वचनों से मिथ्यात्व दूर हो जाता है, महामुनियों के तपरूपी अग्नि से पापरूपी वन नष्ट हो जाता है,

ऐसा धर्मरूपी महामनोहर मगध देश बसा हुआ है। मगधदेश में राजगृह नगर महामनोहर पुष्पों की महक से सुगधित अनेक सपदा से भरा, मानों तीनलोक का यौवन ही है, इन्द्र के नगर समान मन को मोहनेवाला है, इन्द्र के नगर में तो इद्राणी कुंकुमादि से शृंगारकर विचरण करती है और राजगृह नगर मे राजा की रानी अनेक सुगंध से सुशोभित होकर विचरण करती है, महिषी ऐसा नाम रानी का भी है, और भैंस का भी है, सो वहॉ भैस भी केसर की क्यारी मे लोटकर सुख मान रही है। सुन्दर सुन्दर महल एव मंदिर बने हैं, मानो चंद्रकातमणि का नगर बना है। मुनियों को तो वह नगर तपोवन है, नृत्य कारिणी को नृत्य का मदिर, सुभट लोगो को वीरस्थान, याचक लोगो के लिये चितामणी, विद्यार्थी को गुरुगृह सम्पूर्ण कला सीखने का परम स्थान, सज्जन पुरुषों को साधुओ का समागम, व्यापारीयों को लाभ भूमि, खिलाडियो को कौतुक का निवास, कामियों को अप्सराओ का नगर, सुख मय है। जहा गजगामिनी, शीलवती, व्रतवती, रूपवंती अनेक स्त्रीयां है, प्रतिव्रता नारी, मधुर भाषी, सदा हर्षरूप मनोहर है चेष्टा जिनकी, सामायिक, प्रौषधोपवास, प्रतिक्रमण करनेवाली, व्रत नियम मे सावधान, अन्न का शोधन, जल छानना, पात्रो को भक्ति से दान देना और भूखे लोगो को भोजन कराना इत्यादि शुभ क्रियाओ मे सावधान है, महामनोहर जिनमंदिर जिनेश्वर की भक्ति जगह-जगह सिद्धांत की चर्चा हो रही है, ऐसी राजगृही नगरी की उपमा कहने मे नहीं आती। स्वर्ग मे तो केवल भोग ही है, लेकिन इस नगर मे भोग और योग दोनो का साधन है, पर्वत समान ऊचा कोट, महा गभीर खाई है, जिसमे शत्रु भी प्रवेश नहीं कर सकते, देवलोक के समान शोभायमान राजगृह नगर बसा हुआ है। राजगृह नगर मे राजा श्रेणिक राज्य करते हुए इंद्र के समान विख्यात बडा योद्धा, कल्याण रूप मगलकारी है, सुमेरुपर्वत तो सुवर्णरूप है, और राजा कल्याणरूप हैं। राजा समुद्र समान गभीर, मर्यादा सहित, चद्र-सूर्य की ज्योति समान, धन सपदा मे कुबेरसमान, शूरवीर, लोकरक्षक न्यायवंत, लक्ष्मी से पूर्ण, शत्रुओं पर विजय करनेवाले, आपत्ति सकट मे धैर्यवान सुख संपदा में नहीं फूलने वाले, दान वीर, दीन दुखियो पर दयालु, जिनशासन में परम प्रीतिवान, धन और जीतव्य में जीर्ण तृण समान, बुद्धिमान, प्रजा के पालन मे सावधान और धन को मिट्टी समान जाननेवाले ऐसे गुणो के भंडार राजा श्रेणिक हैं।

भावार्थ—राजा अपनेबल पराक्रम से राज्य करते हैं, उनके राज्य में पवन भी वस्त्रादि का अपहरण नहीं करते हैं, तो चोर किसी वस्तु का अपहरण कैसे करेगे? उनके राज्य में पशु भी हिंसा नहीं करते तो मनुष्य कैसे हिंसा करें? राजा श्रेणिक। धर्म का प्रतिपालक श्रेष्ठपुरुष है। राजा न्याय में दक्ष, महापुरुषो को आनंद देने वाले हैं, इन्द्र के वंश नहीं होता है, लेकिन राजा का वंश विस्तार रूप हैं। यह राजा श्रेणिक सर्वोत्कृष्ट, त्यागी, पंडित, शूरवीर साहसी, जिसकी कीर्ति दशो दिशाओ में फैल रही है, गुणो की संख्या नहीं, संपदा का क्षय नहीं, सेना की बहुलता बडे-बडे योद्धा, राजा की सेवा में रत, हाथी, घोडे, रथ, पयादे सबही उत्तम है। राजा का ठाठ सबसे महान है। सपूर्ण कलाओ में प्रवीण है। हम जैसे पुरुष उनके गुणों का वर्णन करने मे असमर्थ हैं। राजा के क्षायिक सम्यक्त्व की महिमा इद्र अपनी सभा मे प्रतिसमय वर्णन करता है। राजा मुनियो की भक्ति में तत्पर हैं। अपनी भुजाओं से पृथ्वी की रक्षा करते है जिनचैत्यालयो को बनवाने वाला, जिनपूजा करने करवाने वाला, चेलनारानी महापतिव्रता, शीलवती, गुणवती, रूपवती, कुलवती, शुद्ध सम्यग्दर्शन की पात्र, श्राविका के व्रत पालनेवाली, सर्वकला मे निपुण, राजा और रानी ऐसे गुणो से युक्त और उपमाओं से रहित ऐसे श्रेणिक राजा राजगृह नगर मे राज्य करते है।

(अन्तिम तीर्थंकर महावीर का समोशरण आना और राजा श्रेणिक का प्रसन्न होना)

एक समय राजगृह नगर के पास विपुलाचल पर्वत के ऊपर भगवान महावीर अतिम तीर्थंकर समवशरण सहित पधारे। तब भगवान् के आगमन का समाचार वनपाल ने आकर राजा से कहा और छह ऋतुओ के फल, फूल लाकर सामने रखे तब राजा ने सिहासन से उठकर सात कदम पर्वत की ओर जाकर भगवान् को अष्टाग नमस्कार किया, और वनपाल को अपने सब आभूषण उतारकर पुरस्कार मे दे दिये और भगवान के दर्शन करने के लिए सपरिवार चले। श्रीमहावीर भगवान के चरण कमल, देव, मनुष्य आदि सौ इंद्रों से नमस्कार करने योग्य हैं। उनके गर्भ कल्याणक में छप्पन कुमारियों ने माता के गर्भ शोधनादि कि क्रियायें की, उसमें तीनज्ञान संयुक्त अच्युत स्वर्ग से भगवान आकर विराजमान हुये। और इन्द्र के आदेश से धनपति कुबेर ने गर्भ में आने के छहमहीने पहले और नवमासगर्भ के लगातार पंद्रहमास रत्नवृष्टि करके पिता के

घर में आनन्द उत्साह किया। जन्म कल्याणक मे सुमेरुपर्वत पर इंद्रादि देवों ने क्षीरसागर के जल से भगवान का जन्माभिषेक किया और महावीरनाम रखा। भगवान की बाल अवस्था में इंद्र ने देवकुमार रखे थे उनके साथ क्रीड़ायें की। भगवान के जन्म समय माता-पिता, परिवार और प्रजा आदि को तथा तीनलोक के सभी जीवों को परम आनन्द हुआ, नारकी जीवो को भी कुछ समय के लिये दुख नहीं रहा, शान्ति प्राप्त हुई। पिता के बहुत दिनो के विरोधी शत्रु भी उनके चरणो मे आकर नमस्कार करनेलगे। और छत्र, चमर, वाहनादि को छोडकर विनय पूर्वक हाथी, घोडे, रथ, रत्नादि अनेक वस्तुये भेटकर हाथ जोड चरणों में नमस्कार किया, अनेक देशो की प्रजा वहा आकर भगवान के चरणों में निवास करती रही। प्रजा राग भाव मे लिप्त रहती है फिर भी भगवान का मन भोगों में नहीं लगा। जैसे सरोवर मे कमल जल से भिन्न रहता है वैसे ही भगवान जगत की मायाजाल से दूर रहे। भगवान स्वयबुद्ध बिजली की चमकवत जगत की माया को नाशवान जान वैराग्य को प्राप्त हुए, तुरन्त ही लौकातिक देवो ने आकर स्तुति की और भगवान ने महाव्रत धारण कर चारो आराधनाओ से युक्त होकर धातिया कर्मो को नाशकर केवलज्ञान को प्राप्त किया। वह केवलज्ञान सपूर्ण लोकालोक को जानने वाला है। ऐसे केवलज्ञानी प्रभु ने भव्यजीवों के कारण धर्मतीर्थ को प्रगट किया। श्री भगवान मलरहित, पसेवरहित, दूध समान रुधिर, सुगंधयुक्त शरीर, शुभलक्षण, अतुलबल, मिष्टवचन, महासुन्दर स्वरूप, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसहनन के धारी है। भगवान के विहार के समय चारो दिशाओ मे दुर्भिक्ष नहीं, इति भीति नहीं, और सभी विद्याओ के परमेश्वर निर्मल स्फटिक मणिसमान शरीर, आखो की पलक नहीं झपकती, नाखुन, केश नहीं बढ़ते, समस्त जीवो मे मित्रता, शीतल मद मंद सुगध पवन चलती, छह ऋतु के फल फूल फल रहे है। धरती दर्पणसमान स्वच्छ निर्मल हो रही है, और पवनकुमारदेव एकयोजन पर्यत भूमि को ककर पत्थर से रहित करते हैं। मेघकुमारदेव गंधोदक की वृष्टि से महोत्सव करते हैं। प्रभु के विहार मे देव चरण कमल के नीचे स्वर्णमयी कमलों की रचना करते है, फिर भी प्रभु कमल को स्पर्श नहीं करते, आकाश में ही गमन करते हैं, पृथ्वीपर सभी ऋतुओं के धान्य फलते हैं, आकाश स्वच्छ होता है, दिशायें निर्मल होती है। सूर्य के तेज को मलिन

करनेवाला एकहजार आरो से युक्त धर्मचक्र भगवान के आगे आगे चलता है। इस प्रकार आर्यखण्ड मे विहार करते हुए श्रीमहावीरस्वामी विपुलाचल पर्वत के ऊपर आकर विराजमान हुए। पर्वतपर अनेक प्रकार के पानी के झरने बहते है, मनोहर शब्द हो रहे है। जहां बेल और वृक्ष सुशोभित हो रहे हैं, वहां जाति विरोधी जीवो ने भी बैर छोड दिया है, पक्षी बोल रहे है, मधुर वाणी सुनाई दे रही है। गहनवृक्षों के नीचे हाथी बैठे हुये हैं, गुफाओ के बीच सिह बैठे है, जैसे कैलाश पर्वतपर भगवान ऋषभ देव विराजमान थे, उसीप्रकार विपुलाचल पर्वतपर श्रीवर्धमानस्वामी विराजमान हुए। श्रीभगवान महावीर स्वामी को केवलज्ञान उत्पन्न होते ही इद्र का आसन कम्पायमान हुआ, तब इद्र ने अवधिज्ञान से जान अपने आसन से उठकर सात कदम आगे जाकर नमस्कार किया, तुरत इन्द्र ऐरावत हाथी पर बैठकर आया। अनेकदेव अपने अपने वाहनो पर इद्र के साथ आये। जिनेन्द्र दर्शन के उत्साह से प्रसन्न हो रहे है, ऐसे सोलह स्वर्ग के देव और भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी देव सभी मिलकर आये, विद्याधर भी अपनी रानियो सहित आये। रूप एव वैभव मे देवो के समान, सभी उत्साह से समवशरण मे आये। समवशरण मे इन्द्र भगवान की स्तुति करता है। हे नाथ! महामोह रूपी निद्रा में सोया यह जगत आपने ज्ञानरूपी सूर्य से जगाया। हे सर्वज्ञ वीतराग देव! आपको नमस्कार हो, आप परमात्मा महापुरुष है, आप ससार रूपी समुद्र के पार हो गये है, भव्यजीव, चेतनरूपी धन के व्यापारी, जब आपके साथ निर्वाण को जायेंगे तो मार्ग मे दोष रूपी चोर नहीं लूटेगे। आपने मोक्ष के अभिलाषी मानवो को मोक्ष पथ दिखाया है, आपने ध्यानरूपी अग्नि से कर्मरूपी ईधन को जला दिया। दुखो से जो संतप्त प्राणी है उनके आप स्वामी है। हम आपके गुण कैसे वर्णन कर सकते है। आपके गुण उपमा रहित अनन्त है, वह केवलज्ञान गोचर हैं, इसतरह इद्र ने भगवान की स्तुति कर अष्टाग नमस्कार किया। समवशरण की विभूति एव उसकी रचना देख बहुत आश्चर्य को प्राप्त हुये उसका सक्षेप मे वर्णन करते हैं। वह समोशरण अनेक रत्न एव स्वर्ण से रचा हुआ है। उसमें प्रथम ही रत्न की धूलि का धूलिसाल कोट है, उसके ऊपर तीन कोट हैं, एक एक कोट के चार-चार द्वार हैं, दरवाजे पर अष्टमंगल द्रव्य हैं और वहां रमणीक बावडी, सरोवर, ध्वजा अद्‌भूत शोभा युक्त है, स्फटिक मणि की दीवाल से बारह कोठे प्रदक्षिणा रूप बने हैं। प्रथम कोठे में

मुनिराज हैं, दूसरे में कल्पवासी देवों की देवागना ये है, तीसरे में आर्यिकायें हैं, चौथे में ज्योतिषीदेवों की देवीयॉ हैं, पांचवे मे व्यतर देवीयॉ है, छठे में भवनवासी देवीयाँ हैं, सातवें में ज्योतिषी देव हैं, आठवें मे व्यंतरदेव हैं, नवमें में भवनवासीदेव, दशवें में कल्पवासीदेव, ग्यारहवे में मनुष्य, बारहवे में तिर्यंच है। यह सभी जीव परस्पर बैर भाव रहित बैठे है, भगवान अशोकवृक्ष के समीप सिंहासन पर विराजमान हैं। वह अशोकवृक्ष प्राणियों के शोक को दूर करता है। और सिहासन अनेक रत्नों से सुशोभित हो रहा है। इन्द्र के मुकुट मे लगे रत्न उनकी काति को जीते हैं। तीनलोक की ईश्वरता के चिन्ह जो तीनछत्र उनसे श्रीभगवान शौभायमान है और देव पुष्पों की वर्षा करते है चौषठचमर सिरपर ढुरते हैं, दुंदुभी बाजे बजते है। उनकी अत्यन्त सुन्दर ध्वनि हो रही है। राजगृह नगर से राजा श्रेणिक अपने मंत्री परिवार नगर वासियो सहित समोशरण के पास पहुँचे, समोशरण को देख दूर से ही छत्र, चमर, वाहनादि छोडकर स्तुति पूर्वक भगवान को नमस्कार मनुष्यों के कोठे में बैठे। राजपुत्र वारिषेण, अभयकुमार, विजयबाहु इत्यादि प्रभु की स्तुतिकर, हाथ जोड नमस्कार कर यथास्थान बैठे। वहॉ भगवान की दिव्यध्वनि हो रही है, देव मनुष्य, तिर्यंच सब ही अपनी अपनी भाषा मे समझ रहे हैं। ध्वनि मेघ के शब्द को जीतती है देव और सूर्य की ज्योति को जीतनेवाला भामण्डल सुशोभित है, सिहासन पर जो कमल है उस पर भगवान चार अंगुल अधर विराजमान हैं। गणधर मुनि प्रश्न करते हैं, दिव्यध्वनि में सबका उत्तर होता है।

गणधरदेव ने प्रश्न किया हे प्रभो। तत्व का स्वरूप क्या है? तब भगवान् ने तत्त्व का वर्णन किया। तत्त्व दो प्रकार के हैं, एक जीवतत्त्व दूसरा अजीवतत्त्व। जीवो के दो भेद है। सिद्ध और ससारी। ससारी के दो भेद हैं, एक भव्य दूसरा अभव्य। मुक्ति जाने योग्य जीवो को भव्य कहते है, जो कभी मुक्ति नहीं प्राप्त करेंगे वे अभव्य जीव हैं, जैसे कठोर मूग कभी नहीं सीझता-भगवान के कहे तत्त्वों का श्रद्धान भव्यजीवों को ही होता है अभव्यो को नहीं। संसारी जीवो के एकेंद्रिय आदि भेद और गति, काय आदि चौदह मार्गणाओ का कथन किया। उपशमश्रेणी, क्षपकश्रेणी दोनों का स्वरूप कहा। ससारी जीव दुःखी हैं फिर भी दुःख को ही सुख मानते हैं, चारों ही गति में दुख ही दुख है, नारकी जीवों को तो आंख की पलक मात्र भी सुख नहीं है, मारना, काटना छेदना, सूली पर चढ़ानादि अनेक

प्रकार के दु:ख प्रतिसमय होते हैं। और तिर्यंचो को भी ताडना, मारना, काटना, छेदना बोझा रखना, ठंडी, गर्मी, भूख, प्यास आदि अनेक प्रकार के दु ख हैं। मनुष्यो को इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोगादि कई प्रकार के दु.ख हैं। छोटे देव बडे देवों की विभूति देखकर स्वयं दु.खी होते है। दूसरे देवों का मरण देख अतिदुख को प्राप्त होते हैं। अपनी देवागनाओ का मरण देख इष्टवियोग जन्य दु:ख से दुखी होते, जब अपने गले की माला मुरझाई देख अपना मरण निकट आया जान देव अत्यन्त दु.खी होकर झुरते हैं। इसीप्रकार चारो ही गतियों के जीव दुःखी होकर भ्रमण करते हैं। कर्मभूमि मे मनुष्य जन्म लेकर भी पुण्य नहीं किया तो, जैसे हाथ मे आया अमृत चला गया, वैसा जानना चाहिए। अनंत संसार में अनेक योनियों में भ्रमण करते हुये, इस जीव ने कभी मनुष्य जन्म प्राप्त किया और भीलादि नीच कुल में जन्म लिया तो क्या? और म्लेच्छ खण्ड में उत्पन्न हुआ तो क्या? और कभी आर्यखण्ड के उत्तम कुल मे उत्पन्न हुआ और अंगहीन हुआ तो क्या? और सुन्दररूप हुआ पर रोगी हुआ तो क्या? और सब ही वस्तुयें श्रेष्ठ प्राप्त हुई, सब कुछ उत्तम मिला परन्तु पंचेन्द्रियो के विषय मे फंसकर धर्म नहीं किया तो कुछ भी नहीं किया, इसीलिये धर्मप्राप्त करने की भावना होना और धर्म के स्वरूप मे लीन रहना अत्यन्त दुर्लभ है, कोई जीव दूसरों के नौकर बनकर भी कठिनता से जीवन यापन करते है। कोई युद्ध करने के लिये रण मे प्रवेश करते है, कोई किसान खेती करके भी परिवार का पालन पोषण पूर्ण नहीं कर पाता है। अनेक जीवो की हिंसा करता हुआ दुःखो को ही भोगता रहता हैं, संसारी जीव विषय सुखों की विशेष रूप से अभिलाषा करते हैं। कोई दरिद्रता के कारण दुःखी हैं, कोई धन को प्राप्त कर के भी चोर, अग्नि, जल, राजादिक के डर से हमेशा दुखी ही रहते हैं, कोई भोगों को भोगते हैं, परन्तु इच्छा के कारण दुःखी हैं। किसी को धर्म की रूचि हुई हैं, तो संसारी जीव दूसरे लोग धर्म को छुडवा देते हैं संसार में फसाने का कार्य करवाते है, परिग्रह लोभ के कारण मन में परिणामों की निर्मलता प्राप्त नहीं होती, और मन साफ स्वच्छ नहीं होता, तो धर्म प्राप्त भी नहीं कर सकता है। जब तक परिग्रह की इच्छा हैं तब तक जीव, हिंसा की क्रियायें ही करता हैं, और हिंसा के कारण जीव नरक निगोद आदि कुयोनिओं में महादुःखों को प्राप्त होता है, संसार भ्रमण का मूल कारण हिंसा ही हैं। और जीव

दया ही मोक्ष का मूल कारण है। परिग्रह के सयोग से राग द्वेष उत्पन्न होते है।

वे राग द्वेष ही संसार मे दु ख के कारण है कोई जीव दर्शनमोह के अभाव से सम्यग्दर्शन को प्राप्त करता है, परन्तु चारित्रमोह के उदय से चारित्र को धारण नहीं कर सकता है। कोई चारित्र को धारण करके भी परिषह न सहन करने से चारित्र को छोड देते है, कोई अणुव्रत पालन करते है कोई अणुव्रत भी धारण नहीं कर सकते है, ससार मे अनत जीव मिथ्यादृष्टि होते है। मिथ्यादृष्टि जीव बार बार जन्म मरण कर विषय रूपी अग्नि मे गिरकर, दुख रूपी ससार मे गिरते है। मिथ्यादृष्टि जीव रसना के लोलुपी, काम कलक से मलिन है, उनकी क्रोध मान माया लोभ की ही प्रवृती बनी रहती है। जो पुण्य शाली जीव ससार शरीर भोगो से रहित होकर चारित्र को धारण कर सयम का पूर्ण पालन करते है, वे ही महाधीर वीरपुरुष परम समाधिपूर्वक शरीर छोडकर स्वर्ग मे बडेदेव होकर अतिशय सुख भोगते है। वहा से चयकर मनुष्य बन मोक्ष प्राप्त करते है कोई मुनि बनकर तप से अनुत्तर विमान मे अहमिंद्र बनते है वहा से चयकर तीर्थकर बनते है। कोई चक्रवर्ती, बलदेव, कामदेव पद प्राप्त करते है। कोई मुनिराज तप से निदानबधकर स्वर्ग मे उत्पन्न हो वहा से चयकर नारायणादि होते है, वे भोगो को नहीं छोडते और राज्य मे मरण कर नरक जाते है। इस प्रकार श्रीवर्धमानस्वामी के मुख से धर्मोपदेश सुनकर देव, मनुष्य, तिर्यचादि अनेक जीवो ने ज्ञान को प्राप्त किया और कोई पुरुष मुनि बने, कोई श्रावक बने, कोई-कोई तिर्यच भी श्रावक हुये। और देव व्रतो को धारण नहीं कर सकते, लेकिन सम्यक्त्व को प्राप्त करते है। अपनी अपनी शक्ति अनुसार प्रत्येक जीव धर्ममार्ग में लगें। सभी भव्यजीव दिव्यध्वनि मे धर्म का स्वरूप सुनकर भगवान को नमस्कार कर अपने स्थान गये। श्रेणिकराजा भी जिनेन्द्रप्रभु के वचनो का चिंतवन करते हुए हर्षित होकर अपने नगर मे गये। अतः शाम को सूर्य अस्त हुआ, फिर भी भगवान के समवशरण मे हमेशा प्रकाश ही रहता है रात दिन का विचार नहीं। सूर्य अस्त होने से दिखना बंद हुआ, घर घर मे दीपको की रोशनी हुई शीतल मद सुगंध पवन चली, तारो के समूह से आकाश शोभायमान दिखा। चन्द्रमा का प्रकाश हुआ जैसे अधकार पर क्रोध ही किया हो।

इस प्रकार रात्रि का समय लोगों को विश्राम का देने वाला प्रगट हुआ

राजा श्रेणिक सध्या समय सामायिक पाठ करते हुऐ जिनेन्द्र की कथा करते है। रात्रि का बहुत समय व्यतीत होने पर राजा भी सोने की तैयारी करते है। राजा का शयनकक्ष, रत्नो की ज्योति से, अतिप्रकाश रूप है। फूलो की महक दरवाजो से आ रही है। महल के पास नारियॉ मनोहर गीत गा रही है। चारो तरफ सामतो की चौकी है। सेजपर अति कोमल बिस्तर बिछाये है। वह राजा भगवान के पवित्र चरण कमलो का स्मरण करते हुये स्वप्न मे भी बार बार जिनेन्द्रप्रभु का दर्शन करते है, और स्वप्न मे भी गणधर देव से प्रश्न पूछते है। इसतरह सुख पूर्वक रात्रि पूर्ण की प्रात काल बाजो की मधुर ध्वनि से राजा की आख खुली। राजा स्नान क्रिया से निवृत होकर विचार किया, कि भगवान की दिव्यध्वनि में तीर्थकर, चक्रवर्ती आदि महापुरुषो के चारित्र को मैने सुना। अब श्रीरामचन्द्रजी के चरित्र सुनने की मेरी अभिलाषा है। लौकिक ग्रन्थो मे रावणादि को मास भक्षी राक्षस कहते है। परन्तु वे विद्याधर कैसे मासादि खाते होगे, और रावण का भाई कुभकरण को कहते है, कि छह महीना सोता है उसके ऊपर हाथी घूमते है, गर्म गर्म तेल कान मे डालते है, तो भी छह महीना से पहले नहीं जागता है, तब ऐसी भूख प्यास लगती कि अनेक हाथी, भैसादि तिर्यच और मनुष्यो को भक्षण करता है, खून पीता है, तो भी तृप्ति नहीं होता हे। और सुग्रीव एव हनुमान को बन्दर कहते है। परन्तु वे बडे राजा विद्याधर थे। महापुरुषो को विपरीत कहने मे महापाप का बध होता है। जैसे अग्नि के सयोग से शीतलता नहीं होती और बर्फ के सयोग से गरमी नहीं होती। जल मे घी की प्राप्ति नहीं होती, ऐसे ही महापुरुषो को विपरीत कहने से पुण्य की प्राप्ति नहीं होती। और लोग कहते है कि, देवो के स्वामी इन्द्र को रावण ने जीता। परन्तु वह बात उचित नहीं, कहा यह देवो का स्वामी इद्र और कहा यह मनुष्य, जो इन्द्र के क्रोध से जल जाता है। इन्द्र के पास ऐरावत हाथी, वज्रमयी आयुध है। ऐसे इन्द्र को अल्पशक्ति का धारी मनुष्य विद्याधर कैसे बदी बनाये। हिरण-सिह को कैसे खाये, तिल से शिला को कैसे पीसे, कुत्ता हाथी को कैसे मारे। और लोक कहते है कि रामचन्द्रजी हिरणादि की हिंसा करते, सो यह बात उचित नहीं। वह महापुरुष विवेकी दयावान कैसे जीवो की हिसा करते। यह बात सभव ही नहीं है। कैसे अभक्ष वस्तुओ को खायें। और सुग्रीव के बडे भाई, बाली राजा ने, सुग्रीव की रानी को अपनी रानी बनाई, सो

वह बड़े भाई पिता समान, कैसे छोटे भाई की स्त्री को अपनी रानी बनाये। यह बात सभव नहीं हैं। इसीलिये गणधर देव को पूछकर श्रीरामचन्द्रजी का चरित्र सुनूँ, और हृदय मे धारण करू। ऐसा चिंतवन राजा श्रेणिक ने किया। गुरु के दर्शन से, एव धर्म के प्रश्नो से तत्वों का समाधान होगा, और परमसुख की प्राप्ति होगी। ऐसा विचार कर राजा सेज से उठे, और रानी अपने स्थान गई। रानी महापतिव्रता विनयवान हैं। राजा का मन धर्म कार्य में लीन हैं, दोनों प्रातःकाल की क्रिया से निवृत हुये। राजा उज्ज्वल सुगधमय महल से बाहर आयें।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषाटीका मे श्रेणिक ने रामचन्द्र एव रावण के चरित्र सुनने के लिए प्रश्न करने का विचार वर्णन करने वाला द्वितीय अधिकार पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-3

विद्याधर लोक का वर्णन

राजा श्रेणिक राज दरबार मे सुन्दर वस्त्राभूषण सहित शोभायमान सिंहासन पर बैठे हैं। बडे बडे सामन्त राजा के दर्शनकर प्रसन्न हुए। राजा श्रेणिक परिवार एव सेना सहित हाथीपर चढकर प्रसन्न मन समोशरण की ओर जा रहे है, कैसा है समवशरण? जहा अनन्त गुणो के धारी महावीर स्वामी विराजमान हैं उनके पास गौतमगणधर बैठे है। तत्त्वो के व्याख्यान मे तत्पर, ज्योति में चन्द्रमा समान, प्रकाश मे सूर्य समान, जिनके चरण कमल लाल है और अपनी शान्ति से जगत को शान्ति करते है, मुनियो के स्वामी गणधरदेव है। राजा ने दूर से ही समोशरण को देखा, और हाथी से उतरकर समोशरण मे गये। हर्ष से फूल रहा हैं मन कमल उनका, भगवान की तीन प्रदक्षिणा देकर हाथ जोड नमस्कार कर मनुष्यों की सभा मे बैठे। राजा श्रेणिक ने श्रीगणधरदेव को नमोऽस्तु कर कुशल मगल पूछकर प्रश्न किया, भगवन! मैं रामचन्द्रजी का चरित्र सुनना चाहता हूँ। यह कथा जगत मे लोगो ने अन्य प्रकार से बताई है इसीलिये हे प्रभो! कृपाकर मेरे मन के संदेह को दूर करो। राजा श्रेणिक का प्रश्न सुन, श्रीगणधरदेव अपने गंभीर मेघकी ध्वनि समान भगवान की दिव्यध्वनि के अनुसार उपदेश करते हैं। हे.

राजन! तुम सुनों, मैं जिन आज्ञा प्रमाण कहता हूँ। कैसे है जिनवचन? तत्त्व के कथन में तत्पर हैं, तू यह निश्चय जान की रावण राक्षस नहीं, मनुष्य हैं। मांस भक्षी नहीं, विद्याधरो का स्वामी है। राजा विनमि के वंश में उत्पन्न हुये हैं। सुग्रीवादि बदर नहीं, ये बडे राजा मनुष्य विद्याधर हैं। जैसे नींव बिना मंदिर नहीं होता है, ऐसे जिनवचन रूपी मूल बिना कथा की प्रमाणता नहीं होती हैं। इसीलिये पहले—क्षेत्र, कालादि का वर्णन सुनों, फिर महापुरुषों का चरित्र जो पापों को नाश करनेवाला है वह सुनो।

(लोकालोक, कालचक्र, कुलकर, नाभिराजा और श्रीऋषभदेव एव भरत का वर्णन)

गौतमस्वामी कहते है, कि हे राजा श्रेणिक! अनन्त प्रदेशी अलोकाकाश के बीच तीन वातवलयों से वेष्टित तीनलोक हैं, और तीनलोक के मध्य मे मध्यलोक है, इनमे असख्यात द्वीप और समुद्र हैं, उसके बीच मे लवणसमुद्र से घिरा हुआ एकलाख योजन प्रमाण यह जंबूद्वीप है, उसके बीचों बीच सुमेरुपर्वत है, जो मूल मे व्रजमय है, और ऊपर सब सुवर्ण समान है। अनेक रत्नों से युक्त हैं। संध्या समय रक्तवर्ण को धारे स्वर्ग पर्यंत ऊँचा शिखर है। शिखर और सौधर्मस्वर्ग के विमान के बीच में एकबाल का अतर हैं, सुमेरुपर्वत निन्यानवेहजार योजन ऊँचा है और एकहजार योजन नीव है। और पृथ्वीपर दशहजार योजन चौडा हैं, शिखर पर एकहजार योजन चौडा हैं। चालीस योजन की चूलिका हैं ऐसा लगता कि मध्यलोक को नापने का दंड ही हैं। इस जंबूद्वीप में एक देवकुरु और एक उत्तरकुरु भोगभूमि है। और भरतादि सात क्षेत्र है। छह कुलाचल पर्वतों से इन क्षेत्रो का विभाजन हो रहा है। जम्बू और शाल्मली नाम के दो वृक्ष हैं। जंबूद्वीप में चौतीस विजयार्ध पर्वत हैं। एक-एक विजयार्ध मे एक सौ दशदश विद्याधरों की नगरीयाँ हैं। एक एक नगर के साथ करोड करोड गांव लगे हैं। अर जंबूद्वीप में बतीस विदेह, एक भरत, एक ऐरावत ऐसे चौतीस क्षेत्रो में एक-एक आर्य खंड हैं। एक एक क्षेत्र में एक एक राजधानी हैं, और जम्बूद्वीप में गंगा आदिक चौदह महानदियां हैं। और छह भोगभूमि हैं। एक एक विजयार्ध पर्वत पर दो-दो गुफा हैं, ऐसे चौंतीस विजयार्ध के अडसठ गुफा हैं। छह कुलाचलों पर, विजयार्ध पर्वतों पर, और वक्षार पर्वतोंपर सभी स्थानों में भगवान् के अकृत्रिम चैत्यालय हैं। जंबू व शाल्मली वृक्ष में भी भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय हैं वह रत्नों की प्रभा से

सुशोभित है। जम्बूद्वीप के दक्षिणदिशा की ओर राक्षसद्वीप है, और ऐरावतक्षेत्र के उत्तरदिशा मे गधर्वनाम का द्वीप है। और पूर्वविदेह की पूर्वदिशा मे वरुणद्वीप हैं। और पश्चिम विदेह की पश्चिमदिशा मे किन्नरद्वीप है। उन चारो ही द्वीपो मे जिनमदिर है। जैसे एक महीने मे शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष यह दो पक्ष होते है, ऐसे ही एक कल्पकाल मे अवसर्पिणी ओर उत्सर्पिणी दोनो काल होते है। अवसर्पिणी काल मे पहलाकाल-सुखमासुखमा, दूसरा-सुखमा, तीसरा-सुखमादुखमा, चौथा-दुखमासुखमा, पाचवा-दुखमा और छट्ठा दुखमादुखमा काल है। उसके बाद उत्सर्पिणी काल आता है उसके शुरू मे पहले छट्ठा काल-दुखमादुखमा, फिर पाचवा-दुखमा, फिर चौथा-दुखमा-सुखमा, फिर तीसरा-सुखमादुखमा, फिर दूसरा-सुखमा, फिर पहला-सुखमासुखमा। इस प्रकार अरहट की घडी समान अवसर्पिणी के बाद उत्सर्पिणी और उत्सर्पिणी के बाद अवसर्पिणी काल हैं। निरन्तर यह कालचक्र इसी प्रकार चलता रहता है, परन्तु यह कालपरिवर्तन केवल भरत और ऐरावतक्षेत्र मे ही होता है, इसीलिये यहा आयु शरीर आदि की हानि वृद्धि होती है। और विदेहक्षेत्र मे तथा स्वर्ग एव नरको मे, भोगभूमियो मे, सर्व द्वीप समुद्रादि मे काल परिवर्तन नहीं होता, हमेशा एक समान काल रहता है, स्वर्ग मे और उत्कृष्ट भोग-भूमि मे तो हमेशा सुखमासुखमा पहला काल ही रहता है, और मध्यम भोगभूमि मे हमेशा दूसरा सुखमाकाल रहता है, जघन्य भोगभूमि मे हमेशा सुखमादुखमा तीसरे काल की क्रिया होती है, विदेहक्षेत्रो मे दुखमासुखमा चौथाकाल ही रहता हे। ढाईद्वीप के बाद और अत का आधा स्वयभूरमण द्वीपपर्यत बीच के असख्यातद्वीप समुद्र मे जघन्य भोगभूमि की क्रियाये होती है। और अन्त के आधेद्वीप मे तथा अत के स्वयभूरमण समुद्र मे तथा चारों कोनो मे, दुखमा पचमकाल की रीति हमेशा रहती है, और नरक मे दुखमादुखमा छट्ठे काल की रीति हमेशा रहती है। और भरत ऐरावतक्षेत्रो मे छहोकाल परिवर्तन होते है। जब पहला सुखमासुखमा काल आता है तब यहा देवकुरु उतरकुरु भोगभूमि के समान रचना होती है, कल्पवृक्षो सहित भूमि सुखरूप होती है। मनुष्य और पचेद्रियतिर्यच के शरीर की ऊचाई तीनकोश (नव किलोमीटर) और तीनपल्य की आयु होती है और प्रात काल का निकलता हुआ सूर्य के तेज जैसा मनुष्य का तेज होता है, सर्वलक्षण गुणो से पूर्ण शौभायुक्त होते है, स्त्री पुरुष का एक साथ ही जन्म होता है और एक साथ ही मरण होता है,

आपस मे एक दूसरे का विशेष प्रेम होता है। मरणकर देवगति मे जन्म लेते है, वहाँ की पृथ्वी रत्न स्वर्ण समान है, और कल्पवृक्ष दश प्रकार के सर्व मनोवांछित वस्तुये प्रदान करते है, वहा चार अंगुल महा सुगध स्वादिष्ट अत्यन्त कोमल घास से युक्त भूमि है, सब ऋतु के फल फूलो से वृक्ष सुशोभित है, हाथी घोडे गाय भैस आदि सभी जाति के पशु सुख से रहते है। मनुष्य कल्पवृक्षो से प्राप्त हुआ आहार करते है, वहा के सिहादिक भी हिसा नहीं करते, मास का भोजन नहीं करते है वहा बावडी सुवर्ण सयुक्त दूध, दही, घी, पकवान से भरी शोभायमान है। और पहाड ऊचे-ऊचे रत्नो की किरणो से मनोज्ञ सभी जीवो को सुख प्राप्त करानेवाले पचवर्णो से युक्त है। वहा की नदी जलचर जीवो से रहित दूध, घी, मीठे जल से भरी अत्यन्त स्वाद सयुक्त प्रवाहरूप धारा बहती है। नदी के किनारे, रत्नो की ज्योति सहित है। वहा दोइन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, असैनी पचेन्द्रिय तथा जलचरादि जीव नहीं होते है और थलचर, नभचर, गर्भजतिर्यच सभी जीव युगल ही जन्म मरण करते है। वहा ठडी, गर्मी, बारिश नहीं, तेज हवा भी नहीं, शीतल मद सुगध पवन चलती है किसीप्रकार का डर नहीं, हमेशा आनन्दयुक्त प्रसन्न रहते है। ज्योतिराग जाति के कल्पवृक्ष से चद्र सूर्य भी दिखाई नहीं देते है। दशप्रकार के कल्पवृक्ष इन्द्रियो के सुख देने वाले है, जहा खाना, पीना, सोना, बैठना, वस्त्राभूषण, सुगधादि सभी पदार्थ कल्पवृक्षो से उत्पन्न होते है। ये कल्पवृक्ष वनस्पति के नहीं और देवो के द्वारा किये हुए भी नहीं है। केवल पृथ्वी काय है। वहा युगल स्त्री पुरुष आनन्द सहित रहते है जैसे स्वर्गलोक मे देव। इस प्रकार गणधरदेव ने भोगभूमि का वर्णन किया। राजाश्रेणिक ने गौतमगणधर से प्रश्न किया कि-हे स्वामिन! भोगभूमि मे जन्म लेने का क्या कारण है गणधरदेव ने कहा कि जो मानव सरल परिणामी है, साधुओ को आहारदान देते है, वे भोगभूमि मे मनुष्य जन्म लेते है। जैसे–अच्छेखेत मे डाला गया बीज अनंतगुणा होकर फलता है, और गन्ने मे गया जल मीठा होता है। गाय ने पीया जल दूधरूप होता है, ऐसे महाव्रतीमुनि परिग्रहरहित साधु को दिया गया दान महाफल को प्राप्त होता है, और उसर खेत मे बोया बीज कमफल को प्राप्त होता है। जैसे नीम मे गया जल कडुआ होता है, ऐसे ही भोगतृष्णा के कारण जो कूदान करते है, वे कूभोग भूमि के कूमानुष एव तिर्यचगति मे जन्म लेते है।

भावार्थ—दान चार प्रकार का हैं आहारदान, औषधदान, ज्ञानदान और अभयदान। उसमें मुनि आर्यिका उत्कृष्ट श्रावकों को भक्ति से दान देना पात्रदान है और गुणोंसहित आपके समान साधर्मी जनो को देना समदान हैं, दुःखी जीवो को दया से देना करुणादान है सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग कर मुनिव्रत लेना सकलदान है। ये दान के भेद कहे। आगे काल चक्र को कहते हैं। जैसे एक मास में शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष यह दो पक्ष होते हैं, ऐसे ही एक कल्पकाल मे अवसर्पिणी उत्सर्पिणी दो काल होतें है, अवसर्पिणी काल मे प्रथम-सुखमासुखमाकाल, दुसरा-सुखमा, तीसरा-सुखमादुखमाकाल। जब तीसरे काल में पल्य का आठवां भाग शेष रहा, तब कुलकरों का जन्म हुआ, उनका वर्णन—हे राजाश्रेणिक सुनो! प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति थे उनके वचन सुनकर लोक आनंद को प्राप्त होते थे, वह कुलकर अपने तीन जन्म को जानते थे कर्मभूमि में व्यवहार के उपदेश देते थे। उनके बाद सहस्रकोटि असंख्यातवर्ष बीतने के बाद दुसरे सन्मति कुलकर हुए, उसके बाद तीसरे क्षेमंकर, चौथे क्षेमंधर, पाचवे सीमंकर, छठे सीमधर, सातवे विमलवाहन, आठवें चक्षुष्मान्, नव मे यशस्वी, दशवे अभिचंद्र, ग्याहरवें चन्द्राभ, बारहवें मरुदेव, तेरहवे प्रसेनजित, चौदहवे नाभिराज यह चौदह कुलकर पिता समान महाबुद्धिमान उत्पन्न हुए। जब ज्योतिराग जाति के कल्पवृक्षों की ज्योति कम हुई तब चाद सूर्य को देख लोग डरने लगे और कुलकरो से पूछा, की—हे नाथ! यह आकाश में क्या दिखता हैं तब कुलकरो ने कहा कि अब भोगभूमि का काल समाप्त हुआ, कर्मभूमि शुरू हुई। ज्योतिराग जाति के कल्पवृक्ष की ज्योति कम हुई, इसीलिये यह चॉद और सूर्य दिखाई देते है, देव चार प्रकार के हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यंतरवासी और ज्योतिषी। इनमे चॉद, सूर्य, ज्योतिषी देवो के ये इन्द्र और प्रतीद्र हैं, चंद्रमॉ की शीत किरणे है, और सूर्य की उष्ण किरणे है। जब सूर्य अस्त होता तब चद्रमॉ दिखाई देता, और आकाश में नक्षत्रों के समूह विचरण करते हैं, सूर्य के प्रकाश में नक्षत्र दिखाई नहीं देते हैं, जैसे कल्पवृक्ष की ज्योति से चंद्र सूर्य नहीं दिखते थे। अब कल्पवृक्ष की ज्योति कम होने से चंद्र सूर्य दिखते हैं, ऐसा काल का स्वभाव जानकर डरना नहीं। यह कुलकरों का वचन सुनकर प्रजा का डर समाप्त हुआ। चौदहवें कुलकर श्रीनाभिराजा के समय में सब कल्पवृक्ष नष्ट हो गये। युगल जन्म भी नहीं रहा। अकेले ही उत्पन्न हुए थे, उनकी मरुदेवीरानी मन को हरने वाली उत्तम पतिव्रता, जैसे

चंद्रमा के रोहणी, समुद्र के गंगा, राजहंस के हंसिनी ऐसे यह नाभिराज की रानी थी। राजा के मन की प्यारी, कोयल जैसे मधुर वचन, राजा के प्रेम की पात्र हुई। सर्व लोक पूज्य मरुदेवी, आत्म स्वरूप को जाननेवाली, सिद्धपद का ध्यान करने वाली, तीनलोक की माता महापुण्य अधिकारी मानों जिनवाणी ही है, अमृत स्वरूप इच्छा रहित रत्नवृष्टि ही है महारूपवान आनंद सहित माता का शरीर ही आभूषण है। ललाट सुन्दर है। इनको आभूषणों की इच्छा नहीं, फिर भी पति की आज्ञा प्रमाण सर्व आभूषण पहने हैं। जिनकी वाणी वीणा के स्वर को ही जीतती है, नाभिराजा ओर मरुदेवी रानी के यश का वर्णन सैकडों ग्रन्थों में भी नहीं हो सकता तो कम श्लोकों मे कैसे हो सकता है। जब मरुदेवीरानी के गर्भ में, भगवान के आने के छहमहीने पहले से ही इंद्र की आज्ञा से छप्पन कुमारीयां हर्षित होकर माता की सेवा करती हैं। और 1 श्री 2 ही, 3 घृति, 4 कीर्ति, 5 बुद्धि, 6 लक्ष्मी यह छह कुमारीया स्तुति करती हैं, हे माता! आप आनन्दरूप हो, हमको आज्ञा देवों, आप दीर्घ आयु हो, इस प्रकार प्रशस्त मधुर शब्द कहती है, अनेक प्रकार सेवा करती हैं, कोई वीणा बजाकर माता को प्रसन्न करती है, कोई बिस्तर लगाती, कोई पैर दबाती, कोई पान सुपारी देती, कोई तलवार लेकर द्वार पर खडी रहती, कोई दर्पण दिखाती, कोई चवर ढोरती, कोई आभूषण पहनाती है, कोई स्नान कराती, कोई फूलों का हार गूथती, कोई सुगंध लगाती, कोई खाने पीने की विधि करती, कोई किसी को बुलाने जाति, इस प्रकार सभी कार्य माता की सेवा में देविया करती थी, माता को किसी प्रकार की कोई चिंता नहीं थी। एक दिन माता कोमल सेज पर शयन करती थी, तब रात्रि के पिछले प्रहर में अत्यन्त कल्याणकारी सोलह स्वप्न देखे। 1. पहले स्वप्न में "सफेद ऐरावतहाथी देखा। 2. दुसरे स्वप्न में ऊंचे कंधों वाला बैल देखा। 3. तीसरे स्वप्न मेचंद्रमा समान सफेद केशों से युक्त सिंह देखा। 4. चौथे स्वप्न में, लक्ष्मी को सोने के कलशों से हाथीद्वारा स्नानकराते देखा। 5. पाचवें स्वप्न में दो पुष्पों की माला आकाश में लटकती हुई देखी। 6. छट्ठे स्वप्न में अंधकार को दूर करने वाला सूर्य देखा। 7. सातवें स्वप्न में, रात्रि का आभूषण ताराओं का पति चंद्रमा देखा। 8. आठवें स्वप्न में निर्मलजल में कलोलकरते सुन्दर युगल मीन देखे। 9. नवमें स्वप्न में जिनके गले में मोतियों के हार और पुष्पों की माला युक्त पंचप्रकार के रत्नों से पूर्ण स्वर्ण के कलश देखें। 10. दशवे स्वप्न में जल से भरा

कमलसहित सरोवर देखा। 11 ग्यारहे स्वप्न मे समुद्र, उसमे अनेक जलचर जीवक्रीडा करतेहुये तरंगो से युक्त देखा। 12 बारहवे स्वप्न मे अनेक रत्नो से जडित स्वर्ण का सिहासन देखा। 13 तेरहवे स्वप्न मे रत्नो से जडित देवताओ का विमान आते हुए देखा। 14 चौदहवे स्वप्न मे मोतियो की माला से मडित अनेक मजिल का धरणेन्द्र का भवन देखा। 15 पद्रहवे स्वप्न मे पाच वर्ण के महारत्नो की राशि का अत्यत ऊँचा ढेर देखा। 16 सोलहवे स्वप्न मे निर्धूमअग्नि की ज्वाला देखी। सोलह स्वप्न देखने के बाद मगल शब्दो को सुनने से माता प्रबोध को प्राप्त हुई। देवीया कहती है हे माता! तेरे मुख रूपी चद्रमा की ज्योति से शर्मिदा होकर रात्रि का निशाकर मद हुआ, सूर्य अब उदय होने वाला है। इसीलिये हे माता! अब रात्रि व्यतीत हुई, आप निद्रा को छोडो। यह शब्द सुनकर माता सेज से उठी। कल्पवृक्षो के पुष्प ओर मोतियो से युक्त माता की सुन्दर सेज उसे छोडकर मरुदेवी माता सुगध महल से बाहर आई। और प्रात काल की क्रिया कर रानी नाभिराजा के समीप आई, राजा रानी को देखकर सिहासन से उठे। रानी राजा के पास सिहासन पर बैठी और हाथजोड प्रसन्नमन से रात्रि के पिछले प्रहर मे देखे स्वप्नो का फल पूछा। तव राजा ने कहा—हे कल्याण रुपिणी! तेरे तीनलोक के नाथ श्रीआदीप्रभु का जन्म होगा। यह शब्द सुनकर माताको परमहर्ष हुआ। और इन्द्र की आज्ञा से, कुबेर पन्द्रह महीने तक रत्नो की वर्षा करते रहे। गर्भ मे आने के छह महीने पहले से ही रत्नो की वर्षा की इसीलिये इद्रादि देवो ने हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कहकर स्तुति की और तीनज्ञान सयुक्त भगवान माता के गर्भ मे आकर विराजमान हुये माता को किसी प्रकार का दुःख नहीं हुआ।

नवमहीना सातदिन के पश्चात् भगवान ऋषभदेव का जन्म हुआ तब नाभिराजा ने पुत्र के जन्म का महान उत्सव मनाया। तीनलोक के जीवो को हर्ष हुआ। इन्द्रो के आसन कपायमान हुए, भवनवासी देवो के बिना बजाये शख बाजे, व्यतरदेवो के स्वय ही ढोल बाजे, ज्योतिषी देवो के सिहनाद हुआ और कल्पवासीदेवो के घटे बाजे, इस तरह शुभ चेष्टा से तीर्थकरदेव का जन्म हुआ जानकर इन्द्रादि देव नाभिराजा के घर आये। इन्द्र ऐरावतहाथी पर चढ अनेक आभूषणो को पहनकर सभी देव नृत्य करतेहुए अयोध्या पुरी की तीन प्रदक्षिणा देकर राजा के आगन मे आये। कैसी है अयोध्या? धनपति कुबेर ने रचना की है। पर्वत समान

ऊँचे कोट, गभीर खाई, घर घर मे रत्नो का प्रकाश हो रहा हैं। तब सौधर्म इन्द्र ने शची इन्द्राणी को भगवान को लाने के लिये माता के पास प्रसूति घर मे भेजा, इन्द्राणी जाके नमस्कार कर मायामयी बालक को माता के पास सुलाकर भगवान को लेकर आयी और इन्द्र के हाथ मे दिये। कैसे है भगवान? तीनलोक के रूप को जीतनेवाले, ऐसा अनुपमरूप भगवान का देख, इन्द्र हजारनेत्र बनाकर भगवान के रूप को देखकर भी तृप्त नहीं हो पा रहा था। भगवान को सौधर्मइन्द्र गोद मे लेकर ऐरावत हाथी पर चढे, ईशान इद्र ने छत्र लगाया और सनतकुमार माहेन्द्र ने चमर ढोरे अन्य सभी इन्द्र और देव जय जयकार करते रहे। फिर सुमेरुपर्वत पर, पाडुकशिला के सिहासन पर भगवान को विराजमान किया। अनेक बाजो की मधुर ध्वनि हुई और यक्ष, किन्नर, गधर्व, तुम्बरु, नारद अपनी देवागनाओ सहित गीत नृत्य करते रहे। वहा बीणादि अनेक बाजे बजे, अप्सराये हाव भाव कर नृत्य करती थी, इद्रो ने क्षीरसागर के जल से स्वर्ण कलश भरकर अभिषेक किया। कैसे है कलश। जिनका मुख एकयोजन का, चार योजन के चौडे और आठ योजन के गहरे और कमल के पत्तो से मुख ढके है, ऐसे एकहजार आठ कलशो से इन्द्र ने अभिषेक किया। विक्रिया ऋद्धि के कारण इन्द्र ने अपने अनेक रूप बनाये और इन्द्रो के लोकपाल सोम, वरुण, यम, कुबेर सबने ही अभिषेक किया। इन्द्राणी आदि देवियो ने अपने हाथो से भगवान के शरीर पर सुगध पदार्थो का लेप किया, महागिरी समान श्रीभगवान, उनका मेघसमान धाराओ से युक्त कलशो से अभिषेक किया। और चाद सूर्य समान दोकुडल कानो में, पद्मराग मणि के आभूषण मस्तक पर, दोनो भुजाओ मे रत्नो के बाजूबद, और श्रीवत्सलक्षण से युक्त हृदयपर मोतियो का सत्ताईस लडी का हार, महामणियो के कडे हाथो में और रत्नमयी कटिसूत्र, सभी अंगुलियो मे रत्न जडित अगूठी आदि अनेक अमूल्य आभूषण पहनाये, अर्धचंद्राकार ललाट मे चंदन का तिलक लगाया, अनेक लक्षणों से युक्त भगवान की ज्योति से दिशाये ज्योति रूप हुई।

इस प्रकार भक्ति से देवियों ने आभूषण पहनाये। सो तीनलोक के आभूषण श्रीभगवान के शरीर की ज्योति से वे आभूषण अत्यत ज्योति को प्राप्त हुए। इस प्रकार तीनलोक के भूषण तीर्थकर बालक को आभूषण पहनाकर इंद्रादि देवों ने स्तुति की। हे देव! काल के प्रभाव से धर्म का विनाश हुआ, इस जगत में महान अज्ञान अंधकार से भ्रमण करते भव्य जीवो के लिये आप सूर्य समान उत्पन्न हुए

हैं। हे प्रभु! आपके वचनरूपी किरणों से इस ससार में केवलज्ञान रूपी ज्योति प्रगट हुई है। और पाप रूपी शत्रुओं को नाशकरने के लिये आप तीक्ष्ण बाण ही हैं, आप ध्यान रूपी अग्निसे भवरूपी वनको भस्म करनेवाले हैं, इन्द्रियरूपी सर्प को वशकरने के लिए आप गरुडरूप है, संदेहरूप मेघ को उडाने के लिए आप प्रबल पवन हैं, हे नाथ! बहुत दिनों के प्यासे भव्यजीव को आप धर्मरूपी अमृत पिलानेवाले हैं, आपकी अत्यन्त निर्मल कीर्ति तीनलोक में फैली हैं, आप कल्पवृक्षरूप मनवांछित फल को देने वाले हैं, कर्मरूपी काष्ठ को काटने के लिए तीक्ष्ण कुठाररूप हैं, मोहरूपी पर्वत को खंड खंड करने के लिए वज्र रूप हैं, दुखरूपी अग्निको बुझाने के लिए जलरूप हैं, इस प्रकार इन्द्रादिक देवों ने भगवान की स्तुतिकर बारम्बार नमस्कार किया। और इन्द्र ऐरावतहाथी पर बैठकर अयोध्या में आये। इन्द्र ने माता की गोद में भगवान को देकर, परम आनंदित होकर, तांडव नृत्य किया। इस प्रकार जन्मोत्सव मनाकर देव अपने अपने स्थान को चले गये। माता-पिता भगवान को देखकर बहुत हर्षित हुये, कैसे है भगवान? अनुपम आभूषणों से विभूषित, सुगधित लेप से युक्त, निर्मल चारित्र एवं अपने शरीर की ज्योति से सर्व दिशाओं को प्रकाशित किया हैं, माता भगवान को गोद में लेकर ऐसी शोभायमान हो रही थी, जैसे सूर्य निकलते पूर्व दिशा। तीन लोक के ईश्वर को देख नाभिराजा अपने आपको कृतार्थ मानकर अति प्रसन्न हो रहे थे, जगत में श्रेष्ठ जानकर माता पिता ने ऋषभनाम भगवान का घोषित किया। इन्द्र ने भगवान के हाथ के अंगुठे में अमृतरस भरा, उसको पीकर भगवान का शरीर वृद्धि को प्राप्त हुआ। प्रभु के आयु प्रमाण इंद्र ने देवो को रखा, जिनबालक उन्हीं के साथ क्रीडा करते थे, माता पिता देख प्रसन्न होते थे। अत. भगवान के आसन, शयन, सवारी वस्त्र आभूषण भोजन पान सुगन्धित पदार्थ गीत नृत्य आदि सब सामग्री देवों पुनीत होती थी। थोडे ही समय में भगवान अनेक गुणों से सम्पन्न हुये, उनका अनुपमरूप मन और नेत्र को हरने वाला, मेरु समान, ऊंचा शरीर, दृढ़ वक्षस्थल, खंभे समान भुजायें, दान करने में कल्पवृक्ष समान, सूर्यचन्द्र के तेज को जीतने वाला, प्रभु का मुख, कोमल लाल हथेली, केश महासुन्दर सघन पतले चिकने श्याम वर्ण के हैं, ऐसी उपमा के धारी भगवान कुमार अवस्था में भी जगत के जीवों को सुखदायक होते थे। उससमय कल्पवृक्ष सर्वथा नष्ट हो गये थे। बिना बोये अनाज स्वयं उगकर इस पृथ्वी को सुशोभित कर रहे थे। षट्कर्म

को करने में मानव अनजान एवं भोले थे। उन्होंने प्रथम इक्षुरस का भोजन किया, वह भोजन कांति एवं शक्ति बढाने में समर्थवान था। कुछ दिनों के पश्चात् लोगों की भूख बढी, जो कि इक्षुरस से तृप्ति नहीं हुई, तब सभी मानव नाभिराजा के निकट आये और नमस्कार कर प्रार्थना करते हैं कि हे नाथ! कल्पवृक्ष समस्त नष्ट हो गये, हम क्षुधा तृषा से पीडित होकर आपकी शरण में आये हैं, आपही हमारी रक्षा करें। हे प्रभो! इस पृथ्वीपर अनेक फलों से युक्त वृक्ष उत्पन्न हुये हैं परन्तु उनकी विधि हम नहीं जानते हैं कि इनमें कौन भक्ष्य हैं और कौन अभक्ष हैं, गाय भैंस के थनों से कुछ झरता है पर वह क्या हैं? यह व्याघ्र, सिंहादिक पहले सरल थे, अब वे क्रूरता रूप हो रहे हैं। इस पृथ्वीपर जल से भरे सरोवर में पुष्प दिख रहे हैं ये सब क्या हैं? हे प्रभो! आपके प्रसाद से आजीविका के उपाय जानकर हम सुख से जीवन जी सकते है। इस प्रकार के वचन सुनकर प्रजा को दुखी देख नाभिराजा को दया उत्पन्न हुई, और कहा कि इससमय संसार में ऋषभदेव के समान और कोई भी नहीं है, उनके जन्म समय में रत्नवृष्टि, देवों का आगमन, प्राणियों को हर्ष उत्पन्न होना, ऐसे अतिशय से युक्त जो भगवान उनके समीप जाकर आजीविका का उपाय पूछें। प्रजा सहित नाभिराजा भगवान के समीप आये। समस्त प्रजा नमस्कार कर भगवान की स्तुति की। हे देव! आपका शरीर तेज रूप है, सर्व लक्षणो से सुशोभित है,, आपके निर्मल गुणों की कीर्ति जगत में फैल रही हैं। हे प्रभो! हम अपनी आजीविका के कारण आपके पिता के पास आये थे, वे हमें आपके निकट लाये हैं, आप महापुरुष महाविद्वान अतिशय से मंडित परम दयालु हमारी रक्षा करो। क्षुधा, तृषा हरने का और सिंह आदि क्रूर जीवों से बचने का उपाय बताओ। तब कृपानिधि, कोमल हृदयी भगवान ने प्रजा को दुखी देख अवधिज्ञान से विदेहक्षेत्र की रचना जानकर इन्द्र को कर्मभूमि की रचना प्रगट करने की आज्ञा दी। प्रथम ही नगर ग्राम गृहादिक की रचना की, जो मनुष्य शूरवीर थे उनकी क्षत्रीवर्ण की स्थापना की, और कहा कि आप दीन अनाथों की रक्षा करो, किसी को व्यापार कार्य बताकर वैश्य की स्थापना की, जो मानव सेवा करनेवाले थे उनको शुद्र कहा, इस प्रकार भगवान ने प्रजा को क्षुधा तृषा को दूर करने का मार्ग बताया, इसीलिये भगवान को सभी कृतयुग कहकर परमहर्ष को प्राप्त हुए। श्रीऋषभदेव के नंदा और सुनंदा यह दो रानियां थी, बडी रानी के भरतादि सौ पुत्र और एक ब्राह्मी पुत्री थी, और दुसरी राणी सुनंदा के

बाहुबली एक पुत्र सुदरी एक पुत्री थी। ऐसे भगवान ने त्रेसठलाखपूर्व कालतक राज्य किया। और बीसलाख पूर्व तक कुमार काल मे रहे, इस प्रकार तिरासीलाखपूर्व काल गृहस्थ जीवन मे बिताया।

एक दिन नीलंजना अप्सरा भगवान के दरबार मे नृत्य करती हुई मरण को प्राप्त हुई, उसको देखकर प्रभु को वैराग्य हुआ, और चितवन करने लगे कि ये ससार के प्राणी वृथा ही विषय भोगो मे फसकर शरीर के दु ख रूप साधनो में सुख मानते है, कोई पराधीन नौकर है, कोई स्वामी बनकर दूसरो पर आज्ञा करते है, कोई मान के कारण गर्व के भरे वचन बोलते है। धिक्कार है इस ससार को, जिसमे जीव दुख को ही सुख मानते है इसीलिये मै जगत के विषय सुखो को छोडकर तप संयम को धारण कर मोक्षसुख की प्राप्ति का प्रयत्न करू। यह विषय सुख क्षणभगुर है कर्म के उदय से प्राप्त होते है, इस प्रकार श्रीऋषभदेव का मन वैराग्य चितवन मे लगा। तब ही लौकातिक देवो ने आकर भगवान के वैराग्य की स्तुति की। हे नाथ! आपने बहुत अच्छा विचार किया, तीनलोक मे कल्याण का कारण सयम और तप ही है। भरतक्षेत्र मे मोक्ष का मार्ग बद हुआ था, सो अब आपके कारण पुन खुल जायेगा। ससारी जीव आपके दिखाये मार्ग को प्राप्तकर निर्वाण को प्राप्त होगे। इस प्रकार लोकान्तिक देव स्तुतिकर अपने स्थान को चले गये। इन्द्रादिक देवो ने आकर तप कल्याणक मनाने के लिए रत्नजडित सुदर्शन नाम की पालकी मे भगवान को बैठाया। कैसी है वह पालकी? कल्पवृक्ष की मालाओ से सुगधित और मोतियो के हारो से सुशोभित है। भगवान ने उस पालकी पर चढकर वन की ओर गमन किया, अनेक प्रकार के बाजो की ध्वनि एव देवो के नृत्य से दशो दिशाये गुजाय मान हुई, और महाविभूति सहित तिलक नामा उद्यान मे गये। माता पितादिक सर्व परिवार से क्षमाभाव कर और सिद्धों को नमस्कार कर मुनिपद को अगीकार किया। सम्पूर्ण वस्त्राभूषण त्यागकर केशलोच किया, उन केशोको इन्द्रने रत्नोके पिटारेमे रखकर क्षीर सागर मे पधराये। भगवान के साथ चारहजार राजाओ ने केवल, स्वामी की भक्ति के कारण दिगम्बर भेष को धारण किया, भगवान ने मन और इन्द्रियो का निरोधकर छहमहीने पर्यत कायोत्सर्ग ध्यान अवस्था मे निश्चल खडे रहे। तत्पश्चात कच्छ, महाकच्छादि जो चारहजार राजाओ ने दीक्षा ली थी, वे सभी क्षुधा तृषादि से व्याकुल होकर मुनि पद को छोड दिया। कोई तो परीषहरूपी पवन को न सहने

से भूमिपर गिर पडे, कोई बैठ गये, कोई कायोत्सर्ग तज फलादिक को खाने लगे। कोई गरमी से तप्तायमान होकर शीतल जल मे प्रवेश करने लगे। तब आकाश मे देव वाणी हुई कि मुनिपद धारणकर तुम ऐसा काम मत करो, ऐसा कार्य करना नरकादि दुखो का कारण है, तब उन्होने नग्नमुद्रा तजकर बल्कल पत्र धारण किये, किसी ने वस्त्र पहने, कोई फलों को खाकर एव जल को पीकर भूख प्यास दूर करने लगे। तब किसी ने पूछा कि यह कार्य तुम भगवान की आज्ञा से करते हो या अपनी इच्छा से, तब उन्होने कहॉ कि भगवान तो मौन से खडे है, वे कुछ कहते नहीं, हम क्षुधातृषा से दुखी, होकर, यह कार्य कर रहे हैं, तब कोई कहने लगे चलो घर मे जाकर पुत्र स्त्री आदि का अवलोकन करे, पुन· उनमे से किसी ने कहा जो हम घर मे जायेगें, तो राजा भरत घर से हमें निकाल देगे, तीव्र दड देगे अत घर नहीं जायेगे। इन सब मे महामानी मारीच भरत का पुत्र भगवान का पोता लाल वस्त्र पहनकर परिव्राजक सन्यासके मार्गका प्रचार करने लगा।

तत् पश्चात् कच्छ महाकच्छ के पुत्र नमि विनमि आकर भगवान के चरणो मे गिरे और कहने लगे, हे प्रभु! आपने सबको राज्य दिया, हमको भी दीजिये, इसप्रकार प्रभु से याचना करने लगे, तब धरणेन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ और धरणेन्द्र ने आकर इनको विजयार्द्ध का राज्य दिया। वह पर्वत भोगभूमि के समान है, पृथ्वी तल से पच्चीसयोजन ऊँचा है, सवा छ· योजन की जड है। भूमि पर पचासयोजन चौडा है, दश योजन ऊँचा है दश-दश योजन की दो श्रेणी है, दक्षिणश्रेणी मे पचास और उत्तरश्रेणी मे साट. नगरीयॉ हैं वहॉ विद्याधरो का निवास है। एक एक नगरी के कोटि कोटि ग्राम हैं, दश योजन ऊपर गधर्व, किन्नर आदि देवो के निवास हैं। पॉच योजन ऊपर नौ सुन्दर शिखर है। प्रथम सिद्धकूट मे अकृत्रिम चैत्यालय है, शेष कूटो मे देवो का निवास है। सिद्धकूट पर चारणमुनि आकर ध्यान करते है। दक्षिणश्रेणी में रथनुपुर और उत्तर श्रेणी में अलकावती मुख्य नगरी है। विद्याधरो की नगरियो में स्वर्गलोक समान, सदा उत्सव होते रहते हैं। बडे बडे दरवाजे, युगल कपाट, सुवर्ण के कोट, गंभीर खाई, वन, उपवन, वापी, कुऑ, सरोवरादि से महा शोभायमान है, वहॉ सर्व ऋतु के धान, फल, फूल सदा प्राप्त होते हैं, सर्व औषधियॉ मिलती हैं सर्व काम का साधन है सरोवर कमलो से भरे हैं, हंस क्रीडा करते हैं। दही, दूध, मिष्ठान्न के समान

जल के झरने बहते है, बावडीयो मे स्वर्ण मणियो की सीढियॉं हैं कमल खिले है, कामधेनु समान गाये है, पर्वत समान अनाज के ढेर है मार्ग धूल, ककट, पत्थर, कांटों से रहित है, अतिगहन वृक्षो की छाया है, चातुर्मास मे मेघ मनवाछित बरसते है। मेघो की ध्वनि आनन्द कारी है। शीत उष्ण की बाधा नहीं है। विद्याधरियॉं कोई कमल की प्रभा समान है, कोई महासुगन्ध शरीर वाली है, कोई फूलो के सुन्दर आभूषण पहनती है, कोई चन्द्रमा समान ज्योतिरूप है, वे विद्याधरियॉं देवॉंगना समान सुशोभित है। और विद्याधर पुरुष शूरवीर सिह समान पराक्रमी, आकाश में गमन करने मे समर्थ, सुन्दर क्रियाओ को करने वाले, न्यायमार्गी, देवोसमान है, प्रभा जिनकी, ऐसी अपनी रानियों सहित विमान में बैठ ढाईद्वीप मे जहॉं इच्छा हो, वहॉं ही विहार करते रहते है। इस प्रकार दोनो श्रेणी के विद्याधर देवतुल्य इष्ट भोगो को भोगते महाविद्याओ के धारक है। कामदेव समान रूप, चन्द्रमासमान मुख, धर्म के प्रसाद से प्राणी सुख सम्पत्ति को प्राप्त करता है। इसीलिये एक धर्म का ही पुरुषार्थ करना चाहिये और ज्ञानरूपी सूर्य से अज्ञान रूपी अन्धकार को नाश करना चाहिये।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषाटीका मे विद्याधर लोक का कथन करनेवाला तीसरा अधिकार पूर्ण हुआ।)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-4

भगवान ऋषभदेव का आहार-निमित्त विहार वर्णन

अत श्रीऋषभदेव भगवान महाध्यानी, सुवर्ण समान प्रभाके धारक, जगतका हित करने के निमित्त छहमहीने बाद आहार के लिये चले। लोग आहार की विधि जानते नहीं थे, अनेक नगर ग्राम देशों मे विहार किया, जैसे अद्‌भुत सूर्य ही विहार कर रहा है, और परम समाधान रूप अधोदृष्टि देखते, जीव दया पालते विहार करते है, नगर ग्रामादि के आज्ञानी लोग अनेक प्रकार के वस्त्र, रत्न, हाथी, घोडे, रथ, कन्या आदि भेंट करते, उनको इन वस्तुओं से कोई प्रयोजन नहीं। इसी कारण प्रभु पुनः वन को चले जाते हैं। इस प्रकार छह महीने तक आहार विधि प्राप्त नहीं हुई, अर्थात दीक्षा समय से लेकर तेरह महीना और

नवदिन तक बिना आहार के रहे। पुनः विहार करते हुए हस्तिनापुर आये, तब सभी श्रावक, पुरुषोत्तम भगवान को देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुए। राजा सोमप्रभ एव लघु भ्राता श्रेयास दोनो भगवान के सन्मुख आये, श्रीआदिप्रभु को देखते ही राजा श्रेयांस को पूर्वभव का जातिस्मरण हुआ और मुनि की आहार विधि को जान कर, भगवान की प्रदक्षिणा करते ऐसे सुशोभित हो रहे थे, जैसे सुमेरू की प्रदक्षिणा सूर्य ही दे रहा हो। बार बार नमस्कार कर भगवान के चरणो का प्रक्षालकर अपने सिर के केशो से चरण पोछे। स्वर्णपात्र मे अष्टद्रव्य से पूजा की, और चरणो मे नमस्कार कर आनन्द के अश्रुपात सहित गदगद वाणी से स्तुतिकर भगवान के गुणो मे अनुरागी होते हुए महापवित्र रत्न कलशो मे भरे हुए महाशीतल मिष्ठ इक्षुरस का आहार परम श्रद्धा एव नवधा भक्ति से दिया। भगवान का वर्षोपवास के बाद पारणा हुआ। उस अतिशय से देवो ने हर्षित होकर पचाश्चर्य की वृष्टि की। रत्नो की वर्षा, कल्पवृक्षो के पचवर्णो की पुष्पवर्षा। शीतल मद सुगध पवन चली, अनेक दुदुभी बाजो की ध्वनि और देव वाणी हुई, धन्य यह पात्र, धन्य यह दान, धन्य दान को देने वाला राजा श्रेयास। ऐसे मनोहर शब्द देवताओं के आकाश मे गुजे। राजा श्रेयास की कीर्ति देखकर दान विधि प्रकट हुई। देवो द्वारा राजा श्रेयास की प्रशसा हुई और भरत चक्रवती ने श्रेयांस की स्तुतिकर, प्रीति पूर्वक दानवीर की पदवी दी। भगवान आहार लेकर वन मे गये।

अथानतर भगवानने एकहजारवर्ष पर्यत महातप किया, पुन· शुक्लध्यान के बल से मोह को नाशकर केवलज्ञान को प्राप्त किया। कैसा है वह केवलज्ञान! लोकालोक को जानने वाला है। केवलज्ञान होते ही अष्ट प्रातिहार्य प्रगट हुये, भगवान के शरीर की कांति की प्रभामण्डल से चद्र सूर्यकी ज्योति कम हुई और रात दिन का भेद नहीं रहा। अशोकवृक्ष रत्नमई पुष्पों से युक्त हैं, आकाश से देवों ने पुष्पवर्षा की, महादुंदुभी बाजो की ध्वनि देवो के द्वारा हुई, चंद्रमा की किरणों से भी अति उज्ज्वल चमर इन्द्रादिक ढोरते हैं, सुमेरू के शिखर समान रत्नमयी सिहासन प्राप्त हुआ और तीनलोक की प्रभुता के चिन्ह मोतियो के झालर से शोभायमान तीनछत्र अति सुशोभित है, जैसे भगवान का निर्मलयश ही हैं, और समोशरण में भगवान सिहासन के ऊपर चार अगुल अधर विराजमान हुये, उस समोशरण की महिमा को कहने के लिये केवली ही समर्थ हैं, अन्य कोई नहीं। चारो निकाय के देव वंदना करने आये, भगवान के मुख्य गणधर वृषभसेन थे,

और भी बहुत मुनिराज विराजमान थे, महा वैराग्य के धारक सभी प्राणी बारह सभा मे अपने अपने स्थान में बैठे। पश्चात् भगवान की दिव्यध्वनि हुई, जीवो के कल्याण के लिए तत्त्व का कथन किया, तीनलोकमे जीवो को धर्म ही परम शरण है, धर्म से ही परम सुख होता हैं, सुख को सभी चाहते हैं, इसीलिये धर्म का कार्य करना, जैसे मेघ बिना वर्षा नहीं, बीज बिना अनाज नहीं, वैसे ही जीवो को धर्म के बिना सुख नहीं। जैसे कोई लगडा पुरुष चलने की इच्छा करे, गूंगा बोलने की इच्छा करे, अधा देखने की इच्छा करे, वैसा ही अज्ञानी प्राणी धर्म बिना सुख की इच्छा करता है। जैसे परमाणु से कोई सूक्ष्म नहीं व आकाश से कोई बडा नहीं, वैसे ही धर्म समान जीवो को कोई मित्र नहीं, दया समान धर्म नहीं। मनुष्य के भोग, स्वर्ग के भोग और सिद्धों का परमसुख सब धर्म से ही प्राप्त होता है। इसीलिये धर्म को छोडकर अन्य पुरुषार्थ से क्या? जो प्राणी जीव दया और धर्म को धारण करते है, वो ही स्वर्ग मोक्ष को प्राप्त करते है, पापी जीव नरक निगोद में जाते हैं, यद्यपि द्रव्यलिगी मुनि तप की शक्ति से स्वर्ग मे उत्पन्न होते है, वे छोटे देव बनकर बडे देवो की सेवा करते है, देवलोक मे नीच देव होना देवदुर्गति है। सो देव दुर्गति के दुख को भोगकर तिर्यच के दु.ख भोगते है। जो सम्यग्दृष्टि जीव जिनशासन के अभ्यासी तप सयम के धारक स्वर्ग में जन्म लेते है, इन्द्रादि बडे देव होकर बहुत समय सुख भोग देवो से च्युत होकर मनुष्य बन मुनि होके मोक्ष प्राप्त करते हैं। धर्म दो प्रकार का है। एक मुनिधर्म, दूसरा श्रावक धर्म, तीसरा धर्म जो कोई मानते है वे मोहरूपी अग्नि मे जलते है। पाच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत ये बारह व्रत श्रावक का धर्म है। श्रावक मरण समय सर्वारम्भ छोड शरीर से भी निर्ममत्व होकर समाधिमरण कर उत्तम गति को जाता है। और मुनि धर्म पॉचमहाव्रत, पॉचसमिति और तीनगुप्ति ये तेरह प्रकार का चारित्र है। दिशाये ही मुनि के वस्त्र है। जो पुरुष मुनिधर्म को धारण करते है, वे शुद्धोपयोग से निर्वाणपद को प्राप्त करते हैं। और जिसके शुभोपयोग की मुख्यता है, वे स्वर्ग प्राप्त करते हैं, एव परपरा से मोक्ष जाते है। जो जीव भावो से मुनियो की स्तुति करता है, वह धर्म को प्राप्त होता है। ऐसे धर्म के प्रभाव से सब पापो से छूटकर ज्ञान को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार के धर्म का कथन भगवान ने किया। उसे सुनकर सभी प्राणी पापो को छोड परमहर्ष को प्राप्त हुए। किसी ने सम्यक्त्व प्राप्त किया, किसी ने सम्यक्त्व सहित श्रावक के व्रतो को धारण किया, किसी ने

मुनिव्रत धारण किया, इस प्रकार देव व मनुष्य दिव्यध्वनि को सुनकर अपने अपने स्थान गये। भगवान ने जहॉ जहॉ विहार किया, वहॉ वहॉ धर्म का प्रचार प्रसार हुआ। सौ सौ योजन पर्यत दुर्भिक्षादि दुखो का क्षय हुआ। ऐसे आदिप्रभु के चौरासी गणधर, चौरासी हजार मुनियों सहित उत्तम उत्तम देशगांव नगरादि मे विहार हुआ।

तदंतर भरत, चक्रवर्ती पदको प्राप्त हुए। और भरत के सभी भाई मुनि बन मोक्ष गये। भरत ने छहखण्ड का राज्य किया। अयोध्या राजधानी, नवनिधि, चौदहरत्न, प्रत्येक रत्नो की हजार हजार देव रक्षा करते हैं। तीन करोड गाय, एककरोडहल, चौरासीलाखहाथी, चौरासीलाखरथ, अठारह करोड घोडे, बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजा, इतने ही देश महा सम्पदा के भरे, छियानवें हजार रानीयॉ देवागना समान इत्यादि चक्रवर्ती के वैभव का कहॉ तक वर्णन करें। पोदनपुर मे दूसरी माता का पुत्र बाहुबली उन्होंने भरत की आज्ञा नहीं मानी और कहा कि हम भी ऋषभदेव के पुत्र है किसकी आज्ञा माने। तब भरत और बाहुबली का युद्ध हुआ, सेना का युद्ध नहीं, दोनो भाईयो ने आपस में दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध किया। तीनो ही युद्धो मे बाहुबली जीते और भरत हारे, तब भरत ने बाहुबली पर चक्र चलाया। वह चक्र उनके चरम शरीर पर घात नहीं कर सका, लौटकर भरत के हाथ मे आया, भरत लज्जित हुए। बाहुबली भोग त्यागकर वैरागी हुये, एकवर्षपर्यत कायोत्सर्ग धारणकर निश्चल रहे। शरीर बेलो से वेष्ठित हुआ, सर्पो ने बिल बनाये, एक वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ। भरत चक्रवर्ती ने आकर केवली की पूजा की। बाहुबली भगवान कुछ समय पश्चात निर्वाण को प्राप्त हुये। अवसर्पिणी काल के महापुरुषो मे प्रथम मोक्ष को गमन किया। भरत चक्रवर्ती ने निष्कटक छहखण्ड का राज्य किया। उनका राज्य विद्याधरो के समान सर्व सम्पदा भरे, देवलोक के समान नगर, महाविभूति से मडित, जिसमें देवो समान मनुष्य अनेक प्रकार के वस्त्राभूषणो से सुशोभित होकर नगर में रमण करते है, लोग भोगभूमि समान सुखी, लोकपाल समान राज्य, कामदेव समान निवासभूमि, अप्सरा समान रानियॉ, जैसे स्वर्ग में इन्द्र राज्य करता है, वैसे भरत चक्रवर्ती ने एकछत्र पृथ्वीपर राज्य किया। भरत के सुभद्राराणी इन्द्राणी समान जिसकी हजार देव सेवा करते, चक्रवर्ती के अनेक पुत्र हुए। इस प्रकार गौतमस्वामी ने भरत चक्रवर्ती का चरित्र श्रेणिक राजा से कहा।

(विप्रोत्पत्ति वर्णन)

अथ.—राजा श्रेणिक ने पूछा—हे प्रभो! तीनवर्ण की उत्पत्ति आपने कही, वह मैंने सुनी, अब विप्रों की उत्पत्ति सुनना चाहता हूँ सो कृपाकर कहो। गणधरदेव जिनका हृदय जीवदया से कोमल है, वे कहने लगे कि, एक दिन भरत अयोध्या के पास भगवान का आगमन जानकर समोशरण मे गये, वहॉ वंदना स्तुतिकर मुनि के आहार की विधि पूछी। भगवान ने दिव्यभाषा मे कहा कि हे भरत! मुनि भूख प्यास रहित मासोपवासी दूसरो के घर मे निर्दोष आहार लेते हैं और अन्तराय होनेपर पुन आहार नहीं करते है। धर्म के कारण, प्राणो की रक्षा के लिये, मोक्ष के कारण आहार करते है। ऐसे मुनि धर्म को सुनकर, चक्रवर्ती विचार करते है। अहो! यह जैनव्रत महाकठिन है, मुनि शरीर से भी निस्पृह रहते है, तो अन्य वस्तुओ मे इच्छा कैसे करे। मुनि तो निर्ग्रन्थ निर्लोभी है। मेरे विभूति बहुत है। मै अणुव्रती श्रावको को भक्ति से दान दूँ, दीनदुखी जीवो को दया से दूँ, ये श्रावक भी मुनि के लघु भ्राता है। ऐसा विचारकर नगर के सभी लोगो को भोजन के लिये बुलाया और व्रतियो की परीक्षा के लिए आगन मे उडद, मूग के अकुर उत्पन्न कराये, सो अविवेकी लोग हरियाली पर चले आये, और जो विवेकवान थे, वे अकुरजान वहॉ ही खडे रहे, तब भरत ने अकुर रहित मार्ग से उनको बुलाया, और व्रती जान बहुत आदर किया, जनेऊ पहनाई, आदर से भोजन कराया, वस्त्राभूषणादि मनवाछित दान मे दिये। और जो हरियालीपर आये थे, उनको अव्रतीजान आदर नहीं किया। वृतियो को ब्राह्मणपद पर स्थापित किया, कोई चक्रवर्ती के आदर से गर्व को प्राप्त हुये और कोई लोभ के कारण धन की याचना मे प्रवृत्ति करनेलगे। तब मतिसमुद्र मत्री ने भरत से कहा कि समोशरण मे मैंने भगवान के मुख से ऐसा सुना है जोआपने विप्रवर्ण की स्थापना की, वे पचम कालमे मानी होकर हिंसामे धर्म जानकर जीवो को मारेगे, कषाय से प्रतिसमय पाप क्रियाओं मे रत रहेगे, ग्रथोमे हिसा को धर्म बताकर प्रजा को लोभ उत्पन्न करायेंगे, आरम्भ परिग्रह से रहित जो जैनधर्म है, उसकी सदा निन्दा करेगे, निर्ग्रथ मुनियोको देख महाक्रोध करेगे, ऐसे वचन सुन भरत इनपर क्रोधायमान हुए, तब ये सभी भगवान की शरण मे गये। भगवान ने भरत से कहा। हे भरत! इस कलिकाल मे ऐसा ही होना है, तुम कषाय मत करो। इस प्रकार ब्राह्मणो की उत्त्पति हुई। भगवान के साथ चारहजार राजाओ ने दीक्षा ली, वे

सभी चारित्र भ्रष्ट हो गये, उनमें से कच्छादि ने तो पुनः दीक्षा ली और मारीच जैसे जीव ने साख्यमत को धारण किया। लगोटी पहनकर बल्कल धारी बने। यह विप्रो की, परिव्राजकों की, दंडीयो की प्रवृत्ति भगवान ने कहीं। अनेक जीवो को ससार से पारकर भगवानऋषभदेव कैलाशपर्वत से निर्वाणपदको प्राप्त हुए। और भरत चक्रवर्ती भी कुछ काल राज्य कर जीर्ण तृणवत् राज्य को छोडकर वैराग्य को प्राप्त हुये। अन्तर्मूहूर्त मे केवलज्ञान प्राप्त किया। पश्चात् आयु पूर्णकर निर्वाण पद को प्राप्त हुये।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराणभाषाटीका मे श्रीऋषभनाथ का कथन करनेवाला चौथा पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-5

अथ वंशोत्पत्ति नामा महाधिकार

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से वशों की उत्पत्ति कहते है। हे श्रेणिक! ससार मे चार महावंश है उनके अनेक भेद हैं। प्रथम इक्ष्वाकु वश यह लोक का आभूषण, इसमे सूर्यवश की उत्पत्ति हुई। दूसरा सोमवश चद्रमा की किरण समान निर्मल है। तीसरा विद्याधरो का अत्यंत मनोहर वश है। चौथा हरिवश जगतमे महाप्रसिद्ध है, अब इनका भिन्न भिन्न विस्तार कहते है। इक्ष्वाकुवश मे भगवान ऋषभदेव का जन्म हुआ, उनके पुत्र भरत और भरत के पुत्र अर्ककीर्ति हुये, अर्ककीर्ति महातेजस्वी राजा थे, इनके नाम से सूर्यवश उत्पन्न हुआ, अर्कनाम सूर्यका है, इसीलिये अर्ककीर्ति से सूर्यवश कहलाता है, सूर्यवंश मे राजा अर्ककीर्ति के सतयश पुत्र, इनके बलाक, उनके सुबल, उनके रवितेज, उनके महाबल, उनके अतिबल, अमृत, सुभद्र, सागर, भद्र, रवितेज, शशी, प्रभूततेज, तेजस्वी, तपबल महाप्रतापी, अतिवीर्य, सुवीर्य, उदित, पराक्रम, सूर्य, इन्द्रमणि, महेन्द्रजित, प्रभूत, विभू, अविध्वस, बीतभी, वृषभध्वज, गरूणांक, मृगांक, इस तरह सूर्यवंश मे अनेक राजा हुये। वह संसार के भ्रमण से भयभीत पुत्रों को राजदेय मुनिव्रत अंगीकार कर महानिर्ग्रन्थ, शरीर से भी निस्पृही हुये, यह सूर्यवश की उत्पति कही। अब सोमवंश की उत्पत्ति कहते है सो सुन! ऋषभदेव की दुसरी

रानी के पुत्र बाहुबली, उनके सोमयश, उनके सौम्य, उनके महाबल, सुबल, भुजबली इत्यादि अनेक राजा हुये, निर्मल चेष्टा के धारी मुनिव्रत को धारणकर परम धाम को प्राप्त हुये। कोई देव बने, पुन· मनुष्य जन्म लेकर सिद्धपद को प्राप्त हुये। यह सोमवश की उत्पत्ति कहीं। अब विद्याधरो के वश की उत्पत्ति सुनो। नमि, रत्नमाली, उनके रत्नरथ, रत्नचित्र, चद्ररथ, वज्रजंध, वज्रसेन, वज्रद्रष्ट, वज्रध्वज, वज्रायुध, वज्र, सुवज्र, वज्रभृत, वज्राभ, वज्रबाहु, वज्राक, वज्रसुदर, वज्रपाणि, वज्रभानु, वज्रवान, विदयुन्मु, सुवक्र, विद्युदृष्ट, विद्युत, विद्युदाभ, विधुवेग और वैधुत इत्यादि विधाधरो के वश मे अनेक राजा हुये। अपने अपने पुत्र को राज्य देकर मुनि दीक्षा लेकर राग द्वेष का नाशकर सिद्धपद को प्राप्त हुये, कोई देव बने, कोई मोह के कारण राज्य मे ही मरणकर कुगति को प्राप्त हुये।

(सजयत मुनि के उपसर्ग का कारण)

अब सजयत मुनि के उपसर्ग का कारण कहते है, विद्युदृष्ट्र राजा दोनो श्रेणी का अधिपति विद्या के बल से विमान मे बैठे विदेहक्षेत्र मे गया। वहॉ सजयत स्वामी को ध्यान करते हुए देखा। वे पर्वत के समान निश्चल थे। उस पापी ने मुनि को देखकर पूर्वजन्म के बैर से मुनि को उठाकर पच गिरी पर्वतपर गिराया, और लोगो को कहा कि इसे मारो, पापी जीवो ने मुक्को एव पत्थरो से मुनि को मारा, मुनि ने समता भाव के कारण रच मात्र भी क्रोध नहीं किया। महान उपसर्ग को जीत केवलज्ञान को प्राप्त किया, सभी देव वदना करने आये। धरणेन्द्र पूर्वभव मे मुनिराज के भाई थे, इसलिये क्रोधकर सब विद्याधरो को नाग फॉस से बॉध दिया। तब सबने विनती की कि यह सब अपराध हमारा नहीं विद्युदृष्ट्र का है। तब औरो को छोड विद्युदृष्ट्र को मारने लगे। तब देवो ने प्रार्थना करके छुडाया, सो धरणेन्द्र को दया आई, और सब विद्याहर के उसे छोड दिया। तब इसने प्रार्थना की कि हे प्रभो! मुझे अब विद्या कैसे सिद्ध होगी, तब धरणेन्द्र ने कहा कि सजयत मुनि की प्रतिमा के पास महान तप करने से आपको विद्या सिद्ध होगी, परन्तु चैत्यालय एवं मुनियो का उल्लघन करने से विद्या का नाश हो जायेगा, अत आपको उनकी वदना करके आगे जाना होगा। धरणेन्द्र ने सजयत मुनि से पूछा कि-हे प्रभो! विद्युदृष्ट्र ने आपको उपसर्ग क्यो किया? सजयत मुनि ने कहा कि मै शकट नामा ग्राम मे दयावान प्रियवादी हितकर नाम का महाजन था, मै साधु

सेवा मे तत्पर रहा। समाधिमरण कर कुमुदावती नगरी मे श्रीवर्धन नाम का राजा हुआ। उस गॉव में एक ब्राह्मण अज्ञान तपकर कुदेव हुआ था, वहॉ से चयकर राजा श्रीवर्धन के वह्निशिख नाम का पुरोहित हुआ। वह महादुष्ट अपने आपको सत्यघोष कहता था, परन्तु महाझूठा, दूसरो के माल को हरनेवाला उसकी खोटी क्रियाओ को कोई नहीं जानता था। अत जगत मे सत्यवादी कहलाता था। उसने एक नेमिदत्त सेठ के रत्न छिपाये, तब रानी रामदत्ता ने जुए मे पुरोहित की अंगूठी जीती और दासी के हाथ पुरोहित के घर भेजकर रत्न मगाये और सेठ को दिये। राजा ने पुरोहित को तीव्रदड दिया, वह मरकर एक भव के बाद विद्याधरो का अधिपति हुआ और राजा मुनि बनकर देव हुआ।, कई भव के बाद हम सजयत हुये सो इसने पूर्वभव के बैर से हमको उपसर्ग किया। यह कथा सुन नागेन्द्र अपने स्थान को चले गये। उस विद्याधर के दृढरथ पुत्र उनके अश्वधर्मा उनके अश्वायु, अश्वध्वज, पद्मनाभि, पद्ममाली, पद्मरथ, सिहवान, मृगोद्धर्मा, मेघास्त्र, सिहप्रभ, सिहकेतु, शशांक, चंद्राह्व, चन्द्रशेखर, इन्द्ररथ, चन्द्ररथ, चक्र, धर्मा, चक्रायुध, चक्रध्वज, मणिग्रीव, मण्यक, मणिभासुर, मणिरथ, मणरथ, मण्यास, बिम्बोष्ठ, लबिताधर रक्तोष्ठ, हरिचन्द्र, पूर्णचन्द्र, बालेन्द्र, चन्द्रमा, चूड, व्योमचन्द्र, उडपानन, एकचूड, द्विगचूड, त्रिचूड, वज्रचूड, भूरिचूड, अर्कचूड, वन्हिजटी, वन्हितेज इस प्रकार अनेक राजा हुये, कोई पुत्र को राज्यदेकर मुनिबन मोक्षगये, कोई स्वर्गगये, कोई भोगों मे आसक्त, वैराग्य को धारण नहीं किया, सो वे नरक तिर्यचगति मे गये, इस प्रकार विद्याधरो का वश कहा।

(दूसरे तीर्थकर अजितनाथ की उत्पत्ति जीवन परिचय, सगर चक्रवर्ती का वृत्तान्त)

अब दूसरे तीर्थकर श्रीअजितनाथ स्वामीकी उत्पत्ति कहते है। जब आदिनाथ भगवान को मोक्षगये पचासलाख कोटिसागर पूर्ण हुये, तब चतुर्थ काल आधा व्यतीत हुआ, जीवो की आयु, काय, बल घटते रहे। संसार मे काम लोभादि की प्रवृत्ति बढती रही। आदिनाथ के इक्ष्वाकुवश मे अयोध्या नगर के राजा धरणीधर हुये। उनके पुत्र त्रिदशजय, उनकी रानी इन्द्ररेखा, उनके पुत्र जितशत्रु थे। पोदनपुर के राजा भव्यानन्द, रानी अम्भोदमाला, उनकी पुत्री विजया उसका जितशत्रु राजा के साथ विवाह हुआ। जितशत्रु को राज्य देय त्रिदशजय कैलाशपर्वत से मोक्ष गये। राजा जितशत्रु उनकी रानी विजयादेवी, उनके अजितनाथ तीर्थंकर का जन्म हुआ। उनका जन्माभिषेक आदि का वर्णन ऋषभदेव के समान जानना।

भगवान का जन्म होते ही राजा जितशत्रु ने सर्व राजाओ को जीता, इसीलिये भगवान का नाम अजितनाथ रखा। अजितनाथ के सुनया, नन्दादि अनेक रानियॉ हुई। एक दिन अजितनाथ भगवान राज लोक सहित प्रात काल वन क्रीडा को गये, वहॉ कमलों का वन खिला हुआ देखा और सूर्यास्त समय उसी वन को मुरझा हुआ देखा। तब लक्ष्मी को अनित्य जान परम वैराग्य को प्राप्त हुये। माता पिता आदि सर्व परिवार से क्षमा भाव कराकर ऋषभदेव के समान दीक्षा धारण की। भगवान के साथ दश हजार राजाओ ने दीक्षा धारण की। भगवान ने दो उपवास के बाद ब्रह्मदत्त राजा के घर पारणा किया। चौदहवर्ष तपकर केवलज्ञान प्राप्त किया। चौतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य प्रकट हुये। भगवान के नव्वे गणधर और एक लाख मुनि हुये।

अजितनाथ के चाचा विजयसागर, रानी सुमगला उनके पुत्र सगर दूसरे चक्रवर्ती हुये। उनके नवनिधि, चौदहरत्न आदि सभी विभूति भरत चक्रवर्ती के समान जानना। उनके समय मे एक विशेष कार्य हुआ, सो हे श्रेणिक! तुम सुनो। भरतक्षेत्र के विजयार्ध पर्वत की दक्षिणश्रेणी मे चक्रवाल नगर के राजा पूर्णधन विद्याधरो के अधिपति थे। उसने विहाय तिलकनगर मे राजा सुलोचन की पुत्री उत्पलमती की याचना की। राजा सुलोचना ने निमित्त ज्ञानी के कहने से पुत्री को नहीं दी। और सगर चक्रवर्ती को देने का निश्चय किया। तब पूर्णधन राजा, सुलोचन राजा से युद्ध करने आये। सुलोचन के पुत्र सहस्रनयन अपनी बहिन को लेकर भाग गये, और वन मे जाकर छिप गये। पूर्णधन ने युद्ध मे राजा सुलोचन को मारकर, नगर मे जाकर कन्या को देखा, परन्तु कन्या नहीं मिली। तब वह अपने नगर को चला गया। सहस्रनयन कमजोर सो पिता का मरण सुन पूर्णमेघ पर क्रोधित हुआ, परन्तु कुछकर नहीं सका, अत. भयानक जगल मे छिपकर रहा। कैसाहैवह वन? सिह, व्याध, अष्टापदादि पशुओ से भरा हुआ है। पश्चात् सगर चक्रवर्ती को, एक मायामयी अश्व सहस्रनयन के समीप लेकर आया। उत्पलमती ने चक्रवर्ती को देखकर भाई से कहा, कि चक्रवर्ती स्वय ही यहॉ पधारे है। तब भाई ने प्रसन्न होकर चक्रवर्ती से बहिन का विवाह कराया। उत्पलमती, चक्रवर्ती की पटरानी स्त्रीरत्न हुई। चक्रवर्ती ने सहस्रनयन को दोनो श्रेणी का राज्य दिया। सहस्रनयन ने पूर्णधन को युद्ध मे मारा, पिता की मृत्यु का बदला लिया। चक्रवर्ती छहखड का राज्य करते है और सहस्रनयन विद्याधरो की दोनों

श्रेणीयों का राज्य करते हैं। और पूणमेध का बेटा मेघवाहन डरकर भाग गया, सहस्रनयन के योद्धा मारने के लिये पीछे दौडे, तो मेधवाहन समोशरण में अजितनाथ भगवान की शरण मे आया। तब इन्द्र ने भय का कारण पूछा, तब मेघवाहन ने कहा कि मेरे पिता ने सुलोचन को मारा था, सो सुलोचन के पुत्र सहस्रनयन ने चक्रवर्ती का बल पाकर मेरे पिता को मारा एव परिवार का क्षय किया। और मुझे मारने को आये तो मैं मदिर से हसो के साथ उडकर श्रीभगवान की शरण मे आया हूँ। ऐसा कहकर मनुष्योंके कोठेमे बैठ गया। सहस्रनयन के योद्धा मेघावाहन को समोशरण मे आया जान वापिस चले गये। और सहस्रनयन को सम्पूर्ण वृतान्त कहा। तब वह भी समोशरण मे आया। भगवान की महिमा से दोनोमित्र बनगये। तब गणधर देव ने भगवान से इनके पिता का चरित्र पूछा। भगवान ने कहा। जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे सद्‌गतिनगर, वहॉ भावननाम का व्यापारी, उसके आतकी नामकी स्त्री, हरिदास पुत्र। भावन चारकरोडधन का स्वामी था, तो भी लोभ के कारण व्यापार करने देशान्तर को चला। चलते समय पुत्र को सम्पूर्ण धनदिया और खोटे व्यसन नहीं करने की शिक्षा दी। आप धन कमाने के लिए जहाजमें बैठकर अन्य देशको गया। पिता को जाने के बाद पुत्र ने सर्वधन वेश्यासेवन एव जुआ आदि मे समाप्त कर दिया। जब सपूर्ण धन नष्ट हो गया, तब जुवारियो का कर्जदार बन गया। इसीलिये धनकी इच्छा से सुरग के मार्ग होकर राजा के महल में चोरी करने गया। राजाके महलसे धन लेकर आता और सप्त व्यसनो को करता। कई वर्षो के बाद भावन परदेश से आया, और घर मे पुत्र को नहीं देखा, तब स्त्री से पूछा। स्त्रीने कहा इस सुरगमें होकर राजाके महलमे चोरी करने गया है। तब पिता पुत्र के मरण की शका से पुत्र को लेने के लिये सुरग मे गया। पिता तो जा रहा था और पुत्र आ रहा था, तब पुत्र ने जाना कि मेरा कोई शत्रु आ रहा है, सो उसने तलवार से उसे मारा, बाद में स्पर्श कर देखा, और जाना कि यह तो मेरा ही पिता है, तब दुखी होकर डरसे भाग गया और अनेक देशो मे भ्रमणकर मरा, तब पिता पुत्र दोनों ही कुत्ता बने, फिर गीदड, बिल्ली, रीछ, नेवला, भैसा, बैलादि बने, इन जन्मों में परस्पर बैरसे एक दूसरे को मारते रहे। पुन. विदेहक्षेत्र के पुष्पकलावति देशमें मनुष्य होकर मुनि बने, उग्र तपकर ग्याहरवें स्वर्ग में उत्तर और अनुत्तर नाम के देव हुये, वहॉ से चयकर भावन का जीव, तो पूर्णमेध विद्याधर हुआ और हरिदास का जीव,

सुलोचन विद्याधर हुआ, इसी बैर से पूर्णमेघ ने सुलोचन को मारा। तब गणधरदेव ने सहस्रनयन एव मेघवाहन को कहा, तुम अपने पिताओं का चरित्रजान संसार का बैर छोडे, समता भाव धारण करो। और सगर चक्रवर्ती ने गणधरदेव से पूछा कि हे महाराज! मेघवाहन और सहस्रनयन का बैर क्यो हुआ, तब भगवान ने कहा,

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे पद्मनाम का नगर, आरम्भनाम का ब्राह्मण गणित शास्त्र का ज्ञाता, महाधनवान, उसके दो शिष्य एकचन्द्र दूसराआवली, दोनो महामित्र, दोनो ही धनवान, गुणवान, जगत मे विख्यात। इनके गुरु आरम्भ ने सोचा, कि ये दोनो कदाचित् मेरा पद भग करेगे, ऐसा जानकर इन दोनो मे बैर करा दिया। एक दिन चन्द्र, गोपाल के घर, गाय बेचकर आ रहा था और आवली को गोपाल से खरीदकर, उसी गाय को लाता हुआ देखा, इसीलिये मार्ग मे चन्द्रने आवली को मारा, वह मरकर मलेच्छ हुआ, और चन्द मरकर बैल हुआ। मलेच्छ ने बैल को खाया और नरक, तिर्यचयोनी मे भ्रमणकर मलेच्छ चूहा बना, और चन्द्र का जीव बिल्ली बना। बिल्ली ने चूहे को खाया। फिर दोनो पापकर्म के योग से अनेक योनियो मे भ्रमणकर, काशी मे सभ्रमदेव की दासी के पुत्र, कूट और कार्पटिक दोनो भाई हुये। इन दोनो को सभ्रमदेव ने चैत्यालय की देख रेख के लिये रखा। कुछ समय पश्चात् वे दोनो मरकर पुण्य के योग से रूपानन्द और स्वरूपानद व्यन्तरदेव हुये। रूपानद चन्द्र का जीव स्वरूपानन्द आवली का जीव। फिर रूपानद तो कलूवी का पुत्र कुलधर हुआ और स्वरूपानद पुरोहित का पुत्र पुष्पभूत हुआ। ये दोनो मित्र पुन एकहल के कारण शत्रु बने। कुलधर पुष्पभूत को मारने दौडा। तब एक वृक्ष के नीचे साधु बैठे थे, उनसे धर्म सुनकर कुलधर शांत हुआ। जैनधर्म को सुनने से दोनो जैनी बने, व्रत धारणकर तीसरे स्वर्ग मे गये। स्वर्ग से चयकर धातकीखड के विदेहक्षेत्र मे अरिंजय व जयावती के अमरश्रुत और धनश्रुत नाम के दो पुत्र हुये। ये दोनो भाई महायोद्धा, राजा सहस्रशिरस के सहायक रूप मे प्रसिद्ध हुये। एक दिन राजा सहस्रशिरस हाथी पकडने वन मे गया, तब दोनो भाई साथ मे गये। वन मे केवलीभगवान विराजमान थे। उनके कारण सिह, और हिरण, जाति विरोधी जीवो को एक साथ बैठे देख राजा आश्चर्य को प्राप्त हुआ, आगे आकर केवली भगवान के दर्शन किये। राजा तो मुनि बनकर मोक्ष गये। और यह दोनो भाई मुनिबन ग्यारहवें स्वर्ग गये। वहांसे आकर चद्रका जीव अमरश्रुत तो मेघवाहन हुआ और आवली का जीव धनश्रुत

सहस्रनयन हुआ। यह दोनों के शत्रुता का वृतात है। पुन· सगरचक्रवर्ती ने भगवान से पूछा कि-हे प्रभो! सहस्रनयन से मेरा महाप्रेम है वह क्या कारण है। तब भगवान ने कहा, वह आरम्भब्राह्मण मुनि को आहारदान देकर देवकुरु उत्तम भोगभूमि गया। वहा से प्रथम स्वर्ग में देव हुआ, पुनः चन्द्रपुर में राजा हरि, रानी धरादेवी, के व्रतकीर्तन नाम का पुत्र हुआ। मुनि पद धारण कर स्वर्ग गया। और विदेहक्षेत्र में रत्नसचय नगर मे पिता महाघोष, माता चंद्राणी के पयोबल नाम का पुत्र हुआ। मुनिव्रत धार समाधि मरण कर चौदहवे स्वर्ग गया। वहॉ से चयकर भरतक्षेत्र मे पृथिवीपुर के राजा यशोधर, राणी जया के जयकीर्तन नाम का पुत्र हुआ, पिता के निकट दीक्षा लेकर विजय अनुत्तर नाम के विमान मे उत्पन्न हुआ, वहॉ से चयकर तू सगर चक्रवर्ती हुआ है। और आरम्भ के भव में आवली शिष्य के साथ तेरा अतिस्नेह था, वह आवली का जीव ही सहस्रनयन है, उससे तेरा अधिक स्नेह है। यह कथा सुन, चक्रवर्ती को धर्ममे अतिरुचि उत्पन्न हुई। और मेधवाहन व सहस्रनयन दोनो अपने पिता के और अपने पूर्वभव सुनकर, बैर रहित होकर परस्पर मित्र हुये, धर्म मे रुची हुई। पूर्वभव दोनो को याद आये, महा श्रद्धासहित भगवान की स्तुति की। हे नाथ! आप अनाथो के नाथ हो, संसारी प्राणी महादु·खी है, उनको धर्म का उपदेश देकर उपकार करते हो, आपको किसी से कुछ प्रयोजन नहीं, आप निस्वार्थ जगत के बधु हो, आपकारूप उपमारहित, अतुलबल के धारी है। इस ससार मे आपके समान और कोई नहीं है। आप परमानद, कृतकृत्य, सदा सर्वदर्शी हो, सबके स्वामी, अतर्यामी, सर्व जगत के हितु हो। हे जिनेन्द्र! ससाररूपी समुद्र मे फसे यह प्राणी उनको धर्मोपदेश देकर आप संसार से पार कराने मे खेवटिया है, इत्यादि बहुत स्तुति की। यह दोनो मेघवाहन और सहस्रनयन गद्गद् होकर परमहर्ष को प्राप्त हुये और विधि पूर्वक नमस्कार कर बैठे। सिंहवीर्यादिक मुनि, इन्द्रादिक देव, सगरादि राजा, परम हर्षित होकर आश्चर्य को प्राप्त हुये।

अथानंतर भगवान के समोशरण मे राक्षसों का इन्द्र, भीम और सुभीम मेघवाहन पर प्रसन्न हुये और कहां कि हे—विद्याधर बालक मेधवाहन! तुम धन्य हो, जो भगवान अजितनाथ की शरण में आये, हम तेरे से अति प्रसन्न है, हम तेरी स्थिरता का कारण कहते हैं तुम सुनो। इस लवण समुद्र मे अत्यन्त विषम महारमणीक हजारो अंतरद्वीप हैं, लवण समुद्र मे मगर मच्छादि जलचर जीवों के

समूह रहते है, उन अंतरद्वीपो में कहीं तो गधर्वदेव क्रीडा करते है, कही देवो के समूह, कहीं यक्षो के समूह कोलाहल करते है, कहीं किपुरुष जाति के देव अनेक क्रीड़ा करते है, उनके मध्य मे एक राक्षसद्वीप है, वह सातसौ योजन चौडा और सातसौ योजन लम्बा हैं। उसके मध्य मे त्रिकूटाचल पर्वत अत्यंत कठिन प्रवेश, शरणागत का स्थान है। पर्वत के शिखर सुमेरू के शिखर समान मनोहर है, और वह पर्वत नवयोजन ऊचा, पचासयोजन चौडा है अनेक रत्नो की ज्योति के समूह से निर्मित है। उसके स्वर्णमयी सुन्दर किनारे है। उसके नीचे तीसयोजन प्रमाण लका नाम की नगरी है, रत्न और सुवर्ण के महलो से सुशोभित है, महा मनोहर उद्यान, कमलो से युक्त सरोवर, बडे-बडे चैत्यालय है, वह नगरी इन्द्रपुरी समान है। दक्षिणदिशा का भूषण है, हे विद्याधर! तुम समस्त परिवार कुटुम्ब सहित वहा सुख से रहो। ऐसा कहकर भीमनामका राक्षसो के इन्द्र ने उसको रत्नमयी हार दिया। वह हार अपनी किरणो से महाप्रकाश करता है। राक्षसो का इन्द्र मेघवाहन का पूर्वभव का पिता था। उस स्नेह रूपी राग से उसने मेघवाहन को हार और राक्षस द्वीप दिया। तथा धरती के बीच मे पाताल लका, उसमे अलकारोदय नगर छहयोजन गहरा और एकसौ साढेइकतीस योजन चौडा यह भी दिया। उस नगर मे शत्रु का मन भी प्रवेश नहीं कर सकता। वह स्वर्ग समान महामनोहर है। राक्षसो के इन्द्र ने कहा—कदाचित तुमको शत्रु का भय हो, तो इस पाताल लका मे परिवार सहित सुख से रहना, लका तो राजधानी है। पाताल लंका भय निवारण का स्थान है। इस प्रकार भीम सुभीम ने मेघवाहन को कहा। मेघवाहन परम हर्ष को प्राप्त हुआ, और भगवान को नमस्कार कर उठा, तब राक्षसो के इन्द्र ने राक्षस विद्या दी, उसको लेकर आकाशमार्ग से विमान में चढकर लका की तरफ गया। जब सभी भाईयो ने सुना कि मेधवाहन को राक्षसों के इन्द्र ने अतिप्रसन्न होकर लका दी है, तब सभी परिवार को हर्ष हुआ। सभी विद्याधर मेधवाहन को मिलने आये, उन सभी को साथ लेकर मेधवाहन लंकाकेलिये चले। कोई राजा आगे जा रहे है, कोई पीछे, कोई दाहिने, कोई बाये, कोई हाथी पर, कोई धोडे पर, कोई रथो पर कोई पालकी पर चढ कर जा रहे है। कोई पैदल जा रहे है, जय जय शब्द हो रहे है, दुदभि बाजे बज रहे है। राजा पर छत्र फिरते है, चवर ढुर रहे है, अनेक विद्याधर नमस्कार करते हैं, इस प्रकार राजा चलते चलते लवण समुद्र पर आये। वह समुद्र आकाश समान विस्तीर्ण, पाताल समान

गहरा, तरंगो एवं लहरो से पूर्ण है। अनेक मगर मच्छ उसमे कल्लोल करते है, उस समुद्र को देख राजा हर्षित हुआ। पर्वत के निचले भाग में कोट, एव दरवाजे, व खाईयों से युक्त लका नाम की महानगरी है, मेघवाहन ने उसमे प्रवेश किया। लंकापुरीमे रत्नोकी ज्योतिसे आकाश संध्या समान लाल हो रहा है, ऊंचे ऊचे भगवान के चैत्यालयों पर ध्वजाये फहरा रही है, चैत्यालयो की वदनाकर राजा ने महल मे प्रवेश किया। और सभी यथा योग्य घरो मे रहे। रत्नो की शोभा से उनके मन और नेत्र हरे गये थे।

अथानंतर किन्नरगीत नगर में राजा रतिमयूख, राणी अनुमती, उनके सुप्रभा पुत्री नेत्र और मन को चुरानेवाली, काम का निवास, लक्ष्मीरूप, कुमुदो को प्रफुल्लित करनेवाली, चन्द्रमा की चादनी, इन्द्रियो का आभूषण, उससे राजा मेधवाहन ने उत्साह पूर्वक विवाह किया। उसके महारक्ष नाम का पुत्र हुआ, जैसे स्वर्ग मे इन्द्र इन्द्राणी सहित रहे, तैसे राजा मेघवाहन राणी सुप्रभा सहित लका में बहुत काल सुख से राज्य किया। पश्चात् एक दिन राजा मेधवाहन, अजितनाथ भगवान की वदना के लिये समोशरणमे गया और दिव्यध्वनी सुनी। सगर चक्रवर्तीने भगवान को नमस्कार कर पूछा कि हे प्रभो! इस अवसर्पिणी काल मे धर्मचक्रके स्वामी आप जैसे जिनेश्वर कितने होगे और कितने हुये। आप तीन लोक के सुख देने वाले हो, आप जैसे महापुरुषो की उत्पत्ति लोक मे आश्चर्यकारी है। और चक्ररत्न के स्वामी तथा वासुदेव, प्रतिवासुदेव, बलभद्र कितने हुये और आगे होंगे? तब भगवान अपनी दिव्यध्वनी से व्याख्यान करते हैं। अर्धमागधी भाषा के प्रवर्तक, उनके होठ नहीं हिलते यह बडा आश्चर्य है। उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल मे चौबीस तीर्थकर होते है, जिस समय धर्म का विचार नहीं, कोई राजा नहीं, उस समय भगवान ऋषभदेव का जन्म हुआ। उन्होने कर्मभूमि की रचना की, तबसे कृत युग कहाया। भगवान ने क्रिया के भेद से तीनवर्णो की स्थापना की, उनके पुत्र भरत ने विप्रवर्ण की स्थापना की। भरत का तेज भी ऋषभदेव समान है। भगवान ऋषभदेव ने जिनदीक्षा धारणकर, ससारी दुखी भव्यजीवों को समता भावरूपी जल से शांत किया। श्रावक और मुनि के धर्म को बताया, उनके गुणो की उपमा जगत मे महान है, कैलाशपर्वत से आप निवार्ण पधारे, आदिनाथ की शरण पाकर अनेक साधु सिद्ध हुये, अनेक मुनियों ने स्वर्ग के सुखों को प्राप्त किया। कोई मारीच जैसो ने मिथ्यात्व के राग से भगवान के मार्ग को अंगीकार

नहीं किया। और कुधर्म को धारण किया। पुन नरक तिर्यचगति को प्राप्त हुये। आदिनाथ को मोक्ष गये, पचासलाख कोटीसागर समय बीतने के बाद सर्वार्थसिद्धि से चयकर दूसरे तीर्थकर हम अजित हुये। जब धर्म का नाश होता है, मिथ्यादृष्टियो की बहुलता होती है, तब तीर्थकर भगवान का जन्म होता है, और धर्म का प्रकाश होता है, तब भव्य जीव धर्म को प्राप्तकर सिद्ध स्थान को प्राप्त करते हैं। अब हमको मोक्ष जाने के बाद बाईस तीर्थकर और होगे। तीनलोक में प्रकाश करनेवाले सब मेरे समान काति, वीर्य, विभूति के धनी, तीनलोक मे पूज्य, ज्ञानदर्शनरूप होगे। उनमे तीन तीर्थकर शाति, कुन्थु, अरह ये चक्रवर्ती पद के धारक भी होंगे। आगे चौबीस तीर्थकरो के नाम सुनो। ऋषभ 1, अजित 2, सभव 3, अभिनन्दन 4, सुमति 5, पद्मप्रभ 6, सुपार्श्व 7, चन्द्रप्रभ 8, पुष्पदन्त 9, शीतल 10, श्रेयास 11, वासुपूज्य 12, विमल 13, अनन्त 14, धर्म 15, शाति 16, कुन्थु 17, अरह 18, मल्लि 19, मुनिसुव्रत 20, नमि 21, नेमि 22, पार्श्वनाथ 23, महावीर 24 ये सभी देवाधिदेव जिनमार्ग के धुरधर होगे। सबके गर्भकल्याणक मे रत्नो की वर्षा होगी। जन्मकल्याण मे सुमेरुपर्वत पर क्षीरसागर के जल से अभिषेक करेगे। उपमारहित तेजयुक्त सुख और बल से पूर्ण, कर्मरूपी शत्रुको नाश करनेवाले, महावीर स्वामी रूपी सूर्य के अस्त होने के बाद पाखडी अज्ञानी चमत्कार करेंगें, पाखडी स्वय ससाररूपी कूयें मे गिरेगे और दूसरे को भी गिरायेंगें।

चक्रवर्ती मे प्रथम भरत, दूसरा तू सगर, तीसरा सनतकुमार, चौथा मधवा, पाचवाशाति, छठाकुन्थु, सातवाअरह, आठवासुभौम, नवमा महापद्म, दशवाहरिषेण, ग्यारहवाजयसेन, बारहवाब्रह्मदत्त। ये बारह चक्रवर्ती और नववासुदेव, नवप्रतिवासुदेव, नवबलभद्र होगे। इनकी धर्म मे महारूची होगी, ये अवसर्पिणी काल के महापुरुष है। इसी प्रकार उत्सर्पिणी के भरत और ऐरावत मे जानना। इसी तरह महापुरुषों की विभूति और काल की प्रवृत्ति, कर्मो के कारण ससार भ्रमण, कर्म रहितों को मुक्ति का अनुपम सुख यह सपूर्ण कथन मेधवाहन ने सुना। सुनकर विचार करता है कि हाय! हाय! कर्मो के कारण, यह जीव दु ख को प्राप्त होता है, मोह से पागल होकर कर्मो को बाधता है। पचेन्द्रिय के विषय विषसमान है, परन्तु कल्पना मात्र से मनोज्ञ मानता है। ये भोग दुख को उत्पन्न करने वाले है। इनमे राग कहाँ? इस जीव ने धन स्त्री परिवार आदि से अनेक भवो मे राग किया, परन्तु ये पर पदार्थ अपने नहीं हुये, यह जीव सदा अकेला ससार मे भ्रमण करता है, सब

कुटुम्बादि तब तक ही स्नेह करते हैं, जब तक स्वार्थ पूर्ण होता हैं। जैसे जब तक कुत्ता को रोटी का टुकडा डालते हैं, तब तक अपना है। अन्त समय में पुत्र, स्त्री, बंधु, परिवार, मित्र, धन, आदि के साथ कौन गया, और ये किनके साथ जायेगें। ये भोग काले काले सर्प के फण समान भयानक हैं, नरक के कारण हैं, उनमें कौन बुद्धिमान राग करते हैं। अहो! यह बड़ा आश्चर्य है। लक्ष्मी ठगनी अपने आश्रितों को ठगती है, इसके समान और दुष्ठता क्या? जैसे स्वप्न में कोई वस्तु की प्राप्ती होती है, वैसे ही कुटुंब का समागम्म जानना। जैसे इन्द्रधनुष नाशवान है, वैसे ही परिवार का सुख नाशवान है। यह शरीर जल की लहरों के समान असार है, बिजली के चमत्कार समान चंचल है, इसीलिये इन सबको छोडकर धर्म को ही अंगीकार करों। धर्म सदाकल्याण कारी है, विघ्ननाशक है, महासुख रूप है, ऐसा जानकर राजा मेघवाहन को वैराग्य उत्पन्न हुआ। महारक्ष नाम के पुत्र को राज्य देकर भगवान अजितनाथ के निकट दीक्षा ली। राजा के साथ एकसौ दस राजाओं ने महाव्रतों को धारण किया। मेधवाहन का पुत्र महारक्ष लंका का राजा, चन्द्रमा के समान दानी। उनके चरणों में बडे बडे विद्याधर आज्ञा पाकर आदरसे हाथजोड नमस्कार करते थे। महारक्ष के विमलप्रभा नाम की रानी थी। वह रानी छाया समान पति की अनुगामनी थी। उनके अमररक्ष, उदधिरक्ष, भानुरक्ष ये तीन पुत्र हुये। ये सभी शुभ कार्य करने मे निपुण थे।

अथानंतर अजितनाथ स्वामी ने अनेक भव्यजीवों को मोक्षमार्ग दिखाकर स्वयं सम्मेदशिखर से सिद्धपद को प्राप्त किया। सगर के छयानवें हजार रानी इन्द्राणी समान और साठ हजार पुत्र हुये। वेसभी पुत्र कैलाश पर्वतपर वंदना करने आये। भगवान के चैत्यालयो की वंदनाकर दण्डरत्नसे कैलाशपर्वतके चारोंतरफ खाईखोदने लगे। तब नागेन्द्र ने क्रोध की दृष्टिसे उनको देखा, तब ये सबमरगये। उनमें से दोभाई आयु कर्म के योग से बचे, एक भीमरथ और दूसरा भगीरथ। तब सभी ने विचार किया कि अचानक यह समाचार चक्रवर्ती को कहेंगें, तो चक्रवर्ती तत्काल प्राण तज देगें। ऐसा जानकर पंडित लोगों ने राजा से मिलने को मना किया। सब राजा और मंत्री जैसे नित्य आते थे वैसे ही आए, और विनय कर चक्रवर्ती के पास अपने अपने स्थान पर बैठे। उस समय एक वृद्ध ब्राह्मण ने कहा कि हे सगर! देखो यह संसार की अनित्यता जिसको देखकर भव्यजीव का मन संसार में नहीं लगता है। आगे तुम्हारे जैसे पराक्रमी राजा भरत

हुये जिनने छहखण्डको वशमें किया। उनके पराक्रमी पुत्र अर्ककीर्ति के नाम से सूर्य वंश चला। इस प्रकार अनेक राजा हुये। वे सब काल के वश हुये। राजाओं की बाततो दूर, जो स्वर्ग के इन्द्र महावैभव से युक्त वो भी क्षणमात्र में विलाय मान हो जाते हैं। और जो भगवान तीर्थंकर तीनलोक को आनन्द देने वाले हैं, वे भी आयु के अन्त में शरीर को छोड मोक्ष पधारते हैं। जैसे पक्षी वृक्षपर रात्रिमें आकर बैठते है, प्रातः काल उडकर चले जाते हैं, वैसे यहप्राणी कुटुंबरूपी वृक्षपर आकर बैठे हैं, समय आने पर आयु पूर्णकर कर्मों के वश हो चारों गतियों में गमन करतें हैं। काल महाबलवान है। उसने बडे बड़े बलवानों को निबल किया है। अहो! बडा आश्चर्य है? बडे पुरुषों का मरण देखकर हमारा हृदय क्यों नहीं फटता है। सभी जीवों का शरीर, इष्ट का सयोगादि सबको इन्द्रधनुष या स्वप्नसमान तथा बिजली के समान नाशवान जानना। इस संसार में काल से कोई नहीं बचा हैं। एक सिद्ध प्रभु ही अविनाशी हैं। जो पुरुष पहाड को हाथ से चूर्ण करते, समुद्र को सुखा देते, वे भी काल के मुख में प्रवेश करते हैं। यह मृत्यु किसी को छोड़ती नहीं हैं। तीनों लोकों के प्राणी मृत्यु के वश है, केवल महामुनी ही जैनधर्म के प्रभावसे मृत्युको जीतते है। अनेक राजा मरण को प्राप्त हुये, ऐसे हमारा भी मरण होगा। ऐसा जानकर ज्ञानी पुरुष शोक नहीं करते, शोक संसार का कारण है, ऐसा भगवान ने कहा है, इसतरह सभा में, सभी प्रजा के लोगों ने चक्रवर्ती से कहा। उसी समय चक्रवर्ती ने अपने दो पुत्रो को देखा, तब मन में विचार किया कि हमेशा मेरे ये साठहजार पुत्र मिलकर मेरे पास आते और नमस्कार करते थे, परन्तु आज ये दोनों ही उदास एवं शोक युक्त दिखाई देते हैं, इसीलिये ऐसा लगता है कि सब पुत्र एक साथ मरण को प्राप्त हुये हैं, और ये सभी राजा प्रजा मुझे अन्य युक्ति द्वारा समझाते हैं, मेरा दुख देखने को असमर्थ हैं, ऐसा जानकर राजा शोकरूपी सर्प से डसा हुआ भी प्राणों को नहीं छोडता है। मंत्रियों के वचनों से शोक को दबाकर संसार को केले के वृक्षसमान असारजान इन्द्रियों के सुखों को छोडकर भगीरथ को राज्य देकर जिनदीक्षा ग्रहण की। यह सम्पूर्ण छहखण्ड की पृथिवी जीर्ण तृणसमान जान छोड दी। भीमरथ सहित श्रीअजितनाथ भगवान के निकट मुनीव्रत धारणकर केवलज्ञान प्राप्तकर सिद्धपद को प्राप्त किया।

अथानंतर एक समय भगीरथ श्रुतसागर मुनि से पूछते हैं। कि हे प्रभो! हमारे भाई एक साथ ही मरण को प्राप्त हुये, इनमें से हम दो भाई बचे इसका क्या

कारण है? तब मुनिराज ने बताया—एक समय चतुर्विधि संघ यात्रा करने के लिये सम्मेदशिखर जा रहे थे, तब चलते चलते अन्तिक ग्राम में आये, उनको देखकर गाँव के लोग कटु वचन बोलते हुये हंसने लगे, तब एक कुम्हार ने उनको मना किया और मुनियों की स्तुति की। एक दिन एक मनुष्य ने चोरी की, तब राजा ने पूरे गांव को जला दिया, उस दिन वह कुम्हार किसी गांव को गया था, इसीलिये वह मरण से बच गया। कुम्हार आयु पूर्ण कर मरा और महाजन के घर जन्म लिया, और अन्य सभी गांव के लोग मरकर कौडी बने। महाजन ने सभी कौडी खरीदी और महाजन पुनः मरकर राजा हुआ, और कौडी मरकर गिजाई बनीं। वे गिजाई हाथी के पैर के नीचे दबकर सभी मरी। राजा मुनी बनकर देव हुआ और देव से च्युत होकर भगीरथ हुआ और गांव के लोग कई भव के बाद सगर के पुत्र हुये, सो मुनि निन्दा के पाप से जन्म जन्म में कुगति पाई और तुमने मुनि की स्तुती की, इसीलिये तू मरण से बचा, यह सब पूर्वभव सुनकर भगीरथ वैराग्य को प्राप्त हुआ और मुनिव्रत धारणकर परमपद को प्राप्त किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं-हे श्रेणिक! यह सगर चक्रवर्ती का चरित्र तो तुझे कहा। अब आगे लंका की कथा सुनो। महारिक्ष नाम का विद्याधर महासंपदा से पूर्ण लंका में निष्कंटक राज्य करते हैं। एक दिन वे परिवार सहित प्रमदनाम के उद्यान में क्रीडा करने गये। उपवन अनेक फूलों के वृक्षों से मंडित, रत्नों के पर्वत के कारण अति रमणीय शोभा युक्त है। ऐसे वन मे राजा राजपरिवार सहित अनेक प्रकार की क्रीडाकर रति सागर में मग्न हुआ, जैसे नंदनवन में इन्द्र क्रीड़ा करते वैसे राजा ने उपवन में क्रीडा की।

अथानंतर सूर्य के अस्त होते ही कमल संकुचित हुये, उसमें भ्रमर को मरा देख राजा को वैराग्य हुआ, मोह कर्म मंद हुआ, तब भवसागर से पार होने की इच्छा हुई। राजा ने चिंतवन किया, कि देखो यह अज्ञानी भ्रमर सुगंध से तृप्त नहीं हुआ, यह घ्राण इन्द्रिय में आसक्त होकर मरा। धिक्कार है इस इच्छा को, जैसे इस कमलके रस में आसक्त होकर भंवरा मरा, ऐसे मैं स्त्रीयों के मुखरूपी कमल का भ्रमर हो, मरकर कुगति को पाऊंगा। यह तो एक इन्द्रिय का लोलुपी है मैं तो पंच इन्द्रियों का लोभी हूँ। मेरी क्या गति होगी, यह तो अज्ञानी है, मैं तो ज्ञानी हूँ। शहद की लपेटी तलवार की धार को चाटने से कहाँ सुख, जीभ के ही खंड खंड होते हैं। ऐसे विषय सेवन में सुख कहाँ? अनन्त दुखों की प्राप्ति का

कारण ही हैं। विषफल के समान यह विषय हैं। उनसे जो महापुरुष रहित हैं उनको मैं मन वचन काय से नमस्कार करता हूँ। हाय! हाय! यह बड़ा कष्ट है, मैं बहुत दिनों तक इन विषयों में फंसा रहा। विष तो एक भव के प्राणों को हरता है परन्तु ये विषय अनन्तभवों में प्राणों को हरते हैं। ऐसा चिन्तवन राजा ने किया। उसी समय वन में श्रुतसागर मुनिराज आये। वे मुनि अपनेरूप से चन्द्रमाँ को एवं दीप्ति से सूर्य को जीतते हैं। स्थिरता सुमेरु से अधिक है, मन उनका धर्मध्यान में ही आसक्त है, राग द्वेष पर विजय प्राप्त की है, और मन, वचन, काय के अपराध को त्याग दिया है। चारकषाय को जीतने वाले, पाँचों इन्द्रियों को वश में करने वाले, छहकाय के जीवों की रक्षा करनेवाले, सप्तभय रहित, आठमद रहित, नय के वेत्ता, शील के धारक, दशधर्म के स्वरूप परमतपस्वी महासाधु संघ सहित वन में पधारे, जीव जन्तु रहित पवित्र स्थान देख वन में एक शिलापर बैठे, उनके शरीर की ज्योति से दशो दिशाओ में तपरूपी सुर्य का प्रकाश हुआ।

अतः वनपाल के मुखसे मुनिराजको आयेसुन, राजामहारिक्ष विद्याधर वनमें आये। विनयकर राजाने मुनिको नमस्कार किया। कैसे है मुनि? अतिप्रसन्नचित्त कल्याण करने वाले है। राजाने समस्त संघ को नमस्कार कर कुशल मगल पूछा। कुछ क्षण के बाद मुनिश्री से धर्म का स्वरूप सुनने की इच्छा प्रकट की। मुनि का हृदय शांतभावरूपी चन्द्र समान प्रकाशमान था, सो वचनरूपी किरणों से उद्योत करते हुए व्याख्यान किया। हे राजा! धर्म का लक्षण जीव दया ही है, और सत्य वचन आदि धर्म का परिवार है, यह जीव कर्म के प्रभाव से जिस गति में जाता है, उसी शरीर में लीन हो जाता है, इसीलिये तीनलोक की संपदा कोई भी देता है, तो भी कोई जीव अपने प्राणो को नहीं छोडता सब जीवो को प्राणों से अधिक अन्य कोई वस्तु प्यारी नहीं है। सभी जीना चाहते है, मरना कोई नहीं चाहता। बहुत कहने से क्या? जैसे आपको अपने प्राण प्यारे हैं वैसे ही सभी को प्यारे हैं। इसीलिये कोई मूर्ख दूसरे जीवों को मारता है वो पापी नरक में जाता है। उनके समान और कोई पापी नहीं है। जन्म जन्म में कुगतियों के दुखों को भोगते हैं, जैसे लोहे का पिंड पानी में डूब जाता है वैसे ही हिंसक जीव भवसागर में डूबता है। कोई वचनों से मीठे बोलते हैं, लेकिन हृदय में विष के भरे होते हैं, अच्छे आचरण से रहित परस्त्री का सेवन करते हैं वे नरक, तिर्यंचगति में भ्रमण करते है। पहले तो संसार में जीवों को, मानवजन्म मिलना दुर्लभ है, पुनः उत्तमकुल, आर्यक्षेत्र, सुन्दर शरीर, धन की पूर्णता, विद्या का साधन, तत्त्व का बोध होना,

धर्म का आचरण ये सब दुर्लभ से दुर्लभ है। धर्म के प्रभाव से कोई सिद्ध बनते हैं, कोई स्वर्गो के सुख भोगकर परम्परा से मोक्ष जाते हैं। कोई मिथ्यादृष्टि जीव अज्ञानतप से देव होकर स्थावर जन्म लेते हैं, कोई पशु में कोई मनुष्य में जन्म लेते हैं। माता का गर्भ मलमूत्र से भरा महादुर्गन्ध युक्त दुस्सह दुख, उसमें पित्त, कफ, चर्म के जाल के ढके प्राणी माता के आहार का जो रसांश है उसे चाटते हैं। गर्भमें सर्वअंग संकुचित रहते हैं, दुखके भार से पीडित नवमहीना उदर में रहकर योनिके द्वारसे बाहर निकलतें हैं। मनुष्य देह प्राप्तकर पापी धर्मको भूलता है, मिथ्यादृष्टि यम नियम आदि धर्मसे रहित विषयोंमें फंसा रहता है। जो ज्ञान रहित कामके वशसे, स्त्रीके वशमे रहताहै, वह महादुख भोगते हुये संसार समुद्र में डूबता है। इसीलिये विषय कषायका त्याग करना, पर जीवों को दुख हो ऐसा वचन हिंसा रूप नहीं बोलना, हिंसा संसार का कारण है, चोरी नहीं करना, सत्य बोलना, परस्त्री की संगति नहीं करना, धन की इच्छा नहीं रखना, सर्व पापारंभ त्यागना, परोपकार करना, किसी को दुखी नहीं करना। इस प्रकार मुनिराज का उपदेश सुन, धर्म का स्वरूप जान, राजा वैराग्य को प्राप्त हुआ। मुनिको नमस्कारकर अपने पूर्वभव पूछे। चारज्ञानके धारी श्रुतसागर मुनिराज संक्षेपसे पूर्वभव कहते हैं। हे राजन! पोदनपुर में हितनामका पुरुष, माधवी स्त्री उसके प्रतिम नाम का तू पुत्र हुआ, उसी नगर में राजा उदयाचल, राणी उदयश्री उनका पुत्र हेमरथ राज्य करता है। एक दिन राजा ने जिनमन्दिर में आनन्द देने वाली महापूजा करवाई सबका जय जयकार शब्द सुनकर तूने भी जय जयकार किया, उससे पुण्य प्राप्त किया, मरकर पुण्यसे यक्षदेव हुआ। एक दिन विदेहक्षेत्र में कांचनपुर नगर के वन में मुनियों को पूर्वभव के शत्रु ने उपसर्ग किया। सो यक्षने उसको डराकर भगादिया और मुनिकी रक्षाकी। उससे महापुण्य उत्पन्न किया। यक्ष मरकर तडिदगद नामका विद्याधर, उसकी श्रीप्रभा स्त्री के उदित नामका पुत्र हुआ, विद्याधरों का राजा अमरविक्रम, वंदना के लिये मुनिके निकट आये, उनको देखकर निदान किया, तप से दूसरे स्वर्ग में गया वहाँसे चयकर तू मेघवाहन का पुत्र हुआ। हे राजन्! तूने इस संसार में बहुत भ्रमण किया, रसना इन्द्रिय का लोलुपी, स्त्रीयों के आधीन हो अनन्तभव धारण किये। तूने इस संसार में इतने शरीर धारण किये, अगर उन सबको इक्कठा किया जाए तो, तीनलोक में नहीं समावें। सागरों की आयु स्वर्गमें तुझे मिली। स्वर्गके भोगोंसे भी तू तृप्त नहीं हुआ, तो विद्याधरों के अल्प भोगों से तुझे कहाँ तृप्ति होगी। अब तेरी आयु

भी आठ दिन की शेष है, इसलिये इन्द्रजाल समान ये भोग, इनका तू त्याग कर दे। ऐसा सुन अपना मरण निकट जान, पहले तो जिनचैत्यालयों में महापूजा करी पुनः अनन्त संसार के भ्रमण से भयभीत होकर बडे पुत्र अमररक्ष को राज्य दिया और छोटे पुत्र भानुरक्ष को युवराज पद दिया और स्वयं सम्पूर्ण परिग्रह का त्यागकर तत्त्वज्ञान से निश्चल ध्यान मे लीन हुये और लोभ से रहित आहार पानीका त्यागकर, शत्रु-मित्रमें समान बुद्धिकर, मौनव्रत के धारक समाधिमरण कर स्वर्गमें उत्तम देवपद को प्राप्त किया। किन्नरनाद नगर में श्रीधर नाम का राजा, विद्यानाम की रानी उसके अरिंजया नाम की कन्या, उसका विवाह अमररक्ष से हुआ। गंधर्वगीत नगर मे सुरसन्निभ राजा, गान्धारी रानी उनकी पुत्री गधर्वाका विवाह भानुरक्षसे हुआ। बडे भाई अमररक्ष के दसपुत्र और छहपुत्री हुईं। उन पुत्रोंने अपने अपने नाम के नगर बसाये। शत्रुको जीतने वाले, पृथ्वीके रक्षक वे पुत्र थे। हे श्रेणिक! उन नगरो के नाम सुनो। सध्याकार, सुबेर, मनोह्लाद, मनोहर, हंसद्वीप, हरि, योध, समुद्र, काचन, अर्धस्वर्ग ये दशनगर तो अमररक्ष के पुत्रों ने बसाये। और आवर्तनगर, विधट, अम्भाद, उत्कट, स्फुट, रितुग्रह, तट, तोय, आवली, रत्नद्वीप ये दशनगर भानुरक्ष के पुत्रो ने बसाये। वे नगर नाना प्रकार के रत्नों की चमक से युक्त सुवर्ण समान दैदीप्यमान क्रीडा के लिए राक्षसों के निवास हुये। बडे बडे विद्याधर पर देशो के निवासी यहाँ आकार महा उत्साह से प्रेमपूर्वक निवास करते थे। अमररक्ष व भानुरक्ष दोनों भाई पुत्रों को राज्य देकर मुनिपद धारण कर, महातप करते हुय मोक्ष पद को प्राप्त हुये।

इस प्रकार राजा मेधवाहन के वश मे बडे बडे राजा हुये, वे न्यायवंत, प्रजापालक सर्व वस्तुओ से विरक्त होकर मुनिव्रतधार कोई मोक्ष गये, कोई स्वर्ग गये। उस वंश मे एक राजा महारक्ष, रानी मनोवेगा, उनका राक्षस नामका पुत्र राज्य करता था, उनके नामसे राक्षसवश शुरू हुआ। वे विद्याधर मनुष्य हैं राक्षस नहीं। राजा राक्षस और रानी सुप्रभा के दो पुत्र हुये, बडा आदित्यगति, छोटा वृहत्कीर्ति। दोनो चन्द्र सूर्यसमान अन्यायरूप अन्धकार को दूर करते रहे। उन पुत्रों को राज्य देकर राजा राक्षस मुनि होकर देव लोक में गये। आदित्यगति राजा और छोटा भाई युवराज हुआ। आदित्यगति की रानी सदनपद्मा और छोटे भाई की रानी पुष्पनखा थी। आदित्यगति का पुत्र भीमप्रभ हुआ, उसके एक हजार रानी देवागना समान और उनके एकसौआठ पुत्र पृथ्वी के स्तंभ समान

हुये। उनमें बड़े पुत्रको राज्य देकर राजा भीमप्रभ वैराग्यको धार परमपद को प्राप्त हुये। पहले राक्षसों के इन्द्र भीम, सुभीम ने कृपाकर मेघवाहन को राक्षसद्वीप दिया था, सो मेघवाहन के वंश में बडे बडे राजाओं ने राक्षसद्वीप की रक्षा की। भीमप्रभ का बड़ा पुत्र पूजार्ह था, वे भी अपने पुत्र जितभास्कर को राज्य देकर मुनि बने। जितभास्कर संपरिकीर्ति पुत्र को राज्य देकर मुनि बने। संपरिकीर्ति सुग्रीव को, सुग्रीव-हरिग्रीव को, हरीग्रीव-श्रीग्रीव को, श्रीग्रीव-सुमुख नाम के पुत्र को राज्य देकर मुनि हुये। सुमुख, सुव्यक्त, अमृत वेग, भानुगति, चिन्तागति, इन्द्रप्रभ, मृगारिदमन, पवि, इन्द्रजीत, भानुवर्मा, भानु, मुरारी, त्रिजीत, भीम, मोहन, उद्धारक, रवि, चाकर, वज्रमध्य, प्रबोध, सिंहविक्रम चामुंड, भीष्म, धुपवाहु, अरिदमन, निर्वाण भक्ति, उग्रश्री, अर्हद्भक्त, अनुत्तर, अनिल, लंक, चंड, मयुरवाहन, महाबाहु मनोरम्य, भास्कर प्रभ, वृहदगति, वृहदकांत, अरिसंत्रस, चंद्रावर्त, मेघवाहन, गृहक्षोभ, नक्षत्रदमन इसप्रकार राक्षसवंश में करोडों राजा हुये। बड़े विद्याधर महाबलवान कान्ति के धारी पराक्रमी, परस्त्री त्यागी निजपत्नी में संतोष ऐसे लंका के स्वामी, महासुंदर अस्त्र शस्त्र कला के धारी स्वर्ग से आकर अनेक राजा हुये। सभी अपने पुत्रों को राज्य देकर जगत से उदास होकर जिनदीक्षा धारणकर, कोई कर्म नाशकर मोक्ष गये और कोई मुनि बनकर पुण्यके प्रभावसे प्रथम स्वर्गसे लेकर सर्वार्थसिद्धि पर्यंत अपने अपने तप के अनुसार गये। इस प्रकार अनेक राजा हुये। जैसे स्वर्ग में इद्र राज्य करें, वैसे लंकाका अधिपति धनप्रभ राजा, रानी पद्मका पुत्र कीर्तिधवल राज्य करते थे। अनेक विद्याधर उनके आज्ञाकारी थे। पूर्व में किये हुये तपके बल से यह जीव देवगति व मनुष्यगति के सुख को प्राप्त करते हैं। और परिग्रह त्यागकर महाव्रत धार अष्टकर्मों को भस्मकर सिद्धपद को प्राप्त हुये। और जो पापी जीव खोटें कर्मों मे आसक्त, संसार में निंदा के पात्र होकर कुयोनियों में जन्म लेते हैं, और अनेक दुखों को भोगते हैं, ऐसा जानकर पापरूपी अंधकार को दूर करने के लिये सूर्य समान शुद्धोपयोग का चिन्तवन करों।

(इतिश्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषा टीका में राक्षसो का कथन करने वाला पांचवा अधिकार पूर्ण हुआ।)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-6

वानर वंशियों की उत्पत्ति

अथानंतर गौतमस्वामी कहते हैं हे राजाश्रेणिक! यह राक्षसवंश और विद्याधरों के वंश का वृतात तुझे कहा, अब आगे वानरवंश का कथन सुनों, स्वर्ग समान विजयार्ध पर्वत के दक्षिणश्रेणि मे मेघपुर नामका नगर ऊचे महलो से सुशोभित है, वहाँ विद्याधरों का राजा अतींद्र पृथ्वीपर प्रसिद्ध भोग संपदामें इन्द्र समान उसके श्रीमतीनामकी रानी, लक्ष्मी समान उसके श्रीकंठनामका पुत्र, शास्त्र का पारगामी उसका नाम सुन महापुरुष हर्षित होते थे। उनकी छोटी बहिन मनोहर नाम की देवी अप्सरा समान थी। महासुन्दर रत्नपुर नगरका राजा पुष्पोतर विद्याधर महाबलवान, उनके पद्माभा नामकी पुत्री पद्मोत्तर नामका पुत्र महागुणवान था। राजा पुष्पोतर ने अपने पुत्र के लिये राजा अतींद्र की पुत्री की याचना की, तो भी श्रीकंठ भाई ने अपनी बहन लकाके धनी कीर्तिधवल को देनी चाही और पद्मोतर को नहीं दी। यह बातसुन राजा पुष्पोतरने अतिक्रोध किया और कहा कि देखो हमारे में कोई दोष नहीं, हम दरिद्र भी नहीं, मेरा पुत्र कुरुप भी नहीं, हमारे और उनसे कोई बैर नहीं, फिर भी मेरे पुत्र को श्रीकठ ने अपनी बहनका विवाह क्यों नहीं कराया। क्या यह ठीक किया? एक दिन श्रीकठ चैत्यालयों की वन्दना के लिये सुमेरु पर्वत पर विमान मे बैठकर गया, भगवानके दर्शनकर आरहा था तबमार्गमे पुष्पोतर राजा की बेटी पद्माभा का मधुरध्वनी से युक्त, संगीतमय भजन सुना। वह संगीत, मन और कान को हरण करनेवाला था। उस रागमय संगीत को सुनकर राजा श्रीकंठ मोहित हुआ। तब आकर, उसने गुरु के पास, सगीत गृहमें, पद्माभा को वीणा बजाते हुए देखा। उसके रूपकी सुन्दरता देख, मनवश हो गया, वहासे मनको हटानेमें असमर्थ रहा। श्रीकंठ महासुन्दर रूपवान उसको देखकर पद्माभा भी मोहित हो गई, यह दोनों परस्पर प्रेमके वश हुये। पद्माभा का मन देख श्रीकंठ उसको लेकर आकाश मार्गसे चला। तब परिवारके लोगोने राजा पुष्पोतरसे कहां कि आपकी पुत्रीको राजा श्रीकठ हरकर लेगया। वहाँ राजा पुष्पोतर श्रीकठ पर पहले से ही क्रोधित था, क्योंकि उसने अपनी बहिन का विवाह राजाके बेटे से नहीं कराया था, और अब अपनी बेटीके हरणसे अत्यंत क्रोधित हो सेना लेकर श्रीकठको मारनेके लिये गया। राजा पुष्पोतर को क्रोधित

देख श्रीकंठ राजा डरकर भागा और अपने बहनोइ, लंका का राजा, कीर्तिधवलकी शरणमें आया। राजा कीर्तिधवल श्रीकंठको देख अपना साला जान स्नेहसे आकर मिला, छातीसे लगाकर सम्मान किया। दोनोंकी आपसमें कुशल वार्ता हो रही थी, इतने में राजा पुष्पोत्तर सेना सहित आया। कीर्तिधवलने उनको दूर से देखा। राजा पुष्पोत्तरके साथ अनेक विद्याधर खड्ग, सेल, धनुष, बाण इत्यादि शस्त्रोंको लेकर आये, उन शस्त्रों का आकाश में तेज हो रहा था। मायामयी घोडे, वायुसमान वेगउनका, मायामयी हाथी, सिंह, और बडे बडे विमानों सहित आकाश मार्गसे विद्याधरों को आते हुये देखा, उत्तरदिशा की ओर सेनाको देख कीर्तिधवल ने क्रोधसहित मंत्रीयों को युद्ध करने की आज्ञा दी, तब श्रीकंठ ने लज्जासे नीचे देख कीर्तिधवलसे कहाकि आप मेरी स्त्री और मेरे कुटुंब की रक्षा करो। और मै आपके प्रतापसे युद्धमें शत्रुको जीतकर आऊंगा। तब कीर्तिधवल ने कहा, यह बात आपकी ठीक है, परन्तु आप यहा सुखसे रहो, युद्ध करने केलिये हम लोंग यहां बहुत हैं, यह दुर्जन शांत हो जाये तो ठीक है, नहीं तो इनको मरे ही जानना। ऐसा कहकर सालेको अपने घरमें रखा और पुष्पोत्तर के पास दूत भेजा। सो दूत ने जाकर पुष्पोतरसे कहा कि आपको राजा कीर्तिधवलने बहुत आदर से कहा हैं, आप बडे कुलमे उत्पन्न हुये हो, आप निर्मल सबशास्त्रों को जाननेवाले हो, जगत मे प्रसिद्ध, आयुमें बडे हो। आपने जो मर्यादा देखी है वह किसी ने सुनी भी नहीं होगी। यह श्रीकंठने चद्रमा की किरण समान निर्मल कुल मे जन्म लिया है, और धनवान, विनयवान, सुन्दर, सर्व कार्य मे निपुण है। यह कन्या ऐसे ही पुरुष को देने योग्य है। दोनों का कुल समान है इसीलिये आपकी सेनाका क्षय क्यो करवाना? यह तो नियम है, कि बेटियॉ पर घर की होती हैं। दूत जब यह बात कह रहा था, तब ही पद्माभा की भेजी सहेली पुष्पोतर के पास आई, और कहा कि आपकी पुत्री ने आपके चरणों को नमस्कार कर विनती की है कि मैं तो लज्जा से आपके निकट नहीं आई, इसीलिये सहेली को भेजा है, हे पिताजी! राजा श्रीकंठ का रंच मात्र भी दोष नहीं है, थोडा सा भी अपराध नहीं हैं, मैं कर्मके योगसे इनके साथ आई हूँ। बड़े कुलमें उत्पन्न हुई पुत्री का एक ही पति होता है, इसीलिये इनके अलावा मेरे अन्यपुरुष का त्याग हैं। ऐसा सखी ने कहा, तब राजाने मनमें विचार किया कि, मैं सब बातों में समर्थ हूँ, युद्ध में लंकाके धनी श्रीकंठ को बांधकर लेआऊँ। परन्तु मेरी पुत्री ने ही इससे विवाह किया। तो मैं क्या करूँ। ऐसा जानकर युद्ध नहीं किया। और जो कीर्तिधवल के

दूत आये थे उनको सम्मान से विदा किये। और अपनी पुत्री की सखी आई थी, उसको भी सम्मान कर विदा किया। राजा क्रोध को छोड़कर हर्षपूर्वक अपने स्थान को गया।

अथानंतर मंगसर शुक्ला प्रतिपदा के दिन श्रीकंठ और पद्माभा का विवाह हुआ। और कीर्तिधवल ने श्रीकंठ से कहा, आपके शत्रु विजयार्ध पर्वतपर बहुत हैं, इसीलिये आप यहाँ ही समुद्रके मध्यमें जो द्वीप है उसमें रहो, और भी आपके मनमें जो स्थान अच्छा लगे, वह ले लो। मेरा मन आपको छोडने का नहीं है। आप यहाँ ही रहो। ऐसा श्रीकंठ से कहा, और राजा कीर्तिधवलने अपने मंत्रीसे कहा कि, श्रीकंठके योग्य जो स्थान हो वह आप बताओ, मंत्रीने कहा—हे महाराज! आपके सभी स्थान महामनोहर हैं, समुद्रके मध्यमें बहुतद्वीप हैं, कल्पवृक्ष समान वृक्षों से युक्त, वहाँ रत्नों की शोभा से सुशोभित महापर्वत, जहाँ देव क्रीडा करते हैं, ऐसे महारमणीक नगर, स्वर्ण रत्नोंसे निर्मित महल हैं, उनके नाम सुनो। संध्याकार, सुबेल, कांचन, हरिपुर, हंसद्वीप, कूटावर्त्त, विधट, रत्नद्वीप, तोयावली, नभोमान, क्षेम, इत्यादि सभी मनोज्ञ स्थान हैं। वहाँ देव भी उपद्रव नहीं कर सकते हैं। यहाँ से उत्तर भाग में तीनसौ योजन समुद्र के मध्य वानरद्वीप है, जो पृथ्वीपर प्रसिद्धहै वहाँपर अवान्तरद्वीप बहुत ही रमणीय है। कोई सूर्यमणि की ज्योतिसे दैदीप्यमान हैं, कोई हरितमणि की चमकसे शोभायमान हैं, कोई श्याम इन्द्रनीलमणि की कांतिके समान अंधकार रूप हैं। कोई लाल पद्मरागमणि के समान रक्त कमलों के वन महासुन्दर हैं। वहाँ ऐसी सुगन्ध पवन चलती है, मानों आकाशमे उड़ते पक्षी भी सुगन्धसे मग्नहो जाते हैं, एवं वृक्षोंपर आकर बैठ जाते हैं। वहाँ बिना बोये अनाज अपने आपही उत्पन्न होते हैं, वहाँ का अनाज वीर्य और कांति को बढ़ाने वाला है, वहाँ गन्ने के बडे बडे खेत हैं, उसके मध्य में किहकुन्द नामका पर्वत, रत्न एवं स्वर्णों की शिलाओं से शोभायमान हैं। आनन्दनामके मंत्रीसे ऐसे वचन सुनकर राजा कीर्तिधवल अतिप्रसन्न हुआ और वानरद्वीप श्रीकंठ को दिया। तब चैत्र मासके प्रथमदिन श्रीकंठ परिवार सहित वानरद्वीप में गये, मार्ग में पृथ्वी की शोभा देखते हुये चले जा रहे हैं, वानरद्वीप मानो दूसरा स्वर्ग ही है, अपने झरनोंके शब्दोंसे मानो श्रीकंठको बुला ही रहा हो। राजा वानरद्वीप में प्रवेशकर चारों ओर अपनी निर्मल दृष्टि से देखा, तो कहीं छुहारे, आंवले, अगर, चंदन, अर्जुन, इमली, चारोली, केला, अनार, सुपारी, इलायची, लवंग, काजू, बादाम, पिस्ता, अखरोट, नारियलादि सब जाति के मेवादि से युक्त अनेक प्रकार के वृक्षों

सहित वह धनाढयद्वीप सुशोभित था। ऐसी मनमोहक भूमिको देख दृष्टि अन्यजगह नहीं जाती है। वहाँके वृक्ष अतिरसीले हैं। अति ऊंचे नीचे नहीं जैसे कल्पवृक्ष ही हैं, और महारसवान स्वादिष्ट मिष्ट फलों से नम्रीभूत हो रहे हैं। वहां का कोई देश तो स्वर्णसमान कांति को प्राप्त हो रहा हैं, कोई कमल के समान, कोई वैडूर्य मणिसमान हैं, वह देश अनेक रत्नों से भरा हुआ हैं, किसी जीवको कोई बाधा नहीं, वहाँ देव क्रीडा करते हैं, और हंस सूवा मैना कबूतर इत्यादि अनेक पक्षी आकाश में उडते हुये क्रीडा करते हैं, अनेक प्रकार के वृक्षों के मंडप, पुष्पोंकी अतिसुंगध, ऐसे उपवन में सुंदर शिला के ऊपर राजा बैठे, और सभी सेना वनमें उतरी। हंस एवं मयूरों के शब्द सुने, फल, फूलों की शोभा देखी। पक्षियों का शब्द कोलाहल हो रहा है, मानव जय जयकार कर रहे हैं, पृथ्वी की शोभादेख विद्याधरियों का मन अतिप्रसन्न हुआ, नन्दनवन समान यह वन उसमें राजा श्रीकंठ ने क्रीडा करते हुए बहुत बन्दर देखे, उनकी अनेक प्रकार की चेष्टा देख राजा ने मन में विचार किया, कि तिर्यंच जीव मनुष्य समान क्रीडा करते हैं, उनके हाथ, पैर आदि सभी शरीर का आकार मनुष्य जैसा है, इनकी चेष्टाओं को देखकर राजा चकित हुआ, पास में खडे व्यक्तियों से कहा, इनको मेरे समीप लाओ, राजा की आज्ञा से कई बन्दरों को पकडकर लाये, राजा ने उनको बहुत प्रेम से रखे, उनको नृत्य करना सिखाया, मुख में सोनेकेतार लगवाकर कोतुहल करवाता रहा, बन्दर आपस में परस्पर जूंयें निकालते, आपस में स्नेह एवं कलह करते, उनके अनेक तमाशे देखे। और बन्दरों की रक्षा केलिये व्यक्तियों को नियुक्त किया। मीठे मीठे भोजन कराते, बन्दरों को साथ लेकर किहकुन्द पर्वतपर चढ़े, और पर्वत के ऊपर समतलभूमि देख किहकुन्द नाम का नगर बसाया, उसनगरमें शत्रुओं का मन भी प्रवेश नहीं कर सकता, वह नगर चौदह योजन लम्बा, चौदह योजन चौडा और परिक्रमा से बियालीस योजन से कुछ अधिक है। उनमें मणियों के कोट, रत्नों के दरवाजे, महल के चारों तरफ रत्नों का कोट इतना ऊंचा है कि अपने शिखरों से मानो आकाश को ही छू रहा है। दरवाजे रत्नों की ज्योती स्वरूप हैं, देहली पद्मरागमणी समान लाल है, ऊंचे ऊंचे तोरण महल की शोभा बढ़ा रहे हैं। इत्यादि नगर की शोभा का वर्णन कहाँ तक करें। इन्द्रके नगर समान वहनगर उसमें राजा श्रीकंठ पद्माभा रानी सहित सुख पूर्वक रहते हैं। जो वस्तु भद्रशाल, सौमनस व नन्दनवन में नहीं मिले वह वस्तु राजा के वन में प्राप्त होती है। एक दिन राजा अपने महल के ऊपर विराज

रहे थे, वहाँ से अष्टान्हिका के दिनों में इन्द्रो को नंदीश्वरद्वीप में जाते देखा। देवो के मुकुटों की ज्योति देखी, बाजो की ध्वनी से दिशाये शब्दरूप देखी, कई देवों को हंसो पे, तुरंगों पे, मयूर आदि के अनेक विमानोपर चढे हुये देखे, शरीरकी सुगन्धसे दिशाये सुगंध मय हुई, यह अद्‌भुत चरित्रदेख राजाने मनमें सोचा कि ये सभी देव नन्दीश्वरद्वीप को जा रहे है। राजा भी अपने विद्याधरों सहित नन्दीश्वर द्वीप जाने की इच्छाकर बिना विवेक से ही विमानपर चढ रानी सहित आकाशमार्ग से चले। परन्तु मानुषोत्तर पर्वत के आगे इनका विमान नहीं जा सका। देव आगे चलेगये, इनका विमान अटका रहा, आगे नहीं बढा। तब राजाने बहुतदुख किया, मनका उत्साह नष्ट हो गया। मुख कांति से हीन हो गया। मनमें विचारकिया कि हाय! हाय! बडा दुख है, हम मानव, हीन शक्ति के धारी, विद्याधर मनुष्य शक्ति का अभिमान करते है, परन्तु इस अभिमानों को धिक्कार हो। मेरे मन मे यह अभिलाषा थी कि, मै भी नन्दीश्वर द्वीपके अकृत्रिम चैत्यालयों की भाव सहित वन्दना करूँगा और सुगंधित पुष्प, धूप, गध इत्यादि अष्टद्रव्य से पूजा करूगा, धरतीपर मस्तक लगाकर बारबार नमस्कार करूगा। यह मेरी इच्छा थी, परन्तु पूर्वोपार्जित अशुभकर्म के कारण भगवान के दर्शन मेरे भाग्य मे नहीं थे। पहले मैंने अनेकबार सुना था कि मानुषोत्तर पर्वत को उल्लांघकर मानव आगे नहीं जाते हैं, लेकिन भक्ति के कारण ये बात मै भूल गया, अब ऐसे कर्म करूँ जो आगे जन्म मे नन्दीश्वरद्वीप के दर्शनकर सकूँ। यह निश्चय कर वज्रकठ पुत्रको राज्य देकर सब परिग्रह का त्यागकर राजा श्रीकंठ मुनि हुये। एक दिन वज्रकठने अपने पिता के पूर्वभव जानने की इच्छा प्रकट की। वृद्धपुरुष ने वज्रकंठ से कहा कि हमने जो मुनियोंके मुखसे सुना है वह मै कहता हूँ।

पूर्वभव में दो भाई महाजन थे, उनमे प्रेम बहुत था। उनकी स्त्रीयो ने दोनों का मन अलग अलग किया। छोटा भाई दरिद्री, और बडा भाई धनवान था। सेठ की सगति से बडा भाई श्रावक हुआ, छोटा भाई कुव्यसनी होकर दुख से जीवन यापन करता रहा। बडे भाई ने छोटे भाई की यह दशा देख बहुत धन दिया और भाई को उपदेश देकर व्रत ग्रहण कराये। आप स्वय मुनि बनकर समाधि पूर्वक मरण कर इन्द्रपद को प्राप्त किया। और छोटे भाई शान्त परिणामों से मरण कर देव हुआ। देव से च्युत होकर श्रीकठ नाम का राजा हुआ। बड़े भाई का जीव इन्द्र छोटे भाई के स्नेह से अपनी ऋद्धि एवं अपना रूप दिखाता हुआ नन्दीश्वर द्वीप गया। सो इन्द्र को देखकर राजा श्रीकंठ को जातिस्मरण से वैराग्य प्राप्त हुआ।

अपने पिता के पूर्वभव सुन राजा वज्रकंठ भी इन्द्रायुधप्रभ को राज्य देकर मुनि बने। इंद्रायुधप्रभ की परम्परा में राजा रविप्रभ उनके अमरप्रभ पुत्र हुआ। उसने गुणवती से विवाह किया। उस गुणवती ने राजा अमरप्रभ के महल में अनेक तरह के चित्र देखे। चित्र देखकर प्रसन्न हुई। कहीं सरोवर, कहीं झरने, कहीं फूलों के भरे वृक्ष, कहीं बंदरों के झुंड के झुंड खेलकर रहे थे। रानी बन्दरों के चित्र देखकर डर से कांपने लगी, सिर पर पसीने की बूंदों से माथे का तिलक बिगड गया, आंखें फिरने लगी। राजा अमरप्रभ यह दृश्यदेख क्रोधित हुआ और कहा कि, मेरे विवाह के समय ये चित्र किसने बनवाये, मेरी प्यारी राणी इनको देखकर डर गयी। तब बडे लोगों ने हाथ जोडकर कहा कि महाराज इसमें किसी का कोई अपराध नहीं है। आप ने कहा कि चित्र बनवाने वाले ने आपको दुख दिया है, तो ऐसा कौन है जो आपकी आज्ञा के बिना काम करे। सबके जीवन दाता आप हैं, आप प्रसन्न होकर, हमारी विनती को सुने। पहले आपके वंश में पृथ्वी पर प्रसिद्ध राजा श्रीकंठ हुये थे, उन्होंने यह स्वर्ग समान नगर बसाया, अनेक रमणीय स्थानों का यह देश। इसमें राजा श्रीकंठने इन बन्दरों को देखकर आश्चर्य को प्राप्त होते हुए, इनको मीठा मीठा भोजन कराया, और इनके चित्र दिवालों पर बनवाये, बाद में उनके वंश में जो राजा हुये उन्होने मांगलिक कार्यों में इनके चित्र बनवाये और इनसे प्रीति की। इसीलिये पूर्वरीति के अनुसार अब भी ये चित्र बनवाये हैं। ऐसा कहा तब राजा क्रोधछोड प्रसन्न होकर आज्ञा की-कि हमारे बडे राजाओं ने मंगल कार्यमे इनकेचित्र बनाये हैं, सो अब इन चित्रों को भूमि पर मत डालो, जहाँ मनुष्यों के पैर लगे, अब में इनको मुकुट में धारण करूँगा। और ध्वजाओं में, महलों के शिखरों में तथा छत्रों के ऊपर इनके चिन्ह बनवाओ, इसप्रकार मंत्रीयों को आज्ञा दी, सो मत्रीयों ने इसीप्रकार कार्य किया।

राजा अपनी गुणवती रानी सहित परम सुखों को भोगते हुये, विजयार्ध पर्वत की दोनों श्रेणियों को जीतने का विचार किया। बडी सेना लेकर राजा विजयार्ध पर्वत पर गये। राजा की ध्वजाओं में और मुकुटों में बंदरों के चिन्ह है। राजा ने विजयार्ध की दोनों श्रेणी जीतकर सब राजा वश किये। सभी देशों पर अपना शासन चलाया, किसीका भी धन नहीं लिया। सब राजाओं को वशकर पुनः किहकूंपुर नगर में आये। विजयार्ध पर्वत के बडे बडे राजा सभी साथ आये। सब विद्याधरों का अधिपति होकर बहुत दिन राज्य किया। उनके पुत्र कपिकेतु, रानी श्रीप्रभा बहुत गुणवती, राजा कपिकेतु अपनेपुत्र विक्रमसंपन्न को राज्य दे वैरागी

हुये, विक्रमसंपन्न प्रतिबल को राज्य दे वैरागी हुये, यह राजलक्ष्मी विषबेल के समान जानना। बडे पुरुषों के पूर्वोपर्जित पुण्य के प्रभाव से यह लक्ष्मी बिना पुरुषार्थ से ही मिली है, परन्तु लक्ष्मी में विशेष प्रीति नहीं है, लक्ष्मी को छोडते हुये उनको कोई दुख नहीं है। कोई पुण्य के प्रभाव से राज्य लक्ष्मी को प्राप्त कर देवों जैसे सुख भोग फिर वैराग्य को धारणकर परमपद को प्राप्त हुये हैं। मोक्ष का अविनाशी सुख उपकरणादि सामग्री के आधीन नहीं है। निरन्तर आत्माधीन है। महासुख अन्तरहित अविनश्वर ऐसे सुखको कौन नहीं चाहता है, राजा प्रतिबल के गगनानन्द, उनके खेचरानन्द, उनके गिरीनन्द इसप्रकार बानर वंशियों के वंशमें अनेक राजा हुये वे राज्य छोड वैराग्यको धारणकर स्वर्ग, मोक्ष को प्राप्त हुये। इस वंशके समस्त राजाओं के नाम और पराक्रम कौन कह सकता है। जिसका जैसा लक्षण है वैसा ही वह कहा जाता है। सेवा करे सो सेवक, धनुष धारे सो धनुषधारी, दुखियों का संकट दूर करनेवाला शरणगति क्षत्री कहा जाता है। राजा राज्य छोडकैर मुनि हो गये तो मुनि कहे जाते, तप करते तो तपस्वी कहलाते, लाठीरखे तो लाठीवाला कहलाते, श्रमकरे सो श्रमण कहलाते, ब्रह्मचर्य पाले तो ब्रह्मचारी कहलाते, ऐसे इन विद्याधरों ने छत्र एवं ध्वजाओं पर बन्दरो के चिन्ह बनवाये, इसलिये वे बानर वंशी कहलाये। भगवान श्रीवासुपूज्य के समय राजा अमरप्रभ हुये थे। उन्होंने बन्दरों के चिन्ह मुकुट, छत्र, ध्वजाओं में बनवाये तबसे इनके कुलमें यह परम्परा चली आई। इसप्रकार संक्षेप से बानरवंश की उत्पत्ति कही गई।

अथानंतर इस कुल में महोदधि राजा, विद्युतप्रकाश रानी पतिव्रता स्त्रीयों में गुणों की निधान है। अपने विनय से पति का मन प्रसन्न किया। राजा के सैंकडों गुणवती रानियॉं उनमें यह रानी शिरोमणी, महासौभाग्य वती, रूपवती। उस राजा के महापराक्रमी एकसौआठ पुत्र हुये उनको राज्य देकर, राजा महासुख भोगते रहे। मुनिसुव्रतनाथ के समय बानर वंश में महोदधि राजा हुये और लंका में विद्युतकेश के एवं महोदधि के परम प्रेम हुआ। दोनों राजा कैसे हैं? संपूर्ण जीवों के प्यारे आपस में एकमनसे रहे, शरीर अलग अलग हुआ तो क्या? विद्युतकेश मुनि हुये ये वृतान्त सुन महोदधि भी वैरागी हुये। यह कथा सुन, राजा श्रेणिक ने गौतमस्वामी से पूछा, हे स्वामी! राजा विद्युतकेश को कैसे वैराग्य हुआ? तब गौतमस्वामी ने कहा, एक दिन यह विद्युतकेश उद्यान में क्रीड़ा करने गये, राजा विद्युतकेश रानीयों के साथ क्रीड़ा करते हुये, श्री चन्द्रारानी के कूच एक

बंदर ने नखों से नोच डाले। तब रानी खेद-खिन्न हुई, रक्त बहने से रानी को महापीड़ा उत्पन्न हुई, राजाने रानीको शांति देकर अज्ञान भावसे बन्दरोंपर बाण चलाये। तब एक बन्दर बेहोश होकर गगन-चारण मुनिके चरणों में गिरपडा। मुनि दयालु बन्दर को बेहोश देखकर पंच णमोकार मंत्र सुनाया, वह बन्दर मरकर उदधिकुमार जाति का भवन वासीदेव हुआ। उस वनमें बन्दरके मरजाने के पश्चात् राजा के लोग अन्य बन्दरों को मार रहे थे। तब उदधिकुमार देव अवधिज्ञान से विचारकर बन्दरों को मारते हुए जान मायामयी बन्दरों की सेना बनाई, ऐसे बन्दर बने जिनके दांत, मुख, भौंह महाविकराल, सिंदूर जैसे लालमुख, डरानेवाले शब्दों को करते हुये आये। कोईहाथ में पर्वत लेकर, कोई वृक्षों को लेकर, कोई हाथों से धरती कूटते हुये, कोई आकाश में उछलते हुये, क्रोध से चलायमान है शरीर उनका ऐसे बन्दरों ने आकर राजा को घेर लिया और कहने लगे, अरे दूराचारी संभल जा, नहीं तो तेरी मृत्यु आई है, तू बन्दरों को मारकर किसकी शरण में जायेगा। तब विद्युतकेश भयभीत हुआ और सोचा कि यह बन्दरों का बल नहीं, यह कोई देव माया है। तब शरीर की आशा छोड़ मधुर वचनों से विनती करने लगा, हे महाराज! आज्ञाकरो आप कौन हो। महाज्योतिवान, अद्भुत शरीर आपका, यह बन्दरों की शक्ति नहीं, आप कोई देव हैं। तब राजा को अतिविनयवान देख, उदधिकुमार बोले, हे राजा! बानर पशुजाति, उनका स्वभाव ही अति चंचल है, उनको तूने स्त्री के कारण मारे, तब मैं साधु के प्रसाद से देव हुआ, मेरी विभूति तू देख। तब राजाको देव के डर से शरीर में कम्पन्न होकर, मन में भय उत्पन्न हुआ, हंसते हुये उदधिकुमार ने कहा तुम डरो मत। हाथजोड राजा ने कहा, 'जो आप आज्ञाकरो वही मैं करूँ। तब देव, गुरु के निकट राजाको ले गया, देव और राजा दोनों मुनि की प्रदक्षिणा देकर नमस्कार कर बैठ गये। देवने मुनिसे कहा, हे स्वामिन! मैं बन्दर था, आपके प्रसाद से देव बना। राजा विद्युतकेश ने मुनि से पूछा। मेरा क्या कर्तव्य है, मेरा कल्याण कैसे होगा। तब चार ज्ञान के धारक मुनि तपोधन कहते हैं कि हमारे गुरु निकट ही हैं, उनके समीप चलो, अनादि काल का यही धर्म है गुरु के पास जाकर धर्म सुनें, आचार्य के रहते उनके पास नहीं जाय और शिष्य ही धर्म का उपदेश दे तो वह शिष्य नहीं कुमार्गी हैं, आचारांग से भ्रष्ट हैं, ऐसा तपस्वी गुरुओं ने कहा है। तब देव और विद्याधर विचार करते हैं कि, ऐसे महापुरुष भी गुरु की आज्ञाबिना उपदेश नहीं करते। अहो! तप की महिमा अचिन्त्य है मुनि की आज्ञा

से देव और विद्याधर मुनिके साथ गुरु के निकट गये। वहाँ जाकर तीन प्रदक्षिणा देकर, नमस्कारकर, गुरु के चरणों में बैठे। कैसे हैं गुरु? तपकी मूर्ति, परमतेजस्वी हैं। महाविनयवान होकर देव और विद्याधर ने धर्म का स्वरूप पूछा। कैसेहैंगुरु? प्राणियों के हित में सावधान, राग द्वेष से दूर, मेघ समान गम्भीर ध्वनी से कल्याण निमित्त परमधर्म का अमृत बरसाने वाले, ज्ञान का व्याख्यान करने लगे। अहो देव विद्याधरों! मन लगाकर सुनो।

तीनलोक का वर्णन करनेवाले श्रीजिनराज ने जो धर्म का स्वरूप कहा है, वह मैं तुमको कहता हूँ। कोई प्राणी की नीच बुद्धि, विचार रहित, अज्ञानी, अधर्म को ही धर्म मानता हैं, जो मार्ग को नहीं जानता वह बहुत काल में भी मन वांछित स्थानपर नहीं पहुँचता। मिथ्यादृष्टि, विषयाभिलाषी जीव हिंसा से अधर्म को धर्म जानता है वह नरक निगोद के दुःख भोगता है। अज्ञानी खोटे दृष्टांत से, महापाप के पुंज मिथ्याग्रन्थों के कारण, धर्म जान जीवों को मारते हैं वह अनन्तकाल तक संसार में भ्रमण करते हैं। अधर्म की चर्चा कर खोटे उपदेश देते हैं मिथ्या दृष्टियों का काय क्लेश तप और ज्ञान मोक्ष का कारण नहीं हैं। सम्यग्दर्शन के बिना जो ज्ञान है वह सम्यग्ज्ञान नहीं। और जो आचरण है वह कुचारित्र है। मिथ्या दृष्टि जीवों का व्रत तप सब पाषाण बराबर हैं ज्ञानी पुरुषों का तप सूर्यमणि समान है, धर्म का मूल जीव दया है दयाका मूलकारण कोमलपरिणाम है, सो कोमलपरिणाम दुष्ट जीवो के कैसे होते हैं। परिग्रह से हिंसा होती है इसीलिये दया के कारण आरंभ परिग्रह छोडना चाहिये। सत्य वचन धर्म है, परन्तु सत्य से जीवों को दुख हो, वह भी सत्य नहीं, झूठ ही है चोरी का त्याग करना, परस्त्री का त्याग, परिग्रह का प्रमाण करना, संतोषव्रत है, इन्द्रियों का दमन करना कषायों का शमन करना; देव, शास्त्र, गुरु धर्म का विनय करना; निरंतर ज्ञान का अभ्यास करना, यह सम्यग्दृष्टि श्रावक के व्रत कहे गये हैं। अब गृहत्यागी मुनि धर्म को सुनो! सर्व आरंभ परिग्रह का त्याग, दशधर्म का पालक, सम्यग्दर्शन सहित महाज्ञान वैराग्य रूप यति का मार्ग हैं। महामुनि पांचमहाव्रत रूप हाथी के कंधे चढ़ते हैं, और तीन गुप्ति रूप दृढ कवच पहनते हैं, पांच समिती रूप पयादों से संयुक्त हैं, तपरूप तीक्ष्ण शस्त्रो से मंडित हैं, मनको आनन्दित करने वाले हैं, ऐसे दिगम्बर मुनि काल रूप बैरी को जीतते हैं। यह काल रूप बैरी मोहरूप मस्तहाथी पर चढा हुआ है, कषायरूप सामन्तों से मंडित है। यती का धर्म परमनिर्वाण का कारण है, महामंगल रूप है, उत्तम पुरुषों को धारण करने योग्य है। श्रावकधर्म स्वर्ग का

कारण और परम्परा से मोक्ष का कारण है। स्वर्ग में देव मनवांछित इन्द्रियों के सुखों को भोगते है। मुनि के धर्म से कर्मनाशकर मोक्षसुख को पाते हैं। अतींद्रिय सुख बाधा रहित अनुपम अविनाशी है। और श्रावक के व्रत से स्वर्ग जाकर वहॉं से चयकर मनुष्य होकर मुनि बनकर परमपद को पाते हैं, और मिथ्यादृष्टि जीव तप से स्वर्ग में जाकर पुनः वहॉं से च्युत होकर एकेन्द्रिय में आकर जन्म लेते हैं, अनन्त ससार में भ्रमण करते हैं, इसीलिये जैन धर्म ही परमधर्म है, जैनतप ही परमतप है, जैनही उत्कृष्टमत हैं, जिनराज के वचन ही सार हैं। जिनशासन के मार्ग से, जो जीव मोक्ष प्राप्त करने का पुरुषार्थ करते है उनको वह मोक्ष फल मिलता है। उनके बीच मे अगर भव धारण करते तो देव, विद्याधर, राजादि के भव तो बिना पुरुषार्थ से सहज ही प्राप्त होते हैं। जैसे खेती करनेवाले किसान को अनाज के साथ साथ घास फुसादि सहज ही प्राप्त होता है। कोई पुरुष अन्यनगर को जा रहा है तो मार्ग मे वृक्षादि का संयोग स्वयं प्राप्त होता है, ऐसे ही शिवपुरी के उद्यमी मुनि को इन्द्रादि पद बिना चाहे शुभोपयोग के प्रभाव से अपने आपही प्राप्त होते है। श्रावक और मुनि धर्मको छोड शेषधर्म को अधर्म जानना। अधर्म से जीव नानाप्रकार की योनियो में दुख भोगते हैं। तिर्यंच योनी मे मारण, ताडण, छेदन, भेदन, शीत, उष्ण, भूख, प्यास इत्यादि के दुख भोगते हैं। सदा अधकार से युक्त महादुख रूप जो नरक, उनमे अत्यन्त शीत उष्ण महाविकराल पवन जिससे अग्नि के कण बरसते है घानी में पेलते है, करोत से चीरते हैं, शालमलीवृक्ष के पत्ते, तलवारकी धार के समान ऐसे पत्तो को शरीरपर गिरने से शरीर के खंड, खंड होते है। गरम गरम तांबा, शीशा गलाकर शराब पीने वाले पापियो को पिलाते हैं। मास भक्षियो को उनका ही मास काट काट कर उनके मुख में डालते हैं। परस्त्री सेवन करनेवाले पापियो को गरम गरम लोहे की पुतलीयों से चिपकाते हैं। और वहां मायामयी सिह, व्याध्र, स्याल, सर्प, दुष्ट पक्षी, काटते एवं नोचते है। नारकी जीव सागरो की आयु पर्यत अनेक प्रकार के दुख, भूख प्यास, मार काट की वेदना भोगते हैं। तिल के बराबर शरीर के टुकडे टुकडे करनेपर एवं मारने पर भी मरते नहीं हैं, आयुपूर्ण करके ही मरते है। वहॉं मायामयी मक्खी, कृमी, उनकी चोंच सूई समान तीक्ष्ण उससे उनको काटते हैं, वहॉं पशु, पक्षी तथा विकलत्रय नहीं हैं, नारकी जीव ही, विक्रिया से अपने शरीर के हाथों का ही भाला, तलवार आदि बनाते हैं। पॉंचों प्रकार के स्थावर जीव सर्वत्र हैं। महामुनि! देव और विद्याधरों से कहते हैं। नरकों में जो दुख, जीव भोगतें हैं उनको कहने

में कौन समर्थ हैं। तुम दोनों ने, ऐसी कुगतियो में अनेक दुखों को भोगा है। ऐसा मुनिराज ने कहा। तब दोनों अपने पूर्व भव पूछने लगे। तब मुनिराज ने कहा। तुम मन लगाकर सुनो। इस दुख दाई ससार मे तुम मोह से पागल होकर परस्पर द्वेषकर आपस में मरण मारण करते अनेक कुयोनियो मे भटके, कर्म के योग से मनुष्य भव पाया। उनमें एक तो काशी देश मे पारधी हुआ, दूसरा श्रावस्ति नगरी मे राजा का सुयशोदत्त नाम का मंत्री हुआ। सो गृहत्यागकर मुनि हुआ। महातपस्वी मुनि अनेकगॉव, नगर देशों मे विहार करतेहुये एकदिन काशीनगर के वन में आये एव जीव जन्तु रहित पवित्रस्थान पर विराजमान हुये। अनेक श्रावक श्राविका दर्शनार्थ आये, और वह पापी पारधी मुनि को देख तीक्ष्ण वचनरूपी शस्त्र से कहा मलीन, निर्लज्ज, मार्ग भ्रष्ट मेरे शिकार करने मे महा अमंगल रूप हुआ है। तब मुनि को ध्यान में विघ्न करने वाला क्रोध उत्पन्न हुआ, परन्तु मन में विचार किया कि मै मुनि बना क्रोध करना मेरा कर्तव्य नहीं, फिर भी विचार किया कि एक मुक्का के प्रहार से ही पापी पारधी को मार डालू। तब तपस्या के प्रभाव से मुनि को जो आठवें स्वर्ग मे जाने का पुण्य हुआ था वह क्रोधकषाय के योग से क्षय को प्राप्त हुआ, और मरकर ज्योतिषी देव हुआ। वहॉ से आकर तू विद्युतकेश विद्याधर बना, और वह पापी पारधी बहुत काल ससार भ्रमणकर लंका के प्रमदनाम के उद्यान मे बन्दर हुआ, तब तूने स्त्री के कारण उसे बाण से मारा सो बहुत अयोग्य कार्य किया। पशु का अपराध देख तुमने क्रोध किया सो योग्य नहीं, वह बन्दर मुनि चरणों मे गिरकर णमोकार मत्र के प्रभाव से उदधिकुमार देव हुआ। ऐसा जानकर, हे विद्याधरो! तुम बैर का त्याग करो, बैर के कारण तुम्हारा ससार भ्रमण हो रहा है। तुम सिद्धो के सुख चाहते हो तो राग द्वेष मत करो, सिद्धों के सुखों का मनुष्य और देववर्णन नहीं करसकते, वहॉ अनन्त अपार सुख है। जो तुम मोक्षाभिलाषी हो, अच्छे आचरण से सहित हो तो मुनिसुव्रतनाथ की शरण को ग्रहण करो। कैसे है मुनिसुव्रतनाथ भगवान?

परमभक्ति से युक्त, इन्द्रादि देव भी नमस्कार करते हैं, इन्द्र अहमिन्द्र, लोकपाल, सब उनके दास हैं। वे त्रिलोकी नाथ है उनकी तुम शरण लेकर परम कल्याण करो, ये मुनि के वचन सुन विद्युतकेश विद्याधर का मन, कमल समान खिल गया, सुकेश नाम के पुत्र को राज्य देकर मुनि बनें। और सम्यकदर्शनज्ञानचरित्र की आराधना से उत्तम देव हुये। किहकुं पुर के स्वामी राजा महोदधि विद्याधर वानरवंश के स्वामी मणियों के महल में रहते हुए इंद्र समान सुख भोगते हैं, उनके

पास एक विद्याधर ने नमस्कार कर कहा कि, हे प्रभो! राजा विधुतकेश मुनि बनकर स्वर्ग पधारे। यह समाचार सुन राजा महोदधि भी भोगों से विरक्त होकर कहा कि मैं भी मुनि दीक्षा धारण करूंगा। ये वचन सुन राजलोक में सभी रोने लगे, तब सम्पूर्ण महल रुदन की ध्वनी से गुजायमान हुआ। उसी समय युवराज ने आकर राजा से विनती की और कहाँ कि—राजा विद्युतकेश का और अपना महाप्रेम है, राजा ने पुत्र सुकेश को राज्य दिया है वह आपके भरोसे दिया है इसीलिये सुकेश के राज्य की रक्षा आपको करनी है। जैसा उनका पुत्र वैसा आपका, इसीलिये कुछ दिनों के बाद आप दीक्षा लेना, आप जवान हो इन्द्र के समान भोगों को भोगते हुये निष्कटक राज्य करो। इसप्रकार युवराज ने हाथजोड विनती की, आखों से आसुओं की धारा बह चली, तो भी राजा का मन भोगों में नहीं लगा। मत्रियों ने कहा-हे नाथ। हम अनाथ हो जायेंगे हम आपके चरणो के भक्त है हमें छोडकर आप क्यो जा रहे हो, वह योग्य नहीं, इस प्रकार सभी ने बहुत विनती की, तब भी राजा ने विनती नहीं मानी। रानियाँ चरणों में लेट गई बहुत अश्रुपात किये और कहा कि हम आपके गुणों से, आपके प्यार से, बहुत भोगो को भोगा है, महालक्ष्मी समान हमको प्यार से आपने देखा, अब हमारा प्रेम छोडकर आप क्यो जा रहे हो, इत्यादि अनेक बाते कहीं, तो भी राजा ने नहीं सुनी, और विरक्त भावों से सभी रानियो को एवं राज्य को नीरस भाव से देखा। मोहछोड सर्वपरिग्रह का त्यागकर प्रतिचन्द्र पुत्र को राज्य देकर, आप अपने शरीर से भी उदास होकर दिगम्बर दीक्षा धारण की। कैसे हैं मुनि? पूर्णबुद्धि से युक्त महा धीरवीर ध्यानरूपी हाथी पर चढकर तपरूपी तीक्ष्णशस्त्र से कर्मरूपी शत्रुका नाशकर सिद्ध पद को प्राप्त किया। प्रतिचन्द्र भी कुछ दिन राज्यकर अपने पुत्र किहकंध को राज्य देकर और छोटे पुत्र अन्धकरुढ को युवराज पद देकर आप दिगम्बर मुनि होकर शुक्लध्यान के प्रभाव से सिद्धपद को प्राप्त हुये।

अथानंतर राजा किहकंध और अन्धकरूढ दोनों भाई चाँद सूर्य समान पृथ्वीपर प्रकाश करते रहे। उसीसमय विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में रथनूपुर नगर का राजा अशनिवेग महापराक्रमी दोनों श्रेणी के स्वामी, उनके पुत्र विजय सिंह थे। आदित्यपुर के राजा विद्यामंदिर नाम के विद्याधर, उनकी रानी वेगवती, उनकी पुत्री श्रीमाला, उसके विवाह के लिये स्वयंवर मण्डप की रचना हुई। उनमें अनेक विद्याधर आये, वहां अशनिवेग के पुत्र विजयसिंह भी पधारें। संपूर्ण विद्याधर सिंहासन पर बैठे हैं, बड़े बड़े राजकुमार अपने अपने साथियों सहित बैठे

हैं। सबकी दृष्टि श्रीमाला के पास गई। कैसी हैं श्रीमाला? किसी से भी रागद्वेष नहीं, मध्यस्थ परिणाम हैं और सभी विद्याधरकुमार कामवश होकर अनेक विचार की चेष्टायें करते रहे। किसी के माथे का मुकुट ठीक था तो भी सुंदर हाथों से ठीक करते हैं, किसीपर मनुष्य चमर ढ़ोरते हैं, पंखें से हवा करते हैं तो भी लीला सहित महासुन्दर रूमाल से अपने आपको हवा करते हैं, कोई बालों को संभारते हैं, कोई शरीर का शृंगार करते हैं इत्यादि अनेक चेष्टा राजपुत्र स्वयंबर मंड्प में करते रहे। कैसा है स्वयंबर मंडप। उनमे वीणा, बासुरी, मृदग, नगाडे इत्यादि अनेक बाजे बज रहे हैं। मंगला चरण हो रहे हैं और वहां बंदीजन के समूह अनेक शुभ चरित्र का वर्णन करते हैं। स्वयंबर मंडप में सुमगला दासी के एकहाथ में स्वर्ण की और एकहाथ में बेंत की छडी लेकर कन्या को हाथ जोड महाविनय से कहा कि हे पुत्री! यह मार्तंडकुडलकुमार अपनी ज्योति से सूर्य को जीतता हैं, एवं गुणो का खजाना हैं, इस सहित सुख भोगने की इच्छा है तो इसको माला पहनाओं। तब कन्या यौवन रहित जान आगे चली। पुनः धाय बोली हे कन्या! यह रत्नपुर का राजाविद्यांग रानीलक्ष्मी उनकापुत्र विद्यासमुद्रघात विद्याधरो का अधिपति इसका नाम सुन शत्रु भी डरते हैं, महामनोहर हारों से युक्त, इसके सुन्दर वक्षस्थल में लक्ष्मी निवास करती हैं। तेरी इच्छा है तो इसको माला पहनाओं। तब यह सरलदृष्टि से देख आगे चली। फिर धाय बोली-हे पुत्री! यह खेचरभानु वज्रपंजर नगर का अधिपति इसको देखकर अन्य विद्याधर भी डरते हैं, यह सूर्य समान मुकुट से शोभायमान हैं, तेरी इच्छा हैं तो इसके कंठ में माला पहनाओं। तब यह कन्या संकुचित होकर आगे चली। तब धाय बोली हे कुमारी! यह राजा चन्द्रानन चन्द्रपुर का स्वामी, इनका वक्षस्थल महासुन्दर चन्दन से सुगन्धित है, मोतियों के हार इनके गले में उछल रहे है, इसके नाम से शत्रुओं का मन भी आनन्द को प्राप्त होता है, तेरी इच्छा हो तो इसके साथ संगम कर सुख भोगों। फिर भी इसका मन प्रीति को प्राप्त नहीं हुआ। फिर धाय बोली-हे कन्ये! मकन्दरकुंज नगरका राजापुरन्दर मानो पृथ्वीपर इन्द्र ही आया हो, मेघसमान ध्वनी, संग्राम में उसकी दृष्टि का सामना शत्रु भी नहीं कर सकता तो इसके बाण की चोट कौन सह सकता, देव भी इनसे युद्ध की बात नहीं कर सकता, तो मनुष्य की क्या बात। तेरे इच्छा है तो इसे माला पहनाओ। ऐसा कहा तो भी इसने माला नहीं पहनाई। पुनः धाय कहती है-हे देवी! नाकार्थनगर का राजकुमार महाबल, कमल समान मन फूलरहा है, ऐसा महाबलवान अपनी भोंहे

टेढ़ी करते ही पृथ्वी को वश करता है, चाहे तो विद्या के बल से आकाश में नगर की रचना कर सकता है, चाहे तो एकलोक नयाही बसाकर दिखा सकता है चन्द्र सूर्य गृह नक्षत्रादि को पृथ्वीपर दिखा सकता है, जलको स्थलरूप, स्थलको जल रूप कर सकता हैं, इत्यादि विद्याबल का वर्णन किया, फिर भी उसका मन इसके साथ अनुरागी नहीं हुआ, और भी अनेक विद्याधर धाय ने दिखाये वे भी कन्या की दृष्टि में नहीं आयें। उन सबको छोड़ आगे चली, सब विद्याधरों का मन अप्रसन्न हुआ। सब विद्याधरों को छोडकर इसकी दृष्टि किहकंध कुमार पर गई, और उसके कंठ में वरमाला डाली। तब विजयसिंह विद्याधर क्रोध से भरी दृष्टि से किहकंध और अंधक को देखा, और कहा कि यह विद्याधरों की समाज है, यहाँ तुम वानरवंशी क्यों आये? कुरुप है दर्शन तुम्हारा, तुम क्षुद्र हो, तुच्छ हो, विनयरहित हो। यह स्थान फलों से युक्त वृक्षसयुक्त कोई रमणीक वन नहीं, पहाडो की सुन्दर गुफा नहीं, पानी के झरनेनहीं, बन्दरों के क्रीडा करने का स्थान नहीं। लालमुख के बन्दरो! तुमको यहाँ किसने बुलाया? जो नीच दूत तुमको बुलाने गया उसको में नष्ट करूंगा। अपने सेनापति से कहा कि, इन सबको यहाँ से निकाल दो, ये सब वृथाही विद्याधर कहलाते हैं। यह शब्द सुनकर किहकंध और अंधक दोनों भाई बानरध्वज महाक्रोध को प्राप्त हुये। समस्त सेनाके लोग अपने स्वामी का अपवाद सुन विशेष क्रोधको प्राप्त हुये और महाक्रोध से युक्त होकर जड सहित वृक्ष को उखाडते, कोई खम्भे को उखाडते हुये लडने लगे, किसी के शरीर से खून की धाराये बह चली, किसी के क्रोध भरे शब्दों से दिशाये गुजायमान हुई, किसी के केश विकराल हुये, मानो रात्रि ही हो गई।

इत्यादि अपूर्व चेष्टाओं से बानरवंशी विद्याधरों की सेना, समस्त विद्याधरों को मारने के लिये तैयार हुई। हाथियो से हाथी, घोडों से घोडे, रथों से रथ युद्ध करते रहे। दोनों सेनाओं में महायुद्ध हुआ। आकाश में देव कौतुक देखते रहे, यह युद्ध की बात सुनकर राक्षसवंशी विद्याधरों का स्वामी राजा सुकेश लंका का स्वामी बानरवंशीयों की सहायता के लिये आये। राजा सुकेश, किहंकद्य और अंधक के परममित्र हैं, मानों इच्छा इनकी पूरी करने ही आये हैं। जैसे भरत चक्रवर्ती के समय राजा अकंपन की पुत्री सुलोचना के लिये अर्ककीर्ति एवं जयकुमार का युद्ध हुआ था, ऐसा युद्ध हुआ। यह स्त्री ही युद्ध का मूल कारण है। विजयसिंह के और राक्षसवंशी एवं बानरवंशी के महायुद्ध हुआ, उस समय किहकंध कन्या को ले गया और छोटे भाई अंधक ने तलवार से विजयसिंह का

सिर काटा, एक विजयसिंह के बिना उसकी सब सेना बिखर गई। जैसे एक आत्मा के बिना इन्द्रियों के समूह बिखर जाते हैं। तब राजा अशनिवेग, विजयसिंह का पिता अपने पुत्र का मरण सुन शोकसे मुर्च्छा को प्राप्त हुआ। बहुत समय के बाद मूर्च्छा दूर हुई, पश्चात् पुत्र के बैर से शत्रु पर भयानक क्रोध किया, उस क्रोध को कोई देख न सका जैसे ग्रीष्म काल में सूर्य को देख नहीं सकते, सब विद्याधरों को साथ लेकर किहकुंपुर नगर को चारों तरफ से घेर लिया। तब दोनो भाई बानरध्वज सुकेश सहित अशनिवेग से युद्ध करने आये। तब दोनों के परस्पर में महायुद्ध हुआ, सभी ने गदाओं से, शक्ति से, बाणो से, पाशों से, सेल से, खड्ग से महायुद्ध किया। पुत्र के वध से उत्पन्न हुई क्रोध रूपी अग्नि की ज्वाला से प्रज्वलित, जो अशनिवेग राजा अधक के समाने आया, तब बडे भाई किहकंध ने सोचा कि मेरा भाई अंधक तो अभी युवक है और यह पापी अशनिवेग महाबलवान है इसलिये मै भाई की मदद करूँ। तब किहकध के सामने विद्युद्वाहन आया, सो दोनों के महायुद्ध हुआ, उसी समय अशनिवेग ने अधक को मारा, सो अंधक भूमिपर गिरा। और किहकध ने विधुद्वाहन के वक्षस्थल पर शिला चलाई, तब वह मूर्छित होकर गिर पडा। पुन· सचेत होकर वही शिला किहकंध पर चलाई सो किहकंध भी मुर्च्छा से घूमने लगा। सो लका के धनी सुकेश ने किहकध को सचेतकर किहकुपुर लेकर आ गये। वह किहकंध ने आख खोलकर देखा तो भाई नहीं दिखा। तब पास वालों से पूछा मेरा भाई कहा है? तब सभी लोग नीचे मुखकर रहे, और राजभवन में अंधक के मरने का विलाप सुनाई दिया। रोने की आवाज सुनकर किहकंध भी रोने लगा, शोकरूप अग्नि से तप्तायमान हुआ है मन इसका, बहुत देर तक भाई के गुणो का चिन्तवन करता हुआ शोकरूप समुद्र में डूबा। हाय भाई! मेरे होते हुये तू मरण को प्राप्त हुआ, मेरे दाहिनी भुजा ही कट गई। मैं एकक्षण भी तुझे नहीं देखता तो महा व्याकुल हो जाता, अब तुम्हारे बिना मेरेप्राण कैसे रहेंगे, मेरा चित्त वज्र का है तेरामरण सुनकर भी मेरामरण नहीं हो रहा है। हे भाई! तेरा बोलना हंसना हंसाना एवं छोटी अवस्था मे महाधीर वीर की चेष्टा अथवा तेरे गुणों को यादकर कर मैं दुखी हो रहा हूँ। इत्यादि महाविलाप कर भाई के स्नेह से किहकध मोहवश शोक करने लगा। तब लंका का राजा सुकेश ने तथा ओर भी बडे बडे पुरुषों ने किहकंध को बहुत समझाया कि धीरपुरुष को यह रंक जैसा शोक योग्य नहीं, यह क्षत्री वीरकुल है, महा साहसरूप है और शोक को पंडितो ने महापिशाच कहा है। कर्मों के उदय से भाई

का वियोग हुआ, यह शोक निरर्थक हैं अगर शोक करने से पुनः वापिस आता हो तो शोक करें। शोक करने से शरीर का नाश होता हैं और पापों का बंध होता है, यह अशनिवेग विद्याधर अति प्रबल बैरी हैं अपना पीछा छोडेंगा नहीं। इसीलिये अब क्या कर्तव्य है वह विचारकर करना चाहिये। बैरी महाबलवान हैं इसीलिये गुप्त स्थान मे रहकर समय व्यतीत करना चाहिये। तो शत्रु से अपमान को नहीं पायेंगे। कुछ दिनो के बाद जब शत्रु का बल कम होगा, तब शत्रु को दबायेगे। विभूति हमेशा एक जैसी नहीं रहती है इसीलिये अपनी पाताल लंका जो गुप्त स्थान है वहा रहेगे। अपने कुल मे बडे पुरुषो ने उसस्थान की बहुत प्रशंसा की है उसको देखने के बाद स्वर्गो मे भी मन नहीं लगता। इसीलिये उठो वह जगह शत्रुओ के लिये अगम्य है, इस प्रकार राजा किहकंध को राजा सुकेशी ने बहुत समझाया तब भी शोक नहीं छोडे, तब रानी श्रीमाला को दिखाई, वह रानी को देखकर राजा शोक रहित हुआ।

तब राजा सुकेशी और किहकध समस्त परिवार सहित पाताल लंका को चले और अशनिवेग का पुत्र विद्युतवाहन उनके पीछे लगा, अपने भाई विजयसिह के बैर से महाकोध से युक्त शत्रुका वशही नाशकरने का विचार किया। तब नीति शास्त्र के ज्ञाताओ ने समझाया कि जो क्षत्री भागे उनके पीछे नहीं लगना चाहिये। और राजा अशनिवेग ने भी विद्युतवाहन से कहा कि अंधक ने तुम्हारे भाई को मारा, तो मैने अधक को रण मे मारा, इसीलिये हे पुत्र! इस हठ को छोडो। दुःखी जीवोपर दयाकरना, जिस कायर ने अपनी पीठ दिखाई वह जिन्दा ही मरे के समान हैं, उसका पीछा क्या करना। इस प्रकार अशनिवेग ने विद्युतवाहन को समझाया, इतने मे राक्षसवंशी और वानरवंशी पाताल लंका पहुच गये। कैसा है नगर? रत्नो के प्रकाश से शोभायमान है, वहा शोक और हर्ष दोनो को धारण कर निर्भय होकर रहते हैं एक समय अशनिवेग आकाश मे बादलों का विलय होते देख विषयो से विरक्त हुये। मन मे सोचा कि यह राज्य सपदा क्षणभगुर है, मनुष्य जन्म अति दुर्लभ हैं, इसलिये मै मुनिव्रत धारणकर आत्म कल्याण करूं, ऐसा विचारकर सहस्रार पुत्र को राज्य देकर आप विधुतवाहन सहित मुनि बने। और लका में पहले अशनिवेग ने निर्धात विद्याधर को छिपाकर रखा था, सो अब सहस्रार की आज्ञाप्रमाण लंका में छुपकर रहता हैं। एक समय निर्धात दिग्विजय के लिये निकला सो संपूर्ण राक्षसद्वीप में राक्षसों का आना जाना नहीं देखा, सब छुपकर रह रहे हैं, अब निर्धात भी निर्भय होकर लका में रहने लगा। एकसमय

राजा किहकंध, रानी श्रीमाला सहित सुमेरुपर्वत के दर्शनकर आ रहा था, मार्ग में दक्षिणसमुद्र के किनारे पर देवकुरुभोगभूमि समान पृथ्वीपर करनतट नाम का वन देखकर प्रसन्न हुये। राजा श्रीमाला रानी से कहा-हे देवी! तुम यह रमणीक वन देखो, जहाँ वृक्ष फूलों से सयुक्त है, निर्मल नदी की धारा वह रही है, पर्वत के शिखर ऊंचे ऊचे हैं, कुन्दपुष्प समान उज्वल जल के झरने बह रहे हैं, यह वन हमको देख हमारा विनय ही कर रहा हैं। और वृक्ष फलों के भार से नमस्कार करते हैं। ऐसे यह वन और पर्वत की शोभा हमको रोक रही है। आगे जाने नहीं दे रही हैं, और मैं भी इस पर्वत को छोडकर आगे नहीं जा सकता, इसीलिये यहां ही नगर बसाऊंगा। यहा भूमि गोचरियो का आना जाना नहीं। पाताल लंका की जगह गहरी हैं वहां मेरा मन खेद खिन्न रहता है अब यहां रहने से मेरा मन प्रसन्न रहेगा। इस प्रकार रानी श्रीमाला से कहकर आप पहाडपर उतरे और पहाडपर स्वर्ग समान नगर बसाया। नगर का किहकधपुर नाम रखा। यहॉपर ही सब परिवार कुटुंब सहित निवास किया। कैसा है राजा किहकध? सम्यग्दर्शन सहित, भगवान की पूजा मे सावधान है, और किहकध राजा की रानी श्रीमाला के सूर्यरज और रक्षरज नाम के दो पुत्र हुये। एव सूर्यकमला पुत्री हुई, उनकी शोभा सुन्दरता देख सब विद्याधर प्रसन्न हुये।

अथानंतर मेघपुर का राजा मेरु, उसकी रानी मधा, पुत्र मृगारिदमन उसने किहकंध राजा की पुत्री सूर्यकमला देखी, वह सूर्यकमला पर ऐसा मोहित हुआ, कि उसे रात दिन चैन नहीं, इसीलिये परिवार के लोगो ने सूर्यकमला के लिये किहकध राजा से याचना की। सो राजा किहकध ने रानी श्रीमाला से विचारकर अपनी पुत्री सूर्यकमला का मृगारिदमन से विवाह कराया। वह विवाह कर जा रहा था तब मार्ग मे कर्णपर्वत पर कर्णकुडल नगर बसाया। लकापुर कहो, या पाताललका उसमें राजा सुकेश, रानी इंद्राणी, उनके तीन पुत्र हुये, माली, सुमाली, माल्यवान, बडे ज्ञानी, गुण ही है आभूषण जिनके, अपनी खेल क्रीडाओ से माता पिता का मन हरते थे। देवो समान है क्रीडा उनकी जब वे तीनो पुत्र युवावस्था को प्राप्त हुये। तब वे महाशक्तिशाली, बलवान, सम्पूर्ण विद्याओ को सिद्ध किया। एक दिन माता-पिता ने इनको कहा कि तुम क्रीडा करने को किहकधपुर की तरफ जाओ, तो दक्षिण के समुद्र की तरफ मत जाना, तब उन्होने नमस्कार कर माता पिता से कारण पूछा, तब पिता ने कहा, हे पुत्रों! यह बात कहने की नहीं है, तब पुत्रों ने हट करते हुये पूछा, पिता ने कहा कि लका

पुरी अपने कुल परम्परा से चली आई है। श्रीअजितनाथस्वामी दूसरे तीर्थंकर के समय से लगाकर अपना इस खण्ड में राज्य है। पहले अशनिवेग के और अपने युद्ध हुआ था सो परस्पर में बहुत लोग मरे और लका अपने हाथ से चली गई। अशनिवेग ने निर्धात विद्याधर को रखा, वह महाबलवान क्रूर है, उसने देश देश मे गुप्तचर रक्खें हैं। और हमारे छिद्र देखते हैं। यह पिता को दुख की बात सुनकर माली महादुखी हुआ, और ऑखो से ऑसू बह चले। क्रोध से भरा है मन उनका, अपनी भुजाओं का बल देखकर पिता से कहा, हे तात्! इतने दिनों तक यह बात हमसे क्यो नहीं कही। तुमने स्नेह के कारण हमको ठगा, जो शक्तिवान होकर भी बिना काम किये निरर्थक बोलते हैं, वे लोक में लघुता को प्राप्त होते है। सो अब हमको निर्धात पर चढाई करने की आज्ञा देओं। हमारे यह प्रतिज्ञा है की लकाको हम लेकर ही रहेगे। तब माता-पिता ने पुत्रों को महाबलवान जानकर इनको प्रेम पूर्वक आज्ञा दी। तब ये सभी पाताल लका से युद्ध के लिये निकले, अति उत्साह से चल रहे हैं। कैसे है तीनों भाई? शस्त्र कला मे महाप्रवीण, समस्त राक्षसो की सेना इनके साथ साथ चली। उन्होने त्रिकूटाचल पर्वत को दूर से देखा। देखकर जाना कि लका इसके नीचे बसी हुई है। सो जाना कि हमने लका ले ही ली। मार्ग मे निर्धात के कुटुबादि दैत्य विद्याधर मिले, माली से युद्धकर बहुत मरे। कोई चरणो में गिरे, कोई स्थान छोड भाग गये, कोई शत्रु के कटक मे आये, पृथ्वीपर इनकी कीर्ति फैली, निर्धात इनका आगमन सुन लंका से बाहर निकला। कैसा है निर्धात? युद्ध कला मे महाशूरवीर। तब दोनों सेनाओ में महायुद्ध हुआ, मायामई हाथी, घोडे, विमान, रथो से परस्पर महा युद्ध हुआ। हथनी के मद झरने से आकाश जलरूप हो गया। परस्पर शस्त्रो के घात से प्रगट हुई अग्नि से मानो आकाश अग्निरूप ही हो गया। इस प्रकार बहुत युद्ध हुआ। तब माली ने विचार किया कि गरीबो को मारने से क्या, निर्धात को ही मारें, यह विचार कर, निर्धात के सामने आये, और कहा कि, कहॉ है वह पापी निर्धात? निर्धात को देख तीक्ष्ण वाणों द्वारा निर्घात को रथ से नीचे गिराया, फिर उसने उठकर महायुद्ध किया, तब माली ने खड्ग से निर्धात को मारा, उसको मरा जान उसके वंश के लोग भागकर विजयार्ध पर्वतपर अपने अपने स्थान को चले गये। कोई कायर मनुष्य माली की शरण में आये। माली आदि तीनों भाइयों ने लका में प्रवेश किया। कैसी है लंका? महामंगलरूप है। माता पिता आदि समस्त परिवार को लंका में बुलाया, पुन· हेमपुर का राजा मेघ विद्याधर, रानी भोगवती

उनकी पुत्री चन्द्रवती से माली ने विवाह किया। कैसी है चन्द्रवती? मन को आनन्द देने वाली है। और प्रीतिकूटनगर का राजा प्रीतिकान्त, रानी प्रीतिमति, उनकी पुत्री प्रीतिसंज्ञका से सुमाली का विवाह हुआ। और कनककांत नगर का राजाकनक, रानीकनकश्री, उनकी पुत्री कनकावली से माल्यवान ने विवाह किया। इनके पहले कई रानियॉ थी उनमे यह प्रथम पटरानी हुई। प्रत्येक के हजार हजार रानियों से भी अधिक रानियॉ हुई। माली ने अपने पराक्रम से विजयार्ध की दोनोंश्रेणीया वश मे की। सभी विद्याधर इनकी आज्ञा आशीर्वाद रूप मानते रहे। कई दिनो के बाद इनके पिता राजासुकेशमाली को राज्य देकर महामुनि बने। राजा किहकध अपने पुत्र सूर्यरज को राज्य देकर वैरागी हुये। ये दोनों परम मित्र राजा सुकेश और किहकध सपूर्ण इन्द्रिय विषयों को त्यागकर, अनेक भवों के पापो का नाश करनेवाला मुनिधर्म उसको प्राप्तकर सिद्धपद को प्राप्त हुये। हे श्रेणिक! इस प्रकार अनेक राजा पहले राज्य अवस्था मे अनेक भोगो को भोगकर पुनः राज्य तजकर आत्म ध्यान के योग से समस्त पापों को भस्म कर अविनाशी धाम को प्राप्त हुये। ऐसा जान कर, हे राजन् मोह को नाशकर शांति भाव को प्राप्त होओ।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे
वानरवशीयो का निरुपणकरनेवाला छठापर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-7

रावण का जन्म और विद्या साधनादि का निर्देश

अथानंतर रथनुपुरनगर में राजा सहस्रार राज्य करते हैं, उनकी रानी मानसुन्दरी, रूप और गुणो में सुन्दर वह गर्भवती हुई। शरीर अत्यन्त कृश हुआ सभी आभूषण ढीले हो गये। तब राजा ने आदर से पूछा, हे प्रिये! तुम्हारा शरीर क्यों कमजोर हो गया, तेरी क्या अभिलाषा है, जो अभिलाषा हो उसको मैं पूर्ण करूँ। हे देवी! तू मेरे प्राणों से भी प्यारी है, इस प्रकार राजा ने कहा, तब रानी बहुत विनयपूर्वक पति से विनती करती हैं, कि-हे देव! जिस दिन से बालक मेरे गर्भ में आया है, उस दिन से मेरी इच्छा है कि इन्द्र जैसी सम्पदा भोगूँ। इतने

दिन लज्जा से मैंने आप से नहीं कहा, क्योंकि स्त्रीयों के लिये लज्जा ही प्रधान हैं। इसीलिये मन की बात कहने में नहीं आती, तब राजा सहस्रार ने महाविद्या के बल से क्षण मात्र में रानी के मनोरथ पूर्ण किये। तब यह रानी महाआनन्द को प्राप्त हुई। सर्व अभिलाषा पूर्णकर अत्यन्त प्रताप एवं कान्ति को प्राप्त हुई। मस्तक के ऊपर सूर्य निकले वह तेज भी सहन नहीं कर सकती। सभी दिशाओं में राजाओ के राजा पर आज्ञा चलाना चाहती है, नवमहीना पूर्ण हुये पुत्र का जन्म हुआ। कैसा है पुत्र? समस्त परिवार को परम सम्पदा का कारण है, राजा सहस्रार ने हर्षित होकर पुत्र के जन्म का महान उत्सव किया, अनेक बाजों की ध्वनि से दिशायें गुंजायमान की, अनेक स्त्रीयाँ नृत्य, गीत करती, राजा ने याचक जनों को इच्छापूर्ण दान दिया, और हाथी गर्जते हुये सूड ऊची कर नृत्य करते रहे। राजा सहस्रार ने पुत्र का नाम इन्द्र रक्खा। जिस दिन इन्द्र का जन्म हुआ, उसदिन सर्व शत्रुओ के घर में अनेक उत्पात हुये। और भाईयों के तथा मित्रों के घर मे महा कल्याण करने वाले शुभ शकुन हुये। इन्द्र की बाल क्रीडा तरुण पुरुषो की शक्ति को जीतने वाली सुकार्य को करने वाली, शत्रुओ का गर्व नाश करती है। इन्द्रकुमार क्रम से युवा अवस्था को प्राप्त हुआ, अपने तेज से सूर्य का तेज और अपनी कांति से चन्द्रमा की कांति, और अपनी स्थिरिता से पर्वत की स्थिरता को जीतता हैं। इन्द्रकुमार का शरीर समचुतस्त्रसंस्थान से युक्त था। विजयार्ध पर्वतपर सब विद्याधर सेवक हुये, इन्द्र जो आज्ञा करते वे सब उसे स्वीकार करते। यह महाविद्याधर बलसे युक्त इसने अपने यहाँ राज्य में इन्द्र जैसी रचना की। अपना महल इन्द्र के महल समान बनाया, अडतालीस हजार विवाह किये, पटरानी का नाम शची रक्खा, छब्बीस हजार नट नृत्य करते, सदा इन्द्र समान आनन्दित रहते, महामनोहर अनेक इन्द्र जैसे हाथी, घोडे एव चन्द्रमा समान उज्वल आकाश मे गमन करने वाला, किसी से रोका न जाय, ऐसा बलवान, अष्टदन्तों से सुशोभित गजराज, जिसकी गोल सूंड, ऐसा जो हाथी, उसका नाम ऐरावत हाथी रक्खा। चारों निकायों के देवों कि स्थापना की एवं चारों लोकपालों को चारों दिशाओं में सोम, वरुण, कुबेर, यम स्थापित किये। और सभा का नाम सुधर्मा, वज्र, आयुध, तीनसभा, और उर्वसी, मेनका, रम्भा इत्यादि हज़ारों नृत्यकारणीयों का अप्सरा नाम रखा। सेनापति का नाम हिरण्यकेशी रखा, आठदिशाओं में प्रकीर्णक रखे और अपने लोगों को एवं सामान्य प्रजा को सामानिक त्रायस्त्रिंशत आदि दशभेद रूप देवों के नाम रखे। गीत गाने वालों का

नाम नारद, तुम्बुरु, विश्वावसु रखा, मत्री का नाम वृहस्पति इत्यादि सर्व सभा इन्द्रसमान स्थापित की, इसलिये यह राजा इन्द्रसमान सभी विद्याधरों का स्वामी पुण्य के उदय से इन्द्र जैसी सम्पदा को प्राप्त हुआ। उस समय लंका में राजा माली राज्य करते थे, महामानी जैसे पहले सब विद्याधरों पर आज्ञा करते थे ऐसे अब भी आज्ञा करते है, इन्द्र से निडर होकर, विजयार्ध पर्वत के सम्पूर्ण घरों में अपनी आज्ञा का आदेश करते। सभी विद्याधर राजाओं के राज्य में महारत्न हाथी धोडे मनोहर कन्या वस्त्राभूषण ये सभी पदार्थ दोनों श्रेणियों में जो श्रेष्ठ वस्तु हैं सो मंगवा लेते है, अपने भाईयों के गर्व से महागर्ववान पृथ्वीपर माली अपने आपको ही बलवान मानता था। अब इन्द्र के बल से विद्याधर लोग माली की आज्ञा भंग करने लगे, यह समाचार माली ने सुना, तब अपने भाई एवं पुत्र सब कुटुंब परिवार राक्षसवंशी और किहकंध के पुत्रादि संपूर्ण वानरवंशी उनको साथ लेकर विजयार्ध पर्वत के विद्याधरो पर गमन किया, कोई विद्याधर अति ऊंचे विमानों पर चढें, कोई सुवर्ण के रथोपर चढे, कोई हाथियों पर चढ़े, कोई मन समान शीघ्र गामी घोडो पर चढे, कोई सिह शार्दूल पर चढे, कोई चीतापर चढे, कोई बैलों पर, कोई ऊंटों पर, कोई खच्चरो पर, कोई भैंसों पर, कोई हंसो पर, कोई स्याल पर, इत्यादि अनेक मायामई वाहनो पर चढे आकाश में गमन करते हुये, महादैदीप्यमान शरीर धारणकर माली के साथ युद्ध के लिये निकले।

प्रथम प्रयाण में ही अपशकुन हुये, तब माली का छोटा भाई सुमाली ने कहां-हे देव! यहाँ ही मुकाम करना चाहिये आगे जाना ठीक नहीं है। अथवा लका में पुनः वापिस चलिये, आज अपशकुन बहुत हुये है। सूखे वृक्षकी डालपर एकपैर को संकोचकर कौवा बैठा है, बार बार पख हिला रहा है। सूखी लकडी चोंच में लेकर सूर्य की और देख रहा है। क्रूर आवाज करता हुआ हमारे युद्ध के लिये मनाकर रहा है। दाहिनी तरफ स्यालिनी धरती खोदती हुई भयानक शब्दकर रही है, मस्तक रहित धड सामने दिख रहे है, महाभयानक वज्रपात हो रहा है, कैसा है वज्रपात? हिला दिये हैं समस्त पर्वत जिसने और आकाश में बिखर रहे है केश जिसके, ऐसी मायामयी स्त्री सामने नजर आ रही है। गधा आकाश की तरफ ऊंचा मुखकर खुर से आगे की धरती को खोदता हुआ कठोर शब्द बोल रहा है। इत्यादिक अनेक अपशकुन हो रहे हैं। तब राजा माली हंसकर सुमाली से कहते हैं। कैसे है राजा माली? अपनी भुजाओं के बल के सामने किसी शत्रुओं को गिनते नहीं। अहो वीर! शत्रुओं को जीतने का मन में विचार किया है, विजयरूपी

हाथीपर चढ़े हुये हैं, ऐसे महापुरुष धीरता को धारण करके वापिस कैसे जायें। जो शूरवीर दांतों को कम्पाय मान करते हुये, भौंहें टेडीकर, मुख का रूप विकराल बनाकर शत्रुओं को आंखों से डराते हैं, कोई आगे बढते हुये, हाथियों पर एवं घोड़ोंपर चढ़े हैं, महाबलवान्, महावीररस से भरे हुये, आश्चर्य की दृष्टि से देवों ने देखे है, वे सामन्त कैसे वापिस जा सकते हैं। और मैंने इस जन्म में अनेकभोग विलास किये हैं, और सुमेरुपर्वत की गुफा एवं मनोहर नन्दन आदि वनों में, देवांगना समान अनेक रानियों सहित अनेक प्रकार की क्रीडायें की, और रत्नमयी ऊंचे ऊंचे शिखरों से युक्त जिनचैत्यालयों में विधि पूर्वक भाव सहित जिनेन्द्रदेव की पूजा की, जिसने जो मागा वोही किम्इच्छित दान दिया, इस मनुष्य लोक मे देवों समान भोग और अपने यश से पृथ्वीपर वंश उत्पन्न किया, इसीलिये इस जन्म में तो हमने सब इच्छाओं को पूर्ण किया है, अब महासंग्राम मे अगर प्राणों को छोडे तो यह शूर वीरों की रीति ही है, परन्तु क्या हम लोग ऐसा तो नहीं करे कि दुनिया कहे कि माली युद्ध से डर कर पुनः स्थान पर चला गया। यह निन्दा के वचन लोगों के, धीरवीर पुरुष कैसे सुने, धीर वीरों का मन क्षत्रियव्रत मे सावधान हैं। भाई को ऐसा कहकर आप वैताड के ऊपर सेना सहित क्षणमात्र में गये। सब विद्याधरों पर आज्ञा पत्र भेजे। कई विद्याधरों ने आज्ञा नहीं मानी, उनके नगर ग्राम उजाड दिये एवं उद्यानो को भी नष्ट भ्रष्टकर दिये। राक्षस जाति के विद्याधर महाक्रोध को प्राप्त हुये। तब प्रजा के लोग माली के कटक से डरकर कॉपते हुये रथनुपुर नगर में राजा सहस्रार के शरण में गये। चरणों में नमस्कार कर दीन वचन कहते है। हे प्रभो! सुकेश का पुत्र माली राक्षसकुली सम्पूर्ण विद्याधरों पर आज्ञा चलाते एवं सब विद्याधरों को दुख देते हैं। आप हमारी रक्षा करो। अब सहस्रार ने आज्ञा दी, कि हे विद्याधरों! मेरा पुत्र इन्द्र हैं उसकी शरण में जाकर सब विनती करो, वह तुम्हारी रक्षा करने में समर्थ हैं, जैसे इन्द्र स्वर्ग लोक में रक्षा करते, ऐसे यह इन्द्र सम्पूर्ण विद्याधरों का रक्षक हैं। तब सभी विद्याधर इन्द्र के पास आये, हाथजोड़ नमस्कार कर सब वृतान्त कहा। तब इन्द्र माली पर क्रोधित होकर गर्वयुक्त सब लोगों के सामने लाल नेत्रकर वज्रायुद्ध की तरफ देखकर कहता हैं-कि मैं लोकपाल लोगों की रक्षा करूँगा, ओर लोगों का कांटा शत्रु रूपी है उसे मारूँगा, यह तो अपने आपही लडने को आया हैं, तो इसके समान और क्या? रण के नगाडे बजायें, सभी विद्याधर युद्ध की अभिलाषा कर इन्द्र के पास आये। बखतर पहने हाथ में अनेक प्रकार के आयुध

लेकर परम हर्षित होते हुये, कोई हाथीपर, कोई घोड़े, ऊंट, सिंह, व्याघ्र, श्याली, मृग, हंस, बकरा, बैल, भेड़ इत्यादि मायामयी अनेक वाहनोंपर बैठकर आयें। कोई विमानों में बैठे, इन्द्र ने जो लोकपाल की स्थापना की हैं वो अपने अपने परिवार सहित अनेक प्रकार के हथियारों से युक्त भोहे एव मुख टेड़े करके आये। पट्टहाथी जो ऐरावत उसपर इन्द्र चढे, बखतर पहने, सिर पर छत्र फिरते रथनुपुर नगर से बाहर निकले। सेना के विद्याधर जो देव कहे जाते हैं, उन देवों के एवं लंका के राक्षसों के महायुद्ध हुआ।

हे श्रणिक! ये देव ओर राक्षस समस्त विद्याधर मनुष्य हैं। नमि, विनमि के वश के हैं। ऐसा भयानक युद्ध हुआ जो कायर मनुष्यो से देखा नहीं जाए। हाथियों से हाथी, घोडो से घोडे, पयादो से पायदे लडे, सेल, मुद्‌गर, सामान्य चक्र, खड़ग, मूसल, गदा, कनक, इत्यादि अनेक शस्त्रो से युद्ध हुआ, सो देवों की सेना ने राक्षसों का बल घटाया, तब बानरवशी राजा, सूर्यरज, रक्षरज, राक्षसवंशियों के परममित्र, राक्षसों की सेना को दबा देख युद्ध को तैयार हुये, इनके युद्ध से इन्द्र की सेना के देव इनका बल पाकर महायुद्ध करते रहे, अस्त्रों से आकाश मे अंधेरा कर दिया, राक्षस और वानर वशियो से देवो का बल कम देख इन्द्र स्वंय युद्धकरने के लिये तैयार हुआ, सभी राक्षसवशी और बानरवंशी इन्द्र पर शस्त्रों की वर्षा करते रहे, वह इन्द्र महायोद्धा विषाद को प्राप्त नहीं हुआ। किसी का बाण अपने को लगने नहीं दिया, सबके बाण बीच मे ही काट दिये, और माली ने इन्द्र के ललाट पर शक्ति लगाई, तो इन्द्र के रक्त बहने लगा। तब माली उछल कर इन्द्र के पास आया, अपने वाणो से इन्द्र ने कपि और राक्षसो को दबाया राजा माली लका के धनी की सेना को इन्द्र के बल से व्याकुल देख इन्द्र से युद्ध करने लगा। इन्द्रके ओर मालीके परस्पर महायुद्ध हुआ। माली के ललाटपर इन्द्र ने बाण छोडा तब मालीने उस वाणकी वेदना को नहीं गिना और इन्द्र के ललाट पर पुनः शक्ति लगाई सो इन्द्र के रक्त बहने लगा। पुनः माली उछलकर इन्द्र के पास आया, तब इन्द्रने महाक्रोध से सूर्य के बिम्बसमान चक्र से मालीका सिर काटदिया। माली भूमिपर गिर पडा, तब सुमाली, माली को मरा जान, इन्द्र को महाबलवान जान परिवार सहित भागकर चला गया। सुमाली को भाई का अत्यन्त दुख हुआ। जब राक्षसवंशी, बानरवंशी भागे, तब इन्द्र इनके पीछे लगा, तब सोमनामके लोकपाल ने इन्द्र से विनतीकर कहा कि हे प्रभो! जब मेरे सरीखा सेवक शत्रु को मारने में समर्थ है तब आप इनके पीछे क्यों जा रहे हैं। मुझे आज्ञा

दो, मैं शत्रु को मारूँगा, उनका वंश नाश करूँगा। तब इन्द्र की आज्ञा प्रमाण लोकपाल इनके पीछे लगा, वाणों के समूह शत्रुओं पर चलाये, तब कपि और राक्षसों की सेना बाणों की मार खाकर व्याकुल हुई। अपनी सेना को व्याकुल देख सुमाली का छोटा भाई माल्यवान पीछे मुडकर पुनः सौम लोकपाल पर आये, और सोम की छाती में भिण्डिपाल नाम का हथियार मारा तब वह मूर्छित हो गया। जब तक वह सावधान हुआ तब तक राक्षसवंशी और बानरवंशी पाताल लंका पहुच गये। उन्हें मानो नया जीवन ही मिला, सिंह के मुख से निकले। सोम ने जब सावधान होकर देखा, तब शत्रुओं से शून्य दिशा देखी। तब अतिप्रसन्न होकर इन्द्र के पास आया। इन्द्र विजय प्राप्तकर ऐरावतहाथीपर चढकर लोकपालों से सहित सिर पर चंवर ढोरते, छत्र फिरते आगे आगे अप्सरायें नृत्य करती बडे उत्साह से महाविभूति सहित रथनुपुर नगर में प्रवेश किया। कैसा है रथनुपुर? रत्नमई वस्त्रो की ध्वजायें, तोरण, फूलों के ढेर, अनेक प्रकार की सुगन्ध से देवलोक समान शोभायमान, सुन्दर नारियॉ खिडकियों में बैठी इन्द्र की शोभा देख रही है। इन्द्र राजमहल मे आये, अति विनय से माता-पिता के चरणों में नमन किया, माता पिता ने मस्तकपर हाथ रख आशीष दी, इन्द्र शत्रुओं को जीत आनन्द को प्राप्त हुआ, प्रजा पालन में तत्पर, इन्द्र के समान भोग भोगे, विजयार्ध पर्वत को स्वर्ग समान जान राजा इन्द्र सर्व लोक में प्रसिद्ध हुआ।

गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है। हे श्रेणिक! अब लोकपाल की उत्पत्ति सुनो। ये लोकपाल स्वर्ग से चयकर विद्याधर हुये। राजा मकरध्वज, रानी अदिति, उनका पुत्र सोमनामका लोकपाल उसको ज्योतिपुरनगर में, पूर्वदिशा का लोकपाल नियुक्त किया, और राजा मेधरथ-रानी वरुणा, उनका पुत्र वरुण उसको मेघपुर नगर में पश्चिमदिशा का लोकपाल नियुक्त किया, उसके पास, पाशनामका आयुध, उसका नाम सुनकर शत्रु भी डरते हैं। राजा किहकंधसूर्य, रानी कनकावली का पुत्र कुबेर विभूतिवान उसको कांचनपुर में उत्तरदिशा का लोकपाल नियुक्त किया। राजा बालग्नि विद्याधर, रानीश्रीप्रभाका पुत्र यम उसको किहकुंपुर में दक्षिणदिशा का लोकपाल नियुक्त किया, असुरनगर के विद्याधरों को असुरदेव की संज्ञा दी। यक्षकीर्ति नगर के विद्याधर का यक्षनाम रखा। किन्नरनगर के किन्नर, गन्धर्वनगर के गंधर्व इत्यादि विद्याधरों की देव संज्ञा रखी। इन्द्र की प्रजा देवों जैसी क्रीड़ा करती। यह राजा इन्द्र मनुष्य होकर, लक्ष्मी को प्राप्तकर, अपने आपको इन्द्र ही मानता है। कोई स्वर्ग है देव है इन्द्र

है यह सब बात भूल गया। विजयार्धगिरी को स्वर्ग जानता हैं, विद्याधरों को लोकपाल ही जानता हैं इस प्रकार गर्वको प्राप्त हुआ, मेरे से अधिक इस पृथ्वीपर अन्यकोई नहीं है। मैं ही सबकी रक्षा करता हूँ मै दोनो श्रेणीयों का अधिपति हूँ, मैं ही इन्द्र हूँ।

अथानंतर कौतुकमंगल नगर का राजा व्योमबिंदु पृथ्वीपर प्रसिद्ध उनकी रानी मंदवती उनके दो पुत्रियॉ थी, बडी कौशिकी और छोटी केकसी,। कोशिकी का विवाह राजा विश्रव से कराया। जो यज्ञपुर नगर का स्वामी, उसका पुत्र वैश्रवण शुभ लक्षण का धारक उसको इन्द्र ने बुला कर सम्मान किया और कहा मेरे पहले चार लोकपाल है ऐसे तुम पॉचवा। तब वैश्रवण ने विनती की, हे प्रभो! जो आप आज्ञा करोगें, वो ही मै करूँगा। ऐसा कह इन्द्रको प्रणाम कर लंकाको चला। इन्द्रकी आज्ञा प्रमाण लका में रह रहा थ"। राक्षसों का वहॉ कोई उसको डर नहीं था। उसकी आज्ञा विद्याधर अपने सिरपर धारण करते थे।

पाताल लका में सुमाली के रत्नश्रवा नाम का पुत्र हुआ। महाशूर वीर, दातार, जगत का प्यारा, उदार चित्त, मित्र के एव सेवकों के उपकार के निमित्त है प्रभुता, पडितो के उपकार निमित्त है प्रवीणता, भाईयो के उपकार निमित्त है लक्ष्मी, दरिद्रो के उपकार निमित्त है ऐश्वर्य, साधुओ की सेवा निमित्त है शरीर, जीवन के कल्याणनिमित्त वचन, सुक्रिया के स्मरण निमित्त हैं मन, धर्मके कारण आयु, पितासमान सबजीवोंका दयालु, पर स्त्री मातासमान, परद्रव्य तृणसमान, महागुणवान, शरीर अद्‌भुत परमाणुओ से रचा, जैसी प्रभा इनमें है वैसी अन्य पुरुषो में नहीं, वचनो से मानो अमृत ही झरते है, दाताओ में महादानी। धर्म, अर्थ, काम मे बुद्धिमान, निरन्तर धर्म का ही कार्य करते, पूर्वजन्म से धर्म को साथ लेकर आये हैं, उनका बडा आभूषण यश ही है, गुण कुटुंब है, सो धीरवीर शत्रुओं का भय छोड विद्यासाधन के लिये पुष्पनाम के वन मे गये। कैसा है वन? भूत, पिशाचादि शब्दो से महाभयानक, ये तो वहॉ विद्या साधे और राजा व्योमबिन्दु ने अपनी पुत्री केकसी को इसकी सेवा करनेके लिये इनके पास भेजी, केकसी सेवा करती हुई हाथ जोडकर आज्ञा की अभिलाषा से तत्पर रहती कुछ दिनों में रत्नश्रवा का नियम समाप्त हुआ, और सिद्धों को नमस्कार कर मौन छोड़ा। केकसी को अकेली देखी। कैकसी कैसी है? नीलकमल समान नेत्र, लालकमलसमान मुख, कुन्द के पुष्पसमान दात, चम्पे की कलीसमान है रंग, अद्‌भुतरूप रंग को धारण करने वाली, मानो संसार की अद्‌भुत लक्ष्मी रत्नश्रवा

के वश में हुई। कमलों के निवास को छोड सेवा करने आई। चरणो को देखती हुई लज्जा से अपनी शोभा को निखारती हुई, समस्त सुन्दरता से सबका मन हरती है, संपूर्ण स्त्रीयों का रूप एकत्रकर बनाया गया है। जैसे साक्षात् विद्या ही है। ऐसे शरीर को धारण कर रत्नश्रवा के तप से वशीभूत होकर महाकांति को लेकर आई है। तब रत्नश्रवा केकसी को पूछते हैं। तुम किसकी पुत्री हो? और अकेली वन में क्यों रहती हो, तुम्हारा नाम क्या है? तब यह मधुर वाणी से कहती है हे देव! राजा व्योमबिंदु, रानी मन्दवती की मैं केकसी नामकी पुत्री, आपकी सेवा करने के लिये मेरे पिता ने यहाँ भेजा है। उसी समय रत्नश्रवा को मनस्तंभिनी विद्या सिद्ध हुई, विद्या के प्रभाव से, उसी वन में पुष्पांतक नाम का नगर बसाया। एवं केकसी से विधिपूर्वक विवाह किया। उसी नगर में रहकर मन वांछित भोग भोगे। प्रिया प्रीतम मे अद्‌भुत प्रीति हुई। एक क्षण भी आपस मे वियोग सहन नहीं कर सकते थे। दोनों अत्यन्त रूपवान, नवयोवन, इनके धर्म के प्रभाव से किसी भी वस्तु की कमी नहीं, यह रानी पतिव्रता, पति की छाया समान अनुगामिनी हुई।

एक समय यह रानी रत्नो के महल मे सुन्दर सेज पर सोई हुई थी। कैसी है सेज? महाकोमल क्षीर समुद्र की तरंग समान श्वेत है वस्त्र अनेक सुगंधित रत्नो का प्रकाश हो रहा है, रानी के शरीर की सुगंध से भ्रमर गुंजार करते हैं अपने मनको मोहित करने वाली अपने पति के गुणों का स्मरण करती हुई, पुत्र उत्पत्ति की इच्छा से सोई हुई थी, तब रात्रि के पिछले पहर में महाआश्चर्य को करनेवाले शुभस्वप्न देखें। प्रातः काल अनेक बाजे बजे, शखो का शब्द हुआ, मागधजन प्रातःकाल की बेला मे मंगल गीत गाते हैं, तब रानी सेजसे उठकर प्रातःकाल की क्रिया से निवृत होकर मंगलरूप आभूषणपहन, सखियों सहित राजा के समीप आई। राजा रानी को देख उठे और बहुत आदर किया। दोनो एक सिंहासन पर विराजे, रानी ने हाथ जोडकर विनती की। हे नाथ! आज रात्रि के चतुर्थ पहर में तीन शुभ स्वप्न मैने देखे। एक महाबली सिंह गरजता हुआ, अनेक गजेन्द्रों के कुम्भ स्थल विदारता हुआ, परम तेजस्वी आकाश से पृथ्वीपर आकर मेरे मुख में होकर उदर में आया। दूसरा सूर्य अपनी किरणों से अन्धकार नाश करता हुआ मेरे गोद में आया। चन्द्रमा पुष्पों को प्रफुल्ति करता हुआ एवं तिमिर को हरता हुआ मैंने अपने सामने देखा। यह अद्‌भुत स्वप्न मैंने देखे, इनका फल क्या है? आप सब जानने योग्य हो, मुझे पति आज्ञा ही प्रमाण है। यह

बात सुन, राजाने स्वप्न का फल बताया। राजा अष्टांग निमित्त के जानने वाले, जिनमार्ग में प्रवीण वे कहने लगे। हे प्रिये! तेरे तीन पुत्र होगे उनकी कीर्ति तीन लोक में फैलेगी, बडे पराक्रमी, कुलकी वृद्धि करनेवाले, पूर्वोपार्जित पुण्य से महासम्पदा के भोगनेवाले, देवों समान अपनी काति से जीती है चन्द्रमा व सूर्य की दीप्ति, गम्भीरता मे समुद्र, स्थिरता मे पर्वत को जीता है। स्वर्ग के सुखों को भोग मनुष्य में जन्म लेगा, महाबलवान जिनको देव भी नहीं जीत सकते, मन वाछित दान देनेवाले, कल्पवृक्ष एव चक्रवर्ती समान ऋद्धि के धारी अपने रूप से स्त्रीयो के मन को हरनेवाले, अनेक शुभ लक्षणो से युक्त नाम मात्र से ही महाबलवान बैरी भी डरकर भाग जायेगें, उनमें प्रथम पुत्र आठवॉ प्रतिवासुदेव होगा। महासाहसी शूरवीर, शत्रुओ को पराजित करने में चन्द्रमा समान, तीनों भाई महायोद्धा होंगे। युद्ध का नाम सुनकर ही हर्ष से रोमाचित्त होंगे। इनमें बडा भाई कुछ क्रूर स्वभावी होगा। जिस वस्तु की हठ पकडेगा उसे छोडेगा नहीं। उसे इन्द्र भी समझाने में समर्थ नहीं। ऐसा पति का वचन सुनकर रानी परमहर्ष को प्राप्त हुई विनय पूर्वक कहा। हे नाथ! हम दोनो जिनमार्गरूप अमृत के स्वादि, कोमल परिणामी अपने पुत्र क्रूर स्वभावी कैसे होगे? अपने पुत्र तो जिनवचन मे तत्पर कोमल परिणामी होने चाहिये। अमृत की बेलपर विषपुष्प कैसे लगें? तब राजा ने कहा। हे प्रिये! तू हमारे वचन सुन, यह प्राणी अपने अपने कर्म के अनुसार शरीर धारण करते हैं, इसलिये कर्म ही मूल कारण है, हम नहीं। हमतो निमित्त मात्र हैं। तेरा बडा पुत्र जिनधर्मी तो होगा परन्तु कुछ क्रूरपरिणामी होगा, उसके दोनों छोटे भाई महाधीर जिनमार्ग मे प्रवीण, गुणों से पूर्ण उत्तम चेष्टा के धारी, शील के सागर होंगे। संसार भ्रमण का भय, धर्म में अति दृढ महादयावान सत्यवचन के अनुरागी होगे, उन दोनों का समान ही कर्मोदय है, हे मधुर भाषी! दयावती! प्राणी जैसा कर्म करते हैं वैसा ही शरीर प्राप्त करते है। ऐसा कहकर राजा रानी दोनो जिनेन्द्र की महापूजा में लीन हुये। कैसे हैं वे राजा रानी? रात दिन नियम धर्म में विशेष सावधान।

अथानंतर प्रथम ही गर्भ में रावण आये, तब माता की चेष्टा कुछ क्रूर हुई। यह इच्छा हुई की शत्रुओ के सिरपर पैर रक्खू, राजा एवं इन्द्र पर आज्ञा चलाऊँ, बिना कारण भोंहे टेडी करना, कटु शब्द बोलना, शरीर मे खेद नहीं, दर्पण सामने है, तो भी खड्ग में मुख देखना, सखियों पर क्रोधित होना, किसी की शंका, डर नहीं रखना, ऐसी अनोखी चेष्टायें करती रही, नवमे महिने मे रावण का जन्म

हुआ, जिस समय रावण का जन्म हुआ, उस समय, शत्रुओं के आसन कम्पायमान हुये। सूर्य समान है ज्योति जिसकी ऐसी बालक को देखकर, परिवार के लोगों के नेत्र चकित हो गये, देव दुदुभि बाजे बजने लगे, शत्रुओं के घरों में अनेक उत्पात होने लगे, माता पिता ने पुत्र के जन्मका अतिहर्ष मनाया, प्रजा के सब भय मिटे, पृथ्वीका पालक पुत्र उत्पन्न हुआ, सेज पर सीधे सोये हुये, अपनी लीला देवों समान करते, राजा रत्नश्रवा ने बहुत दान दिया, आगे इनके बड़े राजा मेघवाहन हुये थे, उनको राक्षसों के इन्द्रभीम ने हार दिया था, उसकी हजार नागकुमारदेव रक्षा करें। ऐसा वह हार पास ही रखा था, सो प्रथम दिन के जन्में हुये बालक ने हार को खींच लिया, बालक की मुट्ठी मे हार देख माता आश्चर्य को प्राप्त हुई, तब महास्नेह से बालक को हृदय से लगा लिया, और मुख चूमा। तब पिता ने हार सहित बालक को देख, मन में विचार किया कि यह कोई महापुरुष है। हजार नागकुमार हार की रक्षा करते, ऐसे हार से जन्म होते ही बालक क्रीडा करता है, यह बालक कोई सामान्य पुरुष नहीं। इनकी शक्ति ऐसी होंगी जो सर्व मनुष्यो को जीते। पहले चारणऋद्धिधारी मुनिने कहा था कि तुम्हारे पदवीधारी शलाकापुरुष पुत्र उत्पन्न होगा, सो यह प्रतिवासुदेव शलाका पुरुष प्रगट हुये। हार के योगसे पिताको दशमुख दिखाई दिये, तब पिता ने बालक का नाम दशानन रखा। पुन. कुछ काल के बाद कुंभकरण पुत्र का जन्म हुआ, सूर्य समान तेज का धारी, फिर कुछसमय बाद पूर्णिमा के चंद्रमा समान मुखवाली चन्द्रनखा पुत्री हुई। तत्पश्चात् विभीषण का जन्म हुआ, विभीषण महासौम्य, धर्मात्मा, पापकर्म से रहित, मानों साक्षात् धर्म का ही अवतार हुआ हो, उनके गुणो की कीर्ति संसार मे प्रशंसा योग्य है, ऐसे दशानन की बाल क्रीडा भी दुष्टों को भयरूप होती थी। और दोनो भाईयो की बालक्रीडा आनन्दरूप होती, कुंभकरण और विभीषण के बीच मे चद्रनखा चंद्रमां समान शोभित होती थी, रावण बाल अवस्था से कुमार अवस्था में आया, एक दिन रावण अपनी माता की गोद में बैठा था, उसके शरीर की ज्योति से दशों दिशायें प्रकाशमय हो रही थी, सिरपर चूडामणि रत्न धारण किया था। उस समय वैश्रवण आकाश मार्ग से जा रहा था, वह रावण के ऊपर होकर निकला, अपनी ज्योति से प्रकाश करता हुआ, विद्याधरों के समूह से युक्त महाबलवान विभूति का स्वामी, महाशब्द करते दशों दिशायें शब्दों से गुंजायमान हो रही थी, आकाश सेना से व्याप्त हो गया। तब रावण ने ऊपर की ओर इतना बडा आडंबर देखकर माता से पूछा कि यह कौन हैं? और अपने मान

से जगत को तृण समान देखता महासेना सहित कहां जा रहा हैं? तब माता ने कहां, यह तेरी मौसी का बेटा है, सभी विधाये इसको सिद्ध हैं, महालक्ष्मीवान्, शत्रु को डराता हुआ पृथ्वीपर गमन करता है, महातेजवान मानों दूसरा सूर्य ही है। राजा इन्द्र का यह लोकपाल हैं। इन्द्रने तुम्हारे दादा (बाबा) का भाई माली को युद्ध मे मारा और तुम्हारे कुल से चली आई लंकापुरी वहां से तुम्हारे दादा को निकालकर इसको रक्खा है सो यह लका के स्थान में रहता है। इस लंकाके लिये तुम्हारा पिता निरन्तर चिन्ता करते हैं। रात दिन चैन नहीं है और मैं भी इसी चिंता में सूख गई हूँ। हे पुत्र! स्थान भ्रष्ट होने से तो मरण ही अच्छा हैं! ऐसा दिन कब होगा जो तुम अपने कुलकी भूमि को प्राप्त करोगें। तेरी लक्ष्मी हम देखेंगे, तेरी विभूति देखकर तेरे पिता का और मेरा मन आनंद को प्राप्त हो, ऐसा दिन कब होगा? जो तुम तीनो भाईयो को विभूति सहित पृथ्वीपर प्रताप युक्त हम देखेंगे। तुम्हारे शत्रु नहीं रहेगे, यह माता के दीन वचन सुनकर आखों में आसू देख विभीषण बोले। कैसे है विभीषण? क्रोधरूपी विषय का अंकुर प्रगट हुआ है। हे माता! कहाँ यह रक वैश्रवण विद्याधर, जो, देव भी हो तो भी हमारी दृष्टि मे नहीं आते। तुमने इसके प्रभाव का वर्णन किया। सो कहाँ? आप योद्धाओ की माता, महाधीर, जिनमार्ग मे प्रवीण, यह ससार की क्षणभंगुर माया तो शाश्वत नहीं, ऐसे दीनता के वचन, कायर स्त्रीयो के समान क्यों कह रही हो। क्या आपको रावण के बलकी महिमा का ज्ञान नहीं? श्रीवक्षस्थलकर मंडित, अद्‌भुत पराक्रम का धारक, महाबली, अपार चेष्टाओ से युक्त, सम्पूर्ण शत्रु वर्गो को भस्म करने में समर्थ, आपके मन मे अब तक ऐसा विचार क्यो नहीं आया, यह रावण अपनी चालसे चित्तको जीते, हाथकी चपेट से पर्वतो को चूर डाले, इसकी दोनो भुजा, त्रिभुवन के स्तंभ हैं, क्षत्रियों के वश का अकुर है, सो क्या तुमने नहीं जाना? इस प्रकार विभीषण ने रावण के गुण वर्णन किये, तब रावण ने माता से कहा। हे माता! गर्व के वचन कहने योग्य नहीं है, परन्तु आपके सन्देह को निवारण करने के लिये मै सत्य कहता हूँ, सो सुनो! ये सब विद्याधर दोनोंश्रेणी के इकट्ठे होकर मेरे से युद्ध करेंगे तो भी मैं सबको एकसाथ एकभुजा से जीतूँगा।

रावण का दोनो भाईयो सहित, भीमवन मे विद्यासाधन करना

तथापि—हमारे विद्याधरो के कुल में विद्या का साधन करना उचित है, वह करते हुये कोई लज्जा नहीं, जैसे मुनिराज तप आराधना करे, ऐसे विद्याधर विद्याओं की आराधना करते, इसलिये हमको भी करना योग्य है। ऐसा कहकर

दोनों भाईयों सहित माता पिता को नमस्कार कर, नवकार मंत्र का उच्चारणकर विद्या साधने को चले, माता पिता ने मस्तक चूमा, और आशीष दी, पाया है मगल संस्कार जिन्होने, मनको स्थिरकर घरसे निकल हर्षित होते हुये भीमनामके महावनमे प्रवेश किया। कैसाहैवन? जहॉ सिहादि क्रूर विकराल जीव बोल रहे हैं, व्यन्तरों के समूह पृथ्वीपर विचरण करते, गुफाओं मे अन्धकार का समूह फैल रहा है, मनुष्यों की तो कहॉ बात, वहॉ देव भी गमन नहीं कर सकते, मनुष्य का आवागमन नहीं। वहांपर ये तीनों भाई श्वेत धोती दुपट्टा पहने शांत भाव को धारणकर, सभी इच्छाओ से निवृतहोकर विद्यासिद्ध करने के लिये तपस्या करने लगे। कैसे है तीनों भाई? निशक है मन जिनका, पूर्ण चन्द्रमा समान मुख जिनका, विद्याधरो के शिरोमणी तीनों अलग अलग स्थानपर बैठे। डेढदिन मे अष्टाक्षर मत्र के लाख जाप किये, सो सर्वकार्यसिद्ध नाम की विद्या तीनों भाईयो को सिद्ध हुई, वह विद्या मनोवाछित भोजन इनको पहुँचाती, इसलिये क्षुधा की इच्छा इनको नहीं रही, पुन. ये तीनो भाई स्थिरमन होकर सहस्त्रकोटी षोडश अक्षर मत्रों का जाप किया। उस समय जम्बूद्वीप का अधिपति अनावृत्ति नाम का यक्ष स्त्रीयो सहित क्रीडा करता हुआ वहॉ आया। उसकी देवांगनायें इन तीनों भाईयो को महारूपवान, नवयोवन, तप मे लीन, उनके मन की स्थिरता देख कौतुक से इनके पास आई, और आपस मे बोली—अहो! ये राज कुमार कमल समान मुख, भ्रमर समान काले काले केश, अति कोमल शरीर, कांति ये युक्त, वस्त्राभूषण रहित, क्यों तपकर रहे है? कहॉ यह यौवन अवस्था, कहॉ यह भयानक वन मे तप करना। फिर इनको तप से डिगाने के लिये कहती है। अहो! अल्पबुद्धि, तुम्हारा सुन्दरशरीर रूपवान भोग का साधन है, योग का साधन नहीं। इसलिये उठो घर चलो, तप किसके लिये कर रहे हो, अब भी कुछ नहीं गया, इत्यादि अनेक वचन कहे। परन्तु इनका मन चलायमान नहीं हुआ। जैसे जल की बिन्दु कमल के पत्तो पर नहीं ठहरती। तब वे आपस में कहती हैं-हे सखी! ये काष्ठमयी हैं, सर्व शरीर निश्चल दिख रहा है, ऐसा कह क्रोधायमान होकर समीप आई, इनके मन को डिगाने के लिये अनेक प्रयत्न किये, पर वे अपनी प्रतिज्ञा से नहीं डिगे। तब यक्षदेव ने हसकर कहा। भो सतपुरुषो! क्यों दुर्धरतप कररहे हो? कौनसे देवकी आराधना करते हो? ऐसे कहा, तो भी वे नहीं बोले चित्र जैसे हो रहे, तब अनावृत देवने क्रोध किया कि जम्बूद्वीप का देव तो मैं हूँ, मुझको छोडकर किसको बुला रहे हो, इन पर उपद्रव करने के लिए किंकरों को आज्ञा

दी, किंकरों ने अनेक उपसर्ग किये, कोई पर्वतों को उठाकर लाते, कोई अति भयकर शब्द करता है, कोई सर्प बनकर शरीर से लिपट गये, कोई शेर बनकर मुख फाडकर सामने आये, कोई मायामई मच्छर बनके शरीर से चिपक गये, कोई हाथी बने, किसी ने भयकर पवन चलायी, किसी ने दावानल अग्नि जलाई, ऐसे अनेक उपद्रव किये, तो भी तीनो भाई ध्यान से नहीं डिगे, तब देवों ने मायामई भीलों की सेना बनाई। अन्धकार समान विकराल शस्त्रों को दिखाया, महायुद्ध में रत्नश्रवा को कुटुब सहित बधा हुआ दिखाया, और माता केकसी विलाप कर कहती हैं, हे पुत्रो! इन चांडाल भीलो ने तुम्हारे पिता को मारा हैं, पावों मे बेडी डाली है सिर के केश खींचते है, हे पुत्रो। तुम्हारे आगे मुझे ये भील खींचकर ले जा रहे है, तुमतो कहतेथे, सम्पूर्ण विद्याधर इकट्ठे होकर मेरे से युद्ध करेंगे, तो भी मैं एकहाथसे सबको जीतूगा, सो ये वचन तुम्हारे मिथ्या है, तुम्हारे आगे मलेच्छ चाडाल मुझे केश पकड खेच कर ले जा रहे है, तुम तीनों भाई इनसे युद्ध करने में समर्थ नहीं हो, मंद पराक्रमी हो। हे दशग्रीव! तेरी स्तुति विभीषण वृथा ही करता था, तू तो एक ग्रीवा भी नहीं रहा, जो माता की रक्षा भी नहीं कर सकता, और कुम्भकरण हमारी पुकार कानो से नहीं सुनता, ओर ये विभीषण वृथा कहलाता है, जो एकभील से भी लडने मे समर्थ नहीं, ये म्लेच्छ तुम्हारी बहिन चन्द्रनखा को ले जा रहे है, सो तुमको लज्जा नहीं, तुम्हारी विद्या की साधना, किस काम की, जो माता पिता की रक्षा नहीं कर सकते, इत्यादि मायामयी देवो ने, अनेक उपद्रव किये, तो भी ये ध्यान से नहीं डिगे, तब देवो ने एक भयानक माया दिखाई कि रावण के पास रत्नश्रवा का एवं भाईयों के सिर कटे हुये दिखाये। और भाईयों के निकट रावण का सिर कटा दिखाया। रावण तो सुमेरुपर्वत समान अतिदृढ रहे, जो ऐसाध्यान महामुनि करते तो अष्टकर्मों का नाश करते, परन्तु कुम्भकर्ण एव विभीषण को कुछ व्याकुलता हुई। सो रावण को तो अनेक सहस्रविद्यायें सिद्ध हुई, जितने मत्र जपने के नियम किये थे उनको पूर्ण होने के पहले ही सभी विद्यायें सिद्ध हुई। धर्म के निश्चय से क्या नहीं होता, ऐसा दृढ निश्चय भी पूर्वोपार्जित कर्म के उदय से होता है, कर्म ही संसार का मूल कारण है, कर्म के अनुसार सुख दुख भोगते है। उत्तम पात्रो को विधिपूर्वक दानदेना, अन्तसमय में समाधिमरण करना, सम्यग्दर्शन ज्ञान की प्राप्ति किसी उत्तम जीव को ही होती है, दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति पुण्यवानो को ही होती है। किसी को दश वर्ष में विद्या सिद्ध हो, किसी को क्षणमात्र मे, ये सब कर्मों का

प्रभाव है। रात दिन पृथ्वीपर भ्रमण करते अथवा जल मे प्रवेश करते, तथा पर्वत के मस्तक पर चढते एवं शरीर से अनेक कष्ट करते तो भी पुण्य के उदय बिना कार्य की सिद्धि नहीं होती। पुरुषो को सदा पुण्य ही करना योग्य है पुण्यबिना कुछभी प्राप्त नहीं होता। हे श्रेणिक! पुण्य का प्रभाव देखो, थोडे ही दिनों मे मंत्र पूर्ण होने के पहले ही रावण को अनेको विद्यायें सिद्ध हुई, जो विद्यायें सिद्ध हुई, उनके नाम सुनो।

नभसचारणी, कामदायिनी, कामगमिनी, दुर्निवारा, जगतकंपा, प्रगुप्ति, भानुमालिनी, अणिमा, लघिमा, क्षोम्या, मनस्तंभवन कारिणी, सवाहिनी, सुरध्वसी, कौमारी, वध्यकारिणी, सुविधाना, तमोरुपा, दहना, विपुललोदरी, शुभप्रदा, रजोरुपा, दिनरात्रिविधायनी, वज्रोदरी, समाकृष्टि, अदर्शिनि, अजरा, अमरा, अनवस्तभिनी, तोयरस्तभिनी, गिरीदारिणी, अवलोकिनी, ध्वशीधीरा, धोरा, भुजगिनी, वीरनी, एक भुवना, अवध्या, दारुण, मदनासिनी, भास्करी, भयसभूति, ऐशानी, विजया, जया, बधनी, मोचनी, बाराही, कुटिलाकृति, चितोद्नवकारी, शांति, कौवरी, वशकारिणी, योकेश्वरी बलोत्साही, चडा, भीतिप्रवर्षिणी इत्यादि अनेक महाविद्या रावण को थोडे ही दिनों मे सिद्ध हुई और कुंभकरण को पाच विद्याये सिद्ध हुई, उनके नाम-सर्वहारिणी, अतिसवाधिनी, जभिनी, व्योमगामिनी, निंद्राणी तथा विभीषण को चार विद्याये सिद्ध हुई, उनके नाम सिद्धार्था, शत्रुदमनी, व्याधाता, आकाशगामिनी वह तीनो ही भाई महा विद्या के ईश्वर हुए। देवो के उपसर्गो से मानो नया जीवन मिला। तब यक्षो का पति अनावृत जबूद्वीप का स्वामी इनको विद्यायुक्त देखकर बहुत स्तुति की और दिव्याभूषण पहनाये। रावण ने विद्या के प्रभाव से स्वयंप्रभ नगर बसाया। वह नगर पर्वत के शिखर समान ऊंचे महलों की पंक्ति से शोभायमान है और रत्नमई चैत्यालयो से अतिप्रभाव को प्राप्त हुये है मोतियो के तोरण, पद्मराग मणियो के स्तभ हैं। रावण भाईयों सहित उस नगर मे पधारे। कैसे हैं राजमहल? आकाश में लगते हुये हैं शिखर, जिनके विद्याबल सहित रावण सुख से वहा रहते है, जबूद्वीप का अधिपति अनावृत देव रावण से कहता हैं—हे महामते। तेरी स्थिरता से मै बहुत प्रसन्न हुआ और मैं जबूद्वीप का अधिपति हूँ, तुम शत्रुओं को जीतते हुये सभी जगह विहार करों। हे पुत्र! मैं बहुत प्रसन्न हुआ, स्मरण मात्र से तेरे पास आऊंगा। तब तुझे कोई भी जीत नहीं सकेगा, और बहुत काल भाईयों सहित सुख से राज्य करों। तुम्हारे विभूति बहुत होवें, इस प्रकार आशीर्वाद देकर बारंबार स्तुति कर यक्षदेव परिवार सहित अपने स्थान को गया।

समस्त राक्षसवंशी विद्याधरो ने सुना कि जो रत्नश्रवा का पुत्र रावण सहस्रो विद्याओं से युक्त हुआ तब सबको महाआनंद हुआ, सब ही राक्षस बड़े उत्साह सहित रावण के पास आये। कोई नृत्य गीत करते, आनंद से भर गये सो फूला नहीं समा रहे हैं कोई, हसते हैं सुमाली रावण का दादा, छोटा भाई माल्यवान तथा सूर्यरज, रक्षरज, वानरवशी सबही आनन्द सहित रावण के पास आये। रत्नश्रवा रावण के पिता, पुत्र स्नेह से भर गया है मन जिनका, ध्वजाओं से आकाश को सुशोभित करते हुये, परमविभूति सहित रथपर चढ़के आये। सब इकट्ठे होकर पचसगम नामके पर्वतपर आकर बैठे। रावण सन्मुख गया, दादा (बाबा) पिता एव सूर्यरज, रक्षरज इन सबको प्रणाम किया और भाईयों को प्रेमपूर्वक मिला, सेवक लोगो को स्नेह की दृष्टि से देखा।

अपने बाबा पितादि परिवार का विनयकर कुशल क्षेम पूछा, उन्होने रावण से पूछा। रावण को देखकर गुरुजन ऐसे खुशी हुये जो कहने मे नहीं आवे, बारम्बार रावण से सुख की कथा पूछते है। और स्वयप्रभनगर को देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुये, देवलोक समान यह नगर उसे देखकर राक्षसवशी एव वानरवंशी सभी प्रसन्न हुये, और पिता रत्नश्रवा माता केकसी पुत्रके मुखको देखकर और इसे बारम्बार प्रणाम करता हुआ देखकर अतिआनन्द को प्राप्त हुये। दोपहर के समय रावण ने बडे पुरुषो को स्नान कराने का आयोजन किया, तब सुमाली आदि रत्नो के सिहासन पर स्नान के लिये विराजमान हुये, सिहासन पर इनके चरण लाल पल्लव समान सुन्दर लगे। पुन स्वर्ण व रत्नो के कलशों को स्नान कराने, के लिये लाये। कमल के पत्तो से ढके हुये है कलश के मुख, मोतियो की माला से सुशोभित, महाकाति से युक्त, सुगन्ध जल से भरे, उनकी सुगन्ध से दशों दिशाये सुगन्धमय हो रही है, स्नान कराते समय जब कलशो से जल डालते है, तब मेघ समान ध्वनी होती है, पहले सुगन्ध द्रव्य लगाये पीछे स्नान कराया, स्नान के समय अनेक प्रकार के बाजे बजे, स्नान के बाद दिव्य वस्त्राभूषण पहनाये, और रानियो ने अनेक मगलाचरण किये। रावण आदि तीनो भाई देवकुमार समान बडे पुरुषों का अतिविनय कर चरणो की वन्दना की। तब बडों ने बहुत आशीर्वाद दिया। हे पुत्रों! तुम बहुतकाल जीवो, और महासम्पदा भोगों, तुम्हारे जैसी विद्या अन्य मे नहीं है, सुमाली, माल्यवान, सूर्यरज, रक्षरज और रत्नश्रवा, इन्होने स्नेह से रावण, कुम्भकरण, विभीषण को छाती से लगाया और बहुत प्रेम दर्शाया। सभी भाई एव समस्त सेवक लोगों ने उत्साह सहित

भोजन किया। रावण ने बड़े पुरुषों की बहुत सेवा की, और सेवक लोगों का बहुत सन्मान किया। सबको वस्त्राभूषण दिये। सुमाली आदि सभी गुरुजन फूल गये है नेत्र व मन जिनके, रावण से प्रसन्न होकर कहते हैं, हे पुत्रों! तुम सुखसे रहो। तब उन्होंने नमस्कारकर कहा। हे प्रभो! हम आपके प्रसाद से कुशलरूप हैं। पुन मालीकी बातचली, तब सुमाली को शोक से मूर्च्छा आई, और गिर गये। तब रावण ने शीतोपचार से मूर्च्छा को दूर किया, ओर कहा कि मै समस्त शत्रुओ के समूह को मारूँगा। ऐसे वचनो से दादा को प्रसन्न किया, सो सुमाली रावण को देखकर अतिआनन्द को प्राप्त हुये। अहो पुत्र! तेरा महापराक्रम को देख देवता भी प्रसन्न होते है। तेरी काति सूर्य को जीतनेवाली, तेरी गम्भीरता समुद्र से अधिक है, हमारे राक्षस कुल का तू तिलक प्रकट हुआ। जैसे जम्बूद्वीप का आभूषण सुमेरु है, महाआश्चर्य को करनेवाली तेरीचेष्टा सब मित्रो को आनंद उत्पन्न कराती हैं, पहले अपने वशमे राजा मेघवाहनादि बडे बडे राजा हुये, वह लकापुरी का राज्यकर पुत्रो को राज्य देकर मुनि बनकर मोक्ष गये। अब हमारे पुण्य के योग्य से तुम्हारा जन्म हुआ। सर्व राक्षसो के कष्ट को दूर करनेवाला शत्रुओं को जीतनेवाला तुम महासाहसी हम एकमुख से तुम्हारी प्रशंसा कहां तक करें। तुम्हारे गुण देव भी कहने मे समर्थ नहीं हो सकते, ये राक्षसवशी विद्याधर सब जीने की आशा छोडकर बैठे थे, सो अब सबकी आशा बधी है। तुम महाधीर प्रगट हुये। एक दिन हम कैलाशपर्वत पर गये थे, वहॉ अवधिज्ञानी मुनि से पूछा कि, हे प्रभो! लका मे हमारा प्रवेश होगा या नहीं? तब मुनि ने कहा कि तुम्हारे पुत्र का पुत्र होगा, उसके प्रभाव से तुम्हारा लंका में प्रवेश होगा, वह पुरुषो मे उत्तम होगा। तुम्हारा पुत्र रत्नश्रवा, राजा व्योमबिंदु की पुत्री केकसी से विवाह करेंगा, उसकी कुक्षी से वह पुरुषोत्तम प्रगट होगा। वह भरतक्षेत्र के तीनखण्ड का राजा होगा। महाबलवान, विनयवान उसकी कीर्ति दशोदिशाओ में फैलेगी। वह शत्रुओं से अपना पीछा छुडायेगा–वह अब तू महाउत्सव रूप कुल का मंडन आभूषण उत्पन्न हुआ हैं। तेरे जैसा रूप इस जगत में और किसी का नहीं है। तुम अपने अनुपमरूपसे सबके नेत्र और मनको हरते हो। इत्यादि शुभ वचनो से सुमाली ने रावण की स्तुति की। तब रावणने हाथ जोड नमस्कारकर सुमाली से कहां कि-हे प्रभो! आपके आशीर्वाद से ऐसा ही होगा। ऐसा कहकर णमोकार मंत्र जप पंच परमेष्ठी को नमस्कार किया, और सिद्धों का स्मरण किया, इससे सभी कार्य सिद्ध होता है।

आगे गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं—हे श्रेणिक! रावण के प्रभाव से सभी परिवार एवं सर्व राक्षसवंशी और वानरवशी अपने अपने स्थान आये। शत्रुओं का भय नहीं किया। इस प्रकार पूर्वभव के पुण्य से पुरुष लक्ष्मी को प्राप्त होता है। अपनी कीर्ति से व्याप्त की है दशो दिशाये जिनने। इस पृथ्वीपर बडीआयु तेजका कारण नहीं है। जैसे अग्नि का कण छोटाही बडे बडे वनको भस्मकर देता है। और सिंहका छोटा बच्चा भी मदभरे हाथीका कुम्भस्थल विदार देता है। जैसे चन्द्रमा निकलता ही कुमदों के फूलो को प्रफुल्लित करता है। ओर निकलता हुआ सूर्य भी रात्रि के धनधोर अन्धकार को दूर कर देता है।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रावण का जन्म और विद्यासाधन करनेवाला सातवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-8

दशानन के कुटुम्बादि का परिचय और वैभव का दिग्दर्शन

अथानंतर दक्षिणश्रेणी मे असुरसगीत नाम का नगर वहा का राजा मय विद्याधर। बडेयोद्धा विद्याधरो मे दैत्य कहलाते है। जैसे रावण के बडे योद्धा राक्षस कहलाते है, इन्द्रकुल के योद्धा देव कहलाते है, राजा मय उनकी रानी हेमवती उनकी पुत्री मदोदरी सर्व अगोपाग सुदर, विशाल नेत्र, रूप और सुन्दरता से भरी, नव यौवन पूर्ण देख पिता को विवाह करवाने की चिता हुई। तब अपनी रानी हेमवती से पूछा कि—हे प्रिये! अपनी पुत्री मन्दोदरी यौवन अवस्था को प्राप्त हुई, सो हमको बडी चिता है, इसीलिये तुम कहो? इस कन्या का विवाह किसके साथ करायें। गुण मे, कुल मे, काति मे, इसके समान जो राज कुमार हो उसको यह पुत्री दी जाय। तब रानी ने कहा—हे देव! हम पुत्री को जन्म देने में, एवं लालन पालन करने मे समर्थ है। विवाह का कार्य आप के हाथ मे हैं। जहॉ आपका मन प्रसन्न हो वहॉ दो, जो उत्तम कुल की बालिका हैं वो पति की आज्ञानुसारिणी होती है, जब रानी ने यह कहा, तब राजा ने मत्रियों से पूछा! तब किसी ने इन्द्र बताया कि वह सब विद्याधरो का राजा हैं, तब राजा मय ने कहा कि मेरी तो रुचि यह हैं कि यह कन्या रावण को देनी चाहिये, क्योंकि उसको

थोडे ही दिनो में सब विद्याये सिद्ध हुई हैं, इसीलिये यह कोई बडे पुरुष हैं, जगत को आश्चर्य का कारण है, तब राजा के वचन को मारीच आदि सब मंत्रियों ने प्रमाण किया। राजा के मत्री सभी कार्यों मे प्रवीण हैं, तब मत्रीयो ने अच्छे ग्रह लग्न देख क्रूरग्रह छोड मारीचको साथ लेकर राजामय के साथ कन्याको लेकर रावणके पास चले। रावण भीमनाम के वन मे चद्रहास खडग विद्या साधने आये थे, वे चंद्रहास खड्ग सिद्धकर सुमेरुपर्वत के चैत्यालयों की वंदना करने को गये थे, तब राजा मय भी भीमनाम के वन में आये। वहा वनके मध्य एकऊँचा महलदेखा, मानोस्वर्ग को ही स्पर्शकर रहा हैं। रावण ने जो स्वयप्रभ नामका नयानगर बसाया है उसके पासही यहमहल है, सो राजामय विमान से उतरकर महल के पास डेरा किया और वादित्रादि सब आडबर नीचे छोड, मदोदरी को साथ लेकर महलके ऊपर चढे। सातवे खण्डपर गये, वहां रावण की बहिन चद्रनखा बैठी थी। कैसी है चद्रनखा? मानो साक्षात वनदेवी ही है। तब चद्रनखा ने राजामय एवं मदोदरी को देखकर बहुत आदर किया, और समीप मे बैठी। तब राजामय चन्द्रनखा से पूछा! हे पुत्री! तुम कौनहो। किसकारण इस वन मे अकेली बैठी हो? तब चद्रनखा विनय से बोली, मेरे बडे भाई रावण दो उपवास कर चद्रहास खडग को सिद्ध किया, अब मुझे खडग की रक्षा सौप, सुमेरुपर्वत के चैत्यालयो की वदना करने के लिये गये हैं। मै भगवान श्री चद्रप्रभु के चैत्यालय मे रहती हूँ, आप बडे हमारे सबधी हो, आप रावण से मिलने आये हो तो कुछ समय यहा विराजो। इस प्रकार इनके बात चल ही रही थी, तब ही रावण आकाश मार्ग से आते दिखाई दिये, जब उनके तेज का समूह नजर आया। तब चन्द्रनखा ने कहा महा ज्योतिवत रावण आ गये हैं। तब राजा मय मेघ के समूह समान श्याम सुन्दर बिजली समान चमकते हुये आभूषण पहने रावण को बहुत आदर से देख उठकर खडे हुये, और रावण से मिले दोनों सिंहासन पर विराजमान हुये। तब राजामय के मंत्री मारीच, वज्रमध्य, वज्रसेन, नभरित्त उग्र, नक्र शुक्र यह सब रावणको देख बहुत प्रसन्न हुये और राजामय से कहते हैं—हे देव! आपकी बुद्धि अतिप्रवीण है, जो मनुष्यो में महापदार्थ है, वो आपके मन मे बसा, इस प्रकार मयसे कहकर मय के मंत्री रावण से कहते हैं हे रावण! हे महाभाग्यवान! आपका अद्भुत रूप महापराक्रम, आप अतिविनयवान, अतिशय के धारी, अनुपम वस्तु हो, यह राजामय दैत्यों का अधिपति, दक्षिणश्रेणी में असुरसंगीत नाम का नगर का राजामय है, पृथ्वी विशेष

प्रसिद्ध है। हे कुमार! आपके गुणों से अनुरागी होकर यहाँ आये हैं। तब रावण ने इनका बहुत आदर किया। और मधुर वचन कहे। यह बडे पुरुषों के घर की रीति ही है, जो अपने घर आये उसका आदर करते हैं। रावणने मय के मंत्रियों से कहा ये दैत्यनाथ बडे है मुझे अपनाजान अनुग्रह किया। तब मयने कहा—हे कुमार! आपको यही योग्य है, जो आप समान सज्जन पुरुष हैं, उनकी सज्जनता ही मुख्य है। पुन रावण जिनेन्द्रदेव की पूजा करने के लिए मन्दिर मे गये। राजामय एवं मंत्रियों को साथ मे ले गये। रावण ने भक्ति भाव से पूजा की, स्तोत्र पढे बारम्बार हाथ जोड अष्टाग नमस्कार किया, पुन बाहर आये। राजामय सहित आप सिहासन पर बैठे। राजा से वैताड पर्वत के विद्याधरों की बात पूछी और मन्दोदरी की तरफ दृष्टि गई। उसे देखकर मनमोहित हुआ। कैसी है मन्दोदरी? शोभा की रूप, रत्नों की खान, सुन्दर है नाखून, कमल समान है चरण जिसके, ऐसा मनोहर रूप मानो जल का प्रभाव ही है, महा लज्जा के योग से, दृष्टि है नीची उसकी, पुष्पो से अधिक सुगन्धमय है शरीर उसका, शख के कठ समान है गरदन उसकी, पूर्णिमा समान है मुख उसका, लम्बे काले सुगन्ध सघन है केश उसके, मानो साक्षात लक्ष्मी ही कमल के निवास को छोडकर रावण के निकट इर्ष्या को धारण करती हुई आयी है, क्योकि मेरे होते हुये रावण के शरीर को विद्या क्यो स्पर्श करे, ऐसे अद्‌भुतरूप को धारण करनेवाली मन्दोदरी रावण के मन ओर नेत्रो का हरण किया। पूरे शरीर मे अद्‌भुत आभूषण पहने महामनोज्ञ मन्दोदरी को देखकर रावण का मनमोहित हो गया, महामधुरता से युक्त, रावण की दृष्टि मन्दोदरी को देख भँवरे की तरह फिरने लग गई। रावणने सोचा यह उत्तम नारी कौन है? श्री, ह्रीं, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, सरस्वती इसमे से यह कौन है, विवाहिता है अथवा कुमारी है, सर्व श्रेष्ठ स्त्रीयों की शिरोमणि महाभाग्यशाली मेरे मन को हरनेवाली है, मै इससे विवाह करूँ तो मेरा जीवन सफल होगा, नहीं तो तृणवत् वृथा है। ऐसा चितवन रावण ने किया। तब राजा मय, मन्दोदरी के पिता बडे प्रवीण रावण का अभिप्राय जान, मन्दोदरी को निकट बुलाकर रावण से कहा इसके आप ही पति है, ऐसे वचन सुनकर रावण अति प्रसन्न हुआ, विवाह योग्य सम्पूर्ण वस्तुये राज मय के पास थी, उसीदिन उसीसमय मन्दोदरी का विवाह रावण से कराया। रावण मन्दोदरी से विवाह कर अतिप्रसन्न होकर स्वयंप्रभ नगर में गये। राजामय भी पुत्री का विवाह कराकर निश्चिन्त हुये, एवं पुत्री के

वियोग के शोक सहित अपने देश को गये। रावण के हजारों रानियो में मन्दोदरी पटरानी हुई। मन्दोदरी का पति के गुणों में हरा गया हैं मन, उससे पति की आज्ञा कारिणी हुई। रावण मन्दोदरी सहित सुख से रहें, जैसे इन्द्र इन्द्राणी सहित रमें वैसे सुमेरु के नन्दनवन आदि रमणीक स्थानों में रमते रहे। एक रावण, अनेकरूपकर अनेक स्त्रीयों के महलों में कौतुहल करते हैं। कभी सूर्य समान तपे, कभी चन्द्रमा की चांदनी समान प्रकाश करते कभी अमृत बरसाते, कभी शीतल मिष्ठ वाणी की वर्षा करते, पवन की तरह पर्वतो को चलातें, कभी इन्द्रों के समान क्रीडा करते, कभी मद हाथी समान चेष्टा करते, कभी पवन से अधिक वेग वाला अश्व बन जाते, क्षण में पास, क्षण में अदृश्य, क्षण में सूक्ष्म, क्षण में स्थूल, क्षण मे भयानक, क्षण मे मनोहर इस प्रकार अनेकों क्रीडायें करते रहे।

एकदिन रावण मेघवर पर्वतपर गया वहॉ एक बावडी देखी। निर्मल जल से युक्त मनोहर तट, जिसके समीप मे अर्जुन आदि बडे बडे वृक्षों की छाया हो रही है, वहॉ रावण ने अतिसुन्दर छहहजार राजकन्यायें क्रीडा करती हुई देखी, कोई जल मे जल के छींटे उछाले है, कोई कमलो के बीच में घुस जा रही हैं कोई कमलो की शोभा को जीत रही हैं। सों भवरे इनके मुखो पर गुंजार कर रहे हैं, कोई मृदग बजाती, कोई वीणा बजाती, कोई नृत्य करती, ये समस्त कन्याये रावण को देखकर जल क्रीडा को छोडकर खडी हो गई, रावण भी उनके बीच में जलक्रीडा करने लगे, तब वह भी क्रीडा करनेलगी, वे सब कन्यायें रावण का रूपदेख मोहित हो गई, सबकी दृष्टि रावण की तरफ ही रही, अन्यत्र कहीं नहीं गई। सबको राग उत्पन्न हुआ, प्रथम मिलाप की लज्जा एव काम वासना प्रगट हुई। इसीलिए उनका मन झूले में झूलता रहा। उन कन्याओं में जो जो मुख्य है उनके नाम सुनो। राजा सुरसुन्दर, रानी सर्वश्री की पुत्री पद्मावती, राजाबुध, राणी मनोवेगा की कन्या अशोकलता, मानों साक्षात् अशोक की लताही है, और राजाकनक, राणीसंध्या की पुत्री विद्युत्प्रभा, जो अपनी प्रभा से बिजली को जीतती है, सुन्दर है दर्शन जिनका, बड़े कुलकी बेटीयॉ अनेक कलाओं में प्रवीण, सो यह रावण ने दसहजार कन्याओं से गन्धर्व विवाह किया वे राज कन्यायें रावण सहित नानाप्रकार की क्रीडायें करती हैं।

तब इनके साथ जो खोजा एवं सहेलियाँ आई थी उन्होंने इनके पिता से सब वृतान्त जाकर कहा, तब सब राजाओं ने रावण को मारने के लिए क्रूर सामन्त

भेजे, वे सामन्त भोंहे डेढीकर होट कम्पाते हुये आये। और नानाप्रकार के शस्त्रों की वर्षा की, उन सबको, अकेले रावण ने क्षणमात्र मे जीत लिया। तब सभी भाग कर कांपते हुए राजा सुरसुन्दर के पास गये, जाकर हथियार डाल दिये, और विनती की-हे नाथ! हमारी आजीविका को दूरकरो अथवा घर लूट लो या हाथ पॉव छेदो प्राण हरो, हम रत्नश्रवा का पुत्र जो रावण उससे लडने को समर्थ नहीं। हजार राजकन्याओं से उसने विवाह किया, उनके मध्य क्रीडा करते है। इन्द्र समान सुन्दर, चन्द्रमा समान कांति का धारी, उसकी क्रूरदृष्टिदेव भी देख नहीं सकते, उसके सामने हम रंक कौन? हमने बहुत ही शूरवीरों को देखा, रथनूपुर का धनी राजाइन्द्र आदि भी इसके बराबर नहीं, यह परम सुन्दर महाशूरवीर है। ऐसे वचन सुन राजा सुरसुन्दर महाक्रोधायमान हो, राजा बुध और कनकसहित अनेक सेना साथ लेकर निकले, वे सब आकाश मे शस्त्रों की कांति से उद्योत करते हुये आये। इन सब राजाओ को देखकर, ये सभी कन्यायें डर से व्याकुल हुई, और हाथ जोड रावण से कहती है-हे नाथ! हमारे कारण आप कष्ट को प्राप्त होंगें, हम पुण्य हीन है, अब आप कहीं जाकर छिप जाओं, क्योंकि यह प्राण दुर्लभ हैं इनकी रक्षा करो, यहॉ निकट ही श्रीभगवान का मन्दिर हैं वहॉ छिप जाओं। यह क्रूरशत्रु आपको नहीं देखकर अपने आप चले जायेगे। ऐसे दीन वचन रानियों के सुन, और शत्रुओ का कटक पास आया जान रावण ने लालनेत्र किये और इनसे कहा तुम मेरा पराक्रम नहीं जानती हो। कौआ अनेक इकट्ठे हुये तो क्या, गरुड को जीतेंगे? एक सिह का बालक अनेक हाथियो के मद को दूर करता हैं। रावण के ऐसे वचन सुन रानियो ने हर्षित होकर विनती की, हे प्रभो! हमारे पिता, भाई एवं कुटुम्ब की रक्षा आपको करनी है, तब रावणने कहा, हे प्रिये! ऐसा ही होगा। तुम भय मत करो साहस रखो, यह बात परस्पर हो रही थी, इतने में राजाओं के कटक आये, तब रावण विद्या के रचे विमान मे बैठ क्रोध से उनके सन्मुख गया, वे सब राजा, योद्धाओं के साथ वाणों की वर्षा करने लगे, तब रावण विद्याओं का सागर उसने बाणों के समूह को दूर किये, और मन मे सोचा की इन रंकों को मारने से क्या? इनमें जो मुख्य है उनको पकड लें। तब इन सब राजाओं को तामस शस्त्रो से मुर्च्छितकर नागपास से बाध लिया। तब इन स्त्रीयों ने विनयकर छुडायें। और रावण ने सभी राजाओं की बहुत प्रशंसा की आपहमारे परमसम्बन्धी हो, वे सभी राजा रावण का शूरत्व गुण देख, महाविनयवान, रूपवान देख, बहुत

प्रसन्न हुये, अपनी अपनी पुत्रियो का विधिपूर्वक पाणिग्रहण कराया। तीनदिन तक महाउत्सव रहा। पुनः रावण की आज्ञा लेकर सभी अपने अपने स्थान को गये। रावण मन्दोदरी के गुणों से मोहित होकर स्वयप्रभ नगर में आये। तब रावण को रानियों सहित आया सुन, कुम्भकरण, विभीषण सन्मुख गये। रावण ने बडे उत्साह से स्वयंप्रभ नगर में इन्द्र समान प्रवेश किया, और सुख पूर्वक रहें।

अथानंतर कुभपुर का राजा मन्दोदर, राणी स्वरूपा, उनकी पुत्री तडिन्माला उससे कुम्भकरण (भानुकरण) ने विवाह किया। कैसे हैं कुम्भकरण? धर्मध्यान में प्रवीण, महायोद्धा, कलागुणो मे निपुण। हे श्रेणिक! अन्य मत में लोग इनकी कीर्ति अन्यरूप बताते है। कि कुम्भकरण, मास और खून का भक्षण करते है छह महीना निद्रा लेते है। परन्तु इनका आहार अतिपवित्र, शुद्ध स्वादरूप, सुगन्धमय था। पहले मुनियो को एव आर्यिकाओं को आहार देकर, दुखित, भूखित जीवो को भोजन देकर कुटुंब सहित योग्य भोजन करते थे। मास आदि का भोजन नहीं करते थे। और निद्रा ये अर्धरात्रि के पिछले समय मे लेते थे। हमेशा धर्ममें ही मनको लगाते थे। चरमशरीरी लोगो को, झूठा दोष लगाना महापाप के बंध का कारण है। ऐसा कहना योग्य नहीं है। तत्पश्चात् दक्षिणश्रेणी मे ज्योतिप्रभ नाम का नगर वहॉ का राजा विशुद्धकमल, राजामय का बडामित्र उनकेरानी नन्दनमाला, पुत्री राजीवसरसी। उसका विवाह विभीषण के साथ कराया। रानी सहित विभीषण अति कोतुहल करते, राग भरे कार्य करते, रतिकेली करते तृप्ति को प्राप्त नहीं होते। कैसे है विभीषण? देवो के समान परम सुन्दर। कैसी है रानी? लक्ष्मी से भी अधिक सुन्दर, लक्ष्मी तो कमल की निवासिनी है परन्तु रानी पद्मरागमणी के महल की निवासनी थी।

अथानंतर रावण की राणी मन्दोदरी गर्भवती हुई, सो मन्दोदरी के माता पिता मन्दोदरी को अपने घरपर ले आये, यहॉ इन्द्रजीत का जन्म हुआ। इन्द्रजीत का नाम सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ। इन्द्रजीत नाना के घर दूज के चन्द्रमा समान वृद्धि को प्राप्त हुये। सिंह के बालक समान साहसरूप उन्मत्त क्रीडा करते थे। रावण ने पुत्र सहित मन्दोदरी को अपने पास बुलाई सो आज्ञा प्रमाण मन्दोदरी आई। मन्दोदरी के माता पिता को इनके विछोह का अतिदुख हुआ। रावण पुत्र का मुख देख अतिआनन्द को प्राप्त हुये। सुपुत्र समान प्रीति का दूसरा स्थान कहॉ। पुनः मन्दोदरी को गर्भ रहा, फिर माता पिता के यहॉ मेघनाथ का जन्म

हुआ। पुनः रावण के समीप आई और भोगसागर में मग्न हो गई। मन्दोदरी ने अपने गुणों से रावण का मन वशकिया। दोनों बालक इन्द्रजीत और मेघनाथ सब को आनन्द के कारण बने, सुन्दर आचरण के धारी होकर तरुण अवस्था को प्राप्त हुये। सुन्दर है नेत्र और मुख जिनके, वृषभसमान पृथ्वी के भार को चलानेवाले थे।

अथानंतर वैश्रवण जिस जिस नगरो मे राज्य करता, उन हजारों नगरों में कुम्भकरण, इन्द्र एव वैश्रवण का जो जो माल हो उसको छीनकर अपने स्वयप्रभ नगर में ले आते। इसीलिये वैश्रवण का दूत आया। और सुमाली से कहा कि, हे महाराज! वैश्रवण नरेन्द्र ने जो कहा है वह आप मन लगाकर सुनो। तुम पण्डित हो, कुलीन हो, लोक रीति के ज्ञाता हो, खोटे कार्य से डरने वाले हो, दूसरों को सही मार्ग का उपदेश देने वाले हो, ऐसे आप महान बडे हो तो, आपके आगे यह बालक चंचलता करते, तो क्या आप अपने पोतों को मनानहीं कर सकते हो? तिर्यंच और मनुष्यों मे यही भेद है, मनुष्य तो योग्य व अयोग्य को जानते है, तिर्यंच नहीं जानते, यही विवेकी लोगो की क्रिया है, जो करने योग्य कार्य है वह करना और नहीं करने योग्य कार्य नहीं करना। जो बुद्धिशाली है ये पूर्व के वृतान्त को नहीं भूलते हैं। जैसे बिजली समान क्षणभगुर विभूति के होते हुये गर्व नहीं करते है। पहले क्या राजा माली के मरने से तुम्हारे कुल की कुशलता हुई थी? अब क्या स्यानपना करते है, जो अपने वशके नाश का उपाय करते हो। ऐसा जगत में कोई नहीं होगा, जो अपने कुल का नाश करना चाहता हो। तुम इन्द्र का प्रताप भूल गये हो क्या? जो ऐसे अनुचित कार्य करते हो। कैसे हैं इन्द्र? समुद्र समान अथाह हैं बल उसका, समस्त शत्रुओ को विध्वंस करनेवाला, जो तुम मेढक के समान, सर्प के मुख मे क्रीडा करते हो। ये तुम्हारे पोते चोर हैं, अपने पोते पडपोते को, जो तुम शिक्षा देने में समर्थ नहीं हो, तो मुझे सोंप दो, मैं उनको तुरन्त सीधे करूँगा। और ऐसा न करोगे तो समस्त पुत्र पौत्रादि कुटुंब परिवार सहित बेडियों मे बंधे नरक रूपी गढ्ढे मे गिरते देखोगे। उसमें अनेक प्रकार की पीडायें होगी। पाताल लका से धीरे धीरे मुश्किल से बाहर निकले हो। फिर वहीं प्रवेश करना चाहते हो? इस प्रकार दूत के कठोर वचन सुनकर रावण अतिक्षोभ को प्राप्त हुआ, क्रोध से शरीर मे पसीना आ गया, आँखों की ललाई से सम्पूर्ण आकाश लाल हो गया, क्रोधरूपी वचनो से सर्वदिशाये गूंज गई। रावणने क्रोधसे कहा, कौन है वैश्रवण, और कौन है इन्द्र, जो हमारे कुल एवं वंश की

परिपाटी से चली आई लंका उसको तुम दाब रहे हो। जैसे कौआ अपने मन में, सयाना हो रहा है, सो वह निर्लज अधम पुरुष हैं, अपने सेवकों से इन्द्र कहलवाता, तो क्या इन्द्र हो गया। हे कुदूत! हमारे निकट तू ऐसे कठोर वचन कहता हुआ भी कुछ भय नहीं करता है। ऐसा कहकर म्यान से तलवार निकाली। तलवार की तेज से आकाश चमकने लगा। तब विभीषण ने विनयकर रावण से कहा-कि हे महाराज! यह पराया नोकर है इसका अपराध क्या, जो वह कहलवाता है वही यह कहता है, इसमें पुरुषार्थ नहीं, अपने शरीर की आजीविका के लिये यह कार्य करता है। यह तोते समान है, जो दूसरा बुलवाता है ऐसा यह बोलता है। यह दूत है इसके हृदय मे इसका स्वामी पिशाचरूप प्रवेशकर रहा है, उसके अनुसार वचन कहता है। जैसे बाजा बजाने वाला जैसा बजाता वैसा ही बजता है। इसका शरीर पराधीन है स्वतन्त्र नहीं, इसलिये, हे कृपा निधे! प्रसन्न होओ, दुखी जीवों पर दया ही करो, हे महाधीर! रंको को मारने से लोक में बड़ी अपकीर्ति होती है। यह तलवार तुम्हारी शत्रु लोगों के सिरपर शोभे, दीनों को मारने योग्य नहीं। आप अनाथों को नहीं मारों, इसप्रकार विभीषण ने उत्तम वचनरूपी जलसे रावण की क्रोधरूपी अग्नि बुझाई। कैसा है विभीषण? महासज्जन पुरुष न्याय का वेत्ता है। रावण के चरणो में विनतीकर दूत को बचाया और सभा के लोगों ने दूतको बाहर निकाला। धिक्कार है सेवक का जन्म जो दूसरो का दुख सहन करते है।

दूत ने जाकर सभी समाचार वैश्रवण से कहा, रावण के मुख की अत्यन्त कठोर वाणीरूपी इन्धन से वैश्रवण को क्रोधरूपी अग्नि उठी, सो मन में नहीं समाई। राज्य में मंत्री आदि को भी सभी बात कही, सब क्रोध रूप हुये। रण संग्राम के बाजे बजाये। वैश्रवण सेना के साथ युद्ध के लिये बाहर निकले, वैश्रवण वंशके विद्याधर यक्ष कहलाते थे। वे सभी यक्षों के साथ, राक्षसों से युद्ध करने चले। खडग, सैल, चक्र, इत्यादि आयुध को लेकर अनेकरथ रत्नों से जड़े मनोहर महातेजवन्त तुरंग और पयादों के समूह गाजते गरजते युद्ध के लिये चले, देवों के विमान समान सुन्दर विमानोंपर चले। विद्याधर राजा वैश्रवण के साथ चले और रावण इनके पहले ही कुम्भकरण आदि भाईयों सहित बाहर निकले। युद्ध की अभिलाषा से दोनों सेनाओं का संग्राम गुंजनाम के पर्वतपर हुआ, शस्त्रों के सन्ताप से अग्नि दिखाई देने लगी, तलवारों के घात से घोडों के बोलने पयादों के नाद से, हाथियों की गरजना से, रथों के परस्पर शब्दों से, बाजो के बजने से, वाणों

के उग्र शब्दो से, इत्यादि अनेक भयानक शब्दो से, रण भूमि गूंजउठी, धरती एवं आकाश शब्दायमान हो गया। वीररस का राग हो रहा है, योद्धाओं के मद चढरहा है। यम के समान चक्र तीक्ष्ण है, यमराज की जीभ समान खडग, सैल, वाण, भाला, इत्यादि अनेक शस्त्रो से परस्पर महायुद्ध किया। कायर मनुष्यो को दुख, योद्धा पुरुषों को हर्ष हुआ, सामन्त सिर के बदले यशरूपी धनको प्राप्त करते हैं, अनेक राक्षस, और कपिवंश के विद्याधर, यक्षजाति के विद्याधर परस्पर महायुद्ध कर परलोक को गये। यक्षो की सेना कुछ आगे बढी तब राक्षस पीछे हटे, तब रावण अपनी सेनाको दबी देख आप रणसग्राम को आये। कैसा है रावण? महामनोज्ञ, सफेदछत्र सिरपर फिरे, धनुष बाण लिये, इन्द्र धनुष समान अनेकरंग का कवच पहने, सिरपर मुकुट बांधे, आभूषणों सहित, अपनी दीप्ति से, आकाश मे जगमग करता आया। रावण को देखकर यक्षजाति के विद्याधर क्षणमात्र के लिये भय को प्राप्त हुये, रण की अभिलाषा छोडकर विमुख हुये। दुख सहित मधु मक्खी के समान घूमते रहे। तब यक्ष के स्वामी बडे बडे योद्धा इकट्ठे होकर रावण के सन्मुख आये। रावण सबको मारने के लिये भागा। जैसे सिह उछलकर हाथियो के कुभस्थल नोंच डाले, वैसे रावण क्रोधरूपी वचन से, अग्नि स्वरूप होकर शत्रु सेनारूपी वनको जलाते रहे। कोई पुरुष नहीं, कोई रथ नहीं, कोई अश्व नहीं, कोई विमान नहीं, जो रावण के बाणो से मार न खाई हो। तब रावण को रण में देख, वैश्रवण भाईपने का स्नेह बताने लगा। और अपने मनमे पछताया, जैसे, बाहुबली भरत से लडाई कर पछताये, वैसे वैश्रवण रावण से विरोधकर दुखी हुआ। हाय! हाय! मैं ऐश्वर्य के अभिमान से मूर्ख होकर भाई से युद्ध किया। यह विचारकर वैश्रवण ने रावण से कहा। हे दशानन! यह राजलक्ष्मी क्षणभगुर है, इसके कारण तू क्यों पाप करता है, मैं तेरी बडी मौसी का पुत्र हूँ, इसीलिये भाईयो से अयोग्य व्यवहार करना योग्य नहीं है। यह जीव, प्राणियो की हिंसा कर महाभयानक नरक को प्राप्त होता है, नरक महादुखो से भरा है, कैसे है जगत के जीव! विषयो की अभिलाषा में फंसे है। आखो की पलक समान यह नाशवान जीवन है क्या तू नहीं जानता है। भोगों के कारण पाप कर्म क्यो करता। तब रावण ने कहा। हे वैश्रवण! यह धर्मश्रवण का समय नहीं है। जो मत हाथियोपर बैठ गये और खडग हाथ में ली, वह शत्रुओ को मारे अथवा स्वय मरे, बहुत कहने से क्या। तू तलवार के मार्ग में आ, अथवा चरणों में गिर। यदि तू धनपाल है तो हमारा भंडारी हो, अपने कर्म

करते पुरुष लज्जा नहीं करते। तब वैश्रवण बोले—हे रावण! तेरी आयु थोड़ी है इसीलिये ऐसे कटु वचन कहता है, शक्ति प्रमाण हमारे ऊपर शस्त्र का प्रहारकर, तब रावण ने कहा आप बडे हो प्रथम प्रहार आप करो, तब रावण के ऊपर वैश्रवण ने बाण चलाये, जैसे—पहाड़ के ऊपर सूर्य कि किरणे फैले। वैश्रवण के बाण रावण ने अपने बाणों से काट दिये। अपने वाणों से मडप बना दिया। पुनः वैश्रवण ने अर्धचन्द्र बाण से रावण का धनुष छेदा, रथ रहित किया। तब रावण ने मेघनाद रथपर चढकर वैश्रवण से युद्ध किया, उलकापात समान वज्रदण्डों से वैश्रवण का कवच चूर दिया। वैश्रवण के कोमलहृदय में भिण्डमाल की मारी तब वह मूर्च्छा को प्राप्त हुआ। वैश्रवण को मूर्च्छित देख सेना में अत्यन्त शोक हुआ, और राक्षसों के कटक मे बहुत हर्ष हुआ। वैश्रवण के लोग वैश्रवण को रणक्षेत्र से उठाकर यक्षपुर ले गये। ओर रावण शत्रुओं को जीतकर रण से अपने स्थान पहुँचे। सुभट लोगो को शत्रुओ को जीतने का ही, प्रयोजन है, धनादि का नहीं।

अथानतर वैश्रवण का वैद्यों ने इलाज किया सो अच्छा हुआ। मन में चिन्तवन करता है, जैसे पुष्परहित वृक्ष, सींग टूटा बैल, कमल बिना सरोवर की शोभा नहीं, ऐसे ही शूरवीरता बिना मेरी भी शोभा नहीं! क्षत्रियो का धर्म ही सुभटता है, उनको ससार मे पराक्रम ही सुख है, यह मेरे नहीं रहा। इसीलिये अब ससार का त्यागकर मुक्ति का पुरुषार्थ करूँ। ससार असार क्षणभगुर है, इसीलिये सज्जन पुरुष विषयसुख को नहीं चाहते हैं। विषय सुख अल्प है, दुखमय है, जो प्राणीयों ने पूर्वभव मे अपराध किये है उसका फल इस भवमें प्राप्त होता है, सुख दुख का मूल कारण कर्म ही है। दूसरे प्राणी निमित्तमात्र है, इसलिये ज्ञानी जन उनसे क्रोध नहीं करते, ज्ञानी मानव संसार के स्वरूप को भली प्रकार जानते है। यह केकसी का पुत्र रावण मेरे कल्याण का कारण हुआ, मुझे गृहस्थ जीवन रूपी फांसी से छुडाया, और कुंभकरण मेरा मित्र संग्राम का कारण मेरे ज्ञान का निमित्त बना, ऐसा विचारकर वैश्रवण ने दिगम्बरी दीक्षा धारी। परमतप की आराधनाकर परमधाम मोक्ष को पधारे। संसार भ्रमण से रहित हुये।

रावण कुल का अपमान धोकर सुख को प्राप्त हुआ। भाईयों ने रावण को राक्षसवंश का शिखर माना, वैश्रवण की सवारी का पुष्पक नाम का विमान महामनोज्ञ है, रत्नों की मालाओं के अंकुर लगे हैं, निर्मल कांति को धारण किया है। महामुक्ताफल की झालरों से युक्त है, मानो अपने स्वामी के वियोग से अश्रुपात

ही कर रहा है। यह वैश्रवण का हृदय रावण के किये घाव से लाल हो रहा है, इन्द्रनीलमणी जैसी प्रभा से युक्त है। रावण के मन्दिर समान ऊँचा जो विमान उसे रावण के सेवक रावण के समीप लाये। वह विमान आकाश का मंडन ही है, इस विमान को शत्रुओं के नाश का कारणजान, रावण ने ग्रहण किया, और किसी का कुछ भी नहीं लिया। रावण के किसी वस्तु की कमी नहीं। विद्यामई अनेक विमान है फिर भी पुष्पक विमान में विशेष अनुराग से चढे। पिता रत्नश्रवा माता केकसी और प्रधान सेनापति एवं भाई बेटों सहित, आप स्वयं पुष्पक विमान में बैठे। और परिवार के लोग अनेक वाहनोंपर आरूढ हुये। पुष्पक के मध्य महाकमलवन है वहाँ आप मन्दोदरी आदि राजलोग सहित आकर विराजे, कैसे है रावण? अखण्ड है गति उनकी, अपनी इच्छा से आश्चर्य कारी आभूषण पहने विद्याधरी चँवर ढोरे, चन्दनादि अनेक सुगन्ध शरीरपर लगी है, छत्र फिरे हैं, धनुष, त्रिशूल, खडग, सैल, पास, इत्यादि अनेक हथियार हाथ में हैं, ऐसे जो सेवकों से रक्षित, महाशक्ति युक्त बडे बडे विद्याधर, राजा, सामन्त, शत्रु के समूह को क्षय करनेवाले अपने गुणो से स्वामी के मन को हरनेवाले, महावैभव से शोभित, दशमुख परम उदार सूर्य जैसा तेज, पूर्वोपार्जित पुण्य का फल भोगते हुये, दक्षिण समुद्र की तरफ लंका की ओर, इन्द्र जैसी विभूति सहित चले। भाई कुम्भकरण हाथीपर, विभीषण रथपर चढे, अपने मित्रोंसहित महाविभूति से मंडित रावण के पीछे चले। राजामय मन्दोदरी के पिता, दैत्यजाति विद्याधरों के अधिपति भाईयों सहित अनेक सामन्तों से युक्त तथा मारीच, अंबर, विद्युतवज्र, वज्रोदर, बुधवजाक्षक्रूर, क्रूरनर, सारन, सुनय, शुक इत्यादि मंत्रियों सहित, अनेक वैभव से मंडित महाविद्याधरों के राजा रावण के साथ चले। कोई सिंहरथपर, कोई अष्टापद के रथ पर, वन, पर्वत, समुद्र की शोभा देखते पृथ्वीपर विहार किया और समस्त दक्षिणदिशा वश में की।

अथानंतर एक दिन रावण ने अपने दादा सुमाली से पूछा—हे प्रभो! इस पर्वत के मस्तकपर सरोवर नहीं है, फिर भी कमलों का वन कैसे फूल रहा है, यह आश्चर्य है, और कमलों का वन चंचल होता, और यह निश्चल है, इसप्रकार सुमाली से पूछा? तब सुमाली "नमः सिद्धेभ्य" ये मंत्र पढ़कर कहीं—हे पुत्र! यह कमलों का वन नहीं, इसपर्वत के शिखरपर पद्मरागमणि के चैत्यालय हरिषेण चक्रवर्ती ने बनवायें हैं उनके ऊपर ध्वजायें फहरा रही हैं, अनेक प्रकार के तोरणों

से शोभित हैं। कैसे हैं हरिषेण? महासज्जन पुरुषोत्तम थे, उनके गुणों का वर्णन नहीं कर सकते हैं हे पुत्र! तुम नीचे उतरकर पवित्र मन से नमस्कार करो। तब रावण ने बहुत विनय से जिनमंदिरों में नमस्कार किया एवं आश्चर्य को प्राप्त हुआ, और सुमाली से हरिषेण चक्रवर्ती का चारित्र पूछा। हे देव! आपने जिसके गुण वर्णन किये, उनकी कथा कहों, तब सुमाली ने कहाँ-हे रावण! तुमने अच्छा पूछा, पापों को नाश करनेवाला हरिषेण का चारित्र, वह सुनों—कंपिल्यानगर में राजा सिंहध्वज, उनकी अनेक रानीयों वप्रादि महागुणवती थी, परन्तु रानी वप्रा उनमें श्रेष्ठ थी, उनके हरिषेण चक्रवर्ती पुत्र उत्पन्न हुये, चौसठ शुभ लक्षणों से युक्त, पापकर्म को नाश करनेवाले, सो इनकी माता वप्रा महाधर्मवती, सदा अष्टानिका पर्व मे रथयात्रा का उत्सव करवाति, सो इनकी सोत, रानी महालक्ष्मी सौभाग्य के मान से कहती है, पहले हमारा ब्रह्मरथ नगर में भ्रमण करेगा बाद में तुम्हारा रथ निकलेगा, यह बात सुन रानीवप्रा मनमें महादुखी हुई, मानों वज्रपात ही गिरा, रानी वप्रा ने ऐसी प्रतिज्ञा की, कि हमारे वीतराग भगवान का रथ अष्टानिका में पहले निकले तो हम आहार करेगें नहीं तो त्याग, ऐसा कहकर सर्वकार्य छोड दिया। शोक से मुख मुरझा गया, ऑखों से आंसू बहनेलगे, तब माता को देखकर हरिषेण ने कहा हे माता! अब तक आपने स्वप्न मात्र में भी रुदन नहीं किया, अब यह अमंगल कार्य क्यों करती हो? तब माता ने सर्व वृतान्त कहा। सुनकर हरिषेण ने मन में सोचा कि क्या करूँ? एकऔर पिता, एकऔर माता। मैं संकट में फंसा, माता को रोती हुयी देखने में मैं समर्थ नहीं। एक तरफ पिता उनसे कुछ कहा नहीं जाता। ऐसा विचारकर, उदास होकर हरिषेण घर से निकलकर वनमें चले गये। वहॉ मीठे फलों का भोजन करते एवं झरनों का निर्मल जल पीते हुये, निर्भय होकर विहार किया। इनका सुन्दर रूप देखकर वनके निर्दयी पशु भी शांत हो गये। ऐसे भव्य जीव किसको प्यारे न लगें। वहाँ वनमें भी जब माता का रुदन याद आता तब इनको ऐसा दुःख उत्पन्न होता, मानो ये वन की सुन्दरता का सुख भूल जाते, वह हरिषेण चक्रवर्ती वनमें वनदेवता समान विहार करते, उनको मृग भी नेत्रों से देखते। एकदिन वनमें भ्रमण करते करते शतमन्यु नाम का तापस के आश्रम में गये। कैसा है आश्रम? वनके जीवों का है आश्रय।

अथानंतर कालकल्प नामका राजा अतिप्रबल, बड़ी फोज से, चम्पानगरी में आया। चम्पानगरी का राजा जनमेजय उन दोनों का युद्ध हुआ। पहले जनमेजय

ने महल में सुरंग बनवारखी थी, सो सुरंग के मार्ग होकर जनमेजय की माता नागमती, अपनी पुत्री मदनावली सहित निकली ओर शतमन्यु तापस के आश्रम मे आई। सो नागमती की पुत्री हरिषेण चक्रवर्ती का रूप देखकर मोहित हुई। तब उसको व्याकुल देख नागमती ने कहा—हे पुत्री! तू विनयवान होकर सुन, कि मुनि ने पहले ही कहा था कि यह कन्या चक्रवर्ती की स्त्रीरत्न होगी। अब यह चक्रवर्ती तेरे वर है। यह सुनकर मदनावली अतिआसक्त हुई। तब तापसी ने हरिषेण को निकाल दिया। क्योकि तापसी ने विचार किया कि कदाचिद् इन दोनो का ससर्ग होगा तो हमारी अपकीर्ति होगी, तब ये चक्रवर्ती आश्रम से दूसरी जगह गये। तापसी को दीनजान युद्ध नहीं किया। परन्तु मन मे वह कन्या बसी रही। इनको भोजन में, शयन में किसी भी कार्य मे मन नहीं लगता। ये पृथ्वीपर भ्रमण करते रहे। ग्राम, नगर, वन, उपवन, लताओ के मंडप में, कहीं भी चैन नही, कमलों के वन, दावानल समान दिखते है, चन्द्रमा की किरण, वज्रकी सूईसमान लगती, पुष्पो की सुगन्ध नहीं सुहाती, चित्तमे ऐसा चिन्तवन करते, जो मै यह स्त्रीरत्न प्राप्तकरूँ तो मै जाकर माता का भी शोक सन्ताप दूर करूँ। यह चिन्तवन करते हुये अनेक देशो में भ्रमण करते करते सिन्धुनन्दन नगर के समीप आये। कैसे हैं हरिषेण? महाबलवान् अतितेजस्वी। वहॉ नगर के बाहर अनेक स्त्रीयां क्रीडा करने आई थी, उसीसमय वहॉ एक अजनगिरी समान हाथी मद झराता हुआ स्त्रीयों के समीप आया। महावत ने कहा हाथी मेरे बसमे नहीं है, तुम शीघ्रही भाग जाओ। तब वे स्त्रीयॉ हरिषेण की शरण मे आई। हरिषेण परम दयालु महायोद्धा है। वे स्त्रीयो को पीछे करके आप हाथी के सन्मुख आये। और मन मे सोचा कि वहॉ तो वे तापस दीन थे इसीलिये मैंने युद्ध नहीं किया। वे मृगसमान थे, परन्तु यहॉ यह दुष्ट हाथी मेरे देखते स्त्री, बालक आदि को मारे यह मै कैसे सहन करूँ। यह क्षत्रियो का धर्म नहीं। यह हाथी इन स्त्रीयों को पीडा दे रहा है। तब आप महावत को कठोर शब्दों से कहा कि हाथीको यहॉ से दूरकर, तब महावतने कहा तू बडा ढीठ है। हाथी को मनुष्य जानता है, हाथी स्वयं ही मस्त हो रहा है। तेरी मोत आई है अथवा दुष्टग्रह लगा है। यह हाथी मेरे बस मे नहीं है तू यहॉसे जल्दी भागजा, तब हरिषेण हसे और स्त्रीयों को तो पीछे किया आप ऊपरको उछल हाथीके दांतोंपर पैर रखकर कुभस्थलपर चढे। और हाथीसे बहुतक्रीडाकी। कैसे हैं हरिषेण? कमलसमान है नेत्र, उदार है वक्षस्थल, दिग्गजो के कुंभस्थल समान

है कधें, जिनके। तब यह वृतान्त सुन नगरके लोग सब देखने को आये। राजा ने महलपर जाकर देखा तो आश्चर्य को प्राप्त हुआ। अपने परिवार के लोगों को भेज हरिषेण को बुलाया, यह हाथीपर चढ नगर मे आये, नगर के नर नारी सब इनको देख मोहित हुये। क्षणमात्र में हाथी को निर्मद किया। यह अपने रूपसे सबका मन हरते हुये नगर मे आये। राजा की सौकन्याओं से विवाह किया। सर्व लोक में हरिषेण की कथा प्रसिद्ध हुई, राजा से अधिकार, सम्मान पाकर सुखी हुये, तो भी तापसियों के वन मे जो कन्या देखी थी, उसके बिना एकरात्री एकवर्ष समान लगती है। मन मे बार बार सोचते हैं। मेरे बिना वह मृगनयनी उस वनमें मृगीसमान आकुलता को प्राप्त होती होगी। इसीलिये मैं उनके निकट शीघ्र ही जाऊँ। ऐसा विचार करते, रहते रात्रि में नींद नहीं आती। कदाचित् अल्प नींद आई तो स्वप्न में उसको ही देखते। कैसी है वह? कमलसमान है नेत्र, मानो हरिषेण के मन में बसरही है।

तत्पश्चात्—विद्याधर राजा शक्रधनु की पुत्री जयचन्द्रा, उसकी सहेली वेगवती, वह हरिषेण को रात्रि मे उठाकर आकाश मे ले चली। निद्रा के क्षय होनेपर अपने को आकाश मे जाता देख क्रोध से कहा। हे पापिनी! तू हमको कहाँ ले जा रही है। यह विद्याबल से युक्त है, फिर भी इनको क्रोध से बोलते हुये देखकर कहती है, हे प्रभु! जैसे कोई मनुष्य जिस वृक्ष की शाखापर बैठा हो, उसीको काटे तो क्या सयानपना है, ऐसे ही मै आपकी हितकारी हूँ, आप मुझे मारो यह उचित नहीं, मै आपको उसके पास ले जाऊँ, जो निरन्तन आपसे मिलने की अभिलाषा से बैठी है। तब यह मन मे सोचते है, कि यह मधुरभाषी है, दुख पहुँचाने वाली नहीं। इसकामन प्रसन्न दिख रहा है। और आज मेरी दाहिनी आँख भी फडक रही है। इसलिये यह हमारी प्रिया का सगम करायेगी, उससे पूछा। हे बहिन! तुम अपने आने का कारण कहो। तब उसने कहा, सूर्योदय नगर मे राजा शक्रधनु, रानी धाराकी पुत्री जयचन्द्रा वह आपके गुण एवं रूप से मोहित हुई है, अन्य कोई पुरुष उसकी नजर मे नहीं आते, उसके पिता जहाँ विवाह कराना चाहते, वहाँ ये मना करती है, मैने जो जो राजपुत्रों के चित्र दिखाये, उनमें कोई भी उसके मन मे नहीं आया। तब मैंने आपके रूपका चित्र दिखाया, तब वह मोहित हुई, और मेरे से कहा, कि मेरा इस नर से संयोग न हुआ, तो मैं मरण करूँगी। परन्तु दूसरे अधम पुरुष से विवाह नहीं करूँगी। तब मैंने उसको साहस देकर समझाया

और मैंने ऐसी प्रतिज्ञा की, कि जहाँ तेरा मन है, उसे मैं नहीं लाऊँ तो अग्नि में प्रवेश करूँगी। उसको दुखी देख मैंने यह प्रतिज्ञा की। उसके गुणों से मेरा मन हर गया है। सो पुण्य के प्रभाव से आप मिले, मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण हूई। ऐसा कह कर सूर्योदय नगर में ले गई। राजा शक्रधनु से, सखीने सब बात कही, सो राजा ने अपनी पुत्री का विवाह हरिषेण से कराया। वेगवती का विवाह देख परिवार हर्षित हुआ, कैसे है वर कन्या! अनुपमरूप के निधान। इनके विवाह की बात सुन वेगवती के मामा उनके पुत्र गंगाधर एवं महीधर, ने क्रोधकर कहा, इस कन्या ने हमको छोडकर भूमिगोचरी से विवाह किया यह अच्छा नहीं किया। ऐसा कह युद्ध करने को तैयार हुये। तब राजा शक्रधनु ने हरिषेण से कहा, मै युद्ध के लिये जाऊँ और आप नगर में ठहरो। ये जो दुराचारी विद्याधर युद्धकरने आये हैं उन्हें मैं मॉरूगा। तब हरिषेण ने ससुर से कहा, जो दूसरो का कार्य करसकता है, वह अपना कार्य कैसे नहीं करे, इसीलिये हे पूज्य! आप मुझे आज्ञा करो मैं युद्ध करूँगा। ससुर ने बहुत बार मना किया, पर इन्होंने नहीं मानी। नाना प्रकार के शस्त्रों से पूर्ण, पवनगामी घोडे, शूरवीर सारथी चलाने वाले। ऐसे रथ पर चढे, इनके साथ बडे बड़े विद्याधर चले। कोई हाथियो पर चढे, कोई अश्वों पर, कोई रथों पर परस्पर महा युद्ध हुआ। शक्रधनु की कुछ सेना डरी, तब, स्वयं हरिषेण युद्ध करने आये। सो जिसतरफ रथ चलाया उसतरफ हाथी, घोडा मनुष्य, रथ, सेना कोई भी खडी नहीं रही। सब पर बाण चलाये। तब सभी कॉपते हुये युद्धको छोडकर भाग गये। महाभयभीत होकर, गंगाधर व महीधर ने सोचा कि हमने बहुत बुरा किया जो ऐसे महा पुरुषोत्तम से युद्ध किया। यह साक्षात सूर्य समान है, जैसे सूर्य अपनी किरणों को फैलाता है, उसीप्रकार यह बाण की वर्षा करता है। अपनी फौज को हारी देख, गंगाधर महीधर भाग गये। उसी समय हरिषेण के चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। तब ये दशवे चक्रवर्ती महाप्रताप को धारणकर पृथ्वीपर प्रगट हुये। यद्यपि चक्रवर्ती की पूर्ण विभूति पाई। फिर भी अपनी स्त्रीरत्न जो मदनावली उससे विवाह करने की इच्छा से बाहर योजन प्रमाण कटक साथले राजाओं को वूर करते तपस्वियों के वनके समीप आये। तपस्वी वन के फल लेकर चक्रवर्ती के चरणों में भेट रखकर मिले। पहले इनका निरादर किया था, यह इनके मन में शंका थी, लेकिन इनको अति विवेकी पुण्याधिकारी देख हर्षित हुये। शतमन्यु का पुत्र जनमेजय और मदनावली की माता नागमति, उन्होंने मदनावली का विवाह

चक्रवर्ती से विधिपूर्वक कराया। तब आप चक्रवर्ती की विभूति सहित कांपिल्य नगर में आये। बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजाओं के साथ आकर माता के चरणों में हाथ जोड़ नमस्कार किया, माता वप्रा ऐसे पुत्र को देख महाहर्षित हुई। जो कहने में न आये। और हर्ष के आंसू आये। जब अष्टानिह्का आई, तब चक्रवती ने भगवान का रथ सूर्य से भी अधिक महामनोज्ञ, प्रभावना सहित निकाला। साधु और श्रावको को परम आनन्द हुआ। बहुत जीवों ने जैन धर्म को धारण किया। यह कथा रावण ने सुमाली से सुनी, हे पुत्र! उन चक्रवर्ती ने भगवान के मन्दिर नगर ग्राम पर्वत एवं नदियों के तटों पर अनेक चैत्यालय रत्न व स्वर्ण के बनवाये। वे महापुरुष बहुत काल चक्रवर्ती की सम्पदा भोग मुनि बनकर महातपस्याकर मोक्ष पधारे, यह हरिषेण का चारित्र रावण सुनकर महाहर्षित हुआ, और सुमाली की बारम्बार स्तुति की, वहाँ जिनमन्दिरों के दर्शनकर रावण अपने स्थान को आये। वह स्थान सम्मेदशिखर के समीप था।

अथानंतर रावण को दिग्विजय में पुरुषार्थी देख सूर्य भी भय से भाग गया। अन्धकार फैला, रात्रि व्यतीत हुई, प्रातः काल रावण प्रभात की क्रियाकर सिंहासनपर विराजे, अकस्मात एक ध्वनि सुनी मानो वर्षाकाल का मेघही गरजा। सम्पूर्ण सेना भयभीत हुई और कटक के हाथी जिन वृक्षों से बंधे थे उनको तोड भागते रहे। घोडे हींसते रहे, तब रावण बोले यह क्या है, यहाँ मरने को हमारे ऊपर कौन आया। यहाँ वैश्रवण आया या इन्द्र का भेजा सोम आया अथवा हमको निश्चल देख, कोई शत्रु आया। तब रावण की आज्ञा पाकर प्रहस्त सेनापति उस ओर देखने को गया। वहाँपर पर्वतके आकार का मदोन्मत्त अनेकक्रीडा करताहुआ हाथीदेखा। तब प्रहस्त ने आकर रावण से विनती की। हे प्रभो! मेघ की घटासमान यह हाथी है, इसको इन्द्र भी पकड़ने को समर्थ नहीं हुआ, तब रावण हँसकर बोले-हे प्रहस्त! अपनी प्रशंसा करने योग्य नहीं, मैं इस हाथी को क्षणमात्र में वश करूँगा। ऐसा कहकर पुष्पकविमान में चढ़कर देखा, अच्छे लक्षणों से युक्त इन्द्रनीलमणी समान अतिसुन्दर श्यामशरीर, महामनोहर, उज्वलदीर्घ, गोल है नेत्र, दाँत सातहाथ ऊँचा, नौहाथ चौडा, कुछ पीला है, सुन्दर है पीठ, आगेका अंग ऊँचा, लम्बी है पूंछ, बड़ी है सूंड, सुन्दर है नख, प्रबल है चरण, गम्भीर है गर्जना, दुन्दुभी बाजों के समान गंभीर है नाद, ताडवृक्ष के पतेसमान जो कान, उनको हिलाता, मन और नेत्र को हरण करनेवाली क्रीड़ा करता हुआ हाथी को

रावण ने देखा एवं। अतिप्रसन्न हुआ। तब पुष्पकविमान से उतर कमर बांध उसके आगे जाकर शंख की ध्वनि की। ध्वनि के शब्दों से दशो दिशायें गुंजायमान हुई, तब शखका शब्दसुन चित्तमे क्षोभ को प्राप्त हो हाथीगरजा और दशमुख के सन्मुख आया, बलसे युक्त रावण अपने उत्तरासन का गेद बना कर शीघ्रही हाथीकी तरफ फेका। रावण गजकेली मे प्रवीण, हाथी तो गेद सूंधनेलगा और रावण ने आकाश में उछलकर गज के कुभस्थल पर हाथ से मुक्का मारा, हाथी ने सूंड से रावण को पकडने का पुरुषार्थ किया। तब रावण अतिशीघ्रता से दोनों दॉतोंके बीचसे निकल गये। हाथी से अनेक क्रीडाकी, दशमुख हाथीकी पीठपर चढ बैठे, हाथी विनयवान शिष्य के समान खडा हो रहा। तब आकाश से रावणपर पुष्पो की वर्षा हुई, और देवो ने जय जयकार किया। तब रावण की सेना बहुत हर्षित हुई, रावण ने हाथीका नाम त्रैलोक्यमडन रखा और बहुत हर्षित हुआ, एव हाथी के लाभ का उत्सव किया, फिर सम्मेदशिखर पर्वतपर जाकर यात्रा की। विद्याधरो ने नृत्य किया। रात्री मे वहीं रहे। प्रात काल सूर्य उदय हुआ, सो मानो दिवस ने मगल का कलश दिखाया, तब रावण अपने स्थानपर आकर सिहासन पर बैठकर हाथीकी कथा सभा मे कहने लगे। उसीसमय एक विद्याधर आकाश से रावण के पास आया, अत्यन्त कम्पायमान पसीने की बूदे शरीरपर चमक रही है। बहुत खेद खिन्न, एवं रोता हुआ हाथ जोड नमस्कारकर विनती करने लगा। हे देव! आज दशवॉ दिन है, राजा सूर्यरज और रक्षरज वानरवशी विद्याधर आपके बलसे उनका बल है, सो आपका प्रताप जानकर अपने किहकद नगर लेने के लिये अलकारोदय जो पाताल लका, वहॉ से अति प्रसन्न होकर चले। सो किहकंधपुर जाकर नगर को घेर लिया। वहॉ इन्द्र का यम नाम का दिग्पाल योद्धा वह युद्ध करने निकले, हाथ मे आयुध लेकर गये बानरवशी ओर यम के लोगों में महायुद्ध हुआ। परस्पर बहुत लोग मारे गये, तब युद्ध का कलकलाहट सुन यम स्वयं निकला। कैसा है यम। महाक्रोध से पूर्ण अतिभयकर उसकातेज सहनहीं सकते, ऐसे यम के आते ही बानरवशीयो का बल भाग गया, अनेक आयुधों से घायल हुये, यह बात कहता कहता वह विद्याधर मूर्च्छा को प्राप्त हुआ, तब रावण ने शीतोपचार से सावधान किया, और पूछा आगे क्या हुआ? तब वह हाथ जोड़ फिर कहा, हे नाथ। सूर्यरज का छोटा भाई रक्षरज अपने दल को व्याकुल देख स्वयं युद्ध करने लगे, सो यमके साथ बहुत देरतक युद्ध किया, यम अतिबलवान उसने

रक्षरज को पकड लिया तब सूर्यरज युद्ध करने लगे, बहुत युद्ध हुआ, यमने आयुध के प्रहार से राजाको घायल किया तब राजा मूर्च्छित हुये, सब अपने पक्ष के सामन्तों ने राजा को उठाकर मेघला वन में ले गये शीतोपचार से ठीक किया, पुनः यम महापापी अपना यमपना सत्य करता हुआ एक बंदी गृह बनाया। उसका नरक नाम रखा। वहाँ वैतरनी नदी आदि की सब विधि बनाई, जिन जिनको उसने जीते एव पकडे उन सबको नरक में डाल दिये, उस नरक मे कोई मर गये, कोई दुखों को भोगते है, उस नरक में सूर्यरज और रक्षरज ये दोनों भाई हैं, यह वृतान्त मैं देखकर आपके निकट आया हूँ, आप उनके रक्षक जीवन मूल हो, उनको आपका ही विश्वास है। मेरा नाम शाखाबली है, मेरा पिता रक्षरज, माता सुश्रोणी मैं रक्षरज का प्यारादास यह वृतान्त आपको कहने आया हूँ, मैं तो आपको बताकर निश्चित हुआ, अपनेपक्षको दुखी अवस्था मे जान आपका जो कर्तव्य है वहकरों।

तब रावणने उसे सन्तोष देकर उसके घावो का इलाज कराया, वहाँ से रावण तत्काल ही सूर्यरज व रक्षरज को छुडाने के लिये महाक्रोध से यम के पास चले और हसते हुये कहा। क्या यम रक हमारे से युद्ध करेगा? जो मनुष्य उसने वैतरणी आदि दुखके सागर मे डाल रखे है, मै आज ही उनको छुडाऊँगा। उसपापी ने जो नरक बनारखा है, उसे विध्वस करूंगा। देखो दुर्जन की दुष्टता जीवोंको ऐसे दुख दे, यह विचारकर रावण चले। प्रहस्त सेनापती आदि अनेक राजा बडी सेना से आगे आगे चले। नानाप्रकार के वाहनोपर चढे, शस्त्रों के प्रहार से आकाश में उद्योत करते, बाजों के नाद होते, विद्याधरो के अधिपती किहकुधपुर के समीप पहुँचे, दूर से नगर में महलों की शोभा देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुये। किहकुंधपुर के दक्षिणदिशा के समीप यम विद्याधर का बनाया हुआ कृत्रिम नरक देखा, वहाँ एक गहरा खड्डा खोद नरक की नकल बना रखी है। अनेक मनुष्यों को नरक मे डाल रखे है, तब रावण ने उसनरक के रखवाले यम के नोकरों को मारपीट कर निकाल दिया, और सब प्राणी सूर्यरज और रक्षरज आदि को दुखसागर से निकाले। कैसेहै रावण! दुखियों के बधु, और दुष्टों को दण्ड देने वाले हैं, सम्पूर्ण नरक का स्थान ही नष्ट किया। शत्रु सेना के आने का समाचार सुनकर यम सेना सहित युद्ध करने आया, मानो समुद्र ही क्षोभ को प्राप्त हुआ। तब विभीषण ने यम की सब सेना अपने वाणों से हटाई। विभीषण के बाणो

से यम के किंकर पुकारते हुये भागे। यम किंकरों के भागने से, नारकियों को छुडाने से, महाक्रूर होकर विभीषण पर आया। काले सर्प समान भोंहे चढ़ाकर, लाल नेत्रकर बडे बड़े सामन्तों सहित युद्ध करने आया। तब रावण यमको देख, विभीषण को दूर कर आप स्वयं रणसंग्राम में आये। यम के प्रताप से सर्व राक्षसों की सेना डरकर रावण के पीछे आ गई। रावण भी रथ पर आरुढ़ होकर यमके सन्मुख आया, अपने वाणों के समूह यमपर चलाये, इन दोनों के वाणों से आकाश ढक गया। रावण ने यम के सारथी पर प्रहार किया। सो सारथी भूमिपर गिरा, और एक वाण यमको लगाया तब यमभी रथ से गिरगया, यम रावण को महाबलवान जान, दक्षिण दिशा का दिग्पालपना छोडकर भाग गया। सारे कुटुंब को लेकर परिजन पुरजन सहित रथनुपुर गया। इन्द्र को नमस्कार कर विनती की-कि हे देव! आप कृपा करो या क्रोध करो, आजीविका राखो या हरो, आपकी जो इच्छा हो वहकरो। यह यम पणा मुझसे नहीं होता है। माली का भाई, सुमाली का पोता दशानन महायोद्धा पहले तो वैश्रवण को जीता, वह तो मुनि बन गया, अब मुझे भी उसने जीता, तो मैं भागकर आपके पास आ गया। उसका शरीर वीररस से भरा है, वह महात्मा है, वह ज्येष्ठ के मध्यान्ह का सूर्य समान कभी भी देखा न जाए। यह बात सुनकर रथनूपुर का राजा इन्द्र संग्राम के लिये तैयार हुआ, तब मंत्रीयों ने मना किया। कैसेहैं मंत्री! वस्तु के यथार्थ स्वरूप को जानने वाले हैं, तब इन्द्र समझकर बैठ गया। इन्द्र यम का जमाई है, उसने यम को दिलासा दिया कि आप बडे योद्धा हो, आपके योद्धा पने में कमी नहीं, परन्तु रावण प्रचंड पराक्रमी है, आप चिन्ता न करो, यहाँ ही सुख से रहो। ऐसा कहकर इनका बहुत सन्मान कर राजा इन्द्र राजभवन मे गये, भोगों में मग्न हुये। रावण के चरित्र का जो जो वृतान्त यम ने कहे, एवं वैश्रवण का वैराग्य लेना, और अपना भागना, वह इन्द्र के ईश्वर्य के मद से भूल गया। जैसे अभ्यास बिना विद्या भूल जाए। यह यम भी इन्द्र से सम्मान पाकर असुरसंगीत नगर का राज्य प्राप्त कर मान भंग का दुख भूल गया। मन में मान रहा कि जो मेरी पुत्री महारूपवन्ति, वह इन्द्र को प्राणों से भी प्यारी है। मेरा और इन्द्र का बड़ा सबंध है, इसीलिये मेरे क्या कमी हैं।

अथानंतर रावण ने किहकंधपुर तो सूर्यरज को दिया, और किहकुंपुर रक्षरज को दिया, अपना हित जान, दोनों का बहुत आदर किया, रावण के प्रभाव से बानरवंशी सुख से रहे, रावण सब राजाओं का राजा महा लक्ष्मी एवं कीर्ति को

धारण कर, दिग्विजय करने को चले बडे बडे राजा दिन प्रतिदिन आकर मिलते हैं। रावण का कटकरूप समुद्र अनेक राजाओं की सेना रूपी नदी से पूर्ण हो गया। दिनोदिन वैभव बढ़ता गया, पुष्पकविमान में बैठकर त्रिकूटाचल पर्वतपर आया। शीघ्र जहाँ जानाचाहे वहाँही जाय, ऐसे विमान का स्वामी रावण के पुण्यफल का उदय जानो। जब रावण त्रिकूटाचल पर्वतके शिखरपर पधारे। तब ये सबबातों में प्रवीण, सब राक्षसों के समूह को कईप्रकार के वस्त्राभूषण देकर परम हर्ष को प्राप्त हुये। सब राक्षस रावण को मंगल शब्द से कहते हैं। हे देव! तुम जयवन्त होओ! आनन्दको प्राप्त होओ, चिरकाल जीवो, वृद्धिको प्राप्त होओ। ऐसे मंगल वचन बार बार कहते हैं। कोई सिंहपर चढ़े, कोई शार्दूलोंपर, कोई हाथीयोंपर, घोडों पर, हंसोपर चढे, प्रफुल्लित है मन व नेत्र जिनके, देवों जैसी ज्योति खिल रही है, आकाशमें तेजफैल रहा है, वन पर्वत अन्तरद्वीप के विद्याधर, राक्षस आये, सभीलोग समुद्रको देखकर विस्मयको प्राप्त हुये। कैसाहैसमुद्र! अथाहहैपानी जिसमें, अतिगम्भीर मत्यस्यादि जलचर जीवों से भरा हुआ, पर्वतसमान ऊँची ऊँची लहरे उठ रही है, पाताल समान गहरा, अनेक प्रकार की अद्‌भुत चेष्टाको धारण किया हुआ समुद्र है। और लंकापुरी सुन्दर ही थी, लेकिन रावण के आने से अधिक सजाई गई है, कैसीहैलंका? अतिदेदीप्यमान रत्नों का कोट, गम्भीर खाई। कुन्द के पुष्पसमान, स्फटिकमणि के महल, उनमे इन्द्रनील मणियों की खिडकियाँ सुशोभित हैं। और कहीं पद्‌मरागमणी के, कहीं पुष्पराग मणी के कहीं मरकतमणी के महल हैं, इत्यादि अनेक मणीयों के मन्दिर से लंका स्वर्गपुरी समान हैं, नगरी तो सदा ही रमणीक है परन्तु स्वामी के आने से अधिक सुशोभित हुई। रावण ने महाहर्ष पूर्वक लंका में प्रवेश किया। पहाडसमान हाथी, मन्दिर समान रत्नमयीरथ, सुन्दर अनुपम विमान अनेक प्रभाको धारे इत्यादि महाविभूति चन्द्रमा समान उज्ज्वल सिरपर छत्र फिरे, ध्वजा पताका फहराती महामंगल शब्द हुये, वीणा, बांसुरी, शंखइत्यादि बाजे बजे, दशोंदिशा एवं आकाश गुंजायमान हो गया। इसप्रकार रावण विभूति युक्त लंका में पधारे। तब लंका के लोग अपने स्वामी का आगमन देख, दर्शन के लिये हाथों में अर्ध फल, पुष्प रत्न लेकर सुन्दर वस्त्राभूषण पहने, नगरके सब लोग रावण के समीप आये। वृद्धों को आगेकर नमस्कार करके कहते हैं। हे नाथ! लंका के लोग अजीतनाथ भगवान के समय से आपके घर के शुभ चिन्तक हैं। स्वामी को अतिप्रबल देख हम प्रसन्न हुये हैं, सभीने शुभ शुभ कामनायें

की, तब रावण ने बहुत दिलासा देकर विदाई की, रावण के गुणों का वर्णन करते करते अपने घर गये।

रावण के महल मे, प्रसन्न मनसे नगरके नर नारी अनेक आभूषण पहने रावण को देखने के लिये आये। रावण अपने महल में राजलोग सहित सुख से रहते हैं। और भी विद्याधरो के स्वामी यथायोग्य स्थान में देवों समान विभूति सहित आनद से रहते है।

अथानंतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं—हे श्रेणिक! जो अच्छेकर्म को करनेवाले हैं उनका निर्मलयश पृथ्वीपर प्रसारित होता है, रत्नादि संपदा की प्राप्ति होती है प्रबल शत्रुओंका नाश होता है, तीनों लोकों मे गुणोकी कीर्ति फैलती है। जीवके महाशत्रु पंचेन्द्रियो के विषय है। वह बुद्धिको हरनेवाले एवं पापोका बध कराने वाले है, यह इन्द्रिय विषय धर्म के प्रभाव से वशीभूत हो सकते है पुण्यके प्रभाव से शत्रुभी चरणो मे आते है पचेन्द्रि के विषय धर्मके शत्रु है इसीलिये विवेकी मानव विषयों को वशमें करते है। ऐसे विषयो का सेवन नहीं करना चाहिये। जो मानव भगवान के बताये मार्ग मे चलते है उनके पाप बुद्धि नहीं होती है।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे दशग्रीव की विभूति का वर्णन करनेवाला आठवा पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-9

बाली मुनि का निरुपण

अथानतर आगे अपने इष्टदेवको विधिपूर्वक नमस्कार कर उनके गुणों का स्तवनकर, किहंकधपुर के राजा सूर्यरज बानरवशी, उनकी रानी चन्द्रमालिनी अनेक गुणोसे सम्पन्न, उनके बालीनामका पुत्र हुआ। अब उनका वर्णन करते हैं। सो भव्यजीव! तुम सुनो! कैसेहैबाली? सदा उपकारी, शीलवान, पंडित, प्रवीण, धीर, लक्ष्मीवान, शूरवीर, ज्ञानी अनेक कलाओ से युक्त सम्यग्दृष्टि, महाबली, राजनीति में प्रवीण, धैर्यवान, दया से भीगा है मन जिनका, सम्पूर्ण विद्याओं में पारगामी, कांतिवान, तेजवन्त है। ऐसे पुरुष संसार में विरले ही है जो अढ़ाईद्वीप के सभी जिनमन्दिरों के दर्शन करते हैं। कैसेहैं वेजिनमन्दिर? सम्यक्त्व प्राप्ति के

कारण हैं, बाली तीनोंकाल भक्तिसहित, सशय रहित श्रद्धापुर्वक जम्बूद्वीप के सभी चैत्यालयों के दर्शन करके आते है। महा पराक्रमी शत्रुओ को जीतने वाले किहकंधपुर नगर मे देवोसमान क्रीडा करते है। कैसा है किहकंधपुर? महारमणीक रत्नमयी जिनमन्दिर, रत्नमयी राजभवन, गज, तुरंग, रथादि से पूर्ण अनेक व्यापारों से युक्त, ऐसे नगर मे, बाली इन्द्रसमान भोगों को भोगते है। बाली के छोटा भाई सुग्रीव महाधीर, वीर, मनोज्ञ, महानीतिवान, विनयवान है। दोनों भाई कुल के आभूषण बडों का विनय करनेवाले है, सुग्रीव के श्रीप्रभा बहिन जो साक्षात् लक्ष्मी समान रूप से अतुल्य है, और किहकंध पुर मे सूर्यरज का छोटा भाई रक्षरज उनकी रानी हरिकान्ता, उसके पुत्र नल और नील हुये। परिवार को आनन्द उत्पन्न करनेवाले, दोनो भाईयो के दो दो पुत्र महागुणवन्त थे, राजा सूर्यरज अपने पुत्रोको योवनरूप देख, मर्यादा के रक्षकजान आप विषयों को विष मिश्रित अन्नसमान जान ससार से विरक्त हुये। बालीको राज्य दिया और सुग्रीवको युवराजपद दिया। चारो गतियो में ससार के प्राणीयो को दुख ही दुख है ऐसा विचार कर विहतमोह मुनिराज के शिष्य हुये, मुनि बने और जैसा भगवान ने बताया वैसा ही चारित्र को धारण किया। कैसेहै मुनि सूर्यरज? शरीर से ममत्व रहित, आकाश समान निर्मल, अन्त·करण से शुद्ध, सम्पूर्ण परिग्रह रहित। पवन समान पृथ्वीपर विहार किया, विषय कषाय रहित, मुक्ति के अभिलाषी हुये।

अथानंतर राजा बाली के ध्रुवानामकी रानी, महापतिव्रता, सैकडो रानियो मे मुख्य, ऐश्वर्य की धारी, गुणो से युक्त। राजाबाली बानरवशियों के मुकुट, सभी विद्याधर राजा उनकी आज्ञा मानते है, सुन्दर है चरित्र उनका देवोंसमान सुख भोगते हुये, किहकधपुर का राज्य करते है। रावण की बहिन चन्द्रनखा, जिसका अति सुन्दर शरीर राजा मेघप्रभ के पुत्र खरदूषण ने जिसदिन से चन्द्रनखाको देखा है, उसदिन से उसके ऊपर मोहित होकर चन्द्रनखा को हरणकर ले जाने का उपाय करता रहा। एक दिनरावण; राजाप्रवर रानीआवली उनकी पुत्री तनूदरी उसके लिए गये हुये थे, तब खरदूषण ने लंका रावण के बिना खाली देख चिन्ता रहित हो चन्द्रनखा को हरकर ले गया। कैसा है खरदूषण? अनेक विद्याका धारक, मायाचार में प्रवीण। कुंभकरण और विभीषण दोनों भाई बडेशूरवीर हैं, परन्तु समयदेख पापी मायाचार से चन्द्रनखा को हरकर ले गया। तब ये क्या करें, खरदूषण के पीछे सेना दौडने लगी, तब कुंभकरण और विभीषण ने मना किया-कि खरदूषण पकडा तो जायेगा नहीं, और मारने योग्य नहीं। जब रावण

आये और चंद्रनखा की बात सुनी, तब क्रोधित हुये। यद्यपि मार्गके खेदसे शरीर में पसीना आया हुआ था, फिर भी खरदूषण के पास जाने को तैयार हुये, महामानी एक तलवार का ही सहारा लिया, सेना भी साथ नहीं ली, यह विचार किया, जो महावीर्यवान पराक्रमी है, उनके एक खडग का ही सहारा है तब मन्दोदरी ने हाथजोड़ विनती की कि-हे प्रभो! आप संसार की रीति के ज्ञाता हो, अपनी कन्या दूसरों को देनी और दूसरों की अपने को लेनी, इन कन्याओं की उत्पत्ति ही ऐसी हैं। और खरदूषण चौदह हजार विद्याधरों का स्वामी हैं। विद्याधर युद्ध से कभी पीछे नहीं हटते, बडे बलवान हैं, और खरदूषण को अनेकप्रकार की हजारों विद्यायें सिद्ध हैं। आप समान शूरवीर है, यह लोगों के मुख से आपने नहीं सुना है क्या? आपके और उसके महाभयानक युद्ध होगा, फिर भी हार जीत का सन्देह ही है, वह कन्याको हरके लेगया है, सो हरण से दूषित हुई है, दूसरे को नहीं दी जायेगी, और खरदूषण को मारने से वह विधवा होगी। सूर्यरज के मोक्ष जाने के बाद, चन्द्रोदर विद्याधर पाताल लंका में राज्य करता था। उसे निकालकर यह खरदूषण आपकी बहिन सहित पाताल लका में रहता है। वह आपका सम्बन्धी है। तब रावण बोले हे प्रिये! मैं युद्ध से कभी नहीं डरता, परन्तु तुम्हारे वचन का उल्लंघन नहीं करूंगा और बहिन को विधवा नहीं करना, इसीलिये हमने उसको क्षमा किया। तब मन्दोदरी प्रसन्न हुई।

अथानंतर कर्मयोग से चन्द्रोदर विद्याधर मरण को प्राप्त हुआ। उसकी स्त्री अनुराधा गर्भवती थी, भयानक वन मे मणिकान्त पर्वतपर सुन्दर शिलापे पुत्रका जन्म हुआ। क्रमसे बालक बडा हुआ। यह वन मे निवास करनेवाली माता उदास मनसे पुत्र की आशासे पुत्रका पालन करती। जब ये पुत्र गर्भ में आया तबसे ही पुत्र के माता पिता को शत्रुओं द्वारा विराधना एवं निस्कासन को प्राप्त हुआ, इसिलिये इसका नाम विराधित रखा। यह विराधित राज सम्पदा से रहित, जिन जिन राजाओं के पास जाते, वहाँ कहीं भी उसका आदर नहीं होता, जो अपने स्थान से रहित है, उसका आदर कौन करेगा, जैसे—मस्तकके बाल टूटने के पश्चात उसका आदर नहीं होता। यह विराधित खरदूषण से लड़ने में समर्थ नहीं है, सो मन में खरदूषण से युद्ध का चिन्तवन करता हुआ, सावधान रहता है। अनेकदेशों में भ्रमणकर, षट्कुलाचलों में अथवा सुमेरु आदि पर्वतों में या रमणीकवनों में या अतिशय स्थानो में, जहाँ देवों का आना जाना नहीं है वहाँ यह विहार करता था। और संग्राम में योद्धा लड़ते उनको देखता था, इस प्रकार

विराधित समय व्यतीत करता था। और लंका में रावण इन्द्रसमान सुख से रहते थे। सूर्यरज का पुत्र राजाबाली रावण की आज्ञा स्वीकार नहीं करता था। कैसाहैबाली? अद्‌भुत पुण्यकार्य करनेवाला, महाबलवान है। तब रावण ने बाली के पास दूत भेजा। वह दूत महाबुद्धिवान किहकंधपुर जाकर बाली से कहा, हे बानराधीष? दशमुखने आपको आज्ञा दी है, सो सुनो, तुम्हारे पिता सूर्यरज को मैंने, राजा यम रूपी शत्रुको निकाल कर आपको किहकंधपुर का राज्य दिया। अब तुम हमारे हमेशा के लिये मित्र हो, परन्तु आप अब हमारा उपकार भूल गये हो, हमारे से विपरीत क्रिया करते हो, यह योग्य नहीं। मै तुम्हारे पिता से भी अधिक प्रेम तुमसे करूँगा। अब तुम शीघ्र ही हमारे निकट आओ और प्रणाम करों। एव अपनी बहिन श्रीप्रभा से हमारा विवाह कराओ। हमारे सम्बन्ध से आपको सब सुख होगा। ऐसे रावण की आज्ञा प्रमाण करो, ऐसा दूत ने कहा। सो बाली को सबबात अच्छी लगी, परन्तु एक प्रणाम की बात ठीक नहीं लगी। क्योकि बाली के सच्चेदेवशास्त्रगुरुके बिना अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूँगा ऐसी प्रतिज्ञा है। तब दूत ने फिर कहा, हे कपिध्वज! अधिक कहने से क्या? मेरेवचन तुम निश्चय करो। अल्पलक्ष्मी प्राप्त कर गर्व मतकरो। या तो दोनों हाथ जोड प्रणामकरो, या आयुध पकडो। या तो सेवक होकर स्वामीपर चंवर ढोरो, या भागकर दशो दिशाओं में भ्रमण करो। या सिर नमाओ, या धनुष चढाओ। या तो रावण की आज्ञा कानका आभूषण करो, या धनुषको खैंचकर कानोतक लाओ। या तो मेरे चरणोंकी रज माथे चढाओ, या रणसग्राम में सिरपर टोप रखो। या तो बाणछोडो या धरतीछोडो। या तो अंजुलीजोडो, या सेनाजोडो। या तो मेरे चरणो के नाखून मे मुखदेखों, या खड्‌गरूप दर्पण में मुखदेखों। ये कठोर वचन रावण के दूत ने बाली से कहे। तब बाली का व्याध्रविलंबी नाम के सुभट ने कहा। रे कुदूत! नीच पुरुष तू ऐसे अज्ञान के वचन कहता है, सो तुझे अशुभग्रह लगे हैं। सम्पूर्ण पृथ्वी में प्रसिद्ध हैं पराक्रम और गुण, ऐसा बालीराजा देव, तेरे कुराक्षस रावण ने अब तक कानों से सुना नहीं क्या? ऐसा कहकर सुभट ने क्रोधायमान होकर दूतको मारने के लिये खड्‌ग लेने लगा। तब बाली ने मना किया। इस रकको मारने से क्या? यह तो अपने स्वामी के कहे प्रमाण वचन कहता है। तब दूत ने डरकर रावण के पास जाकर सब वृतान्त कहा। तब रावण महाक्रोध को प्राप्त हुआ। रावण ने बड़ी सेना सहित बखतर पहन शीघ्रही युद्ध के लिए कूच किया। रावण का शरीर तेजोमय परमाणु से रचा गया। रावण

किंहकंधपुर पहुंचा। तब बाली संग्राम में प्रवीण, महाभयानक शब्द सुनकर, युद्ध के लिये बाहर निकलने का पुरुषार्थ किया। तब महाबुद्धिमान नीतिवान मंत्रियों ने कहा कि-हे देव! बिना प्रयोजन युद्ध करने से क्या? पहले अनेक योद्धा मान करके मरे, सो आप क्षमा करो, रावण की बडी सेना है उसकी ओर कोई देख नहीं सकता है। खड्ग, गदा, सैल, बाण इत्यादि अनेक आयुधों से सैना भरी है। अतः आप संग्राम के लिए मत जाओ। तब बाली ने कहा। अहो मंत्री! अपनी प्रशंसा करना योग्य नहीं, फिर भी मैं तुमको सत्य कहता हूँ। इस रावण को सेना सहित एक क्षणमात्र में बायें हाथ की हथेली से चूर करने मे समर्थ हूँ। परन्तु यह भोग क्षणभगुर है इनके कारण हिंसा का कार्य क्यो करना। जब क्रोधरूपी अग्नि से, मन प्रज्वलित हो तब खोटे कर्म होते है। यह जगत के भोग केले के थंभ समान असार है। उनको पाकर अज्ञानीजीव नरक में गिरते हैं। नरक महादु:खों से भरा है। सभीजीव अपना जीवन चाहते हैं कोई जीवोंको मारकर इन्द्रिय भोगों के सुख प्राप्त करते हैं, वह जीव संसाररूपी समुद्र में दुख भोगते इन्द्रिय सुख साक्षात् दु:ख ही है। श्रीजिनेन्द्रदेव के चरण युगल ही संसार से तारने वाले है, उनको छोडकर, अन्यको नमस्कार कैसे करूँ। मैंने तो पहले से ही ऐसी प्रतिज्ञा की है, कि सच्चेदेवशास्त्रगुरु को छोड कर अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूगा। इसीलिये मैं अपनी प्रतिज्ञा भंग भी नहीं करूंगा, और युद्ध से प्रणियों का घात भी नहीं करूँगा, अतः मुक्ति की देनेवाली, सर्व परिग्रह रहित दिगम्बर दीक्षा को धारण करूगा। मेरे ये हाथ श्रीजिनराज की पूजा करते, दान देते प्राणियों की रक्षा करते, ये मेरेहाथ कैसे किसीको प्रणाम करेगे। और जो हाथों को जोड़कर दुसरो का नौकर होकर रहे, उसका ऐश्वर्य और जीवन कहाँ? वह तो दीन है, ऐसा कहकर सुग्रीव को बुलाया और आज्ञा की, कि-हे बालक! सुनो, तुम रावणको नमस्कार करो या नहीं करो, अपनी बहन उन्हें देओ अथवा नहीं देओ, मेरे कोई प्रयोजन नहीं। मै संसार शरीर भोगों से विरक्त हुआ, तुमको जो रुची हो वह करो। ऐसा कहकर, सुग्रीव को राज्य देकर, आप गुणों में श्रेष्ठ श्रीगगनचन्द्र मुनि के पास जाकर दिगम्बरी दीक्षा धारण की। अपना मन ध्यान में लगाया। ऐसे बाली योद्धा परमऋषि होकर आत्म स्वरूप में लीन हुये। निर्मल सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र में तत्पर बारह भावना का निरन्तर चितवन करते हुये, आत्मानुभव मे मग्न, होकर मोहजाल से रहित, स्वगुण भूमिपर विहार करते रहे। बालीमुनि पिता के समान सब जीवोंपर दयालु अन्तरंग बहिरंग तपसे कर्मोंकी निर्जरा करते रहे। वे

शांतबुद्धी, तपोनिधि, महाऋद्धियों के धारी। पुण्यकारी हैं दर्शन जिनका, ऊँचे ऊँचे गुणस्थान रूपी सीडियोंपर चढ़ने में पुरुषार्थी हुये। बहिरंग व अन्तरंग परिग्रह रहित जिनागम द्वारा कृत्य अकृत्य को जानते हैं, महागुणवान, महातपस्वी संवर से युक्त कर्मों के समूह को नाश करते रहे। प्राणों की रक्षा के लिये, आगम प्रमाण आहार लेते हैं। प्राणों को रत्नत्रयरूपी धर्म की साधना के लिये रखा हैं, और रत्नत्रयरूपी धर्म मोक्ष के लिये प्राप्त किया। बाली मुनि अपनी तपस्या में लीन हैं। तब सुग्रीव ने, अपनी बहिन का विवाह रावण से कराकर आज्ञा प्रमाण किहकंधपुर का राज्य करते रहे।

पृथ्वीपर जो जो विद्याधरो की रूपवान कन्यायें थी, रावण ने उन सब राजकुमारियों से बलपराक्रम पूर्वक विवाह किया। नित्यालोक नगर में राजा नित्यालोक, रानी श्रीदेवी, उनकी पुत्री रत्नावली से विवाहकर, रावण लंका में आ रहे थे। सो मार्ग मे कैलाशपर्वत के ऊपर आकर निकले। तो पुष्पकविमान वहाँके जिनमन्दिरों के प्रभाव से एवं बाली मुनि की तपस्या से आगे चल नहीं सका, विमानरूक गया। कैसाहैविमान? मन के वेग समान चंचल है, जैसे—सुमेरु के तटको प्राप्तकर वायुमडल रूक जाय, ऐसे विमान रूकगया। विमान के घंटों का शब्द रूक गया तब रावण विमान को रूका देख, मारीच मंत्री से पूछा कि यह विमान किस कारण से रूक गया। तब मारीच, बुद्धि में प्रवीण, उसने कहा कि-हे देव! सुनो, यह कैलाशपर्वत है, यहाँ कोई मुनि कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यान कर रहे है, शिला के ऊपर रत्नके खभेसमान सूर्य के सन्मुख ग्रीष्मकाल में आतापन योग धारण किया है। अपनी तपरूपी कांति से सूर्य की कांति को जीत लिया है। ऐसे यह महामुनि धीरवीर महाघोर वीर तप को प्राप्त किया है। शीघ्र ही मोक्ष जाना चाहते हैं। इसीलिये नीचे उतरकर दर्शन का पुण्य लेकर आगे चलो, तथा विमान को पीछेकर कैलाशपर्वत को छोडकर अन्य मार्ग से चलो, और कदाचित्त हटपूर्वक कैलाशपर्वत के ऊपर होकर चलेगें तो विमान के खड खंड हो जायेगें। यह मारीच के वचन सुनकर राजा यम को जीतने वाला, अपने मान से युक्त होकर कैलाश पर्वत को देखता रहा। कैसाहैकैलाशपर्वत? नानाप्रकार के धातुओं से भरा, अनेकप्रकार के सुवर्ण की रचना से मनोज्ञ पद पंक्तियों से युक्त, ऊँचे, नीचे, तीखे, शिखरों के समूह से शोभायमान, जल के झरनों से युक्त, अनेक प्रकार के वृक्षों से भरा, छहों ऋतुओं के फल फूलों से सुशोभित हैं। अनेकजाति के जीव विचरण करते हैं, अनेक औषधियों से मनोहर है, कोई सिंह गुफाओं में

सोये है, कहींपर अजगरके श्वांस से वृक्षहिल रहे है, कहींपर हिरण विचरण कर रहे है, कहीं हाथियों के समूह भ्रमण कर रहे है। कहीं कमलों से युक्त सरोवर हैं, कहीं बन्दरों के समूह वृक्षो की शाखाओ पर क्रीडा कर रहे हैं। कहीं चन्दन के वृक्षों की सुगन्ध हो रही है। कहीं सूर्य समान ज्योतिरूप शिखरों का उद्योत आकाश में हो रहा है। ऐसा कैलाश पर्वत देख रावण विमान से नीचे उतरे, वहॉ ध्यानरूपी समुद्र में मग्न अपने शरीर के तेज से दशो दिशाओं में प्रकाश किया है, ऐसे बाली महा मुनिराज को देखा। हाथी की सूडसमान दोनो भुजाये लटकाकर कायोत्सर्ग ध्यान मे खडे। शरीरपर सर्प लिपट रहे हैं, मानों चन्दन के वृक्ष ही हैं, सूर्य की किरणो की उष्णता से गर्म शिलापर निश्चल खडे हैं, प्राणियों को ऐसा लगता है जैसे पाषाण का खभा ही है। रावण बालीमुनि को देखकर पूर्व बैरको यादकर, पापी, क्रोधरूपी अग्नि से भभक गया, भोंहे चढाकर होट डसता हुआ कठोर शब्द मुनि को कहता है। अहो यह कहॉ तप तेरा, जो अब भी अभिमान नहीं छूटा। मेरा विमान चलता हुआ रोका, कहॉ उत्तम क्षमारूपी वीतराग का धर्म और कहॉ पापरूपी क्रोध, तू वृथा करता है, अमृत और विष को एक करना चाहता है। इसीलिये मै तेरा अभिमान दूर करूँगा। तेरे सहित कैलाश पर्वत को उखाडकर समुद्र मे फेक दूगा। ऐसे कटु वचन, कहकर रावण ने विकराल भयंकर रूप बनाया। जो विद्या साधी है उनकी अधिष्ठाता देवी चिन्तवन मात्र से आकर खडी हो गई। उस विद्याबल के कारण रावण ने महारूप बनाकर धरती को भेद पर्वत के नीचे पाताल मे घुस गया। रावण महा पाप कार्य मे उद्यमी हो प्रचंड क्रोधसे लाल नेत्रकर हूँकार शब्द से भयंकर गर्जनाकर भुजाओं से कैलाशपर्वत को उखाडने का पुरुषार्थ किया। तब सिंह, हाथी, सर्प, हिरण आदि अनेकजीव, अनेकजाति के पक्षी, भय से कोलाहल शब्द करने लगे। जल के झरने टूटकर जल गिरने लगा, वृक्षो के समूह फट गये, पर्वतों की शिलायें एवं पाषाण गिर गये। उनके विकराल शब्दों से दशों दिशायें और कैलाशपर्वत चलायमान हुआ। जो देव क्रीडा कर रहे थे, वे आश्चर्य को प्राप्त हुये चारों तरफ देखते रहे। जो अप्सरायें लताओं के मंडप में क्रीडा कर रही थी, वह लताओं को छोड आकाश में गमनकर गई। भगवान बाली मुनिराज ने रावण का खोटा कार्य जान आप स्वयं धीरवीर क्रोधरहित कुछभी खेद नहीं माना, जैसे निश्चल खडे थे वैसे ही खडे रहे। चित्तमें ऐसा विचार किया कि इस पर्वतपर भगवान के चैत्यालय अतिऊँचेऊँचे महासुन्दर शोभायमान रत्न मई भरतचक्रवर्ती ने बनवाये हैं, जहाँ

निरन्तर भक्ति से युक्त सुर-असुर विद्याधर पूजा को आते हैं, सो इसपर्वत को कंपायमान होने से सर्व चैत्यालयों का नाश एवं खंडन मंडन हो जायेंगे, और अनेक जीव विचरण करते है उनको बाधा न हो एव चैत्यालयों की रक्षा हो, ऐसा विचारकर अपने पैर का अंगुठा हलका सा दबाया, तब रावण महाभार से युक्त होकर दब गया, और विकराल रूप जो विद्या से बनाया था वह भी नष्ट हुआ, महादुख से व्याकुल हुआ, नेत्रो से रक्त बहने लगा, मुकुट टूट गया, पसीने से माथा भीग गया, पर्वत दब गया, सो रावण के घुटने एवं जंघा छिल गई, रावण तत्काल पसीने से भीग गया, धरती गीली हो गई। रावण कछुवे समान हो गया, रोने लगा, इसी कारण से पृथ्वीपर रावण कहलाया। पहले अबतक दशानन नाम था, रोने के कारण रावण नाम पडा। इसका अत्यन्त दीन शब्द सुनकर इनकी रानियॉ विलाप करने लगी। और मत्री, सेनापति आदि सब सुभट पहले तो युद्ध करने तैयार हुये, पीछे मुनि का अतिशय जान सबने आयुध डाल दिये। मुनि के कायबल ऋद्धि के प्रभाव से देवदुदभी बाजे बजने लगे और कल्पवृक्षों के फूलों की वर्षा हुई, भ्रमर गूजने लगे, आकाश मे देव देवॉगना नृत्य करने लगे। गीतों की ध्वनी हुई। तब महामुनि परम दयालु ने अपना अंगूठा ढीला किया।

रावण पर्वत के नीचे से निकल बाली मुनिराज के समीप आकर नमस्कार कर क्षमा मॉगी। और तप का बल जान योगीश्वर की बारम्बार स्तुति करता है, हे नाथ! आपने घर मे ही यह प्रतिज्ञा की थी कि मैं जिनेन्द्र भगवान्, मुनिद्र एव जिनागम को छोड अन्य को नमस्कार नहीं करूँगा। यह सब आपकी श्रद्धा का ही फल है। अहो! धन्य है निश्चय आपका, धन्यहैतप का बल। हे भगवान! आप योगशक्ति से तीनलोक को परिवर्तन करने में समर्थ हो, उत्तमक्षमा धर्मके योगसे, आप परम दयालु हो, किसीपर भी क्रोध नहीं है। हे प्रभो! तप के प्रभाव से मुनिराज को बिना प्रयत्न के ही सब ऋद्धियॉ प्राप्त होती है, ऐसे इन्द्रादिकों को नहीं। धन्यगुण आपके, धन्य रूप आपका, धन्य ज्योति आपकी, धन्य बल आपका, धन्य अद्‌भुत दीप्ति आपकी, अनुपम शील, अनुपमतप, तीनलोक मे अद्‌भुत परमाणु है, उन परमाणुओं से आपका शरीर बना है। जन्म से ही महाबली सर्व शक्तिमान, युवावस्था में जगत की माया को छोडकर परमशांति स्वरूप जो अरहन्त की दीक्षा वह आपने प्राप्त की, यह अद्‌भुत कार्य आप समान महापुरुष ही करते हैं। मेरे जैसे पापी ने आप समान महापुरुषों का अविनय किया, सो महापाप का बन्ध किया। धिक्कार मेरे मन वचन कायको, मैं पापी, मुनि द्रोही

अपको मारने का कार्य किया। जिनमन्दिरो का अविनय हुआ, आप समान महापुरुष रत्न, और मुझ समान दुर्बुद्धि, सो सुमेरु ओर सरसों के बराबर है। मुझे मरते हुये को आज आपने प्राण दान दिये। आप दयालु हमारे समान दुष्ट दुर्जन, उनपर भी आप क्षमा करते हो। इसके समान और क्या होगा। मैं जिनशासन को सुनता हूँ, जानता हूँ, देखता हूँ, यह ससार असार दुखरूप है, तो भी मैं पापी विषयों से वैराग्य को प्राप्त नहीं हुआ। धन्य हैं वे महापुरुष पुण्यवान अल्प संसारी, मोक्ष के पात्र, बाल अवस्था में ही विषयों को छोड मोक्ष का मार्ग मुनिव्रत धारे। इसप्रकार मुनि की स्तुतिकर, तीन प्रदक्षिणा देकर नमस्कार कर, अपनी निन्दाकर बहुत लज्जावान होकर मुनिराज के निकट ही, जो जिनमन्दिर थे, वहाँ वन्दना करने के लिये गये। चन्द्रहास खड्ग को पृथ्वीपर रख अपनी रानियों सहित जिनेन्द्र भगवान की स्तुति एव पूजा की। भक्ति करते समय अपनी भुजा मे से नसरूपी तार निकालकर वीणा समान बजाता रहा, पूर्ण भक्ति भाव सहित स्तुति कर जिनेन्द्र भगवान के गुणानुवाद गाया। हे देवाधिदेव! तीनलोक को देखनेवाले आपको नमस्कार हो। हे कृतार्थ। महात्मा नमस्कार हो, तीनलोक के प्राणियों से पूज्य, मोह नाशक, वचन से अगोचर सम्पूर्ण गुणों को धारण करने वाले, महाऐश्वर्य के धारी, मोक्ष मार्ग के उपदेशक पूर्ण सुख को प्राप्त करनेवाले, समस्त कुमार्ग से दूर, जीवन के भुक्ति, मुक्ति के कारण, महाकल्याण के मूल, सर्वकर्म नाशक, जन्म मरण को दूर करनेवाले, सबके गुरु, आपके कोई गुरु नहीं, आप किसीको नमन नहीं करते, सबसे नमस्कार कराने योग्य। आदि अन्त रहित, परमार्थ के ज्ञाता, आपको केवली बिना अन्य कोई न जान सके, सर्ब रागादि दोषों से रहित द्रव्यार्थिक नयसे सब नित्य हैं पर्यार्थिक नयसे सब अनित्य हैं। ऐसा कथन करने वाले, अनेकान्त जिनेश्वर सर्वरूप, एकरूप, विद्रूप, अरुप, जीवन से मुक्ति को देने वाले, ऐसे हैं प्रभु! आपको हमारा बारबार नमस्कार हो।

श्रीऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस, वासुपुज्य भगवान को मेरा बारम्बार नमस्कार हो। प्राप्त किया है आत्मज्ञान जिन्होंने ऐसे, विमल, अनन्त, धर्म, शांतिनाथ भगवान को मेरा नमस्कार हो। निरन्तर सुखों के मूल शांति के कर्त्ता। श्रीकुन्थु, अर, मल्लि मुनिसुव्रत भगवान को मेरा नमस्कार हो। जो महाव्रतों के देने वाले हैं। और अब जो आगे होवेंगे नमि, नेमि, पार्श्वनाथ, वर्द्धमान स्वामी को हमारा नमस्कार हो। और जो पद्मनाभि आदि भविष्य में चौबीस तीर्थंकर होंगे, उनको एवं निर्वाण

आदि भूतकाल में चौबीस तीर्थंकर हो गये, उनको मेरा नमस्कार हो, सर्व साधुओं को अर सर्व सिद्धों को हमेशा हमारा नमस्कार हो। कैसेहैसिद्धप्रभु? केवलज्ञान केवलदर्शन रूप क्षायिकसम्यक्त्व आदि अनन्त गुणरूप है। यह पवित्र स्तुति लंका के स्वामी ने की।

रावण द्वारा जिनेन्द्र भगवान की स्तुति करने से धरणेन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ, तब अवधिज्ञान से रावण को स्तुति करते हुये जान, हर्ष से फूले हैं नेत्र जिनके, सुन्दर है मुख जिनका, ऐसे नागो के राजा पाताल से शीघ्र ही कैलाशपर्वत पर आये। जिनेन्द्र प्रभु को नमस्कार कर भगवान की दिव्यद्रव्यो से पूजाकी और रावण से कहने लगे। हे भव्य! तुमने भगवान की स्तुती भाव सहित की, और लय सहित सुन्दर स्तवन, स्तोत्र किये। सो आपकी मधुरध्वनी से हमारा मन अतिहर्षित एव आनन्दित हुआ। हे राक्षेश्वर! तुम धन्य हो, जो जिनराज की स्तुतिकर मुझे हिला दिया, ऐसी तेरी भक्तिसे अभी हमारा आगमन हुआ, मै तेरे से सन्तुष्ट हुआ। तू वर मांग जो मनोवांछित वस्तु मांगों, वह ही मै तुम्हे दूंगा। जो वस्तु मनुष्यो को दुर्लभ है वो मै आपको दूँ। तब रावण ने कहा—हे नागो के राजा! जिनवन्दना समान और क्या शुभ वस्तु है, वह मैं आपसे मांगुँ। आप सब बातों मे समर्थ हैं। मनवाछित वस्तु देने लायक है। तब नागपति बोले, हे रावण! जिनेन्द्र की भक्ति समान और कोई कल्याणकारी वस्तु नहीं, यह जिनेन्द्र भक्ति ही मुक्ति के सुख को देने वाली है, इसीलिये भक्ति समान और कोई पदार्थ न हुआ न होगा, तब रावणने कहा। हे महामते! अगर इससे कोई अधिक वस्तु नहीं है, तो मैं आपसे क्या मार्गूं। तब नागेन्द्र बोले तुमने जो कहा सो सब सत्य है, जिनेन्द्र की भक्ति से सब कुछ सिद्ध होता है, उसको कोई वस्तु कठिन नहीं। तेरे समान एव मेरे समान और इन्द्रसमान आदि अनेकपद सर्व जिनभक्ति से ही प्राप्त होते हैं। और ये संसार के सुख अल्प हैं विनाशिक हैं, इनकी क्या बात, मोक्ष के अविनाशी जो अतिन्द्रिय सुख है वो भी प्रभु की भक्ति से प्राप्त होते हैं। हे रावण! तुम अत्यन्त त्यागी हो, महाविनयवान, बलवान, ऐश्वर्य वान हो, गुणो से सुशोभित हो, फिर भी मेरा आना यहाँ व्यर्थ ना हो इसीलिये मै तेरे से प्रार्थना करता हूँ की तुम कुछ माँगों। यह मैं जानता हूँ, तुम याचक नहीं परन्तु मै अमोधविजया नाम की शक्ति (विद्या) तुमको देता हूँ, सो हे लंकेश! तुम ग्रहणकरो, हमारा स्नेह खंडन मतकरो। हे रावण! किसी की दशा हमेशा एक जैसीनहीं रहती। सम्पति के बाद विपत्ति और विपत्ति के बाद सम्पत्ति होती है। जो कदाचित् तुम्हारा मनुष्य शरीर है और

तुमपर कभी विपत्ति या संकट आये तो यह शक्ति, तेरे शत्रु को नाश करनेवाली और तेरी रक्षा करनेवाली होगी। मनुष्यों की क्या बात इससे देव भी डरते हैं। यह शक्ति अग्नि ज्वालाओं से मंडित, विस्तीर्ण शक्ति को धारण करनेवाली है, तब रावणने धरणेन्द्रकी आज्ञा का उल्लघन करने मे असमर्थ होकर शक्ति को ग्रहण किया। क्योकि किसी से कुछ लेना अत्यन्त लघुता है, इसीलिये रावण इस बातसे प्रसन्न नहीं हुआ, रावण अतिउदार चित्त है। तब धरणेन्द्र को रावण ने हाथजोड नमस्कार किया। तब धरणेन्द्र अपने स्थान को गये। रावण एकमास पर्यन्त कैलाशपर्वत पर रहकर भगवान के चैत्यालयो की महाभक्ति से पूजाकर और बाली मुनिराज की स्तुति कर अपने स्थान गये। तब बाली मुनि के जो कुछ मन में क्षोभ से पाप कर्म उत्पन्न हुआ था, वह गुरुओ के निकट जाकर प्रायश्चित लेकर शल्य दूरकर परमसुखी हुये। जैसे—विष्णुकुमार मुनि ने मुनियो की रक्षा के लिये बाली का पराभव किया, और गुरु से प्रायश्चित ले सुखी हुये थे। ऐसे ही बाली मुनि ने चैत्यालयों की एवं अनेक जीवों की रक्षा के लिये रावण का पराभवकर आपने कैलाशपर्वत की रक्षा की, फिर गुरु से प्रायश्चित लेकर शल्य दूरकर हर्षित हुये। चारित्र, गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, समिति, ओर परिषहो को सहने से महासंवर पूर्वक कर्मोकी निर्जरा करते हुये, बाली मुनिने केवलज्ञान प्राप्त किया, अष्टकर्मो से रहित होकर लोक के शिखर, अविनाशी स्थान मे अविनाशी अनुपम, मोक्षसुख को प्राप्त हुये। और रावण ने मन मे सोचा कि जो इन्द्रियों को जीते उनको मै जीतने मे समर्थ नहीं, इसीलिये राजाओ को साधुओ की सेवा करना ही योग्य है। ऐसाजान साधुओ की सेवा मे तत्पर हुआ। सम्यग्दर्शन से ग्गहेत, जिनेश्वर मे दृढ है भक्ति जिसकी, काम भोग मे अतृप्त यथा योग्य इष्ट सुखो को भोगता रहा।

यह बाली का चरित्र पुण्याधिकारी जीव भावपूर्वक, भलिभांति, पढता है, सुनता है, वह कभी भी अपमानको प्राप्त नहीं होता, और सूर्य समान प्रकाश को प्राप्त होता है। एवं सभी शत्रु भी शातभाव को प्राप्त होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे बाली मुनि का वर्णन करनेवाला नवमापर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-10

राजा सुग्रीव और रानी सुतारा का वृतान्त

अथानंतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं—हे श्रेणिक! यह बाली का चरित्र तुझे कहा, अब सुग्रीव व सुतारा रानी का वृतान्त कहता हूँ। तुम सुनो—ज्योतिपुर नगरका राजा अग्निशिखा, उनकी पुत्री सुतारा, जो सम्पूर्ण स्त्री के गुणों से पूर्ण, पृथ्वीपर रूपगुणो की शोभा से प्रसिद्ध मानों कमलों का निवास छोड साक्षात लक्ष्मी ही आई है। और राजा चक्राक रानी अनुमती, उनका पुत्र साहसगति, महादुष्ट एकदिन अपनी इच्छा से, भ्रमण करता था तब उसने सुतारा देखी। सुतारा को देखकर कामवासना से अत्यन्त दुखी हुआ। निरन्तर सुतारा का मन मे ध्यान करता, पागलपन की है दशा जिसकी, उसने दूत भेजकर सुतारा की याचना की, और सुग्रीव भी बार बार सुतारा की याचना करता था। तब राजा अग्निशिखा सुतारा का पिता सकट मे पड गया कि कन्या का विवाह किसके साथ करना चाहिये। तब महाज्ञानी मुनि से पूछा, मुनिचन्द्र ने कहा कि, साहसगति की अल्प आयु है और सुग्रीव की दीर्घ आयु है। तब अमृत समान मुनि के वचन सुनकर राजा अग्निशिखा सुग्रीव को दींघायु वालाजान अपनी राजकुमारी का सुग्रीव के साथ पाणिग्रहण कराया। सुग्रीव का पुण्य विशेष है, जो सुतारा से विवाह हुआ। तत् पश्चात् सुग्रीव और सुतारा के अग और अंगद ये दो पुत्र हुये। और वह पापी साहसगति निर्लज्ज सुतारा की आशा छोडे नहीं। धिक्कार है इसकाम चेष्टा को कामाग्नि से दग्ध मन मे ऐसा निरन्तर सोचे कि वह सुख दायिनी कैसे मुझे प्राप्त हो। ऐसा चिन्तन करता हुआ रूप परिवर्तिनी शेमुषि, नाम की विद्या को सिद्ध करने के लिये, हिमवन्त पर्वतपर जाकर अत्यन्त विषम गुफा में जाकर बैठा। जैसे दुखी जीव प्यारेमित्रको याद करें। वैसे साहसगति विद्या सिद्ध करता रहा। रावण दिग्विजय करने को निकला, वन, पर्वत, पृथ्वी आदि की शोभा देखता हुआ सम्पूर्ण विद्याधरों के स्वामी अन्तरद्वीपों के वासियों को अपने वशमें किया। और उनको अपनी आज्ञा स्वीकार कराकर उनके देशों में ही उनको राज्य दिया। और विद्याधरों में सिंहसमान बडे बडे राजा महापराक्रमी रावण ने वश में किये। उनको पुत्रसमान जान बहुत प्रेम करता रहा। महापुरुषों

का यही धर्म है, कि नम्रतामात्र से ही प्रसन्न होते हैं राक्षसों के वंशमें या कपिवंशमे जो प्रचंड राजा थे वे सब वशमे किये। बडी सेना सहित आकाश के मार्ग गमन करता, उस दशमुख का तेज विद्याधर सहन करने में असमर्थ हुये। संध्याकाल सुवेल, हेमापूर्ण, सुयोधन, हसद्वीप, वारिहल्लादि द्वीपो के राजा विद्याधर नमस्कार कर भेंट लाकर राजा से मिले। तब रावण ने मधुर शब्दों से उसको सन्तोष दिया और बहुत सम्पदाओं के स्वामी बनाये, जो विद्याधर बडे बडे राज्य के निवासी थे वे रावण के चरणों में नमस्कारकर मिले। जो उत्तम वस्तुयें थी वह भेंट की। हे श्रेणिक! समस्त बलों में पुर्वोपाजित पुण्य का बल प्रबल है उसके कारण कौन वश में नहीं होता, पुण्य से सभीवश मे होते है।

अथानंतर रथनुपूर का राजा इन्द्र उसे जीतने के लिये रावण ने विहार किया, जहॉ पाताल लंका में खरदूषण रावण का बहनोई था वहॉ समीप जाकर विश्राम किया। रात्रि के समय में खरदूषण शयनकर रहा था। सो चन्द्रनखा रावण की बहिन ने जगाया। पाताल लका से निकल रावण के पास आया। रत्नों के अर्धसहित महाभक्ति से परमउत्साह पूर्वक रावणकी पूजा की। रावणने भी बहनोई के स्नेह से खरदूषण का बहुत सत्कार किया। जगत में बहन बहनोई समान अन्य कोई स्नेह का पात्र नहीं है। खरदूषण ने चौदह हजार विद्याधर मनवांछित अनेक रूप को धारण करनेवाले, रावण को दिखाये। रावण खरदूषण की सेना देख बहुत प्रसन्न हुये, और अपना सेनापति नियुक्त किया। कैसाहै खरदूषण? महाशूरवीर, अपने गुणों से सब सामन्तों का मन वश किया है। हिडंब, हैहिडिंब, विकट, त्रिजट, हेमाकूट, सुजर, टंक, किष्किधाधिपति, सुग्रीव तथा त्रिपुर, मलय, हेमपाल, कोल, बसुंदर इत्यादि अनेक राजा नाना प्रकार के वाहनोंपर चढे, नानाप्रकार के शस्त्र विद्या में प्रवीण, अनेक शस्त्रों के अभ्यासी, पाताल लंका से खरदूषण रावण के कटक में आये। जैसे पाताल लोक से असुरकुमारदेवों से युक्त चमरेंद्र आते हैं, इस प्रकार अनेक विद्याधर राजाओं के समूह से रावण का कटक पूर्ण हुआ। ऐसे एक हजार से अधिक अक्षौहिणी सेना रावणके पास हुई। एवं दिनदूनी सेना बढती ही जा रही है।। और हजार हजारदेव रत्नों की सेवा करते ऐसे महारत्न, गुणों के समूह, चंद्रकिरण समान उज्ज्वल चमर ढुरते है एवं सिरपर छत्र फिरते हैं महासुन्दररूप महाबाहु, महाबली पुष्पक विमान पर चढा सुमेरूसमान स्थिर, सूर्य समान ज्योति को धारण करने

वाला, अपने वाहनादि सपदा से युक्त, सूर्य को शरमाता हुआ , इंद्र को जीतने का मन में विचारकर रावण ने प्रयाण किया। आकाश को समुद्र समान करते हुये, शस्त्रों की कोलाहलता एवं हाथी, घोडे पयादों सहित जा रहे हैं। जैसे रावण का छत्र ही लहरे, चमर तरंगे हैं, व चमर के दण्डे ही मीन, विद्यायें ही रत्नों की ज्योति, है। हे श्रेणिक! रावणकी सेना समुद्र समान उसका वर्णन कहॉ तक करें। इसको देखकर देव भी डरते हैं तो मनुष्यों की क्या बात? इन्द्रजीत, मेघनाथ, कुंभकरण, विभीषण, खरदूषण, निकुम्भ, कुंभ, इत्यादि बहुत योद्धा रण में प्रवीण, प्रसिद्ध है विद्याये उनकी महाप्रकाशवत शस्त्र विद्याओं में महाप्रवीण। ऐसे अनेक राजा महासेनाओं से युक्त देवताओं की शोभा को जीतते हुये रावण के सग चले। विध्याचल पर्वत के समीप सूर्य अस्त हुआ, वहॉ सेना का निवास हुआ। विद्याके बलसे अनेक प्रकार के स्थान महल बनाये, रात्री के अन्धकार को दूर करता हुआ चन्द्रमा का उदय हुआ, मानो रावण के डर से रात्री में रत्नो का दीपक आया है। अनेक प्रकार की कथा करके एव निद्रा लेके सेना के लोगो ने रात्री पूर्ण की। प्रात काल के बाजे बजे, मगल पाठकर रावण जगे। प्रातःकाल की क्रिया की सूर्य का उदय हुआ। पुनः रावण नर्मदा के तटपर आये। जल को देख रावण बहुत प्रसन्न हुये। कहीं पानी का वेग तेजी से चल रहा है, कहीं मन्द रूप से, कहीं कुडलाकार बहता है, अनेक चेष्टाओ से पूर्ण नर्मदा नदी को देखकर रावण का मन कोतुकरूप हुआ एवं नदी के तीर खडे रहे। नदी भयानक भी है और सुन्दर भी है।

अथानंतर माहिष्मती नगरी का राजा सहस्ररश्मि पृथ्वीपर महा बलवान मानों पृथ्वी का सूर्य ही है। वह हजारो स्त्रीयो सहित नर्मदा नदी में क्रीडा कर रहा था, वहॉ रावण के कटक के ऊपर सहस्ररश्मि के जल यंत्र से नदी का बहाव आया। नदी के पुलपर अनेक प्रकार की क्रीडाये की। कोई स्त्री मानकर रही थी, उसको प्रसन्न करना, स्पर्श करना, प्रणाम, परस्पर जलक्रीडा, हास्य, पुष्पों के आभूषण, शृंगार इत्यादि अनेक मनोरंजन किये। मनोहर रूप की धारी, जैसी देवियों सहित इन्द्र क्रीडा करे, वैसे राजा सहस्त्ररश्मि ने रानियों के साथ क्रीडा की। रेत के ढेरों पर, नदी के पत्थरों पर, रत्न एवं मोतियो से युक्त स्वर्ण के आभूषण टूट कर गिर गये, वहभी नहीं उठाये। जैसे मुरझाई फूलों की माला को कोई नहीं उठाते। कोई रानी चन्दन के लेप से युक्त होकर जल में क्रीडा की, तो जल सफेद हो गया, कोई रानी केशर से लेपकर जल में क्रीडा करनेलगी तो वह जल स्वर्णके

समान पीतवर्णका हो गया। कोई रानीने पान के रंग से जलको लालकिया, कोई रानी ने, ऑखो का अंजन धोकर जलको श्याम कर दिया। सभी रानियों के आभूषणो के सुन्दर शब्द ही राजा के मनको मोहित करते थे। और नदीके जलके बहाव की तरफ रावण का कटक था सो रावण स्नानकर शुद्ध वस्त्रपहन अनेक प्रकार के आभूषणों से युक्त नदी के किनारे बालु का चबूतरा बनाकर उसके ऊपर वैडूर्य मणियो के दडो से मोतियो की झालर संयुक्त चदोवा लगाकर श्रीअर्हन्त भगवान की महा महाद्रव्यो से पूजा कर रहे थे, बहुत भक्ति से पवित्र स्तोत्रो को पढ स्तुतिकर रहे थे। तब सहस्त्ररश्मि के क्रीडाओ से जल का प्रवाह तेजी से आया, तब रावण के वहॉ पूजा मे विघ्न हुआ। रावण प्रतिमा जी को लेकर खडे हो गये और क्रोध से कहा, यह क्या हुआ तब सेवकों ने कहा कि-हे नाथ! यह कोई महाक्रीडावन्त पुरुष सुन्दर स्त्रीयों के साथ नानाप्रकार की जलमे क्रीडाकर रहा है और सामन्त लोग शस्त्रों को लेकर दूर दूर खडे है। अन्य राजाओ के सेना चाहिये, लेकिन उसके लिए सेना तो शोभा मात्र है। और उसका पुरुषार्थ ऐसा है जो अन्य स्थानपर दुर्लभ है। बडे बडे सामन्तो से भी उसका तेज सहा न जाए, जैसे स्वर्ग मे इन्द्र है परन्तु यह तो प्रत्यक्ष ही इन्द्र देखा। यह बात सुनकर रावण क्रोध को प्राप्त हुआ। भोहे चढ गई, आखें लाल हो गई, ढोल बाजने लगे, वीररस का राग होने लगा, घोडे हींसते है, गज गर्जते है, रावण ने अनेक राजाओ को आज्ञा की, यह सहस्त्ररश्मि दुष्टआत्मा है, इसे पकड लाओ। ऐसी आज्ञाकर स्वयं नदी के तटपर पूजा करने लगे। रत्न सुवर्ण के पुष्पों सहित सुन्दर द्रव्यो से पूजा की। विद्याधरो के राजा रावण की आज्ञा शिरोधार्यकर युद्धको चले, राजा सहस्त्ररश्मि ने, पर दल को आता देख स्त्रीयो से कहा तुम डरो मत साहस रखो। आप जलसे बाहर निकले, कलकलाहट शब्द सुनकर सेना आई जान महिष्मती नगरी के योद्धा सजकर हाथी, घोडे, रथो पर चढे। अनेकों आयुधो से युक्त सभी सामन्त राजा के पास आये, जैसे सम्मेदशिखर पर्वत का एकही काल छहऋतु का आश्रय करता हैं ऐसे सभी योद्धा तुरन्त ही राजा के पास आये। विद्याधरो की फौज आती हुई देख सहस्ररश्मि के योद्धा जीने की आशा छोडकर लडने को तैयार हुये। जब रावण के योद्धा युद्ध करने लगे, तब आकाश मे देवो की वाणी हुई कि अहो, यह बडी अनीति है ये भूमिगोचरी विद्याबल से रहित अल्प बलधारी, मायायुद्ध को नहीं जानते, इनसे विद्याधर महायुद्ध करें, यह

क्या योग्य हैं? और विद्याधर बहुत और यह भूमिगोचरी थोडे। ऐसे आकाश मे देवो के शब्द हुये तब जो विद्याधर सज्जन पुरुष थे उन्होने लज्जावान होकर युद्ध करना छोड दिया। दोनो सेनाओं मे परस्पर युद्ध हुआ। रथोसे रथ, हाथी, घोडे, पियादे, तलवार, बाण, गदा सेल इत्यादि रूपसे परस्पर युद्ध हुआ। अनेक मर गये, महायुद्ध हुआ, शस्त्रो के प्रहार से अग्नि उठी, सहस्त्ररश्मि की सेना रावण की सेना से कुछ दूर रही, तब सहस्रररश्मि रथपर चढकर युद्ध को आये। मुकुट मस्तकपर धारण किये, बखतर पहने, धनुष लेकर अतितेजी से आये। विद्याधर के बलको देखकर थोडा सा भी भय नहीं किया, तब स्वामी को तेजवत देख, सेना के लोग दूर गये थे, वो पुनः आगे आकर युद्ध करने लगे। ये रणधीर भूमिगोचरी राक्षसो की सेनापर ऐसे गये जैसे मस्तहाथी समुद्र में प्रवेश करे, और सहस्ररश्मि अतिक्रोध को करते हुए बाणों के समूह एवं शत्रुओं को हटाते रहे। तब द्वारपाल ने रावण से कहा हे देव! देखो इसने आपकी सेना हटाई है यह धनुष का धारी रथपर चढा जगत को तृणवत् देखता है। इनके बाणों से आपकी सेना एक योजन पीछे हटी है। तब रावण सहस्ररश्मि को देख त्रिलोकमडन हाथीपर चढा। रावण को देख शत्रु भी डरे रावण बाणो की वर्षा करता रहा, सहस्ररश्मि को रथ से रहित किया, तब सहस्ररश्मि हाथीपर चढकर रावण के सन्मुख आया। और बाण छोडे सो रावण के बखतर को छेद कर शरीर मे चुभे तब रावणने बाण शरीर से निकाल दिये, सहस्ररश्मि ने हंसकर रावण से कहा, अहो रावण! तू बडा धनूष धारी कहलाता है, ऐसी विद्या कहॉ से सीखी, तुझे कौन गुरु मिला, पहले धनुष विद्या सीख फिर हमसे युद्धकर, ऐसे कटु शब्द सुन, रावण को क्रोध उत्पन्न हुआ, सहस्ररश्मि के बालो मे भाला मारा, तब सहस्ररश्मि के रुधिर की धारा बह चली, आंखें धूमने लगी, मूर्च्छा आ गई, कुछ क्षण पश्चात् सचेत होकर आयुध पकडने लगा, तब रावण उछलकर सहस्ररश्मि के पास आया, और जीवता पकड लिया, एवं बाधकर अपने स्थान ले आया।

यह देख सब विद्याधर आश्चर्य को प्राप्त हुये कि सहस्ररश्मि जैसे योद्धा को रावण ने पकडा। कैसाहै रावण? धनपति यक्षको जीतने वाले, यमके मान को मर्दन करनेवाले, कैलाशपर्वत को उठाने वाला। सहस्ररश्मि का यह वृतान्त देख सूर्य भी भय से अस्ताचल को प्राप्त हुआ, रात्रि का समय हुआ। अच्छा बुरा कोई नजर नहीं आ रहा है, युद्ध मे जो योद्धा घायल हुये थे उनका वैद्यों से इलाज

कराया, और जो मर गये थे उनको उनके परिवार के लोग रणक्षेत्र से ले गये, उनका दाह संस्कार किया। रात्री व्यतीत हुई प्रातःकाल के बाजे बजने लगे, तब सहस्ररश्मि का पिता राजा शतबाहु जो मुनिराज हुये थे, उनको जघाचारणऋद्धि प्राप्त थी, वे महातपस्वी चन्द्रमा के समान कातिवान सूर्यसमान दीप्तिवान, मेरुसमान स्थिर, समुद्रसमान गम्भीर, ऐसे मुनिराज सहस्ररश्मि को पकडा सुनकर जीव दया के रक्षक, शात चित्त, जिनधर्मी जान, रावण के पास आये, रावण मुनि को आते देख उठकर सामने जाकर चरणों मे झुककर, भुमिपर मस्तक लगाकर नमस्कार किया। मुनि को काष्ठ के सिहासनपर विराजमानकर रावण हाथ जोडकर भूमिपर बैठे। अतिविनय सहित मुनि से कहते है, हे भगवन! कृपानिधान! आप कृत्यकृत्य, आपका दर्शन इन्द्रादि देवों को दुर्लभ है आपका आगमन ने मेरे मन को पवित्र किया। तब मुनि इनको शलाका पुरुष जान प्रशसा कर कहते हैं, हे दशमुख! तू बडा कुलवान विभूतिवान देव गुरु धर्म मे भक्ति भाव युक्त है। हे दीर्घायु! शूरवीर, क्षत्रीयो की यही रीति है, जो आपसे लडे उसका पराभव कर उसे वश करें। ऐसे तुम महाबाहु परमक्षत्री हो, तुमसे लडने को कौन समर्थ हैं, अब दयाकर सहस्ररश्मि को छोडो। तब रावण मंत्रीयो सहित मुनि को नमस्कार कर कहते है, हे नाथ! मैं विद्याधर राजाओ को वश करने जा रहा हूँ, लक्ष्मी से उन्मत्त रथनूपुर का राजा इन्द्र उसने मेरे बाबा राजामाली को युद्ध में मारा है, उससे हमारा द्वेष है, मैं इन्द्र के पास जा रहा था, मार्ग मे नर्मदा नदीके तटपर बालूके चबूतरे पर भगवान की पूजाकर रहा था, इसने उपहास किया और जल यत्रो की क्रीडा की, सो जलका वेग निकलकर आया। इससे मेरी पूजा में विघ्न हुआ, इसीलिये यह कार्य किया, बिना अपराध से मैं द्वेष नहीं करता। और मै इनके पास गया तब भी क्षमा नहीं मॉगी, प्रमाद से बिना जाने मेरे से यह कार्य हुआ है तुम क्षमा करो, यह नहीं कहा, उल्टा मान के कारण, मेरे से युद्ध करनेलगा और कटूवचन कहे। मैं भूमिगोचरी मनुष्यों को जीतने में समर्थ नहीं हूँ तो विद्याधरों को कैसे जीतूँ। कैसे हैं विद्याधर? अनेक प्रकार की विद्याओ से महापराक्रमी। इसीलिये जो भूमिगोचरी मानी हैं, उनको पहले वश करूँ, पश्चात् विद्याधरों को, क्रम से सीढियाँ चढ़कर मन्दिर में जाए, ऐसे इनको वश किया अब छोडना ही न्याय है, फिर आपकी आज्ञा समान ओर क्या? कैसे हैं आप? महावीतरागी वैरागी, तपस्वीसाधु, महापुण्य के उदय से आपके दर्शन होतें हैं।

ऐसे वचन रावण के सुन इन्द्रजीत ने कहा। हे नाथ! आपने बहुत योग्य वचन कहें। तब रावण ने मारीच मंत्री को आज्ञा की कि सहस्ररश्मि को छोडकर ले आओ। सहस्त्ररश्मि अपने पिता जो मुनि उनको नमस्कार कर बैठ गया। रावण ने सहस्ररश्मि का बहुत सत्कार कर बहुत प्रसन्नता से कहा, हे महाबल! जैसे हम तीनों भाई वैसे चौथा तुम। तेरी सहायता से मैं रथनूपुर का राजा इन्द्र को जीतूँगा। और मेरी राणी मन्दोदरी उसकी छोटी बहिन स्वयंप्रभा उससे तेरा विवाह कराऊँगा। तब सहस्ररश्मि बोले धिक्कार है इस राज्य को इन्द्रधनुष समान क्षष्पभंगुर है, इन विषयों को धिक्कार है, जो देखने मात्र मनोज्ञ है। महादुख रूप है, और स्वर्ग को धिक्कार जो अव्रत असयम रूप है, और मुझे धिक्कार है, इतने समय तक विषयों में आसक्त होकर कामादिक भोगों में रहा अब मे ऐसा कार्य करूँ, जिससे पुनः ससार में भ्रमण नहीं करना पडे। अत्यन्त दुखरूप जो चारोगति उनमें मैने भ्रमण किया। अब संसार सागर मे मेरा पतन न हो वह कार्य करूँगा। तब रावण कहने लगा, यह मुनि का व्रत वृद्धो को शोभनीय है। हे भव्य! तू तो अभी बालयोवन है। सहस्ररश्मि ने कहा, काल के यह विवेक नहीं जो वृद्धों का ही मरण हो और जवानो को नहीं, काल सर्वभक्षी है। बाल, वृद्ध, युवा सबको ही खा जाता है। जैसे मेघ क्षणमात्र मे नष्ट हो जाय, ऐसे यह शरीर नष्ट होता है। हे रावण! जो इनभोगो को छोड योगको धारण किया यही सार है। ऐसा कहकर अपने पुत्र को राज्य देकर, रावण से क्षमा याचनाकर पिता के निकट जिन दीक्षा को धारण किया। और राजा अरण्य अयोध्या का स्वामी सहस्ररश्मि का परममित्र है उनसे पहले वचन था कि हम पहले दीक्षा लेंगें, तो आपको खबर करेंगे। और उन्होने भी कहा था कि हम दीक्षा लेगें, तो तुम्हें खबर करेंगें। तब उनके पास वैराग्य के समाचार भेजे। राजा सहस्ररश्मि का वैराग्य सुन राजा अरण्य, सहस्ररश्मि के गुण स्मरणकर ऑसूभर दुख किया और विषाद को छोड अपने समीपवर्ती लोगों से कहा जो रावण शत्रु का वेश बनाकर सहस्ररश्मि का परममित्र हुआ जो ऐश्वर्य के पिंजरे में राजा रूक रहे थे, विषयों से मोहित थे, सो पींजरे से निकाला। यह मनुष्यरूपी पक्षी, मायाजाल रूपी पींजरे में फंसा है, सो परम हितु मित्र ही छुडाते हैं। माहिष्मती नगरी का स्वामी राजा सहस्ररश्मि धन्य है, जो रावण रूप जहाज को प्राप्तकर संसार रूपी समुद्र को तिरेगा। अत्यन्त दुःख को देने वाला जो राज काज महापाप को छोड़कर जिनराज का व्रत लेने

को तैयार हुआ। इसप्रकार मित्र की प्रशसाकर आपभी छोटे पुत्र को राज्य देकर बडे पुत्र सहित राजा अरण्य मुनी बने। हे श्रेणिक! कोई महान पुण्य का उदय आता है तब शत्रु एव मित्र का कारण प्राप्तकर जीव को कल्याण करने की भावना होती है। पापकर्म के उदय से खोटी बुद्धि होती है। जो कोई प्राणी को धर्ममार्ग में लगाते हैं, वो ही परम मित्र है। और भोग सामग्री में लगाते वो महाशत्रु है। हे श्रोणिक! जो भव्य जीव यह राजा सहस्ररश्मि की कथा भाव पूर्वक पढे सुने वह मुनिव्रत रूपी सम्पदा को प्राप्तकर परमनिर्मल सर्वसुख को प्राप्त करता है। जैसे सूर्य के प्रकाश से अन्धकार नष्ट हो जाए। ऐसे जिनवाणी के प्रकाश से मोहरूपी अधेरा नष्ट हो जाता है। मानव को आत्मकल्याण करने की भावना होना ही दुर्लभ हैं, और भावना होने के पश्चात् भी चारित्र को धारण करना महादुर्लभ है और चारित्र को धारणकर निर्दोष पालन करना महादुर्लभ है इसलिये जो महापुरुष चारित्र को धारणकर निर्दोष महाव्रतो का पालन करते हुये ध्यान रूपी अग्नि से अष्टकर्मो का नाशकर अविनाशी मोक्ष सुख प्राप्त करते है। महाव्रतरूपी संयम ही मुक्ति को प्राप्त कराता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे सहस्ररश्मि और अरण्य के वैराग्य वर्णन करनेवाला दसवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-11

राजा मारुतके यज्ञ का विनाश और रावण की दिग्विजय का निरुपण

अथानंतर रावण ने पृथ्वीपर जो मानी राजा थे, उनको अपने वश में किया। जो अपने आप आकर मिले उनके ऊपर अपनी आज्ञा मनवाकर सन्तुष्ट किया। अनेक राजाओं सहित सुभौम चक्रवर्ती के समान पृथ्वीपर विहार किया। अलग अलग प्रान्त में भिन्न भिन्न पहनाव वस्त्राभूषण आदि भिन्न भिन्न भाषाओं के बोलने वाले, कई वाहनोंपर चढे, अनेक मनुष्यों एवं राजाओं सहित दिग्विजय किया, जगह जगह रत्नों सहित सुवर्ण के अनेक मन्दिर बनवाये। एवं चैत्यालयों

का जीर्णोद्धर कराया, जिनेन्द्र भगवान की भाव सहित पूजाये की एवं करवाई। जो जैनधर्म के द्वेषी दुष्टमनुष्य हिसंक थे, उनको शिक्षा दी एवं जैनधर्म उनको स्वीकार करवाया। दरिद्रियों को दया से पूर्ण दान दिया, सम्यग्दृष्टि श्रावकों का बहुत आदर करते। साधर्मियों पर वात्सल्य भाव एव साधुओ को भक्तिपूर्वक प्रणाम करते थे। जो सम्यक्त्व रहित द्रव्यलिगी मुनि और श्रावक थे उनकी भी सेवा की। जैनी मात्र का अनुरागी उत्तरदिशा की ओर विहार किया। पुण्यकर्म के प्रभाव से रावण का, दिन दूना तेज अधिक बढता गया। रावण ने सुना कि राजपुर का राजा महाबलवान है, अभिमान से किसीको प्रणाम नहीं करता है, और जन्म से ही दुष्ट है, मिथ्यात्व सहित जीव हिंसारूप यज्ञमार्ग में प्रवृत्ति करता है। तब यज्ञ का नाम सुन राजा श्रेणिक ने गौतमस्वामी से कहा। हे प्रभो! रावण का कथन तो बाद मे कहना पहलेयज्ञ की उत्पत्ति का कथन कहो। यह कैसी क्रिया है जिसमे प्राणी, जीवों की हिंसाकर महाघोर पापकर्म करता है, तब गणधरदेव ने कहा, हे श्रेणिक! अयोध्या मे इक्ष्वाकुवंश का राजा आयाति उसकी रानी सुरकांत उनके वसु पुत्र था। जब वसु पढने योग्य हुआ तब क्षीरकदब ब्राह्मण के पास पढने भेजा, क्षीरकदब की स्त्री स्वस्तिमती थी, और एक नारद ब्राह्मण धर्मात्मा वह भी क्षीरकदब के पास पढता था, और क्षीरकदंब का पुत्र पर्वत महापापी वह भी पढता था, क्षीरकदंब महाधर्मात्मा सर्व शास्त्रो का ज्ञाता शिष्यो को सिद्धान्त तथा क्रियारूप ग्रन्थ एव मंत्र शास्त्र, काव्य, व्याकरणादि अनेक ग्रन्थ पढाता था। एक दिन नारद, वसु और पर्वत इनतीनों के साथ क्षीरकदब वन मे गये। वहॉं चारण मुनि शिष्यों सहित विराजमान थे। तब एक शिष्य से मुनि ने कहा—ये चार जीव हैं, एकगुरु तीनशिष्य इनमें से एकगुरु एकशिष्य ये दो सद्बुद्धिधारी हैं, दो शिष्य कुबुद्धिधारी हैं। ऐसे शब्द सुनकर क्षीरकदंब ससार से डरे एव शिष्यों को विदा किया, वे अपने अपने घर गये, क्षीरकदब ने मुनि के पास दीक्षा ली। जब शिष्य घर आया तब क्षीरकदब की स्त्री स्वस्तिमती ने पर्वत को पूछा तेरे पिता कहॉं है। तू अकेला ही घर क्यों आया? तब पर्वत ने कहा, हमको पिताजी ने भेज दिया और कहा हम बाद में आ रहे है। यह वचन सुन स्वस्तिमती को चिंता हुई और पति के आने की राह देखती रही। रात्री हुई तो भी नहीं आये, तब महाशोक से रुदन करती हुई रात्री व्यतीत की। और कहती रही हाय-हाय! मैं मंदभागिनी, प्राणनाथ के बिना मर गई। किसी पापीने मेरे

स्वामी को मारदिया अथवा कोई कारण से किसी देश को चले गये, या सर्व शास्त्रों के ज्ञाता थे सो परिग्रह का त्यागकर वैराग्य प्राप्तकर मुनि बन गये होगे। इस प्रकार दुख से रोती हुई रात्री पूर्ण की। जब प्रातः काल हुआ तब पर्वत पिता को ढूढंने गया, तब जंगल में नदी के किनारे मुनियों के सघ में श्रीगुरु के पास विनय सहित पिता को बैठे हुये देखा। तब घर जाकर माता से कहा—हे मॉ हमारे पिता तो गुरुओ के पास नग्न होकर बैठे है। तब स्वस्तिमती ने जाना कि मेरा पति निश्चय से मुनि हो गया है। तब पति के वियोग से महादुखी हुई। हाथो से छाती कूट कूटकर पुकार पुकारकर रोती रही। तब नारद महाधर्मात्मा यह वृतान्त सुनकर स्वस्तिमती के पास शोक का भरा हुआ आया। नारद को देख, स्वस्तिमती छाती कूटती हुई जोर जोर से रोने लगी। अपने लोगो को देख शोक बढता है। तब नारद ने कहा, हे माता! क्यो वृथा शोक करती हो, वे धर्मात्मा जीव पुण्याधिकारी जीवन को अस्थिर जान तप करने को गये हैं। उनकी बुद्धि निर्मल है, कल्याण के मार्ग मे लगे है, अब शोक करने से पुनः घर में नहीं आयेगे, नारदने कहा तबकुछ शात हुई, घर मे रहकर महादुखी कभी पति की स्तुति करती, और कभी निन्दा भी करती। क्षीरकदब के वैराग्य का वृतान्त सुन आयाती राजा तत्व के ज्ञाता उन्होने भी वसुपुत्र को राज्य देकर महामुनि हुये। वसु का राज्य पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ, आकाश समान स्फटिक मणि के पाये सिहासन के बनवाये। सिंहासनपर बैठता, तब लोग जानते कि राजा सत्य के प्रभाव से आकाश में निराधार बैठे हैं।

अथानंतर हे श्रेणिक! एक दिन नारद और पर्वत के शास्त्र चर्चा हुई, तब नारद ने कहा कि भगवान वीतरागदेव ने धर्म दो प्रकार का कहा है, एक मुनिधर्म दूसरा गृहस्थधर्म, मुनि का महाव्रतरूप और श्रावक का अणुव्रतरूप। पॉच पापों का पूर्ण त्याग पंचमहाव्रत और उनकी पच्चीस भावनारूप मुनिधर्म है। और पॉच पापों का एकदेश त्यागरूप श्रावकधर्म है। श्रावक के व्रतों मे दान पूजा मुख्य कहा है। पूजा का नाम यज्ञ है। ''अजैर्यष्टव्यम्'' इस शब्द का अर्थ मुनियों ने इसप्रकार कहा है, बोने के पश्चात् उत्पन्न नहीं होता, जिसमें अंकुर शक्ति नहीं है, ऐसा शालिधान उनका विवाह आदि क्रियाओं में होम करते है, यह आरम्भी श्रावक की क्रिया है। नारद के ऐसे वचन सुन पापीपर्वत बोला, अज बकरे को कहते हैं। बकरे को हवन में डाल देना उनका नाम यज्ञ है। तब नारद ने क्रोध से दुष्टपर्वत

से कहा, हे पर्वत! ऐसा मतकहो। महाभयंकर दुख का कारण जो नरक वहाँ तू जायेगा। दया ही धर्म है, हिंसा पाप है, तब पर्वत कहनेलगा, मेरा तेरा न्याय राजावसु के पास होगा, जो झूठा होगा, उसकी जीभ काटदी जायेगी। इसप्रकार कहकर पर्वत माता के पास गया। नारद के और पर्वत के जो विवाद हुआ, वह वृतान्त माता से कहा, तब माता ने कहा कि तू झूठा है, तेरे पिता से हमने व्याख्यान मे अनेक बार सुना है, जो अज बोया हुआ धान ना उगे, ऐसा पुराना यव (जो) का नाम है, शेले (बकरे) का नहीं। जीवो का भी कभी होम किया जाता है? तू विदेश जाकर मॉस भक्षण का लोलुपी हुआ है। इसीलिये मान के कारण झूठ बोल रहा है। सो तुझे अवश्य ही दुख का कारण भोगना होगा। हे पुत्र! निश्चय से तेरी जीभ काटी जायेगी। मै पुण्यहीन अभागिनी पति और पुत्र दोनों से रहित होऊँगी। इस प्रकार पुत्र से कहकर, उस पापिनी ने विचार किया, राजा वसु के पास हमारी दक्षिणा धरोहर है, ऐसा जानकर व्याकुल हो, वसु राजा के पास गई। राजा ने स्वस्तिमती को देख बहुत विनय किया, और सुखासन पर बैठाकर, हाथ जोडकर पूछता है। हे माता! आज तुम दुखी दिख रही हो, जो आप आज्ञा करोगी वह ही मै करूँगा, तब स्वस्तिमती ने कहा। हे पुत्र! मै महादुःखी हूँ जो स्त्री अपने पति रहित हो उसे सुख कहाँ। संसार में पुत्र दो प्रकार के हैं। एक पेट का जन्मा और एक शास्त्र का पढ़ाया। सो इसमे पढाया पुत्र विशेष है। एक दोषी है, एक निर्दोषी है। तुम मेरे स्वामी के शिष्य हो तुम पुत्र से भी अधिक हो, तुम्हारी लक्ष्मी को देखकर मै खुश रहती हूँ। तुमने कहा था माता दक्षिणा लो, तब मैंने कहा समय पाकर ले लूंगी। यह वचन याद करो, जो राजा पृथ्वीके पालक हैं। वे सत्य ही कहते हैं। और जो ऋषि जीवदया के रक्षक हैं, वो भी सत्य ही कहते हैं। तू सत्य में प्रसिद्ध है मुझे दक्षिणा दो। इस प्रकार स्वस्तिमती ने कहा, तब राजा ने विनय कर कहा, हे माता! तुम्हारी आज्ञासे जो नहीं करने योग्य कार्य है वह भी मैं करूँगा, जो आपके मन में है वह कहो, तब पापी ब्राह्मणी ने नारद और पर्वत के विवाद का सम्पूर्ण वृतान्त कहा, और कहा कि मेरा पुत्र सर्वथा झूठा ही है, परन्तु इसके झूठ को तुम सत्य करो। ताकि उसका मान भंग न हो। तब राजा ने यह अयोग्य कार्य जानते हुये भी उसने हॉ कह दिया। तब वह राजाको आशीर्वाद देकर अपने घर गई। दूसरे दिन प्रातःकाल नारद और पर्वत राजावसु के पास आये, अनेक लोग कोतुहल देखने आये, तब सभा के मध्य नारद और

पर्वत के बीच बहुत विवाद हुआ, नारद ने कहा अज शब्द का अर्थ अंकुर, उत्पन्न न हो ऐसा धान, और पर्वत ने कहा पशु है। तब राजा वसु को पूछा कि तुम सत्यवाद में प्रसिद्ध हो, जो क्षीरकदब अध्यापक ने कहा था वही आप बताओ। तब राजा ने कहा, जो पर्वत ने कहा है वही क्षीरकदंब कहते थे। ऐसा कहते ही सिंहासन में लगे स्फटिक मणी के पाये टूट गये सिंहासन भूमि में गिर पडा, तब नारद ने कहा-हे वसु असत्य के प्रभाव से तेरे सिंहासन के पाये टूट गये, अब भी तुझे सत्य कहना योग्य है। फिर भी मोह के कारण पागल होकर कहता है जो पर्वत ने कहा, वो ही सत्य है, तब महापाप के भार से हिंसा मार्ग के प्रचार से तत्काल ही पृथ्वीफट गयी और सिहासन सहित राजावसु धरती में चला गया। राजा मरकर सातवे नरक गया। तब राजा वसु को मरादेख सभाके लोग, वसु और पर्वत को धिक्कार धिक्कार कहने लगे। दयाधर्म के उपदेश से नारद की बहुत प्रशसा हुई। तब सब कहने लगे (यतो धर्म स्ततो जयः) पापी पर्वत हिंसा के उपदेश से धिक्कार दण्ड को प्राप्त हुआ। पापीपर्वत विदेशों में भ्रमण करता हुआ हिंसा शास्त्र का प्रचार करता रहा। स्वय पढे दूसरो को पढावे, जैसे पतग दीपक मे गिरे, ऐसे ही मिथ्यादृष्टि जीव कुमार्ग मे गिरते हैं। अभक्ष का भक्षण करे नहीं करने योग्य कार्यको करे लोगो को झूठा उपदेश दे और कहे कि यज्ञ के कारण ही पशु बनाये है। यज्ञ स्वर्ग का कारण है इसीलिये यज्ञ की हिंसा, हिंसा नहीं है। सौत्रामणि नामक यज्ञ के कारण से मद्यपान का दोष नहीं होता। गोयज्ञ नामके यज्ञसे परस्त्री सेवन भी पाप नहीं है ऐसे पर्वतने लोगो को हिंसामार्ग का उपदेश दिया। असुर की माया से जीवो को स्वर्ग जाते हुये दिखाये। ऐसे जीव क्रूर क्रियाओ को करने से कुगति को जाते है। हे श्रेणिक! यह हिंसा यज्ञ की उत्पत्ति का कारण कहा। अब रावण का वृतान्त सुनो। रावण राजपुर गये वहाँ राजा मरुत हिंसाकर्म मे प्रवीण यज्ञशाला मे रहता था। सवर्त नाम का ब्राह्मण यज्ञ कराता था। पुत्र स्त्रीयो सहित अनेक विप्र धन के कारण आये हुये थे। और होम के लिये अनेक पशु लाये थे। उस समय अष्टमनारद पदवीधर बड़ेपुरुष आकाश मार्ग से आये, बहुत लोगो की भीड देख आश्चर्य को प्राप्त हो मन में सोचते है कि यह नगर किसका है। और यहाँ सेना किसकी दिखरही है। नगर के पास इतने लोग किस कारण से इकट्ठे हुये हैं ऐसा मन में विचारकर आकाश से भूमिपर उतरे।

अथानंतर यह बात सुन राजा श्रेणिक ने गौतमस्वामी से पूछा कि—हे

भगवान! यह नारद कौन है, इनमे कैसे कैसे गुण और उनका जन्म कैसा है? तब गणधरदेव ने कहा-हे श्रेणिक! एक ब्रह्मरुपी ब्राह्मण और उसके कुर्मीनाम की स्त्री थी, वह ब्राह्मण तापसी साधु बना और वनमे जाकर कन्दमूल फल आदि का भोजन करता, वह ब्राह्मणी भी उसके साथ रहती। ब्राह्मणी को गर्भ रहा। एकदिन उसीमार्ग मे, एक सयमी महामुनिराज आये, एक क्षण विराजमान हुये। ब्राह्मण और ब्राह्मणी पास में आकर बैठे। सो ब्राह्मणी को देखकर मुनि को दया उत्पन्न हुई। उनमें से बडे मुनि बोले, देखो यह प्राणी कर्मोके वशसे संसारमें भ्रमण करता है। धर्म प्राप्ति के लिये कुटुम्ब को छोडकर संसार सागर से पार होने के लिये वनमे आया, तो भी हे तापसीसाधु! तुने क्या यह खोटा कार्य किया, और स्त्री को गर्भवती की। तेरे मे और गृहस्थी में क्या भेद है। जैसे वमन किया भोजन मनुष्य पुन ग्रहण नहीं करते है। ऐसे विवेकी पुरुष कामादि भोग छोडने के पश्चात् पुनः वो क्रिया नहीं करता है। जो कोई साधु भेष धारणकर स्त्री का सेवन करता है। तो भयानक वनमें शेर शालनी आदि अनेक पर्यायों मे कुजन्म पाता है एवं नरक निगोद मे जन्म लेता है। जो कोई कुशील सेवन करता एव आरम्भ क्रियाओ में प्रवृत्तिकर अपने आप को तपस्वी साधु मानते, वह महाअज्ञानी है। उसका तप किस काम का। मिथ्यादृष्टि जीव खोटे साधुओ का भेष धारणकर विषयों की अभिलाषाओ मे जो रत रहकर कहता है मै तपसी हूँ वह महामिथ्यात्वी है। वह व्रती कैसा? सुख से सोना, सुख से बैठना, सुख से आहार विहार करना ओढना बिछाना आदि सब काम करे, और अपने आपको साधु मानते, वह महा मूर्ख अपने आपको ठगते है। जिस घरमे आग लग जाए वहाँ से निकल कर पुन· उसी आगमे कैसे प्रवेश करे। जैसे पिंजरे के किसी छेद मे से पक्षी बाहर निकल जाए पुनः उस पिजरे मे प्रवेश कैसे करे? ऐसे ही भोगो से विरक्त होकर पुनः इन्द्रियो के भोगो मे रत होता है, वह मानव ससार मे लोक निंदा का पात्र है अथवा वह आत्म कल्याण नहीं कर सकता। सर्व परिग्रह के त्यागी मुनि ही एकाग्र चित्त होकर आत्मध्यान करने योग्य होते है। सो तुम समान आरम्भी साधु कैसे आत्मध्यान कर सकते है? प्राणियो के परिग्रह के कारण ही राग द्वेष उत्पन्न होते हैं। राग में ही कामवासना जागृत होती है। और द्वेष से जीवों की हिंसा होती है। काम एव क्रोध से मानव पीड़ित होता है अतः अज्ञानी मूर्ख जीवों के कृत्य अकृत्य की विवेक बुद्धि उत्पन्न नहीं होती। जो अविवेक से अशुभ कर्म करते हैं वे ससार सागर में भ्रमण

करते हैं। इस प्रकार स्त्री संसर्ग में, दोष जान कर ज्ञानी जन शीघ्र ही वैराग्य को प्राप्त होते हैं। अपने आपको जानकर विषयों को छोड परमधाम को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार मुनिराज ने ब्राह्मण को धर्मोपदेश देकर सम्बोधन किया। तब ब्राह्मण ब्रह्मरुचि निर्मोही होकर मुनिबन गया। और कुर्मीनामकी स्त्री का त्यागकर गुरु के साथ ही विहार किया। गुरुमे ही है राग जिसका ऐसी कुर्मीनामकी ब्राह्मणी शुद्धबुद्धि को पाकर पापकर्म को छोड गुरुसे श्रावकके व्रतग्रहण किये। संसार के दुखों को जानकर राग द्वेष एवं कुमार्ग को छोडकर, भगवान जिनेन्द्र की भक्ति मे तत्पर होकर पति से रहित अकेली महासती सिहनी की तरह महावन मे भ्रमण करती रही। दसवें महीने पुत्र का जन्म हुआ। बालक को देखकर ज्ञानक्रिया को धारणकर मनमें विचार किया कि, पुत्र और परिवार का संबध महाअनर्थ का मूल कारण है, ऐसा मुनिराज ने कहा, वह सत्य है, इसलिये पुत्र के प्रसग का परित्याग कर आत्म कल्याण करूँ। यह पुत्र महाभाग्यवान है। इसकी रक्षा करने वाले देव हैं। इसने जो कर्म पूर्वमे उत्पन्न किये है उसका फल यह स्वय अवश्य भोगेगा। वनमें, समुद्रमे, तथा शत्रुओ के वशमे होनेपर प्राणियों की रक्षा पूर्वोपाजित कर्म ही करते हैं ओर कोई नहीं, जिसकी आयु क्षय हो गई, वह माताकी गोदमे बैठा हुआ भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। ये सभी ससारी प्राणी कर्मो के आधीन है। भगवान सिद्ध परमात्मा ही कर्म कलक से रहित है, ऐसा जान महानिर्मल बुद्धि से बालक को आशीर्वाद देकर वनमें छोड ब्राह्मणी विकल्प का त्यागकर आलोकनगर में आई, वहॉ इन्द्रमालिनी नाम की आर्यिका अनेक आर्यिकाओ की गुरु उनके समीप ब्राह्मणी ने आर्यिका दीक्षा ग्रहण की, महानिर्मल परिणामों की धारी हुई।

अथानंतर आकाशमार्ग से जम्भदेव जा रहा था, उसने पुण्याधिकारी बालक को रुदन रहित देख, दयावान होकर बालक को उठा लिया, और बहुत प्रेम से पालनकर अनेक आगम अध्यात्मशास्त्र पढाये, युवा अवस्था में, पंडित होकर, सिद्धान्त का ज्ञाता आकाश गामनी विद्या को प्राप्त हुआ, व्रत और शील को अत्यन्त दृढता से पालन करता हुआ, अपने माता पिता जो मुनि आर्यिका बने थे उनकी भक्तिपूर्वक वंदना करता। कैसेहैनारद? सम्यग्दृष्टि ग्यारहप्रतिमा क्षुल्लक के व्रतों के पालक, कर्म के उदय से पूर्ण वैराग्य नहीं, न गृहस्थी, न संयमी, धर्मप्रिय, कलहप्रिय और वाचालप्रिय हैं। गायनविद्या में प्रवीण, वीणा वाणी में अतिअनुरागी, राजाओं से पूजित, उसकी आज्ञा का कोई लोप नहीं करता। पुरुष

एवं स्त्रीयो मे सम्मान का पात्र है। अढाईद्वीप में मुनियो कि एवं चैत्यालयों की नित्य वन्दना करता, हमेशा धरती एव आकाश में भ्रमण करता रहता है, कौतुहल युक्त देवों से सम्मानित देवो की महिमा से युक्त, पृथ्वीपर देवऋषि कहलाते हैं। अनेक विद्याओ से युक्त, पुरुषार्थी होते है।

एक समय नारद विहार करते हुये मरुत के यज्ञभूमिपर आये, उन्होंने वहाँ बहुत लोगो की भीड देखी और पशु बधे हुये देखे। तब नारद दया भाव से सयुक्त यज्ञभूमि मे जाकर मरुत से कहने लगे। हे राजा! जीवो की हिंसा दुर्गति का द्वार है, तूने यह महापाप का कार्य क्यो रचा है? तब मरुत ने कहा, यह संवर्त ब्राह्मण सम्पूर्ण शास्त्र का ज्ञाता है, यही यज्ञ का अधिकारी है, यह सब कुछ जानता है, इसीसे चर्चा करो, यज्ञ से ही उत्तम फल की प्राप्ति होती है। तब नारद यज्ञ करानेवाले सवर्त से कहते है—अहो मानव? तूने यह कार्य क्यो आरंभ किया है, यह कार्य जो वीतरागी सर्वज्ञ है उनने दुख का कारण कहा है। तब संवर्त ब्राह्मण क्रोध से कहता है अहो! अत्यन्त मूर्ख, तूने जो सर्वज्ञवीतरागी कहा, सो सर्वज्ञ वीतरागी हो, वह वक्तानहीं होते और जो वक्ता होते है, वे सर्वज्ञ वीतरागी नहीं होते। और जो अशुद्धमलिनजीव उनका कहावचन प्रमाण नहीं, जो अनुपमसर्वज्ञ है वह दिखते नहीं। इसीलिये वेद अकृत्रिम है अतः वेद का कहा मार्ग प्रमाण है। वेदमें शूद्रको छोड तीनवर्णवालो को यज्ञ करना कहा है। यह यज्ञ अपूर्वधर्म है। स्वर्ग के अनुपम सुख को देने वाला है। वेद मे पशु का बध पाप का कार्य नहीं कहा है। वेद शास्त्रो मे यज्ञ कल्याण का कार्य कहा है। यह पशु की सृष्टि विधाता ने यज्ञ के लिये ही बनाई है। इसीलिये यज्ञ मे पशु का वध पाप का कारण नहीं है। ऐसे सवर्त ब्राह्मण के विपरीत वचन सुन नारद ने कहा—हे व्रिप! तूने यह सर्व कथन अयोग्य पापरूप ही कहा है। कैसा है तू? हिंसामार्ग से दूषित है आत्मा तेरी। अब तू ग्रथार्थ का यथार्थ भेद सुन। तू कहता है सर्वज्ञ नहीं हैं। सो यदि सवर्ज्ञ सर्वथा न होते तो, शब्दसर्वज्ञ, अर्थसर्वज्ञ, बुद्धिसर्वज्ञ यह तीन भेद क्यों कहे। जब सर्वज्ञ हैं तभी तो कहा जाता है। जैसे सिह है तो चित्र बनाये जाते है। इसीलिये तीनलोक को देखने वाले और सबको जानने वाले सर्वज्ञ है। सर्वज्ञ के बिना अमूर्तिक अतीन्द्रिय पदार्थ को कौन जान सकता, इसीलिये सर्वज्ञ वचन ही प्रमाण है। और तेने कहा जो यज्ञ में पशुको होमना दोष नहीं है तो पशुको मरते समय दुख नहीं होता है क्या? अगर दुख होता है तो पाप जरूर होता है। जैसे हिंसक

हिंसा करता है तो पशुको दुख होता है, और उनको पापभी होता है, और तूने कहा विधाता सर्वलोक का कर्ता है और यह पशु यज्ञ के लिये बनाये है, तो यह कथन प्रमाण नहीं है। भगवान कर्त्ता है तो उनको सृष्टि बनाने से क्या प्रयोजन? और कहो कि ये तो क्रीडा है तो कर्त्ता का यह काम नहीं, अगर क्रीडा करता है तो उसे बालक समान जानना, और सृष्टि की रचना करता है तो वह अपने समान बनाता है, स्वयं सुख रूप है, और सृष्टि जीवों को मारने के लिए रचना करते हैं, वह दुख रूप है, और जो कृतार्थ है वह कर्त्ता नहीं, और जो करता है वह कृतार्थ नहीं, जिसके जो कोई इच्छा है वह ही करता है। जिसके इच्छा है वह ईश्वर नहीं। इसीलिये जिसको तुम कर्त्ता मानते हो वह कर्मसे पराधीन तुम्हारे समान ही है। और ईश्वरतो अमूर्तिक है उनके शरीर नहीं और शरीर बिना सृष्टि की रचना कैसे करे और यज्ञके कारणही पशु बनायें है तो बाहन आदि क्रियायें क्यों करवाते हैं। इसीलिये यह निश्चय है कि इस भवसागर मे अनादिकाल से इन जीवो ने राग द्वेष आदि भावों के कारण जो कर्म बंध किया है वह चारोंगति एव चौरासीलाख योनियों मे भ्रमण करता है। यह ससार अनादि निधन है, किसी का किया हुआ नहीं है, ससारी जीव कर्मो के आधीन है। अथवा तुम कहोगे कि कर्म पहले हैं या शरीर पहले है सो जैसे बीज और वृक्ष है ऐसे ही कर्म और शरीर जानना। जैसे बीजसे वृक्ष और वृक्षसे बीज। जिनके कर्मरूपी बीज नष्ट हो गया, उसके शरीररूपी वृक्ष नहीं, रहा शरीररूपी वृक्ष के बिना सुख दुख आदि फल नहीं, इसीलिये यह आत्मा मोक्ष अवस्था मे कर्मोसे रहित, मन और इन्द्रियो से रहित, अद्‌भुत परम आनन्द सुख को भोगते हैं। निराकार स्वरूप अविनाशीपद दयाधर्म से ही प्राप्त होता है, तूने कोई पुण्य के उदय से मनुष्यजन्म एव ब्राह्मणकुल प्राप्त किया, अब तू हिंसा कर्म छोड दे, जीव हिंसासे मानव स्वर्ग में जाता है, तो हिंसा की अनुमोदना से राजा वसु नरक में क्यो गया, जो कोई आटे का पशु बनाकर भी घात करता है, तो वह भी नरक का अधिकारी होता है। सो साक्षात पशु हिंसा की कहाँ बात, अब भी यज्ञ के करनेवाले ऐसा शब्द कहते हैं। हे वसु! उठो स्वर्ग में जाओ, ऐसा कहकर अग्नि मे आहुति डालते हैं, इसीलिये यह सिद्ध हुआ कि वसु नरक में गया है। स्वर्ग नहीं गया। इसीलिये हे पापी! यह यज्ञ कल्याण करनेवाला नहीं है।

और अगर तुझे यज्ञ करना ही है तो हम जैसा कहें वैसा कर। यह चिदानद

आत्मा उसेतो यजमानकहो (यज्ञ करनेवाला) और शरीर है वह हवनकुण्ड सन्तोष डाभ है, यज्ञकी सामग्री सर्वपरिग्रह है वह होमने योग्यवस्तु है। और कोमलकेश डाभ है उनका केशलोंच करना, और सब जीवोंपर दयाकरना ही दक्षिणा है, इसका फल ही सिद्धपद है। और जो शुक्लध्यान वह ही प्राणायाम हैं, और सत्यमहाव्रत ही यज्ञ के काष्ठ का स्तभ है जो पशु के बांधने का है, चंचल मन ही पशु है, तपरूपी अग्नि मे पंचेन्द्रिय के विषयो को होमना ही धर्म यज्ञ है। पर तुम कहते हो कि यज्ञ से देवो को तृप्त करते है, सो देवो के तो मानसिक आहार होता है उनका शरीर सुगन्धमय होता है, देवो के अन्नादि का आहार नहीं है, तो मासादि की कहॉ बात? कैसा है मॉस। महादुर्गन्ध युक्त, देखा न जाए, नाम लेने या सुनने से ही घृणा उत्पन्न होती है। पिता का वीर्य, माता का रज, उससे उत्पन्न हुआ अपना शरीर जिसमे जीवो की उत्पत्ति का कारण, महाअभक्ष ऐसा जो मास उसको देव कैसे गृहण करे। और तीनप्रकार की अग्नि शरीर मे है एक ज्ञानाग्नि, दूसरी दर्शनाग्नि, तीसरी उदराग्नि इसको आचार्य दक्षिणाग्नि, गार्हपत्याग्नि, आहवनीयाग्नि कहते है। स्वर्ग के देव हाडमास का भक्षण करे वह देव कैसे? जैसे श्वान, श्याल, काग, हुये वैसे ही देव हुये। यह वचन नारद ने कहे। कैसेहै नारद? देवऋषि है अनेकान्त स्वरूप जैनधर्म को सूर्य समान प्रकाश करनेवाले महातेजस्वी दैदीप्यमान शरीरधारी, शास्त्रके निधान ऐसे नारद को सवर्त कैसे जीते? वह सवर्त अपमान को प्राप्त होकर क्रोध के कारण आशीविष सर्प समान लाल नेत्रकर महा कलकलाहट करते हुये अनेकविप्र इकट्ठे होकर हाथ पैर मुक्को से नारद को मारने के लिये आये। तब नारद भी किसी को मुक्कों से किसी को पैरो से किसी को मुद्गर से किसी को कोहनी से मारते हुये महा युद्ध किया, इधर नारद अकेले, वे लोग बहुत, सो आपस मे महा युद्ध हुआ। पक्षी के समान नारद को घेर लिया, तो नारद आकाश मे उडने के लिये असमर्थ रहे, प्राण सन्देह को प्राप्त हुये। उसी समय रावण का दूत राजा मरुत के पास आया था सो नारद को घेरा हुआ देख पुन. रावण के पास जाकर कहा, कि महाराज जिसके पास मुझे भेजा था वह तो महादुर्जन है उसके सामने ही सभी ब्राह्मण अकेले नारद को घेरकर मार रहे हैं। यह देख मैं आपको कहने के लिये आया हूँ, रावण सुनकर क्रोध को प्राप्त हुआ और पवन से भी अतिशीघ्र गामी वाहनपर चढकर चलने को तैयार हुआ। नंगी तलवारों के धारक योद्धाओं को आगे भेजा,

वह एक क्षणमात्र में यज्ञशाला पर पहुँच गये, तुरन्त ही, नारद को छुडाया वहाँ पर अनेक मनुष्य एव पशुओ को बाध रखा था उन्हें छुडाया। यज्ञशाला बिखेर डाली। यज्ञ करनेवाले जो विप्र थे उन्हे मारा और राजा को पकड लिया। रावण ने विप्रोपर क्रोधकर कहा मेरे राज्य मे जीव घात हो, यह क्या बात? तब सबको रावण ने ऐसा मारा कि सभी धरतीपर गिर पडे। तब सुभट लोगों ने कहा अहो! जैसे मारने से तुम्हारे को दुख होता है ऐसे ही पशुओं को जानो। तुम्हारी पिटाई करने से तुम्हे कष्ट होता है, तो पशुओ को काटने से उन्हें कष्ट नहीं होता? अब तुम पापका फल सहनकरो, और नरको के दुखो को भोगो। और घोडो आदि के सवार एव विद्याधर व भूमिगोचरी आदि जो हिंसक प्राणी थे उनको मारने लगे तब वे जीव विलापकर रोते हुये कहनेलगे, हमको छोडो फिर कभी ऐसा काम नहीं करेगे। लेकिन रावण उनके ऊपर क्रोधित था इसलिए उनको नहीं छोडा। तब नारद महादयावान उसने रावण से कहा। हे राजन! तुम्हारा कल्याण हो। तुमने इन दूष्टों से मुझे छुडाया, अब इनको भी दयाकर आप छोडो, जिनशासन मे किसी को दुख देना नहीं बताया है, सब जीवो को अपना जीवन प्रिय है, हुण्डावसर्पिणी काल मे इन पाखण्डियो की प्रवृत्ति हुई है, तीसरेकाल के अन्त मे भगवान आदिनाथ का जन्म होते ही देव सुमेरुपर्वत पर ले गये, और क्षीरसागर के जल से जन्माभिषेक कराया, वे महाकान्ति के धारी ऋषभदेव पापो के नाशक तीनलोक मे प्रसिद्ध है। क्या तुमने नहीं सुना है। वे भगवान जीवो के दयालु उनके गुण इन्द्र भी कहने में समर्थ नहीं हैं। वे वीतराग प्रभु! मोक्ष के स्वामी इस पृथ्वी रूपी स्त्री को छोडकर जगत के कल्याण निमित्त मुनिपद को धारण किया। ऋषभदेव ने मुनि होकर हजारवर्ष तक महातप किया, प्रभु के अनुराग से कच्छादि चारहजार राजाओ ने मुनिधर्म जाने बिना ही दीक्षा धारण की। सो परिषह सहन न कर सकने से फल आदि खाना, एव वस्त्रादि धारणकर तापसी साधु बन गये। ऋषभदेव ने एकहजार वर्षतक तपकर वट वृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त किया, तब सभी देवो ने आकार केवलज्ञान की पूजा की। कुबेर ने समोशरण की रचना की भगवान की दिव्यध्वनी सुनकर कच्छादि राजा जो चारित्र से भ्रष्ट हुए वे सभी पुनः धर्म मे दृढ होकर चारित्र का पालन किया। परन्तु मारीच के दीर्घ संसार के योग से मिथ्यात्व भाव दूर नहीं हो सका। जिस स्थानपर भगवान ऋषभदेव को केवलज्ञान प्राप्त हुआ उसी स्थानपर देवोंद्वारा चैत्यालय की स्थापना की गई।

रत्नों की प्रतिमा उसमें विराजमान की और भरत चक्रवर्ती के द्वारा ब्राह्मणवर्ग की स्थापना की गई थी, वह मारीच के द्वारा अति तेजी से जलमें तेलकी बूंदके समान विस्तार को प्राप्त हुई। उसने संसार में मिथ्यात्व का प्रचारकर संसार को मोहित किया। लोगों को कुक्रिया मे लगाया, और सुकृत क्रिया का प्रकाश नष्ट होने लगा। मानव साधुओं का अनादर करने लगे। पहले सुभौम चक्रवर्ती ने इनका नाश किया तो भी ये अभाव को प्राप्त नहीं हुये। हे दशानन! तेरे से ये कैसे नष्ट हो सकते हैं। इसलिये तू स्वयं हिंसामार्ग से निवृत हो। जब भगवान के उपदेश से संसार के प्राणी मिथ्याभाव न छोडते, अगर छोडते तो तुम हम जैसे छोडते सारे जगत के प्राणी का मिथ्यात्व भाव कैसे छूटे। इस प्रकार देवर्षि नारद के वचन सुन रावण अतिप्रसन्न हुआ और जिनभगवान को बारम्बार नमस्कार किया। नारद और रावण ने महापुरुषो की मनोज्ञ कथा का वर्णनकर एकक्षण सुख से रहे।

अथानंतर राजा मरुत हाथजोड धरती से मस्तक लगाकर रावण को नमस्कार कर कहता है। हे देव! हे लकेश! मैं आपका सेवक हूँ आप प्रसन्न हो, मै अज्ञानी, अज्ञानियो के उपदेश से खोटा कार्य हिंसा रूप किया। सो आप क्षमा करो। अज्ञानीजीव ही खोटी चेष्टाये करते है। अब मुझे धर्म के मार्ग में लगाओ। मेरी पुत्री कनकप्रभा से आप विवाह करो। ससार मे जो उत्तम पदार्थ है, उनके आपही पात्र हो, तब रावण प्रसन्न हुए। और कनकप्रभा से विवाहकर मरुत को अपने वश मे किया। मरुत ने रावण के योद्धाओ को अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण हाथी घोडे रथादि दिये। रावण कनकप्रभा सहित अपने महल मे रतिराग से रमता रहा। उसके एकवर्ष पश्चात् एक कृतचित्रा नाम की पुत्री हुई, अतिसुन्दर रूपवान जिसके रूपकी शोभा देवभी नहीं कह सकते। रावण के योद्धा महाशूर वीर तेजस्वी, तीनखण्ड के राजा, जो प्रसिद्ध बलवान थे, वे इन योद्धाओं के आगे, दीनता को प्राप्त हुये एवं सभी रावण के वश हुये। विद्याधर लोग भरतक्षेत्र को देख आश्चर्य को प्राप्त हुये, मनोज्ञ नदी पहाड वनको देख कहते हैं कि स्वर्ग भी इससे अधिक सुन्दर नहीं है, ऐसा लग रहा है कि हम सब यहीं निवास करे। रावण की, समुद्र समान विस्तीर्ण सेना, अद्‌भुत पराक्रम, उदारता, ऐसा रावण जो विद्याधरों में श्रेष्ठ है। जिस जिस देश में रावण गया वहाँ वहाँ के लोग प्रशंसा करते हैं। एवं सन्मुख आकर मिलते हैं। पृथ्वीपर जिन जिन राजाओं की सुन्दर

राज कुमारियाँ थी उन सब के साथ रावण ने विवाह किया। जिस नगर के पास से रावण आगे निकलता है, उस नगर के नर नारी देखकर आश्चर्य को प्राप्त होते हैं। सम्पूर्ण स्त्रीयाँ काम छोड देखने दौडती है कोई झरोखों में बैठी देख रही है, कोई आशीष देकर फूल डाल रही है। मेघ समान श्याम सुन्दर कमल समान नेत्र जाके मुकुटों मे अनेक प्रकार की मणियो का प्रकाश हो रहा है, श्याम सुन्दर केश जिनके, चन्द्रमा समान मुख जिनका, समचतुरस्त्रसस्थान एवं बत्तीस लक्षणों से युक्त अर्धचक्रवर्ती की विभूति का भोग करनेवाला उसे देख प्रजा के लोग बहुत प्रसन्न हुये। और कहते है यह दशमुख महाबलवान वैश्रवण राजा, एव यम राजा को जीतनेवाला, कैलाशपर्वत को विद्याके बलसे उठानेवाला, राजा सहस्त्ररश्मि को वैराग्य करानेवाला, राजा मरुत की यज्ञशाला का विध्वंश करने वाला, शूरवीर महासाहसी हमारे पुण्य के उदय से इसदिशा को आये हैं। इनके दर्शन लोगो को परमआनन्द का कारण है। वह पुण्य वती धन्य है जिसकी कूक्षी से इनने जन्म लिया है। वह पिता धन्य है जो ऐसे पुत्रको प्राप्त किया है। वह परिवार धन्य है जिसके कुल में इनने जन्म लिया है। जो स्त्रीयाँ इनकी रानियाँ बनी उनके भाग्य का क्या कहना। इस प्रकार खिडकियो मे बैठी स्त्रीयाँ बाते करती है। रावण की सवारी चली जा रही है। जब रावण समीप आता है। तब कुछ समय के लिये स्त्रीयाँ रावण के रूप को देख चित्राम जैसी हो जाती है। प्रत्येक गाव, नगर, देशमे रावणको छोडकर दूसरी कोई कथा नहीं कर रहे थे। और सभीलोग अनेकप्रकार की भेट लेकर मिलते एव हाथजोड नमस्कार कर कहते है। हे देव! महाविभूति के पात्र, आप, एवं आपके घरमे सम्पूर्ण वस्तुयें विद्यमान हैं। हे राजाओ के राजन्! नन्दनादिवन मे जो वस्तुयें है, वह आपको चिन्तन मात्रसे ही प्राप्त होती हैं। हमारे पास ऐसी अपूर्व वस्तु क्या है जो हम आपकी भेंट करें। आपकी भक्ति से हम खाली हाथ न आकर शक्ति प्रमाण भेट लाते हैं। जैसे भगवान जिनेन्द्रदेव की देवस्वर्णमयी कमलों से पूजा करते है। तो क्या मनुष्य अपनी शक्ति प्रमाण सामग्री से पूजा नहीं करते हैं? इस प्रकार अनेक देशों में बडे बडे लोग विद्याधारों ने रावण की पूजा की। रावण ने उनका मीठे वचनों से बहुत सन्मान किया। रावण पृथ्वीके लोगोको बहुत सुखी देख अतिप्रसन्न हुआ। जिस मार्ग से रावण विहार करता जा रहा है उन स्थानो मे बिना बोये धान्य, फल, स्वयं से ही उत्पन्न होते हैं। किसान लोग कहते हैं हमारे बडे भाग्य जो हमारे देश में

राजा रत्नश्रवा के पुत्र रावण आये। हम रंक लोग कृषिकर्म में आसक्त, रुखेअग फटेवस्त्र, हाथपैर कर्कश, क्लेश से हमारे सुख स्वाद रहित बहुत काल बीत गये अब इनके प्रभाव से हम सम्पत्ति से पूर्ण हुये। पुण्य का उदय आया, सब दुखों को दूर करनेवाले रावण आये। दशमुख दरिद्र लोगों की दरिद्रता देख नहीं सकते। जो भाई का भाई बैरी हो उनका बैर मिटाया। यह रावण सबका भाई बनता रहा। ऐसे रावण अपने गुणों से सबको आनन्द उत्पन्न करते हुये, राज्य करते, उनके राज्य में शीत उष्ण की बाधा प्रजा को नहीं होती, तो चोर, चुगल खोर, सिंह, गज, आदि मानव पशु कैसे बाधा करे। जहॉ पवन, पानी, की बाधा नहीं, अग्नि की बाधा नहीं है। वहाँ रावण का राज्य महासुख दाई होता रहा है। रावण की दिग्विजय में वर्षा ऋतु आई, तब दशों दिशा में अन्धकार हो गया, रात दिन का भेद मालुम नहीं पडता। मेघ भी श्याम, अन्धकार भी श्याम, पृथ्वीपर पानीकी मोटी मोटी धाराये बरसती रही, वर्षा के समय किसान लोग कृषिकर्म को करते है। रावण के प्रभाव से महाधनवान हुये। रावण सबही प्राणियो को महोत्सव का कारण हुआ। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे श्रेणिक! जो पूर्ण पुण्य अधिकारी है उनके सौभाग्य का वर्णन कहॉ तक करे, इंदीवर कमल समान, श्याम, रावण, स्त्रीयो के चित्त को वश करता हुआ मानों वर्षाकाल का स्वरूप ही है। रावण की आज्ञा से सभी नरेन्द्र आकर मिलते और नमस्कार कर कहते हैं, कि हमारी राजपुत्रियो से विवाह करो। रावण विवाह कर अत्यन्त प्रसन्न होता है। रावण ने सुखपूर्वक चातुर्मास पूर्ण किया। हे श्रेणिक! जो पुण्याधिकारी मनुष्य हैं, उनका नाम सुनकर सब लोग नमस्कार करते हैं एवं ऐश्वर्य से युक्त परमवैभव को प्राप्त करते हैं। उनके तेज से सूर्य भी शीतल हो जाता है। ऐसा जानकर जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा मान संशय छोडकर पुण्यका प्रबन्ध करो। पुण्यसे देवभी आज्ञाकारी किंकर हो जाते हैं, तो मनुष्य की क्या बात है बिनापुण्य से सुख साधन प्राप्त नहीं होता है पुण्यसे ही पंचेन्द्रय के भोग मिलते है। पुण्य ही अर्हन्त पद को प्राप्त कराता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्पुराण भाषावचनिका मे मरुत के यज्ञ का विध्वशकर रावण के दिग्विजय का वर्णन करनेवाला ग्यारहवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-12

इन्द्र नामक विद्याधर के पराभव का कथन

अथानंतर रावण मंत्रियों से एकान्त में विचार करता हुआ कहता है। अहो मंत्रियों! यह अपनी पुत्री कृतचित्रा का विवाह किसके साथ कराया जाये, इन्द्र को संग्राम में जीतने का निश्चय नहीं। इसलिये पुत्री का विवाह मंगल कार्य पहले करना योग्य है। तब रावण को पुत्री के विवाह की चिन्ता देख, राजा हरिवाहन ने अपना पुत्र पास में बुलाया, तब रावण हरिवाहन के पुत्र को सुन्दर एवं विनयवान देख पुत्री का विवाह कराने का विचार किया। रावण ने अपने मनमें चिन्तवन किया कि हरिवाहन का पुत्र नीतिशास्त्र में प्रवीण, महानीतिवान, गुणवान, प्रीतिपात्र, महारुपवान, हरिवाहन हमारे कीर्ति एव गुणो मे आसक्त, प्राणों से प्यारा, मधुनाम का पुत्र प्रशंसा योग्य है। तब रावण का मत्री रावण के पास आकर कहता है। हे देव! यह मधुकुमार महापराक्रमी इनके गुण कहने में नहीं आते, इनका रूप ससार के प्राणियों के मनको हरण करनेवाला है। इनका नाम मधु, सो यह मिष्टवादी, मकरद से भी अतिसुगन्धमय है, इनको ऐसे सामान्य मत जानो। असुरो का इन्द्र चमरेन्द्रने राजा मधुको महागुणरूप त्रिशूलरत्न दिया। वह त्रिशूलरत्न शत्रुओं के मस्तकपर डालने से उसका कार्य वृथा नहीं होगा। वह अत्यन्त देदीप्यमान हैं वचनों से उसकी उपमा कहॉ तक कही जाय। इसीलिये हे देव! इससे पुत्रीका सम्बन्ध हो जाये तो ठीक रहेगा। वह भी आपसे सम्बन्धकर कृतार्थ हो जायेगा। जब ऐसा मंत्रियों ने कहा, तब रावण ने उसको अपना जमाई बनाने का निश्चय कर लिया। और दामाद योग्य सभी सामग्री दी। बडी विभूति से रावण ने अपनी बेटी का विवाह राजकुमार मधु से कराया। यह रावण की पुत्री साक्षात् पुण्य की लक्ष्मी, महासुन्दर शरीर, पति के मन एवं नेत्रो को हरणे वाली, सुगन्ध शरीर से युक्त ऐसी रानी को प्राप्तकर, राजामधु अतिप्रसन्न हुआ।

अथानंतर राजाश्रेणिक, गौतमस्वामी से पूछते है, कि हे नाथ! असुरेन्द्र ने मधु को किसकारण त्रिशूलरत्न दिया। तब गौतमस्वामी ने कहा। हे श्रेणिक! धातकीखंड द्वीपमें ऐरावतक्षेत्र के सतद्वारनगर में दो मित्र थे दोनों में महाप्रेम था। एकका नाम सुमित्र दूसरेका नाम प्रभव। ये दोनों पाठशाला में पढ़कर पंडित हुये। कुछ दिनों बाद सुमित्र राजा हुआ। सर्व सामन्तों से पूजित, पूर्वोपाजित पुण्य

के उदय से परमविभूति को प्राप्त हुआ। और दूसरामित्र प्रभव, दरिद्रकुलमें उत्पन्न हुआ। दरिद्रता से दुखी होकर परेशान रहता था। तब राजा सुमित्र ने महाप्रेम से अपने बराबर उसे बना लिया। एक दिन राजासुमित्र को दुष्टघोडा हरकर वनमें ले गया, वहाँ दरिददंष्ट्र नामका भीलों का राजा, उसे अपने घर ले गया, और अपनी पुत्री वनमाला से विवाह कराया, वह वनमाला साक्षात वनलक्ष्मी समान, उसे प्राप्तकर राजासुमित्र अतिप्रसन्न हुआ, वहाँ एकमाह रहकर भीलों की सेना के साथ स्त्रीसहित सतद्वारनगर मे आ रहा था, और प्रभव, मित्रको ढूढने जा रहा था। तब मार्गमें स्त्रीसहित मित्रको देखा। उसे देखकर यह पापी प्रभव मित्रकी रानीसे मोहित हुआ, अशुभकर्म के उदय से कृत्य अकृत्य की बुद्धिसे रहित काम की इच्छाओ से अपने को भूलकर आकुलता को प्राप्त हुआ। खाना, पीना, निद्रादि सब काम छोडकर केवल एक वनमाला का ही चिन्तवन करता, तब राजा सुमित्र प्रभवमित्र को खेद खिन्न देख पूछते हैं, हे मित्र! तुम दुखी क्यो हों? तब प्रभव, मित्र से कहने लगा, जो तुमने वनमाला से विवाह किया है। उस वनमाला को देखकर मैं मोहित हुआ हूँ, यह बात सुनकर राजा सुमित्र अपने मित्रमें स्नेह अधिक होने से, अपने प्राण समान मित्रको जान, एवं अपनी रानी के कारण दुखी देख स्त्रीको मित्रके घर भेजा और आप स्वयं मित्र के घर जाकर झरोखे में छिपकर बैठ गया। और देखता है कि यह क्या करें, अगर मेरी स्त्री मित्रकी आज्ञा प्रमाण नहीं करे, तो मै स्त्रीका नाश करूँ। और इसकी आज्ञा प्रमाण करे तो हजार गाव दूंगा, वनमाला रात्री के समय प्रभव के पास जाकर बैठ गई, तब प्रभव ने पूछा, हे भद्रे! तू कौन है? तब इसने विवाह पर्यन्त का सभी वृतान्त कहा, यह सुनकर प्रभव प्रभारहित होकर चित्त मे उदास हुआ, और विचारने लगा कि, हाय-हाय मैं यह कहाँ अशुभ भावना की, मित्र की स्त्री माता समान उसके ऊपर मेरी दृष्टि खराब हुई, इस पाप से मैं कब छुँटू। बने तो अपना मस्तक काट डालूं। कलंक युक्त जीवन जीने से क्या लाभ। ऐसा विचारकर मस्तक काटने के लिए म्यान से तलवार निकाली, तलवार की ज्योति से दशों दिशायें प्रकाशरूप हो गई, तलवार को कंठ के पास लाया तब राजा सुमित्र झरोखे मे बैठा था, वह कूदकर आया और हाथ पकड लिया, मरते को बचा लिया, छाती से लगाकर कहने लगा–हे मित्र आत्मघातका दोष तू नहीं जानता है, जो अपने शरीर का नाश करता है वह मरकर नरक में जाता है, अथवा और भी अनेकभव अल्पायु के प्राप्त करता है। आत्मघात निगोद का कारण है, इस प्रकार कहकर मित्रके हाथसे

तलवार ले लिया। और मनोहर शब्दोसे बहुत सन्तोष दिया, फिर कहनेलगा, हे मित्र! यहाँ तो परस्पर मे हमारी मित्रता है वह मित्रता परभव में रहे या नहीं रहे, यह संसार असार है, यह जीव अपने अपने कर्मके उदयसे भिन्न भिन्न गतियों को प्राप्त होता है। संसार में कौन किसका मित्र, कौन किसका शत्रु है हमेशा एकसमान दृष्टि नहीं रहती है।

ऐसा कहकर राजा सुमित्र महामुनि हुये और आयु पूर्णकर दूसरे स्वर्ग में ईशान इन्द्र हुये, वहाँ से चयकर मथुरा पुरी में राजा हरिवाहन, रानीमाधवी, उनके यह मधुनाम का पुत्र हुआ। हरिवशरूप आकाशमें चन्द्रमा समान प्रकट हुआ, और प्रभव सम्यक्त्व के बिना अनेक योनियों में भ्रमणकर, विश्वासु की ज्योतिषमती स्त्री के शिखि नाम का पुत्र हुआ। वह द्रव्यलिंगी मुनिहोकर महातपकर निदान के योग से असुरो का इन्द्र चमरेन्द्र हुआ, तब अवधिज्ञान से अपने पूर्वभव को जान राजा सुमित्र, के गुण अतिनिर्मल मनमें धार राजा का मनोज्ञ चरित्र विचारकर असुरेन्द्र का हृदय प्रेम से मोहित हुआ, मन मे सोचा कि राजा सुमित्र महागुणवान मेरा परममित्र था। सब कार्यो मे मेरी सहायता की मित्र सहित मै पाठशाला मे पढा, मैं दरिद्री था मित्र ने मुझे अपने समान विभूति देकर धनवान बनाया, और मैं पापी दुष्ट, उसकी रानी के प्रति खोटे भाव किये, तो भी उसने मेरे से द्वेष नहीं किया। और रानी को मेरे घर भेजा, मैं मित्रकी स्त्रीको माता समान जान, अतिउदास होकर, अपनासिर खड्ग से काटने लगा, तब उसने आकर मेरा हाथपकड, मेरे प्राणो की रक्षा की। मैंने जिनशासन की श्रद्धाबिना मरकर अनेक दुख भोगे। मोक्षमार्ग मे लगे साधुओं की निन्दा की, इसीलिये कुयोनियों में जनम मरणादि के महादुख सहन किये, वह मित्र मुनिव्रत धारण कर दूसरे स्वर्ग में इन्द्र हुआ वहाँसे चयकर मथुरापुरी मे राजा हरिवाहन का पुत्र मधुवाहन हुआ। और मै विश्वासुका पुत्र शिखीनाम का द्रव्य-लिंगी मुनि बनकर असुरेन्द्र हुआ। ऐसा विचारकर उपकार से एव परमप्रेम से अपनेभवन से निकलकर मध्यलोक मे आया, मधुवाहन मित्रसे मिला महारत्नोसे मित्रकी पूजा की। सहस्रांत नामका त्रिशूलरत्न भेंट किया। मधुवाहन चमरेन्द्र को देखकर प्रसन्न हुआ, चमरेन्द्र अपने स्थान को चला गया। हे श्रेणिक! शस्त्रविद्या का स्वामी सिंहों का है वाहन जिसके, ऐसा मधुकुमार हरिवंश का तिलक, रावण है ससुर जिसका, ऐसा राजा मधु मथुरा में सुख से रहता हैं यह मधु का चरित्र जो पुरुष पढ़े सुने, वह महाकांति को प्राप्त कर सभी मनोरथों को सिद्ध करतें हैं।

अथानंतर मरुत के यज्ञ का नाश करनेवाला रावण, लोक में अपना प्रभाव फैलाता हुआ, शत्रुओ को वश करने के लिये अठारहवर्ष विहार किया जैसे स्वर्ग में इन्द्र हर्ष उत्पन्न कराता है वैसे पृथ्वीपर हर्ष उत्पन्न किया। पृथ्वी का स्वामी रावण कैलाशपर्वत के पास आया महानिर्मल मनसे बाली मुनिराज का वृतान्त यादकर चैत्यालयों को नमस्कार कर धर्म एव भक्तिरूप परिणामो से आत्माको विशुद्ध किया। इन्द्रने दूलधिपुर नामके नगरमे नलकुँवर लोकपाल को रक्खा था। उसने गुप्तचरो से सुना कि रावण यहाँ आया है, ऐसा जानकर इन्द्र के पास शीघ्रगामी सेवक को भेजकर सभी वृतान्त कहलाया कि, रावण जगत को जीतता हुआ, समुद समान सेनाको लेकर हमारीनगरी जीतने के लिए पासमे आकर रूका है। सभी लोग कपायमान हो रहे हैं। ऐसा लिखकर एकपत्र दूतके हाथमे दिया, इन्द्र भगवान के चैत्यालयो की वन्दना को जा रहे थे, सो मार्ग मे दूतने इन्द्रके हाथमें पत्र दिया, इन्द्रने पत्र पढकर सब रहस्य को जान लिया, और पुनः पत्र लिखकर उत्तर दिया कि मै पांडुकवन के चैत्यालयो की वन्दना कर के आता हूँ इतने समय तक तुम बहुत सावधानी से रहना, अमोघशस्त्र एव आयुधशाला की रखवाली करना। तुम महाशस्त्र के धारी हो उनसे डरना नहीं, मैं भी शीघ्र ही आ रहा हूँ, ऐसा लिखकर पत्र दिया, वन्दना मे आसक्त है मन उसका। शत्रुओं की चिता न करके पांडुकवन मे चला गया, नलकुँवर लोकपाल ने अपने पास में रहने वालोसे विचार विमर्शकर नगरकी रक्षाके लिये विद्या से सौयोजन ऊँचा वज्रशाल नामका कोट बनाया, वह नगरकी प्रदक्षिणासे तीनगुणा रचा गया। रावण ने नलकुँवर के नगर मे प्रहस्त नाम के सेनापति को भेजा, वहाँ जाकर देख और पुनः लौटकर वापिस आया और रावण से कहा। कि-हे देव! वहाँ मायामयी कोटसे घेरा हुआ वह नगर है। इसलिये अपने से लिया नहीं जायेगा। देखो प्रत्यक्ष दिखता है। सभी दिशाओं में भयानक सर्पसमान शिखर, अग्नि की ज्वालाओं से युक्त, महास्फुलिगो की राशी उसमे से निकल रही है, और यंत्र बेतालभूत का रूप बनाया है। विकरालहै दाढउसकी, एकयोजन के मध्यमें जो मनुष्य आता है उसे निगल जाता है। उस यंत्रके पाससे जो प्राणी निकलते है, तो उसका शरीर भी नहीं रहता है अथवा मरण को प्राप्त हो जाता है। ऐसा जानकर आप दीर्घदर्शी होकर इसनगर को लेने का उपाय सोचे। तब रावण अपने मंत्रियो से कोट का उपाय पूछने लगे तब सभी मत्री मायामयी कोट को दूर करने का उपाय सोचने लगे। कैसे हैं मत्री। नीतिशास्त्र मे अतिप्रवीण।

अथानंतर नलकुँवर की स्त्री उपरंभा, इन्द्र की अप्सरा समान, महा गुणवान, रूपवान उसके रूपकी प्रशसा पृथ्वीपर प्रसिद्ध है। वह रावण को पास आया सुनकर रावण की अभिलाषा करती रही। पहले कई बार उसने रावण के रूप और गुणोंका वर्णन सुना था, इसलिए रावण पर मोहित होकर रात्री में अपनी सहेली विचित्रमाला को कहती है, कि हे मेरीसहेली! मेरे तू प्राणोसे भी अतिप्यारी, तेरेसमान ओर मेरा कोई नहीं, दोनो का मन एक होता है उसे मित्र कहते हैं। मेरे में ओर तेरे में कोई भेद नहीं। इसीलिये हे चतुरे! निश्चय से मेरे कार्य का साधन तू करें, तो मेरेमनकी बात तुझे कहूँ। जब यह बात रानी उपरम्भा ने सहेली से कही, तब सहेली विचित्रमाला कहती है, हे देवी! तुम इसप्रकार की बात क्यों कहती हो। हमतो आपकी आज्ञाकारी सखी है जो कार्य आप बताये वही मैं करूगी। मैं अपने मुख से अपनी स्तुति क्या करूँ। स्वयं की स्तुति करना लोक निद्य कार्य है। बहुत क्या कहूँ मुझे तुम साक्षात कार्य की सिद्धि जानो, मेरा विश्वास करो, और जो आपके मनमे है वह कहो। हे स्वामिनी! हमारे होते हुये आपको किसी बातका खेद करने की आवश्यकता नहीं है। तब उपरंभा मुखपर हाथ रखकर मुख से नहीं कहा जाये, ऐसे वचन धीरे धीरे सखी से कहने लगी। हे सखी! बालपन से ही मेरामन रावणपर मोहित हुआ है, रावण लोक मे प्रसिद्ध महासुन्दर, मैने उनके गुण अनेकबार सुने है। अब तक मै अन्तराय कर्म के उदयसे रावणके संगमको प्राप्त नहीं हो सकी। मनमे मेरे रावण के प्रति अतिअनुराग था परन्तु अप्राप्ति का मुझे निरन्तर पश्चाताप होता है। हे सखी! मैं जानती हूँ, यह कार्य प्रशसा योग्य नहीं है। स्त्री परपुरुष के सयोग से नरक में जाती है। परतु मैं मरण को सहने मे भी समर्थ नहीं हूँ।

अत हे मिष्टभाषिणी! मेरा रावण से मिलने का शीघ्र उपायकर। वह मेरे मनको हरनेवाला, मेरे पास ही आया हुआ है। किसी भी उपाय से उनको प्रसन्नकर, मेरा उनसे सयोग करा दे। हे सखी! मै तेरे चरणो मे गिरती हूँ। ऐसा कहकर वह रानी, सखी के चरणों मे गिरने लगी। तब सखी ने उसके मस्तक को हाथों से रोक लिया, और कहनेलगी कि-हे स्वामिनी! तेरे कार्य को मैं क्षण मात्र में सिद्ध करूँ। यह कहकर सखी घर से निकल गई। सखी सभी कार्यो मे दक्ष अतिसूक्ष्म श्यामवस्त्र पहन कर आकाशमार्ग से रावण के समीप आई। द्वारपालो से अपने आगमन का वृतान्त कहकर रावण के पास जाकर नमस्कार किया। आज्ञा प्राप्त कर बैठगई और विनतीकर कहा कि-हे राजन् आप सम्पूर्ण गुणों सहित हैं, सभी

लोग आपको देख अतिप्रसन्न हो रहे हैं। आपको यही योग्य है। इस पृथ्वी पर सबको ही आप तृप्त करते हैं, आप सबके आनन्द रूप हैं, आपका चेहरा देखकर मन में लगता है कि आप कभी भी किसी की प्रार्थना भंग नहीं करते हैं, आप बडे दातार है, सबके सभी कार्य पूर्ण करते है आप समान महापुरुषों की जो विभूति है, वह परोपकार के लिये ही है आप सबको विदाकर एकक्षण एकान्त में बैठकर मन लगाकर मेरी बात सुनो, जिसे मै कहती हूँ, तब रावण ने ऐसा ही किया। सखी विचित्रमाला ने उपरभा का सम्पूर्ण वृतान्त कान मे कहा। तब रावण दोनो हाथ कानपर रख, सिर हिलाता हुआ नेत्रो को सकोचकर, केकसीमाता का पुत्र उत्तम आचरण से युक्त, वे कहने लगे, हे भद्रे! यह बात क्या कही। यह काम पापबंध का कारण, यह कार्य कैसे करने मे आते, मै पर स्त्री को अंगदान देने मे दरिद्री हूँ। ऐसे कार्य को धिक्कार हो। तुमने अभिमान छोडकर यह बात कही, परन्तु भगवान की आज्ञा है कि विधवा, कॅवारी, परणी एव वेश्यादि सभीही परनारी सदा त्यागने योग्य है। परस्त्री रूपवती भी हो तो क्या? जो मानव दोनो लोको को भ्रष्ट करे वह मनुष्य किस काम का। हे भद्रे! जिस स्त्री का शरीर परपुरुष के द्वारा भोगा गया वह स्त्री वमन भोजन के समान है। उसे कौन पुरुष अगीकार करेगा? यह बात सुनकर विभीषण एव महामत्री सम्पूर्ण नय के ज्ञाता राजविद्या मे श्रेष्ठ है बुद्धि जिनकी, वे रावण को एकान्त में बुलाकर कहने लगे—हे देव! राजाओ के अनेक चरित्र होते है। किससमय किस प्रयोजन के लिये, थोडी झूठ भी बोलनी पडती है। इसीलिये आप अभी इससे अत्यन्त रूखी बात मत करो। वह उपरभा वश हो गई तो इस कोटको नाश करने का उपाय बतायेगी, ऐसे वचन मत्री एव विभीषण के सुनकर रावण राजविद्या में निपुण मायाचार से सखी विचित्रमाला से कहते हैं। हे भद्रे! यदि उपरभा मेरे मे मन रखती है और मेरे बिना अत्यन्त दुखी है, तो उसके प्राणो की रक्षा करना मेराधर्म है। इसलिये उसके प्राण नहीं निकले उसके पहले उसको मेरे पास ले आओ। ऐसा कहकर सखी को भेजदी। वह सखी तत्काल जाकर उपरभा को लेकर आ गई, रावण ने उपरभा का बहुत सन्मान किया। तब उपरंभा महाप्रेम से भरी कामसेवन की प्रार्थना रावण से करने लगी। तब रावण ने कहा—हे देवी! दुर्लधनगर में मेरी रमने की इच्छा है, यहाँ उद्यान में क्या सुख प्राप्त होगा। ऐसा उपाय करो कि नगर में जाकर तुम्हारे साथ भोग करूँ। तब वह कामासक्त रावण के कुटिल स्वभाव को न जानकर मायामयी कोट को नाश करनेवाली आसाल नाम की विद्या एवं अनेक दिव्यशस्त्र

रावण को दिये। जिनकी अनेकदेव रक्षा करते है, विद्या के लाभ से तत्काल मायामयी कोट नष्ट हो गया, जो हमेशा का कोट था वह रह गया। तब रावण बडी सेना के साथ नगर के पास गया। नगर मे कोलाहल सुनकर राजा नलकुँवर क्रोध को प्राप्त हुआ। मायामई कोट को न देखकर बडा दुखी हुआ और सोचा कि रावण ने मेरा नगर ले लिया। परन्तु महापुरुषार्थ कर युद्ध के लिये नलकुँवर नगर के बाहर आया। अनेक योद्धाओ सहित परस्पर शस्त्रो से महासंग्राम हुआ। जहाँ सूर्य कि किरणें भी नजर नहीं आती, क्रोधभरे कटु शब्दों से एक दूसरों को बुलाते रहे। तब विभीषण ने शीघ्र ही लातो द्वारा नलकुँवर के रथ को तोड दिया और उछलकर नलकुँवर को पकड लिया। जैसे रावण ने सहस्रकिरण को पकडा था। वैसे विभीषण ने नलकुँवर को पकडा।

रावण के आयुधशाला मे सुदर्शनचक्ररत्न उत्पन्न हुआ। उपरंभा को रावण ने एकान्त में कहा। हे देवी! तुमने मुझे विद्यादान दिया सो तुम मेरी गुरु हुई। और तुमको यह योग्य नहीं जो अपने पतिको छोडकर दूसरे पुरुष की इच्छाकर रही हो। और मुझे भी अन्याय मार्ग सेवन करना योग्य नहीं, इसप्रकार रावण ने उपरंभा को अनेकप्रकार से समझाकर सन्तुष्ट किया। और कहाँ कि नलकुँवर के साथ मनवांछित सभी भोग भोगो, काम सेवन के कार्यो मे, पुरुषों मे क्या अन्तर है। यह अयोग्य कार्य करने मे मेरी अपकीर्ति होती है, और मैं ही ऐसे करूँ तो ओर लोग भी इसीमार्ग मे प्रवृत्ति करेगे। पृथ्वीपर अन्याय की प्रवृति होगी। तुम राजा आकाशध्वज की पुत्री तेरी माता मृदुकान्ता, तूने उत्तमकुल में जन्म लिया हैं। अब तुझे पर पुरुष का त्याग करना ही योग्य है। इस प्रकार रावण ने कहा, तब उपरंभा ने लज्जा युक्त होकर अपने पति मे सतोष किया, और नलकुँवर भी स्त्री का व्यभिचार नहीं जान कर, स्त्री सहित सुख से रहता रहा। राजानलकुंवर ने रावण से बहुत सम्मान प्राप्त किया। रावण की यही क्रिया है, जो आज्ञा मानते उसका सम्मान करते, जो आज्ञा नहीं मानते, उससे युद्ध करते, और युद्ध में जो मर गया वह मर गया और जिसको पकड लिया उसको छोड दिया। रावण ने संग्राम मे शत्रुओं को जीतकर यश प्राप्त किया। अपनी बडीसेना से युक्त रावण वैताडपर्वत के पास जाकर ठहरे। तब राजा इन्द्रने रावणको अपने समीप आया सुनकर अपने निकट जो विद्याधर देव कहलाते थे, उन सबसे कहा आपसब युद्ध की तैयारी शीघ्र ही करो। कहाँ विश्रामकर रहे हो। राक्षसों का अधिपति रावण आया है, यह कहकर इन्द्र अपने पिता सहस्रार के पास सलाह करने गया, नमस्कार

कर बहुत विनय से पृथ्वीपर बैठकर पिता से पूछा, हे देव! शत्रुप्रबल अनेक शत्रुओं को जीतने वाला हमारे निकट आया है, सो हमारा क्या कर्त्तव्य है। हे तात्! मैंने काम बहुत विरुद्ध किया। इसका जन्म होते ही इसको मैंने नष्ट नहीं किया। कांटा उत्पन्न होते ही हाथसे टूट जाता है, परन्तु कठोर होने के बाद चुभता है। रोग होते ही मिट जाए तो सुख होता है, रोग की जड फैल जाए तो कटना कठिन है। ऐसे ही क्षत्री, शत्रुकी वृद्धि न होने दे, मैने अनेकबार उद्यम किया, उसको नाश करने का, परन्तु आपने मना कर दिया, मैंने उसे क्षमा किया। हे प्रभो! मैं राजनीति के मार्ग से विनती करता हूँ, रावण को मारने में, मैं असमर्थ नहीं हूँ, ऐसे गर्व और क्रोध से भरे पुत्र के वचन सुनकर सहस्रार ने कहा। हे पुत्र! तुम शीघ्रता मत करो, अपने श्रेष्ठमत्री हैं उनसे मंत्रणा करो, जो बिना विचारे कार्य करता है उनके कार्य सफल नहीं होते है। कार्यसिद्धि का निमित्त केवल पुरुषार्थ ही नहीं है। जैसे किसान खेती करता है उसको मेघ वृष्टि के बिना कार्य की सिद्धि नहीं होती है। जैसे पाठशाला मे शिष्य पढते है, तो सबको ही सब विद्याये प्राप्त नहीं होती है। परन्तु कर्मके वशसे किसीको विद्यायें सिद्ध होती है, और किसीको नहीं। इसीलिये केवल पुरुषार्थ से ही सिद्धि नहीं है। अब भी रावण से मिलाप करो, जब रावण प्रसन्न हो, तब तू पृथ्वी का निष्कटक राज्य करना और अपनी पुत्री रुपवती, महारुपवान उसका रावण से विवाह करा दो, इसमे कोई दोष नहीं है। यह तो राजाओ की रीति है। पवित्र मन एवं बुद्धि से पिता ने इन्द्र को न्यायरूप शिक्षा दी। परतु इन्द्रने नहीं मानी। और क्षणमात्र में क्रोध से नेत्र लाल हो गये, पसीना आ गया। तब महाक्रोधरूपी वाणी से कहता है—हे पिता मारने योग्य वह शत्रु, उसे पुत्री कैसे दी जाये। जैसे जैसे उमर बढती है वैसे वैसे बुद्धि क्षय होती हैं, इसीलिये आपने यह बात योग्य नहीं कही। आप ही बताओ, मै किससे कम हूँ, मेरे कौनसी वस्तु की कमी है, जो आप ही ऐसे कायर वचन कहते हो। जैसे सुमेरुपर्वत के चरणो में चॉद सूर्य लगे रहते हैं, तो महासुमेरु दूसरों के सामने कैसे झुकेगा। वह रावण पुरुषार्थ से बलवान है, तो मैं भी उससे ज्यादा बलवान हूँ, भाग्य उसके अनुकूल है, यह बात आपने कैसे जानी। और अगर आप कहोगे उसने बहुत शत्रु जीते हैं, तो अनेक हिरणों को मारनेवाले सिंहको अष्टापद नहीं मारता है क्या? हे पिताजी! रण संग्राम मे मरना अच्छा है, परन्तु किसी के चरणों मे झुकना बडे पुरुषो को योग्य नहीं है। पृथ्वीपर मेरी हंसी नहीं होगी क्या? सभी लोग यही कहेगे कि, यह इन्द्र रावण के चरणो में झुककर, पुत्री का विवाह

कराकर, रावण से मिल गया। इसका तो आपने विचार नहीं किया, और विद्याधर पने से हम और वह बराबर है। परन्तु बुद्धि पराक्रम में वह मेरे बराबर नहीं है, जैसे–सिह श्याल दोनो वन के निवासी है, परन्तु सिह के समान श्याल नहीं है। इसप्रकार पितासे अभिमान के वचन इन्द्र ने कहे। पिता की बात नहीं मानी, पितासे विदा होकर इन्द्र आयुधशाला मे गये। और सभी को युद्ध का आदेश देकर, क्षत्रियो को हथियार बखतर सबको दिये और अनेक प्रकार के युद्ध के बाजे बजने लगे। दोनों सेनाओ में शब्द होने लगे, हाथियो को सजाओ, घोडा के प्लान कसो, रथों के घोडे जोडो, बखतर पहनो, खडग एव धनुष बाण लो सिरपर टोप रखो। शीघ्र ही खंजर लाओ इत्यादि शब्द देवजाति के विद्याधरो एव राक्षसजाति के विद्याधरो में हुये।

सभी योद्धा क्रोधको प्राप्त हुये, ढोल बजाने लगे, हाथी गरजने लगे, घोडे हींसने लगे, और धनुष के टकार होने लगे, योद्धाओ के गुजार शब्द होने लगे, बंदीजन विरद बखानने लगे। सभी दिशाये तलवार तोमर जाति के शस्त्र, धनुष बाण इत्यादि से आच्छादित हुई। राजा इद्रकी सेना के जो विद्याधर देवादि सब रथनुपुर से युद्ध के लिये निकले। सब साम्रगी सहित युद्ध के अभिलाषी दरवाजेपर आकर इकट्ठे हुये। परस्पर कहते है, रथ आगे करो, मत्तहाथी आया है, महावत से कहते है हाथी को दूर ले जाओ। घोडे के सवार कहॉ खडा है, घोडे को आगे ले जाओ। इत्यादि शब्दो से बाहर निकले, सेना शामिल हुई। राक्षसो की सेना के सन्मुख आये।

रावण और इन्द्र के युद्ध होने लगा, देवोने राक्षसो की सेना हटाई, तब रावण के योद्धा वज्रवेग, हस्त, प्रहस्त, मारिच, उद्‌भव, वज्रचक्र, शुक्र, घोर, सारन, गगनोज्वल, महाजठर, इत्यादि अनेकराजा विद्याधर बडे बडे योद्धा राक्षसवशी अनेक वाहनोपर चढे, अनेकआयुधो के धारक देवोसे लडने लगे। उनके प्रभाव से देवो की सेना हटी। तब इन्द्र के योद्धा क्रोध से युद्ध के सन्मुख आये उनके नाम मेघमाली, तडित्पग, ज्वलिताक्ष, सज्वर इत्यादि बडे बडे देवों ने शस्त्रो से राक्षसों को दबाया। राक्षस शिथिल हुये तब बडे विद्याधर इनको साहस देते रहे, राजा महेन्द्रसेन वानरवंशी का पुत्र प्रसन्नकीर्ति ने बाणो के प्रहार से देवों की सेना हटाई, राक्षसो को साहस हुआ, तब देव प्रसन्नकीर्ति पर आये। तब प्रसन्नकीर्ति ने बाणों के प्रहार से दूर किया। दोनो तरफसे महायुद्ध हुआ। तब माल्यवान का बेटा श्रीमाली रावण का चाचा महाप्रसिद्ध अपनी सेनाके मदद के लिये देवों से

लडने लगे, जैसे मगरमच्छ समुद्र को झकोले वैसे श्रीमाली ने इन्द्र की सेना को झकोली। तब देवोंकी सेना हटी, तब इनकी सेनाके लोग श्रीमाली पर आये, श्रीमाली ने अर्धचन्द्र बाणो से आकाश को आच्छादित किया, तब इन्द्रने जाना कि यह श्रीमाली मनुष्यों मे महायोद्धा राक्षसों का अधिपति माल्यवान का पुत्र है, इसने मेरे बडे बडेदेव मारे है, और मेरे भानजे को मारा। इसके सन्मुख मेरे देवों मे से कौन आये। यह महा तेजस्वी देखा नहीं जायें। इसीलिये मै युद्धकर उसे मारुँ। नहीं तो मेरे अनेकदेवो को मारेगा। ऐसा कहकर इन्द्र मालीपर आया, तब इन्द्रका पुत्र जयत पिताके चरणोमे विनती करता है हे देवेन्द्र! हमारे होते हुए आप युद्ध करेगे, तो हमारा जन्म निरर्थक है, ऐसा कहकर पिताकी आज्ञालेकर युद्धके लिये क्रोधसहित जयंत श्रीमालीपर आया। श्रीमाली इसको युद्ध के योग्य जान सन्मुख गये, ये दोनो ही राजकुमार परस्पर युद्ध करने लगे, धनुष बाण चलाने लगे। श्रीमाली ने कनकनाम के हथियार से जयन्त का रथ तोडा और उसको घायल किया, तब वह मूर्च्छा खाकर गिरपडा कुछ समय पश्चात् सचेत होकर पुन लडने लगा, श्रीमालीके रथको भिण्डमाल तोडा और मूर्च्छीत किया, तब देवोंकी सेनामे हर्ष हुआ और राक्षसो को सोच हुआ। फिर श्रीमाली सचेत होकर जयन्त के सामने आया, दोनो मे महायुद्ध हुआ, दोनोसुभट युद्ध करते क्षोभ को प्राप्त हुये। बहुत देर के बाद जयन्त ने श्रीमालीको गदासे छातीमे मारा तब श्रीमाली पृथ्वी पर गिरा खूनकी धारा बहने लगी। जैसे तत्काल सूर्य अस्त हो जाय, ऐसे ही श्रीमाली तत्काल प्राणो से रहित हुआ, (मर गया) श्रीमालीको मारकर जयंत ने शंखनाद किया, तब राक्षसोकी सेना भयभीत हुई। श्रीमाली को प्राण रहित देख, और जयन्त को बलवान देख रावण का पुत्र इन्द्रजीत ने अपनी सेना को साहस दिलाया, और क्रोधकर जयंत के सन्मुख आया, इन्द्रजीत ने जयन्त का वखतर तोड दिया, अपने बाणों से जयंत को जरजर कर दिया। तब इन्द्र जयतको घायल देख आपस्वय युद्ध को आया। आकाशको अपने शस्त्रोसे आच्छादित करता हुआ अपने पुत्र की मदद के लिये इन्द्रजीतपर आया। तब रावणको सुमतिनाम के सारथी ने कहा। हे देव! ऐरावत हाथीपर चढ लोकपालो सहित हाथो में चक्रलेकर इन्द्र महाबलवान इन्द्रजीत के सामने आया है। सो इन्द्रजीत कुमार उससे युद्ध करने मे समर्थ नहीं होगा। आप पुरुषार्थकर अहकार युक्त जो शत्रु है, उसका निवारण करो, तब रावण इन्द्रको सन्मुख आया देख, पहले मालीका मरण यादकर, अभिहाल में श्रीमालीका वधदेख महाक्रोधित होकर पवन समान वेग वाले रथपर

चढा, दोनो सेनाओं के परस्पर महायुद्ध से खून की नदियॉ बहने लगी। गदा, शक्ति, बरछी, मूसल, खड्ग, तलवार, परिगजाती के कनकजाती के शस्त्र, त्रिशूल, मुखण्डि, कुलाडी, नानाप्रकार के शस्त्रो से महायुद्ध हुआ रण मे शब्द हो रहे हैं, कहीं मार लो-मार लो, कहीं रण रण, कहीं कण कण, त्रम त्रम, दम दम, चम चम, पट पट, चट चट इत्यादि अनेक शस्त्रो से शब्दो से रणमंडल गुंजायमान हो रहा है। हाथी से हाथी मारे, घोडो से घोडे मारे, रथो से रथ तोडे, पयादो से पयादे मारे, परस्पर गजयुद्ध कर हाथियो के दात टूट पडे, गजमोती बिखर गये, कोई कहता है, हे शूरवीर अस्त्र चलाओ क्यो कायर हो रहे हो, हमारे से युद्धकर, खडग का प्रहारदेख यह मरगया, तू अब कहॉ जा रहा है, तेने ऐसी युद्धकला कहॉ सीखी है, तलवार तो पकडना नहीं जानता, कोई कहता है, तू रणसे भाग जा, अपनी रक्षाकर, तू युद्ध करना क्या जानता है तेरा शस्त्र मेरे को लगा, तो मेरे युद्ध की खाज भी नहीं मिटी, तूने तो बिना मतलब ही स्वामी की आजीविका खाई, मालखाया, अरे तूने युद्ध कहॉ देखा है, तू तो कॉप रहा है, मुट्ठी दृढरख, तेरे हाथ से तलवार गिर जायेगी, इत्यादि योद्धाओ में परस्पर बातें चली, किसीकी एकभुजा टूट गई, तो एकहाथ से युद्ध करता रहा, किसी का मस्तक कटगया, तो धडही लडता रहा। शूरवीरो को युद्ध मे मरण प्रिय है लेकिन हारकर जीना प्रिय नहीं, शस्त्रो के घात से प्राणत्याग करते, परन्तु कायर होकर अपयश नहीं लेते। रावण और इन्द्र के युद्ध मे हाथी, घोडे, रथ, योद्धा, हजारो गिरे हजारो मरे कोई शत्रु को बाध कर छोड दिया, कोई शत्रु के पास शस्त्र न देख कर स्वय ने भी आयुध डाल खडा हो गया।

कोई अन्त समय मे सन्यास धार णमोकार मंत्रका उच्चारणकर स्वर्गको प्राप्त किया। कोई मरता मरता भी प्रतिपक्षी को मारकर स्वय मरा। कोई परमक्षत्रिय धर्मज्ञ शत्रुको मूर्च्छित देख स्वय पंखे से हवाकर सचेत करता रहा। अनेक योद्धा मर गये, शस्त्रकट गये, रथचूर्ण हो गये, हाथियोकी सूड, कटगई, घोडे के पाव कट गये, पूछ कटगई, खूनके प्रवाहसे सब तरफ पृथ्वीलालहो गई। इतना युद्ध हुआ तो भी रावण को किंचित मात्र भी चिन्ता नहीं हुई। रण में कौतुहल है, ऐसे सुभट सुमतिनामके सारथी को रावण ने कहा। हे सारथी! इस इन्द्रके सन्मुख रथ चलाओ, सामान्य मनुष्यों को मारने से क्या? यह तृणसमान सामान्य मनुष्य उनपर मेरा शस्त्र नहीं चले, मेरा मन महायोद्धाओं से युद्ध करने मे तत्पर है। यह क्षुद्र मनुष्य, अभिमान से लोगो द्वारा इन्द्र कहलवाता है। आज उसेही मॉरू अथवा

पकड़ूं। इसने पाखण्ड मचा रखा है। इसको तत्काल दूर करूँ। देखो इसका ढीटपना अपने आपको इन्द्र मानता है, और कल्पना से लोकपालों की स्थापना की है, अनेक मनुष्य एव विद्याधरों को देव संज्ञा रखी है। देखो थोडी सी विभूति प्राप्तकर पागल हुआ है, लोक मे हंसी का भय नहीं हैं, जैसे नर स्वाँग रचता है, वैसे दुर्बुद्धि अपने आपको भूल गये है, पिताका वीर्य, माता के रज से हाड़ मॉस से युक्त शरीर, माता के उदर से उत्पन्न हुआ है, फिर भी अपने आपको देवेन्द्र मानता है। विद्या के बल से यह कल्पना की है। जैसे कौवा अपने आपको गरुड मानता है, ऐसे यह इन्द्र कहलाता है। रावणने ऐसा कहा तब सारथीने, रथ इन्द्र के सन्मुख किया। रावणको देख इन्द्रके सुभट सब भागकर चले गये। रावण से युद्ध करने मे कोई समर्थ नहीं, रावण सबको दया दृष्टि से कीडे समान देखता है। रावण के सन्मुख एकइन्द्र ही रहा, और सब कृत्रिमदेव रावण का छत्र देख सबभाग गये। इन्द्र भी कैलाशपर्वत समान हाथीपर चढ, धनुष लेकर तरकश से तीर निकाल रावण के सन्मुख आया, कान तक धनुष को खींच रावणपर बाण चलाया जैसे पहाडपर वर्षाकी मोटी मोटी धारा बरसे। ऐसे रावणपर इन्द्र ने वाणों की वर्षा की। रावण ने इन्द्र के बाण आते आते काट दिये। ऐसा युद्धदेख नारद आकाश मे नाचने लग गये। जब इन्द्रने जाना कि यह रावण सामान्य शस्त्र से नहीं जीता जायेगा। तब इन्द्र ने अग्निबाण रावणपर चलाया, रावण की सेना आकुल व्याकुल हो गई, रावणने अपनी सेनाको व्याकुल देख तुरन्त ही जल बाण चलाया। तब मेघमाला उठी और पर्वतसमान मोटी मोटी जलकी धारा बरसने लगी। क्षणमात्र मे अग्निबाण बुझ गया। तब इन्द्रने रावण पर तामसबाण चलाया, तो दशो दिशाओं मे अन्धकार हो गया। रावण के कटक मे दिखना बंद हो गया। तब रावण ने प्रकाशबाण चलाया। अंधकार समाप्त हो गया। पुनः रावण ने नागबाण चलाया सो मानो महा काले नागही चले हो, सो इन्द्र की सब सेना को लिपट गये इन्द्र व्याकुल हुआ। तब इंद्र ने गरुडबाण चलाया, गरुडबाण सोने के समान पीले वर्ण का इसलिये आकाश भी पीला हो गया, तब रावण का कटक हिलने लगा, मानो झूले में झूल रहा हो। गरुडके प्रभाव से इन्द्र छूटकर खुश हुआ, तब रावणने त्रैलोक्यमंडन हाथीको इंद्रके ऐरावत हाथी की तरफ चलाया। इन्द्रने भी ऐरावतहाथी को त्रैलोक्यमंडन पर चलाया। दोनों महागज महागर्व से युद्ध करनेलगे, परस्पर सूंडो से अद्‌भूत संग्राम किया, तब रावण ने उछलकर, इन्द्रके हाथीके मस्तकपर पैररख, अति शीघ्रता से गज के सारथी को, पैरों से मारकर नीचे गिरा दिया,

और इन्द्रको कपडों से बाध लिया। और बहुत दिलासा देकर अपने हाथी पर ले आया, इन्द्रजीत ने इन्द्रके पुत्र जयन्तको पकडा, अपने अपने सुभटों को सौंप दिया। तब इन्द्रजीत स्वय इन्द्र के सुभटो पर दौडा, तब रावण ने मना किया। हे पुत्र! अब रणसे निवृत होओ। क्योकि समस्त विजयार्ध का स्वामी पकडा गया। अब सभी योद्धा अपने अपने स्थानपर जाओ, सुखसे रहो। रण मे जीत के बाजे बजे। ढोल, नगाडे, शख इत्यादि अनेक बाजो का शब्द हुआ इन्द्र को पकडा देख, रावण की सेना हर्षित हुई। रावण लका मे चलने को तैयार हुआ। महासेना से मंडित राक्षसों का अधिपति रावण लका के समीप आया। तब सभी बधुजन एव नगर के रक्षक तथा परिवार जन सभी दर्शन के अभिलाषी भेंट लेकर सन्मुख आये। सभी ने रावणकी पूजा की, और जो बडे पुरुष घर में थे उनकी रावण ने पूजा की। रावणने बडो को नमस्कार किया, अन्य सभी लोगों ने रावण को नमस्कार किया। किसीको रावणने कृपादृष्टि से, किसीको मंद मुस्कान से, किसीको वचनोंसे, रावण सबको प्रसन्न करता रहा। लंका तो सदा ही मनोहर है, परन्तु रावण महाविजय कर आया है, इसीलिये अधिक सजाई गई है। ऊचे ऊचे तोरण, मद मद पवन से अनेक वर्ण की ध्वजाये फहरा रही है, सब ऋतुके फल फूलो से पूरित पृथ्वी शोभित है। राजमार्ग पचवर्णों के रत्नो से रचे गये है, मांगलिक मडल दरवाजो पर रचे गये है। पूर्णकलश कमलो के पत्तो से ढके सुहागन महिलायें लेकर खडी हुई हैं। जैसे देवो सहित इन्द्र स्वर्ग मे आते, वैसे विद्याधरो के स्वामी लंका में आये, रावण पुष्पकविमान मे बैठ, अनेक आभूषणो से युक्त, महारुपवान, उनको नगरके नर नारी देखते देखते तृप्त नहीं हुये। ऐसी मनोहर मूरत है। नाना प्रकार के बाजो के शब्द एव जय जयकार के शब्द गूज रहे हैं। नृत्य कारणीयॉ नृत्य करती है। इत्यादि हर्ष से रावण ने लका में प्रवेश किया। महा उत्साह सहित लकाके लोगो को देख रावण अतिप्रसन्न हुये। सेवको को अतिआनन्द हुआ, महा उत्सव से रावण राज महल मे आये। देखो भव्यजीवो! रथनूपुर के धनी राजा इन्द्रने, पूर्व पुण्यके उदयसे, समस्त शत्रुओ को जीतकर, सब सामग्री से पूर्ण दोनोश्रेणी का राज, बहुत वर्षों तक किया, इन्द्र के समान विभूति को प्राप्त हुआ। और जब पुण्यक्षीण हुआ, तब सम्पूर्ण विभूति नष्ट हो गई। रावण इन्द्रको पकडकर लका मे ले गया, मनुष्य का सुख चचल है, धिक्कार है ऐसे सुख को। देवों का भी विनाशीक सुख है, फिर भी आयु पर्यन्त दूसरा रूप नहीं होता। जब दूसरी पर्याय प्रकट करते हैं, तब दूसरा रूप होता है। और मनुष्य तो एक ही पर्याय में

अनेक दशा को भोगते है। इसीलिये जो मनुष्य माया का गर्व करते है, वह महामूर्ख हैं। यह रावण पूर्ण पुण्य से प्रबल शत्रुओ को जीतकर वृद्धि को प्राप्त हुआ। यह जानकर, हे भव्यजीवों! सम्पूर्ण पापकर्मो का त्यागकर, शुभकार्य ही करो। पुण्य से सभीकार्य सिद्ध होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे इन्द्र का पराभव वर्णन करनेवाला बारहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-13

विद्याधर इन्द्र का निर्वाण गमन

अथानंतर इन्द्रके योद्धा स्वामी के दुख से दुखी हुये। तब इन्द्र का पिता सहस्रार जो उदासीन श्रावक है, उनसे विनतीकर इन्द्रको छुडाने के लिए, सहस्रार को लेकर लका मे रावण के पास आये। द्वारपाल से विनतीकर इन्द्र का सम्पूर्ण वृतात कहकर रावण के पास आये। रावण ने सहस्रार को उदासीन श्रावक जानकर बहुत विनय किया। और सिहासन पर बैठाया, आप सिहासन से उतरकर नीचे बैठे। सहस्रार रावणको विवेकी जानकर कहते है,—हे दशानन! आप जगतको जीतने वाले है, आपने इन्द्रको भी जीता, तुम्हारे भुजाओ का बल सबने देखा, बडे बडे राजाओ का मान दूरकर, पुन आप उनकी ही कृपा करते है। इसीलिये अब आप इन्द्रको भी छोडो। ऐसा रावणसे इन्द्र के पिता सहस्रार ने कहा, और चारो लोकपालो ने भी यही कहा। तब रावणने सहस्रार से हाथ जोडकर कहा, जो आप कहेगे वैसा ही होगा, और लोकपालो से हसते हुये कहा, तुम चारो ही लोकपाल नगर मे झाडू लगाओ, एव नगरी को कांटो कंकरो से रहित करो। और इन्द्र सुगध जलसे पृथ्वीका सींचन करे, पॉचवर्ण के मनोहर सुगधित पुष्पो से नगर को सुशोभित करे। रावण ने ऐसा कहा, तब लोकपाल तो, लज्जा से युक्त हो मुख नीचा किया, सहस्रार ने अमृत समान वचन कहे। हे धीरवीर! तुम जो आज्ञा करोगे वही सब कार्य करेंगे। तुम्हारी आज्ञा शिरोधार्य है। आप जैसे गुरुजन पृथ्वी के ऊपर शिक्षा दायक नहीं हो, तो पृथ्वी के लोग अन्यायमार्ग में प्रवृत्ति करने लग जायेंगे। यह वचन सुनकर रावण अतिप्रसन्न

हुआ। और कहा हे पूज्य! आप हमारे पिता समान हो, यह इन्द्र मेरा चौथा भाई है, उसको पाकर मे सम्पूर्ण पृथ्वी शत्रु रहित करूँगा। इसका इन्द्रपद वैसा का वैसा ही रहे और लोकपाल भी जैसे के वैसे ही रहे। और दोनों श्रेणी के राज्य से अधिक चाहो तो ओर ले सकते हो। मेरे मे और इन्द्र में कोई भेद नहीं है। और आप हमारे से बडे हो, गुरु हो, जैसे इन्द्र को शिक्षा देते हो वैसे ही मुझे दो, आपकी शिक्षा अलंकार रूप है, आप रथनुपूर मे रहो या लका मे विराजो, दोनो आपकी ही भूमि है। ऐसे प्रिय वचनो को सुनकर सहस्रार का मन बहुत सतोषित हुआ। तब सहस्रार ने कहा—हे भव्य! आप समान सज्जन पुरुष की उत्पत्ति लोक मे आनन्दको देने वाली है। आपके शूरवीर पने का आभूषण और उत्तम विनय, सम्पूर्ण पृथ्वी मे प्रशसा के योग्य है। आपको देखकर हमारे नेत्र सफल हुये, धन्य आपके माता पिता जो आप जैसे पुत्रो को जन्म दिया, कुंदके पुष्प समान आपकी उज्वलकीर्ति फैल रही है, आपके समान क्षमावान, दातार, गर्वरहित, ज्ञानी, गुणवान अन्य नहीं है। आपने कहा यह आपका ही घर है। जैसा इन्द्र वैसा मै, सो आप इन सब बातो के लायक हो, आपके मुख से ऐसे वचन निकले, आपके समान पुरुष, इस ससार मे विरले ही है। परन्तु जन्मभूमि माता के समान है, सो उसे छोडी नहीं जाती। जन्मभूमि का वियोग मनको आकुलित करता है। तुम सब पृथ्वी के पति हो तुमको भी लकाप्रिय है। हमारे मित्र, बधुवर्ग, समस्त प्रजा, हमारे आने की राह देख रहे होगे। इसीलिये हम रथनूपुर ही जायेगे। फिर भी हमारा मन आपके पास ही रहेगा। हे देवो के प्यारे! तुम बहुत काल पृथ्वी की निर्विघ्न रक्षा करो। तब रावण ने उसी समय इन्द्रको बुलाया और सहस्रार के साथ भेजा, और रावण भी बहुत दूर तक पहुंचाने गये। बहुत विनय ये विदाई की। सहस्रार इन्द्र को लेकर लोकपाल सहित विजयार्ध पर्वतपर आये, सम्पूर्ण राज्य जैसा का वैसा करे, लोकपाल आकर अपने अपने स्थान पर बैठे। परन्तु मान भग से मन आकुलित बना रहा। जैसे जैसे विजयार्ध पर्वत के लोग इन्द्र व लोकपालों से मिलने आये। तब वे लज्जा से नीचे मुखकर संकोचित होते रहे। इन्द्र को रथनूपुर नगर से एव रानियों से तथा उपवन से, लोकपालो से प्रजाओ से किसी से भी प्रेम नहीं रहा। यहाँ तक की अपने शरीर से भी राग नहीं रहा। अपमान के कारण मनमे अनेकप्रकार के दुखो से दुखी रहे। इन्द्रको प्रजाके लोग एव मंत्री आदि सभी प्रसन्न करना चाहते है, अन्य कथाओ से इस बात को भूलाना चाहते है। परन्तु यह भूलते नहीं हैं। इन्द्र का हंसना, बोलना, नृत्यगान देखना, सुनना, भोगो

मे राग होना, इत्यादि सबको छोडकर, अपने राजमहल के मध्य में, गंधमादनपर्वत के शिखर समान ऊँचा, जो जिनमन्दिर है, उसमे बैठकर चिन्तन करते हैं। कि धिक्कार है इस विद्याधर पदके ऐश्वर्य को, जो क्षणमात्र में ही नष्ट हो गया। यह मेरे कर्मो का फल है। रावण मेरा क्या कर सकता है।

अतः संसार मे कर्म बलवान है, मैने पूर्व मे अनेक भोग सामग्रीयो से कर्मो का बध किया है। सो अब मुझे उसका फल भोगना है, इसलिये मेरी यह दशा हुई है। रण सग्राम मे शूरवीरों का मरण हो तो अच्छा है, परन्तु पृथ्वीपर अपयश तो नहीं हो। मैने जन्म से ही शत्रुओ के सिर पर चरण रखकर जीवन जिया है। अब मैं इन्द्र, शत्रु का अनुचर बनकर कैसे राज्य लक्ष्मी का भोग करूँ। अब संसार के भोगो की अभिलाषा छोडकर मोक्षपद की प्राप्ति का कारण जो महाव्रत उसको धारण करूँ। रावण शत्रु का कार्यकर मेरा मित्र बनकर आया, उसने मुझे सबोधन किया। मै ससार सुख के स्वादों में आसक्त रहा, ऐसा विचार इन्द्रकर ही रहा था कि उसी समय निर्वाणसगम नाम के चारण मुनि विहार करते हुए आकाश मार्ग से आये। सौ चैत्यालय के कारण उनका आगे गमन नहीं हुआ, तब वे भगवान का चैत्यालय जान नीचे उतरे। और भगवान के दर्शन किये। मुनिराज चारज्ञान के धारी है, उन्हे देख इन्द्र ने उठकर मुनिराज के चरणो मे नमस्कार किया। और मुनिराज के पास बैठकर, बहुत देर तक अपनी निंदा की, सर्व ससार को असार जानने वाले मुनिराज परमामृतरूपी वचनो से इन्द्र को उपदेश दिया कि-हे इन्द्र! यह ससार की माया क्षणभगुर है, इसका कोई आश्चर्य नहीं। मुनिराज के मुख से धर्मोपदेश सुन, इन्द्र ने अपने पूर्वभव पूछे, तब मुनिराज कहते है। कैसेहैमुनि? अनेक गुणो के समूह से सुशोभित है। हे राजन्! अनादिकाल से यह जीव चारो गतियो मे भ्रमण कर रहा है। तुमने ससार मे अनन्तभव धारण किये। वह केवलज्ञानी जानते है। उनमे से मैं तुझे कुछ सुनाता हूँ। शिखापदनगर मे एक स्त्री महादुखी उसका नाम कुलवती था, वह कुरूप अनेक व्याधियों से सहित, पापकर्म के उदय से अन्यलोगों की झूठन खाकर अपना जीवन का पालन करती हैं, मैले फटे कपडे कालाशरीर जहा जाये वहाँ के लोग अनादर करते है, इसके जीवन मे कभी भी कहीं भी, सुख नहीं हैं, मरण के अन्त समय मे शुभ परिणामों से एक मुहूर्त (48 मिनट) के लिये उसने चारोप्रकार के आहारका त्याग किया और प्राण त्यागकर, किंपुरुष देव के शीलधरा देवी हुई। वहॉ से चयकर रत्ननगर मे गोमुख ब्राह्मण के धरनीनाम की स्त्री के सहस्रभाग नाम का पुत्र हुआ। वह

सम्यक्त्व को प्राप्तकर श्रावक के व्रत धारण करके मरण किया, पुन. शुक्रनाम के नवमेस्वर्ग में उत्तम देव हुआ, वहां से चयकर विदेहक्षेत्र के रत्नसचय नगर में मणिनामके मत्री उसकी गुणावली नामकी स्त्री उसके सामतवर्धन नाम का पुत्र हुआ, उसने पिता के साथ वैराग्य धारण किया। महातपस्वी, सम्यक्त्व के धारी, कषाय रहित, बाईसपरिषहो को सहनकर शरीर त्यागकर नवग्रैवेयक गया। अहमिन्द्रदेव के बहुतकाल सुख भोगकर राजा सहस्रार विद्याधर, रानी हृदयसुदरी उनके तुम इन्द्रनाम के पुत्र हुये व रथनूपुरनगर मे जन्म लिया। पूर्वके अभ्यास से इन्द्रके सुखोमे मन आसक्त हुआ, तुम विद्याधरो के अधिपति इन्द्र कहलाये। अब तुझे मनमे खेद नहीं करना चाहिये। कि मै विद्या मे बलवान था, सो शत्रुओ से हारा गया, सो हेइन्द्र! जैसे कोई काटे बोकर आमकी इच्छा करता है, परन्तु यह प्राणी जैसा कर्म करता है, वैसा फल भोगता है। तुमने भोगका साधन शुभकर्म पूर्वमे किया था, वह अब क्षय हो गया है, कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति नहीं होती है इस बात का क्या आश्चर्य? तुमने इसीजन्म मे अशुभकर्म किये है, उस अपमान का यह फल पाया है। और रावण तो निमित्त मात्र है तुमने अज्ञानता से ऐसा कार्य किया हैं, ऐश्वर्य के मद से भ्रष्ट हुआ, बहुत दिन बीत गये, इसीलिये तुझे याद नहीं है एकाग्र मन कर सुनो! अरिंजयपुर मे राजा वहिनवेग विद्याधर, रानी वेगवती, उनकी पुत्री अहिल्या उसके स्वयवर मडप की रचना हुई थी। तब दोनो श्रेणि के विद्याधर आये थे, और तुम भी बडी सपदा सहित गये थे, और एक चद्रावर्तनगर का राजा आनन्दमाल वह भी आया था। अहिल्या ने सबको छोडकर आनन्दमाल को वरमाला पहनायी। राजा आनन्दमाल अहिल्या से विवाहकर सुख से रहने लगा। और जब से आनन्दमाल ने अहिल्या से विवाह किया, तब से तेरी इर्षा उसके प्रति हुई, तुमने उसको अपना शत्रु माना। कुछ समयतक वह घर मे रहा, पुन उसको वैराग्य हुआ, और चितवनकिया कि शरीर नाशवान है, मैं तपस्या करू तो संसार के दु:खों से छुटू, यह इन्द्रियों के भोग महाठग हैं, उनमे सुख कहा है? ऐसा चितवन कर वह ज्ञानी अतरात्मा सब परिग्रह को त्यागकर परमतप को धारण किया, एक दिन वे मुनिराज हसावली नदी के किनारे कायोत्सर्ग धारणकर खडे थे, तब तूने उनको देखा और देखते ही क्रोध उत्पन्न हुआ, तब तू मूर्ख ने, मान से हसकर कहां—हे आनन्दमाल! तू कामभोग में अतिआसक्त था, अब अहिल्या का साथ क्यों छोड दिया,? विरक्त होकर पहाड समान निश्चल खडा है, इसप्रकार खोटे शब्दों से परमतपस्वी मुनिकी तूने अवज्ञा

करतेहुये, निदा की। वे मुनिराज तो आत्मसुख मे मग्न, तुम्हारी बातों से उनको कोई प्रयोजन नहीं रहा, उनके पास उनका भाई कल्याण मुनिराज थे, उन्होंने तुम्हारे से कहा यह महामुनि निरपराध है, उनकी तुमने हसी की, सो तुम्हारा नाश होगा, तब तुम्हारी स्त्री सर्वश्री सम्यग्दृष्टि साधुओ की पूजा भक्ति करनेवाली उसने नमस्कारकर कल्याणस्वामी को शान्त किया, अगर वह शात नहीं करती तो, साधु के क्रोध से तत्काल तू भस्म हो जाता। तीनलोक में तपसमान और कोई बलवान वस्तु नहीं है। जैसे साधुओं की शक्ति है वैसे इन्द्रादिक देवोकी भी शक्ति नहीं है। जो पुरुष साधुओ का निरादर करते है, वे इसभव मे अत्यन्त दुखोको प्राप्तकर, अन्त मे मरकर नरक निगोद मे जन्म लेते है। वहॉ के दुखों को भोगते है। इसीलिये साधुओ का कभी भी मन, वचन, काय से अपमान, अपवाद, अनादर, निन्दा, अवज्ञा नहीं करना चाहिये। जो साधुओं का अपमान करते हैं, वो इसभव और परभव मे दुखी होते है। क्रूरप्राणी मुनियो को मारते है, एव दुख देते है, वह अनन्तकाल तक दुख भोगते है। मुनिकी अवज्ञा समान और कोई पाप नहीं है। मन, वचन, काय से यह प्राणी, जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। उसीप्रकार पुण्य और पापकर्मो के फल अच्छे बुरे यह जीव भोगता है। ऐसा जानकर धर्मकार्य मे मनको लगाओ, अपनी आत्माको संसारके दुखों से निवृत करो। महामुनि के मुख से राजाइन्द्र अपने पूर्वभव सुन आश्चर्य को प्राप्त हुआ। नमस्कारकर विनती करने लगा, हे भगवान! आपकी कृपा से मैने उत्तमज्ञान प्राप्त किया, अब सम्पूर्ण पाप क्षणमात्र मे नाश हो जाये, साधुओ की सगति से कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है, साधुओ के सान्निध्य से अनन्त जन्मो मे प्राप्त नहीं किया, ऐसा आत्मज्ञान प्राप्त होता है, ऐसा कहकर मुनिराज को बारम्बार नमस्कार किया, मुनि आकाशमार्ग से विहार कर गये। इन्द्र गृहस्थाश्रम से परमवैराग्य को प्राप्त हुआ, जल के बुदबुदा समान शरीर को असारजान, धर्म में निश्चल बुद्धिकर, अपनी आज्ञानता की निन्दा करता हुआ, वह महापुरुष इन्द्र, अपनी राज्य विभूति, पुत्र को देकर, बहुत पुत्रों सहित, लोकपालो के साथ एवं अन्य राजाओं सहित सब कर्मों का नाश करनेवाली जिनेश्वरी दीक्षा धारण की। एवं सब परिग्रह का त्याग किया। राज्य अवस्था मे जैसे शरीर को भोगों में लगाया था, वैसा ही अब मुनि अवस्था मे तप संयम में लगाया। इसप्रकार का तप किया जो अन्यपुरुष नहीं कर सकते, पुरुषों में बडी शक्ति है, जैसे भोगों मे प्रवृति करते है वैसे ही तपमें भी प्रवृत्ति करते हैं राजा इन्द्र बहुतकाल तपकर शुक्लध्यान के

प्रभाव से कर्मो का क्षयकर निर्वाण को पधारे। गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं। देखो बडे पुरुषो के चारित्र आश्चर्यकारी है, प्रबलपराक्रम के धारी, बहुत कालतक भोगो को भोगकर पुनः वैराग्य प्राप्तकर, अविनाशी सुखको प्राप्त करते हैं। सम्पूर्ण परिग्रह का त्यागकर, क्षणमात्र मे ही ध्यानके बलसे महापापो का क्षय करते है। जैसे बहुत कालतक लकडियो का ढेर इकट्ठा किया और क्षणमात्र मे अग्नि के संयोग से जलकर भस्म हो गया। ऐसा जानकर हे, प्राणी! आत्मकल्याण का प्रयत्न करो [अन्तःकरण विशुद्ध करो, मृत्यु के दिन का कोई निश्चय नहीं है। ज्ञानरूपी सूर्य के प्रभाव से अज्ञानरूपी अधकार को दूर करो। प्रत्येक प्राणीको अपने धन के मद मे आकर कभी भी गुरुओ की निंदा, अवज्ञा, अपवाद नहीं करना चाहिये, राग-द्वेष, मोह से हसी हसी में कर्मका बंधकर लेते हैं और जब पाप कर्म का उदयरूपी फल का समय आता है तब महादुखी होकर रो रो कर भोगना पडता है।]

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे इन्द्र का निर्वाण गमन नाम का तेहरवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-14

अनन्त वीर्य केवली के धर्मोपदेश का वर्णन

अथानंतर रावण देवेन्द्र समान भोगों को भोगकर, मनवाछित अनेक क्रियाओ को करता। एक दिन सुमेरुपर्वत के चैत्यालयों की वंदनाकर आ रहा था। मार्ग में सातक्षेत्र छह कुलाचलों की शोभा देख अनेकप्रकार के वृक्ष, नदी, सरोवरों को देखता हुआ, सूर्य के भवन समान विमान में विराजमान महाविभूति से युक्त लंका मे आने का है मन उसका। उसीसमय उसे मनोहर उत्तंग शब्द सुनाई दिया। तब हर्षित होकर मारीचमत्री से पूछता है, हे मारीच! यह सुन्दर महाशब्द किसका है, दशों दिशाये क्यो लाल हो रही है। तब मारीच ने कहा। हे देव! केवलीभगवान की गधकुटी आई है, वहॉ अनेकदेव दर्शन को आ रहे हैं, उनके ही मनोहर शब्द हो रहे है। और देवोंके मुकुटों की किरणों से दशोंदिशायें लालरंगरूप हो रही हैं। इसस्वर्ण पर्वतपर अनन्तवीर्य मुनिराज को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है। यह वचन

सुनकर रावण आनन्द को प्राप्त हुआ। सम्यग्दर्शन सहित महाकांति का धारी आकाश से उतरकर केवली की वन्दना के लिये पृथ्वीपर आया। वन्दनाकर स्तुति की और इन्द्रादि अनेकदेव केवली के समीप बैठे थे तब रावण भी हाथजोड नमस्कार कर अनेक विद्याधरों सहित उचित स्थानपर बैठ गया।

चारोंप्रकार के देव, तिर्यंच और मनुष्य केवली के चरणों में बैठे थे उसीसमय किसी शिष्य ने भगवान से प्रश्न किया कि हे प्रभो! अनेकप्राणी धर्म अधर्म का स्वरूप एवं उनका फल जानने की अभिलाषा कर रहे है। और मोक्षमार्ग का कारण जानना चाहते है। हे प्रभो आपही कहने योग्य है, सो कृपाकर कहो। तब भगवान केवलज्ञानी अनन्तवीर्य मर्यादारूप अक्षर जिनमें विस्तार सहित, सन्देह रहित सब के हितकारी प्रियवचन कहनेलगे। हे भव्यजीवो! यह जीव चेतना लक्षण वाला अनादिकाल से निरन्तर अष्टकर्मो से बधा चतुर्गति में भ्रमण करता है। चौरासीलाख योनियो में नानाप्रकार इन्द्रियो से उत्पन्न हुई वेदना को भोगता हुआ प्रतिसमय दुखी होकर रागी द्वेषी मोही हुआ कर्मो के तीव्र, मंद, मध्यफल से कुम्हार के चक्के के समान प्राप्त किया है, चारों गतियों का भ्रमण, उसमे अतिदुर्लभता से मनुष्य जन्म को प्राप्तकर आत्महित नहीं कर है, रसना इन्द्रिय का लोलुपि, स्पर्शादि पॉचों इन्द्रियो के विषयों में लीन होकर अतिनिंद्य पापकर्म करके नरक मे जन्म लेता है। कैसाहै नरक? महादुखो का सागर है। जो पापी क्रूरकर्मी, धन के लोभी, माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, मित्र इत्यादि परिवार को मारते हैं, वह नरक मे गिरते हैं। तथा जो गर्भपात करते है, एव बालक की हत्या करते, वृद्धों को एव स्त्रीयो को मारते है, मनुष्यों को रोके, पकडे, बांधे, मारे, तथा पशु पक्षी हिरणादि को मारते है, जो कुबुद्धि से जलचर, थलचर, जीवो की हिंसा करते है। उसके परिणाम धर्म से रहित होते हैं, वे जीव नरक में जन्मलेते हैं। जो पापी शहद के लिये मधु मक्खीयों का छत्ता तोडते हैं, तथा मासका भक्षण करते हैं, शराब पीते हैं। शहद का भक्षण करते है। नगर एवं ग्राम को जलाते गायो को काटते, पशु घाती, महाहिंसक भीलादि सर्व प्राणी महा पापी नरक में जन्म लेते है। और जो झूठ बोलने वाले, दूसरों के दोषों को देखने वाले, अभक्ष का भक्षण करनेवाले, परधन को हरनेवाले, परस्त्री एवं वेश्याओं का सेवन करनेवाले, ऐसे जीव घोर नरक में पडते हैं। वहॉ किसीकी शरण नहीं है। जो पापी यहाँ मांसभक्षण करते है उनको नरक मे उन्हीं का शरीर काट काटकर

उनको खिलाते हैं। और गरम गरम लोहे के गोले उनके मुख मे भरते हैं। मद्यपान करने वालो के मुख में शीशा गला गला कर पिलाते हैं। परस्त्री सेवन करने वालों को गरम गरम लोहे की पुतलीयो से आलिंगन कराते हैं। जो परिग्रह रखते आरम्भ करते वे पापी क्रूरमन, वाले प्रचड पाप कर्म करनेवाले जीव, सागरों पर्यन्त नरक के दुखों को भोगते है। साधुओ के द्वेषी, पापी मिथ्यादृष्टि, कुटिल, रौद्रध्यानी मरकर नरक में जन्म लेते हैं। वहाँ नरको मे विक्रिया से कुलाहडी, खडग्, चक्र, करोत, आदि शस्त्रो से शरीर के खड खड करते हैं। फिर भी मरण नहीं होता और पारे के समान पुन. मिल जाता है। आयुपर्यन्त दुख भोगते हैं। तीक्ष्ण चोचवाले मायामयी पक्षी शरीर को नोंच डालते है। मायामयी, सिंह, व्याघ्र, अष्टापद, सर्प, श्वान, बिच्छु आदि क्रूर प्राणियों द्वारा नाना प्रकार के दुख भोगते हैं। नरक के दुखों का कहाँ तक वर्णन करें। और जो मायाचारी विषयो के अभिलाषी जीव, तिर्यचगति मे जन्म लेते हैं। वहाँ परस्पर बध, बधन, वाहन, अतिभार लादना, शीतोष्ण, भुख प्यासादि एव शस्त्रो के धात से अनेकदुख भोगते है। इस जीव ने भव भव मे भ्रमण करते हुये पृथ्वी, जल, गिरी, वृक्ष, एव गहन वनादि अनेक स्थानो में बार बार एकेन्द्रिय, विकलन्द्रिय, पचेन्द्रिय पर्यायो मे जन्म मरण किया। जीव अनादिनिधन है, उसका आदि और अन्त नहीं है। इस जीव ने तीनलोक मे ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ जन्म और मरण नहीं किया हो। जो जीव मायारहित स्वभाव से ही सन्तोषी है, वह मनुष्य जीवन को प्राप्त करता है। मनुष्य का शरीर ही मोक्षसुख का कारण है इसे प्राप्त करके भी मोह राग, द्वेषादि से पागल होकर, कल्याण मार्गको छोडकर क्षणमात्र सुख के लिये अनेक पाप करता है। वे मूर्ख मनुष्य, पूर्वकर्म के उदय से कोई आर्यखड में, कोई म्लेच्छखड मे उत्पन्न होते है। कोई धनवान, कोई दरिद्री, होते है, कोई कर्मके प्रभाव से अनेक मनोरथो को पूर्ण करते हैं, कोई कष्ट से दूसरो के घरों में जीवन यापन करते हैं, कोई कुरुष, कोई रुपवान, कोई दीर्घायु, कोई अल्पायु होते हैं. कोई भाग्यशाली, कोई पापी, कोई आज्ञा देता, कोई आज्ञा पालता है। कोई नौकर, कोई चाकर बनता है, कोई यश अपयश को प्राप्त करता है कोई शूर, कोई कायर, कोई जल में, रण में, देश मे, विदेश में, प्रवेश करता है, गमन करता है। कोई खेती करता कोई व्यापार करता है। कोई सेवा करता है, इस प्रकार मनुष्यगति में भी सुख दुखों की विचित्रता है। निश्चय से देखा जाए तो

सभी गति में दुख ही दुख है दुख को ही सुख मान रहा है। और मुनिव्रतों से या श्रावकके व्रतोंसे तथा सम्यक्त्व या अकाम निर्जरा, एवं अज्ञानतप से भी देवगति पाते हैं, उनमें कोई देव महाऋद्धि के धारी, कोई अल्पऋद्धि के धारी, और आयु, कान्ति प्रभाव, बुद्धि, सुख, लेश्या ऊपर ऊपर के देवो में विशेष एवं शरीर मान परिग्रह को कम ज्यादा होने से भी देवगति मे हर्ष विषाद उत्पन्न होता हैं, चारो गतियो मे यह जीव अरहट की घडी के यंत्र समान भ्रमण करता हैं, अशुभकार्य से दुख प्राप्त करता है और दान के प्रभाव से भोगभूमि में भोगों को प्राप्त करता हैं। और सब परिग्रह रहित मुनिराज उत्तम पात्र है, आर्यिका, ऐल्लक, क्षुल्लक, क्षुल्लिकायें यह मध्यमपात्र हैं, और वृतरहित सम्यग्दृष्टि जघन्यपात्र है, इन पात्रों को विनय एवं भक्ति से आहारदान देना वह पात्रदान हैं और बाल वृद्ध, अधा, पगु, रोगी, दुखित, भूखित इनको अन्न जल, औषधि, वस्त्रादि देना करुणादान है। उत्तम पात्रदान से उत्तम भोगभूमि, मध्यम पात्रदान से मध्यम भोगभूमि और जघन्य पात्रदान से जघन्य भोगभूमि को प्राप्त होते है, जो नरक निगोदादि के दु खो से रक्षा करते वह पात्र कहे जाते हैं। जो सम्यग्दृष्टि साधु हैं वो जीवो की रक्षा करते हैं, जो सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र से निर्मल है वो परमपात्र है। जिनके मान-अपमान, सुख-दुख, तृण-कचन, सब बराबर है, जो राग द्वेष नहीं करते हैं, सर्व परिग्रह रहित महातपस्वी, आत्मध्यान मे दृढ, वे ही मुनि उत्तमपात्र कहे जाते है। ऐसे साधुओ को भावसहित शक्ति प्रमाण अन्न जल औषधी देना एव वनमे उनको रहने के लिये वसतिका बनवानी, और आर्यिकाओं को आहार, वस्त्र, औषधी देना, तथा सम्यग्दृष्टि श्रावक श्राविकाओ को भी अन्नजल औषधी वस्त्रादिक देना। यह पात्र दान की विधि है, तथा दीन, दुखी, अधा, लंगडा, पगु आदि जीवों को वस्त्रादिक देना करुणादान है।

यद्यपि करुणादान पात्रदान समान नहीं है, फिर भी करुणादान पुण्य का कारण है, परोपकार ही पुण्य है। जैसे अच्छेखेत मे बोया बीज बहुत गुणा होकर फलता है, वैसे ही शुभभावों से शुभपात्र को दिया दान अधिक फल को देता है। और जो पापी मिथ्यादृष्टि राग द्वेष से युक्त, व्रतक्रिया रहित महामानी ये पात्र नहीं है, और दीन भी नहीं उनको दान देना निष्फल है। जैसे ऊसर खेत में बोया बीज वृथा जाता है। जैसे कुयें का जल गन्ने में गया तो मधुरता को प्राप्त होता है, और नीम मे जाने से कडुवा होता है, तथा एकसरोवर का जल गायने पीया

तो दूधरूप परिवर्तन होता है, और सर्प ने पीया तो विषरूप परिवर्तन होता है। वैसे ही सम्यग्दृष्टि पात्रो को दिया दान शुभफल को देता है, और पापी पाखंडी मिथ्यादृष्टि अभिमानी को दिया दान अशुभफल देता है। जो मांस आहारी मद्यपान मधु का सेवन करनेवाले अपने आपको पूज्य मानते है, उनको दान देकर सत्कार नहीं करना चाहिये। जिनधर्मियो की सेवा करनी, दुखियो को देख दया करनी, शत्रुओं से मध्यस्थ रहना, प्राणी मात्रपर दया करना, किसीको दुखी नहीं करना, जो जैनधर्म से रहित है, उनको धर्ममार्ग मे लगाना, जो विवेकी जीव शुभोपयोग से विचार करते हैं, कि जो गृहस्थ स्त्री सहित आरम्भ परिग्रह से, काम क्रोधादिक संयुक्त अपने आपको पूज्य मानते है उनको भक्तिसे धनदेना निष्फल है। कोई भूखे को भोजन नहीं देता और धनवान को धनदेता है वह वृथाही धनका नाश करता है। धनवानों को दानदेने से क्या प्रयोजन, दुखियो को देना शुभ है। धिक्कार है उन दुष्टो को जो लोभ के कारण खोटे ग्रथ लिखकर भोले लोगो को ठगते है, झूठ बोलकर मास का भक्षण करना बताते है। पापी पाखडी जो मासका भी त्याग नहीं करते, वे ओर क्या त्यागकर सकते है। जो क्रूर प्राणी मास का भक्षण एव मास का दान करते है, वे घोर वेदना युक्त नरक मे जन्म लेते है जो हिंसा के उपकरण, शस्त्रादिक, तथा बंधन के उपकरण फासी आदि एव पचेन्द्रिय पशुओ का दान व पशुओ की बली आदि के दानो का वर्णन करते है, वे महानिन्द्म पापी है, जो पशुओ का दान करता है, और दान लेनेवाला पशुओ के बाधने, मारने, ताडने से दुखी करता है, उनका पाप, दान देनेवालो को ही लगता है। भूमिदान भी हिंसा का ही कारण है जहॉ हिंसा है वहॉ धर्म नहीं। जिनमन्दिर एव चैत्यालयो के लिये भूमि को देना महादान है। जो प्राणी जीव घात करके पुण्य चाहते है, वे पाषाण से दूध चाहते है। इसीलिये एकेन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीवो को अभयदान देना चाहिये। विवेकियो को शास्त्रादि देना ज्ञानदान है। औषधी, अन्न जलादि सबको देना। पशुओ को घासादि का भोजन देना। जैसे समुद्रमें सीप मेघका जल पीये तो मोती बनता है, ऐसे संसारमें द्रव्यके योग्यसे सुपात्रो को दियादान महाफल को फलता है। और जो धनवान होकर सुपात्रों को श्रेष्ठवस्तु का दान नहीं करते, वे महानिन्द्य है, दान महाधर्म है, वह विधि पूर्वक करना। पुण्य पाप मे भाव ही प्रधान है। जो बिना भावो से दान देता है वह पत्थरपर बारीशरूपी जल के समान है। वह कार्यकारी नहीं है खेत मे वर्षा पानी

ही कार्यकारी है। जो कोई सर्वज्ञ वीतराग भगवान को पूजता है, एवं हमेशा विधिपूर्वक दान करता है, उसके फलको कौन कह सकता है। इसीलिये भगवान के प्रतिबिंब, जिनमन्दिर, जिनपूजा, जिनप्रतिष्ठा, सिद्धक्षेत्रों की यात्रा, चतुर्विधीसंघ की भक्ति, शास्त्रदान यह धन खर्च करने के लिए सात महाक्षेत्र हैं। इनसात क्षेत्रोमे जो धन लगाता है उसका जीवन सफल होता है।

जो आयुध पासमें रखते हैं, उनके राग द्वेष मोह भी है, और स्त्रीको साथ रखते है, आभूषणो को धारण करते है, उनसे राग भाव रखते है, उन्हें रागी जानना, मोह के बिना राग द्वेष होता नहीं, सम्पूर्ण दोषों का मूल कारण मोह है। मोही ससारीजीव है। जिनके मोह नहीं है, वे भगवान है। किसी को पूर्व पुण्य के उदय से मनोवाछित फल प्राप्त होता है, वह कुदेव सेवा का फल नहीं है। कुदेवों की सेवा, जैसे बालु को पेलने से तेल नहीं निकलता, अग्नि से प्यास नहीं बुझती, जैसे कोई लंगडा, लगडे को देशान्तर नहीं ले जा सकता ऐसे कुदेवों की आराधना से परम पद की प्राप्ति नहीं होती है, इसीलिये जिनेन्द्र भगवान के बिना अन्यदेवो की पूजा भक्ति निरर्थक है। जो कुदेवो के भक्त है वे पात्र नहीं है। लोभ से प्राणी हिसा करता है, हिंसा से भय नहीं करता लोगों से धन लेता है, हिंसा से पुण्य बताकर दूसरो को ठगता है। इसीलिये सब दोषो से रहित जिनआज्ञा प्रमाण महादान करता है, वह महाफल को पाता है। व्यापार के समान धर्म है, कभी अधिक और कभी थोडा नफा होता है, कभी घाटा होता है, कभी मूल से ही चला जाता है। कभी थोडे से ज्यादा और कभी ज्यादा से थोडा होता है। जैसे विष का कण सरोवर मे डालदे, तो सरोवर को विषरूप नहीं करता है। जैसे चैत्यालयो के कारण थोडी हिंसा भी धर्मकार्य को नष्ट नहीं करती, इसीलिये गृहस्थ को जिनमन्दिर बनवाने से हिंसा थोडी है और पुण्य ज्यादा है उसे हिंसा नहीं कहते है। कैसेहै गृहस्थ? जिनेन्द्र की भक्ति मे तत्पर हैं, और कृतक्रिया मे प्रवीण हैं। अपनी विभूति प्रमाण जिनमन्दिर बनवाकर जल, चंदनादि अष्टद्रव्यो से पूजा करते एव कराते है। जो जिनमदिरो में धन खरचते हैं, वे स्वर्ग मे एवं मनुष्य में अत्यन्त महामहा भोगो को भोगकर पुन. मनुष्य हो महाव्रतों को पालनकर परमपद को प्राप्त करते हैं। जो चतुर्विधी सघ को भक्तिपूर्वक दान देते हैं। वे गुणों के भडार है। इन्द्रादि पद के भोगो को प्राप्त करते हैं। इसीलिये अपनी शक्ति प्रमाण सम्यदृष्टि पात्रों को भक्ति से दान करते एवं दुखियों को दयासे दान देते हैं, वही

धन सफल है। आत्मध्यान के योग से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है, और केवलज्ञान से निर्वाणपद की प्राप्ति होती है। सिद्ध भगवान लोक के शिखरपर विराजमान हैं। सर्वबाधा रहित एव अष्टकर्मो से रहित, अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य से सयुक्त, अमूर्तिक, पुरुषाकार, जन्म मरण एवं शरीर से रहित, अविचल विराजमान है। पुन: ससार मे आवागमन नहीं करते हैं। यह सिद्धपद धर्मात्मा जीव ही प्राप्त करते है। और पापी जीव लोभरूपी हवा से, वृद्धि को प्राप्तकर, दु:खरूपी अग्नि मे जलते है। और पुण्य क्रियारूपी जलके बिना हमेशा क्लेश को प्राप्त होते है। कोई पापरूपी अन्धकार के बीच में रहते हुये, मिथ्यादर्शन के वशीभूत रहते हैं। कोई भव्यजीव धर्मरूपी सूर्यकी किरणो से पापरूपी अन्धकार को दूरकर केवलज्ञान को पाते है। कोई पापी जीव अशुभ भावो से लोह के पिजरे मे पडे आशारूपी रस्सी से बंधे हुये है, वे धर्मरूपी बधुओ के द्वारा छुडाये जाते हैं। धर्म ही मानव को चतुर्गति के दुखो मे गिरते हुये प्राणियो को रोकता है। जिनेन्द्र भगवान ने धर्म का स्वरूप जैसा कहा है, वैसा मैं सक्षेप से तुमको कहता हूँ। धर्म के भेद एव धर्म के फलको एकाग्र मन होकर सुनो। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह इन पॉच पापो का सम्पूर्ण रूप से त्याग करना पॉच महाव्रत है। चार हाथ भूमि देखकर चलना, हित, मित, प्रिय, सन्देह रहित वचन बोलना, निर्दोष आहार लेना, मार्जनकर उपकरणो को उठाना रखना, जीव जन्तु रहित भूमिपर शरीर का मल डालना, ये पॉच समितियो का यत्नपूर्वक पालन करना। और मन, वचन, काय, की प्रवृति से रहित होना तीनगुप्ति है, इनव्रतो का साधुओ को परम आदरपूर्वक पालन करना चाहिये। क्रोध, मान, माया, लोभ ये चारो कषाये जीव के महा शत्रु है। क्षमा से-क्रोध को, मार्दव से-मान को, आर्जव से-मायाचार को, संतोष से-लोभ को जीतना चाहिये। शास्त्र प्रमाण धर्म को धारण करने वाले मुनियो को कषायो का निग्रह करना चाहिये। पॉचमहाव्रत पॉचसमिति तीनगुप्ति एव कषायो का निग्रह करना मुनियो का धर्म है। और साधु का मुख्य धर्म त्याग है। जो अतरग बहिरग परिग्रह के त्यागी है वो ही मुनि है। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण ये पॉचो इन्द्रियों को वश करना धर्म है। बारह तप अनशन कहो—उपवास, अवमोदर्य-अल्प आहार, व्रत परिसख्यान—अटपटी बात विचारना कि इस प्रकार आहार मिलेगा तो करेंगे नहीं तो उपवास। और रस परित्याग कहो-रसो का त्याग करना, विविक्त शय्यासन कहो-एकात स्थानपर वन

में रहना, स्त्री बाल नपुंसक, पशु इनकी संगति साधुओ को नहीं करना और भी रागी संसारी जीवों की संगति मुनियों को नहीं करना चाहिये। मुनियों को मुनियों की ही संगति करनी चाहिये। कायक्लेश का अर्थ–गर्मी में पहाड के शिखरोपर, शीतऋतु मे नदी के किनारेपर, वर्षा काल मे वृक्ष के नीचे, तीनों कालोंमें तपकरना तथा विषम ऊँची नीची भूमिपर रहना मासोपवासादि अनेक तप करना, यह छहप्रकार के बहिरंगतप हैं और अभ्यतरतप भी छहप्रकार के हैं प्रायश्चित–मन, वचन, काय से जो दोष लगा हो वह सरल परिणामो से श्रीगुरु के निकट विनयपूर्वक कहकर तपादि दड लेना विनय–देव गुरु शास्त्र एव साधर्मियों का विनयकरना तथा सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र का आचरण ही विनय हैं, तथा इनको पालन करनेवालो का आदर करना, विनय है, उपचार विनय बडो को देख खडे होना, सन्मुख जाना, ऊपर बैठाना स्वयनीचे बैठना, मधुर वचन बोलना। वैय्यावृत करना, जो तप से तप्तायमान है, रोगी, वृद्ध, बालक है, उनकी सेवा करना, औषधीदेना, उपसर्ग दूर करना। स्वाध्याय–वाचना जिनआगम को पढना, प्रच्छना-प्रश्न करना, आम्नाय-शुद्ध, उच्चारण पूर्वक पढना, अनुप्रेक्षा–बार बार चितवन करना, धर्मोपदेश–धर्म का उपदेश देना। और व्युत्सर्ग–शरीर का ममत्व छोडना। एक दिनसे लेकर वर्ष पर्यन्त अनेकप्रकार के आसन लगा कर कायोत्सर्ग धारण करना। और ध्यान–आर्तध्यान रौद्रध्यान का त्याग करना, धर्मध्यान शुक्लध्यान को धारण करना, यह बारहतप ही सारधर्म है। धर्म के प्रभाव से भव्यजीव कर्मोका नाश करता है, तपसे अद्भुत शक्ति आती है सर्वमनुष्य एव देवोको जीतने मे समर्थ हैं, विक्रियाशक्ति से जो चाहे वैसा कर सकतें हैं, विक्रिया के आठ भेद है, अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व। महामुनि तपोनिधि ऋद्धियो को प्राप्त करके भी परमशान्त हैं, सम्पूर्ण आशाओं से रहित है, और ऋद्धियों की ऐसी सामर्थ है, चाहे तो सूर्यका आताप दूरकर सकते है, चाहे तो जल वृष्टि, कर क्षणमात्र में जगत को पूर्णकर दे, चाहे तो भस्मकर दे, क्रूर दृष्टिकर देखे तो प्राण नाशकर दे, दया से देखे तो रंक से राजा कर दे, चाहें तो रत्नस्वर्ण की वर्षा कर दें, या पत्थर की वर्षा कर दे इत्यादि सामर्थ्य है। परन्तु करते नहीं हैं, धर्म की रक्षा के लिये ऋद्धियों का उपयोग भी करते है और ऐसे करते हैं तो चारित्र का विनाश होता है, ऐसे तपस्वी मुनियों के चरणरज से सर्वरोग नाशहोते हैं। मुनिधर्म से कर्मों का नाशकर मोक्ष

जाते है। अगर जन्मलें तो सौधर्मइन्द्र से सर्वार्थसिद्धि पर्यन्त इन्द्रपद प्राप्त करते है। वहाँ इन्द्रसमान विभूति के धारक होते हैं। अनेक स्वर्ण स्फटिकमणी, वैडूर्यमणी, के मन्दिर होते है, पद्मरागादि अनेकप्रकार की मणियों के शिखर एवं मोतियो की झालरों से सुशोभित अनेकचित्र जिनमें सिह, गज, हस, हिरण, मयूरादि दोनों दिवालो पर चित्र बने हैं। मन को मोहनेवाले मन्दिर सजे है, नानाप्रकार के बाजे बजते है, आज्ञाकारी देव मनोहर देवागनाये अद्भुत देवो के सुख, महासुन्दर सरोवर कमलादि से सहित अथवा रसो से युक्त कल्पवृक्षो के वन, विमानादि विभूतियॉ धर्मके प्रसाद से प्राप्त करते है। स्वर्ग मे रात दिन का भेद नहीं, छह ऋतुयें नहीं, नींद नहीं, देवो का शरीर माता पिता से उत्पन्न नहीं होता। जब पहला देव मर जाता है तब नयादेव उत्पाद शैय्यापर उत्पन्न हो जाता है। जैसे कोई सोता हुआ मनुष्य जागकर उठता है, ऐसे देव उत्पाद शैय्यापर यौवनरूप से जन्म लेते है। देवो का शरीर सातधातु, उपधातु से रहित, सुगन्धमय होता है। उनके सर्व आभूषणो से दशो दिशायें प्रकाशमान होती है, देवो के सर्व आगोपाग सुन्दर एव समचुरस्त्र सरथान से युक्त होते है। देवागनाओ के लबेकेश, मधुरस्वर, सौभाग्यवती, रूपवती, गुणवती सुन्दर क्रीडाये करनेवाली, पंचेन्द्रिय के सुख प्राप्त कराने वाली मनोवाछित रूप धारण करने वाली ऐसी अप्सरायें धर्मके फलसे प्राप्त होती है। जो भी इच्छा करे वह चिन्तवन मात्र से सिद्ध होती है। इच्छा हो वही उपकरण प्राप्त होता है। देव और देवियॉ मनोवाच्छित सुखों को भोगते है। देव, मनुष्य, चक्रवर्ती आदि का जो सुख है, यह सब धर्मका ही फल है। ऐसा जिनेन्द्रप्रभु ने कहा है। तीनलोक मे जो भी सुख है वह सब धर्मके प्रभावसे ही प्राप्त होता है। तीर्थकर चक्रवर्ती, कामदेव, बलभद्रादि पद धर्मका ही फल जानना चाहिये। इन्द्र स्वर्गका राज्य करता है हजारोंदेव मनोहर आभूषणों को धारण करनेवाले है, उनका स्वामी इन्द्रपद वह भी धर्मका फल है। यह तो शुभोपयोग रूप व्यवहार धर्म के फल कहे, अब जो महामुनि निश्चय रत्नत्रय के धारी मोहरूपी शत्रु का नाशकर सिद्धपद को प्राप्त करते हैं, वह शुद्धोपयोग रूप आत्मधर्म का फल है। यह मुनिका धर्म मनुष्य जन्म के बिना नहीं प्राप्त होता है। अत मनुष्य जीवन सर्वश्रेष्ठ है। जैसे वन के मध्य हिरणो का राजा सिंह, पक्षीयों में गरुड पक्षी, मनुष्य मे चक्रवर्ती, देवो में इन्द्र, वृक्षो में चन्दन, पाषाण में रत्नश्रेष्ठ हैं ऐसे ही सम्पूर्ण योनियो मे मनुष्य योनी श्रेष्ठ है। तीनलोक में धर्मसार

है, धर्ममें मुनिधर्म श्रेष्ठ है। मुनिधर्म मनुष्य शरीर से ही होता है। इसीलिये मनुष्यजन्म समान और कोई जन्म, जन्म नहीं। अनन्तकाल तक यहजीव ससार में भ्रमण करते हैं, उसमें मनुष्य जन्म दुर्लभता से ही प्राप्त होता है। ऐसे दुर्लभ मनुष्य देहको प्राप्तकर जो अज्ञानी प्राणी मुनिधर्म एव श्रावकधर्म का पालन नहीं करता है, वह बार बार दुर्गतियों में भ्रमण करता है। जैसे समुद्र में गिरा हुआ रत्न पुनः मिलना दुर्लभ है ऐसे ससार समुद्र में नष्ट हुआ मनुष्य जन्म पुन· पाना दुर्लभ है। मनुष्य जन्म प्राप्तकर धर्म के साधन से मुनिव्रत धार, कोई मोक्ष जाते है, कोई देव, कोई अहमिन्द्र, पद प्राप्त करते है। एव परम्परा से मोक्ष जाते हैं। इस प्रकार धर्म अधर्म के फल को केवली के मुख से सुनकर सबको अतिआनन्द प्राप्त हुआ। उस समय कुम्भकरण हाथजोड नमस्कार कर पूछने लगा, कि हे नाथ मेरे अभी भी तृप्ति नहीं हुई। इसीलिये विस्तारपूर्वक धर्मका व्याख्यान विधिपूर्वक मुझे समझावें। तब भगवान अनन्तवीर्य केवली कहते हैं, कि–हे भव्य धर्मका विशेष वर्णन सुनो। धर्मके कारण ससारी प्राणी कर्म बधनो से छूटता है, वह धर्म दो प्रकार का है। एक महाव्रत दूसरा अणुव्रत। महाव्रत यतिका धर्म और अणुव्रत श्रावक का धर्म है। मुनि, घर, परिवार के त्यागी एव श्रावक गृहवासी। सर्वप्रथम जो सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाले, परिग्रह रहित महामुनि उनका धर्म सुनो।

इस अवसर्पिणीकाल मे, ऋषभदेव से लेकर मुनिसुव्रत तीर्थकर तक बीस तीर्थंकर हो गये। अब चार और होगे, इस प्रकार अनन्त तीर्थकर हुये और आगे अनन्त होंगे, इन सब तीर्थंकरों का एक ही धर्म है। यह तो मुनिसुव्रतनाथ का समय है, अनेक़ महापुरुष जन्म मरण के दुखो से महाभयभीत हुये, इस शरीर को केले के वृक्षसमान असार जान परिग्रह त्यागकर मुनिव्रत को प्राप्त हुये। वह साधु अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रह त्यागरूप पाच महाव्रतो मे तत्पर, तत्वज्ञान एवं पॉच समिति के पालक, तीनगुप्ति के धारक, निर्मल चित्त के धारी, महापुरुष परम दयालु, शरीर से ममत्व रहित, जहॉं सूर्य अस्त हो जाये वहॉं ही बैठ जाते है, कोई आश्रय नहीं, कोई रक्षक नहीं, ऐसे महाधीर, महामुनि, सिंहसमान साहसी, पवन समान अपरिग्रही, रंचमात्र भी परिग्रह नहीं, पृथ्वी समान क्षमावान, जलसमान निर्मल, अग्निसमान कर्मको भस्म करनेवाले, आकाशसमान स्वच्छ, चन्द्रसमान सौम्य, सूर्यसमान अन्धकार को नाश करने वाले, समुद्रसमान गम्भीर, पर्वतसमान अचल, कछुवा समान इन्द्रियो को संकोच

करनेवाले, कषायों को कृष करने वाले, अट्ठाईस मूल गुण, चौरासीलाख उत्तर गुणों के धारक, अठारह हजार शील के भेदो से युक्त, तपोनिधि, मोक्षमार्गी, मुनिधर्म में लीन, जैन शास्त्रो के पारगामी, और साख्य, बोद्ध, मीमांसक, नैयायिक, वैशेषिक, वेदातीक आदि परशास्त्रो के भी ज्ञाता, महाबुद्धिमान, सम्यग्दृष्टि, यावज्जीव पापो के त्यागी, यम नियम के धारी, अनेक ऋद्धियों से युक्त, महामंगलमूर्ति, ससार के मडन, कोई मुनि उसीभव मे कर्म नाशकर सिद्ध होते है कोई देव गति पाकर तीन भव मे ध्यानाग्नि से कर्म भस्मकर अविनाशी सुख को प्राप्त होते है। यह सब यतिधर्म का वर्णन किया। अब स्नेहरूपी पिंजरे में फसे हुये जो गृहस्थी उनका बारह व्रतरूपी जो धर्म है उसे सुनो। पाचअणुव्रत, तीन गुणव्रत, चारशिक्षाव्रत और अपनी शक्ति प्रमाण हजारो नियम धारण करते है, त्रसहिंसा का त्याग, झूठ का परिहार, परधन का त्याग, परस्त्री का त्याग परपुरुष का त्याग, परिग्रह, परिमाण, तृष्णाका त्याग ये पाँच अणुव्रत और दशो दिशाओ का प्रमाण, देशो का प्रमाण, जहाँ धर्म कर्म नहीं उन देशो का त्याग, अनर्थदड का त्याग ये तीन गुणव्रत है। और सामायिक प्रोषधोपवास, अतिथिसविभाग, भोगोपभोग परिमाण, ये चार शिक्षाव्रत है। इस प्रकार श्रावक के बारहव्रत है। अब इन व्रतो के भेद सुनो। जैसा अपना शरीर अपने को प्यारा है, ऐसा सबको प्यारा है ऐसा जानकर सब जीवोपर दया करनी चाहिये। उत्कृष्ट धर्म, दयाधर्म को ही भगवान ने कहा है। जो निर्दयी जीवो को मारते है उनको रंचमात्र भी धर्म नहीं, जिससे दूसरे जीवो को दुख हो ऐसा वचन नहीं कहना, परोपकाररूप वचन ही सत्य है। और जो पापी चोरी करते परधन का अपहरण करते, वो इस भव में बध बधन आदि के दुख पाते है, कुमरण से मरणकर नरक में जाते है। चोरी दुख का मूल है। इसीलिये बुद्धिमान जीव कभी भी दूसरो के धन का अपहरण नहीं करते। जिससे दोनों भव बिगडे ऐसा काम कैसे करे। और नागिन समान परनारी को जानकर दूर से ही छोडो। पापिनी परनारी, काम लोभ के वशीभूत पुरुष का नाश करनेवाली है। नागिन तो एक भव ही प्राण लेती है परन्तु परनारी अनन्तभव तक प्राणो का नाश करती है। कुशील के पाप से निगोद मे जाकर अनन्तबार जन्म, मरण करते है। और इसभव मे भी मारना ताडना आदि अनेक दुखों को पाते हैं। यह परस्त्री सेवन नरक निगोद के महादुखो को प्राप्त करता है। जैसे कोई पर पुरुष अपनी स्त्री से भोग करता है, तो अपने आपको कितना बुरा लगता है, दुख

होता है, वैसे ही सबके लिये जानना। परिग्रह का प्रमाण करना, बहुत तृष्णा नहीं रखनी, तृष्णाही दुख का मूल है। इच्छा समान कोई व्याधि नहीं। इसके ऊपर एक कथा है सो ध्यानसे सुनो। एकभद्र, दूसरा काचन ये दो पुरुष थे, इनमे भद्र फलों का व्यापार करने वाला, उसके एकदिनार नित्य कमाने का प्रमाण था। एकदिन मार्ग में दिनारों का पर्स किसी का गिरा हुआ देखा। उसमें से एकदिनार निकाल ली, दूसरा कांचन उस ने पूरा पर्स ही ले लिया। तब दिनार का स्वामी राजा, बटुवा उठाता देख काचन को मारा, और गांव से निकाल दिया, और भद्र ने एकदिनार ली थी, वो भी बिना मांगे राजा को देदी, तब राजाने भद्रका सम्मान किया। ऐसा जानकर तृष्णा नहीं करना, संतोष धारण करना। ये पॉच अणुव्रत कहे। आगे गुणव्रत कहते हैं।

चारदिशा चार विदिशा, एक ऊर्ध्वदिशा एक अधोदिशा इन दश दिशाओं में आने जाने का प्रमाण करना दिग्व्रत है। अपध्यान—खोटा चिन्तवन करना, पापोपदेश—अशुभ क्रिया का उपदेश देना, हिसादान—विष, फासी, साकल, खड्ग, शस्त्र, चाकु, चाबुक, इत्यादि जीवों के मारने के उपकरण मांगने पर देना अथवा व्यापार करना, और जाल, रस्सा आदि बधन का व्यापार करना या देना। एव श्वान, बिल्ली, तोता आदि पशुओं का पालन करना। दुश्रुति-कुशास्त्र उपन्यास आदि का पढना, सुननादि, प्रमादचर्या-छहकाय के जीवों की विराधना करना ये पॉच प्रकार के अनर्थदडों का त्याग करना अनर्थदण्ड व्रत है। भोग-जो एकबार भोगा जाय, जैसे भोजन पानादि भोगव्रत है। और उपभोग-जो बार बार भोगा जाये, जैसे—वस्त्राभूषण, स्वस्त्री का सेवन करना या नियमरूप प्रमाण करना, यह उपभोग व्रत कहलाता है। इस प्रकार ये तीन गुणव्रत कहे। अब चार शिक्षाव्रत कहते हैं। सामायिक-समता भाव, अथवा पंचरमेष्ठि, जिनधर्म जिनप्रतिमा, जिनमन्दिर, उनका चिंतवन स्तवन करना सब जीवों पर क्षमाभाव धारण करना और प्रात.काल, मध्यानकाल, सांयकाल यह दिन में तीन बार सामायिक का काल है, उत्कृष्ट काल छह घडी, मध्यम काल चार घडी, जघन्य काल दो घडी का है। प्रोषधोपवास-दो अष्टमी, दो चतुर्दशी, एक महिने में चार उपवास सोलह पहर का करना, सौलह पहर तक संसार के कार्य को छोडकर धर्मध्यान एव आत्म चिंतवन करना। जैसे—सप्तमी का आधा दिन अष्टमी का पूरा दिन, पूरी रात और नवमी का आधा दिन। इसीप्रकार तेरस चौदस पूर्णिमा या अमावस्या को चारोंप्रकार के

आहार पानी का त्याग करना, यह सोलह प्रहर का व्रत कहलाता है। देशव्रत–जो दशो-दिशाओ की मर्यादा की थी उसमे से, गलि, गॉव, घरादि की मर्यादा करना देशव्रत है। अतिथिसविभाग–परिग्रह रहित मुनि उनके तिथि वार का विचार नहीं एव निमत्रण रहित आहार के लिये आते है, उनको सात गुणों से युक्त दाता, विधि श्रद्धापूर्वक आदरसे अपने लिये बनाये हुये भोजन मे से योग्य आहार दे वह अतिथि सविभाग है। आयुके अन्तमे कषाय एव शरीर को कृष करते हुये अनशन व्रतको धारणकर समाधि मरण करना सल्लेखना व्रत है। ये चार शिक्षाव्रत है। इस प्रकार पाचअणुव्रत, तीनगुणव्रत, चार शिक्षाव्रत जानना। जो जिनधर्मी है, उनके मद्य, मास, मधु, मक्खन, उदबरादि अयोग्यफल, रात्रिभोजन, घुना अनाज, बिना छना जल, परस्त्री तथा वेश्या सगम इत्यादि अयोग्य क्रियाओ का पूर्ण त्याग होता है। यह श्रावक के धर्मका पालनकरता हुआ समाधि पूर्वक मरणकर उत्तम देव होकर पुन मनुष्य बन मोक्ष प्राप्त करता है। और जो श्रावक एव साधु के व्रत नहीं पाल सकते परन्तु जिनेन्द्र भगवान की परमश्रद्धा करते है। वो भी निकटभव्य है, सम्यक्त्व के कारण व्रतको धारणकर शिवपुर को प्राप्त होते हैं। सब कार्य में श्रेष्ठ सम्यग्दर्शन है। उससे जीव दुर्गति के दुखो से छूटता है, जो प्राणी भाव से जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करते है, वे महापुण्य के अधिकारी, पापो के दुखो से रहित होते है। और जो भावसे सर्वज्ञदेव का स्मरण करते है, उस भव्यजीव के अशुभकर्म एव करोडो भव के किये पाप तत्काल क्षय को प्राप्त होते है। और जो भाग्यशाली जीव तीनलोक मे श्रेष्ठ अरहत प्रभु, उनको हृदय मे विराजमान करते है, वे ससाररूपी समुद्र मे नहीं गिरते है। उसके निरन्तर प्रशस्त भाव होते है। एवं अशुभ स्वप्न नहीं आते सुस्वप्न ही आते है। शुभ शकुन ही होते है। जो उत्तम लोग "अर्हते नम" इसभाव से अर्हत को नमस्कार करते है, उसके शीघ्र ही पापकर्मों का नाश होता है, इसमे सन्देह नहीं। और जो विवेकी लोग अरहंत, सिद्ध साधुओं को नमस्कार करते है, वे जैनधर्म के रूची वाले होते है। उनको अल्प ससारी जानना। और जो उदारमन वाले जिनेन्द्र भगवान के मन्दिर बनवाते, जिनप्रतिमा, विराजमान करते, जिनेन्द्र भगवान की पूजा स्तुति करते, उनके इससंसार मे कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है। चाहें राजा हो या कुटुम्बी, या किसान या दरिद्री हो, धनवान हो, जो भी मनुष्य धर्म से युक्त है, वह तीनलोक मे पूज्य हैं। जो मानव महाविनयवान है, कृत्य अकृत्य के विचार मे प्रवीण है, विवेकवान है, वे विवेकी प्राणी धर्म के संयोग से गृहस्थ जीवन मे भी पूज्य हैं। जो मानव मधु मॉस मद्यादि

वस्तुओ का सेवन नहीं करते, उनका जीवन सफल है। शंका—जिनेन्द्र भगवान के वचनो में सन्देह करना। कांक्षा—इस भव परभव मे भोगों की इच्छा करना। विचिकित्सा—रोगी एव दुखी को देख ग्लानि करना। आत्मज्ञान एव जिनधर्म से विपरीत मिथ्यामार्गी उनकी प्रशंसा करना। हिंसामार्ग का सेवन करनेवाले मिथ्यादृष्टि की स्तुति करना ये पॉच सम्यग्दर्शन के अतिचार हैं। उनके त्यागी गृहस्थ मुख्य है। सुन्दर वस्त्राभूषण पहनकर मार्ग मे चार हाथ जमीन को देखकर जिनमन्दिर जाते हैं, उनके पुण्य का पार नहीं है। जो परद्रव्य को तृणसमान, परजीव को आप समान, परनारी को माता समान देखते है वे धन्य है। और जिनके ऐसे भाव है कि ऐसा दिन कब होगा, मैं मुनिव्रत धारण कर पृथ्वी पर विहार करूँ। ये कर्मशत्रु अनादि से लगे है, उनका क्षयकर सिद्धपद को प्राप्त करूँ। इस प्रकार निरन्तर भाव करता है, उसके कर्म अवश्य नाश होगे। कोई विवेकी जीव दो तीन भव मे या सात आठ भवमे मुक्ति को प्राप्त करता है। कोई चरम शरीरी उग्र तपकर शुद्धोपयोगी होकर उसीभव से मोक्ष जाते है। जैसे कोई मार्ग को जाननेवाला पुरुष शीघ्र चले तो शीघ्र ही अपने स्थान को पहुँच जाता है, और कोई धीरे धीरे चले तो बहुत दिनो मे भी पहुच जाता है। परन्तु मार्गमें चले तो अवश्य ही पहुच जाये। जो मार्ग ही नहीं जानता है, वह सौ सौ किलोमीटर भी रोज चले तो भी वह भ्रमण ही करता रहेगा, गन्तव्य स्थानपर नहीं पहुंच पायेगा। जैसे मिथ्यादृष्टि उग्रतप करता है, तो भी वह जन्म मरण से रहित अविनाशीपद प्राप्त नहीं कर सकता। संसार मे ही भ्रमण करेगा। जिस जीवके शील, व्रत, सयम, सम्यक् त्याग वैराग्य नहीं है, वो ससार समुद्र से कैसे तिर सकता है, जैसे पत्थर की शिला, समुद्र मे तिरने को समर्थ नहीं है ऐसे मिथ्यादृष्टि व्रत से रहित परिग्रह के धारी भवसमुद्र से तिरने मे समर्थ नहीं है, और तत्त्वज्ञानी को गुरु का उपदेश कल्याण कराने में समर्थ है। यह ससार सागर महाभयानक है। इसमे यह मनुष्यक्षेत्र रत्नद्वीप समान है, यह महाकष्ट से प्राप्त होता है। इसीलिये बुद्धिमानो को इस रत्नद्वीप में नियम रूपी रत्न अवश्य ग्रहण करना चाहिये। यह प्राणी इसशरीर को छोडकर दूसरेभव की आशा से जन्म लेता है, जैसे कोई मूर्ख धागा के लिये महामणियो के हार को तोडकर एवं मोती को चूर्णकर धागा निकालता है। जैसे ये अज्ञानी प्राणी विषयो के लिये, धर्मरूपी रत्न को चूर्ण करता है। परन्तु ज्ञानी जीवो को नित्य ही बारह भावनाओ का चिन्तवन करना चाहिये। जैसे शरीरादि सर्व पदार्थ अनित्य है, आत्मा नित्य है, ससार मे कोई शरण नहीं है

आत्मा का शरण आत्मा ही है तथा पचपरमेष्ठि का शरण है। यह ससार महादुख रूप है चारो गतियों में कही सुख नहीं है, एक सुख का स्थान सिद्धपद है। यह जीव सदा अकेला ही है, कोई किसी का साथी नहीं है। और सर्वद्रव्य भिन्न भिन्न है, कोई किसी से मिलता नहीं है, यह शरीर महाअशुचि, मल मूत्र से भरा बर्तन है, आत्मा निर्मल है, और मिथ्यात्व, अविरत, कषाय, योग, प्रमाद से कर्मो का आस्रव होता है, तथा व्रत, समीति, गुप्ति, दशधर्म, अनुप्रेक्षा, परिषह जय, और चारित्र से सवर होता है। आस्रव को रोकना ही सवर है, तप से पूर्व में बंधे हुये कर्मो की निर्जरा होती है। यह लोक छहद्रव्यो से भरा हुआ अनादि अकृत्रिम, शाश्वत् है। लोक के शिखरपर सिद्धलोक है। लोक अलोक को जानने वाला आत्मा है, और आत्मा के भाव ही धर्म है। दुखी, जीवो पर दया करना धर्म है। इस ससार मे शुद्धपयोग दुर्लभ है वही निर्वाण का कारण है, इस प्रकार बारह भावनाओ का चिन्तवन करना, यह मुनि और श्रावक का धर्म कहा। अपनी शक्ति प्रमाण जो धर्म का सेवन करता है, उसे मोक्ष प्राप्त होता है, एव प्राणी जैसा कर्म करता है वैसा ही फल प्राप्त होता है। इस प्रकार केवलीभगवान ने धर्म का स्वरूप कहा। तब कुभकरण (भानुकरण) ने केवली भगवान से पूछा कि हे नाथ! मै भेदसहित नियम का स्वरूप जानना चाहता हूँ। तब केवली भगवान ने कहा-हे कुम्भकरण! नियम और तप मे भेद नहीं है, नियम सहित प्राणी ही तपस्वी होता है, इसीलिये बुद्धिमान लोगो को नियम का पालन करना चाहिये। जितना अधिक नियम का पालन करते उतना ही उसका कल्याण होता है। और अगर ज्यादा नियमो का पालन नहीं कर सकता, तो थोडा थोडा नियम का पालन अवश्य करना चाहिये, परन्तु नियम के बिना नहीं रहना। जो पुरुष दिनमें एकमूहुर्त (चौबीस मीनट) मात्र का भी आहार का त्याग करता है, वह एकमहीने मे एकउपवास के फल को प्राप्त होता है, उस फल से स्वर्ग मे बहुत काल सुख भोगकर मनवाच्छित कार्यको सिद्ध करता है। कोई मानव जिनधर्म की श्रद्धा करता हुआ, यथा शक्ति तप नियम करता है, वह दीर्घ कालतक स्वर्ग में सुख भोग पुन मानव भव प्राप्तकर उत्तम भोगो को प्राप्त करता है।

एक अज्ञानी तापसी साधुकी पुत्री, वन मे रहती है, वह महादुखी जगल के फलों को खाकर आजीविका पूर्ण करती है, उसने गुरु के सत्सग से एक मूहुर्त मात्र (चौबीस मीनट) के लिय भोजन का नियम लिया। उसके प्रभाव से एकदिन राजाने बालिका को देखा और आदर सहित उससे विवाह किया, जिससे वह

बहुत सम्पदा को प्राप्त हुई और धर्म कार्य में उसकी विशेष श्रद्धा हुई, अनेक नियम को धारण किया। वह निरन्तर सुखों को भोगकर परलोक में भी उत्तमगति को प्राप्त किया। जो दो मूहुर्त दिन में भोजन का त्याग करता है वह एकमहीने मे दो उपवास का फल प्राप्त करता है। तीस मूहुर्त (चौबीस घंटे) का एक दिन रात होता है, उसमे तीनमूहुर्त प्रतिदिन अन्न जल का त्याग करते, तो एक महिने मे तीन उपवास का फल होता हैं, इस प्रकार जितना अधिक नियमों का पालन करे उतना ही फल प्राप्त होता हैं, नियम के प्रभाव से प्राणी स्वर्ग में अनुपम सुखों को भोगते है, स्वर्ग से आकर महाकुलवान, रूपवान, गुणवान, महासुन्दर आभूषणो को धारण करनेवाले, जो शीलवती महास्त्रीया है उनके पति होते है, और स्त्री स्वर्ग से चयकर बडे कुल में राजाओ की रानियॉं होती है, लक्ष्मी समान सुन्दररूप प्राप्त करती है। और जो प्राणी रात्रि भोजन का त्याग करते है, रात्रि मे जल भी नहीं पीते हैं, उनको महापुण्य होता है पुण्य से अधिक यश और वैभव को पाते है, पुण्य से ही, जिनेन्द्रभगवान की भक्ति का अवसर प्राप्त होता है। जो धर्म परायण है, उनको जिनेन्द्र की आराधना ही परमश्रेष्ठ है। केवली के समोशरण की भूमि रत्न स्वर्ण से निर्मित देव मनुष्य तिर्यचो से वन्दनीय है। जिनेन्द्रदेव आठप्रातिहार्य चौतींसअतिशय हजारो सूर्य से भी अधिकतेज महासुन्दररूप नेत्रो को सुख देने वाले, ऐसे वीतराग प्रभु को जो भव्यजीव भावपूर्वक नमस्कार करते है, वे थोडे ही समय मे ससार समुद्र से पार हो जाते है।

श्रीवीतराग देव को छोडकर अन्य कोई भी जीव, कल्याण की प्राप्ति का उपाय नहीं हैं। इसीलिये जिनेन्द्रदेव की भक्ति करना। अन्य हजारों मिथ्यामार्ग कुमार्ग है। उनमे प्रमादी जीव भूल रहे है, उनके सम्यक्त्व नहीं है, मद्य मास मधु के खाने वालों को दया नहीं। जैनधर्म में दया ही परम धर्म है। और अज्ञानीजीव दिनमे आहार का त्याग करते हैं, और रात्रि मे भोजनकर पाप उत्पन्न करते हैं। दिनमें भोजन का त्यागकर रात्रि में भोजन करने से त्याग का फल समाप्त होता है। रात्रि का भोजन जिन पापियों ने धर्म कहा है वह महापापी है। जब सूर्य अस्त होता है तब जीव जन्तु दिखते नहीं, तब पापी विषयो का अभिलाषी प्राणी भोजन करता है वह दुर्गति के दुखों को प्राप्त होता है। जो रात्रि में भोजन करते हैं। वह मक्खी, कीडा और केशादि का भक्षण करता है। रात्रि भोजन से भूत प्रेत डाकिनी शाकिनी, (कुत्ता बिल्ली, चूहा आदि मलीन प्राणियों का उच्छिष्ट आहार करते है।

सूर्य अस्त होने के अडतालीस मीनट पहले भोजन करे। एव सूर्य उदय होने के अडतालीस मीनट बाद ही भोजन करे। रात्री के समय में चारों प्रकार के आहार का त्याग करे। खाद्य, स्वाद्य, लेय, पेय ये चार प्रकार के आहार को रात्री में जो करता है वह मनुष्य नहीं पशु कहलाता है। वह परलोक मे कैसे सुखी हो सकते है। जो दया रहित जीव, देव शास्त्र गुरुओ की निदा करता है, वह परभव में महा नरक मे जाता है, और नरक से निकलकर तिर्यच व मनुष्य होकर दुर्गन्ध युक्त शरीर को प्राप्त करता है। मद्य, मास, मधु, रात्री भोजन, चोरी, परस्त्री का सेवन करते है, वे दोनो जन्म के सुखोको नष्ट करते है। रात्री भोजन से अल्पायु, व्याधि, रोग, दुखो से भयकर वेदना सहित जन्म मरण एव गर्भके दुखो को सहन करते है, रात्री भोजन से अनाचारी, शूकर, कूकर, गधा, कौआ, नरक, निगोद, स्थावर, त्रसादि अनेक योनियो मे बहुतकाल तक भ्रमण करते हैं। हजारो अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी काल मे, कुयोनियो के दुखों को भोगते हैं। रात्री भोजन करनेवाला राक्षस के समान है, जो भव्यजीव जिनधर्म को पाकर नियम मे रहते है, वे सब पापो को नाश कर मोक्षपद को पाते हैं। जो व्रत लेकर छोड देता है, वह महादुखी ही होता है। जो मानव अणुव्रती व महाव्रती होते है, वे दिनमे ही दोष रहित योग्य आहार ग्रहण करते है। जो रात्री मे भोजन नहीं करता है वह स्वर्ग के सुखों को भोगकर वहाँ से चयकर चक्रवर्ती के सुखो को भोग मोक्षपद प्राप्त करता है। रात्री भोजन के त्याग से चक्रवर्ती, कामदेव, बलदेव, महामडलीक, मडलीक, महाराजा, राजाधिराज महाविभूति के स्वामी महागुणवान महाउदार, दीर्घायु सुन्दररूप, जैनधर्म के पालक, लोगो के हितु, अनेक ग्राम, नगरादि के स्वामी, अनेक वाहनो से युक्त, सबजनो को प्रिय, अनेक सामन्तो के स्वामी, महातेज के धारी ऐसे राजा होते है। अथवा राजाओं के मत्री, पुरोहित, सेनापति, राज्य श्रेष्ठि, आदि ये पद रात्री भोजन के त्यागी ही पाते है। और भी भवनवासियो के इन्द्र, देवो के इन्द्र, मनुष्यो के इन्द्र ये पद दिनमे भोजन करने से प्राप्त होते हैं। सूर्यसमान प्रतापी, चन्द्रसमान सौम्ययश की प्राप्ति दिनके भोजनसे ही मिलती है। रात्री भोजन के पाप से माता, पिता, भाई, कुटुब पतिरहित, अभागिनी, शोक, दरिद्र, रुक्ष, हाथ पैर कटे, नाक चिपटी, या ग्लानी युक्त शरीर, खोटे लक्षण, अंधी, लूली, गूगी, बहरी, पागल, काणी, मोटा पेट, पतले पैर, लम्बे कान, भूरेबाल, तूबडी के बीज समान दात, कुवर्ण, कुलक्षण, काति रहित शरीर,

कठोरअंग, अनेकरोगो से युक्त, फटेवस्त्र, जूठा भोजन खाने वाले, दूसरे का काम करनेवाले, रात्री भोजन करनेवाली स्त्री को पति मिले तो कुशील, कोढी, पाप कार्यों के लिये कान, नाक, और ऑख आदि की प्रवृत्ति चिंतावान, धन कुटुंब रहित पति की प्राप्ति होती है। रात्री भोजन से विधवा, बालविधवा, महादुखी जल काष्ठादि के बोझा ढोने वाली, दुख से पेट भरनेवाली, सबसे अपमानित, अनेक फोडा फुन्सी सहित शरीर, ऐसी स्त्री जीवन मे प्राप्त होती है। और जो नारी शीलवती शांत है मन जिसका, दयावन्ती, रात्री भोजन त्यागी, वह स्वर्ग मे मन वाच्छित भोग पाती है। उनकी अनेकदेव देवियॉ हाथजोड नमस्कार कर सेवा करते है। स्वर्ग में मनवाच्छित फल भोगकर महालक्ष्मी से युक्त उत्तम कुल में जन्म लेते हैं। शुभलक्षण सर्व कला में प्रवीण, दूसरो के मन और नेत्रों को हरण करनेवाले, अमृतसमान मधुरभाषी, सर्व आनन्द देने वाली, राजकुमारियॉ चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, एवं विद्याधरो के स्वामी उनकी महा पटरानियॉ बनती है। उनके मनवाच्छित अन्न धन होता है, अनेक सेवक नानाप्रकार की सेवा करते है। एव सुप्रभा, सुभद्रा लक्ष्मी के समान नारियॉ होती है। रात्री भोजन के त्याग से कष्टथोडा है फल ज्यादा उत्कृष्ट है। धर्मतो सुखकी उत्पत्ति का मूल है, अधर्म दुख का मूल है। ऐसा जानकर धर्मको धारण करो, अधर्म को छोडो, यह बात लोक मे समस्त बाल गोपाल जानते है। धर्म का माहत्म देखो, जिससे मानव के पास स्वर्ण, रत्न, माणक मोतियो के भडार भरे रहते है। उनके वैभव की बडे बडे सामन्त आयुधों के धारक रक्षा करते हैं। उनके बहुत हाथी, घोडे, रथ, पयादे, अनेकदेश, ग्राम, नगर मनोवाछित पाचों इन्द्रियो के विषय, मधुर शब्द नेत्रो को प्रिय मनोहरचेष्टा की धारक सुन्दर स्त्री होती हैं, जो सुख का मूल धर्मको नहीं जानते, वो धर्मका कार्य नहीं करते, पापकर्म के वश से खोटे कार्यमें प्रवृत्ति करता है, कोई पापोको नाशकरने के लिए गुरुके चरणो मे जाकर धर्मका स्वरूप पूछते हैं। तब गुरुके वचनों से वस्तु का रहस्य जानकर श्रेष्ठ आचरण को करते हैं। ये नियम से धर्मात्मा बुद्धिमान पापक्रिया से रहित होते है, जो मुनिराजों को निरन्तर आहार देते है, और जिनके ऐसा नियम है कि साधुओ के आहार का समय टालकर भोजन करेंगे उसके पहले नहीं करेंगे, वे पुरुष धन्य है, उनके दर्शनो की अभिलाषा देव भी करते हैं। दान के प्रभाव से मनुष्य इन्द्रपद एवं अहमिन्द्रों के बराबर सुख को भोगते हैं। जैसे बड का बीज छोटा है, परन्तु उसका वृक्ष बहुत

बडा होता है। ऐसे ही थोडा दान महाफल को देता है। सहस्त्रभट सुभट ने यह व्रत लिया था कि मुनि के आहार के समय को टाल भोजन करूगा। तब एकदिन ऋद्धिधारी मुनिराज आहार को आये, निरन्तराय आहार हुआ और रत्नादि पंचाश्चर्य की वृष्टि सुभट के घर हुई। वह सहस्रभट धर्म के प्रभाव से कुबेरकान्त सेठ हुआ, सबके नेत्रोको प्रिय पृथ्वीपर विख्यात। उदार, पराक्रमी, महाधनवान, अनेक सेवक, परमभोगो का भोक्ता शास्त्रो का ज्ञाता, पूर्वधर्म के प्रभाव से ऐसी विभूति को प्राप्त हुआ। पुन. संसार से विरक्त हो जिनदीक्षा को धार परमपद को प्राप्त हुआ। जो साधुके आहार के पहले भोजन नहीं करने का नियम लेता है, वह हरिषेण चक्रवर्ती के समान महा उत्सव को प्राप्त होता है। हरिषेण चक्रवर्ती इसीव्रत के प्रभाव से महापुण्य को प्राप्तकर अनन्त लक्ष्मी का स्वामी हुआ। ऐसे ही सम्यग्दृष्टि भव्यजीव मुनि के पास एकबार भोजन का नियम करते है वे स्वर्ग के विमानो को प्राप्त करते है। वहाँ हमेशा प्रकाश, रात दिन का भेद नहीं, नींद नहीं, सागरोंपर्यन्त अप्सराओ के साथ क्रीडा करते है। पुन वहाँ से चयकर चक्रवर्तीपद को प्राप्त करते हैं। उत्तम व्रतो मे आसक्त अणुव्रतो के धारी श्रावक अष्टमी चतुर्दशी के उपवास शुद्धमन से करते है, वे सौधर्मादि सोलह स्वर्गो मे जन्म लेते है पुन: मनुष्य बनकर ससाररूपी वनसे पार होते है। मुनिव्रत के कारण अहमिन्द्र पद एव मुक्तिपद को पाते है। जो तीनो कालमे जिनेन्द्रदेव की स्तुति कर मन वचन काय से नमस्कार करते है। वे कई भवो मे उत्तम उत्तम पदको प्राप्त करते है। ससार मे भ्रमण करते हुये जो जीव सम्यक्त्व के साथ एकभी नियम व्रतकी साधना करता है वह मुक्ति का बीज है, जिसके जीवन मे एक भी नियम नहीं वह पशु एव फूटे घडे के समान गुण रहित हैं। जो भव्यजीव मोक्ष जाना चाहते है वह प्रमाद रहित होकर कुछ न कुछ नियम का अपने जीवन में पालन करते हैं। इसप्रकार अनन्तवीर्यकेवली ने अपनी दिव्यवाणी मे कहा। उनकी वाणी के प्रभाव से देव, विद्याधर, भूमि, गोचरी मनुष्य एवं तिर्यंच सभी प्राणी आनन्दको प्राप्त हुये। कोई मुनि बने, कोई श्रावक बने, किसीने समयक्त्व प्राप्त किया। कोई उत्तम तिर्यंच सम्यग्दृष्टि अणुव्रत के धारी हुये। चारोनिकाय के देवो में से कई देवों ने सम्यक्त्व प्राप्त किया।

अथानंतर एक धर्मरथ नाम के मुनिराज रावण से कहने लगे हे राजन्! भव्यजीव तुमभी अपनी शक्तिप्रमाण कुछ नियम धारण करों। यह धर्मरत्न का

दीप है और भगवान केवली महामहेश्वर है, इसद्वीप मे तू भी कुछ नियमरूपी रत्न ग्रहणकर। क्या चिन्ताकर रहा है। महापुरुषो का त्याग दुख का कारण नहीं है। जैसे कोई रत्नद्वीप मे प्रवेश कर मनमे सोचे की मै कैसारत्न प्राप्तकरूँ, ऐसा रावण अपने मनमे सोचने लगा। रावण भोगो मे आसक्त सो उसके मनमे चिन्ता हुई कि मेरे खान पान तो सहज ही पवित्र है सुगन्ध, मनोहर, पौष्टिक, सुस्वाद, मास आदि मलीन वस्तुओ से रहित शुद्ध आहार है। और अहिसा व्रतादि श्रावक का एक भी व्रत मै पालन करने मे समर्थ नहीं हूँ, मै अणुव्रतो को धारण नहीं कर सकता तो महाव्रतो को कैसे धारण करूँ। जो निर्ग्रंथ का व्रत पालते है, वे अग्नि की ज्वाला पीते है। और पवनको वस्त्र मे बाधते है। पहाड को उठाते है, मै महाशूरवीर हूँ परतु फिरभी तपव्रत धारणे मे समर्थ नहीं हूँ। धन्य है वे नरोत्तम जो मुनिव्रत धारते है, मै एक यह नियम धारणकरूँ की जो परस्त्री अत्यन्त रूपवान एव गुणवान महासुन्दर भी हो तो भी मै उसे बलात्कार कर ग्रहण (सेवन) नहीं करूँगा। अथवा सर्वलोक मे ऐसी कौन रूपवती नारी है जो मुझे देखकर मोहित नहीं होगी। कैसीहै परस्त्री? परपुरुष के सयोग से दूषित है शरीर उसका, स्वभाव से ही दुर्गन्ध, विष्टाकी राशि, उसमे मै कहॉ राग करूँ? ऐसा मनमे विचारकर भाव सहित अनन्तवीर्यकेवली को नमस्कार कर, देव, मनुष्य एव असुरो की साक्षी मे प्रकट रूप वचन कहने लगा। हे भगवन! इच्छा रहित जो परनारी उसे मै बलात्कार सेवन नहीं करूँगा, यह मेरे नियम है। और कुम्भकरण ने अरहत सिद्ध साधु केवली भाषित धर्मका शरण स्वीकारकर, सुमेरुसमान है अचलमन जिसका, उसने नियम किया कि मै प्रात काल उठकर प्रतिदिन जिनेन्द्र प्रभु का अभिषेक पूजा, स्तुतिकर मुनि को विधिपूर्वक आहारदेकर भोजन करूँगा, अन्यथा नहीं, मुनि के आहार की बेला से पहले भोजन नहीं करूँगा। और भी सर्व लोगो ने साधुओ को नमस्कारकर बहुत नियम लिये। कल्पवासी भवनत्रिक और विद्याधर मनुष्य हर्षसे युक्त केवलीको हाथजोड नमस्कार कर अपने अपने स्थान गये। रावण भी इन्द्र जैसी क्रीडा करता हुआ आकाशमार्ग से प्रयाण कर शीघ्र ही लकामे प्रवेश किया। राजमहल मे प्रवेशकर सुख से रहने लगा। राजमन्दिर सर्वसुख का भरा है। पुण्याधिकारी जीवो के जब शुभकर्म का उदय होता है तब नानाप्रकार की सामग्री का साधन मिल जाता है। गुरुके मुखसे धर्मोपदेश प्राप्तकर परमपद के अधिकारी होते है। ऐसा जानकर जिनागम मे पुरुषार्थी

होकर बारम्बार निजपद का विचारकर धर्मका सेवन करते है, विनयसे जिनशास्त्र सुननेवालो को जो ज्ञान है वह रविसमान प्रकाशको प्राप्त करते है, एवं मोहरूपी अन्धकार का नाश करते है। इसलिये प्रत्येक भव्यजीवों को केवलीभगवान की वाणीपर विश्वासकर, उसका अनुसरण करना चाहिये, वे ही अनुसरण आत्म साधना का कारण हैं सच्चेदेव, शास्त्र, गुरु का सानिध्य ही संयमको प्राप्त कराकर मोक्ष सुख देता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे अनन्तवीर्य केवली के धर्मोपदेश का वर्णन करनेवाला चौदहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-15

अंजनासुन्दरी और पवनंजय कुमार के विवाह का वर्णन

अथानंतर उन्हीं केवली के चरणो में हनुमान एव विभीषण ने श्रावक के व्रत धारण किये। जैसे सुमेरुपर्वत स्थिर है उससे अधिक हनुमान का शील सम्यक्त्व परम निश्चल प्रशसा योग्य है। जब गौतमस्वामी ने हनुमान के नियमादि का प्रशसा योग्य वर्णन किया, तब मगधदेशके राजा श्रेणिक हर्षित होकर गौतमस्वामी से पूछने लगे। हे भगवन! हनुमान कैसे लक्षणो को धारण करनेवाला, किनका पुत्र, कहॉ उत्पन्न हुआ। मै निश्चय से उनका चारित्र सुनना चाहता हूँ। तब महापुरुषो की कथा से प्रसन्नता उत्पन्न हुई है। ऐसे इन्द्रभूति गौतमस्वामी कहने लगे। हे नृप! विजयार्ध पर्वतकी दक्षिणश्रेणी पृथ्वी से दशयोजन ऊँची वहॉ आदित्यपुर नाम का अतिमनोहर नगर यहॉ राजाप्रहलाद, रानीकेतुमती उनके पुत्र वायुकुमार (पवनकुमार) लक्ष्मी समान सुन्दर। वायुकुमार को देख पिता के मनमे इनके विवाह की चिन्ता उत्पन्न हुई। कैसा है पिता? परम्परा से सन्तान बढाने की है इच्छा जिनकी। अब जहॉ यह वायुकुमार विवाह करेगा वहॉ का वर्णन करते हैं। भरतक्षेत्र में समुद्र से पूर्वदक्षिण दिशाके मध्य दन्तिनाम का पर्वत उसके ऊँचे ऊँचे शिखर आकाश से लग रहे हैं। नानाप्रकार के वृक्ष और जल के निर्झरने बहते है। वहॉ इन्द्र समान राजा महेन्द्र विद्याधरने महेन्द्रपुर नगर बसाया। राजाके

हृदयवेगा रानी उसके अरिन्दमादि सौ पुत्र महागुणवान और अंजनासुन्दरी पुत्री वह मानो तीनलोक की सुन्दरी, जो स्त्री उनके रूपको इकट्ठाकर बनाई है। नील कमल समान है नेत्र, रक्तकमल समान चरण, हस्ती के कुंभस्थल समान कूच जिसके सुन्दर नितम्भ, जघा, गन्धर्व आदि सर्व कलाओं को जाननेवाली मानों साक्षात सरस्वती ही है। और रूपसे लक्ष्मीसमान, सर्वगुणमण्डित, एकदिन यौवन अवस्था मे क्रीडा करती सखियों सहित पिता ने देखी, जैसे सुलोचना को देखकर राजा अकम्पनको चिन्ता हुई थी, वैसे अंजना को देख राजामहेन्द्रको चिन्ता हुई। ससार मे माता पिता को कन्या दुख का कारण है, जो बडे कुलके पुरुष हैं, उनको कन्या की ऐसी ही चिन्ता रहती है। यह मेरी कन्या प्रशसा योग्य पतिको प्राप्त हो, और बहुतकाल इसका सौभाग्य रहे एव कन्या निर्दोष सुखी रहे। राजामहेन्द्र ने अपने मत्रियो से कहा कि, तुम सब कार्यमें प्रवीण हो, कन्या योग्य श्रेष्ठवर बताओ। तब अमरसागर मत्री ने कहा यह कन्या राक्षसो का स्वामी रावण को देओ, वह विद्याधरों का अधिपति है उससे सम्बन्ध करने से आपका प्रभाव समुद्र पर्यन्त पृथ्वीपर फैलेगा। अथवा इन्द्रजीत मेघनाथ को देओ, और यह भी आपको नहीं रुचे, तो कन्या का स्वयवर रचो, यह कहकर चुप हो गया। तब सुमति मत्री महापडित बोला रावण के तो रानियॉ हजारो है, और वह महाअहंकारी उससे विवाह करायें तो आपस मे प्रेम नहीं रहेगा, और कन्या की आयु छोटी और रावण की बडी इसीलिये यह ठीक नहीं। एव इन्द्रजीत मेघनाथ को दें तो उन दोनोमे परस्पर विरोध है अत यह नहीं करना। तब ताराधन्य मत्रीने कहा दक्षिणश्रेणी में कनकपुरनगर, राजाहिरण्यप्रभ, रानीसुमना, उनका पुत्र सौदामिनीप्रभ वह महाकीर्तिधारी सर्व कलाओ का पारगामी सर्वसुन्दर, लोगो के नेत्रों को आनन्दकारी अतुल पराक्रमी है। सो सब विद्याधर एकसाथ उससे युद्ध करें तो भी उसे नहीं जीत सकते। इसीलिये यह राजकन्या उसको देनी। जैसीकन्या वैसावर, योग्य सम्बन्ध है इस बातको सुनकर सन्देह परागमत्री माथा हिलाकर कहने लगा। यह सौदामिनीप्रभ महाभव्य है, यह निरन्तर वैराग्यरूप भावना पढता है ससार अनित्य है, वह संसार का स्वरूपजान अठारहवर्ष में विषयाभिलाषा को छोड परिवार का त्यागकर मुनिदीक्षा धार केवलज्ञान को प्राप्तकर मोक्ष जायेगा। इसीलिये कन्या का विवाह इससे करायेगे तो पति बिना कन्या की शोभा नहीं है, जैसे चन्द्रमा बिना रात्री की शोभा नहीं। इसीलिये इन्द्र के नगर समान आदित्यपुर

नगर है वहा राजा प्रहलाद, रानी केतुमती उनके पुत्र पवनजय नाम के पुत्र पराक्रम का समूह, रूपवान, शीलवान, गुणनिधान, सर्वकलाओ को जाननेवाले, शुभ शरीर से युक्त, अर्थात् सर्वगुणो से सम्पन्न है, हम सौ वर्षों में भी उनके गुण नहीं कह सकते, इसीलिये आप उन्हीं को अपनी पुत्री दीजिये। पवनजय के ऐसे गुण सुन सबही हर्षको प्राप्त हुये और अजनासुन्दरी भी बहुत प्रसन्न हुई।

अथानंतर बसतऋतु आई, कमल की सुगधता से दशो दिशाये सुगधरूप हुई, तोते मधुर मधुर वाणी बोले, ऐसी बसतऋतु नर नारियो के स्नेह को बढाता है। हिरण घास को उखाड हिरणी के मुख मे खिला रहे है। वह दूब अमृतसमान लग रही है, आपसमे प्रेम बढता जा रहा है, अशोकजाति के वृक्षो की नयी कोपले मनको आकर्षित करती है, मानो सौभाग्यवती स्त्रियो की राग भरी सूरत ही है, उस समय एकदिन भी स्त्री पुरुष परस्पर वियोग को नहीं सह सकते है, ऐसी रागरूप बसतऋतु आई, उससमय फाल्गुनसुदी अष्टमीसे पूर्णिमातक अष्टान्हिका के दिन महामगल रूप आये, तब इन्द्रादि देव शची आदि देवियो सहित पूजा के लिये नदीश्वर द्वीप गये, और विद्याधर पूजा की सामग्री लेकर कैलाशपर्वत पर आये। श्रीभगवान ऋषभदेव के निर्वाण कल्याण से वह पर्वत महापूज्य है इसीलिये समस्त परिवार सहित अजना के पिता राजा महेन्द्र भी आये। वहॉ भगवान की पूजा स्तुतिकर भाव सहित नमस्कार कर स्वर्णकी शिला पर सुख से बैठे। और राजा प्रहलाद पवनजय के पिता वह भी भरत चक्रवर्ती के बनवाये जो जिनमन्दिर उनकी वन्दना के लिये कैलाशपर्वत पर आये। भगवान की वन्दना कर पर्वतपर विहार करते हुये राजा महेन्द्र को देखा। तब वहॉ महेन्द्र को देखकर प्रेम से भरे प्रफुल्लित मन से राजा प्रहलाद पास मे आये, राजा महेन्द्र उठकर प्रेम से सन्मुख जाकर मिले, राजा प्रहलाद एव राजा महेन्द्र दोनो एकमनोज्ञ शीलापर बैठे, दोनो परस्पर शरीरादि की कुशलता पूछी, तब राजामहेन्द्र कहने लगे, हे मित्र! मेरे कुशलता कहॉ है, कन्या विवाह योग्य हुई है, इसीलिये उसका विवाह कराने की चिन्ता से मन व्याकुल है, जैसी कन्या है ऐसा वर चाहिये और बडा घर चाहिये, किसके साथ विवाह कराये। यह बार बार विचार आता है, रावण से करायें तो उसके स्त्रीयॉ बहुत है और आयु बडी है, अथवा उनके पुत्रोको दे तो उनके भाईयो मे परस्पर विरोध है। और हेमपुर का राजा कनकद्युति का पुत्र सौदामिनी (विधुतप्रभ) वह थोडे ही दिनो मे मुक्ति को प्राप्त होगा, यह बात सर्व पृथ्वीपर

प्रसिद्ध है। ज्ञानी मुनियों ने कहा है। हमने भी अपने मन्त्रियो के मुख से सुना है। अब हमारे यह निश्चय हुआ है कि आपकापुत्र पवनजय कन्या से विवाह करने योग्य है। इसी मनोरथ को लेकर हम यहाँ आये है। सो आपके दर्शनकर अतिआनन्द हुआ, और मनकी चिन्ताये कुछ दूर हुई, तब राजा प्रहलाद बोले, मेरे भी चिता पुत्र के विवाह कराने की है इसीलिये मै भी आपका दर्शनकर अमृतरूपी वचन सुनकर अनुपम सुखको प्राप्त हुआ। जो आप आज्ञा करो वही प्रमाण है, मेरे पुत्र का बडा भाग्य जो आपने कृपा की, वर कन्या का विवाह मानसरोवर के तटपर करना निश्चित किया। दोनो सेनाओ मे आनन्द के बाजे बजे ज्योतिषियों ने तीसरे दिन विवाह का मुहूर्त निकाला।

अथानंतर पवनजयकुमार अजना के रूपकी बात सुनकर तत्काल देखने के इच्छुक हुये, तीन दिन अजना के बिना रह न सके, सगम की अभिलाषा से यह कुमार काम के वश हुआ, काम के दशवेग होते है [प्रथमवेग विषयो की चिन्ता से मन व्याकुल हुआ। दूसरेवेग देखनेकी अभिलाषा हुई। तीसरा दीर्धश्वांस लेने लगा, चौथा कामज्वर उत्पन्न हुआ, मानो शरीर मे चन्दनकी अग्नि लगी, पाचवा शरीर शिथिल हुआ, सुगन्ध पुष्पो से अरुची हुई, छठे मे भोजन विषसमान बुरा लगा। सातवे मे अजना के कथाकी आसक्ती से दुखी हुआ, आठवे मे पागल होकर गीत नृत्यादि अनेक क्रियाये करनेलगा, नवमे मे महामूर्च्छा उत्पन्न हुई, दशवे वेग मे दुख के भार से महादुखी हुआ।] यद्यपि यह पवनजय विवेकी था फिर भी कामके प्रभावसे अनेक विपरीत क्रियाये करता रहा। पवनंजय साहस को छोडकर मुखपर हाथ लगाकर शोकवान होकर बैठा, पसीना टपक रहा है, शरीर काप रहा है, बार बार जभाई ले रहा है, अत्यन्त प्रेम की अभिलाषा से चिन्तावान होकर, स्त्री के ध्यान से इन्द्रियॉ व्याकुल हो गई, मनोज्ञ स्थान भी पवनजयको अरुचि कर लगा। मन की आकुलता के कारण शरीर का शृगार करना छोड दिया, क्षण मे आभूषण पहने क्षण मे खोल देता, सर्व लज्जा रहित हुआ, शरीरकृष हो गया, ऐसी चिन्ता करता रहा कि वह समय कब होगा कि, मै अजना सुन्दरी को अपने पास बैठी देखूँ, और कमल समान उसके गाल का स्पर्श करूँ, अथवा मुख से वार्ता करूँ, अजना की बात सुनकर ही, मेरी यह दशा हुई है तो न जाने आगे क्या होगा, वह कल्याण रूपिणी मेरेह्रदय मे बस रही है, फिर भी मुझे दुखरुप अग्नि का दाह क्यों हो रहा है? स्त्री तो निश्चयसे एव स्वभाव से कोमल

होती है, फिरभी मुझे दुख के लिये कठोर क्यों हुई। यह काम पृथ्वीपर अनंग कहलाता है मुझे भी अंग रहित कर दिया, मेरे शरीर में घाव नहीं पर वेदना बहुत है। मैं एक जगह बैठा हूँ पर मन बहुत जगह घूम रहा है, यह तीनदिन अजना को देखे बिना, मैं मेरे मन को रोक नहीं सकता। इसीलिये मैं अजना को देखने का उपाय करूँ, जिससे मेरे मन मे शांति होगी, अब सब कार्यो मे मित्र समान ससार में आनन्द का कोई दूसरा कारण नहीं, मित्र से ही सब काम सिद्ध होते हैं। ऐसा विचारकर अपना मित्र प्रहस्त विश्वास पात्र उसको पवनजंय गद् गद् वाणी से कहने लगे। कैसा है मित्र? छाया की मूर्ति ही है, अपना ही शरीर मानों विक्रिया से दूसरा शरीर हो रहा है। तब मित्रसे कहा, हेमित्र! तू मेरा सब अभिप्राय जानता है। तुझे मै क्या कहूँ? परन्तु यह मेरी दुख अवस्था मुझे परेशान कर रही है। हे मित्र! तुम्हारे बिना यह बात किसीसे कही नहीं जाती, तुम समस्त जगत की रीति को जानते हो, जैसे किसान अपना दुख राजा से कहता और शिष्य गुरु से कहता, स्त्री पति से कहती, रोगी वैद्य से कहता, बालक माता से कहता, तो दुख छूटता है, ऐसे बुद्धिमान जीव अपने मित्रसे कहते हैं। इसीलिये मै तुझे कहता हूँ, वह राजामहेन्द्र की पुत्री, अंजना के गुण श्रवणकर मेरी यह विकल दशा हुई है। अत उसको देखे बिना तीनदिन निकालने को मै समर्थ नहीं हूँ। हे मित्र! ऐसा कोई प्रयत्न करो कि मैं उसे देख सकूँ, उसे देखेबिना मेरे मनमें स्थिरता नहीं आयेगी। मेरी स्थिरता मे ही तुझे प्रसन्नता होगी। प्राणियो को सर्व कार्य मे जीना ही श्रेष्ठ है, इस प्रकार पवनजय ने कहा, तब प्रहस्त मित्र हसे और मित्रके मनका अभिप्राय जानकर कार्यसिद्धि का उपाय करने लगे। हे मित्र! बहुत कहने से क्या, हम दोनो मे कोई भेद नहीं है। अच्छे कार्य के लिये ढील नहीं करना। इतने में ही सूर्य अस्त हुआ, रात्री का अन्धकार फैल गया। तब रात्री के समय मे उत्साह सहित मित्र को पवनंजय कहने लगे। हे मित्र! उठो उठो आओ वहाँ चले जहाँ वह मनकी हरण करनेवाली प्राण बल्लभा ठहरी है। तब यह दोनों मित्र विमानमें बैठ, आकाशमार्ग से चले, क्षणमात्र मे जाकर अंजना के महल पे सातवें खंड पर चढ़ मोतियो की झालरो में छिपकर बैठ गये। अंजना सुन्दरी को पवनंजय कुमार ने देखा, पूर्णिमा के चन्द्रमा समान है मुख उसका, मुख की ज्योति से चन्द्रमा की ज्योति लज्जित हो रही है। श्याम श्वेत अरुण तीनरंग से युक्त नेत्र महासुन्दर, मानो काम के बाण ही है। और कूच ऊचे महामनोहर शृंगाररस के भरे हुये मानो

कलश ही हैं। हाथ पैरों की हथेलियाँ लाल लाल कांति को प्राप्त कर रही है, शरीर महासुन्दर, अतिनाजुक, पतली कमर, ऐसा महामनोहर रूप देखकर पवनंजयकुमार एकाग्र मनसे टक टकी लगाकर अजनाको एक नजर से देख सुखरूपी आनन्दको प्राप्त हुये, उसी समय सखी बसन्तिलका महाबुद्धि मान अंजना सुन्दरी से कहती है। हे सुरुपे! तू धन्य है जो तेरे पिताजी ने तुझे वायुकुमार से विवाह कराने का निश्चय किया, यह वायुकुमार महाप्रतापी उनके गुण सुनकर अन्य पुरुषों के गुण मन्द लगते हैं, जैसे समुद्र में लहरे रहती है। वैसे तू पवनंजय के अंग में रहेगी। कैसीहै तू? महामधुर वाणी, रत्नो की प्रभा को जीते ऐसी ज्योति तेरी, तू रत्नों की खान, रत्नाचलपर्वत के तटपर बैठी तुम्हारा सम्बन्ध प्रशसा के योग्य हुआ, सब कुटुब प्रसन्न हुये, इसप्रकार जो पति के गुण सखी ने कहे, तब वह लज्जा के कारण चरणो की ओर नीचे देखती हुई आनन्दरूप जलसे मनभर गया, और पवनजय का भी मन हर्षसे फूल गया, मनकी प्रसन्नता बढ गई। उसी समय मिश्रकेशी सखी होट दबाकर, चोटी हिलाकर, मुख टेडाकर, बोली अहो! परम अज्ञान तेरा जो पवनजय के सम्बन्ध की प्रशसा की, जो विद्युतप्रभ से सम्बन्ध होता तो अतिश्रेष्ठ था, पुण्यके योगसे अजनाका विद्युतप्रभ पति होता तो जन्म सफल होता, हे बसन्तमाला! विद्युतप्रभ और पवनजय मे इतना भेद है कि समुद्र और तालाब, विद्युतप्रभ की कथा बडे बडे पुरुषो के मुख से सुनी है, जैसे मेघ के बूदो की संख्या नहीं, ऐसे उसके गुणो का पार नहीं, महा सौम्यवान्, विनयवान, दैदीप्यवान, गुणवान, रूपवान, बुद्धिमान, बलवान है, यह कन्या उसको ही देनी चाहिये थी। लेकिन कन्या के पिता ने सुना कि यह विद्यतुप्रभ थोडे ही दिनो मे मुनि होगा, इसीलिये सम्बन्ध नहीं किया। परन्तु यह अच्छा नहीं किया। विद्युतप्रभ का सयोग एक क्षणमात्र ही अच्छा था, परन्तु क्षुद्रपुरुष का संयोग बहुत काल भी किस कामका? यह वचन सुनकर पवनजय क्रोधरूपी अग्नि से प्रज्वलित हुये, क्षणमात्र मे चेहरा ओर ही हो गया। रस से विरस में आ गये, आँखे लाल हो गई, होठ डसकर म्यान से तलवार निकाली और प्रहस्त मित्र से कहने लगे। हे मित्र! इस अजना को मेरी निन्दा सुहाती है, इस सखी ने ऐसे निंद्य वचन कहे और यह सुनती रही सो अब मे इन दोनोका मस्तक काट डालूँगा। विद्युतप्रभ इसके हृदय का प्यारा है, वह इसकी कैसी सहायता करेगा। यह वचन पवनंजय के सुन प्रहस्तमित्र क्रोध से बोले। हे मित्र!

ऐसे अयोग्य वचन कहने से क्या? तुम्हारी तलवार बडे बडे योद्धाओ के मस्तकपर पडे, स्त्री अबला मारने योग्य नहीं है, इनके ऊपर तलवार कैसे पडे, यह दुष्ट दासी अजना के अभिप्राय बिना ही कहती है, तुम आज्ञा करो तो इसदासी को एक डण्डे की चोट से ही मार डालू, परन्तु स्त्रीहत्या, बालहत्या, पशुहत्या, मनुष्यहत्या इन सबकी हत्या शास्त्र मे वर्जित कही है। ये वचन, मित्रके सुनकर पवनजय का क्रोध समाप्त हो गया। और मित्रको दासीपर क्रूर देख कहने लगे। हे मित्र! तुम अनेक योद्धाओ को सग्राम मे जीतनेवाले यशके अधिकारी तुमको दीन दुखियो पर दया ही करना योग्य है। और सामान्य पुरुष भी स्त्रीकी हत्यानहीं करते तो तुम कैसे करोगे। जो बडे कुल मे उत्पन्न हुये पुरुष गुणो से प्रसिद्ध शूरवीर उनका यश अयोग्य कार्य से मलीन होता है। इसीलिये उठो जिसमार्ग से आये थे उसीमार्ग से चलो। छिपकर आये थे छिपके ही चलो। पवनजय के मन मे शका हुई कि, अजना को विद्युतप्रभ ही प्रिय है, इसीलिये यह उसीकी प्रशसा सुने और हमारी निदा सुनती है। अगर इसके मन मे ऐसा नहीं होता, तो दासी क्यो कहती, इस प्रकार क्रोधकर अपने स्थान पहुँचे। पवनजय कुमार अजना से रोषपूर्ण द्वेष रूप हो गये। मन मे सोचते रहे कि अजना को विद्युतप्रभ से राग है, ऐसी अजना को विकराल नदी की तरह दूरसे ही छोड दू। खोटे राजा की सेवा और शत्रुके आश्रय जाना, ढोगी मित्र, ओर अनासक्त स्त्री, इनमे सुख कहाँ है। और क्षुद्रपुरुष कुसगति भी नहीं छोडते, मदिरा पीने वाला वैद्य, शिक्षा रहित हाथी, हिसारूप धर्म, मूर्खोसे चर्चा, मर्यादा का उलघन, निर्दयीदेश, बालक राजा, परपुरुष से लगी स्त्री, इनको विवेकी लोग दूर से ही छोडते है। इसप्रकार चिन्तवन करता हुआ, पवनजयकुमार ने रात्री व्यतीत की। और पूर्वदिशा मे ललिमारूप ऊषा प्रगट हुई। मानो पवनजय ने अजना का राग छोडा सो पृथ्वीपर आकर भ्रमण करता है।

भावार्थ—राग का स्वरूप भी लाल है और सूर्य ऐसा आरक्तरूप निकला जैसे स्त्री के क्रोधसे, पवनजयकुमार ने क्रोध किया। और प्रहस्त मित्र से कहने लगे। हे मित्र! यहा अपने डेरे है सो यहा से अजना का स्थान पास मे ही है इसीलिये यहा नहीं रहना क्योकि अजना को स्पर्शकर पवन आती है। वह भी मुझे नहीं सुहाती। अत अब उठो अपने नगर चले, यहा रहना अच्छा नहीं, तब मित्रने कुमारकी आज्ञासे सेनाके लोगोको प्रयाण की आज्ञा दी। तब समुद्रसमान सेना

रथ धोडे हाथी पयादे इनके प्रयाण के बहुत शब्द हुये, कन्या का स्थान पास में ही था, सो सेना के शब्द सुन पवनंजय का प्रस्थान जानकर अजना महादुखी हुई, सेना के शब्द ऐसे बुरे लगे जैसे वज्र की शिला कानपर पडी। अंजना मनमे सोचती रही कि हाय हाय! मुझे पूर्वपुण्य से पति पवनजय महानिधान मिले थे वह क्यो जा रहे है? क्या करूँ, अब क्या होगा, हाय हाय मेरी इच्छा थी कि इस नरेन्द्र पवनजय के साथ क्रीडा करूगी सो अब तो सभी कार्य विपरीत हो गया। मुझे कोई अपराध मालुम नहीं हो रहा, परन्तु मेरी सखी मिश्रकेशी ने कटुवचन कहे थे, वह कदाचित राजकुमार को मालूम हुआ हो, और मेरे से मोह छोडा हो। यह विवेक रहित पापिनी, कटुभाषिणी धिक्कार उसे, जो मेरे पति से मुझे दूर किया। अब भी मेरा भाग्य हो और मेरा पिता कृपाकर प्राणनाथ को पुन वापिस लेकर आये तो मेरा जीना सफल है, और मेरा त्यागकर स्वामी चले जाये, तो मैं आहार का त्याग करूगी, एव शरीर को तज दूगी। ऐसा विचार करती हुई वह सती मूर्च्छा खाकर धरतीपर गिर गयी। तब सब सखियॉ कहने लगी, यह क्या हो गया, ऐसा कहकर शीतल जलादि उपचार से अजना को सचेत किया, पुन. अजना से मूर्च्छा का कारण पूछा, तब यह शर्मसे कह नहीं सकी-निश्चल मन बैठी रही।

अथानतर पवनजय की सेना के लोग मनमे व्याकुल हुये, कि बिना प्रयोजन राजकुमार का गमन क्यो? यह राजकुमार विवाह करने आये थे सो विवाह करके क्यो नहीं चले, पवनजय को किसने क्या कहा है, जो क्रोधको प्राप्त हुये हैं। सभी सामग्री उनके पास मौजूद है, किसी वस्तु की कमी नहीं। ससुर बडाराजा कन्या सुन्दर महागुणवान फिरभी पवनजय क्यो रूठ गये। तब कोई हसकर कहने लगे इनका नाम पवनजय है, सो अपनी चचलता से पवन को जीतते है, और कोई कहते है कि अभी तक स्त्री का सुख देखा नहीं है, इसीलिये ऐसी राजकन्या को छोडकर जाने को तैयार हुये है, पवनजय शीघ्रगमन करनेवाले वाहनपर चढ चलने को निकले। तब कन्या के पिता, राजा महेन्द्रकुमार पवनजय का कूच जानकर चिन्ता से व्याकुल हो सभी भाईयो सहित राजा प्रहलाद के पास गये। राजाप्रहलाद व राजामहेन्द्र दोनो ने आकर कुमार से कहा। हे राजकुमार! हमको शोक का कारण, जो यह कूच, क्यो हो रहा है, किसने आपको क्या कहा हैं? आप महाशौभायमान, अप्रिय किसको हो, जो आपको अच्छा नहीं लगे, वह किसीको भी अच्छा नहीं लगे। आपके पिता का एव हमारा वचन अच्छा नहीं भी हो, तो भी

आपको मानना होगा, हम तुम्हे अच्छा ही कहेगे। हमारी आज्ञा तुमको अवश्य ही पालनी है—हे शूरवीर! पुनः चलो, ओर हमारे मनोवाछित कार्य पूर्ण करो। हम तुम्हारे गुरुजन हैं, इसीलिये आप समान सत्पुरुषो को बडो की आज्ञा आनन्द का कारण है। ऐसा जब राजा प्रहलाद एव राजा महेन्द्र ने कहा तब राजकुमार धीरवीर विनय से मस्तक झुका लिया, पिता एव ससुर ने पवनंजय का हाथ पकडा, तब कुमार बडो की आज्ञा उलघन करने मे असमर्थ हुआ। पुन· वापिस आये, और मन मे सोचा कि अजना से विवाह कर छोड दूगा, ताकि दुख से जीवन व्यतीत करेगी और दूसरे पुरुष का सयोग भी प्राप्त नहीं होगा।

अथानतर—राजकुमारी अजना पतिदेव को वापिस आये सुनकर अति हर्षित हुई। शरीर के रोम रोम पुलकित हुए। लग्न समय मे इनका विवाह महामगल उत्सव रूप हुआ। जब दुलहिन का कर ग्रहण कराया तो अशोक के पल्लव समान आरक्त अतिकोमल कन्या के हाथ सो यह पवनजय को अग्नि की ज्वाला समान लगे, बिना इच्छा पवनजय की दृष्टि कन्या के शरीरपर गई, सो क्षणमात्र भी नहीं सहनकर सका। जैसे कोई विद्युतपात को नहीं सह सके। कन्याके प्रेम और वरके द्वेष इसीलिये मानो अग्नि हॅस रही है। बडे विधि विधान से इनका विवाहकर सर्वपरिवार आनन्दको प्राप्त हुये। मानसरोवर के तटपर विवाह हुआ। नानाप्रकार के वृक्ष, लता, फल, पुष्प से सुन्दर वन वहॉ परमोत्साह से एकमास पर्यन्त यहा रहे। परस्पर दोनो सम्बन्धियो ने अतिहित के मधुर वचन कहे, परस्पर स्तुति महिमा की, सम्मान किये। पुत्री के पिता ने बहुत दान दिया और सभी अपने अपने स्थान को गये। हे श्रेणिक! जो वस्तु का स्वरूप नहीं जानते और बिना समझे दुसरो के दोष गृहण करते है, वे महामूर्ख है, और दूसरो के दोषो से अपने ऊपर दोष आ जाये, ये सब पापकर्म का फल है। पाप दुखकारी है। पूण्य सूर्य समान ज्योतिकारी है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे अजना पवनजय का विवाह वर्णन करनेवाला पद्रहवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-16

अंजना और पवनंजय कुमार का मिलन

अथानतर पवनंजय कुमार ने अजना सुन्दरी से विवाहकर ऐसे छोड दिया जो कि कभी भी अजना के सामने तक नहीं देखा। तब वह राजकुमारी अंजना पति के नहीं बोलने से एव कृपादृष्टि कर नहीं देखने से अति दुखी हुई। रात्री में निद्रा नहीं लेती, निरन्तर ऑखो से ऑसु ही बहा करते थे। शरीर शिथिल हो गया, पति से महास्नेह, पति का नाम मनको अतिप्यारा लगता, हवा भी पति से लगकर आती वो भी प्रिय लगती। पति का रूप तो विवाह मडप मे देखा था। उसीका मनमे ध्यान करती, और निश्चल नेत्रो से चेष्ठा रहित बैठी रहती, अन्तरग मे पति के रूप का ध्यान करती बाहर भी पति के दर्शन की इच्छा करती, परन्तु दर्शन नहीं हो रहे है, तब शोक से बैठी रहती, और चित्रपट पर पति का चित्र बनाने का पुरुषार्थ करती, लेकिन हाथो के कम्पन से कलम गिर पडती, कमजोर हो गया है शरीर, सर्वाभूषण ढीले होकर गिरते जा रहे है। लम्बी श्वास से कपोल मुरझा गये है। शरीर पर वस्त्रो के भार का खेद करती हुई अपने अशुभ कर्मो की निन्दा करती, तथा माता पिता को बार बार याद करती। पति की चिन्ता से शरीर क्षीण होता रहा, दुर्बलता एव दुखो के कारण मूर्च्छा आ जाती, चेष्टा रहित होती, ऑसुओ के कारण मुख से वचन नहीं निकलते, ऐसी दुखी होती हुई पूर्व उपार्जित कर्मो को दोष देती हुई, अपने महलरूपी मन्दिर में ही गमन करती हुई, मूर्च्छा खाकर गिर पडती। मन के विकल्पो से, ऐसा विचार कर, अपने मन में ही पति से कहती है। हे नाथ! आपका मनोज्ञ शरीर मेरे मनरूपी हृदय में निरन्तर बसा हुआ है, फिर भी मुझे दुख क्यो देते है। मैंने आपका कुछ भी अपराध नहीं किया, बिना कारण मेरेपर क्रोध क्यों करते हो? अब प्रसन्न होओ, मैं आपकी दासी एवं भक्त हूँ, मेरे मनके विषादको हरो, जैसे अन्तरग में दर्शन देते हो, ऐसे बहिरग मे भी देओ। मै हाथजोड विनती करती हूँ, जैसे सूर्य बिना दिन की शोभा नहीं, चन्द्रमा बिना रात्रि की शोभा नहीं, और दया, क्षमा, शील, सन्तोषादि गुणों के बिना विद्या की शोभा नहीं, ऐसे आपकी कृपा बिना मेरी शोभा नहीं। इस प्रकार मन में बसे हुये पति को बार बार विनयपूर्वक

कहती है। और बडे बडे मोती समान ऑखो से आँसुओं की धारा बहाती है। महाकोमल सेज, अनेक सामग्री दासी तैयार करती है, परन्तु अंजना को कुछ भी अच्छा नहीं लगता है, स्नानादि सस्कार एव शृगार रहित ही रहती है कभी भी केशों को संवारती नहीं। केश रुखे पडे है, सम्पूर्ण क्रिया मे रुचि रहित पृथ्वी का रूप हो रही है। प्रतिसमय ऑसुओ के प्रवाह से मानो जल ही हो रहा है, चिन्ता से अग्निरूप हो रही है। मोहके योगसे ज्ञान ढका जा रहा है। भूमिपर ही बैठी रहती, बैठ जाए तो उठ नहीं सकती, और उठ जाए तो बैठ नहीं सकती, उठ जाए तो शरीर को रोक नहीं सकती, सखियो का हाथ पकडकर गमन करती, तो भी पैर अन्य अन्य स्थानो पर गिरते है। किसी से बोलने की इच्छा करती, परन्तु बोल नहीं सकती, पशु पक्षियो के साथ क्रीडा करना चाहती, तो कर नहीं सकती, वह सब से अलग अकेली बैठी रहती, पति मे मन और नेत्र लगाकर, बिना कारण पति से अपमान पाया है, उसका एकदिन एकवर्ष के बराबर बीत रहा है। रानी अजना की यह अवस्था देख सब परिवार के लोग दुखी हुये, सब ही चिन्ता करते, कि बिना कारण अजना को इतना दुख क्यो हुआ, यह कोई पूर्व उपार्जित पाप कर्म का उदय है, पूर्व जन्म मे इसने किसी के सुख मे अन्तराय किया है, इसीलिये यहाँ उसको सुख का अन्तराय हुआ है। वायुकुमार तो निमित्त मात्र है। यह बेचारी भोली, विवाहकर इसको क्यो छोडी, ऐसी सुन्दर दुलहन के साथ देवो समान भोग क्यो नहीं करते। राजकुमारी अजना ने पिता के घर कभी रंचमात्र भी दुख नहीं देखा, अब यहॉ अशुभ कर्मो के कारण दुख को प्राप्त हुई है। सखियॉ विचारती है, कि हम क्या उपाय करे, हम भाग्य रहित है, यह कार्य साध्य नहीं, कोई अशुभकर्म का कारण है। अब ऐसा दिन कब होगा, वह शुभमूहुर्त, शुभबेला, कब होगी, जो प्रीतम प्रिया को समीप लेकर बैठेगा, एव कृपा दृष्टि कर देखेगा, मिष्ट वचन बोलेगा, यही सबको अभिलाषा लग रही है।

अथानंतर राजा वरुण से रावण का विरोध हुआ। वरुण महामानी, जो रावण की सेवा आज्ञा का पालन नहीं करता। तब रावण ने दूत भेजा सो दूत जाकर वरुण से कहता है। हे विद्याधरो के स्वामी! जो तीनखंड के स्वामी, महाराजा रावण ने आपको आज्ञा दी है, आप मुझे प्रणाम करो या युद्ध की तैयारी करो, तब वरुण ने हॅसकर कहा। हे दूत! कौन है रावण, कहॉ रहता है, जो मुझे दबा रहा है। मै इन्द्र नहीं हूँ, मै वैश्रवण नहीं हूँ, मै यम नहीं हूँ, मैं सहस्त्ररश्मि नहीं

हूँ, मैं मरुत नहीं हूँ, रावण को देवों के शस्त्रो से महागर्व उत्पन्न हुआ है, उसकी सामर्थ है तो आये। मैं उसे गर्व रहित करूँगा, और तेरी मृत्यु नजदीक है जो हमको ऐसी बात कहता है। तब दूत ने जाकर रावण से सब बाते कहीं, रावण क्रोधकर समुद्र समान सेना सहित जाकर, वरुण का नगर घेर लिया, और ये प्रतिज्ञा की, कि मैं वरुण को देवोमयी शस्त्रो के बिना ही, वश करूँगा, मारूँगा अथवा बांधूगा। तब वरुण के पुत्र राजीव पुण्डरीकादि क्रोध पूर्वक रावण के कटक पर आये। रावण की सेना से वरुण की सेना का महा युद्ध हुआ। तब वरुण की सेना कुछ पीछे हटी, अपनी सेना को हटी देख वरुण राक्षसों की सेना पर आया, काल अग्नि समान भयानक, तब रावण दुर्निवार वरुण को रणभूमि मे आता देख, रावण भी युद्ध के लिये आया, वरुण के और रावण के आपस मे महा युद्ध होने लगा, वरुण के पुत्र खरदूषण से युद्ध करते रहे, तब रावण ने महाक्रोध से, वरुणपर बाण चलाये, तब तक वरुण के पुत्रों ने खरदूषण को पकड लिया। तब रावण ने मन मे सोचा कि हम वरुण से युद्ध करे और खरदूषण का मरण हो जाए सो ठीक नहीं इसीलिये सग्राम रोक दिया, जो बुद्धिमान है, वे मत्रणा किये बिना कार्य नहीं करते, तब मत्रियो ने विचारकर सब देशो के राजा बुलाये, शीघ्र ही पुरुष भेजे, और पत्र मे लिखा कि, आप सब सेना सहित शीघ्र ही आओ। राजा प्रहलाद के पास भी पत्र लेकर दूत आया, तब राजा प्रहलाद ने स्वामी की, भक्ति से रावण के सेवकों का सम्मान किया पत्र माथे पर लगाकर, पढा, पत्र में लिखा था कि पातालपुर के समीप कल्याणरूप स्थान में रहनेवाला महाक्षेमरूप विद्याधरो के अधिपतियो का पती, सुमाली का पुत्र रत्नश्रवा, उसका पुत्र रावण, आदित्यनगर के राजा प्रहलाद को आज्ञा करते है, प्रथम तो आपके शरीर की कुशल पूछी पुन· समाचार है कि हमको सर्व विद्याधर भूमि गोचरी प्रणाम करते हैं, और एक अतिदुर्बुद्धि वरुण पातालनगर में निवास करता है, वह हमारी आज्ञा से विरुद्ध होकर लड़ने को तैयार है, इसीलिये हम उससे युद्ध करने आये है महायुद्ध हुआ, वरुण के पुत्रों ने खरदूषण को जीवता पकडा है। तब मत्रियो ने मत्रणा कर खरदूषण के मरण की शका से युद्ध रोक दिया है। खरदूषण को छुडाना एवं वरुण को जीतना है, इसीलिये आप शीघ्र ही आओ, देर मत करो, तुम समान पुरुष कर्त्तव्य में चूकते नहीं। तब राजा प्रहलाद पत्र के समाचार जान मंत्रियों से मंत्रणा कर रावण के पास जाने के लिए तैयार हुए, तब राजा प्रहलाद

को युद्ध मे जाने का समाचार सुनकर, पवनजंय कुमार ने हाथजोड धरती पर मस्तक लगाकर नमस्कार किया और विनती की, हे नाथ! मेरे जैसे पुत्र के होते हुए आपको गमन करना युक्त नहीं, पिता पुत्र का पालन करता है, तो पुत्र का भी यही धर्म है, कि पिता की सेवा करे, और पुत्र सेवा नहीं करते तो जानना कि पुत्र हुआ ही नहीं, इसीलिये आपको गमन करना उचित नहीं, मुझे आज्ञा दो। तब पिता ने कहा। हे पुत्र! अभी तुम बालक हो, अब तक तुमने युद्ध देखा नहीं है, इसीलिये तुम यहीं रहो, और मुझे ही जाने दो। तब वायुकुमार बोले। हे तात! मेरी शक्ति का पराक्रम आपने देखा नहीं हैं। अग्नि की चिनगारी भी सम्पूर्ण वन को जला सकती है। आपकी आशीष मेरे मस्तक पर है। आपके प्रताप से मै इन्द्र को भी जीतने मे समर्थ हूँ। इसमे सन्देह नहीं हैं। ऐसा कहकर पिता को नमस्कार किया, और स्नान भोजन आदि क्रिया की, भावसहित अर्हन्त, सिद्ध को नमस्कार कर, मगलस्वरूप माता पिता से विदाई लेने आया, तब माता पिता ने मंगल के लिये ऑसु नहीं निकाले और आशीर्वाद दिया। हे पुत्र! तेरी विजय हो, छाती से लगा कर मस्तक चूमा, राजकुमार पवन भी श्रीभगवान का ध्यान कर माता पिता को प्रणामकर जो परिवार के लोग चरणो मे आये, उनको बहुत साहस देकर अति स्नेह से सबको विदा किये। पहले अपना दाहिना पैर आगे रखकर चले, उसी समय जीत की सूचना के लिए दाहिनी भुजा फडकी, और लाल कपडे पहने, मस्तक पर पूर्ण मगल कलश लेकर अजना खडी, उसके ऊपर प्रथम दृष्टि गई। और खभे से लगी हुई, द्वार पर महादुखी, राजरानी अंजना सुन्दरी के, आसुओ से नेत्र भर रहे है, ताम्बूल आदि से रहित, पति के आशीर्वाद की आशा से खडी है। मानो खभे से बधी हुई पुतली ही है। राजकुमार की दृष्टि, अंजना सुन्दरी पर गई, तब क्षण मात्र मे दृष्टि सकोच कर क्रोध से बोले। हे दूरीक्षणे! दुख कारी है दर्शन तुम्हारा, इस स्थान से हटो, तेरी दृष्टि बिजली की ज्वाला समान है, सो मै देख नहीं सकता, अहो बडे कुल की पुत्री कुलवंती, तुम्हारे में यह ढीठ पना, मना करने पर भी निर्लज्ज यही खडी रहे, ये पति के अतिक्रूर वचन सुनकर भी उसे अतिप्रिय लगे, जैसे बहुत दिनों के प्यासे मोर को, मेघ की बूंद भी प्यारी लगे। ऐसे ही पति के कठोर वचनो को सुन, अजना अपने मन में अमृत समान जान उन्हे पीती रही, हाथ जोड चरणो की ओर देख गद गद मधुर वाणी से धीरे धीरे कहने लगी। हे नाथ! जब आप यहॉ विराजमान थे तब भी मैं वियोग

को सह रही थी, परन्तु आप निकट थे, सो आशा से प्राण कष्ट से भी टिक रहे थे, अब आप दूर पधार रहे हैं, मैं कैसे जीऊंगी, मै आपके अमृतरूपी वचन की प्यासी हूँ। आप परदेश को गमन करते समय, प्रेम से, दयालुचित्त होकर नगर के पशु पक्षियो को भी दिलाशा दी, मनुष्यो की तो क्या बात सबसे अमृत समान वचन कहे, मेरा मन आपके चरणो मे रत है, मै आपकी अप्राप्ति से अतिदुखी हूँ, सो आप दूसरे के मुख से ही मुझे दिलाशा दिलाई होती। जब मुझे आपने तजी, तब जगत मे कोई शरण नहीं, मेरा मरण ही शरण है। तब राजकुमार पवनजय ने मुख संकोचकर क्रोध से कहा "मर" तब यह महासती अजना खेद खिन्न दुखी होकर धरती पर गिर गई, पवनकुमार अजना को मुर्च्छित अवस्था मे ही छोडकर चले गये। बडी ऋद्धि सहित हाथीपर चढ, सामन्तो सहित गमन किया, पहले ही दिन मान सरोवर पर पहुँचे, और सेना सहित वहीं विश्राम किया। अपने अपने वाहनो को यथा योग्य स्थानो पर रखकर स्नान भोजन आदि की क्रियाये की।

अथानंतर विद्या के प्रभाव से पवनजय ने मनोहर अतिसुन्दर एक महल लम्बा चौडा ऊँचा बनाया उसमे पवनजय मित्र सहित महल के ऊपर बैठे हुये, खिडकियो के छिद्रों से सरोवर के किनारे वृक्षो को देखते हुए अति प्रसन्न हो रहे थे। शीतल मंद सुगन्ध पवन से वृक्ष मद मद हिल रहे थे, और सरोवर मे लहरे उठ रही थी, कछुआ, मीन, मगर अनेक प्रकार के जलचर जीव किल्लोल कर रहे थे। भ्रमर गुजार कर रहे थे, वहॉ एक चकवी अपने चकवे के बिना अकेली वियोगरूपी अग्नि से तप्तायमान, अतिव्याकुल अनेक चेष्ठाओ को कर रही थी। सूर्य अस्त होने जा रहा था उसके नेत्र उस तरफ लग रहे थे, कमलो के पत्तो के छिद्रो में बार बार देख रही थी और पखो को हिलाती हुई बार बार उठ कर गिरती थी। अपनी छाया जल मे देखकर जानती है कि यह मेरा पति है, तो उसे ही बार बार बुलाती है, तो वह प्रतिबिम्ब कहॉ से आये। प्रतिबिम्ब के नहीं आने से, महादुखी हो रही है। कटक आकर के ठहरा है, सो अनेक देशो के मनुष्यो के शब्द एवं हाथी, घोडा आदि पशुओं के शब्द सुनकर अपने पति की आशाकर भ्रमण कर रही है। मन पति के लिये भ्रम रहा है। नेत्र ऑसुओ से भीज रहे है, वृक्षपर चढकर दशों दिशाये देख रही है, पति को न देखकर शीघ्र ही पृथ्वीपर आकर गिर पडती है। पंखों को हिलाकर कमलो की धूल को दूरकर रही है। सो पवनकुमार ने बहुत समय तक चकवी की यह दशा देख, दया से हृदय भर गया।

और मन मे ऐसा सोचने लगे, कि पति के वियोग से, यह चकवी शोकरूपी अग्नि मे जल रही है, यह मनोज्ञ सरोवर चन्द्रमा की चादनी, चन्दन समान शीतल, लेकिन पति के वियोग से चकवी को दवानल अग्नि के समान लग रहा है, पति के बिना चकवी को कोमल पत्ते भी खड्ग समान लग रहे है। चन्द्रमा की किरण भी वज्र समान लग रही है। स्वर्ग भी नरक रूप हो रहा है। ऐसा चिन्तवन करते हुए, राजकुमार पवनजय का मन महासती महारानी अजना मे गया, और इसी मानसरोवर पर विवाह हुआ था, वे सब विवाह के स्थान पवनजय के नजर मे आये, सो उन्हे देखकर अतिशोक उत्पन्न हुआ, यह शोक मर्म को छेदने वाला कठिन करोत के समान लगा। मन मे विचारने लगे, हाय हाय मै क्रूरचित्त, पापी, वह निर्दोष महासती को बिना कारण मैने उसे दुखी किया। एक रात्रि का पति वियोग यह चकवीं, देखो नहीं सहनकर सकती, तो बाईस वर्ष का वियोग, वह महासुन्दरी मेरी रानी कैसे सहन करती होगी? कठोर वचन, उसकी दासी ने कहे थे, अजना ने तो नहीं कहे थे। मैने दासी के दोषो के कारण, क्यो अजना को इतने दिन वियोग दिया, धिक्कार है मेरे समान मूर्ख को, जो बिना विचारे काम किया। ऐसे निष्कपट बिना प्रयोजन अजनाको दुख दिया। मै पापी, वज्र समान मेरा हृदय, जो मैने इतने वर्ष तक, सती अजना का, मुँह तक नहीं देखा, मुँह से बात तक नहीं की, अब क्या करूँ। माता पिता से विदा होकर घर से निकला हूँ, कैसे पुन वापिस जाऊँगा, महासकट मे, मै फसा हूँ। मै अजना से मिले बिना सग्राम मे जाऊँ, तो महासती जियेगी नहीं, और उसके मरने से मेरा भी मरण होगा। ससार मे जीवन समान कोई अन्य पदार्थ नहीं। इसीलिये सब कष्टो का निवारण करने वाला, मेरा परममित्र प्रहस्त विद्यमान है, उसे सब बात कहूँ। वह सब कला म प्रवीण है। ऐसा पवन कुमार ने सोचा। वह प्रहस्त मित्र पवनजय के सुख मे सुखी और दुख मे दुखी। राज कुमार को चिन्ता युक्त देख प्रहस्त पूछने लगा, कि-हे मित्र! आप रावण की मदद करने के लिए, अथवा वरुण समान योद्धा से लडने जा रहे हो? तब आपके चहरेपर प्रसन्नता होनी चाहिये, तब ही कार्य की सिद्धि होगी। आज तुम्हारा मुँखकमल क्यो मुरझाया हुआ दिख रहा है। लज्जा को छोडकर मुझे बताओ। आपको चिन्ता युक्त देख मेरा मन व्याकुल हुआ है। तब राजकुमार पवनजय ने कहा। हे मित्र! यह बात किसी से कहना नहीं, परन्तु तुम मेरे मन की बात जानते हो और कार्य करने वाले हो, लेकिन बात कहते हुए

लज्जा आ रही है। तब प्रहस्त कहने लगे, जो आपके मन मे है वह बताओ, आप आज्ञा करो, आपकी बात कोई नहीं जानेगा, जैसे गर्म लोहेपर पडी जल की बूद नष्ट हो जाती, दिखती नहीं है, ऐसे ही मुझे कही बात, प्रकट नहीं होगी, तब राजकुमार बोले,

हे मित्र! सुनो-मैंने कभी भी अंजना सुन्दरी को प्रेम भरी दृष्टि से देखा नहीं, ओर उससे प्रेम नहीं किया, पर आज मेरा मन अतिव्याकुल है, मेरी क्रूरता देखो, इतने वर्ष विवाह के बीत गये, लेकिन अब तक हमारा अजना से वियोग रहा, बिना प्रयोजन द्वेष का कारण रहा, अजना हमेशा दुख रूपी, शोक से भरी ही रही, ऑखों मे ऑसुओ की वर्षा होती ही रही, और चलते समय दरवाजे पर खडी वियोगरूपी अग्नि से मुखकमल मुरझाया हुआ एव सपूर्ण शृंगाररूपी सम्पदा रहित मैने देखी, अब उसके नेत्रो के ऑसू एव करुणा से भरी मधुर वाणी, अंजना का विनय, मेरे हृदय को बाण के समान छेद करते हुए भी, मुझे आकर्षित कर रहे है। इसीलिये ऐसा उपाय करो कि मेरा अजना से मिलन हो जाय। हे मित्र! हम दोनो का मिलन नहीं हुआ तो हम दोनों का मरण ही होगा। तब प्रहस्त एकक्षण विचारकर बोले, कि आप माता पिता से आज्ञा लेकर शत्रु को जीतने के लिये निकले हो, इसीलिये पुनः वापिस चलना ठीक नहीं है। और अब तक कभी भी अजना रानी को याद किया नहीं, और अब यहॉ बुलायें तो लज्जा की बात है। इसीलिये यहॉ से गुप्त ही चलना और गुप्त ही आना, वहॉ रहना नहीं। अजना महारानी को मिल, सुख सभाषणकर, प्रेम दर्शाकर, आनद सहित शीघ्र ही आना। तब आपका मन शात होगा। इसलिये मुद्गर नाम के सेनापति को कटक की रक्षा सोपकर मेरु की वन्दना का बहाना कर प्रहस्त मित्र सहित गुप्त ही सुगन्धादिक अनेक सामग्री लेकर आकाश मार्ग से चले। सूर्य भी अस्त हो गया। सध्या का प्रकाश नष्ट होते ही रात्रि का अंधकार प्रकट हुआ। अजना सुन्दरी के महल पर पहुँच गये। राजकुमार पवनजय तो बाहर खडे रहे, प्रहस्त मित्र सूचना देने, अजना के महल मे गये। दीपक का मद मद प्रकाश हो रहा था, अंजना कहने लगी कौन है? तब बसन्तमाला निकट ही सोई हुई थी, उसे जगाई वह सब बातो मे निपुण उठकर अजना का डर दूर किया। प्रहस्त रानी अजना को नमस्कार कर पवनजय के आगमन का वृतान्त कहा। तब रानी अजना ने प्राणनाथ का समागम स्वप्न समान जाना। प्रहस्त को धीमी धीमी मधुर वाणी से कहने लगी।

हे प्रहस्त! मै पुण्य हीन पति की कृपा से रहित मेरे ऐसे ही पाप कर्म का उदय आया, तुम हमसे क्या हसी करते हो, पति से जिनका निरादर होता है, उसकी कौन अवज्ञा नहीं करेगा? मै अभागिनी दुख अवस्था को प्राप्त हुई हूँ मुझे कहाँ सुख है। तब प्रहस्त ने हाथजोड नमस्कार कर विनती की—हे कल्याणरूपिणी! हे पतिव्रते! हमारा अपराध क्षमा करो, अब आपके अशुभ कर्म चले गये, आपके प्रेमरूपी गुणो से भरे आपके प्राणनाथ राजकुमार पवनजय आये है। आपसे अति प्रसन्न हुये, उनकी प्रसन्नता से क्या क्या आनन्द नहीं प्राप्त होगा। तब अजना सुन्दरी एकक्षण नीचे मुँख कर रही, और बसन्तमाला प्रहस्त से कहने लगी। हे भद्रे! मेघ बरसे जब ही अच्छा है। इसलिये पवनजय अजना के महल पधारे, सो रानीजी का महा भाग्य और हमारे पुण्य का वृक्ष फला। यह बात हो ही रही थी, उसी समय आनन्द के आश्रुओ सहित राजकुमार अन्दर पधारे। मानो करुणारुपी सहेली ही प्रीतमको प्रियाके पास ले आई, तब भयभीत हिरणी के समान, प्रिया पति को देख सन्मुख जाय हाथजोड शीश नवाय चरणो मे गिरी। तब प्राण-प्रिया को पवनंजय कुमारने अपने हाथो से हाथ पकडकर खडी की और अमृत समान वचन कहने लगे। हे देवी! आपका सम्पूर्ण दुख दूर हुआ, महारानी अजना हाथ जोड पति के निकट खडी हुई, पति ने अपने हाथो से हाथ पकडकर सेजपर बैठाई। तब नमस्कार कर प्रहस्त मित्र बाहर आ गये, और बसन्तमाला भी अपने स्थान चली गई। पवनजय कुमार ने अपने अज्ञान से लज्जावान होकर अजना को बार बार कुशल क्षेम पूछ कर कहा हे प्रिये! मैने अशुभ कर्म के उदय से तुम्हारा बिना कारण से निरादर किया, सो मुझे क्षमा करो, तब महासती नीचा मुँख कर मद मद मधुर वाणी से कहने लगी। हे नाथ! आपने निरादर कुछ नहीं किया, अब आपने कृपा की अतिस्नेह बताया, सो मेरे सभी मनोरथ सिद्ध हुये, आप के गुण एव आपके चरण मेरे हृदय मे हमेशा विराजमान थे, आपका अनादर ही मुझे आदर समान लगा, इस प्रकार अजना सुन्दरी ने कहा, तब पवनंजय कुमार हाथजोड कहने लगे, हे प्राण प्रिये! मैने बिना प्रयोजन तुम्हें दुख दिया, दूसरो के दोषो से तुमको दोष दिया, अंजना तुम हमारा सब अपराध भूल जाओ, मै अपना अपराध क्षमा कराने के लिये तुम्हारे पास आया हूँ। तुम हमारे पर अति प्रसन्न हो ऐसा कहकर पवनजय ने अधिक प्रेम दर्शाया। तब अजनासुन्दरी पति का स्नेह देख बहुत प्रसन्न हुई, और कहने लगी, हे नाथ! मै महाप्रसन्न हूँ, मैं

आपके चरणो की रज हूँ, हमारा इतना विनय करना आपको उचित नहीं, ऐसा कहकर प्रसन्न मन से स्वामी का मन प्रसन्न किया। प्राणनाथ की कृपा से प्रिया का मन एव शरीर ज्योति को प्राप्त हुआ। दोनों परस्पर अतिस्नेह के भरे एक चित्त हुये, सुख रूप जागृति से रहे, निद्रा नहीं आई, पिछले पहर अल्पनींद आई, प्रात. काल का समय होने लगा तब यह पतिव्रता सेज से उतरकर पतिके चरण दबाने लगी, रात्रि व्यतीत हुई, सो सुख मे मालुम नहीं हुई। प्रात· काल के समय चन्द्रमा की किरणे फीकी पड गई, कुमार आनन्द की खुशी से स्वामी की आज्ञा भूल गये। तब मित्र प्रहस्त ने राजकुमार के हित के लिये, बसन्तमाला को जगाकर अन्दर भेजी और स्वय भी मित्र के पास गये। और कहने लगे। हे राजकुमार! उठो अब कहॉ सो रहे हो, चन्द्रमा भी आपके मुॅख की ज्योति से शर्माता हुआ छिप गया है, यह वचन सुनकर पवनजय प्रबोध को प्राप्त हुये। जभाई लेते हुये, निद्रा के आवेश से लाल नेत्र हो हरे है, कानो को बाये हाथ की तर्जनी अगुली से खुजाते हुये, नेत्र को खोल दाहिनी भुजा सकोच कर अरहतों का नाम लेकर सेज से उठे, प्राण प्यारी राजरानी प्राणनाथ के जगने से पहले ही सेज से उतरकर भूमिपर विराजमान हुई, लज्जा से नम्रीभूत है नेत्र उसके, उठते ही साजन की दृष्टि सजनी पर गई पुन प्रहस्त को देखकर आओ मित्र कहकर सेज से उठे, प्रहस्त ने मित्र से रात्रि की कुशल पूछी, पास में बैठे, मित्र नीति शास्त्र के ज्ञाता, राजकुमार से कहने लगे। हे मित्र! अब चलो, प्रियाजी का सम्मान पुन· आकर करना, कोई जाने नहीं, उसके पहले कटक मे पहुॅचना है। नहीं तो लज्जा की बात है। रथनुपुर का धनी, किन्नर गीतनगर का स्वामी रावण के पास जाना चाह रहा है, सो आपका इन्तजार करते है। और रावण निरन्तर मत्रियो से पूछते है, कि पवनजय के डेरे कहॉ तक है, और वे कब आयेगे, इसलिये अब आप शीघ्र ही रावण के निकट चलो, रानीजी से विदा लो, आपको पिताजी की एव रावण की आज्ञा अवश्य पालन करना है। कुशल मगल कार्यकर शीघ्र ही आयेगे, तब प्राणप्रिया से अधिक प्रेम करना। तब पवनजय ने कहा, हे मित्र! ऐसा ही करे, ऐसा कहकर मित्रको तो बाहर भेजा और आप स्वय प्राण प्यारी से अति स्नेहकर हृदय से लगाकर कहने लगे, हे प्रिये! अब हम जा रहे है, तुम चिन्ता मत करो, थोडे ही दिनो मे स्वामी का कामकर हम आयेंगे, तुम आनन्द से रहना, तब अजनासुन्दरी हाथ जोडकर कहने लगी। हे स्वामिन! मेरा

ऋतुसमय है, सो मुझे गर्भ अवश्य ही रहेगा, और अब तक आपकी कृपा मेरे पर नहीं थी, यह बात सब जानते है, सो माता पिता से मेरे कल्याण के लिये गर्भ का वृतान्त कह कर जाओ, आप दीर्घ दर्शी सब प्राणियो में प्रसिद्ध हो, ऐसे जब प्रिया ने कहा तब आप प्राण प्रिया से कहने लगे। हे प्यारी! मै माता पिता से विदा होकर घर से निकला हूँ अब मुझे उनके पास जाने में लज्जा हो रही है, लोग मेरी चेष्टा जान हँसेगे, इसीलिये जब तक तुम्हारा गर्भ प्रकाश नहीं होवे उसके पहले ही मैं आऊँगा, तुम प्रसन्न चित्त रहो। और कोई कुछ कहे तो, यह मेरे नामकी मुद्रिका (अगुठी) और हाथो के कडे रखो तुमको सब शाति होगी। ऐसा कहकर मुद्रिका और कडे दिये, और बसन्तमालाको आज्ञा दी, कि अंजना की सेवा बहुत अच्छी तरह करना। आप सेज से उठे प्रिया के प्रेम मे लग रहा है मन जिनका, कैसी है सेज! सयोग के योग से बिखर रहे है, हार के मुक्ता फल, एव पुष्पो की सुगध से शोभायमान सेज पवनजय उठकर मित्र सहित विमानपर बैठ आकाश के मार्ग से चले। रानी अजना ने अमगल के कारण ऑसू नहीं निकाले। हे श्रेणिक! कदाचित् इस लोक मे उत्तम वस्तु के सयोग से थोडा सुख होता है, वह क्षणभगुर है, शरीर धारियो को पापकर्म के उदय से दुख होता, सुख दुख दोनो नाशवान हैं, इसीलिये हर्ष विषाद नहीं करना। हे प्राणियो जीवो को निरन्तर सुख को देने वाला, और दुख को दूर करने वाला, जिनेन्द्र भगवान का कहा हुआ धर्मरूपी सूर्य ही मोहरूपी अज्ञान अधकार को नाश करता है। इसीलिये प्रतिसमय धर्म कार्य करना चाहिये।

(इति श्रीरविषेणचार्यविरचित्महापद्मपुराण भाषावचनिका मे पवनजय अजना का सयोग वर्णन करनेवाला सोलहवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-17

अंजना के गर्भ प्रगट होना और सासुद्वारा घर से निकालना

अथानतर—कुछ दिनो के पश्चात् राजामहेन्द्र की पुत्री अंजनासुन्दरी को गर्भ के चिन्ह प्रगट हुये। अजना का मुख कुछ पाडुवर्ण का हो गया, मानो हनुमान गर्भ में आया, सो उसका यश ही प्रकट हुआ, मद-मंद चाल चलने लगी, स्तनयुगल

अतिउन्नति को प्राप्त हुये, अग्रभाग श्याम हुआ, आलस से धीमी धीमी आवाज निकले, पैर कापने लगे, इन लक्षणो को देख, सासु उसे गर्भवती जानकर पूछने लगी, तूने यह कर्म किनसे किये। तब यह हाथजोड प्रणामकर पति को आने का सम्पूर्ण वृतान्त कहा, तब केतुमती सासु क्रोधकर, महाकठोर वाणीरूपी पत्थरो से मारने लगी। कहा हे पापिनी! मेरे पुत्र तेरे से अति विरक्त है, तेरा आकार भी देखना नहीं चाहता, तेरे शब्द भी सुनना नहीं चाहता, माता पिता से विदा होकर रणसग्राम के लिये निकला, वह धीरवीर कैसे तेरे महल मे आयेगा, हे निर्लज! धिक्कार हो तुझ पापिनी को, चन्द्रमा की किरण समान मेरे उज्ज्वल वश को दोष लगाने वाली, यह दोनो लोक मे निद्य अशुभकार्य तेने किया, और तेरी यह सखी बसन्तमाला ने तुझे ऐसी बुद्धि दी, कुलटा के पास वेश्या रहे, तब कहॉ कि कुशल, मुद्रिका और कडे दिखाये तो भी केतुमती ने नहीं मानस, अत्यन्त क्रोधकर एकक्रूर नामका नौकर बुलाया, वह नमस्कार कर खडा हुआ, तब क्रोध से केतुमती ने ऑखे लालकर कहा। हे क्रूर! सखी सहित अजनाको गाडी मे बैठाकर महेन्द्रनगर के पास छोडकर आओ। तब क्रूर केतुमती की आज्ञा से सखी सहित अजना को गाडी मे बैठा कर महेन्द्रनगर की ओर ले चला। कैसीहै अजनासुन्दरी? कम्पायमान है शरीर उस का, महापवन से उखडी लता के समान निराश है, अतिव्याकुल कान्ति रहित, दुखरूपी अग्नि से जल गया है हृदय उसका, भयकर क्रोधित सासु को अजना ने कुछ भी उत्तर नहीं दिया, सखी की ओर देखती हुई अपने अशुभकर्म की बार बार निदा करती रही, सासु द्वारा झूठे कलक से मन बहुत दुखी होकर आखो से ऑसु बह रहे है वह क्रूर खोटे कर्ममे अतिप्रवीण, इनको लेकर गया, दिन के अन्त मे महेन्द्रनगर के समीप पहुँचकर नमस्कार किया और मधुर वचन से कहने लगा। हे देवि! मैने अपनी स्वामिनी की आज्ञा से आपको दुख का कारण रूपी कार्य किया, सो मुझे आप क्षमा करे। ऐसा कहकर सखी सहित अजनारानीको गाडी से उतारकर विदा ले अपनी स्वामिनी के पास जाकर नमस्कार कर कहा कि मै आपकी आज्ञा प्रमाण अंजना को महेन्द्र नगर के निकट पहुँचा कर आया हूँ।

अथानतर महापतिव्रता अजना सुन्दरी को पति के योग से दुखी देख सूर्य भी मानो चिन्ता से अपनी ज्योति को मद किया, और रोने से अत्यन्त लाल हो गये है नेत्र जिसके, ऐसी अजना के नेत्रो की लालिमा से पश्चिमदिशा रक्त वर्ण हो गई, अन्धकार फैल गया, वह अजना अपवादरूप महादुख के सागर मे दुखी

भूख प्यास की वेदना भी भूल गई। अत्यन्त भयभीत ऑखों से ऑसू बह रहे है। रुदनकर रही है, तब बसन्तमाला सखी ने धैर्य बधाया और रात्री में पत्तो का बिस्तर बिछा दिया, सो अजना को क्षणमात्र भी नींद नहीं आई, निरन्तर ऑसुओं की धारा बह रही है, मानो अग्नि के भय से नींद भाग गई, बसन्तमाला ने पैर दबाकर थकान दूर किया, और दिलासा दी, फिर भी नींद नहीं आई, दुख के कारण एकरात्री एकवर्ष बराबर बीती, प्रात काल उठकर अनेक विकल्प सकल्पो से युक्त अतिदुखी होकर पिता के घर की ओर चली, सखी छाया समान साथ रही, पिता के राजभवन के दरवाजे पर पहुँची, अन्दर प्रवेश करते समय द्वारपाल ने रोका, दुख के कारण शरीर का रग रूप अलग ही हो गया, सो अजना को पहचान नहीं पाया, तब बसन्तमाला ने सर्व वृतान्त कहा, सब जानकर शिलाकवाट नाम के द्वार पाल ने दूसरे मनुष्य को दरवाजे पर खडा कर, आप स्वय राजा के निकट जाकर नमस्कार पूर्वक विनती की, राजकुमारी अजना को आने का वृतान्त कहा, तब राजा के निकट प्रसन्न कीर्ति पुत्र बैठा था, राजा ने पुत्र से कहा, तुम सन्मुख जाकर अजनाको शीघ्रही नगर मे प्रवेश कराओ, एव नगर की शोभा कराओ, तुमतो पहले जाओ, और हमारी सवारी तैयार कराओ, हम भी पीछे से आ रहे है। तब द्वारपाल ने हाथजोड यथार्थ विनती की, तब राजा महेन्द्र ने, लज्जा का कारण सुन, महाक्रोध से पुत्रको आज्ञा दी, कि पापिनी को नगरसे निकाल दो, उसकी बात सुनकर मेरे कान वज्रसे मारे गये है, तब एक महाउत्साह नाम का बडा सामन्त राजा का अतिमित्र वह कहता है। हे नाथ! ऐसी आज्ञा करना उचित नहीं, बसन्तमाला से सब जानकारी कर लो, अजना की सासु केतुमती महा क्रूर है, और जैनधर्म को नहीं जानती है, अन्य धर्म मे प्रवीण है, इसीलिये बिना विचारे झूठा दोष लगाया होगा। राजपुत्री अजना महाधर्मात्मा श्रावक के व्रत पालने वाली, आचार विचार मे तत्पर, कल्याण करने वाली, परन्तु पापिनी सासु ने उसको घर से निकाला है, और तुम भी निकालो तो किसकी शरण मे जायेगी। जिस प्रकार सिहकी दृष्टिमे मृगी दुख को प्राप्त होकर महागहनवन की शरण लेती है। उसी प्रकार यह भोली निष्कपट सासु के निकालने पर आपकी शरण मे आई है। अपवाद से दुखी होकर आपके आश्रय मे भी सुख न मिले तो कहाँ मिले, मानो स्वर्गसे लक्ष्मी ही आई है। द्वारपाल ने अन्दर आनेसे रोक दिया, तब लज्जा को प्राप्त हो मुखपरहाथरखकर द्वार पे खडी है, आपके स्नेह से हमेशा लाडली है, सो आप दया करो यह निर्दोष है, राजभवन के

महल में प्रवेश कराओ, और केतुमती की क्रूरता पृथ्वीपर प्रसिद्ध है, ऐसे न्यायरूप वचन उत्साह से सामंत ने कहे। परन्तु राजा ने बात नहीं मानी, जैसे कमलों के पत्तोंपर जल की बूद नहीं ठहरती है, ऐसे ही राजाके मनको यह बात नहीं जंची। राजा ने सामन्त से कहा, यह बसन्तमाला हमेशा अंजना के पास रहती है, इसीलिये प्रेम के कारण सत्य बात नहीं कहेगी, अत॰ हमें कैसे निश्चय होगा। इसीलिये अंजना के शील मे निश्चित सन्देह हैं, अब उसको यहॉ नगर से निकाल दो, जब अजना के गर्भ की बात जगत मे फैल जायेगी तो हमारे निर्मलकुल मे कलक लग जायेगा। और जो बडे कुल की बेटी महाविनयवान उत्तम गुणो को धारणे वाली, वही पीहर और ससुराल मे स्तुति करने योग्य होती है। जो पुण्यवान महापुरुष जन्म से ही शीलव्रत का पालन करते है, ब्रह्मचर्य से रहते हैं, सब दोषो की मूल जो स्त्री उसे अगीकार नहीं करते वे ही धन्य है। ब्रह्मचर्य समान और कोई व्रत नहीं। जो बेटा बेटी कपूत हो उनके अवगुण पृथ्वीपर प्रसिद्ध हो तो, पिता धरतीपर मुँह दिखाने लायक नहीं होता है, यह बहुत बडी लज्जा की बात है। मेरा मन आज बहुत दुखित हो रहा है, मैने यह बात पहले अनेकबार सुनी थी कि अजना, पवनजय के अप्रिय है। और पवनजय अजना को ऑख से भी नहीं देखते है, तो अब यह अंजना को गर्भ उत्पन्न कैसे हुआ। इसीलिये यह अजना निश्चय से दोषी है। जो कोई अजना को मेरे राज्य मे रखेगा वह मेरा महाशत्रु है, ऐसा वचन कहकर, राजा ने, क्रोध से, कोई जाने नहीं ऐसा कहकर द्वार से निकाल दिया। बसन्तमाला सहित दुख की भरी अजना परिवार के यहॉ जहॉ जहॉ भी आश्रय के लिये गई, वहॉ किसी ने भी आश्रय नहीं दिया, दरवाजे बद कर दिये। जहॉ माता पिता ने ही आश्रय नहीं दिया, वहॉ ओर कुटुम्ब के लोगो की कैसी आशा, वे तो सब राजा के आधीन है। ऐसा निश्चय कर, उदास हो, ऑसुओं से भरे हुये नेत्रों से दुखी होकर सखी से कहती है। हे प्रिय! सखी यहॉ सबका मन पाषाण समान कठोर है, यहॉ कहॉ आश्रय, इसीलिये वन मे चले अपमान से तो मरना अच्छा, ऐसा कहकर बसन्तमाला सहित अजना वन को चली। मानों सिंह से भयभीत मृगी ही है। शीत उष्ण और अपवाद के खेद से गर्भ के भार से दुखी, वन मे बैठकर रोने लगी। हाय हाय, मैं मद भागिनी महादुखी, मैनेपूर्व मे ऐसे ही कर्म किये होंगे? इसीलिये यहॉ मै महाकष्ट को प्राप्त हुई। किसकी शरण में जाऊँ कौन मेरी रक्षा करेगा, मै दुखरूपी सागर के बीच मे किस कर्म के उदय से आई हूँ है, स्वामिन्! मेरे अशुभकर्म का उदय है, आप क्यो आये,

क्यों मेरे गर्भ रहा, मेरा दोनो जगह निरादर हुआ, माता ने भी मेरी रक्षा नहीं की। परन्तु वह क्या करे, अपने पति की आज्ञाकारिणी पतिव्रताओ का यही धर्म है, और स्वामी मुझे यह कह गये थे, कि तेरे गर्भ की वृद्धि से पहले ही मैं आ जाऊँगा। सो हे नाथ! दयावान होकर यह वचन क्यो भूल गये? और सासु ने बिना परीक्षा किये मुझे क्यो निकाल दिया? उनके मनमे मेरे शीलपर सन्देह था, तो परीक्षा के अनेक उपाय थे, और पिताजी को मै बाल अवस्था मे अतिप्यारी थी, निरन्तर गोदमे क्रीडा कराते, अब मेरी बिना परीक्षा किये निरादर क्यों किया, उनकी ऐसी बुद्धि क्यो हुई और मेरी माता ने मुझे नौमास गर्भ मे रखी, एव बालपन से पालन पोषण किया, अब एक बार भी अपने मुख से नहीं कहा, कि अजना के गुणदोषो का निर्णय कर लो, एक मॉ के गर्भ से उत्पन्न हुये, सभी भाईयो ने मुझे नहीं रखा, सभी कठोर मन के हो गये, जहॉ माता पिता एव भाईयो की यह दशा, तब चाचा ताऊ के परिवार एव प्रधान, मत्री, सामन्तादिक क्या करें। अथवा उन सबका क्या दोष, मेरा पाप कर्मरूपी फल उदय मे आया है, वह अवश्य मुझे भोगना है। इसप्रकार अजना दुख से परिवार को यादकर कर रो रही है, एव सखी बसन्तमाला भी उसके साथ साथ विलाप कर रही है, मनमे साहस नहीं रहा, अत्यन्त दीन मन होकर ऊँचे स्वर से रुदनकर रही है वहॉ हिरणी भी अजना को दुखरूपी दशा देख ऑसू बहा रही है, बहुत देर तक रोने से ऑखे लाल हो गई है, तब सखी बसन्तमाला महाप्रेम से अजना को छाती से लगाकर कहनेलगी। हे स्वामिनी! बहुत रोने से क्या लाभ, जो कर्म तुमने पूर्व मे उत्पन्न किया है, उसका फल अवश्य भोगना है, सभी जीवो के कर्म आगे पीछे लगे हुये है, सो कर्म के उदय मे शोक क्यो करना। हे देवी! स्वर्ग के देव सैकडो अप्सराओ के साथ सुख भोगते है, परन्तु अन्तसमय मे दुख ही उत्पन्न होता है। मन मे सोचते कुछ है और होता कुछ है ससार के प्राणी ससार के सुखों को पूर्वोपाजित कर्म के उदय से भोगते है, जो सुख देने वाली वस्तु प्राप्त होती है, वह शुभकर्म है, और जो वस्तु प्राप्त नहीं होती वह अशुभ कर्म हैं। कर्मो की गति विचित्र है, इसीलिये हे राजकुमारी! तू गर्भ के कारण परेशान हैं वृथा दुखी मत होओ, अपना मन दृढ करो, तुमने पूर्वजन्म मे कोई ऐसे कर्म किये होंगे, उनके फल टालने से टलते नहीं है। तुम तो महाबुद्धिमान हो आपको मै क्या शिक्षा दूँ, अगर आप नहीं जानती तो, मैं कुछ कहती, ऐसा कहकर वस्त्र से अजना के आसु पोछकर कहने लगी। हे रानी! यह स्थान पशुओ से भरा मनुष्यों के आश्रय से रहित, इसीलिये

उठो आगे चलें इस पहाड के निकट कोई गुफा हो जहाँ दुष्ट पशुओ का प्रवेश नहीं हो। उठो अंजनाजी तुम्हारे प्रसूति का समय आया है, इसीलिये कुछ दिन यत्न से रहना है, तब यह अंजना गर्भवती होने के कारण आकाश मार्ग से चलने में असमर्थ है, भूमिपर सखी के साथ, धीरे धीरे कष्ट से पैर रखती हुई विहार करनेलगी। कैसाहैवन? अनेक अजगरादि दुष्ट पशुओ से भरा भयानक शब्दो के कोलाहल से जगल गुंजायमान एव अतिसघन अनेकवृक्षो से भरा हुआ जिसमे सूर्य की किरणों का भी संचार नहीं, सुई की नोक के समान अतितीक्ष्ण कॉटे एव कंकर पत्थर बहुत हैं, ऐसे वन का नाम मातंगमालिनी है, जहाँ मन से भी गमन नहीं, वहाँ तनसे कैसे गमन होगा? सखी आकाश मार्ग से चलने मे समर्थ है परन्तु अजना गर्भकेभारसे समर्थ नहीं, इसीलिये बसन्तमाला, अजना के प्रेम से, शरीर की छाया समान साथ-साथ चलती है। अजनारानी वनको अतिभयानक देख पशुओं की भयकर आवाज से, शरीर कॉपने लगा, मार्ग भूल गई, तब बसन्तमाला अजनाको अति व्याकुल देख हाथपकड कहने लगी, हे स्वामिनी! तुम डरो मत मेरे पीछे पीछे चली आओ।

तब यह महासती सखी का कधा पकडकर धीरे-धीरे चली जा रही है। जैसे-जैसे कॉटे, कंकर, पत्थर, चुभते है, वैसे-वैसे अति दुखित होकर, विलाप करती हुई शरीर को कष्ट से सम्भालकर, जलके झरने महातीव्र वेगसे बह रहे है, उनको अतिकष्ट से पार करती अपने अशुभ कर्मो की बार बार निदा करती हुई लताओ को पकड, भय से युक्त, शरीरपर पसीनो की धाराओ से लचपच, एव वस्त्रो मे कांटे लग जा रहे है उनको छुडाती हुई, पैरो से खून की धाराये बह रही है, शोक रूपी अग्नि की जलन से तप्तायमान, वृक्षो के पत्ते भी हिलते तो भय को प्राप्त होती, बार-बार विश्राम लेती। तब बसन्तमाला प्रिय वचन कहकर धैर्य बंधाती, इस प्रकार से धीरे-धीरे अजना पहाड की तलहटी तक आई, वहाँ ऑखो में ऑसू भर एव पैरों की वेदना से विह्वल होकर बैठ गई, और सखी से कहती है अब मुझ में एक पैर भी आगे रखने की शक्ति नहीं है। यहाँ ही रहुँगी मेरा मरण हो तो हो, तब सखी अत्यन्त प्रेम से भरी महाप्रवीण, मधुरशब्दो से, शाति देकर, कहने लगी। हे देवी! यह गुफा पास में ही है, कृपाकर यहाँ से उठकर, वहाँ तक चलो, वहाँ सुख से रहे, यहाँ क्रूर जीव घूमते है, आपको गर्भ की रक्षा करनी है इसीलिये हट मत करो। ऐसा कहा, तब अंजना वहाँ से उठकर महाभयानक वनमे चलने लगी। तब सखी हाथ का सहारा देकर, अजना को विषम भूमि से निकाल

कर, गुफा के द्वार पर ले गई। बिना देखे गुफा मे जाकर बैठने का भय लगा, एव दोनो बाहर खडी रही, विषम पत्थरो को उलाघने से खेद खिन्न होकर बाहर बैठ गई। चारों तरफ इधर-उधर देखा, तो वहाँ पर एकपवित्र शिला पर पद्मासन से, विराजमान चारणऋद्धिधारी मुनिराज अनेक ऋद्धियो से सहित, निश्चल है, श्वासोच्छवास जिनका, नासा पर है दृष्टि जिनकी, स्तभ समान निश्चल है, शरीर जिनका, गोदपर रखे बॉया हाथपर दाहिना हाथ। जिनका समुद्र समान गंभीर, आत्मस्वभाव मे लीन, परिग्रह से रहित, आकाश जैसे निर्मल, महाशात मानो पहाड के शिखर ही हो, सो इन दोनो ने मुनि को देखा। ऐसे मुनिराज के समीप ये दोनो गई। सम्पूर्ण दुखदूर हो गया। तीन प्रदक्षिणा देकर हाथजोड नमस्कार किया। मुनिको देख मन प्रसन्न हुआ, नेत्र हर्ष से फूल गये। जिस समय जो वस्तु प्राप्त होनी हो वही होती है। तब ये दोनो हाथजोड विनतीकर कहने लगी। हे भगवान! हे कल्याणरूप! हे उत्तमयोगी! आपके शरीर मे कुशल है? कैसाहैआपका शरीर। सम्पूर्ण तप व्रतादि के साधन का मूल कारण है। हे गुणो के सागर! उत्कृष्ट-उत्कृष्ट तप की वृद्धि से युक्त, हे क्षमावान, शातभाव के धारी, मन और इन्द्रियो को जीतने वाले, आपका विहार भव्यजीवो के लिये कल्याण का कारण है। आप महापुरुष सम्पूर्ण ससारी प्राणियो के महामगल, कुशल के कारण है। सो आपकी कुशल हम कैसे पूछे, परन्तु यह पूछने का व्यवहार है इसीलिये पूछा है, ऐसा कहकर विनय से नमन करती हुई मौन से बैठ गई। और मुनि के दर्शन से सम्पूर्ण भय दूर हुआ। मुनिराज ने अमृत तुल्य परम शाति के वचन कहे—हे कल्याणरूपिणी! हे पुत्री! हमारे कर्मो के अनुसार सब कुशल है। ये सभी जीव अपने अपने कर्मो का फल भोगते है। देखो कर्मो की विचित्रता, यह राजा महेन्द्र की पुत्री, अपराध रहित, परिवार के लोगो ने निकाल दी है। सो मुनि बडे ज्ञानी, बिना बताये सम्पूर्ण वृतान्त को जानने वाले, उनको नमस्कार कर बसन्तमाला पूछने लगी। हे नाथ! किस कारण से अजना के पति अजना से बहुत दिन तक उदास रहे? और किस कारण से पुन: अनुरागी हुये। कौन मद भागी अंजना के गर्भ मे आया, उससे जीवन का सशय हुआ। तब अमितगति मुनिराज तीनज्ञान के धारी उन्होने सम्पूर्ण वृतान्त कहॉ। यही महापुरुषों की कृपा है, जो प्रत्येक जीवों का उपकार करते है, मुनिराज बसन्तमाला से कहने लगे। हे पुत्री! अजना के गर्भ मे उत्तम बालक आया है, सो पहले तुम बालक के पूर्व भव सुनो। पश्चात् अजना के पूर्व भव सुनना कि अजना किस कारण से ऐसे दुखो को प्राप्त हुई।

हनुमान और अजना के पूर्वभव

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे मन्दरनाम का नगर वहाँ प्रियनन्दि नाम का गृहस्थ, जया नाम की स्त्री एवं दमयंत नाम का पुत्र, महासौभाग्य युक्त, कल्याणरूप, दया, क्षमा, शील, सन्तोषादिक गुणो का आभूषण। एक समय बसन्त ऋतु मे नन्दनवन समान वन में, नगर के लोग क्रीडा करने गये। दमयंत ने भी अपने मित्रों सहित बहुत क्रीडा की। उसी समय एक महामुनिराज देखे। कैसेहैमुनि? आकाश ही वस्त्र है, तप ही धन है, ध्यान स्वाध्याय आदिक क्रियाओं मे लीन। सो दमयत क्रीडा करते हुये अपने मित्रो को छोडकर मुनिराज के समीप जाकर बैठा, वदनाकर धर्म का व्याख्यान सुन सम्यग्दर्शन सहित श्रावक के व्रत धारण किये। नाना प्रकार के नियमो को धारण किये। एक दिन दाता के सात गुणो से युक्त, नवधाभक्ति से साधुओं को आहार दान दिया। तत्पश्चात् कुछ समय बीत जानेपर समाधिमरण कर स्वर्ग मे देव पद को प्राप्त हुआ। दान और नियम के प्रभाव से अद्‌भुत भोगो को भोगता हुआ, स्वर्ग से चयकर, जम्बूद्वीप मे मृगाक नगर मे हरिचन्द राजा उसकी प्रियगुलक्ष्मी रानी, उसके सिहचद नाम का पुत्र हुआ। अनेक गुण एव कला मे प्रवीण, सभी जीवो के हृदय के प्यारे, देवो के समान भोग भोगता हुआ, साधुओ की सेवा की। पुन समाधिमरण कर देव हुआ। वहाँ मनवाछित सुखों को भोगा। वहाँ से चयकर, भरतक्षेत्र में विजयार्ध पर्वतपर अरुणपुर नगर मे राजा सुकठ, रानी कनकोदरी, उसके सिहवाहन नामा पुत्र हुआ। अपने गुणो से समस्त जीवो के मनको हरनेवाला, अप्सरा समान स्त्रीयो के मनको चुराने वाले। अतिरूपवान-गुणवान सो बहुत सुख से राज्य किया। श्री विमलनाथ भगवान के समोशरण मे आत्मज्ञान एव ससार से वैराग्य को प्राप्त हो कर अपने पुत्र लक्ष्मीवाहन को राज्य देकर लक्ष्मीतिलक मुनिराज से महाव्रतरूप यतिका धर्म स्वीकार किया। बारह भावना के चिन्तवन से ज्ञानचेतना रूप हुये, और महादुर्धर तपकर रत्नत्रय रूप अपने स्वरूप मे निश्चल हुये। तपके प्रभावसे अनेकऋद्धियॉ प्राप्त हुई। ज्ञान ध्यान तप मे लीन ऐसे मुनि के शरीर को स्पर्शकर वायु आये, वह प्राणियों के शरीर को स्पर्शकर अनेक रोगो को दूर करती है। परन्तु मुनिराज कर्मनिर्जरा के कारण बाईस परिषह को सहते हुये, आयु पूर्णकर धर्मध्यान के प्रभाव से सातवे लान्तव स्वर्ग मे बडी ऋद्धि के धारी देव हुये। चाहे जैसा रूप बनायें, चाहे जहॉ जाए, ऐसे सुखो का वर्णन वचन से नहीं होता। ऐसे अद्‌भुत सुख भोगते हुए भी स्वर्ग के सुखो मे मग्न नहीं हुये। परममोक्ष की इच्छा

है जिनको, ऐसे स्वर्ग से चयकर रानी अजना के गर्भ मे आये। महापरम सुख के पात्र पुनः शरीर को धारण नहीं करेगे। ऐसे चरमशरीरी अविनाशी मोक्ष सुख को प्राप्त करेगे। यह तो पुत्र के गर्भ मे आने का वृतान्त कहा। अब हे कल्याण लोचने! अजनाको जिस कारण से पति का वियोग एव कुटुम्ब परिवार से अनादर पाया यह वृतान्त सुनो! इस अजनासुन्दरी ने पूर्वभव मे देवाधिदेव श्रीजिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा पटरानी पद के अभिमान से सौतके ऊपर क्रोधकर क्षणमात्र मन्दिरसे बाहर निकाल दी, उसी समय एक सयमश्री आर्यिका उसके घर आहार को आई, तप से पृथ्वीपर प्रसिद्ध थी, उस आर्यिका ने श्रीजीकी मूर्तिका अविनय देख आहार नहीं किया, एव कनकोदरी पटरानी को अज्ञानरूप जान महादयावान होकर उपदेश दिया। जो साधु है वह सबका कल्याण ही चाहते हैं। जीवो को समझाने के लिए साधु गुरु आज्ञा से धर्मोपदेश देते है। ऐसा जानकर वह सयमश्री आर्यिका शील सयमरूप आभूषणो को धारण करनेवाली, रानी कनकोदरी को महामधुरता के भरे अनुपम वचन कहने लगी, हे भोली! सुन तू राजा की पटरानी है, महारूपवान, राजा का बहुत सन्मान है। तेरा शरीर भोगो का स्थान है, तेरे पूर्व उपार्जित पुण्य का फल है। इस चतुर्गति ससार मे जीव भ्रमण करता है, महा दुखो को भोगता हुआ, कभी अनन्तकाल के पश्चात् पुण्य के योग से मनुष्य जन्म प्राप्त होता है। हे शोभने! मनुष्य जीवन किसी पुण्य के योग से प्राप्त हुआ है। इसीलिए यह निद्य कार्य एव जिनेन्द्रभगवान की अवहेलना मत करो, योग्य क्रिया करो, यह मनुष्य शरीर प्राप्त करके जो पुण्यकार्य नहीं करते, वह हाथ मे आया हुआ रत्न खोते है। मन वचन काय से शुभ क्रियाओं का साधन ही श्रेष्ठ है, अशुभ क्रियाओ का साधन दुख का मूल कारण है। अपने कल्याण के लिए, पुण्यकार्य मे पृवर्त्ति करते है, वे मानव उत्तम है। यह ससार महानिद्य अनाचार से भरा है, जो साधु ससार सागर से स्वय तिरते एव दूसरो को भी तीराते है। भव्यजीवो को धर्म का उपदेश देते है, ऐसे साधु के समान और कोई उत्तम उपकारी नहीं है। मुनियो के ईश्वर सौ इन्द्रो से पूज्य, जगत के प्राणियो से वदनीय, धर्मचक्री श्रीअरिहन्त देवके प्रतिबिम्बका जो अविनय करते है, वे अज्ञानी अनेक भवमें कुगति के महादुखो को प्राप्त करते है। उन दुखो का वर्णन कौनकर सकता है? यद्यपि श्रीवीतरागदेव राग द्वेष से रहित है, उनकी जो सेवा करते, उनसे प्रसन्न नहीं, उनकी जो निदा करते उनसे द्वेष नहीं। महामध्यस्थ परिणामी हैं। परन्तु जो कोई जीव उनकी सेवा करता है, वह स्वर्ग मोक्ष को प्राप्त करता है, और जो कोई

निंदा करता है, वे नरक निगोद को प्राप्त होते है। क्योंकि जीवों के शुभ अशुभ परिणामों से सुख दुख की प्राप्ति होती है। जैसे—अग्नि के सयोग से शीत का निवारण होता है, ऐसे ही खाने पीने से भूख प्यास की वेदना समाप्त होती है। जैसे जिनेन्द्रभगवान की अर्चना से स्वयं ही सुख होता है और अविनय से परमदुख होता हैं। हे शोभने! जो संसार मे दुख दिखता है, वे सब पापकर्म का फल है, और जो सुख दिखते है वे सब धर्मका फल है। तुम पूर्व पुण्य के प्रभाव से महाराज की पटरानी महा सम्पत्तिवान हुई, और अद्‌भुत कार्य को करनेवाला तेरा पुत्र है, अब तू ऐसा कार्य कर, जो तुझे सुख की प्राप्ति हो। हे रानी! सूर्य के प्रकाश में ऑखो से देखते हुये भी तू कूए मे मत गिर, जो ऐसे कर्म करेगी तो घोर नर्क मे जायेगी। देव शास्त्र गुरु का अविनय करना अत्यन्त दुख का कारण है, ऐसे दोषो को देख मैं तुझे नहीं सम्बोधूँ तो मुझे प्रमाद का दोष लगता है। इसीलिये मैने तेरे कल्याण के लिये धर्मोपदेश दिया है। जब आर्यिका जी ने ऐसा कहा तब उसने नर्क के दुखो से डरकर सम्यग्दर्शन एव श्रावक के व्रतो को धारण किया। श्रीजिनेन्द्रभगवान की प्रतिमा मन्दिरमे विराजमान कर अष्टद्रव्य से पूजा की। इस प्रकार रानी कनकोदरी को संयम श्रीआर्यिका ने धर्म का उपदेश देकर अपने स्थान को गई। और वह कनकोदरी श्रीसर्वज्ञ देवका धर्मधारण कर समाधिमरण कर स्वर्ग में गई। वहॉ के सुखो को भोग, स्वर्ग से चयकर राजा महेन्द्र की, राणी मनोवेगा, उनकी पुत्री राजकुमारी अजनासुन्दरी हुई। पुण्य के प्रभाव से राजकुल मे उत्पन्न हुई एवं उत्तम पति को पाया। और जिनेन्द्र देवकी प्रतिमाको एकक्षण के लिये मन्दिर से बाहर रखा, उस पापसे पतिका वियोग एव कुटुम्ब से अनादर पाया। विवाह के तीन दिन पहले पवनंजय गुप्तरूप से आये और रात्री मे आपके महल की खिडकी मे प्रहस्त मित्र सहित बैठे हुये थे, उस समय मिश्रकेशी सखी ने विद्युतप्रभकी प्रशसाकी एवं पवनजय की निदाकी उस कारण राजकुमार पवनजय द्वेष को प्राप्त हुये। पुनः युद्ध के लिये राजकुमार घर से निकले और मान सरोवर पर जाकर डेरा डाला। वहॉ चकवा चकवी का वियोग देखकर करुणा जागृत हुई, सो करुणा ही मानो मित्रका रूपलेकर राजकुमार पवनंजय को राजकुमारी अजना के समीप लॉई। एवं अजना को गर्भ रहा। पुन· पवनंजय इसको गुप्त ही रखकर पिताकी आज्ञा पालने के लिए रावण के निकट गये। ऐसा कहकर फिर मुनिराज अजना से करुणाभाव रूपी अमृतवचन कहने लगे। हे बालिके! तुम कर्मके उदयसे दुखको प्राप्त हुई, इसीलिये आगे पुनः

ऐसा निद्यकर्म मत करना, ससार समुद्र से तारने वाले जिनेन्द्र भगवान की भक्ति कर। इस पृथ्वीपर जो सुख है, वे सब जिनेन्द्रभगवान की भक्ति से प्राप्त होते है। ऐसे अपने पूर्वभव सुनकर अजना आश्चर्य को प्राप्त हुई। अपने किये हुये पूर्व पाप कर्म का पश्चाताप करती रही। तब मुनि ने कहा। हे पुत्री! अब तू अपनी शक्ति प्रमाण नियम सहित जैनधर्म का पालनकर, साधु और त्यागियो की उपासना एव भक्ति करो, तुमने ऐसे पाप कर्म किये थे उसके कारण नीचगति मे जाती, परन्तु सयमश्री आर्यिका ने कृपाकर धर्मका उपदेश दिया। सो तुझे हाथ का अवलम्बन देकर कुगति के मार्ग से बचाया। यह बालक तेरे गर्भ मे आया है, वह महाकल्याण करने वाला है, इस पुत्र के प्रभावसे तुम परमसुख को प्राप्त होगी। तेरा पुत्र अखण्डवीर्य शक्ति, शाली, अति बलवान होगा, जो देवोसे भी जीता नहीं जायेगा। और थोडे ही दिनो मे तुम्हारा, तुम्हारे पति से मिलन होगा। इसीलिये हे अजना! तुम अपने मन मे दुखी मत होओ, प्रमाद को छोडकर शुभ क्रिया करो। इस प्रकार मुनिराज के वचनसुन अजना और बसन्तमाला बहुत प्रसन्न हुई। और बारम्बार मुनिराज को नमस्कार किया। मुनिराजने इनको धर्मोपदेश देकर आकाशमार्ग से विहार किया। और अजना अपने पूर्वभव सुनकर पाप कर्म से डर धर्म कार्यमे सावधान हुई। वह गुफा मुनिराज के रहने से अतिपवित्र हुई थी इसीलिये अजना सखी बसन्तमाला सहित पुत्र का प्रसूति समय जानकर यहाँ रही। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है। हे श्रेणिक! अब वह राजा महेन्द्र की पुत्री राजकुमारी अजना गुफा मे रहती है, बसन्तमाला विद्या के प्रभाव से खाने पीने आदिकी मनवाच्छित सर्वसामग्री तैयार करती है। अजना पतिव्रता वन मे अकेली रहती है। सूर्य भी इसका दुख नहीं देख सका इसलिये अस्त हो गया। शीघ्र ही अधकाररूप रात्रि प्रकट हुई। पक्षी भी अधकार के भय से शब्दरहित होकर वृक्षके ऊपर शांतिभाव से बैठ गये। रात्रि के अधेरे मे श्यालनी के भयानक शब्द हुये। गुफा के गेट के पास सिह आया, काल समान क्रूर, महाविषम शब्दो से वन गूज उठा, प्रलयकाल की अग्नि की ज्वाला समान जीभको बाहर निकालता हुआ अनेक प्राणियो को नाश करनेवाला, अकुश समान भयंकर जीभ को निकाल दिशाओ को शब्दायमान की, पूछ को मस्तक पर रख, नाखूनों से धरती विदारता हुआ, वह सिह मृत्यु का स्वरूप अनेक प्राणियों का क्षय करनेवाला अग्नि से भी अति प्रज्वलित, ऐसे भयानक सिह को देखकर वनके जीव डरे उसके शब्दो से गुफा गूज उठी, मानो पहाड रोने लगा, सिह के भयानक शब्दों से सभी पशु अपने

अपने बच्चों को लेकर भय से कपायमान होकर वृक्षो के सहारे जाकर बैठ गये। और नाहर की ध्वनि सुन अजना ने प्रतिज्ञा की, कि इस उपसर्ग से मेरा मरण हो जाये, तो मेरे आहार पानी का त्याग हैं, और उपसर्ग दूर होगा तो भोजन करेंगे। तब बसन्तमाला ने खड्ग हाथ मे ले कभी आकाश मे जाये, कभी भूमि पर आये, अतिभय से व्याकुल होकर पक्षी समान भ्रमण करती है, अजना बसतमाला दोनो भय से कंपायमान हुई, तब गुफा का निवासी मणिचूल नाम का गन्धर्वदेव उसकी स्त्री रत्नचूला देवी दया पूर्वक कहने लगी। हे देव! देखो यह दोनों स्त्रियॉं सिह से डर रही है, आप इनकी रक्षा करो। तब गन्धर्व देव ने दया से तुरन्त ही विक्रियाकर अष्टापद का रूप धारण किया, और सिह के सामने गया। सिह और अष्टापद का महाभयकर शब्द हुआ, तब अजना हृदय मे भगवान काध्यान करती रही, और बसन्तमाला सारस पक्षी की तरह विलाप करती हुई कहने लगी। हे अंजना रानी! पहले तो आप पतिकी अप्रिय दुर्भागिनी थी, पुन किसी प्रकार पति का आगमन हुआ, और तुझे गर्भ रहा, सासु ने बिना सोचे समझे घर से निकाल दिया, फिर माता-पिता ने तुम्हारा अनादर किया, तब महाभयानक वन मे आई, यहॉं पुण्य के योग से मुनिराज के दर्शन हुये, मुनिराज ने साहस बधाकर पूर्वभव कहे, मुनिराज ने धर्मोपदेश देकर आकाश मार्ग से विहार किया, और आप प्रसूति के लिये गुफा मे रही, सो अब इस सिह के मुख मे प्रवेश करोगी। हाय-हाय! राजपुत्री! इस निर्जनवनमे मरण को प्राप्त होगी। हे भगवन्! अहो वनके देवता! दयाकर रक्षाकरो। मुनिश्री ने कहा था कि तुम्हारा सम्पूर्ण दुख गया, सो क्या मुनिके वचन भी असत्य हो सकते है? इस प्रकार दुख से बसन्तमाला झूले के समान एक स्थानपर नहीं रूकी, क्षणमात्र में अंजना के पास आये और क्षणमात्र मे बाहर जाए। वह गुफा का गंधर्वदेव अष्टापद का रूप बनाकर आया और सिह को पजे से मारी तब सिह भाग गया और अष्टापद सिह को भगाकर अपने स्थान को गया, यह स्वप्नसमान सिंह और अष्टापद का युद्ध देख बसन्तमाला गुफा मे अजना सुन्दरी के पास आई, और अंजना के हाथों में हाथ रखकर कहॉं, हे अजनासती! ऐसा लगा मानों नया जन्म पाया। दोनो को आपस मे चर्चा करते हुये, एकरात्रि एकवर्ष के बराबर बीती, यह दोनो कभी तो, कुटुम्ब की कथा और कभी धर्मकी कथा करती, अष्टापदने सिहको ऐसे भगाया, जैसे हाथीको सिंह भगाये, एवं सर्प को गरुड़ भगाये। पुनः वह गन्धर्वदेव बहुत आनन्द से भगवान के गुण गाने लगा, सो ऐसा मधुर वाणी से गाया, जो देवोके मनको भी मोहितकरे

तो मनुष्यों की कहॉ बात। अर्धरात्रि के समय शात वातावरण मे गाता हुआ वीणा को अति राग से बजाता रहा मजीरा, मृदग, बासुरी आदि बाजे बजाये और सप्त स्वरो मे गाया, उनके नाम। षडज 1 ऋषभ 2 गाधार 3 मध्यम 4 पचम 5 धैवत 6 निषाद 7 इन सप्त स्वर मे तीन लय शीघ्र मध्य विलबित एव इक्कीस मूर्छना है। जो बडे देव है उनके समान गान किया। इस विद्या मे गन्धर्व देव प्रसिद्ध है, उचास स्थान राग के है, वह सब गर्न्धव जानते है। भगवान श्रीजिनेन्द्र के गुण सुन्दर अक्षरो मे गाये। मै श्रीअरिहंत देवकी भक्तिसे वन्दना करता हूँ। कैसेहैभगवान? सौ इन्द्रो के द्वारा वन्दनीय, सुरनर विद्याधर, जिनकी अष्टद्रव्य से पूजा करते है। तीनलोक मे अतिपवित्र है। ऐसे श्री मुनिसुव्रतनाथ के चरण युगल मे भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ। ऐसे गन्धर्वदेव ने भगवान की स्तुति की। तब बसन्तमाला अतिप्रसन्न हुई, ऐसे राग कभी सुने नहीं थे, गीतों की प्रशसा करती रही। धन्ययहगीत, महामनोहर, भक्ति से गाये, मेरा हृदय पुलकित हो गया। अजना से बसन्तमाला कहने लगी। यह कोई दयावान देव है, इसी ने अष्टापद का रूप बनाकर सिह को भगाया, एव हमारी रक्षा की। अर ये मनोहर वाणीसे स्तुति अपने आनन्द के लिये गाई है। हे देवी! हे पतिव्रता! हे शीलवति! आपपर दया सभी करते हैं। जो भव्य जीव है। उनको महाभयकर वन मे भी देव मित्र होते है। इस उपसर्ग के नाश से अवश्य ही तुम्हारा पवनजय से मिलन होगा। और तेरे अद्भुत पराक्रमी पुत्र होगा। मुनि के वचन असत्य नहीं होगे। इन दोनो ने मुनि का ध्यान कर पवित्र गुफा मे श्रीमुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा विराजमान कर सुगन्ध द्रव्यो से पूजा की। दोनो के मन मे यही विचार था कि प्रसूति सुख से हो जाये। बसन्तमाला कई प्रकार से अजना के मनको प्रसन्न कर कहती है, कि-हे देवी! यह वन आपके पधारने से परम हर्ष को प्राप्त हुआ है, वन के वृक्ष फलो के भार से आपको नमस्कार करते है। और जो मयूर, तोता, मैना, कोयल आदि मिष्ट शब्द बोल रहे है, वह मानो आपसे ही बोल रहे हैं। इस पर्वत पर बडे-बड़े सरोवरो मे सुगन्ध कमल फूल रहे है। वह आपके मुख की उपमा को जीतना चाहते है। हे देवी! तुम चिन्ता मत करो, धैर्य रखो इस वन मे सब कल्याण होगा, सभी देव सेवा करेगे। हे महापुण्यशालनी तेरा शरीर ही निश्पाप है, तुझे देख हर्ष से पक्षी बोल रहे है वह तुम्हारी प्रशसा ही कर रहे हैं। अब प्रात· काल का समय हुआ। सूर्य ने तेरी सेवा के लिये किरणो की सखी भेजी है। अब सूर्य भी तेरे दर्शन करने के लिये आया है। यह सब प्रसन्न करने की बात बसन्तमाला ने कही। तब अजना

सुन्दरी कहने लगी। हे सखी! तुम्हारे होते हुये मेरा सब कुटुम्ब पास मे ही है, यह वन भी तेरे कारण नगर है। जो प्राणी कष्ट मे सहायता करते, वही परम परिवार है। जो परिवार दुख देने वाले हैं वही परम शत्रु है। इस प्रकार दोनोंचर्चा करती हुई गुफा मे रहे। श्रीमुनिसुव्रतनाथ के प्रतिमा की पूजन करती। विद्या के प्रभाव से खाने पीने का साधन करती, वह गन्धर्व देव दुष्ट जीवों से इनकी रक्षा करने, एव निरन्तर भक्ति से भगवान के गुण मीठी वाणी से गाया करते हैं।

हनुमान (श्री शैल) का जन्म

अथानतर अजना के प्रसूति का समय आया। तब वह बसन्तमाला से कहनेलगी, हे सखी! आज मेरे कुछ व्याकुलता है, तब बसन्तमाला बोली, हे महारानी! आपके प्रसूति का समय है, आप आनन्द को प्राप्त हो। बसन्तमाला ने अजना के लिये, कोमल पत्तो की सेज रची, उसके ऊपर अजना के पुत्र का जन्म हुआ। जैसे पूर्वदिशा सूर्यको प्रकट करती वैसे ही अजना ने हनुमान को जन्म दिया। पुत्रके जन्मसे गुफाका अन्धकार गया प्रकाश हो गया, मानो गुफा सुवर्णमई ही हुई। तब अजना पुत्रको हृदयसे लगाकर दीनता के वचन कहने लगी। हे पुत्र! तू गहन वनमे उत्पन्न हुआ, तेरे जन्म का उत्सव मै कैसे करूँ? तेरा जन्म दादा (बाबा) के तथा नाना के घर होता तो जन्म का बडा उत्सव मनाया जाता। तेरे मुख रूपी चन्द्रमा को देखने से किसको आनन्द नहीं होगा। मै क्या करूँ, मैं मन्द भागिनी, सर्व वस्तुओ से रहित हूँ, पूर्वोपार्जित कर्मोने मुझे, दुखरूपी दशाको प्राप्त किया है, अतः मै कुछ भी करने मे समर्थ नहीं हूँ। परन्तु प्राणियो को सम्पूर्ण वस्तुओ मे दीर्घायु होना दुर्लभ है, इसीलिये हे पुत्र! चिरजीवी हो, तू है तो मेरे सब कुछ है, यह प्राणो का नाश करनेवाला महागहन वन है, इसमें मै जी रही हूँ, वह तेरे ही पुण्य के प्रभाव का फल है। ऐसे दीनता के वचन अंजना के मुख से सुनकर, बसन्तमाला ने कहा। हे देवी! तू महाकल्याण रूप है, ऐसा उत्तम पुत्र पाया, यह बालक अतिसुन्दर, शुभ लक्षण युक्त है, महाऋद्धि का धारी होगा। तुम्हारे पुत्र के उत्सव से, मानो यह लतायें, वनितारूप नृत्यकरती है, भवरे सगीत कर रहे हैं, यह बालक पूर्ण तेजवान है, इसके प्रभाव से, आपके सभी मनोरथ पूर्ण होगे, तुम चिन्ता मत करो। इस प्रकार दोनों की बातें हो रही थी। उसी समय बसन्तमाला ने, आकाश में, सूर्यके तेजसमान, प्रकाशरूप एक ऊँचा विमान देखा, उसे देखकर बसन्तमाला ने अंजना से कहा यह किसका विमान आ रहा है। तब वह शंका कर रोने लगी, यह कोई शत्रु आया है, जो मेरे पुत्र को ले जायेगा,

अथवा कोई मेरा भाई है। इनके रोने की आवाज सुन, विद्याधर ने आकाश मे विमान को रोका, एव नीचे आया। गुफा के द्वारपर विमान को रख, महानीतिवान, विनयवान, संकोच करता हुआ स्त्री सहित अन्दर आया। तब बसन्तमाला ने इनको देख कर आदर किया, यह दोनो शुभ भावो से विनय पूर्वक बैठे। कुछ समय के पश्चात्, मधुर गम्भीर वाणी से बसन्तमाला से पूछा, कि यह मर्यादा को धारण करने वाली, किसकी बेटी है, किनके साथ विवाह हुआ है, एव किस कारण से यहाँ जगल मे रहती है। यह बडे घर की कोई राजकुमारी है, किस कारण से परिवार रहित, यहाँ अकेली रहती है। अथवा इसलोक मे राग द्वेष से रहित, जो उत्तम जीव है, उनके पूर्वोपार्जित कर्मो के कारण, मित्रभी शत्रु हो जाते हैं, सो इनका क्या कारण है। तब बसन्तमाला दुख की वेदना से, रूके कठो से ऑसू डालती हुई नीची दृष्टिकर, कष्ट से कहने लगी। हे महानुभाव! आपके वचनो से ही, आपके मनकी शुद्धता जान ली जाती है, जैसे रोग और मृत्यु का मूल, विष वृक्ष की छाया सुन्दर नहीं होती, और जैसे जलन को नाशकरने वाला चन्दन का वृक्ष, उसकी छाया भी सुन्दर लगती है। इसीलिये आप जैसे गुणवान पुरुष ही, शुभ भाव प्रकट करने के स्थान है। आप बडे पुरुष दयालु हो, यदि आपको इनके दुख सुनने की इच्छा है, तो सुनो, मै कहती हूँ, आप जैसे बडे पुरुषो को कहा हुआ दुख अवश्य ही दूर होता है, आप दुख हारी पुरुष हो, आपका ऐसा ही स्वभाव है, जो विपत्ति मे सहायक हो। मै कहती हूँ आप सुनिये। यह अजनासुन्दरी राजामहेन्द्र की पुत्री है, राजामहेन्द्र पृथ्वीपर प्रसिद्ध महायशवान, नीतिवान्, निर्मल स्वभावी हैं। और राजा प्रहलाद का पुत्र पवनजय राजकुमार गुणो का सागर, उनकी प्राणो से भी प्यारी राजरानी अजना है। पवनजय एकसमय पिताकी आज्ञासे रावण के निकट वरुण से युद्ध करने के लिये चले। तब मानसरोवर से रात्रि में अजना के महल मे गुप्तरूप से आये और अजनाको गर्भ रहा। इनकी सासु अतिक्रूर स्वभाव, दया रहित, महामूर्ख उसके मन मे गर्भ की शका उत्पन्न हुई, तब अजना को पिता के घर भेज दिया। यह राजकुमारी अंजना सब दोषो से रहित, महासती, शीलवती, निर्विकार है, पर पिता ने भी अपकीर्ति के भय से अंजना को नहीं रखी। जो सज्जन पुरुष हैं, वह झूठे दोषो से भी डरते है, यह बडे कुल की बेटी, सर्व अवलंबन रहित इसवन में मृगी समान रहती है, मै इसकी सेवा करती हूँ, इनके कुल क्रम से हम आज्ञाकारी सेवक कृपा पात्र है। सो अंजना आज इसवन मे प्रसूती हुई है, यहवन अनेक उपसर्गों का

निवास है, न जाने कैसे इसको सुख होगा। हे राजन्! यह वृतान्त आपको संक्षेप में कहा, और सम्पूर्ण दुख मैं कहॉ तक कहूँ। इस प्रकार स्नेह से भरी, बसन्तमाला का हृदय राग से अजना के दुखरूपी अग्नि से पिघला हुआ शरीर में नहीं समाया, सो मानो बसन्तमाला के शब्दो से बाहर निकला। तब राजा प्रतिसूर्य, हनुरुह द्वीप के स्वामी ने बसन्तमाला से कहा। हे बेटी! मै राजा चित्रभानु और रानी सुन्दरमालिनी का पुत्र हूँ। यह अजना मेरी भानजी है, मैंने बहुत दिनो के बाद देखी सो पहिचान नहीं सका। ऐसा कहकर अजना का बाल अवस्था से लेकर सम्पूर्ण वृतान्त कहा। और गद्गद् वाणी से, बाते करता हुआ ऑखो से ऑसु बहाता रहा। सपूर्ण बाते सुन अजना ने इनको मामाजान गले लगी और बहुत रुदन किया, मानो सम्पूर्ण दुख ऑसुओ से बह गया। यह जगत की रीति ही है, परिवार को देख प्रेम से ऑसु बहते है। वह राजा भी रोने लगा और साथ मे रानी भी रोने लगी, बसन्तमाला भी बहुत रोई, इन सबके रोने की आवाज से गुफा भी गुजायमान हो गई, सो मानो पर्वतभी रोनेलगा हो। जंगल के जीव मृगादि भी रोने लगे। तब राजा प्रतिसूर्य ने जलसे अंजना का मुँह धुलवाया एव स्वय ने भी मुँह धोया, वनभी शब्दो से रहित शात हो गया, मानों इनकी बाते ही सुनना चाह रहा है। राजकुमारी अंजना राजा प्रतिसूर्य की रानी अपनी मामी से भी बात करती रही। यह बडो की रीति है, जो दुख मे भी अपने कर्त्तव्य को नहीं छोडत्ते।

पुन अजना ने अपने मामा से कहा। हे पूज्य! मेरे पुत्र का सम्पूर्ण शुभ अशुभ वृतान्त ज्योतिषी से पूछो? तब सावत्सर ज्योतिषी को मामा ने पूछा। तब ज्योतिषी बोला बालक के जन्म का समय बताओ। तब बसन्तमाला ने कहा, आज अर्धरात्रि गये बालक का जन्म हुआ है। तब लग्न कुंडली देख बालक के शुभ लक्षणो को जान ज्योतिषी ने कहा यह बालक इसीभव से मोक्ष जाने वाला है, पुन जन्म नहीं लेगा, आपके मन मे सन्देह है, तो मै सक्षेप से कहता हूँ, सो सुनो! चैत्रबदि अष्टमीकी तिथि, श्रवणनक्षत्र है और सूर्यमेष का ऊँचेस्थानपर बैठा है। चन्द्रमावृषका है, मकरकामंगल है, बुधमीन का है, वृहस्पतिकर्क का है वह भी ऊच्चका है। शुक्र और शनि दोनो मीनके है, सूर्य शनिको पूर्ण दृष्टि से देखता है। मगलदशविश्वां सूर्यको देखता है, वृहस्पति पद्रह विश्वा सूर्य को देखता है, सूर्य वृहस्पति को दशविश्वां देखता है, चन्द्रमा पूर्ण दृष्टि से वृहस्पति को देखता है, और वृहस्पति को चन्द्रमा देखता है, वृहस्पति शनिको पन्द्रह विश्वा देखता है, शनि वृहस्पति को दश विश्वा, वृहस्पति शुक्र को पद्रह विश्वा, शुक्र वृहस्पति को

पद्रह विश्वा, इस बालक के सभी ग्रह बलवान बैठे है, सूर्य और मगल दोनो बालक का अद्‌भुत राज्य का निरुपण कर रहे है। वृहस्पति और शनि मुक्ति को देने वाला जो साधुपद है उसे बताता है। जो एक वृहस्पति ही उच्च स्थान बैठा हो तो सम्पूर्ण कल्याण के प्राप्ति का कारण है। ब्रह्मयोग शुभमूहूर्त है, जो अविनाशी सुख को प्राप्त करेगा। इसप्रकार सभीगृह अतिबलवान बैठे है, यह बालक सभी दोषो से रहित होगा। ऐसा ज्योतिषी ने कहा, तब प्रतिसूर्य राजा ने बहुत दान ज्योतिषी को दिया। और भानजी को अति हर्षितकर कहा। हे बेटी! राजकुमारी अजना, अब हम सब हनुरुहद्वीपको चले, वहाँ बालक का जन्मोत्सव अच्छी तरह मनायेगे, तब अजना भगवान की वदना कर पुत्र को गोद मे लेकर गुफा का स्वामी गन्धर्वदेव को बारम्बार क्षमाकरा कर प्रतिसूर्य के परिवार सहित गुफा से बाहर निकली। विमान के पास आकर खडी रही, मानो साक्षात वन लक्ष्मी ही है। मोतियो की झालरो से युक्त अनेक घटियाँ बज रही है, रत्नो की झालरो से शोभित मानो इन्द्र धनुष ही चढ रहा है, अनेकरग बिरगी ध्वजाये फहरा रही है। कल्पवृक्ष समान विमान मानो स्वर्ग लोक से ही आया है। उसविमान मे पुत्र सहित अजना बसन्तमाला तथा प्रतिसूर्य का परिवार सब बैठकर आकाशमार्ग से चले। सो बालक कौतुककर हसता हुआ माताकी गोद मे से उछलकर पर्वतपर गिर गया। माता हाहाकार कर रोने लगी, राजा प्रतिसूर्य के परिवार आदि सभी लोग हाहाकार करने लगे। राजा प्रतिसूर्य बालक को ढूँढने के लिये आकाश से उतरकर नीचे पृथ्वीपर आये। अजना अतिदीन होकर विलापकर रही है, उसे देखकर तिर्यचो का मन भी करुणा से कोमल हो गया है। हायपुत्र यह क्या हुआ। कहाँ गया! मेरे भाग्य ने एव मेरे पूर्वोपार्जित कर्मो ने यह क्या किया, मुझे रत्न दिखाकर एव, देकर पुन क्यो हर लिया। हे प्रभो! मेरे जीवन का सहारा जो बालक हुआ, वहभी पूर्वोपार्जित कर्मो ने छीन लिया। माता तो इसप्रकार विलाप करती है और पुत्र जिस पर्वतपर गिरा, उस पर्वत के हजारो खण्ड-खण्ड हो गये, महाशब्द हुआ प्रतिसूर्य ने देखा कि बालक एक शिला पर सुख से सो रहा है, अपने पैर के अगुठे को अपने आप ही चूसता है। क्रीडा करता हुआ हंस रहा है, अतिशोभायमान होकर सीधे लेटा हुआ है, लाल लाल चरण दोनों पैरो के तलवें लालमणिसमान चमक रहे है, शरीर की ज्योति अतिसुन्दर, कामदेवपद के धारक, उनको किनकी उपमा देवे। मद-मद पवन से हाथपैर एव शरीर को हिलाता हुआ, दूसरे के मन को हरण करता हुआ, अपने शरीर की ज्योति से,

पहाड को शर्माता हुआ। इस पहाड को खड-खड किया, ऐसे बालक को दूर से देख राजा प्रतिसूर्य अतिआश्चर्य को प्राप्त हुआ। कैसाहै बालक? निष्पाप है शरीर जिसका, धर्म का स्वरूप, तेज का पुज ऐसे पुत्र को देख, माता आश्चर्य को प्राप्त हुई। बालक को उठाकर सिर चूमा, छाती से लगा लिया, राजा प्रतिसूर्य ने भी अजना से कहा। हे बेटी! यह तेरा बालक समचतुरस्र सस्थान एव वज्रवृषमनाराच सहनन का धारक महावज्र स्वरूप है। बालक के गिरने से पहाड चूर्ण चूर्ण हो गया, जब बालक अवस्था मे ही ऐसी अद्‌भुत शक्ति है, तो योवन अवस्था की शक्ति का क्या कहना। यह निश्चय से चरम शरीरी एव तद्‌भव मोक्षगामी है। फिर शरीर धारण नहीं करेगा, यही पर्याय सिद्धपद का कारण है, ऐसा जानकर तीन प्रदक्षिणा देकर हाथ जोडसिरनवाकर अपनी स्त्रीयो सहित बालक को नमस्कार किया। यह बालक अति रमणीक मद मद मुस्कान से सभी नर नारियो का मन हरता है, राजा प्रतिसूर्य अजना भानजी को पुत्र सहित विमान मे 'बैठाकर अपने स्थान ले आया। कैसा है नगर? ध्वजा तोरणो से अति शोभायमान, राजा को आया सुन नगर के लोग, अनेक प्रकार के मगल द्रव्यो सहित सन्मुख आये। राजा प्रतिसूर्य ने नगर मे प्रवेश किया, दशो दिशाओ मे बाजे बजे। बालक का जन्म उत्सव विद्याधरो ने बडे उत्साह से मनाया, जैसे स्वर्ग मे इन्द्र की उत्पत्ति का उत्सव देव करते है। पर्वत की गुफा मे जन्म हुआ और विमान से गिरनेपर पर्वत को खड खड किया, इसीलिये बालक का नाम बालक की माता ने और मामा प्रतिसूर्य ने श्रीशैल रखा, और हनुरुहद्वीप मे जन्मोत्सव मनाया इसीलिये हनुमान यह नाम पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ। यह श्रीशैल (हनुमान) हनूरुहद्वीप मे रहे। कैसा है कुमार? देवो समान प्रभा का धारी महाकातिवान सबको महाउत्सवरूप है एव सबलोक मे सबके मन और नेत्र को हरने वाला, प्रतिसूर्य के नगर मे विराजमान है। गणधरदेव, राजाश्रेणिक से कहते है—हे नपृ! प्राणियो के पूर्व उपार्जित पुण्य के प्रभाव से पहाड को चूर्ण करनेवाला, महाकठोर जो वज्र, वह भी पुष्पसमान, कोमल होकर परिणमन करता है, महादाह को करनेवाली अग्नि भी चद्रमा की किरण समान शीतल होती है, महातीक्ष्ण तलवार की धारा भी कोमल लतासमान होती है, ऐसा जानकर विवेकी जीव पापो से रहित होते है, इसलिये जिनेन्द्र भगवान के चारित्र मे अनुरागी होओ। जिनराज का चरित्र मोक्ष का सुख देने वाला है, यह सम्पूर्ण जगत निरतर जन्म-जरा-मरण रूप, सूर्य के आताप से तप्तायमान है, उसमे हजांरो जो व्याधियॉ, वह किरणो का समूह है।

तप संयमरूपी पुण्यसे ही ऐसी शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं, जो पर्वत का भी खड-खड कर देती है, एव कठोर वज्रमयी पर्वत को भी पिघला कर पानी कर देता है, तो तप सयम ध्यान से कर्मरूपी पर्वत नहीं पिघलेगे क्या? अवश्य ही पिघलकर ससार को नाश करेगे और मोक्ष सुख को प्राप्त करेगे।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे हनुमान के जन्म का वर्णन करनेवाला सत्रहवा पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-18

पवनंजय का युद्ध से प्रत्यागमन और अंजना का अन्वेषण

अथानतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे मगधदेश के मडल! यह हनुमानजी के जन्म का वृतात तुझे कहा अब हनुमान के पिता पवनजय का वृतात सुनो! पवनजय पवनकी तरह शीघ्र ही रावण के पास पहुँचे। रावण की आज्ञासे वरुणसे युद्ध किया, बहुत समयतक अनेक शस्त्रो से वरुण और पवनजय का युद्ध हुआ, युद्ध मे वरुण को बाध लिया और खरदूषण को पकडा था उसे छुडाया। वरुणको रावणके पास लाये, वरुण ने रावण की आज्ञा स्वीकार की। रावण पवनजय से अतिप्रसन्न हुये, तब पवनजय रावणसे विदा होकर, अजनाके स्नेहसे शीघ्रही घर को आये। राजा प्रहलादने सुनाकि पुत्र विजयकर आया है, तब ध्वजा तोरण मालादि से नगरको सजाया। तब सब परिवार के एव परिजन के लोग सन्मुख आये। नगर के सभी नर नारी पवनजय के कर्तव्य की प्रशसा करने लगे। राजमहल के द्वारपर अर्घादिक से सम्मानकर अदर प्रवेश कराया। मगल शब्दो से राजकुमार की सबने प्रशसा की, राजपुत्र माता पिता को प्रणामकर सबसे भेट ले, कुछक्षण सभामे सब लोगो से मिलकर आपस्वय अजनारानीके महलमे पधारे। प्रहस्तमित्र के साथ महल देखा, सो जैसे जीव रहित शरीर सुन्दर नहीं लगता, ऐसे अजना के बिना महल मनोहर नहीं लगा। तब पवनजय का मन उदास हो गया और प्रहस्तसे कहने लगे। हे मित्र! यहाँ मेरी प्राणप्रिया कमलनयनी नहीं दिखती है, सो वह कहाँ है? यह राजभवन उसकेबिना मुझे उद्यान समान अथवा आकाश समान शून्य लगता है। इसीलिये तुम किसीसे बात पूछो, अजना कहाँ

है? तब प्रहस्तने अन्दरके लोगोसे पूछकर सम्पूर्ण वृतान्त कहा। तब पवनजयके हृदयको बहुतठेस पहुँची। माता पिता से बिना पूछे ही मित्रसहित, राजा महेन्द्रके नगरमें गये। चित्तमे महा उदासी, जब राजा महेन्द्रके नगरके समीप पहुँचे, तब मनमे सोचाकि आज प्रियासे मिलन होगा। तब मित्रसे कहने लगे, हे मित्र! देखो यह नगर महामनोहर सुन्दर है, जहाँ मेरीप्रिया अंजनासुन्दरी विराजमान है। जैसे कैलाशपर्वतके शिखर शोभायमान दीखते है, तैसे ये महलके शिखर रमणीक दिखते हैं। ऐसी बात मित्रसे कहते हुये नगर के पास पहुँचे। राजा महेन्द्रने सुना कि पवनजयकुमार विजयकर पिता से मिल यहाँ आये हैं, तब नगरकी शोभा कराई, आपस्वय अर्घादिक सामग्री लेकर सन्मुख आये, बहुत आदर से राजजमाईको नगरमे प्रवेश कराया। नगरके लोगोने अति आदरसे गुणोका वर्णन किया, जमाई जी राजमन्दिर मे पधारे। एकमुहूर्त ससुर के पास बैठे, सबका सम्मान किया, पुन राजासे आज्ञा लेकर सासुसे मिले पुन प्रियाके महलमे पधारे। कैसे है कुमार? अजनाको देखनेकी है अभिलाषा जिनको, वहाँ भी अजनाको नहीं देखा, तब आतुर होकर किसीसे पूछा, हे बालिके! यहाँ हमारी प्राणप्रिया कहाँ है? तब वह बोली कि-हे देव! यहाँ आपकी प्रिया नहीं है। यह शब्द सुनकर पवनजय का हृदय व्रज से चूर्ण हो गया। जैसा जीव रहित मृतकशरीर हो जाए वैसाहो गया, शोकरूपी दाह से मुरझा गया है, मुखकमल उनका। तब पवनजय महेन्द्रनगरसे निकलकर पृथ्वीपर अजनाको खोजने के लिये भ्रमण करने लगे, मानो वायुकुमार को वायु लगी। तब प्रहस्तमित्र राजकुमार को दुखीदेख महादुखी हुआ, और कहने लगा। हे मित्र! क्यो दुखी हो रहे हो अपनामन शात करो, यह पृथ्वी कितनी है, जहाँ रानीअजना होगी वहाँ से ढूढ लेगे। तब कुमारने मित्रसे कहा तुम आदित्यपुर मेरे पिताके पास जाओ और सम्पूर्ण वृतान्त कहो, जो मुझे मेरीप्रियाकी प्राप्ति नहीं होगी, तो मेरा जीना भी नहीं होगा। मै सम्पूर्ण पृथ्वीपर भ्रमण करता हूँ, और तुमभी देखो। तब मित्र आदित्यपुर नगरमें जाकर पिताको सब वृतान्त कहा, और पवनकुमार अम्बरगोचरहाथीपर चढ, पृथ्वीपर अजनाको ढूढता रहा। मनमे चिन्ताकि की मेरी प्यारीरानी कमलसमान कोमलशरीर, शोकके दुखसे सन्ताप को प्राप्त हुई, कहाँ गई होगी? मेराही ध्यान करनेवाली, विरहरूप अग्निसे प्रज्वलित, महावनमें वह कौनदिशामें गई होगी, वह सत्यवादिनी, निष्कपट, धर्मका सेवन करने वाली, गर्भका है भार जिसके, कदापि बसन्तमाला से रहित हुई हो, वह प्रतिव्रता, श्रावकके व्रतका पालन करनेवाली, राजकुमारी शोकसे

विकटवनमें विहार करती हुई भूख प्याससे पीडित होकर किसी कूए मे गिरी हो, अथवा वह गर्भवती दुष्ट पशुओ के भयकर शब्दसुन मरणको प्राप्त हुई हो, अथवा, भयकर पशुओ के मुखमे चली गई हो। वह अजना मुझे प्राणोसे भी प्यारी भयकरवन मे जलके बिना प्याससे सूखगये होगे कठतालु तो प्राणोसे रहित हुई होगी। कहीं गगामे उतरी हो तो पानीमे बह गईहो, अथवा जगलके ककर पत्थरोसे पैरोमे रक्तकी धाराये बह चली हो, या एककदम भी चलनेकी शक्ति नहींहो तब उसकी क्या दशा हुई होगी। दुखसे गर्भपात हुआ हो, या जैनधर्म को जाननेवाली महाविरक्तभावसे आर्यिका बन गई हो। ऐसा चिन्तवन करते हुये, पवनजयकुमारने पृथ्वीपर भ्रमण किया। लेकिन फिरभी प्राणबल्लभा नहीं मिली। तब विरह से दुखित होकर, मरण का निश्चय किया, पर्वतपर, मनोहरवृक्षोपर, नदीके तटोपर, किसीभी स्थानपर, प्राणप्रियाको नहीं देखा, अजनाके बिना पवनजयका मन नहीं लगा। पवनजय ऐसा विवेक रहित हुआ, जो वृक्ष वृक्षो से, पर्वत पर्वतो से, ककर ककरो से, अजनासुन्दरी की बात पूछते है। और भ्रमण करते हुये, भूतरवनामके वनमे आये। वहॉ हाथीसे उतरकर हथियार एव वखतर पृथ्वीपर डालकर हाथीसे कहा। हे गजराज! अब तुम इसवनमे स्वछन्द होकर विहार करो, फिर भी हाथी विनयसहित निकट खडा रहा। तब पवनजय ने पुन कहा, हे गजेन्द्र?! नदीके तटपर शल्यकी वनमे पल्लवो को खाते हुये विहार करो, यहॉ हथनियो के समूह है, उनके साथ रमण करते हुये विचरण करो। परन्तु हाथी कृतज्ञ स्वामीके स्नेहमे प्रवीण राजकुमारका साथ नहीं छोडा, वहीं खडा रहा। पवनजय सोचते है कि, महामनोहर गुणवान रूपवान दुखी मेरीरानी अजना यदि मुझे नहीं मिले, तो मै इस वनमे ही प्राण त्याग करूँगा। जैसे मुनि आत्माका ध्यानकरते, ऐसे पवनजय प्रियाका ध्यान करने लगे। उसी वनमे पवनजयने चारपहरकी रात्रि चारवर्ष समान बिताई।

यह तो कथा यहॉ ही रही। और मित्र पिताके पास गया पिता को सर्व वृतान्त कहा। पिता सुनकर परम शोकको प्राप्त हुये, माता केतुमती पुत्रके शोकसे दुखी होकर रोने लगी, और रोती हुई प्रहस्त से, कहती है, तू मेरे पुत्र को अकेला छोडकर आया सो अच्छा नहीं किया। तब प्रहस्त ने कहा हे माता! मुझे अतिआग्रह से आपके पास भेजा है, इसीलिये आया हूँ, अब वहॉ जाऊँगा, तब माताने कहा पवनजय कहॉ है, तब प्रहस्थ ने कहा, जहॉ अजना होगी वहॉ पवनजय होगे। तब पूछाकी अजना कहॉ है, तब प्रहस्थने कहा मै नहीं जानता। हे माता! जो बिना

विचारे शीघ्र ही काम करते हैं, उनको अवश्य ही पश्चाताप करना पडता है। आपके पुत्रने, ऐसा नियम किया है, कि जो मै अपनी प्रियाको नहीं देखूँ तो प्राणत्याग करूँगा। यह सुनकर माता महादुखी हुई, और रोनेलगी अन्तपुर की सभी स्त्रीयॉ रोने लगी। माता कहती है हाय-हाय मै पापिनी, मैने यह क्या किया, महासती को कलक लगाया, इससे मेरा पुत्रभी जीवन के संशय को प्राप्त हुआ, मै क्रूरस्वभाव की, खोटे विचारो से मन्द भागिनी मैने यह काम बहुत बुरा किया। यह नगर, कुल, विजयार्धपर्वत, एव रावण का कटक, पवनजय के बिना शोभा नहीं देता। मेरे पुत्रसमान ओर कौन बलवान, जो वरुणको रावणसे भी असाध्य उसे रणभूमिमे क्षणमात्र मे बाध लिया। हे पुत्र विनय के आधार गुरुभक्ति मे तत्पर गुणोमे विख्यात तूँ कहॉ गया? तेरे दुखरूपी अग्निसे मै प्रज्वलित, सो हे पुत्र! मेरे से बात करो, मेराशोक दूरकरो। ऐसे विलाप करती हुई छाती, सिर, माथा, कूटती हुई, पूरेपरिवार को शोक उपजाया। राजाप्रहलाद भी रोने लगे। सर्व परिवारको लेकर प्रहस्तके साथ नगरसे पुत्रव्ा खोजने केलिये चले। दोनो श्रेणियोके सब विद्याधरोको प्रेमसे बुलाये वह भी परिवार सहित आये। सबही आकाशके मार्गसे राजकुमारको खोजनेमे लगे है, पृथ्वीपर देखते है, और वनोमे, लताओमे, पर्वतोपर ढूढ रहे है, और राजा प्रतिसूर्य के पास भी राजाप्रहलाद का दूत गया, सो सुनकर महाशोकवान हुआ। और अजना से कहॉ, तब अजना पहले दुख से भी, अधिक दुखी हुई, आखोमे ऑसूओके झरने ही बहने लगे, अश्रुधारासे मुखको प्रक्षालती हुई, कहने लगी। हे नाथ! मेरे प्राणोके आधार मुझेमे लगा है मन आपका, मै जन्मसे दुखी हूँ, मुझे छोडकर आप कहॉ गये। क्या मेरेसे क्रोध अभी भी नहीं छोडा, सब विद्याधरो से अदृश्य हो रहे हो, एकबार, एकभी अमृत समान वचन मेरे से बोलो, इतने दिन मेरेये प्राण आपके दर्शनो की इच्छासे टिके है, अगर आप नहीं दिखे तो यह प्राण मेरे किस काम के, मेरी इच्छा थी की पतिसे मिलन होगा, सो भाग्यने मेरी इच्छा-को नष्टकर दिया। मुझ मद भागिनी केलिये आप कष्टअवस्था को प्राप्त हुये हो। आपके कष्टकी बात सुनकर मेरे प्राण पापी क्यो नहीं नाश होते। ऐसे विलाप करती अजना को देख, बसन्तमाला ने कहा। हे देवी! ऐसे अशुभ वचन मत कहो, तुमको तुम्हारे पतिसे अवश्य मिलना होगा, और मामाने भी बहुत आश्वासन दिलाया कि हम तुम्हारे पतिको अवश्य ही लेकर आवेगे। ऐसा कहकर राजा प्रतिसूर्य मनसे भी तेज चलने वाले विमान पर बैठकर आकाश से पृथ्वीपर आकर पवनजय को खोजने लगे, दोनो श्रेणियो के विद्याधर,

लंकाके लोग पवनजय को देखते देखते भूतरवनामकी अटवी मे आये। वहॉपर अबरगोचर नामका हाथी देखा, हाथीको देखकर सभी विद्याधर प्रसन्न हुये, और कहा कि जहा यह हाथी है, वहा ही पवनजय अवश्य होगे। पूर्व मे हमने इस हाथीको अनेकबार देखा है। यह अजनगिरी समान हाथी है। जब हाथी के समीप विद्याधर आये, तब अकुश रहित हाथीको देख डरे, और विद्याधरों के कटक का शब्द सुन, महाक्षोभ को प्राप्त हुआ, हाथी महाभयकर गर्जनाकर, रहा है, जिस दिशा मे हाथी दौडकर जाता है, उसी दिशामे, विद्याधर भाग जाते है। हाथी लोगो का समूह देख स्वामी की रक्षा मे तत्पर सूँड से बधी है, तलवार महाभयकर पवनजय के पाससे हाथी दूर नहीं हटा। सब विद्याधर परेशान थे, पवनजय के पास नहीं आ सके। तब विद्याधरो ने हथनियो के समूहसे हाथीको वश किया, क्योकि जितने वशीकरण के उपाय है, इसमे स्त्री समान दूसरा कोई उपाय नहीं। सब विद्याधर पवनजय को देखते रहे, मानो काठ का पुतला ही मौन से बैठा है। सभी विद्याधर पवनजय से बात करना चाहते है, पर यह चिन्ता मे लीन किसी से बोलते नहीं, जैसे ध्यानमे बैठे मुनि किसी से नहीं बोलते। तब पवनजय के माता पिता ऑसु बहाते हुये, राजकुमारके मस्तकको चूम छाती से लगाकर कहते है, हे पुत्र! तू विनयवान हमको छोडकर यहॉ कहॉ आया। महाकोमल सेजपर सोने वाला तेरा शरीर इस भयानक वनमे कैसे रात्रि व्यतीत करी, माता पिता ने बहुत कुछ कहा लेकिन पवनजय एक शब्द भी नहीं बोले। मौनव्रत सहित मरणका निश्चय करबैठे है। सभी विद्याधर माता पिता शोक सहित विलाप करते रहे।

यद्यपि—राजाप्रतिसूर्य अजना का मामा सभी विद्याधरोसे कहते है, कि मै वायुकुमार से बात करूँगा। तब पवनजयको छातीसे लगाकर कहा। हे राजकुमार! मै अजना का सम्पूर्ण वृतान्त कहता हूँ, तुम सुनो? एक महारमणीक सध्याभ्र नाम के पर्वत पर अनगबीचि मुनिराजको केवलज्ञान हुआ था, तब इन्द्रादिक देवदर्शन को आये थे, और मै भी गया था। वहॉ वदना कर आरहा था तब मार्गमे एक पर्वतकी गुफापर मेरा विमान आया, तब मैने स्त्रीके रोनेकी ध्वनी सुनी, मानो बीना बज रहा हो, तब मै वहॉ गया, और गुफा मे राजकुमारी अजना को देखी, मैने वन के निवास का कारण पूछा, तब बसन्तमाला ने सर्व वृतान्त कहा। अजना शोक से दुखीहोकर रूदनकर रही थी, सो मैने धैर्य बधाया। और गुफा मे अजनाके, पुत्रका जन्महुआ, वह गुफा पुत्रके शरीरकी ज्योतिसे प्रकाशरूप होरही थी। मानो वह स्वर्णकी ही बनी हुई है। यह बात सुनकर पवनजय परमहर्ष को

प्राप्त हुये। प्रतिसूर्य से पूछने लगे बालक सुख से है, प्रतिसूर्य ने कहा बालकको, मै विमान में बैठाकर, हनरुहद्वीप को लेकर जा रहा था। तब मार्गमे बालक अंजनाकी गोद से उछलकर एक पर्वतपर गिरा, सो पर्वतपर गिरने का नाम सुनकर पवनंजय ने हाय हाय ऐसा शब्दकहा। तब प्रतिसूर्य ने कहा चिन्तामत करो, जो मैं कहता हूँ, सो सुनो। बालक को पडा देख, मै विलाप करता हुआ, विमान से नीचे उतरा। तब क्या देखाकि पर्वतके टुकडे टुकडे हो गये, एकशिला पर बालक सीधा सोया है। बालककी ज्योतिसे दशो दिशाये प्रकाशरूप होरही है। तब मैने तीनप्रदक्षिणा देकर बालकको नमस्कारकर गोद मे उठा लिया और माताको दिया, सो माता आश्चर्य को प्राप्त हुई। पुत्रका श्रीशैल नाम रखा, बसन्तमाला और पुत्रसहित अजनाको हनूरुहद्वीप ले गया, वहॉ पुत्रका जन्मोत्सव मनाया, इसलिये बालकका दूसरा नाम हनुमान भी है। यह तुमको मैने सम्पूर्ण वृतान्त कहा। हमारे नगरमे वह प्रतिव्रता पुत्रसहित आनन्द से है, यह बात सुनकर पवनजय तत्काल अजना को देखनेके अभिलाषी हनूरुहद्वीपको चले। सभी विद्याधर भी उनके साथ गये। हनूरुहद्वीपमे दो महिने तक सबको प्रतिसूर्यने बहुत आदर से रखा। पुन सब अपने अपने स्थानपर गये। बहुत दिनोमे पाया है स्त्री का सयोग, सो ऐसा पवनजय यहॉ सुख से रहें। पुत्र की चेष्टाओ से अतिआनन्दरूप हनूरुहद्वीप मे, देवोंसमान क्रीडा करते रहे। हनुमान नवयौवन को प्राप्त हुये। पूर्वभवमे स्वर्गके सुख भोगे, यहॉ आकर हनुरुहद्वीपमे देवोके समान रमते रहे। हे श्रेणिक! गुरुपूजामे तत्पर, श्रीहनुमानके जन्मका वर्णन, और पवनजयका अजनासे मिलन, यह अनोखीकथा अनेकरसो से भरी है। जो प्राणी भावोसे इस कथाको पढता है, पढाता है, सुनता है, सुनाता है, उनके अशुभकर्म मे प्रवृति नहीं होती है। और शुभ क्रियामें लीन होता है। इस कथाके पढने सुननेसे परभवमे शुभगति ओर दीर्घायु को प्राप्त करता है। शरीर निरोग सुन्दर पाता है। महापराक्रमी होता है। और चन्द्रमा समान निर्मलकीर्तिको प्राप्त होकर स्वर्ग मोक्षके सुख पाते है। ऐसी धर्मकी वृद्धि होती है, जो लोकमें दुर्लभवस्तु हो, सो सब सुलभता से प्राप्त होकर सूर्य समान प्रतापको प्राप्त करता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे पवनजय एव अजना का मिलनवर्णन करनेवाला अठारहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-19

हनुमान का युद्ध में जाकर विजय प्राप्तकर अनेक कन्याओं से विवाह करना

अथानतर राजावरुणने पुन आज्ञा नहीं मानी तब क्रोधसे रावण पुन युद्ध करनेकेलिये चले। सर्व भूमिगोचरी एव विद्याधरों को अपने पास बुलाया सबके पास आज्ञा पत्र लेकर दूत गये। किहकधापुर, अलकापुर, रथनूपर, चक्रवालपुरके स्वामियोको तथा वैताढ्यकी दोनो श्रेणियोके विद्याधर एव भूमिगोचरी सबही आज्ञा प्रमाण रावणके पास आये, हनूरुह द्वीपमे प्रतिसूर्य एव पवनजय के नामका आज्ञापत्र लेकर दूत आये। तब ये दोनो आज्ञाप्रमाण गमन करनेको तैयार हुये और हनुमान को राज्याभिषेक करने के लिए बाजे बजने लगे, कलश हाथोमे लेकर मनुष्य आगे आकर खडे हुये, तब हनुमानने प्रतिसूर्यसे पूछा यह क्या हो रहा है, तब उन्होने कहा। हे पुत्र! तुम हनुरुहद्वीपका प्रतिपालन करो, हम दोनो रावणकी मददकेलिये युद्धमे जारहे है। रावण वरुणसे युद्ध करेगे, वरुण की महासेना है, पुत्र बलवान है, तब हनुमानने विनय से कहा, मेरे होते हुए आपको जाना उचित नहीं, आप मेरे गुरुजन हो, तब उन्होने कहा। हे राजकुमार! तुम अभी बालकहो तुमने रणदेखा नहीं है। तब हनुमान बोले, अनादिकालसे जीव चारोगतियोमे भ्रमण करता है, जब तक अज्ञानका उदय है, तब तक जीवने पचमगति प्राप्त नहीं की। परन्तु भव्यजीव प्राप्त करेगे ही ऐसे ही हमने अब तक युद्ध किया नहीं, परन्तु अब युद्धकर वरुण को जीतेगे ही, और विजयकर आपके पास आयेगे। जब माता पिता कुटुम्ब आदि ने रोकने का बहुत प्रयत्न किया, परन्तु वे नहीं माने, तब उन्होने आज्ञा दी। तब ये स्नानकर मगलद्रव्यो से भगवान की पूजा और अरहत सिद्धादि परमेष्ठी को नमस्कारकर माता पिता मामाकी आज्ञा लेकर बडोकी विनयकर यथायोग्य सम्मानकर विमानमे चढ शस्त्रो से सयुक्त सामन्तो सहित लकाकी ओर चले, तब जलविचीपर्वतपर सूर्य अस्त हुआ, समुद्र की शीतल लहरोकी हवासे रात्रि पूर्ण की, पुन महा उत्साहसे अनेकदेश द्वीप पर्वतोको अवलोकन करते हुये रावणके कटकमे पहुँचे, हनुमानकी सेना देखकर बडे बडे राक्षस विद्याधर आश्चर्य को प्राप्त हुये, परस्पर कहते है, यह महाबली श्रीशैल हनुमान भव्यजीवो मे उत्तम,

उसने बाल अवस्थामे ही पर्वतको चूरकर दिया। ऐसे अपने यशको सुनता हुआ हनुमान रावण के समीप पहुँचा। रावणने हनुमानको देख सिहासन से उठकर विनय किया, एव हृदय-से लगाया। रावण हनुमान को पास लेकर बैठा। प्रीति एवं प्रसन्न मुद्रासे परस्पर कुशल पूछा, और सम्पदाको देख हर्षित हुये। दोनो ही पुण्यशाली ऐसे मिले जैसे दोनो सौधर्म ईशान इन्द्र ही हो। रावण स्नेहसे कहते है, पवनकुमारने हमारेसे बहुत स्नेह बढाया, जो ऐसे गुणो का सागर पुत्र हमारे पास भेजा। ऐसे महाबलीको पाकर मेरे सभी मनोरथ सिद्ध होगे। ऐसा तेजस्वी और कोई योद्धा नहीं है। हनुमान अनेक शुभलक्षणो सहित, इनका शरीर ही सब गुणो को प्रकटकर रहे है, जैसा हमने सुना ऐसा ही योद्धा है, इसमे कोई सन्देह नहीं। रावणने जब हनुमानके गुणोका वर्णन किया, तब हनुमान नीचे देखते रहे। महापुरुषोकी यही रीति है। अब रावणका वरुणसे सग्राम होगा। इस भयसे मानो सूर्यभी अस्त हुआ सध्या प्रकट हुई। पुन प्रात काल सूर्यकी किरणे पृथ्वीपर फैली, तब रावण सेनाको लेकर युद्धकैलिये चले। हनुमान विद्याके बलसे समुद्रको भेदकर वरुणके नगरमे गये। वरुणपर जाता हुआ हनुमान ऐसी ज्योतिको प्राप्त हुआ। जैसे सुभौम चक्रवर्ती परशुराम पर गया। रावणको कटक सहित आया जानकर, वरुणकी प्रजा डरी, पाताल, पुडरीकनगरके योद्धाओंमें शब्द हुये, वरुण चमरेन्द्र समान महाशूरवीर मानके भरे वरुण के सौ पुत्र सब युद्ध के लिये आये, और आते ही, रावण के कटक को व्याकुल किया, चक्र, वज्र, धनुष, सेल, बरछी इत्यादि शस्त्र राक्षसो के हाथो से गिर गये,वरुण के सौ पुत्रोके आगे राक्षसो का कटक घुमने लगा। तब रावण अपनी सेनाको दुखी देख वरुणके पुत्रोसे युद्ध करने गया, एकतरफ रावण अकेला, एक तरफ वरुण के सौ पुत्र, इनके बाणोंसे रावणका शरीर छिन्न भिन्न होने लगा, फिर भी रावण ने कुछ भी नहीं गिना। जब हनुमान ने रावणको बाणोके द्वारा भेदा हुआ, आरक्त देखा, तब रथमे बैठकर वरुणके पुत्रोसे युद्ध करने आया। हनुमान के आतेही वरुणके सौ पुत्र भयभीत हुये। हनुमान ने किसीको बिद्यामईलागूलपाशसे बाध लिया, किसी को मुद्गरो के घातसे घायल किया, वरुण का कटक हनुमानसे हारा, जैसे जिनमार्ग के अनेकान्त नय से मिथ्यादृष्टि हारे, हनुमानको अपनी सैनामें रणक्रीडा करते देख राजावरुण क्रोधकर हनुमानपर आया, तब रावण वरुणको हनुमानपर आया देख स्वयं रावणने उसको

रोका, जैसे नदीके प्रवाह को पर्वत रोके। वरुण और रावणमे महायुद्ध हुआ। उसी समय वरुण के सौ पुत्रो को हनुमान ने बाध लिया, तब वरुण सौ पुत्रो को एक साथ बधा सुनकर शोक से विह्वल हुआ, और विद्या का स्मरण नहीं रहा, तब रावणने वरुणको पकड लिया। वरुणको कुम्भकरणके हवाले किया और स्वयं अपने स्थानपर आया, वरुण को पकडा सुन वरुणकी सेनाने भागकर पुडरीकपुरमे प्रवेश किया। देखो पुण्यका प्रभाव एक नायकके हारनेसे सबकी हार, और एकनायक के जीतने से सबकी जीत होती है। कुम्भकरणने क्रोधसे वरुण का नगर लूटने का विचार किया, सो रावण ने मना किया, कि यह राजाओ का धर्म नहीं। जो अपराध था, वह वरुण का था, प्रजा का नहीं, कमजोरको दुख देना दुर्गति का कारण है, एव महाअन्याय है। ऐसा कहकर कुम्भकरण को शात किया और वरुण को बुलाया। रावणने वरुणसे कहा, हे प्रवीण! तुम शोक मत करो, योद्धाओकी दो ही रीति है, पकडे जाये या मारे जाये। रणसे भागना यह कायरों का काम है। इसीलिये तुम हमारे को क्षमा करो, हम तुमको क्षमा करते है, और अपने स्थान जाकर मित्र परिवार सहित अपना राज्य सुखसे करो। ऐसे मीठे वचन रावणके सुनकर वरुण हाथ जोड कहता है। हे वीराधिवीर! आप इसलोकमे महापुण्याधिकारी हो आपसे जो शत्रुता करते वो महामूर्ख है। हे स्वामिन्! आपका परमधैर्य हजारो स्तोत्रमे स्तुति करने योग्य है। तुमने देवाधिष्ठित रत्नोके बिना मुझे सामान्य शस्त्रोसे जीता और पवनके पुत्र हनुमानके अद्भुत प्रभावकी महिमाका क्या कहना। आपके पुण्यके प्रभावसे ऐसे सत्पुरुष आपकी सेवा करते है। हे प्रभु! यह पृथ्वी किसीके कुल परम्परासे नहीं आई है, शूरवीर ही इसके भोक्ता है। आप योद्धाओके शिरोमणी हो आप भूमि का प्रतिपालन करो। हे उदारकीर्ति! आप हमारेस्वामी हो हमारे पर क्षमा करो आप जैसी क्षमा हमने कहीं नहीं देखी। आपसे सम्बन्धकर मै कृतार्थ होऊँगा, इसलिये मेरी सत्यवती पुत्रीसे आप विवाह करो आपही उसके योग्य हो। इसप्रकार विनतीकर उत्साहसे पुत्रीका विवाह कराया। वरुणने रावणका बहुत सत्कार किया, बहुत योद्धा रावण के साथ गये, रावणने प्रेमसे सबको विदा किया, वरुण अपनी राजधानी मे आया, पुत्री के वियोगसे, वरुण का मन चिन्तित था। रावण ने हनुमान का अतिसम्मानकर अपनी बहन चन्द्रनखा की पुत्री अनगकुसुमाका विवाह हनुमानसे कराया, हनुमान विवाहकर अतिप्रसन्न हुये। रावणने हनुमानको

महासम्पदा युक्त कर्णकुण्डलपुर का राज्य दिया और अभिषेक कराया, उस नगरमें हनुमान सुखसे रहने लगे, जैसे स्वर्गलोक में इन्द्र तथा किहकूमपुर नगर का राजानल उनकीपुत्री हरमालिनी, रूपसम्पदा से लक्ष्मी को जीतनेवाली, उसका विवाह हनुमान से कराया, तथा किन्नरगीतनगर के राजा, किन्नरजाति के विद्याधरों की सौ पुत्रियों का विवाह कराया, इस प्रकार अनेक राजाओं की एकहजार राजकुमारियो से विवाह किया। पृथ्वीपर हनुमान का श्रीशैल नाम प्रसिद्ध हुआ। क्योकि पर्वतकी गुफामे जन्म, एव पर्वतपर गिरे हनुमान उस पहाडपर आये जहॉ हनुमान के गिरनेपर पहाड चूर चूर हुआ था उसको देख अतिप्रसन्न हुये। यह पर्वत पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ।

अथानंतर किहकधपुरनगर में राजासुग्रीव, रानी सुतारा उनकी पुत्री पद्मरागा अनेक गुणोसे मण्डित पृथ्वीपर प्रसिद्ध ऐसी पुत्रीको यौवन अवस्थामें देख माता पिताको विवाह कराने की चिन्ता हुई। योग्यवर चाहिये। सो माता पिताको रात्रिमे नींद नहीं आती। तब रावणके पुत्र इन्द्रजीत आदि अनेक राजकुमारो के चित्र दिखाये परन्तु कन्याको एक भी प्रसन्न नहीं आया। अपनी दृष्टि सकोच ली। पुनः हनुमानका चित्र दिखाया उसे देखकर शोषण, संतापन, उच्चाटन, मोहन वशीकरण, काम के यह पंचवाणोसे बेधी गई। तब सखियोने हनुमानसे मोहित जान, हनुमानके गुणोका वर्णन करने लगी। हे कन्ये! पवनजयके पुत्र जो हनुमान उनके गुणोंका वर्णन कहॉ तक करे, इनका रूप सौभाग्य तो तुमने चित्रमे देखा है अत इनको तुम वरो। और माता पिताकी चिन्ता दूर करो। चित्र देखके तो वह मोहित हुई थी, सखियोके मुखसे हनुमान के गुणोको सुनकर अतिलज्जासे मुख नीचाकर हाथमें क्रीडाकरने का कमल था, उससे चित्रपर मारा, तब सबने विचार कियाकि यह हनुमानसे अतिमोहित है, तब राजा सुग्रीवने अपनी पुत्रीका चित्र हनुमान को दिखाया। सो अंजना का पुत्र सुताराकी पुत्रीके रूपका चित्र देख मोहित हुआ, यह बात सत्य है कि कामके पॉच ही बाण है, परन्तु पवन पुत्रके सौ बाण हो गये, मनमें सोचने लगा कि मेरे हजार रानियॉं है, बडे बडे राजाओं की राजपुत्रियॉ, खरदूषण की पुत्री, रावण की भांनजी, मेरी रानी, फिर भी जब तक पद्मरागा से विवाह न हो, तब तक विवाह हुआ ही नहीं। ऐसा विचारकर महाऋद्धि सहित एक क्षणमात्रमें सुग्रीव के नगरमें पहुँच गये। सुग्रीवने सुनाकि हनुमान पधारें हैं,

तब अतिहर्षित होकर सन्मुख आये और बडे उत्साहसे हनुमानको नगरमे ले गये। राजमहल की रानियॉ झरोखो से अद्‌भुत रूपदेख आश्चर्यको प्राप्त हुई, और सुग्रीव की पुत्री पद्‌मरागा हनुमानके रूपको देखकर चकित हो गई। सुग्रीवने बडी विभूति सहित पवनपुत्र हनुमानसे पद्‌मरागा का विवाह कराया। जैसावर वैसीवधु[1] सो दोनो अतिहर्षित हुये, अपनी रानी सहित हनुमान अपने नगरमे आये, राजासुग्रीव रानीसुतारा, पुत्री के वियोगसे कुछ दिनोतक शोक पूर्ण रहे। हनुमान महालक्ष्मीवान सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रसिद्ध, ऐसे पुत्रको देख पवनजय और अजना महासुखी हुये। रावण तीनखड का नाथ, हनुमान जैसे सुभट विद्याधरो के अधिपति लकानगरीमे सुख से रहे। महासुन्दर, अठारहहजार रानीयॉ उनके मुख रूपी कमलका भ्रमर हुआ। आयु व्यतीत होती हुई जानी नहीं, जिसके एक स्त्री कुरुप आज्ञा रहितहो, तो वह पुरुष पागल जैसे रहते है। जिसके अठारह हजार रानियॉ, पतिव्रता, आज्ञाकारणी लक्ष्मीसमान है, उसके प्रभाव का क्या कहना। तीनखण्ड का अधिपति अनुपमकाति का धारी सभी विद्याधर एव भूमिगोचरी आज्ञाकारी ऐसे सब राजाओ ने अर्धचक्रीपद का अभिषेक किया, और अपना स्वामी माना। विद्याधरो का अधिपति पूज्य, लक्ष्मी, कीर्ति, काति परिवार उसके समान और किसी का नहीं, राजा दशमुख, चन्द्रमासमान, बडे बडे पुरुषो से मडित, हर्षको उत्पन्न करनेवाला किसके मनको नहीं हरे? जिसके सुदर्शनचक्र सर्वकार्य की सिद्धि करनेवाला देवाधिष्ठित उद्धत, प्रचण्ड नृपवर्ग आज्ञा नहीं माने तो उनका विध्वसक, अतिदेदीप्यमान अनेक रत्नोसे मडित दण्डरत्न दुष्टजीवो को कालसमान भयकर उग्रतेज जिसका, जैसे बिजली का समूह ही है, ऐसा आयुधशाला मे प्रकाशित हो रहा। वह रावण आठवा प्रतिवासुदेव, सुन्दरहै कीर्ति उसकी, पुण्यके कारण कुल परपरासे चली आई, लकापुरी उसमे ससार के अद्‌भूत सुख भोगता रहा। श्रीमुनिसुव्रतनाथको मोक्ष जाने के बाद ओर नमिनाथके पहले रावण हुआ। अज्ञानी पुरुषोने उनका कथन अन्यरूप किया, मासभक्षी बताया लेकिन वो मांसाहारी नहीं थे, अन्नके आहारी थे, एक सीताके हरणका अपराध किया, इसीलिये मारे गये, और परलोक में कष्ट पाया। कैसाहै मुनिसुव्रतनाथ का समय? सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र की उत्पत्ति का कारण है। वह समय गये, बहुत वर्ष हुये। इसीलिये तत्वज्ञान रहित विषयी जीवो ने बडे पुरुषो का वर्णन अन्यमिथ्यारूप किया, पापाचारी शीलव्रत

रहित जो मनुष्य उनकी कल्पना रूपी फांसी से अविवेकी मंदभाग्य मनुष्य पापकर्म को बाधते है। गौतमस्वामी ने कहा ऐसा जानकर, हे श्रेणिक! इन्द्र चक्रवर्ती आदि के द्वारा वन्दनीय, जो जिनेन्द्र भगवानके द्वारा कहा हुआ शास्त्र, उसे धारण करो, जिनशास्त्रके सुननेसे वस्तुके स्वरूपको जानकर, मिथ्यात्वरूपी कीचड को धोया जाता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे रावणका चक्र राज्याभिषेक का वर्णन करनेवाला उन्नीसवॉपर्वपूर्ण हुआ)

विद्याधर वश का वर्णन प्रथम काड़ समाप्त हुआ।

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-20

त्रेषठ शलाका पुरुषों के पूर्वभव आदि का वर्णन

अथानंतर राजाश्रेणिक महाविनयवान निर्मलबुद्धि से, विद्याधरो का सम्पूर्ण वृतान्त सुनकर गौतमगणधर के चरणों मे नमस्कार कर विनती करता है, हे नाथ! आपके प्रसाद से आठवॉ प्रतिनारायण, जो रावण उसकी उत्पत्ति और सम्पूर्ण वृतान्त मैंने जाना। तथा राक्षसवशी एव बनारवशी विद्याधरों के कुल का भेद, अच्छी तरह जाना, अब मैं तीर्थकरों के पूर्वभव सहित सम्पूर्ण चरित्र सुनना चाहता हूँ? कैसा है उनका चारित्र? परिणामो के निर्मलता का कारण है। और आठवे बलभद्र श्रीरामचन्द्र सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रसिद्ध ये कौनसेवंश में उत्पन्न हुये, उनका चरित्र कहो। और तीर्थंकरो के एवं, उनके माता पिताओ के नाम सुनने की मेरी इच्छा है। सो आप बतायें। इसप्रकार श्रेणिकने प्रार्थना की, तब गौतमगणधर बहुत हर्षित हुये। कैसेहैंगणधर? महाबुद्धिमान परमार्थ में प्रवीण। कहने लगे, कि हे श्रेणिक! पापोंके नाशका कारण इन्द्रादिक से नमस्कार करने योग्य चौबीस तीर्थंकर एवं इनके माता पिताओ के नाम पूर्वभव सहित कथन करता हूँ, तुम सुनो। ऋषभ 1, अजित 2, संभव 3, अभिनंदन 4, सुमति 5, पद्मप्रभु 6, सुपार्श्व 7, चन्द्रप्रभु 8, पुष्पदंत (सुविधिनाथ) 9, शीतल 10, श्रेयांस 11, वासुपूज्य 12, विमल 13, अनन्त 14, धर्म 15, शान्ति 16, कुंथु 17, अर 18, मल्लि 19, मुनिसुव्रत

20, नमि 21, नेमि 22, पार्श्व 23, महावीर 24, इनका अब शासन चलरहा है ये चौबीस तीर्थकरो के नाम कहे हैं। अब तीर्थकरो के पूर्वभव की नगरियो के नाम सुनो—पुण्डरकीनि 1, सुसीमा 2, क्षेमा 3, रत्नसचयपूर 4, ऋषभदेव आदि तीन तीन का एक एक नगरी मे क्रम से वासुपूज्यपर्यंत की ये चारनगरी पूर्वभव के निवास की जानना। और महानगर 13, अरिष्टपुर 14, सुभ्रद्रिका 15, पुण्डरीकनी 16, सुसीमा 17, क्षेमा 18, वीतशोका 19, चपा 20, कौशाबि 21, हस्तिनापुर 22, साकेता 23, छत्राकार 24 यह चौबीस तीर्थकरो की इसभव के पहले जो देवलोक, उसभव से पहले जो मनुष्य भव के स्वर्गपुरी समान राजधानी थी। अब इनके परभव के नाम सुनो। वज्रनाभि 1, विमलवाहन 2, विपुलख्याति 3, विपुलवाहन 4, महाबल 5, अतिबल 6, अपराजित 7, नदिषेण 8, पद्म 9, महापद्म 10, पद्मोतर 11, पकजगुल्म 12, नीलनगुल्म 13, पद्मासन 14, पद्रथ 15, दृढरथ 16, मेघरथ 17, सिहरथ 18, वैश्रवण 19, श्रीधर्मा 20, सुरश्रेष्ठ 21, सिद्धार्थ 22, आनद 23, सुनद 24 यह तीर्थकरो के इस भव के पहले तीसरे भव के नाम कहे। अब इनके पूर्वभव के पिताओ के नाम सुनो—वज्रसेन 1, महातेज 2, रिपुदमन 3, स्वयप्रभ 4, विमल वाहन 5, सीमघर 6, पिहिताश्रव 7, अरिंदम 8, युगधर 9, सर्वजनानद 10, अभयानद 11, वज्रदत 12, वज्रनाभि 13, सर्वगुप्ति 14, गुप्तिमान 15, चितारक्ष 16, विमलवाहन 17, धनरव 18, धीर 19, सवर 20, त्रिलोकीखी 21, सुनद 22, वीतशोक 23, प्रोष्ठिल 24 यह पूर्वभव के पिताओ के नाम कहे।

अब चौबीस तीर्थकर जिस जिस स्वर्ग से आये उन देवलोक का नाम सुनो सर्वार्थसिद्धि 1, वैजयत 2, ग्रैवेयक 3, वैजयन्त 4, उर्ध्वग्रैवेयक 5, वैजयत 6, मध्यम ग्रैवेयक 7, वैजयत 8, अपराजित 9, आरणस्वर्ग 10, पुष्पोत्तरविमान 11, कापिष्ठस्वर्ग 12, शुक्रस्वर्ग 13, सहस्रारस्वर्ग 14, पुष्पोत्तर 15, पुष्पोतर 16, पुष्पोत्तर 17, सर्वार्थसिद्धि 18, विजय 19, अपराजित 20, प्राणत 21, वैजयत 22, आनत 23, पुष्पोतर 24 यह चौबीस तीर्थकरो के आने के स्वर्ग कहे। अब आगे चौबीस तीर्थकरो की जन्मनगरी, जन्मनक्षत्र, माता पिता, वैराग्यके वृक्ष एव मोक्षस्थान सुनो—अयोध्यानगरी पितानाभीराजा, मातामरुदेवी, उतराषाढानक्षत्र वटवृक्ष, कैलाशपर्वत, प्रथम तीर्थकर, हे मगधदेश के भूपति तुझे अतीन्द्रिय सुखकी प्राप्ति हो (1) अयोध्यानगरी, पिताजितशत्रु माताविजया, रोहिणी नक्षत्र, सप्तच्छदवृक्ष, सम्मेदशिखर, अजितनाथ हे श्रेणिक तुझे मगलके कारण हों (2)

श्रावस्तीनगरी, जितारीपिता, सेनामाता, पूर्वषाढानक्षत्र, शालवृक्ष, सम्मेदशिखर, सभवनाथ तुम्हारे भवबंधन हरें (3) अयोध्यानगरी, संवरपिता, सिद्धार्थमाता, पुनर्वसुनक्षत्र, सालवृक्ष, सम्मेदशिखर, अभिनंदन तुझे कल्याण के कारण हो (4) अयोध्यानगरी, मेधप्रभपिता, सुमगलामाता, मघानक्षत्र, प्रियंगुवृक्ष, सम्मेदशिखर, सुमतिनाथ जगत में महामगलरूप तेरेसर्वविघ्न हरे (5) कौशम्बीनगरी, धारणपिता, सुसीमामाता, चित्रानक्षत्र, प्रियंगु वृक्ष, सम्मेदशिखर, पद्मप्रभ तेरे काम क्रोधादि अमगल हरे (6) काशीपुरीनगरी, सुप्रतिष्ठपिता, पृथ्वीमाता, विशाखानक्षत्र, शिरीषवृक्ष, सम्मेदशिखर, सुपार्श्वनाथ हे राजन तेरे जन्म जरा मृत्यु नाशकरें (7) चद्रपुरीनगरी, महासेनपिता, लक्ष्मणामाता, अनुराधानक्षत्र, नागवृक्ष, सम्मेदशिखर, चद्रप्रभु तुझे शान्तिभाव के दाता हो। (8) काकदीनगरी सुग्रीवपिता, रामामाता, मूलनक्षत्र, शालवृक्ष, सम्मेदशिखर, पुष्पदत तेरे चित्तको पवित्र करें। (9) भद्रिकापुरी नगरी, दृढरथपिता, सुनदामाता, पूर्वाषाढानक्षत्र, प्लक्षवृक्ष, सम्मेदशिखर, शीतलनाथ तुझे त्रिविध ताप हरे (10) सिहपुरीनगरी, विष्णुराजपिता, विष्णुश्रीदेवीमाता, श्रवणनक्षत्र, हिंदुकवृक्ष, सम्मेदशिखर श्रेयासनाथ तेरे विषय कषाय हरे (11) चपापुरीनगरी, वासुपूज्यपिता, विजयामाता, शतभिषानक्षत्र, पाटलवृक्ष, निर्वाणक्षेत्र चपापुरी का वन, मदारगिरीपर्वत, श्रीवासुपूज्य तुझे निर्वाणकी प्राप्ति कराये (12) कपिलानगरी, कृतवर्मापिता, सुरम्यामाता, उतराषाढानक्षत्र, जबूवृक्ष, सम्मेदशिखर, विमलनाथ तुझे रागादि मल रहित करे (13) अयोध्यानगरी, सिहसेनपिता, सर्वयशामाता, रेवतीनक्षत्र, पीपलवृक्ष, सम्मेदशिखर, अनतनाथ तुझे अतर रहित करे (14) रत्नपुरीनगरी, भानुपिता, सुव्रतामाता, पुष्यनक्षण, दधिपर्णवृक्ष, सम्मेदशिखर, धर्मनाथ तुम्हे धर्मरूप करे (15) हस्तिनागपुर नगर, विश्वसेनपिता, ऐरादेवीमाता, भरणीनक्षत्र नदीवृक्ष, सम्मेदशिखर, शान्तिनाथ तुम्हे सदा शाति करे (16) हस्तिनागपुरनगर, सूर्यपिता, श्रीदेवीमाता, कृतिकानक्षत्र, तिलकवृक्ष, सम्मेदशिखर, कुन्थुनाथ हे राजेन्द्र! आपके पाप हरण के कारण होवें (17) हस्तिनागपुरनगर, सुदर्शनपिता, मित्रामाता, रोहणीनक्षत्र, आम्रवृक्ष, सम्मेदशिखर, अरहनाथ, हे श्रेणिक! तुम्हारे कर्मरज हरे (18) मिथिलापुरीनगरी, कुभपिता, रक्षतामाता, अश्विनीनक्षत्र, अशोकवृक्ष, सम्मेदशिखर, मल्लिनाथ, हे राजा तुम्हारे मन को शोक रहित करें (19) कुशाग्रनगर, सुमित्रपिता, पद्मावतीमाता, श्रवणनक्षत्र, चम्पकवृक्ष, सम्मेद शिखर, मुनिसुव्रतनाथ सदा आपके मन में बसे (20)

मिथिलापुरीनगरी, विजयपिता, वप्रामाता, अश्विनीनक्षत्र, मौलश्रीवृक्ष, सम्मेदशिखर, नमिनाथ, तुम्हे धर्मका समागम करे (21) सौरीपुरनगर, समुद्रविजयपिता, शिवादेवीमाता, चित्रानक्षत्र, मेषशृगवृक्ष, गिरिनारपर्वत, नेमिनाथ तुम्हें शिवसुख के दाता होवें (22) काशीपुरीनगरी, अश्वसेनपिता, वामामाता, विशाखानक्षत्र , धवलवृक्ष, सम्मेदशिखर, पार्श्वनाथ आपके मन को धैर्य देवे (23) कुण्डलपुरनगर, सिद्धार्थपिता, प्रियकारिणीमाता, उतराफाल्गुनी नक्षत्र, शालवृक्ष, पावापुर, महावीर आपको परम मगल कर आप समान करे। (24) आगे चौबीस तीर्थकर के निर्वाणक्षेत्र कहते है। ऋषभदेव का निर्वाणक्षेत्र कैलाशपर्वत (1) वासुपूज्य का चम्पापुर (2) नेमिनाथ का गिरनार (3) महावीर का पावापुर (4) और शेष सभीका सम्मेद शिखर है। शाति, कुन्थु, अरहनाथ ये तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती, और कामदेव भी हुये, राज्य छोड वैराग्य लिया। और वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर ये पॉच तीर्थकर कुमारअवस्था मे वैरागी हुये। राज्य नहीं किया, बाल ब्रह्मचारी रहे। शेष तीर्थकर महामंडलीक राजा हुये, राज्य छोडकर वैराग्य लिया। चन्द्रप्रभु-पुष्पदन्त का श्वेतवर्ण, सुपार्श्वनाथ पार्श्वनाथ हरितवर्ण, पद्मप्रभु कमलसमान लालवर्ण, वासुपूज्य टेसुफूलसमान लालवर्ण, मुनिसुव्रतनाथ अजनगिरी समान श्यामवर्ण, नेमिनाथ मोरकठसमान नीलवर्ण और सोलह तीर्थकर तपे हुये सोने के समान वर्णवालें है। ये सभी तीर्थकर इन्द्र चक्रवर्ती आदि से पूज्य स्तुति करने योग्य है, सभी तीर्थंकर का सुमेरुपर्वत के पाडुशिला पर जन्माभिषेक हुआ है। सभी के पचकल्याणक हुये है, इसप्रकार गणधर देवने सम्पूर्ण वर्णन किया, तब राजा श्रेणिक नमस्कारकर विनती की।

हे प्रभो! छहोकाल की वर्तमान आयु का प्रमाण कहो और पाप निवृति का कारण कहो और कौनसे तीर्थकर के अन्तराल में श्रीरामचन्द्र प्रकट हुये, मै आपके मुख से सभी वर्णन सुननाचाहता हूँ। इस प्रकार राजा श्रेणिक ने प्रश्न किया तब गणधरदेव कृपाकर कहने लगे। कैसे है गणधर देव? क्षीरसागर के जल समान निर्मल है, चित्त जिनका। हे श्रेणिक! छहद्रव्यो मे कालद्रव्य अनन्तसमय वाला है, जिसका आदि अत नहीं। उसकी सख्या कल्पनारूप पल्य सागरादि महामुनि कहते है। पल्य सागर कितना है? एक महायोजन प्रमाण लबा चौडा ऊँचा गोल गड्ढा, उसमे उत्कृष्ट भोगभूमि के तत्काल का जन्मा हुआ भेड का बच्चा, उसके बालका अग्रभाग जिसका दूसरा टुकडा नहीं हो, उनसे उसगड्ढेको भरदें फिर

सौवर्ष बीतने के पश्चात् एकबाल निकालें फिर, सौवर्षबाद एकबाल निकाले इसप्रकार गड्ढा खाली होनेपर व्यवहार पल्य कहा जाता है। उससे असंख्यात गुणा उद्धारपल्य है, इससे असख्यात गुणा अद्धापल्य होता है। ऐसे दश कोटाकोटी पल्यका एकसागर कहा जाता है। दश कोटाकोटी सागर का एकअवसर्पिणी काल होता है। और दश कोटाकोटी सागर का उत्सर्पिणी काल है। बीस कोटाकोटी सागरका एककल्पकाल कहलाता है। जैसे एकमास मे शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष होते हैं, वैसे ही एक कल्पकाल मे एक अवसर्पिणी और एक उत्सर्पिणी काल होता है। इनके प्रत्येक के छह छह काल होते है। प्रथमकाल सुखमासुखमा चार कोटाकोटी सागरका है। दूसरा सुखमाकाल तीन कोटाकोटी सागरका है। तीसरा सुखमा-दुखमाकाल दो कोटाकोटी सागरका है। चौथा दुखमा-सुखमाकाल बयालीसहजार वर्षकम एक कोटाकोटी सागर का है। पाचवा दुखमाकाल इक्कीसहजार वर्षका है, छठा दुखमा-दुखमा काल भी इक्कीस हजार वर्षका है। यह अवसर्पिणी काल की रीति है। आगे प्रथमकाल से छठे काल पर्यत आयु, बल, शरीर ज्ञान सब घटता गया। इससे विपरीत रीति उत्सर्पिणी काल मे होती है। जैसे छठे से लेकर प्रथमकालपर्यत आयु, काय, बल पराक्रम बढते हुये कालचक्र की रचना जानना चाहिये।

अथानतर तीसरेकाल में पल्य का आठवॉ भाग शेष रहनेपर चौदह कुलकर उत्पन्न हुये। चौदहवे नाभिराजा के आदि तीर्थकर ऋषभदेव पुत्र हुये। उनको मोक्ष जाने के बाद पचासलाख कोटीसागर बाद श्रीअजितनाथ तीर्थंकर हुये। तीसलाख कोटीसागर बाद श्रीसभवनाथ हुये। दशलाख कोटीसागर बाद श्रीअभिनन्दन हुये। नवलाख कोटीसागर बाद श्री सुमतिनाथ हुये। नब्बेहजार कोटीसागर बाद श्री पद्मप्रभु हुये, नवहजार कोटीसागर बाद श्रीसुपार्श्वनाथ हुये। नौसौ कोटीसागर बाद श्रीचन्द्रप्रभु हुये। नब्बे कोटीसागर बाद श्रीपुष्पदन्त हुये। नवकोटीसागर बाद श्री शीतलनाथ हुये। सौसागर कम कोटीसागर बाद श्रीश्रेयांसनाथ हुये। चव्वनसागर बाद श्रीवासुपूज्य हुये। तीससागर बाद श्रीविमलनाथ हुये। नवसागर बाद श्रीअनन्तनाथ हुये। चारसागर बाद श्रीधर्मनाथ हुये। पॉचपल्यकम तीनसागर बाद श्रीशांतिनाथ हुये। आधापल्य बाद श्रीकुन्थुनाथ हुये। हजारकोटीवर्ष कम पावपल्य बाद श्रीअरहनाथ हुये। पैसठलाख चौरासीहजार वर्ष कम हजारकोटीवर्ष बाद श्रीमल्लिनाथ हुये। चौवनलाखवर्ष बाद श्रीमुनिसुव्रतनाथ हुये। छहलाखवर्ष बाद

श्रीनमिनाथ हुये। पॉचलाख वर्ष बाद श्रीनेमिनाथ हुये। पौनेचौरासीहजारवर्ष बाद श्रीपार्श्वनाथ हुये। अढाईसौवर्ष बाद श्रीवर्द्धमान हुये। जब वर्द्धमानस्वामी मोक्ष जायेगे, तब चौथेकालके तीनवर्ष साढेआठमहीना शेष रहेगें। और इतने ही तीसरे कालमे शेषथे, तब श्रीऋषभदेव भगवान मोक्ष गये थे। हे श्रेणिक! धर्मचक्र के अधिपति श्रीवर्द्धमानस्वामी मोक्ष गये, पश्चात्, पचम काल शुरू होगा। जिसमे देवो का आगमन नहीं ऋद्धिधारी मुनिराज नहीं, केवलज्ञान की उत्पत्ति नहीं, चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण की उत्पत्ति नहीं। तुम्हारे समान कोई न्यायवान राजा नहीं। आगे अनीति कारी राजा होवेगे। प्रजा के लोग महादुष्ट दूसरे के धन को हरने वाले होगे। शीलव्रत रहित महाक्लेश व्याधि के भरे मिथ्यादृष्टि, घोरपापकर्मी होगे। और अतिवृष्टि अनावृष्टि, टिड्डी, सूवा, मूषक अपनीसेना और दूसरो की सेना, ईति भीतियो का डर सदा ही बना रहेगा। मोहरूपी मदिरा से राग द्वेष के भरे, ऑखे चढाने वाले, क्रूरदृष्टि, पापी महामानी कुटिलजीव होगें, कुवचन बोलने वाले, धन के लोभी, क्रूरजीव पृथ्वीपर ऐसे भ्रमण करेगे जैसे उल्लू भ्रमण करे। मूर्ख दुर्जन, जिनधर्म से परान्मुख, कुधर्म मे स्वय प्रवृत्ति करेंगे और दूसरो को करायेगे। परोपकार रहित स्वय डूबेगे ओर दूसरो को डुबायेगे। दुर्गति मे जानेवाले अपने आपको महान मानेगे, मोहरूपी अधकार से अंधे कलिकाल के प्रभाव से, हिसारूप कुशास्त्र रूपी कुठार से अज्ञानी, जीवरूपी वृक्षको काटेगे। पचमकाल के आदि मे मनुष्यो का सातहाथ ऊँचाशरीर होगा, और एकसौ बीसवर्ष की उत्कृष्टायु होगी, फिर पचमकाल के अन्तमे दोहाथ का शरीर और बीसवर्षकी उत्कृष्टायु रहेगी। पुन छठेके अन्तमे एकहाथ का शरीर उत्कृष्ट सौलहवर्ष की आयु होगी। छठेकाल के मनुष्य महाकुरुप, मॉसाहारी, महादुखी, पापक्रिया मे रत, महारोगी, तिर्यचसमान महाअज्ञानी होगे। न कोई सम्बन्ध, न कोई व्यवहार, न कोई ठाकुर, न कोई चाकर, न राजा, न प्रजा, न धन, न घर, न सुख महादुखी होगे। अन्यायकार्य कर्नेवाले, धर्म के आचरण से शून्य महापापी होंगे। जैसे कृष्णपक्षमे चन्द्रमा की कला घटे एव शुक्ल पक्ष मे बढे, ऐसे अवसर्पिणी काल मे घटे और उत्सर्पिणी काल मे बढे। जैसे दक्षिणायिन मे दिन घटे और उत्तरायण मे बढे ऐसे उत्सर्पिणी अवसर्पिणी मे हानी वृद्धि जाननी। यह तीर्थंकरों का अन्तराल काल तुझे कहा। हे श्रेणिक! अब तू तीर्थकर के शरीर की ऊँचाई का वर्णन सुन। प्रथम तीर्थंकर का शरीर पॉचसौ धनुष, दूसरे का साढेचारसौ धनुष,

तीसरे का चारसौ धनुष, चौथे का साढेतीनसौ धनुष, पॉचवे का तीनसौ धनुष, छठे का ढाईसौ धनुष, सातवें का दोसौ धनुष, आठवे का डेढसौ धनुष, नौवे का सौ धनुष, दसवे का नब्बे धनुष, ग्यारहवें का अस्सी धनुष, बारहवें का सत्तर धनुष, तेरहवे का साठ धनुष, चौदहवे का पच्चास धनुष, पन्द्रहवे का पैतालीस धनुष, सौहलवें का चालीस धनुष, सत्रहवे का पैतीस धनुष, अठारहवे का तीस धनुष, उन्नीसवें का पच्चीस धनुष, बीसवे का बीस धनुष, इक्कीसवे का पद्रह धनुष, बाईसवें का दस धनुष, तेईसवे का नौहाथ और चौबीसवे का सातहाथशरीर है। अब आगे इन चौबीस तीर्थंकरों की आयु का प्रमाण कहता हूँ। प्रथम तीर्थकर की आयु चौरासीलाखपूर्व (चौरासीलाख वर्षका एकपूर्वांग होता है और चौरासीलाख पूर्वांग को चौरासीलाख पूर्वांग से गुणा करें जो गुणनफल हो उसे एकपूर्व कहते हैं), दूसरो की बहत्तरलाखपूर्व, तीसरों की साठ लाख पूर्व, चौथे की पचास लाख पूर्व, पॉचवे की चालीसलाखपूर्व, छठे की तीसलाखपूर्व, सातवे की बीसलाखपूर्व, आठवे की दसलाखपूर्व, नवमे की दोलाखपूर्व, दसवे की एकलाखपूर्व, ग्यारहवे की चौरासीलाखवर्ष, बारहवे की बहत्तरलाखवर्ष, तेरहवे की साठलाखवर्ष, चौदहवे की तीसलाखवर्ष, पन्द्रहवे की दसलाखवर्ष, सोलहवे की एकलाखवर्ष, सत्तरहवे की पचानवेहजारवर्ष, अठारहवे की चौरासीहजारवर्ष, उन्नीसवे की पचपनहजारवर्ष, बीसवे का तीसहजारवर्ष, इक्कीसवे की दसहजारवर्ष, बाईसवे की एकहजारवर्ष, तेईसवे की सौवर्ष, चौबीसवें की बहत्तरवर्ष की आयु थी।

अथानंतर ऋषभदेव से पहले चौदह कुलकर हुये, उनकी आयु और शरीर का वर्णन कहता हूँ। प्रथम कुलकर का शरीर अठारहसौधनुष, दूसरे का तेरहसौधनुष, तीसरे का आठसौधनुष, चौथे का सातसौ पच्चहत्तर धनुष, पॉचवे का साढेसातसौधनुष, छठे का सवासातसौ धनुष, सातवे का सातसौधनुष, आठवें का पौनेसातसौधनुष, नवमे का साढेछहसौधनुष, दसवें का सवाछहसौधनुष, चौदहवे का सवा पॉचसौधनुष। अब इन कुलकरो की आयु का वर्णन करते है। पहले कुलकरकी आयु पल्यका दसवॉभाग, दूसरेकी पल्यका सौवॉभाग, तीसरेकी पल्यका हजार वॉ भाग, चौथेकी पल्यका दसहजार वॉ भाग, पॉचवेकी पल्यका लाख वॉ भाग, छठेकी 'ल्यका दसलाख वॉ भाग, सातवेंकी पल्यका करोड वॉ भाग, आठवेकी पल्यका दसकरोड वॉ भाग, नवमेंका पल्यका सौकरोड वॉ भाग, दसवेकी पल्यका हजार करोड वाँ भाग, ग्याहरवेकी पल्यका दस हजार करोड वॉ भाग, बारहवे की पल्यका

लाखकरोड वॉ भाग, तेरहवेंकी पल्यका दसलाख करोड वॉ भाग, चौदहवेंकी एककोटीपूर्व की आयु थी। हे श्रेणिक! अब तुम बारह चक्रवर्ती का वर्णन सुनों। प्रथम चक्रवर्ती भरत, श्रीऋषभदेवकी नन्दारानी उनके पुत्रभरत वह भरतक्षेत्र का अधिपति, पूर्वभव मे पुडरीकनी नगरी मे पीठनामके राज कुमार थे, वे कुशसेनस्वामी के शिष्यबन मुनिव्रतधार सर्वार्थसिद्धि गये, वहॉ से चयकर भरतचक्रवर्ती होकर, षटखड का राज्यकर, मुनिहोकर अन्तर्मुर्हूत मे केवलज्ञान प्राप्तकर निर्वाणपद को प्राप्त हुये। पृथ्वीपुरनगर मे राजा विजयतेज यशोधर मुनि के पास जिन दीक्षा लेकर विजयअनुत्तर मे जन्म लिया, वहॉ से चयकर अयोध्या के राजा विजय रानी सुमगला उनके पुत्र सगर दूसरे चक्रवर्ती हुये, वे महाभोगो को भोगते थे, उनके इन्द्रसमान देव, विद्याधर आज्ञाकारी है, वे पुत्रो के शोक से राज्य त्यागकर अजितनाथ के समोशरण मे मुनि होकर केवलज्ञान प्राप्त कर सिद्ध हुये। पुडरीकनी नगरी मे राजा शशिप्रभ वह विमलस्वामी के शिष्य होकर ग्रैवेयक में गये। वहॉ से चयकर श्रावस्तिनगरी मे राजासुमित्र, रानी भद्रवती, उनके पुत्र मघवा नामके तीसरे चक्रवर्ती हुये। श्रीधर्मनाथ के बाद शातिनाथ के जन्म से पहले, समताधारी जिनमुद्रा को धारणकर सौधर्मस्वर्ग मे गये, पुन· स्वर्गसे चयकर चौथे चक्रवर्ती सनतकुमार हुये, उनकी गौतमस्वामी ने बहुत प्रशसा की। तब राजा श्रेणिक! गणधर से पूछते है। हे प्रभो! वे किसपुण्य से ऐसे रूपवान हुये? तब गणधरदेव ने सक्षेप से उनका चारित्र कहा। कैसा है सनतकुमार का चरित्र। सौवर्ष मे भी कोई कहनेको समर्थ नहीं हो सकता। यह जीव जबतक जैनधर्म को स्वीकार नहीं करता है, तब तक तिर्यच, नरक, कुमानुष, कुदेवादि कुगतियो मे दुख भोगता है। जीवो ने अनन्तभव धारण किये, उनका वर्णन कहॉ तक करे। परन्तु कुछभव का वर्णन करते है। एक गोवर्धनग्राम मे अच्छे अच्छे मनुष्य रहते है, वहॉ एक जिनदत्त नामका श्रावक, बडा धर्मात्मा, जैसे जलका शिरोमिणी सागर, पर्वतो में सुमेरु, ग्रहो मे सूर्य, तृणो मे इक्षु, बेलो मे नागरबेल, वृक्षो मे चन्दन, प्रशसा योग्य है। ऐसे ही श्रावककुल उत्तम आचरण युक्त पूज्य है वह सुगति का कारण है। वह जिनदत्त श्रावक गुणरूपी आभूषणो से मडित श्रावक के व्रतपाल उत्तम गति गया। उनकी स्त्री, पतिव्रता श्राविका, अपने घरमे चैत्यालय बनाया और सर्व धन वहॉ लगाया, पुन आर्यिका बनकर महातप कर स्वर्ग मे गई। उसी ग्राममे एक हेमबाहु गृहस्थ आस्तिक, दुराचार से रहित, विनयवती का बनवाया जो चैत्यालय, उसमें भक्तिकर

जय नाम का देव हुआ। वह चतुर्विधि संघ की सेवा मे सावधान सम्यग्दृष्टि जिनवदना में लीन, सो स्वर्ग से चयकर मनुष्य हुआ। पुनः देव, पुनः मनुष्य इस प्रकार कई भव धारणकर महापुरी नगर में राजा सुप्रभ रानी, तिलकसुन्दरी उसके धर्मरूपी नामका पुत्र हुआ, वह राज्य छोड सुप्रभनामके मुनि (पिता) उनके शिष्य होकर दीक्षा धारण की पॉचमहाव्रत, पॉचसमिति, तीनगुप्ति का पालक, आत्मध्यानी, गुरु सेवा में अत्यन्त लीन, अपने शरीर से निष्प्रह· जीव दया के धारक मनेन्द्रिय को जीतने वाला, शील का सुमेरु, शंकादि दोषो से रहित, साधुओ का भक्त वह समाधिमरण कर चौथे स्वर्ग मे गया, वहॉ के सुखो को भोगा, पुन· वहॉसे चयकर नागपुर नगरमे राजा विनय, रानी सहदेवी उनके सनत्कुमार चौथे चक्रवर्ती हुये। छहखण्ड पृथ्वीपर उनकी आज्ञा रही, महारूपवान, एकदिन सौधर्मइंद्र ने चक्रवर्ती के रूप की अतिप्रंशसा की, सो रूप देखने स्वर्गसे देव आये, आकर गुप्तरूपसे चक्रवर्ती का रूप देखा। उससमय चक्रवर्ती ने कुश्तीका अभ्यास किया था, शरीरपर मिट्टी लगरही थी, एव स्नान के लिये एक धोती ही पहिने आसन पर विराजमान थे, उससमय देव रूपको देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुये और आपस में कहने लगे कि जैसा इन्द्रने वर्णन किया था, वैसाही रूप है, यह मनुष्य का रूप देवो के मनको मोहित करने वाला है। पुनः चक्रवर्ती स्नानकर वस्त्राभूषण पहनकर सिहासन पर बैठे, तब देव प्रगट होकर दरवाजे पर आये और द्वारपाल ने चक्रवर्ती से कहा कि स्वर्ग से देव आपका रूप देखने आये है, तब चक्रवर्ती अनुपम शृगारकर बैठे थे, फिर भी देवो के आने से और भी शरीर को सजाया, फिर देवो को बुलाया, देव आये चक्रवर्ती का रूपदेख सिरको हिलाया और कहनेलगे, एकक्षण पहले स्नान के समय जो रूप देखा था, अब वैसा नहीं हैं मनुष्य के शरीर की शोभा, क्षणभगुर है, धिक्कार इस जगत की असार मायाको, प्रथम दर्शन में जो रूप यौवन की सुन्दरता थी, वह क्षणमात्र मे नष्ट हुई, जैसे बिजली की चमक क्षणभर में नष्ट होती है। यह देवो के वचन सुनकर सनतकुमार चक्रवर्ती रूप एवं लक्ष्मी को क्षणभगुर जान, वीतराग भाव सहित महामुनि बनकर महातप करनेलगे। महाऋद्धियॉ उत्पन्न हुई। पुनः कर्मनिर्जरा के लिये महारोग की परिषह सहन करने लगे, महा ध्यान मे आरुढ समाधि मरणकर सनतकुमार तीसरे स्वर्ग में देव बने। वहा से चयकर शान्तिनाथ के पहले और मधवा तीसरे चक्रवर्ती के बाद मे हुये। और पुण्डरीकिनी नगरी में राजा

मेघरथ वह अपने पिता धनरथ तीर्थकर के शिष्य मुनिबन सर्वार्थसिद्धि को पधारे। वहाँ से चयकर हस्तिनापुर मे राजा विश्वसेन, रानी ऐरा देवी उनके शान्तिनाथ सौलहवे तीर्थकर एव पाचवे चक्रवर्ती हुये जगत मे शान्ति के करने वाले, उनका जन्माभिषेक सुमेरु पर्वत पर इन्द्र ने किया। पुन षट्खण्डपृथ्वी का राज्य किया एव राज्य को नाशवान जान मुनि बन मोक्ष गये।

पुन कुथुनाथ छट्टे चक्रवर्ती, सत्रहवे तीर्थकर और अरहनाथ सातवे चक्रवर्ती, अठारहवे तीर्थकर मुनि बनकर निर्वाण पधारे। सो उनका कथन तीर्थकरो के वर्णन मे पहले ही कहा है। और धान्यपुर नगर मे राजा कनकप्रभ वह विचित्रगुप्तस्वामी के शिष्य मुनिबन स्वर्ग गये। वहाँ से चयकर अयोध्या नगरी मे राजा कीर्तिवीर्य रानीतारादेवी, उनके सुभौम आठवे चक्रवर्ती हुये जिससे पृथ्वी शौभायमान हुई, उनके पिताको मारनेवाला परशुराम उसने क्षत्री मारे थे, और उनके सिर थभो मे चिनाये थे, सो सुभौम अतिथि का भेष बनाकर परशुराम के घर भोजन को आये। परशुराम ने निमित्त ज्ञानी के शब्दो से जान क्षत्रियो के दात बरतन मे रख सुभौम को दिखाये तब दात क्षीररूप हो गये, और भोजन का पात्र चक्रबन गया, उस चक्र से चक्रवर्ती ने परशुराम को मारा, परशुराम ने क्षत्रियो को मारा था, एव सातबार इसपृथ्वी को क्षत्रिय रहित किया, सो सुभौमने परशुराम को मारकर ब्राह्मणो से द्वेष किया, और इक्कीसबार ब्राह्मणो से रहित पृथ्वी की। जैसे परशुराम के राज्य मे क्षत्रियकुल छिपकर रहता था, ऐसे ही सुभौम के राज्य मे ब्राह्मण भी छिप कर रहे। अरहनाथ के मोक्ष जाने के बाद एव मल्लिनाथ के जन्म से पहले सुभौम चक्रवर्ती हुये। अतिभोगासक्त निर्दयी अव्रती होकर मरे और सातवे नरक मे गये। वीतशोका नगरी मे राजाचित्त सुप्रभस्वामी के शिष्य मुनिबन ब्रह्म स्वर्ग गये, वहाँ से चयकर हस्तिनापुर मे राजा पद्मनाथ रानीमयूरी उनके महापद्म नाम के नवमे चक्रवर्ती हुये। षट्रवडपृथिवी के भोगी उनकी आठ पुत्रियाँ महारूपवती, महामानी, उनको विवाह की इच्छा नहीं, फिर भी विद्याधर उनको हर कर ले गये, सो चक्रवर्ती ने उनको छुडाई, इन आठों ही कन्याये आर्यिका के व्रत धर, समाधिमरण करके देवपद को प्राप्त किया, और जो विद्याधर इनको ले गये थे, उन्होने भी ससार से विरक्त होकर मुनिबन आत्म कल्याण किया। यह वृतान्त देख महापद्म चक्रवर्ती, पद्म नामके पुत्रको राज्य देकर विष्णुनामके पुत्रके साथ वैरागी होकर दीक्षा धारण की। महातपकर

केवलज्ञानको प्राप्तकर मोक्ष गये। ये महापद्मचक्रवर्ती भी अरहनाथ और मल्लिनाथ के बीच के काल में सुभौम चक्रवर्ती के पश्चात नवमे चक्रवर्ती हुये। विजयनाम की नगरी में राजा महेन्द्रदत्त, अभिनन्दनस्वामी के शिष्य होकर महेन्द्र स्वर्ग मे गये। वहाँ से चयकर कम्पिलनगर में राजा हरिकेतु, रानी विप्रा उनके हरिषेण नाम के दशवे चक्रवर्ती हुये, उन्होने भरतक्षेत्र की पृथ्वीपर अनेक चैत्यालय बनवाये। और मुनिसुव्रतनाथ स्वामी के तीर्थमे मुनि बनकर सिद्धपद को प्राप्त किया। राजपुरनगर में राजा असिकांत सुधर्मसागर के शिष्य, मुनि बनकर ब्रह्मस्वर्ग गये। वहॉ से चयकर राजाविजय, रानीयशोवती उनके जयसेन नाम के ग्यारहवे चक्रवर्ती हुये। वे राज्यछोड दिगम्बरी दीक्षा लेकर, रत्नत्रय की आराधना से सिद्धपद को प्राप्त हुये। ये मुनिसुव्रतनाथ एव नमिनाथ के अन्तराल में हुये। काशीपुरी नगरी मे राजा सभूत, स्वतत्रलिग स्वामी के शिष्य मुनि होकर स्वर्ग मे देव हुये। वहॉ से चयकर कम्पिलनगर मे राजाब्रह्मरथ, रानी चूला, उनके ब्रह्मदत्तनाम के बारहवे चक्रवर्ती हुये। वे छहखड पृथ्वी का राज्य कर मुनिव्रत बिना रौद्रध्यान से मरकर सातवे नरक गये। ये श्रीनेमिनाथ भगवान को मोक्ष गये पश्चात् पार्श्वनाथस्वामी के अन्तराल मे हुये। ये सभी बारह चक्रवर्ती महापुरुष हैं, छहखड पृथिवी के नाथ जिनकी आज्ञादेव विद्याधर सब मानते है। हे श्रेणिक! तुझे पुण्य पाप का फल प्रत्यक्ष कहा उसे सुनकर योग्य कार्य करना अयोग्य काम को नहीं करना। अच्छे कार्य किये बिना अच्छा फल प्राप्त नहीं होता है। सुन्दर महल व भवनो मे जो रहते है, एव पचेन्द्रिय के भोगों को जो प्राप्त करते है, वह सब पुण्य का ही फल है, और जहॉ शीत, उष्ण, हवा, पानी की बाधा होती है ऐसी कुटिया मे रहने वाले को पापरूपी अधर्म का फल है। पर्वत समान ऊँचे हाथी, घोडे एवं देवो के विमान समान मनोज्ञरथ, उनके ऊपर चढकर सेना सहित चलते है, गमन करते है, चमर ढुरते हैं, यह सब पुण्य का फल है। और जो फटे पैर, फटे मैले कपडे पहन पैदल चलते है वह सबपाप का फल है। और जो अमृतसमान भोजन स्वर्ण रजतपात्र मे करतें है, वह सब धर्म का फल मुनियो ने कहा है। एव जो देवो का अधिपति इन्द्र एवं मनुष्यो का स्वामी चक्रवर्ती का पद भव्यजीव ही प्राप्त करते है। वह सबजीव दयारूपी वृक्षका फल है। बलभद्र नारायण प्रतिनारायण आदि जो पद है, वह भव्यजीव को ही प्राप्त होते है यह सबधर्म का ही फल है। हे श्रेणिक आगे वासुदेवो का वर्णन करते हैं सो सुनो। इस अवसर्पिणी काल के भरतक्षेत्र में नव वासुदेव

है, प्रथम ही इनकी पूर्वभव की नगरी का नाम सुनो—हस्तिनागपुर 1, अयोध्या 2, श्रावस्ति 3, कौशाबी 4, पोदनपुर 5, शैलनगर 6, सिहपुर 7, कौशांबी 8, हस्तिनागपुर 9। ये नव ही नगर कैसे है? सम्पूर्ण द्रव्यो से भरे है, इतिभीति से रहित है, अब वासुदेवो के पूर्वभव के नाम सुनो—विश्वानदी 1, पर्वत 2, धनमित्र 3, सागर दत्त 4, विकट 5, प्रियमित्र 6, मानचेष्टित 7, पुनर्वसु 8, गंगदेव (निर्णामिक) 9, ये सभी वासुदेव पूर्वभव मे विरुप, दुर्भाग्य, राज्यभ्रष्ट होकर पुनः मुनि बन कर महातप करते है। पुन निदान के कारण स्वर्ग मे देव होकर वहाँ से चयकर बलभद्र के छोटे भाई वासुदेव होते है। इसीलिये तप के फल का निदान करना ज्ञानियो को वर्जित है। निदाननाम भोगाभिलाषा का है वह महाभयानक दुख देने वाला है। आगे वासुदेवो के पूर्वभव के नाम सुनो, जिनसे इन्होने मुनिव्रत धारण किये। सभूत 1, सुभद्र 2, वसुदर्शन 3, श्रेयास 4, भूतिसग 5, वसुभूति 6, घोषसेन 7, पराभीधि 8, द्रुमसेन 9। अब जिस जिस स्वर्ग से आकर वासुदेव हुए उनके नाम सुनो। महाशुक्र 1, लातव 2, सहस्रार 3, ब्रह्म 4, महेन्द्र 5, सौधर्म 6, सनतकुमार 7, महाशुक्र 8, महाशुक्र 9, आगे वासुदेवों की जन्म नगरीयों के नाम सुनो—पोदनपुर 1, द्वापुर 2, हस्तिनापुर 3, हस्तिनापुर 4, चक्रपुर 5, कुशाग्रपुर 6, मिथिलापुर 7, अयोध्या 8, मथुरा 9 यह वासुदेवो के जन्मनगर सम्पूर्ण धन धान्य से पूर्ण महाउत्सव से भरे है। आगे वासुदेवो के पिताओ के नाम सुनो—प्रजापति 1, ब्रह्मदुत 2, रौद्रनद 3, सोम 4, प्रख्यात 5, शिवाकर 6, सममूर्धाग्नि नाद 7, दशरथ 8, वसुदेव 9, पुन इन नव वासुदेवो की माताओ के नाम सुनो—मृगावती 1, माधवी 2, पृथ्वी 3, सीता 4, अबिका 5, लक्ष्मी 6, केशिनी 7, सुमित्रा 8, देवकी 9, यह नव वासुदेवो की माताये अति रूपवान गुणवान सौभाग्यवती जिनभक्त ही है। आगे नव वासुदेवो के नाम सुनो त्रिपृष्ठ 1, द्विपृष्ट 2, स्वयंभू 3, पुरुषोतम 4, पुरुषसिह 5, पुडरीक 6, दत्त 7, लक्ष्मण 8, कृष्ण 9, आगे वासुदेवो की पटरानियों के नाम—सुप्रभा 1, रुपिणी 2, प्रभवा 3, मनोहरा 4, सुनेत्रा 5, विमल सुन्दरी 6, आनदवती 7, प्रभावती 8, रुक्मिणी 9 यह मुख्य पटरानियाँ महागुण कला मे निपुण धर्मवती व्रतवती है।

अथानतर अब नवबलभद्रो का वर्णन सुनो—पहले नवबलभद्रो के जन्म नगरीया—पुडरीकिनी 1, पृथ्वी 2, आनदपुरी 3, नदपुरी 4, वीतशोका 5, विजयपुर 6, सुसीमा 7, क्षेमा 8, हस्तिनापुर 9। अब बलभद्रों के नाम सुनो—बाल 1,

मारुतदेव 2, नंदिमित्र 3, महाबल 4, पुरुषर्षभ 5, सुदर्शन 6, वसुंधर 7, श्रीचद्र 8, सखिसंज्ञ 9 अब इनके पूर्वभव के गुरुओ के नाम सुनो जिनसे इन्होंने जिन दीक्षा ली थी। अमृतार 1, महासुव्रत 2, सुव्रत 3, वृषभ 4, प्रजापाल 5, दमवर 6, सुधर्म 7, आवर्ण 8, विद्रुम 9। पुन· नवबलदेव जो स्वर्ग से आये उनके नाम सुनो–तीन बलभद्र तो अनुत्तर विमान से आये, और तीन सहस्रार स्वर्गसे आये, दो ब्रह्मस्वर्गसे आये, और एकमहाशुक्रसे आये। अब माताओ के नाम सुनो–क्योकि पिता तो बलभद्रो के एव नारायणों के एक ही होते है, भद्रां भोजा 1, सुभद्रा 2, सुवेषा 3, सुदर्शना 4, सुप्रभा 5, विजया 6, वैजयती 7, कौशल्या (अपराजिता) 8, रोहणी 9,। नव बलभद्र–नव नारायण उनमे 5 बलभद्र–नारायण तो श्रेयासनाथ स्वामीके समयसे लेकर धर्मनाथ पर्यन्त हुये। छठे और सातवें अरहनाथ एव मल्लिनाथ के बीच काल मे हुये। और आठवे बलभद्र-नारायण मुनिसुव्रतनाथ स्वामी को मोक्ष जाने के बाद नमिनाथ स्वामी के पहले हुये। और नवमे श्रीनेमिनाथ भगवान के काका का बेटे (भाई) महाजिनभक्त अद्‌भुतक्रिया को करनेवाले हुये। अब इनके नाम सुनो–अचल 1, विजय 2, भद्र 3, सुप्रभ 4, सुदर्शन 5, नदिमित्र (आनन्द) 6, नदिषेण (नन्दन) 7, रामचन्द्र 8, पद्‌म 9। आगे जिन मुनियो से दीक्षा ली उनके नामसुवर्णकुंभ 1, सत्कीर्ति 2, सुधर्म 3, मृगाक 4, श्रुतिकिर्ती 5, सुमित्र 6, भवनश्रुत 7, सुव्रत 8, सिद्धार्थ 9 यह बलभद्रो के गुरुओ के नाम कहे–महातपकर कर्मनिर्जरा के कारण, तीनलोक मे कीर्ति प्रकट हुई है जिनके, ऐसे बलभद्र आठोकर्मों का नाशकर आठबलभद्र मोक्ष मे गये। ससारवनकैसा है? आकुलता सहित अनेकरोगोसे युक्तशरीर। पद्‌मनाम के बलभद्र ब्रह्मस्वर्ग में महाऋषि के धारी देव हुये। अब नारायण के शत्रु-प्रतिनारायणो के नाम सुनो–अश्वग्रीव 1, तारक 2, मेरक 3, मधुकेरव 4, निशुभ 5, बली 6, प्रहलाद 7, रावण 8, जरासिन्धु 9। अब इन प्रतिनारायणो के राजधानी के नाम–अलका 1, विजयपुर 2, नन्दनपुर 3, पृथ्वीपुर 4, हरिपुर 5, सूर्यपुर 6, सिंहपुर 7, लका 8, राजगृही 9। ये नवही नगर महारत्नों से जडित दैदीप्यमान स्वर्गलोक समान है। हे श्रेणिक! पहले जिनेन्द्र भगवान का चारित्र कहा–पुन· भरतादि चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र आदिका वर्णन पूर्वजन्म सहित कहा–एवं प्रतिनारायणो के नाम कहे–ये त्रेसठ शलाका के पुरुषों में कोई तपकर मोक्ष गये, कोई स्वर्ग गये, पुनः आकर मोक्ष जायेंगे, किसीने वैराग्य को नहीं धारा, वह चक्री, हरी, प्रतिहरी कुछभवोके

पश्चात तपकर मोक्ष प्राप्त करेगे। ये संसारी प्राणी अनेक पाप क्रियाओ से मलीन, मोह मे मग्न, चारो गतियो मे भ्रमणकर, सदा दुखी रहते हैं, ऐसा जानकर जो निकटभव्य ससारीजीव है, ससार का भ्रमण नहीं चाहते हैं वह जीव मोहरूपी अन्धकार का नाशकर सूर्यसमान केवलज्ञान को प्रकाश करते हैं।

(इति श्री रविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे चौदहकुलकर चौबीसतीर्थंकर, बारहचक्रवर्ती नवनारायण नवप्रतिनारायण, नवबलभद्र, इनके माता पिता पूर्वभव नगरीयो के नाम पूर्व गुरु कथन नाम वर्णन करने वाला बीसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-21

श्रीरामचन्द्र के वंश का वर्णन

अथानतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे मगधाधिपति! आगे अष्टम बलभद्र, श्रीरामचन्द्रजी उनका चरित्र कहता हूँ तुम सुनो अब राजाओ के वश, महापुरुषो की उत्पत्ति, उनका कथन, कहता हूँ, सो मन मे धारण करो। दशवे तीर्थकर शीतलनाथ भगवान को मोक्ष जाने के बाद कौशाबीनगरी मे एक राजा सुमुख हुआ, उसीनगर मे एक श्रेष्ठिवीरक की स्त्री वनमाला को, राजा सुमुख ने अज्ञानता से अपने घरमे रखी, फिर विवेक को प्राप्त होकर मुनियो को दान दिया और मरकर विद्याधर हुआ, एव वनमाला विद्याधरी हुई सो विद्याधर ने वनमाला से विवाह किया। एक दिन ये दोनो क्रीडा करने हरिक्षेत्र मे गये और वह श्रेष्ठिवीरक वनमाला का पति वियोगरूपी अग्नि से दग्धायमान हो, तपकर स्वर्ग मे गया, एक दिन अवधिज्ञान से वह देव अपनेशत्रु सुमुख के जीवको हरिक्षेत्र में क्रीडा करता देख क्रोध से स्त्री सहित उनको उठाकर ले गया। इसीलिये वह क्षेत्र हरिनाम से प्रसिद्ध हुआ। इसीकारण हरिवश कहलाया। उस हरि के महागिरी, उसके हिमगिरी, उसके वसुगिरी, इन्द्रगिरी, उसके रत्नमाला, उसके सभू, भूतदेवादि सैकडो राजा हरिवश मे हुये। उसी हरिवश में कुशाग्रनगर का राजा सुमित्र जगत मे प्रसिद्ध हुआ। उसकी रानी पद्मावती दोनों इन्द्र समान भोगों को भोगते हुये, चन्द्रमा समान ज्योति को प्राप्त हो रहे हैं। महारानी गुणोकी खान, रात्रीमे मनोहर महलमे सेजपर सोई हुई थी, पिछले पहर में सोलह स्वप्न देखे,

गजराज 1, वृषभ 2, सिंह 3, लक्ष्मी स्नान करती 4, दो पुष्पमाला 5, चन्द्रमॉ 6, सूर्य 7, दोमच्छ जलमे केलि करते 8, जलकेभरे कलश 9, सरोवर कमल सहित 10, समुद्र 11, रत्न जडित सिंहासन 12, स्वर्ग का विमान 13, धरणेन्द्र का भवन 14, रत्नों की राशी 15, निर्धूमअग्नि 16, रानी पद्मावती सुबुद्धिवान जागकर आश्चर्य सहित, प्रात काल की क्रियाकर विनयसे, पतिके निकट आई और अर्ध सिहासनपर बैठी, प्रसन्न मुद्रा से हाथजोड नमस्कार कर महासती पतिव्रता, राजा से स्वप्नो का फल पूछा। तब राजा सुमित्र ने स्वप्नो का फल यथा योग्य कहा। उसी समय आकाश से रत्नो की वर्षा हुई। एक समय मे साढेतीन करोड रत्नोकी वर्षा होती, ऐसी तीनों समय रत्नोकी वर्षा होती है, पन्द्रह महीनेतक माता पिता के आंगन मे वर्षा हुई। और अष्ट्कुमारियॉ परिवार सहित माताकी सेवा करती है, एव जन्म होते ही भगवान का क्षीरसागर के जल से इन्द्र लोकपालो सहित सुमेरुपर्वत पर जन्माभिषेक किया। इन्द्र ने भक्ति से पूजा स्तुति नमस्कार कर माता की गोद मे विराजमान किये। जब से भगवान माताके गर्भमे आये तबसे ही लोगोंने अणुव्रत महाव्रतों को धारण किया और माताने भी व्रत ग्रहण किये, इसीलिये पृथ्वीपर मुनिसुव्रत नाम प्रसिद्ध हुआ। अजनगिरी समानवर्ण, परन्तु शरीर के तेजसे सूर्यको जीता और कातिसे चद्रमाको जीता, एव सभी भोगसामग्री स्वर्गो से देव लाते हैं, जैसा भगवान को मनुष्यभव मे सुख है, ऐसा अहमिन्द्रो को नहीं, और गन्धर्वजाति के देव सदा भक्ति करते है। किन्नरजाति की देवॉगनाये एव स्वर्गकी अप्सराये नृत्य किया करती है। और वीणा, बॉसुरी, मृदगादि बाजे देव बजाया करते है। इन्द्र हमेशा सेवामे तत्पर रहता है। आप महासुन्दर यौवन अवस्थामे विवाह किया, उनकी रानियॉ अद्भुत अनेक गुण एव कलाओं से पूर्ण, कुछ वर्षोंतक राज्यकर मनवांच्छित भोग भोगे, एकदिन बादलो को नष्ट होते देख वैराग्यको प्राप्त हुये, तब लोकान्तिक देवोने आकर स्तुति की, तब सुव्रतनाम के पुत्रको राज्य देकर आप महातप के लिये चले। कैसेहै भगवान? किसी वस्तुकी इच्छा नहीं, वीतराग भाव सहित देवो पुनीत पालकीपर चढकर विपुलनाम के उद्यान मे गये। वनमे पालकी से उतर अनेक राजाओ के साथ जिनेश्वरी दीक्षा धारण की। दो उपवासकर पारणा करने का नियम लिया। राजगृह नगर मे वृषभदत्त ने महाभक्ति से, श्रेष्ठ अन्नसे, भगवान का पारणा कराया। भगवान को क्षुधा की वेदना नहीं, परन्तु आगम की आज्ञा प्रमाण अन्तराय रहित आहार किया,

वृषभदत्त भगवान को आहार देकर कृतार्थ हुये। भगवान ने कुछ महिने तपकर चम्पा के वृक्षके नीचे शुक्लध्यान के प्रभाव से घातिया कर्मो का नाशकर केवलज्ञान को प्राप्तकिया। तब इन्द्रादि देवो ने आकर भगवान को नमस्कार कर दिव्यध्वनि को सुना, भगवान ने मुनिधर्म एव श्रावकधर्म का विधिपूर्वक वर्णनकिया। वाणी को सुनकर कोई मुनिबने कोई श्रावकबने, कोई तिर्यचो ने श्रावक के व्रतो को धारण किया एव देवो के व्रत नहीं, फिर भी कई देव सम्यक्त्व को प्राप्त हुये। श्रीमुनिसुव्रतनाथ भगवान का धर्मतीर्थ प्रवर्तन हुआ। सुर, असुर, मनुष्यो के द्वारा स्तुति करने योग्य अनेक साधुओ सहित पृथ्वीपर विहार किया। सम्मेदशिखर पर्वतपर निर्जरकूट से मोक्ष को प्राप्त हुये। यह श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामी का चारित्र जोप्राणी भावसहित सुने, पढे, चर्चाकरे उनके सपूर्ण पाप नाश होगे एव ज्ञान सहित तपसे मोक्षसुख को प्राप्त करते है। पुन. वहॉ से आगमन नहीं होता। मुनिसुव्रतनाथ के पुत्र राजासुव्रत बहुत काल राज्यकर दक्षपुत्र को राज्य देकर जिनदीक्षा लेकर सिद्ध हुये और दक्षके ऐलावर्धन पुत्र हुआ। उनके श्रीवर्धन, श्रीवृक्ष, सजयत, कुणिम, महारथ, पुलोम इत्यादि क्रम से अनेक राजा हरिवश मे हुये। कोई मोक्ष गये, कोई स्वर्ग गये, पुन उसी कुल मे एक राजा वासवकेतु मिथिला नगरी का स्वामी उसके विपुला नाम की पटरानी उनकापुत्र जनक सर्वनयो मे प्रवीण, राज्य प्राप्तकर प्रजा का पालन किया, जैसे पिता पुत्र को पाले। गौतमस्वामी कहते है। हे श्रेणिक! यह जनक की उत्पत्ति कही, जनक हरिवशी है।

दशरथकी उत्पत्ति आदि का वर्णन

अब ऋषभदेव के कुल मे राजा दशरथ हुये, उनके वशका वर्णन सुनो, इक्ष्वाकुवश मे श्रीऋषभदेव भगवान मोक्ष पधारे। उनके पुत्र भरत भी निर्वाण गये। ऋषभदेव के समयसे लेकर मुनिसुव्रतनाथ के समय तक बहुत काल बीता, उसमे असख्यात राजा हुये, कोई महादुर्धर तपकर निवार्ण गये, कोई अहमिन्द्र हुये, कोई महाऋद्धिके धारी इन्द्र हुये, कोई सामान्य देव हुये, कोई पाप के उदय से नरक मे गये, वह भी कुछ थोडे जीव। हे श्रेणिक! इस ससार मे अज्ञानीजीव चक्र के समान भ्रमणकरते है, कभी स्वर्ग के भोगो को प्राप्त करते है, एव भोगो मे मग्न होकर क्रीडा करते है। कोई पापी जीव नरक निगोद मे दुखो को भोगते है। यह प्राणी पुण्य पाप के उदय से अनादि अनन्तकाल तक भ्रमण करते है। कभी सुख, कभी दुख, विचार करके देखे तो दुख मेरुसमान और सुख राई समान है। कोई

धन से रहित हैं तो दुखी हैं, कोई बाल अवस्था में मरणकर दुखी है, कोई शोक करते है, कोई रोते है, कोई विवाद करते है, कोई पढते है, कोई रक्षा करते है, कोई पापी हिंसा करते है, कोई बोलते है, गीत गाते है, दूसरो की सेवा करते हैं, बोझा ढोते हैं, सोते है, निंदा करते है, क्रीडा करते है, कोई युद्धमे शत्रुओ को जीतते है, कोई शत्रुओ को पकडकर छोड देते हैं। कोई कायर युद्ध को देख भागजाते है। कोई शूरवीर पृथ्वी का राज्य करते है। पुन राज्य छोड़ वैराग्यको धारण करते है, कोई दूसरो को सताते है, परधन की इच्छाकर परधन को लूट लेते है। कोई दौडते है कोई छलकपट करते है पुन नरक मे जाते है। कोई लज्जा करते है, कोई शील पालते है, करुणाभाव करते है, क्षमाभाव धारण करते है। परधन को त्याग करते है, वीतरागता एव सतोष को धारण करते है, सभी जीवो को सुख देते है, वह जीव स्वर्ग के सुखो को प्राप्त कर, मोक्ष प्राप्त करते है। जो दान करते है, तप करते है, अशुभ क्रिया का त्याग करते है, जिनेन्द्रकी अर्चा, स्तुति वदना करते है। जिनशास्त्र की चर्चा करते है, सब जीवो से मैत्री भाव रखते है, ज्ञानियो का विनय करते है, वे उत्तम पदको प्राप्त करते है। कोई क्रोध करते है, कोई काम सेवन करते है, कोई राग, द्वेष, मोहके वशीभूत है, दूसरे जीवो को ठगते हैं, वे ससार सागर मे डूबते है, अनेक प्रकार के नृत्य करते है, रमते है, खेद खिन्न होकर, शोक करते है, झगडा करते हैं, असि, मसि, कृषि, वाणिज्यादि व्यापार करते है, ज्योतिषी, वैद्यक कुयत्र मत्र तत्रादि करते है, शृगारादिक शास्त्रो की रचना करते है, वृथा ससार मे घूमते है। इत्यादिक शुभ अशुभ कर्मसे आत्मधर्म को भूल रहे है। ये ससारी जीव चर्तुगति मे भ्रमण करते है। इस अवसर्पिणी काल में आयु, काय, बलादि घटता जाता है। श्रीमल्लिनाथ के मोक्ष जाने के बाद मुनिसुव्रतनाथ के अन्तराल मे इस भरतक्षेत्र के अयोध्या नगरी मे एक विजयनाम का राजा महाशूरवीर प्रजाके पालन मे प्रवीण शत्रुओ को जीतने वाला था। उसकी हेमचूलनी नाम की पटरानी उसके सुरेन्द्रमन्यु पुत्र हुआ। उसके कीर्तिसमा नामकी रानी उसके दो पुत्र एक वज्रबाहू दूसरा पुरन्दर। सूर्य समान दोनो भाई पृथ्वीपर रमण करते हुये सुख से रहते थे।

अथानंतर हस्तिनापुर का राजा इन्द्रवाहन उसके राणी चूडामणी पुत्री मनोदया महारूपवान उसकी वज्रबाहु से विवाह कराया, सो मनोदया का भाई उदयसुन्दर बहिन को लेने के लिये आया। वज्रबाहुका स्त्री से विशेष प्रेम राग वह

भी स्त्री के साथ ससुराल चला। मार्ग में बसन्तगिरी पहाड की परम शोभा देखकर राजकुमार अतिहर्ष को प्राप्त हुये। सुगन्धमय पवन, जहाँ भ्रमर गुंजार कर रहे है, वहाँ राजकुमार विचार करते है, यह आम्रवृक्ष है अथवा कर्णजातिका, एव पयालवृक्ष है या कोई दैदीप्यमान पुष्प है ऐसे वृक्षोकी शोभा देखते देखते राजकुमार की दृष्टि मुनिराज पर गई। देखकर सोचता है कि, यह स्थभ है, अथवा पर्वतका शिखर है, या कोई मुनिराज है? कायोत्सर्ग से खडे, जो मुनि उनको देखकर वज्रबाहु का विचार हुआ। कैसेहै मुनि? जिन्हे ठूँठ जानकर उनके शरीर से मृग भी खाज खुजालते है। जब राजा पास मे गया तब निश्चय किया कि यह महायोगीश्वर शरीर से ममता त्याग कायोत्सर्ग ध्यान से स्थिररूप खडे है, सूर्य के सन्मुख भुजाओ को लटकाये, सुमेरुसमान अचल, नासिका के अग्रभाग में लगी है दृष्टि इनकी, तप से शरीर क्षीण है, परन्तु काति से पुष्ट दिखते है, एवं आत्मा का एकाग्र मनसे चितवन करते है। ऐसे मुनि को देखकर राजकुमार ने चिन्तवन किया, अहो धन्य है, यह महामुनि, शाति भाव के धारक सर्वपरिग्रह को छोडकर, मोक्षाभिलाषी होकर तप करते है, इनको निर्वाण अतिपास है, स्वकल्याण मे रत, परजीवो की पीडा से रहित, मुनिपद की क्रिया से मंडित, शत्रु-मित्र, तृण-कचन, रत्न, पाषाण सब समान, मान ईर्ष्या से रहित, मन इन्द्रियको जीतने वाले, निश्चल पर्वतसमान वीतराग भाव, इनको देखने मात्रसे जीवोका कल्याण होता है। इस मनुष्य शरीर का फल इन्होने प्राप्त किया। ये मुनि विषय कषायों से नहीं ठगाये गये है। मै महापापी कर्मो से निरन्तर बधा, जैसे चन्दन का वृक्ष सर्पोसे वेष्टित होता है। ऐसे मै विषयो मे फसकर अज्ञानी हो रहा हूँ। धिक्कार है मुझे, मै भोगादि रूप जो महापर्वत के शिखरपर निद्रा ले रहा हूँ सो नीचे ही गिरूँगा। इसलिये मै मुनिबनु तो मेरा जन्म सफल होगा। ऐसा चिन्तवन करते हुये वज्रबाहू की दृष्टि मुनिराज पर दृढहुई। मानो खम्भे से बधी। तब उनका उदयसुन्दर साला इनकी निश्चल दृष्टि देख हँसता हुआ, हँसी के वचन कहने लगा, कि आप मुनिकी ओर एकाग्र दृष्टि से देख रहे हो, तो क्या आपभी दिग्म्बरी दीक्षा धारण करोगे? तब वज्रबाहु बोले जो हमारा भाव था, वह तुमने प्रगट किया, अब आप वैराग्य की ही चर्चा करो। तब वह इनको भोगी जानकर हँसी मजाक से बोला कि आप दीक्षा धारोगे, तो मै भी दीक्षा धारण करूँगा। परन्तु इसदीक्षा से आप अत्यन्त उदास होगे। तब वज्रबाहू ने कहा, ऐसे ही सही। यह कहकर

विवाह के आभूषण उतारकर फेक दिये और हाथी से उतरे, तब उनकी रानी मनोदया रोने लगी, मोती समान ऑखों मे ऑसू बहाती रही एवं भाई उदयसुन्दर भी ऑसू बहाता हुआ कहता है। हे देव! यह हॅसी मजाक मे क्या कररहे हो? तब वज्रबाहु अतिमधुर वचन से साला एवं पत्नि को शातिसे कहने लगे। हे कल्याणरुपे! आप समान मेरा उपकारी कौन, मै कूए में गिरनेवाला था सो आपने बचाया। तुम्हारे समान मेरा तीनलोक मे कोई मित्र नहीं। हे उदयसुन्दर! जिसने जन्म लिया है वह अवश्य मरेगा और जो मरेगा वह अवश्य जन्म लेगा, यह जन्म मरण रहट की घडी के समान है उसमे ससारी जीव निरन्तर भ्रमण करते है, यह जीवन बिजलीकी चमकसमान है। अथवा जलकी तरग व सर्पकी जीभसमान चंचल है। यह जगत के जीव दुखसागर मे डूब रहे है ससार के भोग स्वप्नसमान असार है जलकी बिदु समान शरीर है सध्या की ललाई समान जगत का स्नेह है, यह यौवन फूलसमान कुमला जाता है, यह आपका हसना भी हमको अमृत समान कल्याणरूप हुआ। हसी से औषधी पिये तो, क्या रोग नहीं नाश होता है अवश्य होता ही है, और आपने मेरेको मोक्षमार्ग मे सहायता की है। इसलिये आपके समान मेरे ओर कोई हितकारी मित्र नहीं है। मै ससार मे आसक्त हो रहा था पचेन्द्रियो के विषयो मे लीन था। सो अब आपके निमित्त से वीतराग-वैराग्य भाव को प्राप्त हुआ। अब मै जिनदीक्षा धारण करूॅगा, आपकी जो इच्छाहो वह करो। ऐसा कहकर, सब परिवारसे क्षमाकराकर महातपरूपी धन के स्वामी गुणवान मुनिश्रीगुणसागरमुनि के पास जाकर, चरणो मे नमस्कार कर विनय सहित हाथ जोडकर कहा—हे स्वामी! आपके निमित्त से मेरा मन पवित्र हुआ। अब मै ससाररूपी कीचडसे निकलना चाहता हूॅ। तब गुरु ने वज्रबाहु के वचनसुन आज्ञा दी, तुमको भवसागर को पार करनेवाली यह जिनदीक्षा है। कैसेहैगुरु? सातवे गुणस्थान से छठे गुणस्थान मे आये है। गुरुकी आज्ञा हृदय मे धारणकर वस्त्राभूषण त्याग, अपने हाथो से केशलोच कर पल्यकासन से विराजमान हुये। इस शरीर को नश्वर जान, राग त्यागकर राजपुत्री को छोड मोक्ष को देनेवाली जिनदीक्षा को धारण किया। और उदयसुन्दर सहित छब्बीस राजकुमारो ने जिनदीक्षा धारण की। वे राजकुमार कामदेव समान रूपके धारी, राग द्वेष, मोह, मद, मान के त्यागी, वैराग्य रूप तप के अनुरागी, परमोत्साह से भरे, नग्न दिगम्बर भेष को धारण किया। यह देख वज्रबाहु की रानी मनोदया पति और भाई

के स्नेह से रुदन करने लगी, पुन मोह छोड सर्व वस्त्राभूषण त्यागकर एक सफेद साडी पहनकर आर्यिका के व्रतको धारण किया। यह वज्रबाहू की कथा इनके दादा, राजा विजय ने सुनी और राजसभा के मध्य बैठे हुये शोक से दुखी होकर कहने लगे। देखो, यह आश्चर्य है, कि मेरा पोता बाल अवस्था मे विषयो को विषसमान जान मुनिहुआ। और मै मूर्ख विषयो का लोलुपि वृद्ध अवस्था मे भी भोगोको नहीं छोड सका। कुमारने कैसे छोडे? वह महाभाग्यवान जो भोगो को तृणवत् छोडकर मोक्ष के लिये शात भावो मे लीन हुआ। मै मदभागी जरा से पीडित हूँ, इन पापी विषयो ने मुझे मोहितकर चिरकाल से ठग लिया। कैसेहै येविषय? देखने मे तो अतिसुन्दर, परन्तु फल इनके अतिकटु होते है। मेरे इन्द्रनीलमणी समान श्यामकेश वे अब कफके समान सफेद हो गये। मेरा यह यौवन शरीर, सुन्दरनेत्र, लम्बीभुजाये, वृद्धता के कारण चित्राम के समान हो गये है। जो धर्म, अर्थ, काम, तरुण अवस्था को छोड अब बुढापा से मडित, पापी, दुराचारी, प्रमादी बनकर शिथिलता को प्राप्त हुआ हूँ। अनादिकाल से झूठाघर झूठीमाया, झूठीकाया, झूठेमानव बधु, झूठे परिवार उनके स्नेह से ससाररूपी सगरमे भ्रमण किया। ऐसा कहकर सब परिवार से क्षमा कराकर, छोटा पोता पुरदर उसे राज्य देकर अपने पुत्र सुरेन्द्रमन्यु सहित राजा विजय ने वृद्ध अवस्था मे निर्वाणघोषस्वामी के पास जिनदीक्षा को धारण किया, कैसाहै राजा? महाउदार।

अत पुरदर राजा राज्य करता है उसके पृथ्वीमती रानी उनके कीर्तिधर नाम का पुत्र हुआ वह गुणो का सागर पृथ्वीपर विख्यात विनयवान क्रम से यौवन अवस्था मे आया। सब परिवार को आनन्द बढाता हुआ, अपनी सुन्दर क्रीडाओ से सबके मनका प्रिय बना। राजा पुरन्दर ने अपने पुत्र का राजा कौशल की बेटी से विवाह कराया। एव अपने पुत्र को राज्य देकर राजा पुरदर क्षेमकरमुनि के समीप मुनिव्रत को धारण किया और कर्म निर्जरा के लिये महातप किया। राजा कीर्तिधर कुल क्रम से चला आया जो राज्य उसे प्राप्त कर शत्रुओ को वश करता हुआ, देवो समान उत्तम भोग भोगता रहा। एक दिन राजा कीर्तिधर प्रजा के पालक सिहासन पर बैठे थे तब सूर्य ग्रहण देख चित्त मे चिन्तवन करने लगे कि देखो यह सूर्य जो ज्योति का मडल है फिर भी राहु विमान के योग से श्याम हो गया है यह सूर्य ज्योति रूप प्रताप का स्वामी अधकार को नाशकर प्रकाश करता है और चद्रमा का बिंब भी सूर्य के प्रताप से काति रहित लगता है, वह सूर्य राहु के विमान

से मद ज्योतिवान लगता हैं उदय होता ही सूर्य ज्योति रहित हो गया है इसीलिये ससार की दशा अनित्य है यह जगत के जीव विषयाभिलाषी रक समान मोहरूपी राग से रगे अवश्य ही काल के वश होकर मरेगे, ऐसा विचारकर यह महाभोग संसार की अवस्था को क्षणभगुर जान मत्री पुरोहित सेनापति आदि से कहा कि यह समुद्रपर्यत पृथ्वी के राज्य की तुम अच्छी तरह रक्षा करना, मै मुनि वेषको धारण करूँगा। तब सभी विनतीकर कहने लगे—हे प्रभो! आपके बिना पृथ्वी की रक्षा हमारे से नहीं होगी, आप शत्रुओ को जीतने वाले है, आप प्रजा पालक है, अभी आप यौवन है, इसीलिये यह इन्द्र समान राज्य कुछ दिन करो। इस राज्य के स्वामी आप ही हो, यह पृथ्वी आपसे ही शोभायमान है, तब राजा बोले यह ससार अटवी महादीर्घ है उसे देखकर मुझे महाभय उत्पन्न हो रहा है। कैसीहै यह भवरूपीअटवी? अनेक दुखरूपी फल ऐसे कर्मरूपी वृक्षो से भरी है, और जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, रति, अरति, इष्ट, वियोग, अनिष्ट सयोग रूप, अग्नि से प्रज्वलित है, तब मत्री आदि ने राजा को विरक्त जान, कोयले के ढेर सामने रखा उसके बीच मे एक वैडुर्यमणि ज्योति का पुज अमूल्य रत्न रखा, मणि के प्रभावसे वे कोयले प्रकाश रूप हो गये। पुन मणि उठाली तब वे कोयले अच्छे नहीं लगे, तब मत्रियो ने राजा से विनतीकर कहा, हे देव! जैसे यह लकडी का कोयला रत्न बिना नहीं शोभता ऐसे ही आपके बिना हमारी शोभा नहीं। हे नाथ! आपके बिना प्रजा के लोग अनाथ हो जायेंगे मारे जायेगे लूटे जायेगे। अत प्रजा के नष्ट होते ही धर्म का अभाव होगा इसीलिये जैसे आपके पिता ने आपको राज्य देकर मुनि हुये, ऐसे आप भी अपने पुत्र को राज्य देकर जिन दीक्षा धारण करना। इस प्रकार प्रधान पुरुषो ने विनती की तब राजा ने यह नियम लिया की जो मै पुत्र का जन्म सुनू उसी दिन मुनिव्रत को धारण करूँगा! यह प्रतिज्ञाकर इन्द्र समान भोगो को भोगता रहा, प्रजा को सुख देता हुआ राज्य किया, उसके राज्य मे प्रजाको किसीका भय नहीं। एक समय राजा, रानीसहदेवी सहित शयन कर रहे थे, सो रानी को गर्भ रहा। सर्व गुणो का पात्र पुत्र गर्भ मे आया। पृथ्वी के प्रतिपालन मे समर्थ जब पुत्र का जन्म हुआ तब रानीने पति को वैराग्य होने के भय से पुत्र का जन्म प्रकट नहीं किया। कुछ दिन यह बात गुप्त रही, लेकिन जैसे सूर्य के उदय को कोई छिपा नहीं सकता, ऐसे राजा के पुत्र का जन्म कैसे छिपे? किसी दरिद्र मनुष्यने धन के लोभ से राजा को कहा। तब राजा ने

मुकुटादि सर्व आभूषण शरीर से उतारकर उसे दिये, एव घोषशाखा नगर, महारमणीक अति धन की उत्पत्ति का स्थान, सौ गॉव सहित दिया। और पुत्र पन्द्रह दिन का माता की गोद मे था, उसे तिलककर राज्य दिया। जिससे अयोध्या अति शोभायमान हुई। अयोध्या का नाम कौशल भी है इसीलिये राजकुमार का नाम सुकौशल प्रसिद्ध हुआ कैसाहै सुकौशल? सुन्दर आकृति का धारी। सुकौशल को राज्य देकर राजा कीर्तिधर घररूपी बदी गृह से निकलकर तप करने वन मे गये। मुनिपद को धारण किया तप से उत्पन्न हुआ जो तेज उससे जैसे मेघ पटल से रहित सूर्य सुशोभित हो ऐसी शोभारूपी ज्योति को प्राप्त हुये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे वज्रबाहु एव कीर्तिधरका माहत्मय वर्णन करनेवाला इक्कीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-22

सुकौशल का दीक्षा लेना और भयंकर उपसर्ग सहकर इष्ट की प्राप्ति करना

अथानतर कई वर्षो के पश्चात् कीर्तिधर मुनि पृथ्वीसमान क्षमाके धारी, मान, इर्षासे रहित, उदार भावोसे, तप करते शरीर को कृष करनेवाले, चारहाथ जमीनको देखकर नीचीदृष्टि से विहार करने वाले, ऐसे साधु कीर्तिधरमुनि जीव दयाके रक्षक धीरे धीरे गमन करते हुये सर्वविकार रहित, महाज्ञानी, लोभ रहित, पचाचार के पालक, जीवो के रक्षक, रागरहित, शरीर सस्कार स्नानादि से रहित, मुनिव्रत की शोभा से सहित, ऐसे मुनि बहुत दिनो के उपवासे आहार के लिये नगर मे पारणा करने आये। उनको देखकर रानी पापिनी सहदेवी उनकी स्त्री मन मे विचार करती हुई सोचने लगी कि इनको देख मेरा पुत्र भी वैराग्य को प्राप्त न हो जाए। तब महा क्रोध से लालमुखकर द्वारपालो से कहा कि ये यति, नग्न, मलीन, घर को नाश करने वाले है, इन मुनिको नगरसे बाहर निकालो, फिर से नगर मे नहीं आये। मेरा पुत्र सुकौशल, भोला कोमल चित्त है, उसे मुनिको देखने नहीं देना। इन मुनिराज के अलावा और भी कोई मुनिराज हमारे

नगर मे नहीं आये। हे द्वारपालों! इस बातमे अगर तुम्हारी भूल हुई तो तुम्हारा निग्रह करुँगी। जब से ये मुनि दया रहित होकर बालक को छोडकर मुनि हुआ तब से इस दिगम्बर भेष का मेरे आदर नहीं है। यह भेष राज्य लक्ष्मी को छुडाकर लोगो को वैराग्य प्राप्त कराता है, भोगो को छुडाकर योग सिखाता है, जब रानी ने ऐसा कहा, तब उन क्रूर द्वारपालों ने हाथ मे बेत की छडी लेकर मुनिको कटु वचन कहकर नगर से बाहर निकाल दिया। और भी साधु आहार के लिये नगर में आये थे उन्हें भी निकाल दिया। मेरा पुत्र कहीं धर्मश्रवण नहीं करले इसभय से नगरमे मुनियो का आना बद कर दिया। इस प्रकार कीर्तिधर मुनि का अविनय देख राजासुकौशल की धाय महाशोक से रोने लगी। तब राजा सुकौशल धायको रोती हुई देखकर पूछने लगे। हे माता! तेरा अपमान करे ऐसा कौन है? माता तो मेरी गर्भ धारण मात्र है, और तेरे दूध से मेरा शरीर वृद्धि को प्राप्त हुआ है, इसीलिए तू मेरी माता से भी अधिक है। जो मरना चाहता है वहही तुझे दुख दे सकता है। मेरी माता ने भी अगर आपका अपमान किया हो, तो मै उसका भी अनादर करुँगा औरो की क्या बात? तब बसन्तलता धाय ने कहा। हे राजन! तेरा पिता तुझे बाल अवस्था मे राज्य देकर, ससाररूपी वनसे निकलकर मुनि दीक्षा लेकर, तपके लिये वनमे गये। सो वह आज इस नगर मे आहार को आये थे। तब आपकी माताने द्वारपालो से आज्ञाकर नगर से निकाल दिया। हे पुत्र! वे हम सबके स्वामी है, उनका अविनय मै देख नहीं सकी, इसीलिए मै रो रही हूँ। आपकी कृपासे मेरा अपमान कौन कर सकता है? और साधुओ को देखकर मेरा पुत्र वैराग्य को कहीं प्राप्त हो जाय ऐसा जानकर मुनियो का नगर प्रवेश निषेध किया। आपके गोत्र मे मुनिधर्म परम्परा से चला आया है, कि पुत्रको राज्य देकर पिता वैरागी होते है। और आपके घरसे आहारबिना कोईसाधु भूखे नहीं गये है। यह वृतान्त सुन राजा सुकौशल मुनिके दर्शनको महलसे उतर, छत्र चमर वाहनादि राजचिन्ह को छोडकर कमल से भी अतिकोमल चरण, सो नगे पैर ही मुनि के दर्शन को दौडते हुये गये। और लोगों से पूछने लगे कि आपने मुनि को देखा? इसप्रकार परमअभिलाषा युक्त अपने पिता जो कीर्तिधर मुनि उनके पास गये और इनके पीछे-पीछे छत्र चमरवाले सब दौडते हुये आये। महामुनि वनमे शिलापर विराजमान थे। सो राजा सुकौशल ऑसुओ से नेत्र भरे, शुभ है भावना जिसकी, हाथ जोड नमस्कार कर बहुत विनय से मुनि के चरणो मे खडे होकर

मन मे सोच रहे है कि द्वारपालो ने ऐसे महामुनि को नगर से निकाले, उस लज्जा से युक्त होकर मुनिराज से विनती करते है। हे नाथ! जैसे कोई पुरुष आग लगी घर मे सोया हुआ हो उसे कोई ऊँचे शब्दो से जगाता है, ऐसे संसार रूपी ग्रह, जन्म मरणरूपी अग्नि से प्रज्वलित उसमे मै मोहरूपी निद्रा से सोया हुआ था, सो आपने मुझे जगाया। अब कृपाकर यह आपकी दिगम्बरी दीक्षा मुझे दो। यह कष्ट का सागर जो ससार उससे मुझे निकालो। ऐसे वचन राजा सुकौशल ने मुनिराज से कहे। तब ही सभी सामन्त लोग एव रानी विचित्रमाला गर्भवती थी, वह भी अतिकष्ट से विषादयुक्त, सभी प्रजा सहित आई। सुकौशल को दीक्षा के भाव देखकर अन्तपुर के एव प्रजा के लोग शोक करनेलगे, जब राजा सुकौशल ने कहा। यह रानी विवित्रमाला के गर्भ मे जो पुत्र है, उसे मैंने राज्य दिया। ऐसा कहकर आशारूपी फॉसीको एव स्नेहरूपी पींजरे को तोड, स्त्रीरूपी बधनोसे छूट राज्यको नश्वरजान वस्त्राभूषण एव बाह्य अभ्यंतर परिग्रह को छोड केशलोंच किया, एव कीर्तिधर मुनि (इनकेपिता) के पास जिनदीक्षा को धारण किया। पच महाव्रत, पच समिति, तीन गुप्ती को अगीकार कर सुकौशल मुनि गुरु के साथ विहार किया एव उनकी माता सहदेवी, आर्तध्यान से मरकर तिर्यच योनि मे शेरनी हुई और ये पिता और पुत्र दोनो मुनि महा विरक्त एकस्थानपर रहते नहीं, इसीलिए पिछले पहर दिनमे जीव जन्तु रहित प्रासुक स्थान देखकर बैठ जाते थे और चातुर्मास मे साधुओ को विहार नहीं करना। सो चातुर्मास जानकर एक स्थानपर रहे। दशो दिशाओ मे अधकार को लेकर मेघो का समूह आकाश मे फैला। पृथ्वीजलरूप हुई। जगह जगह कमलखिले, भ्रमर गूज रहे है, अजनगिरी समान अधकार से जगत व्याप्त हो गया। बादलों के गरजने से मानो चाद सूर्य डरकर छिप गये है, अखडजल की धारा से पृथ्वीपर जलही जलहो गया, जलके प्रवाहसे पृथ्वी ऊँची नीची हो रही है। अनेक तरह की वनस्पतियॉ उत्पन्न होकर अपना डेरा जमाया है। जगह जगह इन्द्रधनुष दिख रहे है, बिजली का तेज हो रहा है, मेघ के शब्दो से हिरणियॉ दुखी हो रही है ऐसे वर्षाकाल मे जीवदया के रक्षक महा शात अनेक निर्ग्रन्थ मुनि जन्तु रहित प्रासुक स्थान मे, चारमहीनो के उपवासकर विराजमान हुये और जो गृहस्थ श्रावक साधु सेवा मे तत्पर वह भी चारमहीना गमन का त्यागकर अनेकप्रकार के नियमो को धारण किया। ऐसे वर्षाकाल मे दोनो मुनि महातपस्वी श्मशान मे चारमहीने के उपवासकर वृक्षके

नीचे विराजे, कभी पद्मासन, कभी कायोत्सर्ग, कभी वीरासनादि अनेक आसनो से चातुर्मास पूर्ण किया। कैसाहै श्मशान? वृक्षोंके अंधकार से महागहन है और सिह व्याघ्र रीछ श्याल सर्प इत्यादि अनेक दुष्टजीवों से भरा है भयकर जीवो को भी डर लगने वाला महा घनघोर वन है। गिद्ध, चील आदि जीवो से भरा है अर्धजले मृतक जीवो का स्थान है। महा भयानक विषमभूमि मे मनुष्यो के सिर के कपालो के समूह से पृथ्वी श्वेतहो रही है, और दुष्ट शब्द करते हुये भूत पिशाच आदि भ्रमण करते है, जहाँ भयकर पत्थर कॉटो के समूह है, वहाँ ऐसी जगह पर पिता पुत्र दोनों मुनियो ने धीर वीर पवित्र मनसे चारमहीने चातुर्मास के पूर्ण किये।

अथानंतर वर्षाऋतु गई, शरदऋतु आई, मानो रात्रि पूर्ण हुई प्रात काल हुआ। शरदऋतु मे सूर्य बादलो से रहित कान्ति को प्राप्त हुआ। जैसे उत्सर्पिणी काल का जो दुखमाकाल उसके अन्त मे दुखमा सुखमा के आदिमे ही श्रीजिनेन्द्रदेव प्रगट होते है। शरदऋतु मे मनुष्य महा उत्साह . प्रसन्न रहते है, कार्तिकशुक्ला पूर्णिमा के पश्चात उन दोनो मुनिराज ने जैनतीर्थों की वदना के लिए विहार किया। चातुर्मास पूर्णकर दोनो मुनिराज इर्या समिति सहित पारणा के लिए नगरकी ओर आये, और वह सहदेवी सुकौशल की माता मरकर शेरनी हुई थी, वह पापिनी महाक्रोधी खून से लाल है बालो के समूह जिसके, विकराल मुख तीक्ष्ण दाढ, सिर पर धरी है पूछ, नखो से अनेक जीवो को मारा है, भयकर शब्द करती, लहलहाट कर रहा है लाल लाल जीभ का अग्रभाग, मध्याह्न के सूर्य समान तप्तायमान, ऐसी वह पापिनी सुकौशल स्वामी को देखकर महावेग से उछल कर आई। उसे आती देख दोनो मुनि सर्व अवलम्बन रहित कायोत्सर्ग रूप ध्यान मे खडे रहे। उस पापी सिहनी ने सुकौशल स्वामी का शरीर नखो से विदारा। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे राजन! देखो ससार का चरित्र, जहाँ माताही पुत्रके शरीरका भक्षण करती है, इसके समान और क्या कष्ट, पूर्व जन्म के स्नेही बन्धुही कर्मके उदयसे बैरी हो जाते है। तो भी सुमेरु से अधिक स्थिरता को प्राप्तकर सुकौशल मुनि शुक्लध्यान के कारण केवलज्ञानको प्राप्तकर अन्तकृत केवली हुये। तब इन्द्रादिक देवोने आकार ज्ञान एव मोक्ष कल्याण की क्रिया की। और सिहनी को कीर्तिधर मुनिने धर्मोपदेश देकर सम्बोधन किया, हे पापिनी! तू सुकौशल की माता सहदेवी थी, पुत्रसे तेरा अधिक स्नेह था, उसका शरीर तूने नखो से विदारा। तब वह शेरनी जातिस्मरण के कारण पूर्वभव यादकर

दुखी हो श्रावक के व्रत ग्रहणकर सन्यास धारण किया, और मरकर स्वर्ग मे गई। कीर्तिधर मुनिराज को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, केवलज्ञानकी पूजाके लिये सभी देव आये और केवलीभगवान की पूजा कर अपने स्थान गये। ये सुकौशल मुनि के महात्म्य को जो कोई पुरुष पढे पढाये सुने सुनाये वह सर्व उपसर्ग से रहित होकर सुख से चिरकाल तक जीवित रहते है। सुकौशल की रानी विचित्रमाला के शुभ लक्षणो वाला पुत्र हुआ, जब पुत्र गर्भ मे आया, तब से ही माता के शरीर की ज्योति स्वर्ण समान हुई, इसिलिये पुत्र का नाम हिरण्यगर्भ पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ, वह हिरण्यगर्भ ऐसा राजा हुआ मानो अपने गुणो से पुन ऋषमदेव का समय ही प्रगट किया हो। राजाहरिकी पुत्री अमृतवती महामनोहर उससे हिरण्यगर्भ ने विवाह किया। राजा अपने मित्र एव परिवार सहित पूर्ण द्रव्य का स्वामी, मानो स्वर्णका पर्वतही है। सर्व शास्त्रो को पारगामी, देवो समान उत्तम भोग भोगते रहे। एकसमय दर्पणमे राजा अपना मुख देख रहे थे, उसमे एक सफेदबाल देखा तब चित्तमे चिन्तवन किया कि, यह काल का दूत आया। बलात्कार यह बुढापा, शरीर की काति को नाशकर आगोपाग शिथिल करेगा। यह चन्दन के वृक्ष समान मेरा शरीर अब बुढापारूपी अग्निसे जल जायेगा। यह जरा छिद्र देख रहा है, सो समयपर मेरे शरीर मे प्रवेशकर बाधा करेगा। और कालरूप सिह दीर्घकाल से मेरे भक्षण का अभिलाषी हुआ, वह अब मेरे शरीर को बलात्कार कर भक्षण करेगा। धन्य है वे पुरुष जो कर्मभूमिको प्राप्तकर तरुण अवस्था मे व्रतरूपी जहाजपर चढकर भवसागर से तिरते है। ऐसा चिन्तवनकर रानी अमृतवती का पुत्र नघोष, उसे राज्य देकर विमलमुनि के पास दिगम्बर भेष को धारण किया। यह नघोष जबसे माताके गर्भमे आया था, तब से कोई पाप का वचन नहीं कहता। इसीलिये नघोष पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ। नघोष राजा गुणो का पुज उसके सिहका नामकी रानी उसको, अयोध्या की रक्षा सौपकर उत्तरदिशा के राजाओ को जीतने चला। तब राजाको दूर गया जान दक्षिणदिशा के राजा बडी सेनाओ के स्वामी, अयोध्या लेनेको आये। तब रानी सिहिंका बडी सेना सहित युद्ध करने चली। सब शत्रुओ को रणमे जीतकर अयोध्या की रक्षा की। एव अनेकसेना को लेकर दक्षिण दिशा मे राजाओ को जीतने के लिये गई। शस्त्र और शास्त्र विद्या की अभ्यासी। अपने प्रताप से दक्षिणदिशा के सामन्तो को जीतकर जय जय शब्दो की ध्वनिसे पुन अयोध्या मे प्रवेश किया। एव राजा नघोष उत्तर दिशाको

जीतकर आये, एव रानी का पराक्रम सुन क्रोध को प्राप्त हुये। मन में विचार किया की जो कुलवती स्त्रीयॉ अखड शील को पालने वाली, उनमें ऐसी कठोरता नहीं होगी। ऐसा निर्णयकर रानी सिहिंका से उदास हुये। यह पतिव्रता महाशीलवती पवित्र है मन उसका, राजाने रानी को पटरानी पद से हटा दिया। रानी दरिद्रता को प्राप्त हुई।

अथानंतर कुछ समय बाद राजा को महादाह उत्पन्न करने वाला बुखार हुआ। सभी वैधोने बहुत इलाज किया। पर राजाको कोई औषधी काम नहीं की। दिन प्रतिदिन स्वास्थ्य बिगडता गया। तब रानी सिहिका राजाका रोग बढता हुआ देखकर दुख से व्याकुल हुई। एवं अपनी शुद्धता के लिये यह पतिव्रता रानी, पुरोहित, मत्री, सामन्तादि सबको बुलाकर अपने हाथका जल पुरोहित को दिया। और कहा कि यदि मै, मन, वचन, काय से पतिव्रता हूँ तो मेरे हाथके इसजल से सींच्चा राजा दाहज्वर रहित होवे। रानीके हाथके जलसे, छींटे लगते ही राजा का दाह ज्वर नष्ट हुआ और शरीर शीतल हुआ, और राजा ने अपने मुख से कहा कि रानी सिहिका पतिव्रता महाशीलवती धन्य है, धन्य है इसीप्रकार आकाशवाणी हुई प्रजा के लोगों ने भी धन्य धन्य कहा। आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई। तब राजा ने रानीको महाशीलवती पतिव्रता जान पुन· पटरानी का पद दिया, एवं बहुत समय निष्कंटक राज्य किया। पुन अपनी परम्पराको मनमे धार ससारकी माया से निस्पृह होकर सिहिका रानी का पुत्र सौदास को राज्य देकर आप धीर वीर मुनिके व्रतोको धारण किया। जो कार्य बडे बडे राजा अपने कुल मे करते थे, अपने पुत्रों को राज्य देय पिता दीक्षा लेते थे ऐसा ही इन्होने किया। राजा सौदास राज्य करता, वह पापी मासहारी हुआ इनके वशमे किसीने अभक्ष्य आहार नहीं किया, यह दूराचारी अष्टान्हिका आदि पर्वोमे भी अभक्ष्य मासादिका आहार नहीं छोडता। एक दिन रसोईदार से कहा कि मेरे मांस भक्षण करने की इच्छा हुई है। तब रसोईये ने कहा। हे महाराज! अभी अष्टान्हिका के दिन है सभी लोग भगवान की पूजा मे एव व्रत नियमो मे तत्पर है, पृथ्वीपर धर्म का प्रकाश और प्रचार, प्रसार हो रहा है। इन दिनों में यह वस्तु खाने योग्य नहीं है। तब राजा ने कहा, इसके बिना मेरा मन मानेगा नहीं। इसीलिये यह वस्तु मिले ऐसा उपाय करो? रसोईदार ने राजाकी यह दशादेख नगरके बाहर गया। और उसी दिनका मरा हुआ, एकबालक को देख उसे कपडे मे लपेटकर ले आया। और

स्वादिष्ट वस्तुओ से पकाकर राजा को भोजन कराया। वह राजा महादुराचारी, पापी, अभक्ष्य का भक्षणकर प्रसन्न हुआ। और रसोईयो से एकान्त मे पूछता है कि हे भद्र! यह मास तू कहॉ से लाया। अब तक ऐसा मास मैने भक्षण नहीं किया। तब रसोईदार ने अभय दान मॉग यथावत् कहा। तब राजाने कहा ऐसा ही मास हमेशा लाया करो। तब रसोईदार नित्य बालको को लड्डू बाटता। लड्डूओ के लालच से बालक निरन्तर आते, सो बालक सभी लड्डू लेकर जाते, और पीछे जो रह जाता, उसे रसोईदार पकडकर ले आता, और मार कर राजा को भक्षण कराता। प्रतिदिन नगर मे बालक कम होने लगे, यह वृतान्त लोगो ने जाना, तब रसोईदार सहित राजाको देशसे निकाल दिया। राजाकी रानी कनकप्रभा उसका पुत्र सिहरथ उसको राज्य दिया। वह राजा सौदास पापी सभी जगह ढुकराता हुआ महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण किया करता। जो लोग मरे हुये बालको को श्मशान मे डाल आते, उनका भक्षण करता, जैसे सिह मनुष्यो का भक्षण करे। पृथ्वीपर इसका नाम सिह सौदासप्रसिद्ध हुआ। पुन सिहसौदास दक्षिणदिशा मे गया, वहॉ मुनिके दर्शन एव धर्मश्रवणकर श्रावक के व्रतो को धारण किया। पुन. एक महापुर नगर का राजा मर गया उसके कोई पुत्र नहीं था, तब सबने विचार किया कि, पाटहाथी जाकर जिसको अपने ऊपर बैठाकर लाये वही राजा होगा। तब हाथी सिहसौदास को अपने ऊपर बिठाकर ले आया उसको राज्य दिया। यह न्याय सयुक्त राज्य करता और पुत्र के निकट दूत भेजा कि तू मेरी आज्ञा मान, तब पुत्रने लिखा कि तू महापापी निद्य है, मै तुझे नमस्कार नहीं करूँगा। यह पुत्रसे युद्ध करने चला। इसे आता हुआ सुन नगरके लोग भागने लगे, कि यह मनुष्यो को खायेगा। पुत्र और पिता का महायुद्ध हुआ उसने पुत्र को युद्ध मे जीत दोनो जगह का राज्य पुत्र को देकर आप महा वैराग्य को प्राप्त हो कर तपके लिय वनमे जाकर मुनि बने। उनके पुत्र सिहरथ, उनके पुत्र ब्रह्मरथ, चतुर्मुख, हेमरथ, सत्यरथ, पृथुरथ, पयोरथ, दृढरथ, सूर्यरथ, मानधाता, वीरसेन, पृथ्वीमन्यु, कमलाबधु, रविमन्यु बसन्ततिलक, कुवेरदत्त, कुन्थुभक्त, कीर्तिका धारी उसके शतरथ, वीररथ, द्विरदरथ, सिहदमन, हिरण्यकश्यप, पुजस्थल, उसके ककुस्थल उनके रघुराजा ऐसे सभी राजा महापराक्रमी थे. सभी राजा अपने अपने पुत्रो को राज्य देकर वैरागी हुये। यह इक्ष्वाकुवश श्रीऋषभदेव से चला आ रहा है। इसवशकी महिमा हे श्रेणिक! तुझे कही। ऋषभदेव के वश मे श्रीरामचन्द्र पर्यत

अनेक बडे बडे राजा हुये, वह मुनिव्रतो को धारणकर मोक्ष गये। कोई अहमिन्द्र हुये, कोई स्वर्ग मे देव हुये, इस वश मे पापी कोई विरले ही हुये। पुन अयोध्यानगर मे राजारघु के अनरण्य नामके पुत्र हुये उनके प्रतापसे जगलमे भी नगरों की रचना हुई, राजा अनरण्य के पृथ्वीमती रानी गुणवती, रूपवती, महापतिव्रता उनके दो पुत्र हुये, दोनो महा शुभलक्षणो के युक्त एकअनन्तरथ, दूसरा दशरथ। राजा सहस्त्ररश्मि महिष्मति नगरी का स्वामी एव राजा अनरण्य की परममित्रता थी, मानो ये दोनो सौधर्म ईशान इन्द्र ही है। जब रावणने युद्धमे सहस्त्ररश्मि को जीता तो उसने मुनिव्रत को धारण किया। सहस्त्र रश्मि के एवं अनरण्य के वचन था कि तुम पहले वैराग्य धारो तो मुझे बताना और मै धारुँगा तो तुम्हे बताऊँगा। इसिलिये सहस्त्ररश्मि ने दीक्षा ली तो अनरण्य को बताया। तब राजा अनरण्य ने सहस्त्ररश्मि को मुनि हुआ जान दशरथ पुत्र को राज्य देकर आप अनन्तरथ पुत्र सहित अभयसेन मुनि के पास जिन दीक्षा धारण की। महातप से कर्मो को नष्टकर मुक्ति को प्राप्त हुये। और अनन्तरथमुनि सर्व परिग्रह रहित पृथ्वीपर विहार करते रहे। बाईस परिषह को सहन करनेवाले किसी प्रकार उद्वेग को प्राप्त नहीं हुये। इसिलिये अनन्तवीर्य नाम पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ। राजा दशरथ राज्य करते, महासुन्दर शरीर अतिशोभायमान अनेक प्रकार की भेट देकर प्रजा के लोग राजा की आज्ञा स्वीकार करते है।

अथानतर दर्भस्थल नगर का राजा कौशल प्रशसा योग्य उनकी रानी अमृतप्रभा की पुत्री कौशल्या, उसे अपराजिता भी कहते है, स्त्री के गुणो से सहित, काम की रति समान महासुन्दर किसीसे न जीती जाय, महारूपवती उसका राजा दशरथ के साथ विवाह कराया। एक कमलसकुल, बडा नगर, वहॉ का राजा सुबधुतिलक, रानीमित्रा, उनकी पुत्री सुमित्रा, सर्वगुण सपन्न, रूपकी तिलक, देखने मात्रसे मनको हर्षित करनेवाली, पृथ्वीपर प्रसिद्ध उससे भी राजा दशरथ ने विवाह किया। एक और महाराजा नाम का राजा उसकी पुत्री सुप्रभा रूपकी खान, उसे देख लक्ष्मी भी लज्जित हो जाए उससे भी राजा दशरथ ने विवाह किया। राजा दशरथ सम्यदर्शन सहित राज्यके भोगो को भोगते हुये, भी सम्यग्दर्शनको रत्न समान मानते रहे। और राज्यको तृणसमान नाशवान जानते रहे। जो राज्य को नहीं छोडते वे जीव नरकको प्राप्त होते हैं, और जो राज्य को छोडे देते हैं, वे स्वर्ग मोक्ष को प्राप्त होते है, और सम्यग्दर्शन के योग से निश्चय

ही उर्ध्वगति को जाते हैं। ऐसा जानकर राजा दशरथ को सम्यग्दर्शनपर अतिदृढता हुई। और जो भगवान के चैत्यालय प्रशंसा योग्य भरत चक्रवर्ती ने बनवाये थे उनका खडन, मडन देख राजा दशरथ ने पुन जीर्णोद्वार कराया मानो नये ही हो। इन्द्रो के द्वारा नमस्कार करने योग्य तीर्थकरो के कल्याणक क्षेत्र उनकी राजा रत्नों से पूजा करता था। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं, हे भव्यजीव राजा दशरथ का जीव परभव मै महाधर्म के योग्य महापुण्य को कर अतिमनोज्ञ देवलोक की लक्ष्मी प्राप्तकर इसलोक मे नरेन्द्र हुये। ऐसे महाराजा अनेकऋद्धि के भोक्ता सूर्यसमान दशो दिशा मे प्रकाश करते रहे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे राजा सुकौशल का महात्म्य उनकेवशमे राजादशरथ की उत्पत्तिका वर्णन करनेवाला बाईसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-23

रावण को दशरथ के पुत्र और जनक की पुत्री से मरण की शंका और उसका निराकरण

अथानतर एकदिन राजा दशरथ महातेजरूपी प्रतापसे सभामे विराजमान थे। कैसेहैं राजा? जिनेन्द्र की कथा मे आसक्त है मन जिनका, सुरेन्द्र समान है वैभव उनका। उस समय अपने शरीर के तेज से आकाश मे प्रकाश करते हुये नारद आये। तब दूरसे नारदको देख राजा उठकर सन्मुख गये। बडे आदरसे नारदको सुन्दर सिहासन पर बैठाया। राजाने नारद की कुशल पूछी, तब नारद ने कहा, जिनेन्द्रदेव के प्रसाद से सब कुशल है। पुन नारदने राजाकी कुशल पूछी। राजा ने कहा—देवधर्मगुरु के प्रसाद से सब कुशल है। पुन राजाने पूछा हे प्रभो! आप कहॉ से आये हो, इन दिनो मे कहॉ कहॉ विहार किया, क्या क्या देखा, क्या सुना? आपसे ढाईद्वीप मे कोईस्थान अदृश्य नहीं। तब नारद कहने लगे। हे राजन्! मै विदेहक्षेत्र गया था। कैसाहैक्षेत्र? उत्तम जीवो से भरा है, जगह जगह जिनराज के मन्दिर जगह जगह महामुनिराज विराजमान है, वहॉ धर्मकी अतिप्रभावना है वहॉ श्रीतीर्थकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, उत्पन्न

होते रहते है। वहाँ सीमंधर स्वामी का मैने पुण्डरीकिनी नगरी में तप कल्याणक देखा। कैसी है पुण्डरीकिनी नगरी? नाना प्रकार के रत्नो के महल उनके तेजसे प्रकाशरूप है, सीमंधर स्वामीके तप कल्याणक मे देवो का आगमन हुआ, उनमे तरह तरह के विमान ध्वजा छत्रादि से महासुशोभित, अनेक प्रकार के वाहनो सहित नगरी देखी। यहाँ जैसे मुनिसुव्रतनाथ का सुमेरूपर्वत पर जन्माभिषेक का उत्सव हुआ सुनते हैं, ऐसा श्रीसीमघर स्वामी के जन्माभिषेक का उत्सव मैने सुना, तप कल्याणक तो मैने प्रत्यक्ष ही देखा। और नाना प्रकार के रत्नो से जडित जिनमन्दिर देखे। वहाँ बडे बडे जिनबिंब विराजमान है। वहाँ विधिपूर्वक निरन्तर पूजा होती है, विदेहक्षेत्र से सुमेरुपर्वत पर आया सुमेरुपर्वत की प्रदक्षिणाकर सुमेरुके वनमे भगवानके अकृत्रिम चैत्यालयो का दर्शन किया। हे राजन! नन्दनवनके चैत्यालय कईप्रकार के रत्नो से जडे अतिरमणीक मैने देखे। उनमे मोतियो के तोरण ध्वजाये वैडूर्यमणि की दिवाले, उनमे गज सिहादि अनेकचित्र बने हुये है, वहाँ देव देवीयाँ सगीत शास्त्ररूप नृत्य करते है। और देवारण्यवनके चैत्यालयो मे जिनप्रतिमाओ के दर्शन किये। कुलाचलो के शिखरो में जिनेन्द्रभगवान के चैत्यालयो की मैने वन्दना की। इसप्रकार नारद ने कहा। तब राजा दशरथ "देवेभ्यो नम" ऐसा कहकर हाथजोड सिर नमाकर नमस्कार किया। पुन नारदने राजाको इशारा किया, तब राजा ने दरबार को कहकर सबको रवाना किया। राजा अकेले बैठे तब नारद ने कहा। हे सुकौशल देश के अधिपति! मन लगाकर सुनो। मै तुम्हारे कल्याण की बात कहता हूँ। मैं भगवान का भक्त जहाँ जिनमन्दिर होते है, वहाँ वन्दना करता हूँ। मै लका मे गया था वहाँ महामनोहर श्रीशातिनाथ भगवान के चैत्यालय की वन्दना की। वहाँ एक बात विभीषणादि के मुख से सुनी कि रावण ने बुद्धिसार निमितज्ञानी को पूछा कि मेरी मृत्यु किनके निमित से होगी? तब निमितज्ञानी ने कहा राजा दशरथका पुत्र एव जनक राजाकी पुत्री के निमित से तुम्हारी मृत्यु होगी। सुनकर रावण को चिन्ता हुई, तब विभीषण ने कहा आप चिता मत करो, दोनोके पुत्र पुत्री होने के पहले ही, मै उनको मारुँगा। और विभीषण ने, आपका स्थान नगर देखने के लिये सेवको को भेजा था, वो सब आपका स्थान नगर महलादि देखकर गये है। और मेरा विश्वास जान, मुझे विभीषण ने पूछा कि क्या तुम दशरथ और जनक के स्वरूप

को अच्छी तरह जानते हो? तब मैने कहा उनको देखे मुझे बहुत दिन हो गये है। अब उन्हे देख तुमको कहूँगा। सो उनका अभिप्राय खोटा जानकर तुम्हारे पास आया हूँ। वह विभीषण जब तक तुमको मारने का उपाय करता है, उसके पहले आप कहीं छिपकर बैठ जाओ, जो सम्यग्दृष्टि जिनधर्मी देव, गुरु, धर्म, के भक्त है, उन सबसे मेरा अतिप्रेम है, तुम्हारे जैसे धर्मात्मा पुरुषो से विशेषअनुराग है। आप योग्य समझो ऐसा करो, आपका कल्याण हो। अब मैं राजा जनक से यह वृतान्त कहने जा रहा हूँ। तब राजाने उठकर नारद का सत्कार किया। नारद आकाश मार्गसे मिथिलापुर की और गये। जनक को भी सम्पूर्ण वृतान्त कहा। नारदको भव्यजीव एव जैनधर्मी जीव प्राणो से भी प्यारे है। नारदतो यह वृतान्त कहकर देशान्तर को गये। और दोनो ही राजाओ को मरण की शका उत्पन्न हुई। राजा दशरथ ने अपने मत्री समुद्रहृदय को बुलाया एकान्त मे नारद की कही हुई सभी बात बताई। तब राजा के मुख से मत्री महाशयने ये समाचार सुनकर स्वामी की भक्ति मे तत्पर मत्रशक्ति मे महाश्रेष्ठ राजा को कहा—हे नाथ! जीवन के लिये सब कुछ करना है। तीनलोक का राज्य मिले और जीवन जाय तो क्या काम का? इसिलिये जब तक मै आपके शत्रुओ का उपाय करता हूँ, तब तक आप अपनारूप छिपाकर भेषबदलकर पृथ्वीपर विहार करे। ऐसा मत्री ने कहा। तब राजा देश, भडार नगर इनको सौपकर नगरसे बाहर निकले। राजाके जानेके बाद मत्रीने राजा दशरथ के रूप का पुतला बनाया, एक चेतना नहीं और सब राजा के ही चिन्ह बनाये। लारवा के रस से उसमे रुधिर भरा और शरीर की कोमलता जैसे प्राण धारी के होती है, वैसी ही बनाई। महल के सातवेखण्ड मे, सिहासनपर राजाको विराजमान किया, नीचेसे राजाके दर्शन सभी लोग कर सकते है, ऊपर कोई जा नहीं सकता। राजा के शरीर मे महारोग है, ऐसा पृथ्वीपर प्रचार प्रसार किया, एक मत्री और दूसरा पुतला बनाने वाला केवल दो ही यह भेद जानते थे। अन्य कोई नहीं जानता। इनको भी देखकर ऐसी ही शंका होती है, कि यह राजा ही है। और ऐसा ही वृतान्त राजा जनक के यहाँ हुआ, जो कोई पडित है, उनको ऐसी ही बुद्धि होती है। यह दोनो राजा, लोक व्यवहार के ज्ञाता, पृथ्वीपर भ्रमण करते फिर रहे है। सकट अवस्था मे जो क्रिया एव रीति बताई है, उस प्रकार करे। जैसे वर्षाकाल मे चॉद सूर्य मेघ के जोर से छिपे रहते

है, ऐसे राजा जनक और दशरथ दोनो छिप रहे है। वे दोनो बडे राजा महासुन्दर राजमन्दिरो में रहनेवाले, मनोहर देवागनाओ समान रानियॉ जिनके, महाभोगो के भोक्ता, वह पैदल पैदल दरिद्र लोगो की तरह अकेले अकेले भ्रमण करते हैं। धिक्कार है ससार के स्वरूप को, ऐसा निश्चय कर, जो प्राणी सभी जीवोको अभयदान देता है, वह कभी भी भयभीत नहीं होता। इस अभयदान समान कोई दान नहीं। जिसने अभयदान दिया, उसने सब कुछ दिया। अभयदान देने वाला प्राणी, पुरुषो मे मुख्य है।

अथानंतर विभीषण ने दशरथ एव जनक को मारने के लिये सुभटो को भेजा, वह हलकारे, हाथोमे शस्त्र लेकर महाक्रूर रात दिन नगरी मे छिपे छिपे फिरते, राजाके महल अतिऊँचे थे, अत वे प्रवेश नहीं कर सके। इनको बहुत दिन लगे, तब विभीषण स्वय ही आये, और महल मे गीत नृत्य की ध्वनी सुनकर, महल मे प्रवेश किया। राजा दशरथ को अन्तपुर के मध्यशयन करते हुये देखा। विभीषण तो दूर खडे रहे, और एक विद्युविलसित विद्याधर को भेजा। और कहा दशरथ का मस्तक काटकर ले आओ। तब उसने मस्तक काटकर विभीषण को दिखाया। एव सम्पूर्ण राज लोग रोने लगे। विभीषण ने दशरथ और जनक का सिर समुद्र मे डाल, रावण के पास गया, रावण को हर्षित किया। इन दोनो राजाओ की रानियॉ विलाप करती है, फिर मालूम हुआ कि यह कृत्रिम पुतला था, तब सबने सन्तोष किया। और विभीषण ने, लका जाकर अशुभ कर्म की शाति के लिये, दान पूजादि शुभ क्रियाये की। और बार बार पश्चाताप किया, कि देखो मेरे कौनसे पाप कर्म का उदय आया, जो भाई के मोह से बिना कारण बिचारे, भूमि गोचरियो को मारा। जो कदाचित आशीविष सर्प देखने से विष चढता है, तो भी क्या गरुड को प्रहारकर सकता? कहॉ वे अल्पऐश्वर्य के स्वामी भूमिगोचरी, कहॉ ये इन्द्र समान शूरवीरता का धारी रावण, कहॉ चूहा कहॉ सिह। प्राणियो को जिसस्थान मे जिस कारण से जितना सुखदुख होना है, वह उसस्थानपर कर्मोंके वशसे, अवश्य ही होगा। यह निमित्तज्ञानी सच्चा जानते, तो अपना कल्याण क्यो नहीं करते, आत्म कल्याण से ही मोक्ष के सुख पाते है। निमितज्ञानी दूसरे की मृत्युको निश्चय जानता है, तो अपनी मृत्यु के पहले अपना आत्म कल्याण क्यो नहीं करता। निमितज्ञानी के कहने से मै मूर्ख हुआ, खोटे

मुनष्य की शिक्षा से जो मन्दबुद्धि है, वे खोटे कार्य मे प्रवृत्ति करते है। यह लकापुरी, पाताल है, तल जिसका, ऐसे समुद्र के मध्य मे रहने वाले, वहाँ देवभी नहीं जा सकते, तो बिचारे भूमिगोचरी कैसे जायेगे। मैने यह कार्य बहुत अयोग्य किया, पुन· ऐसा कभी नहीं करुँगा। ऐसा विचार कर उत्तम भावो से युक्त जैसे सूर्य प्रकाशरूप गमन करे, ऐसे यह मनुष्यलोक मे रमते रहे।

(इति श्री रविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे राजादशरथ और जनकको विभीषणकृत मरणभय वर्णन करनेवाला तेईसवॉ पर्व पूर्ण हुआ।

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-24

दशरथ और केकयी का विवाह

अथानतर गौतमस्वामी कहते है, हे श्रेणिक! अनरण्य के पुत्र दशरथ ने पृथ्वीपर भ्रमण करते हुये केकई से विवाह किया। वह कथा अचरज की भरी है, सो तुम सुनो। उत्तरदिशा मे एक कौतुकमगल नगर मे राजा शुभमति राज्य करता है, उनकी रानी पृथुश्री गुणरूपी आभूषणो की धारी, उसकी पुत्री केकई एव पुत्र द्रोणमेघ थे। उनकी कीर्ति दशो दिशाओ मे फैल रही है। केकई अतिसुन्दर, मनोहर शरीर, अद्भुत लक्षण सर्व कलाओ की पारगामी, सम्यग्दर्शन सहित, श्राविका के व्रत पालने वाली, जिनशासन की ज्ञाता महाश्रद्धावान, तथा साख्य, पाताजल, वैशेषिक, वैदान्त, न्याय, मिमासा, चारवाक् आदि परशास्त्रो की ज्ञाता, लोकिक शास्त्र, शृगारादिक के रहस्या को जानने वाली, नृत्यकला मे निपुण, सगीतकला, मे चतुर, उर, कठ, सिर इनतीनो स्थानो से स्वर निकलते है, इन स्वरो के सात भेद है—षडज 1, ऋषभ 2, गाधार 3, मध्यम 4, पचम 5, धैवत 6, निषाद 7, इन मे केकई सर्वज्ञाता है, तीनप्रकार का लय, शीघ्र 1, मध्यम 2, विलम्बीत 3, चारप्रकार का ताल, स्थायी 1, सचारी 2, आरोहक 3, अवरोहक 4, तीनप्रकार की भाषा सस्कृत 1, प्राकृत 2, शौरसैनी 3 स्थाई चाल के भूषण चारप्रसगदि 1, प्रसन्नात्त 2, मध्य प्रसाद 3, प्रसन्नाद्यवसान 4, और सचारिके छह भूषण निवृत 1, प्रस्थिल 2, बिदु 3, प्रखोलित 4, तमोमद 5, प्रसन्न 6, आरोहरण

का एक प्रसन्नादि भूषण और अवरोहण के दो भूषण प्रसन्नता 1, कुहर 2, ये तेरह अलकार और चार प्रकार वादित्र जोताररूप वह ततु और चामके मढे आनद्ध 2 अर बासुरी आदि फूक के बाजे व सुसिर 3, कांसी के बाजे घन 4, ये चारप्रकार के बाजे, जैसे केकई बजावे वैसे और कोई नहीं जानते, गीत, नृत्य, बाजे ये तीन भेद हैं सो नृत्यमें ही तीनहो गये है। और रस के नो भेद है, शृंगार 1, हास्य 2, करुण 3, वीर 4, अद्‌भुति 5, भयानक 6, रौद्र 7, वीभत्स 8, शात 9, इनके भेद जैसे केकई जाने वैसे और कोई नहीं जाने। अक्षर, मात्रा, गणित शास्त्र में भी निपुण। गद्य, पद्य सर्वमे प्रवीण, व्याकरण, छद, अलकार, नाभमाला, लक्षणशास्त्र, तर्कइतिहास व चित्रकला मे अतिप्रवीण, रत्नपरीक्षा, अबूवपरीक्षा, नरपरीक्षा, शस्त्रपरीक्षा, गजपरीक्षा, वृक्षपरीक्षा, वस्त्रपरीक्षा, सुगन्धपरीक्षा, सुगन्धादिक द्रव्यकी उत्पत्ति आदि सर्व बातो मे प्रवीण, ज्योतिष विद्या मे प्रवीण, बाल, वृद्ध, तरुण, मनुष्य, एव घोडे, हाथी आदि सबके इलाजमे प्रवीण, मत्र औषधी आदि सबमें तत्पर, वैद्य-विद्यानिधान, महाशीलवान, महामनोहर, युद्धकला मे अतिप्रवीण शृगार कलामे निपुण, विनयकी आभूषण, कला, गुण, रूप मे ऐसी कन्या और नहीं। गौतमस्वामी कहते है। हे श्रेणिक! बहुत कहने से क्या? केकई के गुणो का वर्णन कहाँ तक कहे, तब राजा शुभमती ने विचार किया कि ऐसी गुणवान कन्या के योग्य कौनवर है? स्वयवर मडप करे ये अपने आपही वरणकर लेगी। राजा ने हरिवाहनादि अनेक राजा स्वयवर मडप मे बुलाये। वे सभी विभूति सहित आये। और भ्रमण करते हुए राजा दशरथ जनक सहित आये। इनके पास राज्य की विभूति नहीं फिर भी रूप और गुणो मे सब राजाओ में अधिक हैं। सब राजा सिहासनपर बैठे। केकई को दासियों ने सब राजाओ के नाम, गॉव, गुण बताये लेकिन वह विवेकिनी साधुरुपिणी मनुष्यो के लक्षण जानने वाली पहले तो दशरथ की ओर नेत्ररूपी नीलकमल की माला डाली पुन. वह सुन्दर बुद्धि की धारी जैसे राजहसनी बगुलों के मध्य बैठे जो राजहस उसकी तरफ जाए ऐसे अनेक राजाओ के बीच बैठे जो दशरथ उनके पास गई। सो भाव माला तो पहले ही पहनाई थी और द्रव्यरूपी जो रत्नो की माला वह लोकोपचार के लिये दशरथ के गले मे पहनाई। तब कोई राजा न्यायवन्त बैठे थे, वह तो प्रसन्न होकर कहा जैसी कन्या, वैसा ही योग्यवर पाया। कोई अपने अपने देश गये कोई ढीठ राजा क्रोधसे युद्ध करने आये। और कहने लगे बडे बडे वशके राजा महाऋद्धिसहित उनको

छोडकर यह कन्या न जाने जिसका कुल और शील ऐसे विदेशी को कैसे वरण किया। खोटे अभिप्राय वाली कन्या है, इसीलिये इस विदेशी को यहाँ से निकालकर कन्या के केशपकड बलात्कार हर लो। ऐसा कहकर युद्ध के लिये तैयार हुये। तब राजा शुभमती ने अतिव्याकुल होकर दशरथ से कहा हे भव्य! मै इनदुष्टो को दूर करता हूँ, आप इस कन्याको रथ मे लेकर दूसरे स्थानपर चले जावे। जैसा समय देखो वैसा करना। राजनीति मे यह बात प्रसिद्ध है। इस प्रकार जब ससुरने कहा तब राजा दशरथ अत्यन्त धीर वीर हँसकर कहने लगे हे महाराज! आप निश्चिन्त रहो, देखो इन दुष्टो को मै दशो दिशाओ मे भगाऊँगा। ऐसा कहकर आप रथ मे चढे और केकई को भी चढालिया। केकई घोडो की लगाम सभालती हुई पति से विनती करने लगी, हे नाथ! आपकी आज्ञा हो और जिसकी मृत्यु निकट हो। उसकी तरफ रथ चलाऊँ! तब राजा कहने लगे–हे-प्रिये! गरीब को मारने से क्या, इन सेना का जो अधिपति हेमप्रभ है, उसके सिर पर चन्द्रमा समान सफेद छत्र फिरता है, उसकी तरफ रथ चला। हे रणपण्डिते! आजमे इस अधिपति को ही मारूँगा। जब दशरथ ने जो वाण चलाये उनसे अनेक राजा बींधे गये सो क्षणमात्र मे भाग गये। तब हेमप्रभ सब का स्वामी लज्जावान होकर दशरथ से लडने को हाथी, घोडे, रथ, पयादे सहित आया। शूरपने का शब्दकर तोमरजातिके हथियार वाणचक्रादि शस्त्र अकेले दशरथ पर डाले। यह बडा आश्चर्य है, दशरथ राजा, एकरथ का स्वामी था, वह युद्ध के समय मानो असख्यात रथ हो गये अपने बाणो से शत्रुओ के बाण काट डाले, दशरथ ने जो बाण चलाये वह किसीकी दृष्टि मे नहीं आये। शत्रुओ को लगे। राजा दशरथ ने हेमप्रभ को क्षणमात्र मे जीत लिया। उसकी ध्वजा छेदी, छत्र उडाया, अश्व घायल किये, रथ तोडा, रथ से नीचे डाल दिया, तब हेमप्रभ राजा दूसरे रथपर चढकर भय से कम्पायमान होकर अपना यश कालाकर शीघ्र ही भाग गया। एक दशरथ ने अनन्तरथ जैसा काम किया। एक दशरथ सिहसमान उसको देख सब योद्धा सब दिशाओ मे हिरण समान भाग गये। अहो धन्य शक्ति इसपुरुष की! ऐसा शब्द ससुर की एव शत्रु की सेना मे हुआ। और बन्दीजनोने विरद का बखान किया। राजा दशरथ महाप्रताप को धारणकर कोतुकमगल नगर मे केकईसे पाणी ग्रहण किया। महा मगला चार हुआ, राजा दशरथ केकई से विवाहकर अयोध्या आये, और जनक भी मिथिलापुरी गये। फिर इनका जन्मोत्सव और राज्य अभिषेक महाविभूति से हुआ। और सब

भय रहित इन्द्र समान रहने लगे। सब रानियो के बीच राजा दशरथ केकई से कहने लगे। हे चन्द्रवदनी! तेरे मन मे जो वस्तु की अभिलाषा हो वह मॉग। जो तू मॉगे वह मैं देऊॅ। हे प्राणप्यारी! तुम्हारे से मै अतिप्रसन्न हूॅ। जो तू युद्ध मे रथको न प्रेरती तो एकसाथ इतने शत्रु आये थे, उनको मै एक साथ कैसे जीतता। जब रात्री का अधकार जगत में फैल रहा है, तब अरुण समान सारथी नहीं हो, तो उसे सूर्य कैसे जीते। इस प्रकार केकई के गुण वर्णन राजा ने किये, तब पतिव्रता लज्जा से नीचे मुखकर देखती रही। राजा ने पुन कहा वर मॉगो। तब केकई ने विनती की हे नाथ! मेरा वर आपके पास धरोहर है, जिस समय मेरी जो इच्छा होगी, उस समय वह लूगी। तब राजा प्रसन्न होकर कहा, हे कमलवदनी! अद्‌भुत बुद्धि है तेरी, महानरपति की पुत्री, नयकी ज्ञाता, सर्व कलाओ की पारगामी, भोगोपभोग की निधि, तेरा वर मैने धरोहर रखा। तूम जब जो मॉगेगी वही मै दूगा। और सब ही राजलोग केकई को देख हर्षको प्राप्त हुये। वे सोचने लगे यह अद्‌भुत बुद्धि की खान है। जो कोई अपूर्ववस्तु मॉगेगी अल्पवस्तु क्या मॉगे। गौतम स्वामी कहते है। हे श्रेणिक लोकका चरित्र मैने तुझे सक्षेप से कहा, जो पापी दुराचारी है वह नरक निगोद के दुख पाते है, और जो धर्मात्मा साधुजन है वह स्वर्गमोक्ष मे महासुख पाते है। भगवान की आज्ञानुसार बडे सत्पुरुषो के चरित्र तुझे कहे। अब श्रीरामचन्द्रजी की उत्पत्ति सुनो, कैसे है रामचन्दजी? महाउदार प्रजाके दुख हरनेवाले, महान्यायवन्त महाधर्मवन्त विवेकी, महाशूरवीर महाज्ञानी इक्ष्वाकुवश का प्रकाश करनेवाले बडे सत्पुरुष है।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रानीकेकई को राजादशरथ का वरदान कथन करने वाला चौबीसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-25

राम लक्ष्मण आदि चारों भाईयों का जन्म और विद्याभ्यास

अथानतर जिसे अपराजिता कहते है, ऐसी जो कौशल्या रत्न जडित महल मे महासुन्दर सेजपर शयन कर रही थी, सो रात्रि के पिछले पहर मे अतिशयकारि अद्‌भुत स्वप्नो को देखा। उज्ज्वल हाथी इन्द्रके ऐरावत हाथी समान 1, महाकेशरी

सिह 2, और सूर्य 3, तथा सर्वकला पूर्ण चन्द्रमा 4, ये पुराण पुरुषो के गर्भ मे आने के अद्भुत स्वप्नदेख आश्चर्यको प्राप्त हुई। प्रात काल के बाजे एव मगलशब्द सुनकर सेज से उठी। प्रात काल की क्रिया से निवृत हो शुभ स्वप्न देखने से मनहर्षित होकर विनय सहित सखियो के साथ भरतार के समीप जाकर सिंहासनपर बैठी। कैसी है रानी? सिहासन को शोभित करनेवाली, हाथजोड नमस्कारकर महामनोहर जो स्वप्न देखे उनका वृतान्त स्वामी से कहने लगी। तब निमित्तज्ञान के पारगामी राजा स्वप्नका फल कहने लगे—हे महारानी! परम आश्चर्य कारी तेरे मोक्षगामी पुत्र अन्तर बाहर के शत्रुओ को जीतने वाला महापराक्रमी होगा। राग द्वेष मोहादि अन्तरग शत्रु एव प्रजा के बाधक दुष्ट राजा बहिरग शत्रु हैं। इसप्रकार राजाने रानीसे कहा, तब रानी अतिहर्षित होकर मद मद मुस्कान प्रसन्न मन से अपने स्थानपर गई। रानी कौशल्या राजा दशरथ सहित श्रीजिनेन्द्र भगवान के चैत्यालयो मे भाव सहित महापूजा की, पूजाके प्रभावसे राजा का मन प्रसन्न हुआ।

अथानतर रानी कौशल्या के श्रीरामका जन्म हुआ, राजा दशरथ ने महाउत्सव किया, छत्र, चवर, सिहासन छोडकर बहुतद्रव्य याचको को दान मे दिया। उगते हुये सूर्य समान है वर्ण राम का, कमल समान नेत्र है, लक्ष्मी से आलिगित है वक्ष स्थल उनका, इसीलिये माता पिता सर्व परिवार ने इनका नाम पद्म रखा। फिर रानी सुमित्रा महाशुभस्वप्न देखकर आश्चर्य को प्राप्त हुई। वह स्वप्न कैसे है, सो सुनो? एक बडा केशरी सिह देखा, लक्ष्मी और कीर्ति आदर से सुन्दर जलसे भरे कलश कमलके पत्तोसे ढके उनसे स्नान कराती है। और आप सुमित्रा बडे पहाड की चोटीपर बैठी समुद्रपर्यत पृथ्वीको देखती है। और दैदिप्यमान है किरणो का समूह ऐसा सूर्य देखा। नानाप्रकार के रत्नो से मडित चक्र देखा। यह स्वप्न देख प्रात काल के मगलशब्द सुन सेजसे उठकर प्रात काल की क्रियाकर विनय सहित पतिके पास जाकर मधुरवाणी से स्वप्न का फल पूछा, तब राजा ने कहा—हे प्रिये! तुम्हारे पृथ्वीपर प्रसिद्ध पुत्र होगा। शत्रुओ के समूह को नाश करनेवाला, महातेजस्वी, अनुपमबल धारी, अद्भुतचेष्टा से युक्त होगा। ऐसा पतिने कहा, तब वह पतिव्रता हर्ष सहित अपने स्थानगई। सब लोगोको अपना सेवक मानती रही। नौमहिने पश्चात परमज्योति का धारी पुत्ररत्न का जन्म हुआ, मानो रत्नोकी खानमे रत्नही उत्पन्न हुआ। जैसे श्रीरामके जन्म का उत्सव किया था, वैसा ही उत्सव किया। जिस दिन सुमित्राके पुत्रका जन्म हुआ, उस दिन

रावणके नगरमे, हजारो उपद्रव हुये। और मित्रो के नगरो मे शुभ कार्य हुए। इदीवर कमलसमान श्यामसुन्दर शुभ लक्षणों से सहित पुत्र, इसीलिये माता पिताने लक्ष्मणनाम रखा। राम लक्ष्मण ये दोनों राजकुमार महामनोहर रूप मूगा समान लाल होठ है, लालकमल समान हाथ एव पैर है, मखमल से भी अतिकोमल एवं महासुगन्धमय शरीर है। यह दोनो भाई बालक्रीडा करते हुये, सबके मनको हरते थे। चन्दन से लिप्त शरीर, केशर के तिलक से ऐसे सुशोभित होते, मानो विजयार्धगिरी और अजनगिरी ही है। अनेक जन्मो के साथ से बढा हुआ प्रेम दोनो का चन्द्र सूर्य समान ही है। राजमहल मे आये तो सब रानियो को एव सभी स्त्रियो को अतिप्रिय लगते, और बाहर जाये तो सब लोगों को एव राज दरबार मे जाये तो राजा प्रजा के मन को हरते थे। जब ये वचन बोलते तो ऐसा लगता मानो जगतको अमृतसे सींच रहे है। ऑखो से देख सबको हर्षसे पूर्ण करते है। सबकी दरिद्रता को दूर करने वाले है। सबके हितु मानो ये दोनो भाई हर्ष ओर शूरवीरता की मूर्ति ही है। अयोध्यापुरी मे सुख से दोनो राजकुमार क्रीडा करते है। कैसे है दोनो राजकुमार? अनेक सुभट, कुमारो की सेवा करते है, जैसे पहले बलभद्र विजय एव वासुदेव त्रिपृष्ठ हुये उनके समान चेष्टा के धारी महाशक्तिशाली कुमार है। पुन केकई को दिव्यरूप धारण करनेवाला महा भाग्यशाली पृथ्वीपर प्रसिद्ध भरतनाम का पुत्र हुआ। पुन· सुप्रभा के सब लोक मे सुन्दर शत्रुओ को जीतनेवाला शत्रुघ्न नामका पुत्र हुआ। अत रामचन्द्रजी का नाम पद्म तथा बलदेव और लक्ष्मण का नाम हरि तथा वासुदेव एव अर्धचक्री भी कहते है। ये दशरथ के चारोरानियाँ मानो चार दिशाये ही है। उनके चारो पुत्र समुद्रसमान गम्भीर, पर्वतसमान अचल, सुमेरुसमान उन्नत, जगत के प्यारे, इन सभी राजकुमारो को राजा दशरथ ने विद्या पढाने के लिये योग्य गुरुको बुलाया एव शस्त्र और शास्त्र विद्या पढाया।

अथानतर कम्पिल्यनगर मे एक शिविनाम का ब्राह्मण इषुनाम की ब्राह्मणी, उसके अरिनाम का पुत्र, अविवेकी अज्ञानी माता पिता के प्यार से महाकुचेष्टा को धारणकर नगर मे उदडता का पात्र हुआ। यद्यपि नगर मे व्यापार का सग्रह, धर्म क्रिया, विद्या अभ्यासादि सभी बाते सुलभ है, परन्तु अरिब्राह्मण को कोईविद्या प्राप्त नहीं हुई। तब माता पिता ने सोचा कि अन्यदेश मे जाने से इसको विद्या सिद्ध होगी। ऐसा विचारकर उसे घर से निकाल दिया। वह महादुखी होकर राजगृह नगर मे गया, वहाँ एक वैवस्वत् पडित धनुष विद्या का ज्ञाता उसके

हजारो शिष्य विद्या का अभ्यास करते है। उसके पास यह अरिब्राह्मण ने भी धनुष विद्या का अभ्यास किया, सो हजारो शिष्यो मे यह महाप्रवीण हुआ। उस नगर का राजा कुशाग्र था, उसका पुत्र भी वैवस्वत के पास बाणविद्या पढता है, तब राजा ने सुना कि एकविदेशी ब्राह्मण का पुत्र आया है, वह राजपुत्र से भी अधिक बाणविद्या का अभ्यासी हुआ। राजाने मनमे क्रोध किया। यह बात पडित ने सुनी, तब अरिब्राह्मण को समझाया कि तू राजा के सामने मूर्ख हो जाना, और बाण बराबर नहीं चलाना। राजाने धनुष विद्या के गुरुको बुलाया, और कहा मै तेरे सर्वशिष्यो की विद्या देखुँगा। तब सब शिष्यो को लेकर राजा के पास गया, सब शिष्यो ने यथा योग्य अपनी अपनी बाणविद्या दिखाई, निशाने लगाये, ब्राह्मण का पुत्र अरिने ऐसे बाण चलाये जो विद्यारहित जाना गया। तब राजाने जाना कि किसी ने अरिकी झूठी प्रशसा की है। तब वैवस्वत को शिष्यो सहित भेज दिया। अपने घर आये और वैवस्वत ने अपनी पुत्रीका अरिसे विवाह कराकर विदा किया, अरिब्राह्मण विवाहकर स्त्रीसहित रात्रि मे अयोध्या आया और राजा दशरथ से मिला, अपनी बाणविद्या दिखाई, तब राजा प्रसन्न होकर अपने चारोपुत्रो को बाणविद्या सीखने के लिये अरिब्राह्मण के पास रखे। वे बाणविद्या मे अतिप्रवीण हुये। जैसे निर्मल सरोवर मे चन्द्रमा की काति विस्तार को प्राप्त होती है, ऐसे इनको बाणविद्या विस्तार से प्राप्त हुई। और भी अनेक विद्याये गुरुके सयोगसे इनको सिद्ध हुई। जैसे किसी स्थानपर रत्न ढककर रखे हो और ढक्कन खोले तो रत्न प्राप्त हो ऐसे ही विद्या सिद्ध हुई। राजा अपने पुत्रोको सब शास्त्रो मे अतिप्रवीण देख और पुत्रो का विनय देखकर अतिप्रसन्न हुआ। इनके विद्यादाता गुरुओ का राजा ने बहुत सम्मान किया। राजा दशरथ गुणो के समूह महाज्ञानी ने जो उनकी इच्छा थी उससे अधिक सम्पदा दी, दान मे विख्यात है कीर्ति उनकी। कोई जीव शास्त्र ज्ञानको प्राप्तकर परम उत्कृष्ट पदको प्राप्त होते है। कोई जैसे के वैसे ही रहते है। कोई खोटे कर्म के योगसे मोहरूपी मदसे अधे होते है। जैसे सूर्य कि किरणे स्फटिक दर्पण मे अतिप्रकाश को करती है और सामान्य स्थानपर सामान्य प्रकाश करती है। और उल्लुओ के लिये सूर्य का प्रकाश भी अन्धकार रूप परिणत होता है।

(इतिश्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे चारोभाईयो के जन्मका वर्णन करनेवाला पच्चीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-26

राजा जनक के भामंडल और सीता की उत्पत्ति

अथानतर गौतमस्वामी कहते है, हे राजा श्रेणिक! अब जनक का कथन सुनो। राजाजनक की रानी विदेहाको गर्भ रहा, एकदेव के अभिलाषा हुई कि रानीके बालकहो, तो मै हरकर ले जाऊँ। तब श्रेणिक ने पूछा, हे नाथ! उसदेव के ऐसी अभिलाषा क्यों हुई। मै सुनना चाहता हूँ। तब गौतमस्वामी ने कहा, हे राजन! चक्रपुर नगर मे चक्रध्वज राजा, उनकी रानी मनस्विनी, उनकी पुत्री चित्तोत्सवा वह कुमारी पाठशाला मे पढती और राजा का पुरोहित धूम्रकेश, उसकी स्त्री स्वाहा, उसका पुत्र पिंगल वहभी उसी पाठशाला मे पढ रहा था। वहाँ चित्तोत्सवा और पिगल का मन मिल गया तो इनको विद्याकी प्राप्ति नहीं हुई। जिनका मन काम बाण मे लग जाए, उसको विद्या और धर्म की प्राप्ति नहीं होती। पहले स्त्री पुरुष का ससर्ग होता है, पुन प्रीति होती, प्रीति से परस्पर अनुराग बढता है, पुन विश्वास होता है तब विकार उत्पन्न होता है। जैसे हिसादि पॉच पापो से अशुभ कर्म बधते है, ऐसे स्त्री ससर्ग से काम वासना उत्पन्न होती है। वह पापी पिगल, चित्तोत्सवा को हरकर ले गया। जैसे कीर्ति को अपयश ले जाए। जब दूर देशो मे लेकर चला गया, तब कुटुम्ब के लोगो ने जाना। अपने प्रमाद के कारण वह हरकर ले गया। जैसे अज्ञान सुगति को हरे वैसे वह पिगल राजकुमारी को ले गया। परन्तु धन के बिना शोभा नहीं। ऐसे लोभी धर्मबिना तृष्णासे नहीं शोभते, वह पिगल विदग्धनगर मे गया वहाँ अन्य राजाओ का गमन नहीं, वह निर्धननगर के बाहर कुटिया बनाकर रहा, उस कुटिया के किवाड नहीं, और यह अज्ञानी लकडी घासादि को इक्कट्ठीकर बाजार मे बेचकर अपना पेट भरता है। दरिद्रता के कारण वह स्त्री और अपना पालन पोषण महाकठिनता से पूरा करता है। वहाँ का राजा प्रकाशसिह, रानी प्रवरावली उनका पुत्र राजा कुण्डलमडित। उसने पिगल की स्त्री चित्तोत्सवाको देख शोषण, सन्तापन, उच्चाटन, वशीकरण, मोहन यह काम के पॉचबाणो से पागल हुआ, उसने रात्रि मे दूती को भेजी वह चित्तोत्सवा को राजभवन मे ले आई। जैसे राजासुमुख के भवन में दूतीवनमाला को ले गई थी। राजा कुण्डलमडित चित्तोत्सवा सहित सुख से भोग भोगे। वह पिगल लकडियो का बोझा लेकर घर आया तब चितोत्सवा को नहीं देख महादुखी हुआ एव वियोगसे

रोने लगा, किसी जगह सुख शान्ति नहीं मिली, चक्रसमान घूमता रहा, पत्नि नहीं मिली तब वह ब्राह्मण राजा के पास गया और कहाँ, हे राजन! मेरी स्त्री आपके राज्य मे चोरी गई है, जो दरिद्र, दुखी, भयभीत हो, उसका राजा ही शरण है, तब राजा पापीठग मायाचार सहित मत्रीको बुलाकर झूठ मूठ कहा कि इनकी स्त्री को, कोई चुराकर ले गया है, शीघ्र ढूढकर लाओ, देर नहीं करना, तब एक सेवकने ऑखोसे इशारा करते हुये झूठ कहा कि हे देव! मैने इसब्राह्मण की स्त्रीको पोदनपुर के मार्गमे किसी व्यक्ति के साथ जाती हुई देखी थी, सो आर्यिकाओ के पास तप करनेको तैयार थी, इसीलिये है ब्राह्मण! तू उसे लाना चाहे तो शीघ्र ही जा, देर मत करना, उसका अभी दीक्षालेने का समय नहीं है, यौवन अवस्था रूपवान स्त्री के गुणो से पूर्ण है, ऐसा जब झूठ कहॉ तब ब्राह्मण उनकी और दौडकर गया, जैसे तेज घोडा शीघ्र दौडे। उसने पोदनपुर के चैत्यालय मे तथा उपवनादि वनमे सभी जगह ढूढी, लेकिन किसीभी जगह नहीं मिली। तब पुन विदग्धनगर मे आया, तब राजाकी आज्ञासे क्रूरमनुष्यो ने गाली गलौज करते हुये लकडियो से, डन्डो से, पत्थरो से मारकर दूर भगा दिया। ब्राह्मण स्थानभ्रष्ट हुआ महा क्लेश दुख भोग, अपमानित हुआ और मार खाई। इतने दुखो को भोगकर, दूर देशो मे चला गया। सो पत्निबिना किसीजगह इसको सुख नहीं है, यह रात दिन दुखी रहता कमलोका वनभी उसे दावानल अग्नि समान लगता है। इसप्रकार यह महादुखी पृथ्वीपर भ्रमण करता है। एक नगर के बाहर वनमे मुनिको देखा, मुनिका नाम आर्यगुप्तिमहाचार्य उनके पास जाकर हाथजोड नमस्कार कर, धर्मोपदेश सुना। धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य हुआ। महा शातचित्त होकर जिनेन्द्र भगवान के मार्ग की प्रशसा करता हुआ, मन मे सोचता है, अहो यह जिनराज का मार्गपरम उत्कृष्ट है, मै अधकार मे पडा हुआ, यह जिनधर्म का उपदेश मेरेह्रदय मे सूर्य समान प्रकाश किया। मै अब पापोका नाश करने वाला जो जिनशासन है, उसका शरण लेता हूँ, मेरामन और तन वियोगरूपी अग्निमे जल रहा है, सो मै शीतल करूँ, तब यह गुरु की आज्ञा से वैराग्य को पाकर परिग्रह छोड दिगम्बर दीक्षा धारण की। पृथ्वीपर विहार करता हुआ नदी, पर्वत, श्मशान, वन, उपवनों मे निवासकर तपसे शरीर का शोषण किया। वर्षाकाल मे अतिवर्षा हुई तो भी मनमें दुख नहीं किया, शीत काल मे शीतल वायुसे इसका शरीर कम्पायमान नहीं हुआ, गरमी के समय मे सूर्य की तप्तायमान किरणोसे भी व्याकुल नहीं हुआ, इसका

मन वियोग रूपी अग्निसे जला हुआ था, वह जिनवचन रूपी जलकी तरगोसे शीतल हुआ, तपस्यासे शरीर, अधजले वृक्षके समान हो गया।

विदग्धपुर का राजा कुण्डलमडित की कथा सुनो। राजा दशरथ के पिता अनरण्य अयोध्या मे राज्य करते सो यह कुडलमडित पापी गढके बलसे राजा अनरण्यके देशको कष्ट पहुँचाता। जैसे कुशील पुरुष मर्यादा नष्ट करते है, ऐसे यह उसकी प्रजा को बाधा करता, राजा अनरण्य के बहुतदेश सो कुडलमडित ने कई देश उजाड दिये। जैसे दुर्जन गुणो को उजाडे। राजा के बहुत से सामन्तो को भी मारा, जैसे कसाई जीवो को मारे, और योगी कषायो का निग्रह करे। ऐसे कुडलमडित ने अनरण्य से विरोध कर, अपने नाश का उपाय किया। यह राजा अनरण्य के आगे रक है, फिरभी गढके बलसे पकडा नहीं गया। जैसे चूहा बिल मे बैठ जाए तब सिह क्या करे, महाराजा अनरण्य को रात दिन चिन्तासे चैन नहीं पडता। अहारादि शरीर की क्रियाभी बिना मन से करते है। तब बालचन्द्र सेनापति राजाको चिन्तावान देख पूछता है, कि हे नाथ! आपको चिन्ता का कारण क्या है, तब राजा ने कुण्डलमडित का वृतान्त कहा। तब सेनापति ने राजासे कहा आप निश्चित रहो। उस पापी कुडलमडित को बाधकर मै आपके निकट ले आऊँगा। तब राजाने प्रसन्न होकर बालचन्द्र को विदा किया, चतुरग सेनाको लेकर बालचन्द्र सेनापति गया, वह कुडलमडित मूर्ख चित्तोत्सवा से आसक्त चित्त सर्व राज्य कार्य से रहित, प्रमाद से भोगो में लीन था। तब बालचन्द्र ने जाकर क्रीडा मात्र से जैसे हिरण को बाधे वैसे राजाको बाध लिया। एव कुडलमडित के राज्य मे महाराजा अनरण्य का अधिकार किया। कुडलमडित को राजा अनरण्य के पास लाया। सेनापति ने राजा का सभी देश बाधा रहित किया। राजा सेनापति से बहुत हर्षित हुआ और पारितोषिक दिया। कुडलमडित अन्याय मार्ग से भ्रष्ट हुआ, हाथी, घोडे, रथ, पयादे सब नाश हुये, शरीर मात्र रह गया। पैदल पैदल पृथ्वीपर भ्रमण करता हुआ महादुखी खेद खिन्न हुआ। मन मे बहुत पश्चाताप किया, कि मै अन्याय मार्गी होकर बडो से विरोध कर बहुत बुरा किया। एक दिन यह मुनियो के आश्रय में गया, आचार्यों को नमस्कारकर भावसहित धर्म का भेद पूछा। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है—हे राजन्! दुखी दरिद्री परिवार रहित, रोगों से पीडित, उनमें किसी भव्यजीवको धर्मकी बुद्धि उत्पन्न होती है। उसने आचार्य से पूछा, हे भगवान! जिसके मुनि बनने की शक्ति नहीं है, वह गृहस्थाश्रम

मे कैसे धर्म का साधन करे? आहार, भय, मैथुन, परिग्रह ये चार सज्ञा उसमे तत्पर यह जीव कैसे पापो से छूटे, सो मै आपसे सुनना चाहता हूँ। सो कृपा कर कहो। तब गुरु कहते है। धर्म दयामई है, ये सब प्राणी अपनी निदाकर गुरुके पास आलोचना करके पापो से छूटते है। तुम अपना कल्याण चाहते हो, तो शुद्धधर्म की प्राप्ति करो। जो हिसा का कारण महा पाप कर्म, रजवीर्य से उत्पन्न हुआ जो मास उसका त्याग करो। सभी ससारी जीव मरने से डरते है, उनके मास से अपने पेटको भरते है, वह पापी नरक मे नि सन्देह जायेगे। जो मासका भक्षण करते है, और नित्यस्नान करते है, उनका स्नानभी वृथा है, सिर मुडाये भेष धारण किया वहभी वृथा है। अनेकप्रकार के दान पूजा उपवासादि क्रिया भी मास आहारी को नरक से नहीं बचा सकते हैं। इस जगत मे सभी जातिके जीव पूर्व जन्म मे इस जीव के कोई न कोई बन्धु हुये है। इसीलिये जो पापी मास का भक्षण करते है, वह अपने परिवार का ही भक्षण करते है। जो दुष्ट निर्दयी पशु पक्षी मृगादिक को मारते है, मिथ्यामार्ग मे भ्रमण करते है, मधु मास के भक्षण से महाकुगति मे जन्म लेते है। मास वृक्ष एव भूमि से उत्पन्न नहीं होता है, कमलके समान जल से भी नहीं होता है अथवा अनेक वस्तुओ के योग से, जैसे औषधी बने वैसे मास की उत्पत्ति नहीं होती है। दुष्टजीव निर्दयी पक्षी मृग मत्स्यादि को मारकर मास उत्पन्न करता है। वह श्रेष्ठजीव दयावान उसका भक्षण नहीं करते है। जिनके दूधसे शरीरकी वृद्धि होती ऐसी गाय भैस बकरी उनके मृतक शरीर का भक्षण करते एव मार मारकर भक्षण करते है तथा उनके बच्चो को भक्षण करते है। वे अधर्मी महानीच नरक निगोद के अधिकारी है। जो दुराचारी मास भक्षण करते वह माता, पिता, पुत्र, मित्र, भाई आदि सबको ही भक्षण करते है। चित्रापृथ्वी के नीचे भवनवासी और व्यन्तर देवो के निवास है, और मध्यलोक मे भी है, जो दुष्टकर्म के करनेवाले जीव कषाय सहित तापसी बन पचाग्नि तप करते है, वह मिथ्यात्व सहित नीच देवो मे उत्पन्न होते है। अधोलोक मे प्रथम ही रत्नप्रभापृथ्वी के तीन भाग उनमे खरभाग और पकभाग मे भवनवासी और व्यन्तर देवोके निवास है और अब्बहुल भाग मे पहला नरक उनके नीचे छहनरक और है, ये सातो नरक छहराजू मे है, सातवे नरक के नीचे एकराजू मे निगोद जीव है त्रस जीव नहीं है। अर निगोदिया जीवो से तीनलोक भरा है।

अथानतर नरक का व्याख्यान सुनो—नारकी जीव महाक्रूर कटुशब्द बोलनेवाले

अतिकठोर स्पर्श है, महादुर्गन्ध, अधकाररूप नरक मे पडे, उपमारहित दुखो को भोगने वाले, महाभयकर नरक, कुम्बीपाक। वहाँ वैतरणी नदियाँ है, और तीखे काँटो सहित शालमली वृक्ष, तलवार की धार समान पत्ते तीखे, वहाँ देदीप्यमान अग्निसे तपे हुये तीक्ष्ण लोहे के कीले शाश्वत है, मधु मास के भक्षण करने वालोको और जीवो को मारने वालो को उन नरको मे नि रन्तर दुख भोगना पडता है। नरको मे आधा अगुलमात्र भी क्षेत्रसुख का कारण नहीं, एकपलकमात्र भी नारकी जीवो को दुखोसे विश्राम नहीं, कोई चाहते है कि कहीं भागकर छिप जाये परन्तु जहाँ जाते है, वहाँ ही नारकी मारते है। और असुरकुमार पापी देव बता देते है। महाप्रज्वलित अग्निसमान नरककी भूमिमे जन्म लेते ही ऐसे विलाप करते है, जैसे अग्निमे मछली व्याकुल होकर तडफडाती है, भयसे दुखी होकर अन्य स्थान जाना चाहे, शीतलता के लिये तो वहाँ नारकी वेतरणी नदीके जल मे डालदेते है, सो वेतरणी महादुर्गन्ध खारेजल से भरी तप्तायमान नारकी को दाह उत्पन्न करती है। पुन शाति के लिये वृक्षके नीचे जाते तो तलवारकी धारके समान वृक्षके पत्ते सिरपर गिरे तो मानो चक्र खड्गादिसे शरीरको काटाहो, छेदन भेदन हुये हो, नाक कान जधा कधा सर्व अग जिनके एव नरक मे महाविकराल महादुखदाई हवा चलती है, रुधिरके कण बरसते है यत्रो मे पेलते है, क्रूर शब्दो से महाविलाप करते है। श्यालमली वृक्षोपर घसीटते है मुदगरो से मारते है, प्यास की वेदना से जल माँगते है, तब उन्हे गर्म ताबाँ गलाकर पिलाते है, उससे शरीर महातप्तायमान होता है, तब महा दुखी होकर कहते है, हमे प्यास नहीं है जल नहीं पीना है, तब भी जबरन बलात्कार कर नारकियो को पृथ्वीपर पछाडकर ऊपर पैररखकर सडासियो से मुह फाड फाड गरम गरम ताँबा पिलाते है, उससे कठ और हृदय भी दग्ध हो जाता है। नारकी जीवो को परस्पर अनेक प्रकार का दुख, एव असुरकुमार देवोके द्वारा करवाया हुआ अनेक प्रकार के महादुखो का वर्णन कौनकर सकता है। इसीलिये नरक के दुखो को सुनकर उन दुखो से बचने के लिये मद्य मास मधु का भक्षण नहीं करना चाहिये। ऐसे मुनि के वचन सुन नरकसे डरा, कुडलमडित पुन बोला-हे नाथ! पापी जीव तो नरक के ही पात्र है, और जो विवेकी सम्यग्दृष्टि जीव श्रावकके व्रत पालते हैं, उनकी क्या गति है। तब मुनिश्री ने कहा जो सम्यग्दृष्टि दृढता पूर्वक श्रावकके व्रतों को पालते है, वह स्वर्ग मोक्ष के पात्र होते है। और जो जीव मद्य मास मधु का त्याग करते है वे भी कुगति से

बचते हैं। जो अभक्ष का त्याग करते है वे शुभगति को पाते है। जो उपवास दानादि नहीं करते परन्तु मद्य मास के त्यागी है जो शीलव्रत से मडित जिनशासन के सेवक, श्रावक के व्रत पालते है उनका क्या पूछना? वे तो सौधर्मादि देवो मे उत्पन्न होते है। अहिंसाव्रत धर्म का मूल है। अहिंसाव्रत से म्लेच्छ व चाडाल भी दयावान होकर मधु मास त्यागकर निर्मलभावो से पापोको छोड पुण्यको ग्रहणकर देव व मनुष्य पर्याय को प्राप्त करते है। और जो सम्यग्दृष्टि जीव है वह अणुव्रत को धारण कर, देवो मे महाइन्द्र होकर परमभोगो को भोगते है, पुन. मनुष्य होकर मुनिबन मोक्ष प्राप्त करते है। ऐसे गुरु के मुख से कल्याणकारी धर्मोपदेश सुनकर यद्यपि कुडलमडित अणुव्रत धारने मे सशक्त नहीं है, फिर भी गुरु को नमस्कारकर मद्य मास मधु का त्यागकर सम्यग्दर्शन को प्राप्त किया। भगवान की प्रतिमा को एव गुरुको नमस्कार कर अन्यदेश मे गया। मन मे विचार करता रहा कि मेरा मामा पराक्रमी मुझे दुखी जान अवश्य ही मेरी सहायता करेगा। मै पुन. राजा बनकर शत्रुओ को जीतूँगा, ऐसी आशाकर दक्षिण दिशामे जानेको तैयार हुआ। वह अतिखेद खिन्न दुखसे भरा धीरे धीरे जा रहा था सो मार्गमे अत्यन्त रोगकी वेदना से सम्यक्त्व रहित हुआ और मिथ्यात्वसे मरण हुआ। जिससमय कुंडलमडित के प्राण निकले वह राजा जनक की रानी विदेहा के गर्भ मे आया, उसी समय वेदवती का जीव जो चितोत्सवा थी, वह भी मर के विदेहा के गर्भ मे आई, तथा तपके प्रभावसे सीता हुई, ये दोनो एकगर्भ मे आये। और वह पिगलब्राह्मण मुनिव्रत धारणकर भवनवासी देव हुआ, उसने अवधिज्ञान से अपना तप का फल जान, पुन सोचा कि वह चित्तोत्सवा कहाँ गई, और वह पापी कुडलमडित कहाँ गया। उसके कारण मै पूर्व भव मे दुख अवस्थाको प्राप्त हुआ था। अब वे दोनो राजा जनक की रानीविदेहा के गर्भ मे आये है। वह चित्तोत्सवा तो स्त्री की जाति पराधीन थी, उस पापी कुडलमडित ने अन्याय कार्य किया इसीलिये यह मेरा परम शत्रु है, अब जो गर्भमे उसको मारूँ, तो रानी मर जायेगी इसीलिये रानी से मेरा कोई बैर नहीं है। और जब ये गर्भ से बाहर आये तब मै उसे दुख दूँ। ऐसा चिन्तवन करता हुआ पूर्वभव के बैर से क्रोधायमान होकर देवने कुडलमडित के जीवको मारने का विचार किया। ऐसा जानकर सब जीवोको क्षमा करना, किसीको दुख नहीं देना, जो किसीको दुख देता है, वह अपने आपको दुखके सागर मे डुबोता है।

अथानंतर समयपर रानी विदेहाके पुत्र और पुत्री का युगल जन्म हुआ। तब वह देव पुत्रको हरकर ले गया पहलेतो क्रोधसे विचार किया कि मैं इसको शिलापर पटककर मार दु, पुनः सोचा कि धिक्कार है मुझे, मैने अनन्त संसार का कारण जो पाप उसका विचार किया, बालहत्या समान और कोई पाप नहीं, पूर्वभव में मै मुनिबना था सो जीव मात्र की भी विराधना नहीं करता, सर्वारम्भ छोड तपकिया, गुरु के प्रसाद से निर्मल धर्मको प्राप्तकर ऐसी विभूतिको प्राप्त हुआ। अब मै ऐसा पाप कैसे करूँ। थोडा पापभी महादुख का कारण है। पाप से यह जीव ससार रूपीवनमे बहुत कालतक दुखरूपी अग्निमें जलते है। जो दयावान निर्दोष है, भावना शुभ है, सावधान रूप है, सो धन्य है। देव ऐसा विचारकर दयासहित बालकको आभूषण पहिनाये एव कानो मे दैदीप्यमान कुडल पहनाये और पर्णलब्धिनामकी विद्याके बलसे आकाश से पृथ्वीपर सुख के स्थानपर डाल दिया, और स्यय अपने स्थान पर चला गया। रात्रिके समय चद्रगति विद्याधर ने इस बालकको आभूषणो की ज्योति से प्रकाशमान आकाशसे गिरताहुआ देखा, कि यह नक्षत्रपात हुआ या विद्युतपात यह विचारकर पासमे आकर देखा, तो बालक है तब हर्षसे बालकको उठा लिया और अपनी रानी पुष्पवती जो सेजपर शयन कर रही थी उसके जाघो के मध्य रख दिया और राजा कहने लगा—हे रानी! उठो उठो तुम्हारे बालक हुआ है। बालक महासुन्दर रूपवान गुणवान शोभायमान है। तब रानी ऐसे सुन्दर बालक को देख प्रसन्न हुई, बालक की ज्योति से नींद चली गई और महाविस्मय को प्राप्त हो राजा से पूछती है हे नाथ! इस अद्‌भुत बालकको कौन पुण्यवती स्त्रीने जन्म दिया है तब राजाने कहा—हे प्यारी! तेरे समान कौन पुण्यवती ओर है, धन्य है भाग्य तुम्हारा जो ऐसा पुत्र हुआ। तब रानीने कहा—हे देव! मै तो बाझ हूँ मेरेपुत्र कहाँ, एकतो मुझे पूर्वोपार्जित कर्मो ने ठगी पुन. आप क्यो हँसी करते हो। तब राजा ने कहा—हे देवी! तुम शका मत करो स्त्रीयो के गुप्तगर्भ भी होता है, तब रानीने कहा ऐसाही सही, परन्तु बालक के कानो मे ज्योतिरूप कुंडल कहाँ से आये, ऐसे कुडल, पृथ्वीपर नहीं, तब राजा ने कहा हे रानी! ऐसे विचार करने से क्या? यह बालक आकाश से गिरा और मैने पकडा और तुझे दिया, यह बडे कुलका पुत्र है, इसके लक्षणो से जाना जाता है कि, यह कोई बडापुरुष है, अन्यस्त्री तो गर्भ के भारसे खेद खिन्न हुई, परन्तु हे प्रिय! तुमने बालक को सुख से पाया है। अगर अपने गर्भसे उत्पन्न बालक भी माता

पिता का भक्त एव विनयवान नहीं हो। शुभ काम नहीं करे तो क्या, कोई स्वय का पुत्र भी शत्रु हो जाता है इसीलिये पेटके पुत्रका क्या विचार करना, तेरे यह पुत्र सुपुत्र होगा, इसमे सन्देह नहीं, अब तुम इस पुत्रको लेकर प्रसूति घर मे प्रवेश करो। और लोगो से यही कहना कि रानी के गुप्तगर्भ था सो पुत्र हुआ। तब रानी पतिकी आज्ञाप्रमाण प्रसन्न होकर प्रसूतिघर मे गई। प्रात. काल राजाने पुत्रके जन्म का उत्सव किया। रथनपुर मे पुत्रके जन्मका ऐसा उत्सव हुआ, जो राज्य मे सब कुटुम्ब एव नगर के लोग आश्चर्य को प्राप्त हुये। रत्नोंके कुडल की किरणोसे मडित यह पुत्र, तब माता पिता ने राजकुमार का नाम प्रभामडल रखा, एव पालन पोषण करने के लिये धाय को सोपा। सभी अन्तपुरकी रानी आदि सकल स्त्रीयो के हाथरूप कमलो का भ्रमर हुआ। भावार्थ—यह बालक सब लोगो को प्यारा सबके मनको चुराने वाला है। बालक तो यहाँ सुख से रहता है, यह तो कथा यहीं रही।

अथानतर मिथिलापुरी मे राजा जनककी रानी विदेहा पुत्रको हरा जान विलाप करती हुई ऊँचे स्वर से रोने लगी सर्व परिवार के लोग शोकरूपी दुखके सागरमे पडे, रानी ऐसे पुकार रही है, मानो शस्त्रो से मारी हो, हाय हाय पुत्र तुझे कौन ले गया, मुझे महादुखो को देने वाला वह निर्दयी कठोर चित्तके हाथ मेरे राजकुमार को हरण करने मे कैसे रहे? जैसे पश्चिमदिशा की तरफ सूर्य आकर अस्त हो जाता ऐसे तू मेरे मन्द भागी के पास आकर अस्त हो गया, मैने पूर्वभव मे किसीके बालकका वियोग कराया होगा, सो मैने भी यह फल पाया। इसीलिये कभी अशुभ कर्म नहीं करना। अशुभ कर्मही दुखका बीज है। जैसे बीज बिना वृक्ष नहीं ऐसे अशुभबिना दुख नहीं। जो पापीने मेरा पुत्र हरा है, वह मुझे ही क्यो नहीं मार गया। मुझे अधमरीकर दुखके सागरमे क्यो डालकर गया। इस प्रकार रानीने अतिविलाप किया तब राजा जनक ने आकर अतिसाहस देकर कहा, हे प्रिय! तुम शोक मत करो तेरा पुत्र जीवित है किसी ने हरा है, सो तू निश्चय से देखेगी वृथा क्यो रोती है, पूर्वकर्म के उदय से गई वस्तु कोई तो देखते है कोई नहीं। तुम स्थिरताको प्राप्त होओ। राजा दशरथ मेरा परममित्र है, उसको यह बात लिखता हूँ, वह और मै, दोनो तेरे पुत्रको ढूँढकर लायेगे, अच्छे अच्छे चतुर मनुष्य को पुत्रको ढूंढनेके लिये भेजेगे। इसप्रकार कहकर राजा जनक ने अपनी रानीको सन्तोष दिया। दशरथ के पास पत्र लिखकर भेजा, दशरथ पत्रको पढकर चिन्ता

करने लगे। तब राजा दशरथ और राजा जनक दोनो ने पृथ्वीपर बालकको ढूँढा परन्तु कहीं भी नहीं देखा, तब महाकष्ट से शोकको दबाकर बैठे। ऐसा कोई स्त्री पुरुष नहीं होगा जो इस बालक को जाननेपर ऑखो में ऑसू नहीं भरे हो। सबही दुखके कारण शोक के वश होकर रोने लगे। प्रभामडलके गये का शोक दुख भुलाने के लिये महामनोहर जानकी बाल क्रीडाकर सबपरिवारको आनन्दित करती रही। महाहर्षको प्राप्त हुई। रानियों की गोदमे अपने शरीर की ज्योतिसे दशो दिशाओ को प्रकाशरूप करती हुई वृद्धि को प्राप्त हुई। कैसीहै जानकी? कमलसमान नेत्र है, महाकंठ मधुरवाणी प्रसन्न मुख, मानो पद्मद्रह तालाब, कमलो के निवास स्थान से, श्रीदेवी ही आई है। जानकी के शरीररूपी क्षेत्रमे गुण रूपीधान्य उत्पन्न हुये, जैसे जैसे शरीर बढा वैसे वैसे गुण बढे। समस्त लोगोको सुखदेने वाली अत्यन्त मनोज्ञ सुन्दर लक्षणो से सहित सीता का शरीर था। सीता कहो-पृथ्वीसमान क्षमाको धारण करने वाली, इसीलिये जगतमे सीता कहलाई। मुखसे चन्द्रमाको जीता है, पल्लवसमान कोमलहथेली, महाश्याम सुन्दर इन्द्रनीलमणि समान केशो का समूह सुन्दर भोहे, मौलश्री के पुष्प समान मुखकी सुगन्ध उस पर भ्रमर गुजार करते है। कोमल पुष्पमाला समान भुजाये है। केहरी समान कटि है। कमल समान मनोहर आरक्त चरण है, अत्यन्त सुन्दर कलश समान युगल स्तन है, रूपवान गुणवान महाश्रेष्ठ मन्दिर के प्रागण मे महारमणीक सातसौ कन्याओ के समूह मे शस्त्र के समान क्रीडा करती, जो कदाचित इन्द्र की पटरानी शचि अथवा चक्रवर्ती की पटरानी सुभद्रा इसके शरीर की शोभा के किंचित मात्र भी धारण करे तो भी सीता अति मनोज्ञ रूपवान लगती है। ऐसी यह सीता सबसे सुन्दर है। इसके रूपगुण विनय देख राजा जनकने विचार किया कि जैसे रति कामदेव के ही योग्य है ऐसे यह राजकुमारी सबकी प्यारी, गुणवान राजा दशरथ के बडे पुत्र राजकुमार राम के ही योग्य है। सूर्यकी किरण के योग से कमलो की शोभा प्रगट होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे सीता प्रभामडलका जन्म वर्णन करनेवाला छब्बीसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-27

रामलक्ष्मण द्वारा म्लेच्छराजा की पराजय

अथानतर राजाश्रेणिक ने यह कथा सुनकर गौतमस्वामी से पूछा हे प्रभो! जनक राजाने राम का क्या माहात्म्य देखा, जो अपनी राजकुमारी सीता का विवाह राम से कराने का विचार किया? तब गौतमगणधर मनको आनन्द देनेवाले वचन कहने लगे। हे राजन! महा पुण्याधिकारी श्रीरामचन्द्र उनका सुयश सुनो। जिस कारण से राजा जनक महाबुद्धिमान ने राजकुमार रामसे अपनी राजकुमारी का विवाह के लिये सोचा, वह कथा सुनो—वैताडपर्वत के दक्षिण भागमे और कैलाशपर्वत के उत्तरभाग मे अनेक अन्तर देश बसे है, उनमे एक अर्धबरबर देश असयमी जीवो का है, वहाँ महाअज्ञानी निर्दयीजीव म्लेच्छ लोगो से भरा उसमे एक मयूरमाल नगर, काल के नगर समान महाभयानक, वहाँ आतरगतम म्लेच्छ राज्य करता है। सो वह पापी दुष्टो का नायक बडी सेना, सम्पूर्ण म्लेच्छो को साथ लेकर देशो को उजाडने आये, सो अनेक देशो को नाश किया। प्रचड चित्त, अत्यन्त दौड है उनकी वह राजा जनक का देश उजाडने को आये। जैसे टिड्डीदल आये ऐसे म्लेच्छो की सेना आकर, सबको उपद्रव करने लगी, तब राजा जनकने अयोध्या को शीघ्र ही दूत भेजे म्लेच्छो के आने का सभी समाचार राजा दशरथको लिखे। वह शीध्र ही जाकर राजा दशरथ को सकल वृतान्त कहा, हे देव! राजा जनक ने विनती की है, परचक्र भीलो का आया एव वे सम्पूर्ण पृथ्वीका नाशकर रहे है, अनेक आर्यदेश विध्वस किये, वह पापी हमारी प्रजाको एकवर्ण करना चाहते है, प्रजा नष्ट हुई तो हमारे जीने से क्या? अब हमको क्या करना चाहिये? उनसे युद्ध करे अथवा कोई गढ पकड कर बैठे, लोगो को गढ मे रखे, कालिन्दी भागा नदी की तरफ विषम स्थान है, कहॉ जाये, अथवा विपुलाचल की तरफ जाये या सर्व सेना सहित कुजगिरी की और जाये, शत्रु सेना महाभयानक आ रही है। साधु और श्रावक सभी जीव अतिदुखी व कष्ट मे है, वह पापी म्लेच्छ गायादि जीवो का भक्षण करते है, इसीलिये जो आप आज्ञा करेंगे वह हम करेगे। यह राज्य यह पृथ्वी आपकी है, यहाँ की प्रतिपालना करना यह आपका कर्तव्य है। प्रजाकी रक्षा करने से धर्मकी रक्षा होगी, श्रावकलोग भावो सहित भगवान की पूजा करते है, नाना प्रकार के व्रतो को धारण करते है, दान देते है, शील पालते

है, सामायिक, प्रतिक्रमण करते है, भगवान के बडे बडे चैत्यालयो मे महा महाउत्सव होते है। विवेकी लोग प्रभावना करते है साधु दशलक्षण धर्मसे युक्त आत्मध्यान मे आरुढ मोक्षका साधक तप करते है, इसीलिये प्रजा नष्ट होते ही साधु एवं श्रावक का धर्म नष्ट होगा। और प्रजाके रहने से ही धर्म अर्थ काम मोक्ष सब पुरुषार्थ का साधन होता है। राजा शत्रुको जीतकर पृथ्वीकी प्रतिपालना करें तो प्रशसा योग्य हैं, राजाको प्रजाकी रक्षा से इसलोक और परलोक मे कल्याण की सिद्धि होती है। प्रजाबिना राजा नहीं और राजाबिना प्रजा नहीं। जीव दया धर्म का जो पालन करते है वह इस लोक व परलोक मे सुखी होते है। धर्म अर्थ काम मोक्षकी प्रवृति लोकमे राजाकी रक्षासे होती है नहीं तो कैसे होगी? राजा के भुजाओ की बलरूपी छाया प्राप्तकर प्रजा सुख से रहती है। जिस देशमे धर्मात्मा धर्म का सेवन करते है, दान तप शील पूजादि करते है, उस प्रजाकी रक्षा के योगसे पुण्य का छठा भाग राजाको प्राप्त होता है। यह सब वृतान्त राजा दशरथ सुनकर स्वय चलने को तैयार हुये, और श्रीरामचन्द्रजी को बुलाकर राज्य देने का विचार किया। बाजो की ध्वनि हुई तब सभी मत्री, सेवक आये, और हाथी, घोडे, रथ, पयादे सब आकर खडे रहे जलसे भरे सोने के कलश सेवक लोग स्नान के लिये लाये, शस्त्रो को लेकर बडे बडे सामन्त आये। नृत्यकारणियॉ नृत्य करने लगी, राजलोक की स्त्रीयॉ नानाप्रकार के वस्त्राभूषण सोने, चॉदी, रत्नो के पात्रो मे लेकर आई यह राज्याभिषेक का आडम्बर देखकर रामचन्द्रजी राजा दशरथ से पूछते है, कि हे प्रभो! यह क्या हो रहा है? तब दशरथने कहा, हे राजकुमार! तुम इसपृथ्वी की प्रतिपालना करो, मै प्रजाके हितके लिये शत्रुओ के समूह से युद्ध करने जा रहा हूॅ, वह शत्रु देवो से भी नहीं जीते जाय ऐसे बलशाली है। तब कमल समान नेत्रो के धारी श्रीराम कहनेलगे, हे तात! ऐसे रकोपर इतना परिश्रम क्यो? वे पशु समान दुरात्मा उनसे सभाषण करना, आपका जाना, उचित नहीं, उनके सामने युद्ध की अभिलाषा से आप क्यो पधारे। चूहोके उपद्रवसे हाथीको क्रोध कहॉ? और रुईको भस्म करने के लिय अग्नि क्यापरिश्रम करे, इसलिये उनसे युद्ध करने के लिये हमको आज्ञा दो यही उचित है। यह राजकुमार के वचन सुन राजादशरथ अतिहर्षित हुये और कुमार को अपने हृदय से लगाकर कहने लगे—हे पद्मराज! तुम बालक हो तुम्हारा कोमल शरीर उन दुष्टो को कैसे जीतोगे? यह बात मेरे मन मे नहीं आ रही है।

तब राम कहने लगे, हे तात! तत्काल की उत्पन्न हुई अग्निकी लौ क्या भयकर वनको भस्म नहीं करती? अवश्य ही करती है। छोटी बडी अवस्था से क्या प्रयोजन, जैसे निकलता ही बाल सूर्य घोर अन्धकार को नष्ट करता ही है ऐसे ही हम बालक उन दुष्टो को अवश्य ही जीतेगे, यह वचन रामके सुन राजा दशरथ अतिप्रसन्न हुये, नेत्र रोमाचित्त हो गये। राजकुमारो को युद्ध मे भेजने का कुछ विषाद हुआ, नेत्र सजल हो गये। राजा ने मनमे विचार किया कि महापराक्रमी त्यागादि व्रतोको धारण करने वाले क्षत्रियो की यही रीति है जो प्रजा की रक्षा के कारण अपने प्राण तजने को उद्यम करे। आयु के क्षय बिना मरण नहीं, यद्यपि गहन रणमे जाय तो भी नहीं मर सकता। ऐसा चिन्तवन राजा दशरथ कर रहे थे, तब राम लक्ष्मण पिताके चरणकमलो को नमस्कारकर युद्ध के लिये निकले। सब शास्त्र और शस्त्र विद्या मे प्रवीण, सब लक्ष्णो से पूर्ण सबको प्रिय है, दर्शन जिनका चतुरग सेना से मडित, विभूति से पूर्ण अपने से दैदीप्यमान दोनो भाई राम लक्ष्मण रथ मे आरूढ होकर राजाजनक की मदद के लिये चले। इन दोनो भाईयो के जाने से पहले जनक और कनक दोनो भाई शत्रुसेना को दो योजन दूरी जान युद्ध करने को चले। राजा जनक एव कनक के महारथी योद्धा शत्रुओ के शब्दो को न सहन करते हुये म्लेच्छो के सामने गये। और म्लेच्छ एव सामन्तो के महायुद्ध हुआ उसको देखने और सुनने से रोम रोम खडे हो जाते है, दोनो सेना के लोग व्याकुल हुये, कनक म्लेच्छो से दबा, तब जनक भाई की मदद के लिये क्रोधायमान होकर दुर्निवार युद्ध किया, फिर भी बरबर देशके म्लेच्छ महाभयानक जनक को वाणोसे दबाते रहे, उसी समय राम लक्ष्मण आकर पहुँचे, और अपार महागहन म्लेच्छो की सेना रामचन्द्रजी ने देखी। राजकुमार रामचन्द्र का उज्वल छत्र देखकर शत्रुओ की सेना कम्पायमान हुई जैसे पूर्णिमा के चन्द्रमा को देख अन्धकार का समूह भाग जाता है, म्लेच्छो के वाणो से जनक का बख्तर टूटा। जनक खेद खिन्न हुए। तब रामने धैर्य बधाया, जैसे ससारी जीव कर्मो के उदय से दुखी होते है, वह धर्मके प्रभाव से दुखो से छूटकर सुखी होते हैं। ऐसे राजा जनक रामके प्रभाव से सुखी हुये। चचल घोडो वाले रथ मे आरुढ हो, राघव महाउद्योत रूप शरीर हारकुडलो से युक्त कवच पहने धनुष चढाये एव बाण हाथ मे। सिहके चिन्हकी है ध्वजा उनकी चमर दुरे है, महामनोहर छत्र सिरपर फिरे है। पृथ्वी के रक्षक धीरवीर है मन जिनका, ऐसे श्रीराम प्रजाके

पालक शत्रुओ की महासेना मे प्रवेश किया। योद्धाओं के समूह मे सूर्य समान सुशोभित हुये। जैसे मदोन्मत्त हाथी केलो के समूह को नाश करे वैसे इन्होने शत्रुओ की सेना का नाश किया। और जनक एव कनक दोनो भाईयों की रक्षा की। लक्ष्मण ने मेघो के समान वाणो की वर्षा की। तीक्ष्ण चक्र, शक्ति, कुठार, करोत से अनेक म्लेच्छ मरे। कितने ही म्लेच्छ लक्ष्मण के बाणो से विदारे गये, किसी की भुजायें कटी, हजारो मस्तक कटकर पृथ्वीपर गिरे, ये सब दृश्य देख म्लेच्छ की सेना लक्ष्मण के आगे से भागी। लक्ष्मण, सिहसमान दुर्निवार, उसे देखकर जो म्लेच्छो मे गीदड समान थे वे शोकको प्राप्त हुये, मुख से महाकठोर शब्द बोलते, धनुष बाण, खड्‌ग, चक्र, शक्ति आदि शस्त्रो को लेकर रक्तवस्त्र पहने कोई श्याम कोई नीले आदि कवच पहन कर, कौडी के समान दॉत, विस्तीर्ण उदर ऐसे लगे मानो क्रूरजाति के वृक्षही हैं। कोई हाथो मे आयुध लेकर भारी भुजाओ सहित, असुरकुमार समान उन्मत्त, महानिर्दयी, पशुओ के मॉस भक्षी, महामूढ, जीव हिसा मे तत्पर, जन्म से ही पापी, खोटी क्रिया के करने वाले, सुअर, भैस, व्याध्र इत्यादि जीवो के चिन्ह उनकी ध्वजाओ मे है, अनेक वाहनोपर चढे, युद्ध करनेवाले, तेजी से दौड लगाने वाले, महाप्रचड, तुरग समान चचल, वह भील मेघमाला समान लक्ष्मणपर बाण चलाये, तब लक्ष्मण उनको मारने के लिए दौडे। तब लक्ष्मण के तेजप्रताप से वहपापी म्लेच्छभाग गये, परस्पर आपस मे गिरते पडते भागे। तब उनका स्वामी आतरगतम अपनी सेना को धैर्य बधाकर सम्पूर्ण सेना सहित आप लक्ष्मण के समुख आया और महाभयकर युद्ध किया। लक्ष्मण को रथ रहित किया, तब रामचद्रजी ने अपना रथ पवनसमान जल्दी चलाकर लक्ष्मण के समीप आये, लक्ष्मण को दूसरे रथपर चढाकर आप स्वय जैसे अग्नि वनको भस्म करे, वैसे उनकी अपार सेना को बाणोकी अग्निसे भस्म किया। किसीको बाणो से मारे, किसी को शस्त्रोसे विध्वसे, किसीको तोमर से मारा, किसीको सामान्यचक्रसे निपात किये। वह म्लेच्छोकी सेना महाभयकर दशो दिशाओ मे भाग गई, छत्र चमर ध्वजा धनुषादि शस्त्र छोडकर भाग गये। महापुण्य अधिकारी जो राम उन्होने एक निमिषमात्र मे म्लेच्छो का निराकरण किया। जैसे महामुनि क्षणमात्र मे कषायो का निग्रह करते, ऐसे म्लेच्छों का निग्रह किया। वह पापी आतरगतम अपार सेना सहित आया था, वह भय से केवल दसघोडो के असवार सहित भाग गया। और सब म्लेच्छ भयसे व्याकुल होकर

सहयाचल विध्याचल के वन मे छिप गये तब श्रीरामने आज्ञा की-कि ये नपुसक युद्ध से वापिस भाग रहे तब इनको मारने से क्या? श्रीरामचन्द्रके भय से पशु हिसादि खोटे कर्मको छोड वनके फलोका आहार करते, जैसे गरुड से सर्प डरते ऐसे वह म्लेच्छ श्रीरामचन्द्रजी से डरते रहे। लक्ष्मण सहित श्रीराम शातस्वरूपी, राजा जनक को बहुत प्रसन्नकर विदा किया। और आप अपने पिताजी के पास अयोध्या चले। सब पृथ्वीके लोग आश्चर्यको प्राप्त हुये। राम लक्ष्मण ने सबको परम आनन्दित किया, सबको हर्ष हुआ। रामके प्रभाव से सम्पूर्ण पृथ्वी शोभायमान हुई जैसे चतुर्थकाल मे ऋषभदेव के समय सपदा से शोभायमान हुई। गौतमस्वामीने कहा हे राजाश्रेणिक! ऐसे राम का महात्म्य देखकर, राजा जनक ने अपनी पुत्री सीता, रामचन्द्र जी को देने का विचार किया। बहुत कहने से क्या जीवो के सयोग वियोग का कारण एक कर्म का उदय ही है, वह श्रीरामचन्द्रजी श्रेष्ठ महापुरुष महाशौभाग्यवत अतिप्रतापी अतिगुणवान ऐसे शलाका पुरुष पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुये जैसे किरणो के समूह से सूर्य महिमा को प्राप्त होता है। महापुण्यशाली श्रीरामचन्द्रजी ने पूर्वभव मे महापुण्य उपार्जन किये है, जो इसभव मे बिना पुरुषार्थ से भी शत्रु वश हो जाते है, इसीलिये प्रत्येक जीवो को मनवाछित फलकी प्राप्ति के लिये पुण्यकार्य करना चाहिये।

(इति श्री रविषणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे म्लेच्छोकी हार रामकी जीत का कथन करनेवाला सत्ताईसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-28

सीता का स्वयंवर और राम के साथ विवाह

अथानतर ऐसे पराक्रम से पूर्ण जो राम उनकी कथा किये बिना नारद एकक्षण भी नहीं रहे, हमेशा रामकी कथा करते ही रहते है। राम का यश सुनकर परमहर्ष को प्राप्त हुये है। नारदने सुना कि जनकने रामको जानकी देनी विचारी है। कैसी है सीता? सब पृथ्वीपर अद्‌भुत महिमा प्रगट है। नारद ने मनमे सोचा कि एक बार सीता को देखूँ, वह कैसी है। कैसे लक्षणो से शोभायमान है, जो राजा जनक ने रामको देने का निश्चय किया है। वह नारद शीलसयुक्त है, सीता

को देखने सीता के घर आया। वह जानकी दर्पण मे मुख देख रही थी, सो नारद की जटा दर्पण मे पीछे से देखी तब सीता भयसे व्याकुल होकर कहा हे माता! यह कौन? भयसे कम्पायमान होकर महल के अन्दर चली गई, नारद भी साथ ही महल मे जाने लगा तब द्वारपालो ने रोका, तब द्वारपाल और नारद के लडाई हुई, सो कलह के शब्द सुनकर, खड्ग एव धनुष के धारी सामन्त दौडकर आये, कहने लगे, पकड लो, पकड लो, यह कौन है? इन शस्त्र धारियो के ऐसे शब्द सुनकर नारद डरे, आकाश से गमनकर कैलाशपर्वत पर गये, वहॉ बैठकर चिन्तवन करने लगे, मै महाकष्ट को प्राप्त हुआ और बडीमुश्किल से बचा, नया जन्म पाया। जैसे पक्षी दावानल अग्नि से बाहर निकले ऐसे मै वहॉ से निकला। धीरे धीरे नारद की कम्पनमिटी और ललाटपर पसीना पूॅछ केशो को समारा, हाथ पैरो मे कम्पन जैसे जैसे बात याद आती, ऐसे ऐसे श्वास ले महाक्रोधायमान होकर मस्तक हिलाते हुये, सोचा कि देखो कन्या की दुष्टता, मेरे मन मे गलत विचार नहीं सरल स्वभाव से राम के अनुराग से सीता को देखने गया था, परन्तु मै वहॉ मृत्युसमान अवस्था को प्राप्त हुआ, दुष्टमनुष्य मुझे पकडने को आये, लेकिन मैं पकडा नहीं गया, वह ठीक हुआ। अब वह पापिनी मेरे आगे कहॉ बचे? जहॉ जहॉ जायेगी, वहॉ वहॉ ही उसे कष्ट मे डालूॅगा। मै बिना बाजे बजाये ही नाचूॅ, तो जब बाजे बजे तो कैसे छोडूॅ। ऐसा विचारकर शीघ्रही वैताडकी दक्षिण श्रेणीपर स्थित रत्नपुरनगर गया। महासुन्दर सीताका रूप चित्रपटपर बनाया। ऐसा चित्र बनाया मानो प्रत्यक्ष ही है। सो उपवन मे भामडल चन्द्रगतिविद्याधर का पुत्र अनेक राजकुमारो सहित क्रीडा करने आया था। वह सीता का चित्रपट उसके पास डालकर नारद छिप गये। भामडल ने यह तो नहीं जाना कि यह मेरी बहिन का चित्रपट है। चित्रपट देख मोहित हुआ, लज्जा, शास्त्र, ज्ञान, यह सब भूल गया, लम्बे लम्बे श्वास लेते हुए होठ सूख गये, शरीर शिथिल हुआ, रात और दिन मे नींद नहीं आती, अनेक उपचार कराये तो भी शाति नहीं, सुगन्ध, पुष्प और सुन्दर आहार भामडल को विषसमान लगने लगे, शीतल जल से भी शांति नहीं, कभी मौन से रहे, कभी हसे, कभी विकथा करे, कभी खडा रहे, कभी चले, कभी बैठा रहे। ऐसी चेष्टा करे मानों जैसे भूत लगा हो, तब बडे बडे बुद्धिमान इसे कामातुर जान कहने लगे, किसी कन्या का रूप किसीने चित्र पटपर बनाकर इसके पास डाला है इसीलिये यह विक्षिप्त हुआ है। कदाचित् यह क्रिया नारद ने ही की हो। तब

तब सेवक से कहा, तुम एक तेजघोडा लाओ, तब सेवक मायामई अश्व को ले गये। राजा उसपर चढे वह अश्व आकाश मे राजाको ले उडा। तब सब परिवार, परिजन, पुरजन शोकवान होकर रोने लगे। एव रोते हुये नगर मे वापस गये।

अथानतर वह अश्वके रूपका धारक विद्याधर मनसमान वेगसे अनेक नदी, पहाड, वन, उपवन, नगर, गॉव, देश उलघकर राजा जनकको रथनुपुर ले गया। नगर के निकट एकवृक्ष के नीचे आया, तब राजा जनक वृक्षकी डाली पकड लटक गये। वह तुरग नगर मे आया राजा वृक्ष से उतर विश्राम कर आश्चर्य सहित आगे गये। वहॉ एक सोने का बना ऊँचा कोट देखा, दरवाजा रत्नमयी तोरणो से शोभायमान और महासुन्दर उपवन देखा, उसमे अनेकवृक्ष, बेल, फल, फूल, देखे। तब राजाने खड्गको दाहिने हाथ मे लेकर, सिहसमान अतिनिशक क्षत्रियव्रत मे प्रवीण, दरवाजेपर गये, दरवाजे के भीतर अनेक फलो की शोभा को देखते हुये प्रसन्न नेत्रो से अनेक महल एव जिनमन्दिर देखे। कैसेहैमन्दिर? मोतियो की झालरो से शोभित रत्नो के झरोखो से सहित, स्वर्णमई हजारो मानस्तभो से मनोहर, सुमेरुके शिखर समान ऊँचे शिखर, ऐसे जिनमन्दिर को देखकर जनक ने सोचा, यह इन्द्रका मन्दिर है या अहमिन्द्रका मन्दिर, उर्ध्वलोक से आया है या नागेन्द्रका भवन पातालसे आया है, या किसी कारण से सूर्य कि किरणे पृथ्वीपर एकत्रित है। अहो! उसमित्र विद्याधर ने मेरा बडा उपकार किया, जो मुझे यहॉ ले आया। मैने अब तक ऐसा स्थान नहीं देखा, ऐसा चितवनकर, महामनोहर जो जिनमन्दिर उसमे जिनराज के दर्शनकर मन हर्षसे फूल गया। कैसेहैजिनराज? स्वर्ण समान वर्ण, पूर्णिमाके चन्द्रमा समान मुख, पद्मासन से विराजमान, अष्ट प्रातिहार्य से सयुक्त, स्वर्णकमल से पूजित नानाप्रकार के रत्नो से जडित छत्र, सिरपर लगे, ऊँचे सिहासनपर भगवान विराजामान है। तब जनक हाथजोड, शीशनवाय प्रणामकर भक्ति की अनुराग से मूर्च्छाको प्राप्त हुआ। क्षणएक मे सचेत होकर प्रभुकी स्तुति करने लगा। परम आश्चर्य सहित जनक चैत्यालय मे बेठ गये। वह चपलवेग विद्याधर अश्वका रूप दूरकर, राजा चन्द्रगतिके पास गया और नमस्कार कर कहा, मै जनक राजा को ले आया हूँ। मनोज्ञवन मे भगवान के चैत्यालय मे बैठा है तब राजा यह बात सुनकर परमहर्ष को प्राप्त हुआ। थोडे से पासके लोगो को साथ लेकर राजा चन्द्रगति पूजा की सामग्री लेकर मनोरथ समान रथ पर आरुढ होकर चैत्यालय मे आया, वहॉ राजा जनक ने चन्द्रगति की

सेना को देखा, अनेक बाजोकी ध्वनिको सुनकर कुछ शका हुई, कोई विद्याधर मायामयी सिहपर कोई हाथीपर कोई घोडोंपर, कोई हसो पर बैठे। उनके बीच मे राजा चन्द्रगति है। उनको देखकर जनक ने सोचा, जो विजयार्ध पर्वतपर विद्याधर रहते हैं, ऐसा मै सुनता था सो ये वोहि विद्याधर है। विद्याधरो की सेना के बीच परमऋद्धि का धारी उनका स्वामी होगा। ऐसा चिन्तवन जनक कर रहे थे, उसीसमय वह चन्द्रगति राजा दैत्यजाती के विद्याधरो का स्वामी चैत्यालय मे आया। तब जनक उसे देखकर कुछ भयभीत हुआ और भगवान के सिहासन के नीचे बैठ गया। राजा चन्द्रगति ने भक्तिसे भगवानको नमस्कार कर विधिपूर्वक पूजा एव स्तुति की। मधुरस्वरो से वीणा हाथमे लेकर भगवान के गुण गाता रहा। अहो! भव्यजीवो जिनेन्द्र भगवान की पूजा करो, तीनलोक मे जीवो को श्रेष्ठसुख देने वाले जिनभगवान है। और ऋषभ देव भगवान को मन वचन काय से नमस्कार करो। उनको नमस्कार करने से जन्म जन्म के किये पाप सभी नष्ट होते है। जिनेन्द्र भगवान महा अतिशय के धारक कर्मो के नाशक परमगति को प्राप्त हुये है, और सभी सुर असुर नर विद्याधरो से पूजित है चरणकमल उनके। मै भक्ति से जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करता हू और जो विनय भक्ति सहित नमस्कार करते हैं, उनके सभी भय नाश होते है। वे जिनवर अनुपम गुणोंके धारी, अनुपम शरीर, और ससारके सभी कुकर्मो का एव रागादि को नाश किया है अथवा निर्मल है। और ज्ञानावरणदि जो कर्म उनको दूर करने मे महाप्रवीण, अत्यन्त पवित्र है इस प्रकार राजा चन्द्रगति ने वीणा बजाते हुये भगवान की स्तुति की। तब राजा जनक भयको छोड भगवान के सिहासन के नीचे से निकले। तब राजा चन्द्रगति जनक को देख हर्षित होकर पूछा, तुम कौन हो, इस निर्जनस्थान मे भगवान के चैत्यालय मे कहॉ से आये हो, तुम नागो के पति नागेन्द्र हो अथवा विद्याधरो के अधिपति हो, हे मित्र! आपका नाम क्या है, तब जनक कहने लगे, हे विद्याधरो के अधिपति! मै मिथलानगरी से आया हूँ। मेरानाम जनक है, मायामयी अश्व मुझे यहॉ ले आया है। राजा जनक ने ऐसा कहा, तब दोनो राजा अतिप्रेम से मिले परस्पर कुशल मगल पूछा। एक आसनपर बैठ कुछ क्षण में दोनो आपस मे विश्वास को प्राप्त हुये। तब चन्द्रगति जनक से कहने लगे, हे महाराज! मै बडा पुण्यवान मुझे मिथिलानगरी के अधिपति का दर्शन हुआ। आपकी राजकुमारी सीता महाशुभ लक्षणो से मडित है, मैने बहुत लोगो के मुख से सुना है, सो मेरे

पुत्र भामडल से उसका विवाह कराओ, आपसे सम्बन्धकर, मै अपना परम सौभाग्य मानूँगा। तब जनक ने कहा हे विद्याधरो के अधिपति! आपने जो कहा वह सब योग्य है परन्तु मैने मेरी पुत्री को राजा दशरथ के बडेपुत्र श्रीरामचन्द्रजी को देने का निश्चय किया है। तब चन्द्रगति बोले-उनको क्यो? तब जनक ने कहा—आपको सुनने का कौतुक है तो सुनो। मेरी मिथिलापुरी नगरी रत्नादि धन से और गायादि पशुओ से पूर्ण, सो अर्धबर बर देश के म्लेच्छ महाभयकर उन्होने आकर मेरे देश को पीडा दी। धनको लूटने लगे और देश मे श्रावक और यतिका धर्म मिटने लगा तब मेरे और म्लेच्छो मे महायुद्ध हुआ। उस समय रामने आकर मेरे और मेरे भाई की सहायता की। वह म्लेच्छ देवो से भी दुर्जय सो उन्होंने जीते। और राम के छोटे भाई लक्ष्मण इन्द्र समान पराक्रम के धारी, बडे भाई के सदा आज्ञाकारी महाविनयवान है। वे दोनो भाई आकर अगर म्लेच्छ की सेना को नहीं जीतते तो समस्त पृथ्वी म्लेच्छमय हो जाती। वे म्लेच्छ महा अविवेकी, शुभ क्रियाओ से रहित, प्राणियो को दुख देने वाले महा भयकर विष समान दारुण उत्पात का स्वरूप ही है, सो राम महाशलाका पुरुष उनके प्रसाद से भागकर चले गये। पृथ्वी का अमगल मिट गया। राजा दशरथ के पुत्र महादयालु लोगो के हितकारी, ऐसे पुत्रो को पाकर राजा दशरथ सुख से इन्द्रो के समान राज्य करते है। दशरथ के राज्य मे महा सम्पदावान लोग सुखी है। दशरथ महाशूरवीर उनके राज्य मे पवन भी किसीका कुछ हरण नहीं कर सकता, तो और कौन क्या हर सकता है? राम लक्ष्मण ने मेरा ऐसा उपकार किया तब मुझे ऐसी चिन्ता हुई कि मै इनका क्या प्रति उपकार करूँ, रात दिन मुझे नींद नहीं आती। जिसने मेरे प्राण बचाये मेरी प्रजा की रक्षा की, उन रामके समान मेरा और कौन? मैने उनकी कुछ भी सेवा नहीं की, पर उन्होने मेरा बडा उपकार किया। तब मैने विचारा कि जो अपना उपकार करे और उसकी सेवा कुछ नहीं बने तो जीना क्या? कृतध्न का जीवन तृण समान है, तब मैने मेरी पुत्री सीता यौवन पूर्ण देख राम योग्यजान श्रीरामको देने का विचार किया। तब मेरी चिन्ता मिटी। मै चिन्तारूपी समुद्र मे डूबा था, सो पुत्री नॉवरूप हुई, इसीलिये अब मै चिन्तारूपी समुद्र से निकला। राम महातेजस्वी है। यह वचन जनक के सुन चन्द्रगति के निकट मे रहने वाले सभी विद्याधर उदास मन होकर कहने लगे हे राजन! तुम्हारी बुद्धि शोभायमान नहीं। तुम भूमिगोचरी, अपडित हो। कहॉ वे रक म्लेच्छ और कहॉ उनको जीतने की बडाई, इसमे क्या

राम का पराक्रम देखा, जिनकी इतनी प्रशसा म्लेच्छों को जीतने से कही। राम की इतनी स्तुति की इसमें उल्टी निदा है। अहो! तुम्हारी बाते सुनकर हसी आती है, जैसे बालक को विषफल भी अमृत लगता है, और दरिद्र को बेर भी अच्छे लगते हैं। अब तुम भूमिगोचरियो का खोटा सबध छोडकर यह विद्याधरों का इन्द्र राजा चन्द्रगति इनसे सम्बन्ध करो। कहॉ देवो समान सपदा के धारी विद्याधर, कहॉ वे रंक समान भूमिगोचरी सर्वथा अतिदुखी। तब जनक बोले क्षीरसागर अत्यन्त बडा है, परन्तु प्यास बुझाता नहीं। और बाबडी थोडे ही मीठे जल से भरी है, वह जीवो की प्यास बुझाती है। और अधकार अत्यन्त फैला हुआ है उससे क्या, दीपक छोटा भी है परन्तु पृथ्वीपर प्रकाशकर पदार्थको दिखाता है। अनेक मदोन्मत्त हाथी जो पराक्रम नहीं कर सके, वह अकेला सिहका बालक कर सकता है। ऐसा जब राजा जनक ने कहा। तब सब विद्याधर क्रोधित होकर अतिक्रूर शब्दो से भूमिगोचरियो की निन्दा करने लगे। हे जनक! वह भूमिगोचरी विद्याके प्रभाव से रहित, हमेशा दुखी, शूरवीरता रहित, तुम क्या उनकी स्तुति करते हो, पशुओ मे और उनमे क्या भेद है। तुम्हारे मे विवेक नहीं इसीलिये उनकी कीर्ति करते हो। तब जनकने कहा—हाय हाय यह बडा कष्ट है, जो मैने पापके उदय से बडेपुरुषो की निन्दा सुनी। तीनलोक मे विख्यात भगवान ऋषभदेव, इन्द्रादि देवोसे पूज्य, इनका इक्ष्वाकुवश लोक मे पवित्र, वह क्या आपके सुनने मे नहीं आया। तीनलोक के पूज्य श्रीतीर्थकरदेव, और चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण वह भूमिगोचरियों मे ही उत्पन्न हुये हैं। उनकी तुम कैसे निन्दा करते हो। अहो विद्याधरो, पच कल्याण की प्राप्ति भूमिगोचरियो के ही होती है। विद्याधरो मे कभी किसी को तुमने देखी। इक्ष्वाकुवश मे बडे बडे राजा उत्पन्न हुये, और षट्खंड पृथ्वी का राज्य किया। चक्ररत्नादि महाविभूति के धारी, इन्द्र भी नमस्कार करता एव महापुरुषों के गुणानुवाद करता। ऐसे गुणो के सागर कृत्यकृत्य ऋषभदेव के वशमे बडे बडे पृथ्वीपति हुये है। उन्हीं के वशमे राजा अनरण्य बडे पराक्रमी हुये। उनकी रानी सुमगला, उनके पुत्र दशरथ क्षत्रीधर्म मे तत्पर लोगो की रक्षा के लिये अपने प्राण त्यागकरते हुये नहीं डरते। उनके चार पटरानी चारो दिशा ही है। सम्पूर्ण शोभा से युक्त गुणो मे उज्वल पॉचसौ और रानीयॉ, अपना शुभचरित्र से पतिका मन हरती है। और राजा दशरथके राम बडे पुत्र उनको पद्म भी कहते है, लक्ष्मीसे मडित शरीर, दीप्तीसे जीता है सूर्य, कीर्तिसे जीता चन्द्रमा, स्थिरतासे

जीता सुमेरु, शोभासे इन्द्र, शूरवीरतासे सर्व सुभटो को जीता, शुभ चरित्र, उनका छोटा लक्ष्मण, उसके शरीर मे लक्ष्मी का निवास उसके धनुषको देख शत्रुभी भय से भाग जाते। और तुम विद्याधरो को उनसे भी अधिक बताते हो? तो कौवा भी आकाश मे गमन करते है, उनमे क्या गुण, और भूमिगोचरियो मे ही तीर्थकर भगवान का जन्म होता है, विद्याधरो मे नहीं। जनक ने जब ऐसा कहा तब उन से विद्याधरो ने एकात मे बैठकर आपस मे विचार कर राजा जनक से कहा हे भूमिगोचरियो के नाथ! तुम राम लक्ष्मण का इतना प्रभाव बताते हो, और वृथा गरज गरज कर बाते करते हो, तो हमको उनके बल पराक्रम का विश्वास नहीं हो रहा है। इसीलिये हम कहते है, सो तुम सुनो। एक वज्रावर्त, दूसरा सागरावर्त ये दो धनुष, उनकी देव सेवा करते है, सो ये दोनो धनुष दोनो भाई चढाये। तब हम उनकी शक्ति जाने बहुत कहने से क्या? जो वज्रावर्त धनुष राम चढावे तो तुम्हारी पुत्री से विवाह करेगे, नहीं तो हम बलात्कार कन्या को यहॉ ले आयेगे, तुम देखते ही रहोगे। तब जनक ने कहा यह बात प्रमाण है। तब उन विद्याधरो ने दोनो धनुष दिखाये। जनक उस धनुष को अतिविषम देखकर कुछ आकुलता को प्राप्त हुये। पुन वह विद्याधर भगवान की पूजा स्तुतिकर गदा हलादि रत्नो से सयुक्त धनुष लेकर जनक के साथ मिथिलापुरी आये। और राजा चन्द्रगति उपवन से रथनूपुर गया। राजा जनक मिथिलापुरी आये तब नगर की महाशोभा हुई मगलाचार हुये, सब सन्मुख आये, और उन विद्याधरो ने नगर के बाहर एक आयुधशाला बनाकर व्रहॉ धनुष रखे। और महागर्व सहित रहे। जनक चिन्ता से थोडा सा भोजनकर उत्साह रहित सेज पर सोये, राजा अतिदीर्घ श्वास लेकर चिन्ता करने लगे। तब रानी विदेहा ने कहा—हे नाथ! आपने कौनसे स्वर्ग की देवॉगना देखी है, उसके अनुराग से ऐसी अवस्था को प्राप्त हुये हो। वह कौन स्त्री है, जिसने आपको मोहित कर रखा है, हे नाथ! वह स्थान हमे बताओ हम उसे ले आये। आपके दुख से हम सब महादुखी है, आप महा शौभाग्यशाली है, आपको कौन नहीं चाहता, वह कोई पाषाण चित्त है। उठो राजाओ का जो कार्य है वह करो। यह आपका शरीर है, तो सबही मनोवाछित कार्य होगे, इस प्रकार प्राणो से प्रिय रानीविदेहा ने कहा, तब राजा बोले, हे प्रिये! हे शोभने! मुझे दुख ओर ही है, तू वृथा ऐसी बात कहकर मुझे अधिक क्यो दुखी करती हो। तुझे यह बात मालुम नहीं है, इसीलिये ऐसा कह रही है। वह मायामयी तुरग मुझे विजयार्ध

पर्वतपर ले गया, वहाँ रथनूपुर के राजा चन्द्रगति से मेरा मिलन हुआ। तब उसने कहा आपकी राजकुमारी मेरे राजकुमार को देओ। तब मैंने कहा मेरी पुत्री को दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्र जी को देनी की है, तब चन्द्रगति विद्याधर ने कहा, जो रामचन्द्र वज्रावर्त धनुष को चढाये तो आपकी पुत्री से विवाह करेंगे, नहीं तो मेरा पुत्र विवाह करेगा। तब मैने परवश होकर उनके भयसे अशुभकर्म के उदय से यह बात प्रमाण की। वह वज्रावर्त और सागरावर्त दोनो धनुष लेकर विद्याधर यहाँ आये है, वह नगर के बाहर ठहरे है। इसीलिये मै ऐसा मानता हूँ, कि वह धनुष इन्द्र से भी नहीं चढाये जाय, उनकी ज्वालाये दशो दिशाओ मे फैल रही है, मायामयी सर्प फुकार करते है, वह आँखो से भी देखी नहीं जाये। धनुष बिना चढाये ही स्वत स्वभाव से महाभयानक शब्द करते है। इनको चढाने की कहाँ बात, जो कदाचित् रामचन्द्रजी धनुष को नहीं चढाये तो यह विद्याधर मेरी पुत्री को जबरन ले जायेगे। जैसे श्याल के पास के मास की डलीको कौआ ले जाये। वह धनुष चढाने का बीसदिन शेष है, यही चिन्ता है कि अगर यह काम नहीं बना तो कन्या को ये ले जायेगे। फिर इसका देखना भी दुर्लभ है। हे श्रेणिक! जब राजा जनक ने इसप्रकार कहा, तब रानी विदेहा के आँखो मे आँसू भर आये। और पुत्रके हरणका दुख भूल गई थी, वह भी याद आया। एक तो प्राचीन दुख, पुन नया दुख, और आगे होने वाला दुख, सो महाशोक से दुखी हुई, महाविलाप के शब्द कहकर पुकारने लगी, ऐसे रोने लगी जो परिवार के लोग भी विह्वल होकर रोने लगे। और राजासे रानीने कहा, हे देव! मैने ऐसा कौनसा पाप किया, जो पहले पुत्र हरा गया और अब पुत्री हरी जायेगी, मेरेतो स्नेह का अवलबन, एक यह महागुणवान राजपुत्री ही है। अपने सब कुटुम्ब परिवार मे यह राजकुमारी ही आनन्द का कारण है। मुझ पापिनी के एक दुख नहीं मिटता और दुसरा दुख आ जाता। इसप्रकार शोकके सागरमे डूबी, रानी रोती रही। तब राजाने समझाकर कहा, हे रानी! रोने से क्या होगा, जो पूर्वमे इसजीव ने कर्मकिये है, उनका उदय अनुसार फल मिलता है। संसाररूप नाटक का, कार्यरूप, जोकर्म, वह सब प्राणियों को नचाता है। अपना पुत्र गया वह अपने अशुभ कर्म के उदय से गया। अब शुभकर्म का उदय है, सब कार्य मगल मय होगे। ऐसे शुभ वचनो से राजा जनकने रानीविदेहा को समझाया और सतोष दिया। तब रानी शातिको प्राप्त हुई।

पुन· राजा जनकने नगर के बाहर जाकर धनुषशाला के पास स्वयंवर मडप

रचाया, और सम्पूर्ण राजपुत्रों को बुलाने के लिये पत्र भेजे, उन पत्रो को पढ़कर सभी राजकुमार आये और अयोध्यानगरी को दूत भेजे। सो माता पिता सहित रामादि चारोभाई आये। राजा जनकने बहुत आदर पूर्वक सम्मान से उनका स्वागत किया। राजकुमारी सीता परमसुन्दरी सात सौ कन्याओ के बीच महलके ऊपर ठहरी है। बडे बडे सामन्त राज पुत्री की रक्षा करते है। और एक महापडित, खोजा जिसने बहुत देखा सुना है। और स्वर्णरूप बेतकी छडी (डंडा) हाथमें लेकर ऊँचे शब्द कहकर प्रत्येक राजकुमार को दिखाती है हे राजपुत्री, यह श्रीरामचन्द्र कमललोचन राजा दशरथ के पुत्र है, तू अच्छीतरह देख। और यह इनका छोटा भाई लक्ष्मीवान लक्ष्मण महाज्योति को धारे है। और यह इनका भाई महाबाहु भरत है, और यह सबसे छोटा भाई शत्रुघ्न है। ये चारो ही भाई, गुणो के सागर है। इन पुत्रो सहित राजा दशरथ पृथ्वीकी रक्षा करते है। उनके राज्यमे भय और दुखका काम नहीं। यह हरिवाहन महाबुद्धि काली घटा समान महाप्रतापी है, यह चित्ररथ महागुणवान तेजस्वी सुन्दर है। यह हरमुख इनका कुल मनोहर तेजस्वी है। यह श्रीसजय, यह भानु, यह जय, यह सुप्रभ, यह मन्दिर, यह बुध, यह विशाल, यह श्रीधर, यह वीर, यह बन्धु, यह भद्रबल, यह मयूरकुमार इत्यादि अनेकराजकुमार महापराक्रमी महाशोभाग्यवान, निर्मलवश मे उत्पन्न हुये, चन्द्रमा समान निर्मल काति, महागुणवान आभूषणो सहित परम उत्साहरूप महाविनयवत, महाज्ञानी, महाचतुर है। यह सकाशपुर का नाथ इसका हाथी पर्वतसमान, तुरग महाश्रेष्ठ, महामनोज्ञरथ, अद्‌भुत पराक्रम के धारी योद्धा, यह सुरपुर का राजा, यह रुद्रपुरका राजा, यह नन्दनपुर का राजा, यह कुन्दपुर का अधिपति, यह मगधदेश का राजेन्द्र, यह कम्पिलनगर का नरपति, इनमे कोई इक्ष्वाकुवशी, कोई नागवशी, उग्रवशी, सोमवशी, हरिवशी इत्यादि महागुणवान जो राजा आये हैं। वह सब तेरे लिये आये है। इन सब राजाओ के मध्य मे जो राजा वज्रावर्तधनुष को चढाये उनके गले मे वरमाला पहनाओं। जो पुरुषो मे श्रेष्ठ होगा उसीसे यह काम होगा। इस प्रकार खोजा ने कहा और राजा जनक सबको एकत्रितकर सभी राजकुमारो को क्रम क्रम से धनुष की ओर भेजे, वे सब गये। सुन्दर रूपके धारी सभी धनुष को देखकर कम्पायमान हुये, धनुष के चारो तरफ अग्नि की ज्वालाये बिजली समान निकलती है, और मायामयी सर्प भयकर फुकार करते है। तब कोई तो कानोपर हाथ रखकर भागे, कोई धनुष को देख दूरही खडे रहे, उनके सर्वअग

कापनेलगे ऑखे बध होगई, कोई ज्वरसे व्याकुल होकर धरतीपर गिर पडे। कोई मूर्च्छा को प्राप्त हुये, कोई धनुषके नागोके श्वाससे उडते फिरे जैसे वृक्ष का सूखा पता पवनसे उडा उडा फिरे, कोई कहने लगे अब जीवित घर जाये तो महादान करेगे, और सभी जीवो को अभयदान देगे। किसी ने कहा यह रूपवती कन्या है, तो क्या, इसके निमित्त प्राणतो नहीं देगे। कोई कहते है, यह कोई मायामई विद्याधर आया है, वह राजाओ के राजपुत्रो को कष्ट देता है। कोई भाग्यशाली ने कहा, अब हमारे रानियो से प्रयोजन नहीं, यह काम महादुखदाई है, अनेक साधु उत्कृष्ट श्रावक शीलव्रत धारते है, ऐसे हमभी शीलव्रत को धारेगे। धर्मध्यान से समय व्यतीत करेगे। इस प्रकार सभी राजकुमार विमुख हुये।

तब श्रीरामचन्द्र राजकुमार धनुष चढाने को उद्यमी हुये, और उठकर मत्त हाथी की तरह मनोहर गमन से चलते, जगत को मोहते, धनुष के निकट आये, वह धनुष रामके प्रभाव से ज्वाला रहित हो गया, जैसा सुन्दर देवोपुनीत रत्न है वैसा सौम्य हो गया। जैसे गुरुके निकट शिष्य शात हो जाय। तब श्रीरामचन्द्रजी धनुष को हाथ मे ले उसे चढाकर खेचते रहे। तब महाप्रचड शब्द हुआ, पृथ्वी कम्पायमान हुई। जैसा मेघ गरजे वैसा शब्द धनुष का हुआ। मेघको जान मोर नाचने लगे, सूर्यका तेज अग्निके कणसमान हो गया। यह धनुष देवोपुनीत है, सो आकाश मे धन्य धन्य शब्द हुये। और पुष्पोकी वर्षा हुई, देव नाचने लगे। तब राम महादयावान धनुष के शब्द से लोगो को भयभीत देख धनुष को उतारा। लोग डरे जैसे समुद्र मे भवर आ गये हो। तब सीता अपने नेत्रोसे श्री रामको देखती रही। कैसे है नेत्र? पवनसमान चचल, कमलसमान काति, कामसमान तीक्ष्ण। सीता के रोम रोम पुलकित हुये मनकी, वृत्तिरूपी, भावमाला तो, पहले देखते ही रामके गलेमे पहनायी। पुन लोकाचार के निमित्तहाथ मे रत्नमाला लेकर श्रीरामचन्द्रजी के गले मे पहनायी। लज्जा से नम्रिभूत हो गया मुख जिसका, जैसे जैनधर्म के निकट जीवदया ठहरे वैसे रामके निकट सीता आकर ठहरी। श्रीराम अतिसुन्दर थे ही फिर भी सीताको समीप आनेसे और सुन्दर दिखने लगे। इन दोनो के रूपका वर्णन देवो से भी नहीं कहा जाये। और लक्ष्मण दूसराधनुष सागरावर्त समुद्रसमान शब्द जिसका, उसे चढाकर खेचते रहे। सो पृथ्वी कंपित हुई, आकाश मे देवो ने जय जयकार किया, पुष्पवर्षा हुई। लक्ष्मण ने धनुष को चढा, खेचकर जब बाणपर दृष्टिडाली तब सब लोग डरे। सभी लोगो को भय सहित देख आप

धनुष की प्रत्यचा उतार महाविनय सहित राम के निकट आये, जैसे ज्ञान के पास वैराग्य आये। लक्ष्मण का ऐसा पराक्रम देख चन्द्रगति का भेजा जो चन्द्रवर्द्धन विद्याधर, अतिप्रसन्न होकर विद्याधरो की अठारह राजपुत्रीयो का लक्ष्मण से विवाह कराया। श्रीराम लक्ष्मण दोनो धनुष लेकर महाविनयवान दोनो भाई पिता के पास आये और सीता भी आई। और जितने विद्याधर आये थे, वह सब राम लक्ष्मण का प्रताप देख चन्द्रवर्द्धन के साथ रथनूपुर गये। वहाँ जाकर राजा चन्द्रगति विद्याधर को सभी वृतान्त कहा। वह सुनकर चिन्ता करने लगा। और स्वयवर मडप मे रामके भाई भरत भी आये थे। वह मनमे सोचने लगे, की मेरा और राम लक्ष्मण का कुलएक, पिताएक, फिरभी इनके जैसा अद्‌भुत पराक्रम मेरा नहीं, यह महापुण्यशाली है, इनके जैसा पुण्य मैने नहीं किया। यह सीता साक्षात लक्ष्मी, कमल के भीतर दलसमान है, वर्ण उसका, राम समान पुण्याधिकारी की ही रानी है। तब कैकई भरत की माता सब कलाओ मे प्रवीण भरत के मनका अभिप्राय जान, पतिके कानमे कहने लगी, हे नाथ! भरत का मन कुछ उदास दिखता है। कुछ ऐसा करो कि भरत विरक्त न हो जाये। राजा जनक का भाई कनक उनकी रानी सुप्रभा उसकी पुत्री लोकसुन्दरी है। पुन स्वयवर मडप की रचना कराओ और वह कन्या भरत के कठमे वरमाला डाले, तो भरत प्रसन्न होगा। तब दशरथ ने यह बात कनक के पास पहुँचाई। तब कनक ने दशरथ की आज्ञा प्रमाण जो राजा गये थे उनको पुन बुलाया यथा योग्य स्थान मे ठहरे। उन राजाओं के मध्य जो भरतरूप चन्द्रमा उसके कनक की पुत्री लोकसुन्दरी महा अनुराग से मनरूपी मालातो भरत को देखते ही डाली थी पुन लोकोपचार मात्र से रत्नपुष्प की माला भरतके कठमे डाली। कैसीहै कनकको पुत्री? कनक समान प्रभा है। जैसे सुभद्रा ने भरत चक्रवर्ती को माला पहनाई ऐसे यह दशरथ के पुत्र भरत को पहनाई। गौतमस्वामी—राजाश्रेणिक से कहते है—हे श्रेणिक! कर्मो की गति विचित्र देखो। भरत जैसे विरक्त मन, राजकन्यापर मोहित हुये। और सभी राजा उदास हो अपने अपने स्थान को गये। जिसने जैसे कर्म किया, उसको वैसा ही फल प्राप्त होता है। किसी के द्रव्य की इच्छा करने से वहद्रव्य प्राप्त नहीं होता।

अथानन्तर—मिथिलापुरी मे सीता और लोकसुन्दरी के विवाह का परम उत्सव हुआ। मिथिलापुरी ध्वजा और तोरणो के समूह से मडित, महासुगन्ध से भरी है। शख और बाजो से पूरित है। श्रीराम का और भरत के विवाह का महाउत्सव

हुआ। गरीबो को धन दिया गया। अनेक राजा विवाह का उत्सव देखने के लिये आये हुए थे, वे राजा दशरथ एव जनक एव कनक दोनो भाईयो से अतिसम्मान पाकर अपने अपने स्थान गये। राजा दशरथ के चारोंपुत्र सीता एवं लोकसुन्दरी महाउत्सव के साथ अयोध्या के निकट आये। कैसेहैदशरथ के पुत्र? सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी, परमरूपवान, परमगुणरूपी समुद्रमें मग्न है, रत्नो के आभूषणो से शोभित शरीर जिनका, माता पिता को हर्ष उपजाने वाले, अनेकप्रकार के वाहनो से पूर्ण सेना जिनके, अनेक बाजो की ध्वनि समुद्र समान गर्जना जिसकी ऐसी सेना सहित राजमार्ग होकर महल मे पधारे। मार्ग मे जनक और कनककी पुत्रीको सबही देख देख हर्षित होकर कहा इनके समान ओर कोई नहीं। इनका शरीर उत्तम रूपवान है, सीता और लोकसुन्दरी को देखने नगर के सब नर नारी मार्ग मे आकर खडे हो रहे है। नगर के दरवाजो से लेकर राजमहल पर्यन्त मनुष्यो का पार नहीं ऐसे दशरथ के पुत्र इनके श्रेष्ठ गुणो की जैसे जैसे लोग स्तुति करते, वैसे वैसे यह नीचे हो रहे। महासुखो को भोगने वाले ये चारोही भाई सुबुद्धि अपने अपने महल मे आनन्द से विराजे। यह सब शुभकर्म का फल विवेकीजन जानकर ऐसे पुण्यकरो जिससे सूर्य से भी अधिक प्रताप होगा, जितने शुभ सुख देने वाले फल है, वह सब धर्मका प्रभाव है, और जो महानिंद्य कटुफल है, वह सब पापका फल है, इसीलिये सुख के कारण पाप क्रियाओ को छोडो एव पुण्य क्रियाये करो।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे राम लक्ष्मण का धनुषचढाना और रामका सीतासे तथा भरतका लोकसुदरी से विवाह वर्णन करनेवाला अट्ठाईसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-29

राजा दशरथ का धर्म-श्रवण

अथानतर आषाढ शुक्ला अष्टमी से अष्टाह्निका पर्व में महाउत्सव हुआ। राजा दशरथ जिनेन्द्र भगवान की महापूजा करने को तैयार हुये। राज्य में धर्मकी अतिप्रभावना है, राजाकी सब रानियॉ पुत्र बंधु परिवार जिनप्रभु की महापूजा

करने के लिये, कोई पचवर्ण रत्नो के चूर्ण से मडलबना रहे है, कोई रत्नोकी मालाबना रहे है, कोई भक्तिकर रहे है, कोई इलायची, कपूर, सुगन्धादि द्रव्योंसे जलको सुगन्धित करते हैं, कोई सुगन्धजल से पृथ्वीकी शुद्धि करते हैं। कोई अनेकप्रकार की परम सुगन्धित वस्तुये पीसरहे है, कोई जिनमन्दिरों के द्वार की शोभा अति दैदीप्यमान वस्त्रो से करा रहे है। कोई अनेकप्रकार के धातुओं से मन्दिर की दिवाले सजा रहे है। इस प्रकार अयोध्यापुरी के सभी लोग वीतराग प्रभु की भक्ति करते हुये अत्यन्त हर्ष से पूर्ण जिनपूजा के उत्साह से उत्तम पुण्यको प्राप्त करते रहे। राजा दशरथने भगवानका महाविभूति से अभिषेक कराया। अनेक प्रकार के बाजे बजे। तब राजाने आठ दिनो के उपवास किये। अरहन्तदेव की अष्टद्रव्यो से महापूजा की, अनेक प्रकार के सहज पुष्प एव स्वर्ण रत्नो के पुष्पो से अर्चा की। जैसे नन्दीश्वरद्वीप मे देवो सहित इन्द्र जिनेन्द्र की पूजा करते है ऐसे राजा दशरथ ने अयोध्या मे पूजा की। और राजा ने चारोही पटरानियो के पास गन्धोदक भेजा। सो तीन रानियो के पास तो तरुणस्त्री शीघ्र ही पहुची, समस्त पापो को दूर करनेवाला जिनगधोदक को रानियो ने मस्तक और नेत्रो पर लगाया। और रानी सुप्रभा के पास वृद्ध खोजा ले गया था सो वह शीघ्र नहीं पहुचा, इसीलिये रानी सुप्रभा को क्रोध और शोक हुआ मन मे सोचने लगी कि राजा ने तीन रानियो को तो गधोदक भेजा ओर मेरे पास नहीं भेजा, सो राजा का क्या दोष, मैने पूर्वमे पुण्य नहीं किया, वे पुण्यवती सौभाग्यवती रानियॉ महाप्रशसा करने योग्य है, उनको भगवान का महापवित्र गधोदक नरनाथ ने भेजा। अपमानसे जले मेरे हृदय को और किसी प्रकार से शाति नहीं होगी, इसकेलिये मरण ही शरण है। ऐसा विचारकर विशाख नाम के भडारी को बुलाकर कहा, हे भाई! यह बात तू किसी से मत कहना मुझे विषसे प्रयोजन है, अत तू शीघ्र ही लेआ। तब पहले तो उसके मन मे शका हुई पुन सोचा कि कोई औषधी के कारण मॅगवाया होगा, वह लेने को गया। रानी उदास मनमे वस्त्र ओढ सेजपर सोई। राजा दशरथ ने राजमहल मे आकर तीनरानियॉ देखी, पर सुप्रभा को नहीं देखा। सुप्रभा से राजा का विशेष प्रेम, इसीलिये राजा रानी के महल में आये, उस समय जो विष लेने को भेजा था वह भी आया और कहा—हे रानीजी! यह विष लेओ। यह शब्द राजाने सुना तब उसके हाथमे से ले लिया। आपरानी की सेजपर बैठ गये। तब रानी सेजसे उतरकर नीचे बैठी। तब राजा ने

आग्रहकर सेजपर बैठाई और कहने लगे-हे प्रिये! ऐसा क्रोध क्यो किया जो मरना चाहती हो, सब वस्तुओं मे जीवन प्रिय है। और सब दुखों मे मरणका बडादुख है। ऐसा तुम्हे क्या दुख है जो तुमने विष मगाया। तू मेरे हृदय की प्रिय है, जिसने तुम्हे सताया हो, उसेमैं शीघ्रही दण्डदूँ। हे सुन्दरमुखी! तू जिनेन्द्र का सिद्धान्त जानती है, और विष तथा शस्त्रादिक से मरते हैं, वे दुर्गति में जन्म लेते है। ऐसी बुद्धि तुझे क्रोध से उत्पन्न हुई, उस क्रोध को धिक्कार है। यह क्रोध महाअधकार रूप है, अब तुम प्रसन्न होओ। जो पतिव्रता रानियॉ है, उनको जब तक प्रीतम के अनुराग भरे वचन नहीं सुने, तब तक ही क्रोध का आवेश रहता है। तब सुप्रभा ने कहा। हे नाथ! आपपर क्रोध क्यो? परन्तु मुझे ऐसा दुख हुआ जो मरणबिना शाति नहीं। तब राजा ने कहा—हे रानी! तुझे ऐसा क्या दुख हुआ, तब रानी ने कहा—हे स्वामिन! भगवान का गधोदक सभी रानियो के पास भेजा, परन्तु मेरे पास नहीं भेजा सो मेरे मे क्या कमी देखी? अभी तक आपने मेरा कभी अनादर नहीं किया अब मेरा क्यो अनादर किया? यह बात राजासे रानी कह रही थी, उसी समय वृद्ध खोजा गधोदक लेकर आया। और कहा हे रानीजी! यह भगवान का गधोदक नरनाथ ने आपके पास भेजा है, सो लेओ। और उसीसमय तीनो रानियॉ भी आई और कहा, हे रानीजी! पतिकी आपपर अतिकृपा है, आप क्यो क्रोधको प्राप्त हुई? देखो हमारे पास तो गधोदक दासी ले आई, और आपके पासतो वृद्ध खोजा लेकर आया। पतिका प्रेम आप से कम नहीं है, अगर पतिमे अपराध भी हो तो वह आकर प्रेमकी बात कहे तो उत्तम स्त्रीयॉ प्रसन्न ही होती है। हे शोभने! पति से क्रोध करना सुख मे विघ्न का कारण है, इसीलिये क्रोध करना उचित नहीं, सभी रानियो ने इसप्रकार सतोष दिया तब सुप्रभाने प्रसन्न होकर नेत्र एव शीशपर गधोदक लगाया। राजा, खोजा से क्रोधकर कहने लगे, हे निकृष्ट! तुमने इतना समय कहॉ लगाया, तब वह भय से हाथजोड शीशनवाकर कहने लगा। हे देव! मेरी अत्यन्त वृद्ध अवस्था हीनशक्ति है, मेरा कहॉ अपराध, मेरेपर आप क्रोध करो सो मै क्रोधका पात्रनहीं, जवान अवस्था मे मेरे हाथ हाथी के सूड समान थे, और दृढ था। अब कर्मों के उदय से शरीर शिथिल हो गया, पहले ऊँची नीची जमीन राजहस की तरह उलाध जाता, क्षणमात्र मे शीघ्रता से मनवाछित स्थानपर पहुँच जाता अब स्थान से उठना भी कठिन है। आपके पिता के प्रसाद से मैने इस शरीरको बहुत लडाया। सो अब यह कुमित्र की तरह

दुखदायी हो गया। पहले मेरे मे शत्रुओ को नाशकरनेकी शक्ति थी, अब तो लाठी के सहारे भी महाकष्ट से फिरता हूँ। बलवान पुरुषो से खींचा जो धनुष उसके समान मेरीपीठ टेढी हो गई है। और सिरके बाल अस्तिसमान श्वेत हो गये है। मेरे दॉतभी गिर गये, मानो शरीर का दुख देख नहीं सकते—हे राजन्! मेरा सम्पूर्ण उत्साह नष्ट हो गया, ऐसे शरीर से कुछ दिन जी रहा हूँ, यह बडा आश्चर्य है। बुढापा से यह शरीर मेरा जर जर हो गया मानो सुबह शाम नष्ट हो जायेगा। मुझे मेरे शरीर की भी सुध बुध नहीं तो और सुध बुध कहॉ से होगी। पहले मेरी इन्द्रियॉ तेज थी, अब तो नाममात्र रह गई है। पैर रखूॅ किसी जगह, गिरता किसी अन्य जगह, सभी पृथ्वी ऑखो से अधकार रूप श्याम दिखती है। ऐसी अवस्था हो गई है, तो भी बहुत वर्षो से राज्य की सेवा करता हूँ, सो अब छोड नहीं सकता हूँ। पके फल समान मेराशरीर उसको मृत्युरूपी काल शीघ्र ही भक्षण करेगा। मुझे मृत्यु का ऐसा भय नहीं, जैसा आपकी सेवा चूकने का भय है। और मेरे आपकी आज्ञा का ही अवलम्बन है, और कोई सहारा नहीं। शरीर की शक्ति नहीं इसीलिये देर होती है इसका मै क्या करूॅ, हे नाथ! मेरा शरीर बुढापा के आधीन जान क्रोध मतकरो, कृपाही करो। ऐसे वचन खोजा के सुनकर राजा दशरथ बायॉ हाथ गालपर लगाकर चिन्तवन करने लगे, अहो! यह जलके बुदे बुदे समान असारशरीर क्षणभगुर है। यह यौवन मध्यान के सूर्यसमान तेज सहित है, फिर भी सध्या के प्रकाश समान अनित्य है। अज्ञान का कारण है। बिजली के चमत्कार समान शरीर और सम्पदा के लिये अत्यन्त दुखके साधनरूपी कर्म यह प्राणी करते है। महादुख के समूह ऐसे भोगही जीवनको ठगते है, इसीलिये भोग महाठग है। यह विषय विनाशीक इनसे प्राप्त हुआ जो दुख, मूढप्राणी सुखरूप मानते है। ये मूढ जीव विषयो की अभिलाषा करते है, और इनको मनवाछित विषय दुष्प्राप्य है, विषयो के सुख देखने मात्रके मनोज्ञ है, इनके फल अतिकटु है, ये विषय इन्द्रधनुष के समान नश्वर है। ससारी जीव विषय सुखो को चाहते है, वह बडा आश्चर्य है। जो श्रेष्ठ मनुष्य है, वह विषयो को विषतुल्य जानकर छोड देते है, और तप करते है, वह पुरुष धन्य है, अनेक विवेकी जीव पुण्य अधिकारी महा उत्साह से जिनशासन के प्रभावसे ज्ञानको प्राप्त हुये, मैं कब इन विषयो का त्यागकर स्नेहरूपी कीचड से निकलकर जिनेन्द्रका तप धारण करूंगा। मैंने इस पृथ्वीकी बहुत सुखसे प्रतिपालना की, एव भोग भी मनोवाछित भोगे, और पुत्रभी

मेरे महापराक्रमी है, अब भी अगर मैं वैराग्यको धारण नहीं करू तो यह बडी विपरीत क्रिया है। हमारे वश की यही परम्परा है कि पुत्रको राजलक्ष्मी देकर वैराग्यको धारण कर महाधीर वीर तप करनेके लिये वनमे प्रवेश करते हैं। ऐसा चिंतवन कर राजा भोगों से उदासमन होकर भी कुछ दिन घर मे रहे। हे श्रेणिक! जो वस्तु जिससमय जिसक्षेत्र में जिसको जितनी प्राप्ति होनी होती है उससमय, उसक्षेत्र मे उसको उतनी ही प्राप्ति निश्चय से होगी।

गौतमस्वामी कहते है, हे मगधदेशके भूपति! सभी जीवोके हित करनेवाले सर्वभूपतिनाम के महाआचार्य मन पर्ययज्ञान के धारक पृथ्वीपर विहार करते हुये सघसहित सरयुनदी के किनारेपर आये। कैसे हैमुनि? पितासमान छहकाय के जीवोके रक्षक मन वचन काय से दया करनेवाले, आचार्य की आज्ञा प्राप्तकर, कोई मुनि गहन वनमे विराजे, कोई पर्वत की गुफाओ मे, कोई वन के चैत्यालयो मे, कोई वृक्षके कोटरो मे, इत्यादि ध्यान योग्य स्थानो मे सभी साधु जगह जगह पर ठहरे। और आचार्य श्रीमहेन्द्र उदय नामके वनमें एकशिलापर जहॉ विकलत्रय जीवो का सचार नहीं, एवं स्त्री नपुसक बालक ग्रामीजन पशुादि का ससर्ग नहीं, ऐसे निर्दोषस्थान परॅ नागवृक्षो के नीचे निवास किया महागम्भीर महाक्षमावान उनका दर्शन दुर्लभ कर्म क्षय करने मे तत्पर उदार मन के महामुनि अपने गुरु सहित वर्षाकाल पूर्ण करने के लिये योगधारण कर ठहरे। वर्षाऋतु मे जैन मानव खड्‌ग की धारा समान कठिन व्रतो को निरन्तर धारते है। चारणमुनि और भूमिगोचरीमुनि चातुर्मास मे अनेक प्रकार के नियम करते है। हे श्रेणिक! वे तुम्हारी रक्षा करे, रागादि भावो से तुझे निवृत कराये। प्रभात समय राजा दशरथ बाजो की ध्वनि से निद्रा को छोड जागृत हुये जैसे सूर्य उदय को प्राप्त होता है। सभी स्त्री पुरुष अपनी सेजो से उठे। भगवान के चैत्यालय मे भेरी, मृदग वीणा घटा झालर बज रहे हैं। लोग निद्राको छोड जिनपूजा मे तत्पर हुये। चन्द्रमा की प्रभा मद हुई कमलखिले, जैसे जिनसिद्धान्त के ज्ञाता के वचनो से अज्ञानीलोग मिथ्यात्वका नाशकर सम्यग्दर्शन प्राप्त करते है। वैस ही राजा ने प्रात काल की क्रिया से निवृत हो भगवान की पूजाकर बारम्बार नमस्कार किया। भद्रजाति की हथनीपर बैठ देवों समान जो राजा जगह जगह मुनियों को एवं जिनमन्दिरो को नमस्कार कर महेन्द्रोदय वनमे पृथ्वीपति गये उनकी विभूति पृथ्वीको आनन्द उत्पन्न करनेवाली, वर्ष पर्यन्त वर्णन करे तो भी कह नहीं सकते। जो मुनि

गुणरूपी रत्नों के सागर जिससमय अयोध्यानगरी के समीप आये, उसीसमय राजा को खबर करते तभी राजा मुनियो के दर्शन करने जाते। सो अब सर्वभूतहित मुनि आये सुनकर राजा समीप के लोगो को साथ लेकर दर्शन को आये। हाथीसे उतर महाहर्षसे नमस्कारकर महाभक्ति से सिद्धान्त सम्बन्धि कथा सुनने लगे, चारों अनुयोगों की चर्चा, एव भूत भविष्यत वर्तमान काल के जो महापुरुष हुये उनके चरित्र सुने, लोक अलोक का वर्णन, छहद्रव्यो का स्वरूप, छहकाय के जीवो का वर्णन, छहलेश्याओ का व्याख्यान, छहो काल का कथन और कुलकरो की उत्पत्ति, क्षत्री आदि वशका वर्णन, और साततत्त्व, नवपदार्थ, पचास्तिकाय का वर्णन आचार्य के मुख से सुनकर सभी साधुओ को नमस्कार कर राजा धर्मके अनुरागसे पूर्ण, नगर मे आये। जिन धर्म के गुणो की कथा राजा और मत्रियो से कहकर सब को विदाकर राजा दशरथ ने अपने महल मे प्रवेश किया। अनुपम वैभव से युक्त रानीयॉ लक्ष्मीसमान परमकाति से पूर्ण। सुन्दर मुख नेत्र और मन को हरनेवाली, हावभाव विलास से मडित महानिपूण परम विनय को करनेवाली ऐसी अनुपम रानियॉ एव पुण्य का फल राजा भोगता रहा। पुण्य से सुखो के महाभोग प्राप्त होते है। फिर भी उस भोगो मे लीन नहीं रहना यही मानव जीवनका श्रृगार है भोग नाशवान दुख देने वाले है इसीलिये भोगो को छोड योग धारण करना यही मानव जीवन की सार्थकता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे अष्टान्हिका आगमन और राजा दशरथका धर्मश्रवण वर्णन करनेवाला उनतीसवां पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-30

भामंडल का मिलन

अथानतर मेघो से युक्त वर्षाकाल गया आकाश खड्गकी प्रभा समान निर्मल हुआ। पद्म महोत्पल इन्दीवरादि अनेकजाति के कमल खिले और नदी सरोवरादि मे जल निर्मल हुआ, जैसे मुनि का मन निर्मल होता है। इन्द्र धनुष चले गये शरदऋतु प्रगट हुई। सूर्य तुला राशिपर आया, शरदऋतु के सफेद बादल कहीं कहीं देखने मे आते वह क्षणमात्र मे नष्ट हो जाते। कूये बावडी आदि, स्वच्छ जल

से भरे, मनुष्यो के मनको प्रसन्न करते है। चकवा चकवी के युगल क्रीडा करते है। कमल के वनो में भ्रमण करते जो राजहस अत्यन्त शोभा को धरते है, सो सीता की है चिन्ता, ऐसा भामंडल उसे यह ऋतु सुहावनी नहीं लगी, एक दिन यह भामडल लज्जा को छोडकर पिता के सामने, बसन्तध्वज परममित्र से कहने लगा—हे मित्र! तू महाबुद्धिमान है, दूसरो के कार्य में हमेशा तत्पर रहता है, इतने दिन बीत गये तुझे मेरी चिन्ता नहीं। व्याकुलतारूपी तरगो सहित आशारूपी समुद्रमें मै डूबा हूँ, मुझे अवलंबन क्यों नहीं देते? ऐसे आर्तध्यान से युक्त भामडल के वचन सुन राजसभा के सभीलोग प्रभाव रहित, विषाद युक्त हो गये। तब इनको महाशोक से तप्तायमान देख भामडल लज्जा से मुख नीचेकर लिया। तब एक वृहत्केतु विद्याधर ने कहा, अब क्यो छिपाते हो, राजकुमार से सभी वृतान्त कहो, इससे इनकी चिन्ता दूर होगी। तब सभी वृतान्त भामडल से कहा, हे कुमार! हम कन्याके पिताको यहॉ लाये थे, राजकुमारी की याचना की, तब उन्होने कहा, मैने अपनी राजपुत्री राजकुमार श्रीराम को देने के लिये कहा है। हमारे और उनके बहुत चर्चा हुई, परन्तु वह नहीं माने, तब वज्राबृत धनुष राम चढाये तो कन्या से विवाह करे नहीं तो हम यहॉ ले आयेगे और भामडल विवाह करेगा। इस बातपर यह निश्चय किया। तब धनुष लेकर यहॉ से विद्याधर मिथिलापुरी गये, वहॉ राम महा पुण्याधिकारी ने धनुष चढाया। तब स्वयवर मडप मे राजा जनक की पुत्री अतिगुणवती रूपवती महाविवेकवान पति के हृदय की प्यारी, व्रत नियम को धरने वाली, रूप यौवनसे मडित, दोषोसे रहित, सभीकलाओ मे पूर्ण, लक्ष्मीसमान, शुभ लक्षणो से युक्त सीता महासती पतिव्रता, श्रीराम के कठ मे वरमाला पहनाकर उनकी प्राण प्रिया हुई। हे कुमार! वह धनुष वर्तमान काल के नहीं, गदा हलआदि देवोपुनीत रत्नो से युक्त अनेकदेव उनकी सेवा करते है, उन्हे कोई देख नहीं सकता, ऐसा वज्रार्वत व सागरावर्त दोनो धनुष राम लक्ष्मण दोनों भाईयो ने चढाये। उस त्रिलोकसुन्दरी से राम ने विवाह किया, अयोध्या ले गये। इसीलिये अब यह बलात्कार कर देवो से भी नहीं हरी जायेगी तो हमारी क्या बात? और कदाचित् कहोगे कि राम से विवाह कराने के पहले ही क्यों नहीं हरी? तो जनकका मित्र, रावणका जमाई मधु है, तो हम कैसे हर सकते, इसीलिये हे कुमार! अब सतोष को धारण करो, परिणामो को शात करो, जैसा होनहार होता है, उसको इन्द्रादिक भी बदल नहीं सकते। तब धनुष चढाने

का वृतान्त एवं रामसे सीताका विवाह हो गया सुन, भामडल अतिशर्मिन्दा होकर विषाद से मन मे विचारने लगा, कि मेरा यह विद्याधर का जन्म निरर्थक है। जो मैं हीन पुरुष की तरह उससे विवाह नहीं कर सका। इर्षा और क्रोध से युक्त सभा के लोगो से कहा, तुम्हारा विद्याधर पना क्या? तुम भूमिगोचरियो से डरते हो, मै स्वय जाकर भूमिगोचरियो को जीत सीता को ले आऊँगा। और जो धनुष के स्वामी, उनको धनुष देकर आये है, उनका निग्रह करूँगा। ऐसा कहकर शस्त्र ले विमान पर चढ आकाश मार्गसे गये। अनेक ग्राम नदी, नगर, वन, उपवन, सरोवर, पर्वतादि पूर्ण पृथ्वी मडल को देखता हुआ चला। तब भामडल की दृष्टि अपने पूर्वभव का स्थान विदग्धपुर, जो पहाड के बीच था वहॉ गई। मन मे सोचा कि यह नगर मैने देखा है? जातिस्मरण हुआ, मूर्च्छा आ गई। तब मत्री व्याकुल होकर पिता के पास ले आये, चन्दनादि शीतल द्रव्यो से छींटे लगाये, तब मूर्च्छा दूर हुई। राज लोक की रानियॉ कहने लगी, हे कुमार! आपको यह उचित नहीं, जो माता पिता के सामने ऐसी लज्जा रहित चेष्टा करते हो, तुम तो महाबुद्धिमान हो विद्याधरो की राजकन्याये देवॉगनाओ से भी अतिसुन्दर है उनसे विवाह करो। क्यो लोक मे हॅसी कराते हो? तब भामडल लज्जा और शोक से मुख नीचा कर कहा—धिक्कार है मुझे, मैने महामोह एव अज्ञानता से विरुद्ध कार्य विचारा। जो चाडालादि अत्यन्त नीच कुल वाले है, वह भी ऐसा कार्य नहीं करते। मैने अशुभ कर्मके उदय से अत्यन्त मलीन परिणाम किये। मै और सीता दोनो एकही माता के गर्भ से उत्पन्न हुये है, अब मेरे अशुभ कर्म गया, तब यह सच्ची बात मालुम हुई। भामण्डल के ऐसे वचन सुनकर एव शोक से पीडित देख भामण्डल का पिता राजा चद्रगतिविद्याधर गोद मे लेकर मुख चूम पूछा, कि हे पुत्र! यह तुमने कैसे कहा? तब कुमार ने कहा—हे तात! मेरा चरित्र सुनो, पूर्व भव मे इस भरतक्षेत्र मे विदग्धपुर नगर, वहा का मै कुडलमडित राजा था, परमडल को लूटने वाला, पृथ्वीपर प्रसिद्ध, प्रजाका पालक, महा विभूति सहित था, सो मै पापी मायाचार से एक ब्राह्मण की स्त्री का अपहरण किया और वह ब्राह्मण तो दुखी होकर कहीं चला गया और मैने राजा अनरण्य के देश मे अनेक उपद्रव किये। तो अनरण्य का सेनापति बालचन्द्र मुझे पकड लिया और मेरी सम्पूर्ण सम्पति हर ले गया। मेरा शरीर मात्र ही रह गया। कुछ दिनो के पश्चात बन्दी गृह से छूटा तब महादुखी होकर पृथ्वीपर भ्रमण करता रहा। वहॉ जगल मे मुनियो के दर्शनकर

महाव्रत, अणुव्रतों का उपदेश सुन, तीनलोक के पूज्य सर्वज्ञ, वीतरागदेव, शास्त्र, और गुरु की श्रद्धा की, एव गुरु की आज्ञा से मैंने मद्य, मांस और मधु का त्यागकर अष्ट मूलगुणो को धारण किया। मेरी हीन शक्ति थी इसीलिये मैं विशेष व्रतों को धारण नहीं कर सका। मै महापापी जिनशासन की महिमा से थोडे ही व्रतो के कारण दुर्गति में नहीं गया। जिनधर्म की शरण रो राजा जनक की रानी विदेहा के गर्भ में सीता सहित मेरा जन्म हुआ। और पूर्वभव का विरोधी वह ब्राह्मण जिसकी स्त्री का मैंने हरण किया था, वह भी मरकर देव हुआ, और मेरा जन्म होते ही जैसे गिद्ध पक्षी मासकी डलीको ले जाता, ऐसे मुझे आकाश मे ले गया, पहले तो उसने मुझे मारने का विचार किया, पुन दयाकर कानो मे कुडल पहनाया और लघुपर्ण विद्या से मुझे यत्र द्वारा पृथ्वीपर डाला। सो रात्रि मे गिरते हुये को आपने उठा लिया और दयावान होकर अपनी रानी को सौप दिया। मै आपके प्रसाद से वृद्धि को प्राप्त हुआ और अनेक विद्याओ का धारक हुआ आपने बहुत प्यार दिया, माता ने मेरी बहुत प्रतिपालना की। भामडल ऐसा कहकर चुप हो गया।

राजा चन्द्रगति यह वृतान्त सुनकर परम बोध को प्राप्त हुआ एव इन्द्रिय विषयो की वासना तज महा वैराग्य धारण करने को तैयार हुआ। ससार का बधन जानकर अपना राज्य भामडल को देकर आप सर्वभूतहित स्वामी के समीप शीघ्र ही आया। वह सर्वभूतहित मुनिराज पृथ्वीपर प्रसिद्ध, गुणरूपी किरणो के समूह, भव्यजीवो को तारने वाले। राजा चन्द्रगति विद्याधर ने महेन्द्रोदय उद्यान मे आकर मुनि की वन्दना अर्चना स्तुति भक्तिकर हाथजोड शीश झुका नमस्कार कर विनती की, हे भगवन्! आपके प्रसाद से मै जिन दीक्षा लेकर अपना आत्म कल्याण करना चाहता हूँ। मै गृहस्थाश्रम से उदास हुआ, तब मुनिराज ने कहा—हे भव्य! भवसागर से पार करने वाली, इस मुनि दीक्षा को गृहण करो, राजा वैराग्य को प्राप्त हुआ और भामडल के राज्य का उत्सव हुआ, ऊँचे स्वरो से बाजो की ध्वनी हुई, नारियाँ गीत गाने लगी, ताल, मजीरा, बांसुरी आदि बजे। शोभायमान राजा जनक का पुत्र जयवन्त हो, ऐसा बदी जनो का शब्द जोर जोर से हुआ। वहाँ महेन्द्रोदय उद्यान में जय जयकार के मनोहर शब्द हुये। तब अयोध्या के सभी लोग निद्रा से जगे, पुनः प्रात· समय मुनिराज के मुख से श्रेष्ठ शब्द सुनकर सभी लोग हर्ष को प्राप्त हुये। और सीता को "राजा जनक का पुत्र जयवत हो" ऐसी

ध्वनि सुनकर ऐसा लगा मानो अमृत ही बरसा हो। शरीर के रोम रोम पुलकित हुये, और सीता की बाई ऑख फडकी, और मनमें सोचने लगी कि यह बार बार ऊँचे स्वर से आवाज आ रही है कि राजा जनक का पुत्र जयवत हो, मेरा पिता ही जनक है। कनक का बडा भाई और मेरे भाई का जन्म होते ही हरण हुआ था। सो वही तो नहीं है? ऐसा विचारकर भाईके स्नेहसे भीग गया है मन और अंग सीता का, तब वह ऊँचे स्वर से रुदन करने लगी। तब राम अभिराम कहो, सुन्दर है शरीर उनका, महामधुर वचनो से कहते है–हे प्रिये! तुम क्यो रोती हो अगर यह तेरा भाई है तो अभी खबर आयेगी। अथवा और कोई है तो है पडिते! तू क्यो चिन्ता करती है, जो ज्ञानी है, वह मरेका, हरेका, गयेका, नष्टहुये का शोक नहीं करते, हे प्राण प्रिये! जो कायर है मूर्ख है उनको विषाद होता है, और जो पडित पराक्रमी है उनके विषाद नहीं, इस प्रकार राम और सीता के बात चल रही थी उसी समय बधाई वाले, मगल शब्द करते हुये आये। तब राजा दशरथ ने महाहर्ष से बहुत आदरपूर्वक अनेकप्रकार का दान किया, और पुत्र परिवार सहित वनमे गये, वहॉ नगर के बाहर चारो तरफ विद्याधरो की सेना सैकडो सामन्तो से पूर्ण देख आश्चर्य को प्राप्त हुआ। विद्याधरो ने इन्द्र के नगर समान सेना का स्थान क्षणमात्र मे बनाया, ऊँचे ऊँचे कोट बडे बडे दरवाजे पताका तोरण रत्नो से मडित ऐसा निवास देख राजा दशरथ, जहॉ वनमे साधु विराजमान थे वहॉ गये, नमस्कार एव स्तुति कर राजा चन्द्रगति का वैराग्य देखा। विद्याधरो सहित गुरु की पूजा की। राजा दशरथ सभी परिवार सहित एक तरफ बैठे और भामडल सभी विद्याधरो सहित एक तरफ बैठा। विद्याधर और भूमिगोचरी मुनि के मुख से मुनि और श्रावक का धर्मश्रवण करने लगे। भामडल पिता को वैराग्य होने से कुछ शोकवान बैठे, तब मुनिराज ने कहा, जो यतिका धर्म है, वह शूरवीरो का है। महाशातदशा आनन्दका कारण, महादुर्लभ है, और कायर जीवोको भयरूप है। भव्यजीव मुनिपद को प्राप्तकर अविनाशी सुख पाते है। तथा इन्द्र अहमिन्द्र पद प्राप्त करते है। लोक का शिखर जो सिद्धस्थान है, वह मुनिपद के बिना नहीं मिलता है। केसे है मुनि? सम्यग्दर्शन से शोभित है, जिनमार्ग से निर्वाण के सुखो को प्राप्त होते है। चारो गतियो के दुखो से छूटते है। वहीमार्गश्रेष्ठ है। सो सर्वभूतहित मुनि ने मेघ की गर्जना समान ध्वनि से आनन्दकारी वचन कहे। समस्त तत्त्वो के ज्ञाता, मुनि के वचनरूपीजल, सन्देहरूपी तापको हटाता, जीवों

के कानरूपी अंजुली उससे पीते हुये। कोई मुनि बने, कोई श्रावक बने किसी ने धर्म को धारण किया, कोई सम्यग्दृष्टि बने। धर्म का उपदेश होने के बाद राजा दशरथ ने पूछा—हे नाथ! चन्द्रगति विद्याधर को किस कारण से वैराग्य हुआ। और सीता ने अपने भाई भामंडल के चरित्र सुनने की इच्छा की। कैसी है सीता? महा विनयवान। तब मुनिराज कहते हैं, हे दशरथ! तुम सुनो, यह भामडल पूर्वभव मे अनन्तकाल संसार में भ्रमणकर अतिदुखी हुआ। कर्मरूपी पवन के कारण इसभव में आकाश से गिरता हुआ राजा चन्द्रगति को प्राप्त हुआ। विद्याधर चन्द्रगति ने अपनी स्त्री पुण्यवती को दिया। नवयौवन मे भामडल सीता का चित्रपट देख मोहित हुआ, तब जनक को एक विद्याधर अश्व का रूप बनाकर विजयार्ध पर्वतपर ले गया। वहॉ यह प्रतिज्ञा की-कि जो यह धनुष चढायेंगे, वह राजकन्या से विवाह करेगें, पुन· जनक को मिथिलापूरी ले आये। भयकर धनुष को श्रीराम ने चढाया और सीता से विवाह किया। तब भामडल विद्याधरो के मुख से यह बात सुन क्रोधकर विमान मे बैठकर आ रहा था, वहॉ मार्ग मे पूर्वभव का नगर देखा और जातिस्मरण हुआ। तब जाना कि मै पापी कुण्डलमडित, राजा विदग्धपुर का था, पिगल ब्राह्मण की स्त्री का अप हरण किया। पुन उसको अनरण्य के सेनापति ने पकडा और देश से निकाल सम्पूर्ण सम्पदा लूट ली, उसने महापुरुषो के सानिध्य में आकर मधु मास मघ का त्याग किया और शुभ भावो से मरकर राजा जनक की रानी विदेहा के गर्भ मे आया। और वह पिगल ब्राह्मण की स्त्री जिसका इसने हरण किया वह ब्राह्मण वनसे लकडी लेकर आया, तब स्त्री रहित कुटिया देख, विलाप करने लगा—हे कमल नयनी। तेरे पिता चक्रध्वज, माता प्रभावती, उनकी बडी विभूति एवं परिवार सब को छोड मेरे साथ प्रीतिपूर्वक विदेश मे आई। नीरस भोजन, फटे वस्त्र तुमने मेरे लिये धारण किये। तेरा सुन्दर शरीर। अब तू मुझे छोडकर कहॉ गई, इस प्रकार वियोग रूपी अग्नि से जलकर वह पिगल पृथ्वीपर दुखी होकर भ्रमण करता हुआ, मुनि के उपदेश से मुनि बना और तप के प्रभाव से देव हुआ, मन मे सोचा मेरीस्त्री सम्यक्त्व रहित थी सो तिर्यञ्च में तथा मायाचार रहित सरल परिणामो से मनुष्यनी हुई अथवा समाधि मरण से जिनराज की भक्तिकर देवगति में गई? और वह दुष्ट कुडलमडित, जिसने मेरी स्त्री हरी थी, वह कहॉ गया? तब अवधिज्ञान से जनककी रानीके गर्भ मे आया जान, जन्म होतेही बालकका हरण किया और आकाश से पृथ्वीपर

गिराया तब राजा चन्द्रगति ने उठाकर रानी पुष्पवती को दिया। भामडल को जाति स्मरण हुआ, और सभी वृतान्त चन्द्रगति को कहा—कि सीता मेरी बहिन है, रानी विदेहा मेरी जन्म देने वाली माता है, और पुण्यवती मेरी प्रतिपालक माता है। यह बात सुनकर विद्याधरो की सभा आश्चर्य को प्राप्त हुई, और राजा चन्द्रगति ने भामडल को राज्य देकर ससार शरीर भोगों से उदास होकर वैराग्य को प्राप्त हुये। भामंडल से कहा—हे पुत्र! तेरे जन्म देने वाले माता पिता तेरे शोक से महादुखी है, सो अपना दर्शन देकर उनके नेत्रो को आनन्दित करो। स्वामी सर्वभूतहित मुनिराज राजा दशरथ से कहते है, यह राजा चन्द्रगति ससार का स्वरूप असार जान हमारे निकट आकर जिन दीक्षा को धारण किया। जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य ही मरेगा, और जो मरेगा वह अवश्य ही नया जन्म लेगा, ससार की यह अवस्था जान चन्द्रगति भव भ्रमण से डरा। यह मुनिराज के वचन सुनकर भामडल ने पूछा, हे प्रभो! राजा चन्द्रगति एव माता पुण्यवती का मेरे पर अधिक स्नेह क्यो है। तब मुनिराज बोले—यह पूर्वभव के तुम्हारे माता पिता है सो सुनो। एक दारु नाम का गॉव, वहॉ ब्राह्मण विमुचि, ब्राह्मणी अनुकोशा, उसका पुत्र अतिभूत, उसकी स्त्री सरसा। और एक कयान नाम का परदेशी ब्राह्मण वह अपनी माता ऊर्या सहित दारु गॉव मे आया, सो वह पापी, अतिभूत की स्त्री सरसाको एव धनको लेकर भाग गया। तब अतिभूत ने महादुखी होकर उसको ढूढने के लिये पृथ्वीपर भ्रमण किया। इसका पिता कुछ दिन पहले दक्षिणा के लिये अन्यदेश गया था, सो पुरुष के बिना घर सूना हुआ और घरमे थोडा बहुत धन था वह भी चला गया। अतिभूत की माता अनुकोशा महादुखी, दरिद्री। ऐसा वृतान्त विमुचि ने सुना कि घरका धन और पुत्र वधु गई। और पुत्र उनको ढूढने निकला है, न जाने वह किसतरफ गया? तब विमुचि ने घर आकर अनुकोशा को दुखी देख धैर्य बधाया। और कयान की माता ऊर्या वह भी महादुखी, कि पुत्रने महाअन्याय कार्य किया, उससे अतिशर्मिन्दा हुई। तब ब्राह्मण ने कहा तेरा कोई अपराध नहीं। और विमुची पुत्र को ढूढने गया, तब रास्ते मे एक सर्वारिनगर के वनमे एक अवधिज्ञानी मुनिकी प्रशसा लोगो के मुख से सुनी, तब यह मुनि के पास गया। धन और पुत्रवधु के जाने से महादुखी था। मुनिराज की तपोऋद्धि देखकर और ससार की झूठी माया जान विमुचि ब्राह्मण मुनि हुआ और विमुचिकी स्त्री अनुकोशा और कयान की माता ऊर्या इन दोनो ने कमलकाता

आर्यिका के पास आर्यिका के व्रतों को धारण किया। विमुचि मुनि ये दोनों आर्यिकायें तीनो महानिस्पृहा धर्मध्यान के प्रसाद से स्वर्ग में गये। विमुचि का पुत्र अतिभूति हिंसा मार्ग में लीन, संयमी जीवों की निंदा करनेवाला, आर्तरौद्र ध्यान से दुर्गति गया, और कयान भी दुर्गति गया। अतिभूत की स्त्री सरसा बलाह पर्वत की तलहटी में मृगी हुई, व्याध्र के भय से मृगों के समूह से अकेली होकर दावानल अग्नि में जलकर मरी। वह कुछ जन्मों के पश्चात चितोत्सवा हुई, कयान भी कईभव के बाद ऊँट हुआ। पश्चात् धूम्रकेश का पुत्र पिंगल हुआ और अतिभूत सरसा का पति राक्षस सरोवर के किनारे हस हुआ, उस हंस को सिचानु पक्षी ने घायलकर दिया और वह चैत्यालय के पास गिरा। वहाँ गुरु, एक शिष्य को भगवान का स्तोत्र पढा रहे थे सो इसने सुना। हंसकी पर्यायसे मरकर दसहजार वर्ष की आयु वाला नगोत्तम पर्वतपर किन्नरनाम का देव हुआ। वहाँ से चयकर, विदग्धपुर का राजा कुडलमंडित हुआ। पिंगल की स्त्री चितोत्सवा का हरण किया वह वृतान्त पहले कहा है। और विमुचि ब्राह्मण स्वर्ग से चयकर राजा चन्द्रगति हुआ, अनुकोशा ब्राह्मणी पुण्यवती हुई। कयान कुछ भवों के बाद पिंगल हुआ मुनिव्रतों को धार देव बना, सो देवने भामंडल का जन्म होते ही हरण किया। ऊर्या ब्राह्मणी स्वर्ग से चयकर रानी विदेहा हुई। यह सम्पूर्ण वृतान्त राजा दशरथ सुनकर भामडल से मिले एवं आँखों में आँसू आ गये। और सम्पूर्ण सभा इस कथाको सुनकर रोमांचित होकर आँखों मे पानी ले आई। और सीता अपने भाई भामंडल को देखकर स्नेह से मिली और रोने लगी, हे भाई! मैंने आपको प्रथमबार ही देखा, श्रीराम लक्ष्मण भी उठकर भामडल से मिले। मुनिराज को नमस्कारकर विद्याधर व भूमिगोचरी सभी अपने अपने नगर को गये।

भामंडल से विचारकर राजा दशरथ ने राजा जनक के पास विद्याधर भेजा एव जनक को आने के लिये विमान भेजे। राजा दशरथ ने भामंडल का बहुत सम्मान किया। और भामंडल को रहने के लिये, अतिरमणीक महल दिये। महल में सुन्दर बावडी, सरोवर, उपवन है, वहाँ भामंडल सुख से रहे। राजा दशरथ ने भामंडल के आने का बहुत उत्सव किया, याचकों को मनोवांछित दान दिया। और राजा जनक के पास विद्याधर शीघ्र ही पहुँचे, और जाकर पुत्र के आने की बधाई दी। एवं राजा दशरथ व भामंडल का पत्र दिया। वह पत्र पढ़कर राजा जनक आनन्द को प्राप्त हुये, रोमांचित्त हो गये। विद्याधरों से राजा पूछते हैं—हे

भाई! यह स्वप्न है या प्रत्यक्ष है? तुम आओ हमसे मिलो ऐसा कहकर राजा मिले और ऑखो मे पानी आ गया, जैसा हर्ष पुत्र को मिलने से होता वैसा हर्ष पत्रलाने वालों को मिलने से हुआ। सम्पूर्ण वस्त्राभूषण उन्हे दिये सर्व कुटुब के लोगो ने एकत्रित होकर उत्सव मनाया। अर बारम्बार पुत्र का वृतान्त विद्याधरो से पूछते रहे। और सुन सुन कर भी तृप्त नहीं हुये। विद्याधरो ने सभी वृतान्त विस्तार से कहा, उसी समय राजा जनक सब कुटुब परिवार सहित विमान मे बैठकर एक निमिषमात्र में चलकर अयोध्या पहुँचे। राजा जनक शीघ्र ही विमान से उतर पुत्र से मिले सुखसे नेत्र मिल गये, एकक्षण मूर्च्छा आ गई। पुन सचेत होकर अश्रुपात के भरे नेत्रों से पुत्र को देखा और हाथ से स्पर्श किया। रानीविदेहाभी पुत्रको देख मूर्च्छित हो गई। पुनः सचेत होकर मिली और रोने लगी। उसके रोने की आवाज सुनकर तिर्यंचों को भी दया उत्पन्न हुई। हाय पुत्र तेरा जन्म होते ही शत्रुओ ने तुझे हरा, तेरे देखने की चिन्ता रूपीअग्निसे मेरा शरीर जल गया था। सो अब तेरे दर्शनरूपी जलसे शरीर को सींचा तब शीतल हुआ। और धन्य है वह रानी पुष्पवती विद्याधरी उसने तेरी बालक्रीडाये देखी और क्रीडा से मैला शरीर तेरा अपने हृदय से लगाया और मुख चूमा और यौवन अवस्था मे चन्दन से लिप्त सुगन्धित तेरा शरीर देखा। ऐसे शब्द माता विदेहाने कहे, एव ऑखो से ऑसू बहे। स्तनोंसे दूध झरे तब रानी विदेहाको परम आनन्द हुआ। जैसे जिनशासन की सेवक देवी आनन्द सहित रहे, ऐसे पुत्र को देख विदेहा सुख सागर मे मग्न हुई। एक महीनातक यह अयोध्या मे रहे, फिर भामडल श्रीराम से कहने लगे, हे देव! यह जानकी को आपका ही शरण है धन्य है भाग्य इसका जो आप समान पति प्राप्त हुये। ऐसा कहकर बहिन को छाती से लगाया। और माता विदेहा भी सीता को हृदय से लगाकर कहा—हे राजकुमारी! सारा ससुर की अधिक सेवा करना और ऐसा कार्य करना जो सर्व कुटुब मे तुम्हारी प्रशसा हो। भामंडल ने सबको बुलाया। राजा जनक का छोटा भाई कनक उसे मिथिलापुरी का राज्य देकर राजा जनक और माता विदेहा को अपने स्थान ले गया। यह कथा गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिक से कही, हे मगधदेशके अधिपति! तू धर्मका महात्म्य देख जो धर्म के प्रभाव से श्रीरामचन्द्रजी को सीतासमान स्त्री प्राप्त हुई, गुण एवं रूप से पूर्ण, जिसका भामंडल सा भाई, विद्याधरो का इन्द्र और देवाधिष्ठत वह धनुष, राम लक्ष्मण ने चढाये और उनका लक्ष्मण जैसा भाई सेवक, यह श्रीराम

का चरित्र भामंडल के मिलन का वर्णन जो निर्मल चित्त होकर पढे पढाये सुने सुनाये उन्हें मनोवाच्छित फल की सिद्धि होती है और शरीर निरोग होता है, सूर्य समान प्रभाव को प्राप्त होते हैं।

(इतिश्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे भामडलमिलाप वर्णन करनेवाला तीसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-31

राजा दशरथका पूर्वभव सुनकर संसार से विरक्त होना

अथानंतर राजा श्रेणिक ने गौतमस्वामी से पूछा हे प्रभो! वे राजा दशरथ जगत के हितकारी राजा अनरण्य के पुत्र ने पुन आगे क्या किया? श्रीराम लक्ष्मण का सम्पूर्ण वृतान्त सुनना चाहता हूँ, कृपाकर कहो। आपका यश तीनलोक में फैल रहा है। तब मुनियो के स्वामी, महातप एवं तेज के धारी गौतमगणधर कहते है, कि हे भव्य, तू सुन! श्रीसर्वज्ञ वीतरागदेव ने कहा है। जब राजा दशरथ मुनियो के दर्शन करने को गये वहाँ सर्वभूतहित स्वामी को नमस्कारकर पूछा हे स्वामी! मैने ससार मे अनन्त जन्मो को धारण किया, उसमे कईभवो की बात आपके प्रसाद से सुनकर ससार को असार जान छोडना चाहता हूँ। तब मुनिराज दशरथ को भव सुनने का अभिलाषी जानकर कहते हैं हे राजन! संसार के सभी जीव अनादि काल से कर्मो के सम्बन्ध से अनन्त जन्म मरण को करते हुये दुख ही भोगते आये है। इस जगत मे जीवों के कर्मो की स्थिति उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तीन प्रकार की है, और मोक्ष सब में श्रेष्ठ है। उसे पंचम गति कहते हैं। अनन्तजीवो में से किसी ही को होती है सबको नहीं। पचमगति कल्याणरूप है वहाँ से पुन आवागमन नहीं, वह अनन्त सुख का स्थान, शुद्ध सिद्धपद है, और इन्द्रिय विषयों के लोलुपि, रोगो से पीडित, मोह से अधेप्राणी मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकते, जो वैराग्य एवं तत्वों की श्रद्धा से रहित हैं, और हिंसादिक मे प्रवृति करते है, उनको निरन्तर चारों गतियो में भ्रमण ही करना है। अभव्यको तो मोक्ष है ही नहीं, भव भ्रमण ही है। और भव्योमें भी सभीको नहीं। जहाँ तक जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल है, वह लोकाकाश है, और जहाँ केवल आकाश

ही है, वहाँ अलोकाकाश है। लोक के शिखरपर सिद्धभगवान विराजमान हैं, इस लोकाकाश में चेतना लक्षण वाले अनन्तानन्त जीव हैं। जिनका विनाश नहीं। संसारीजीव निरन्तर पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय ये छह काय मे शरीर को बार बार धारणकर भ्रमण करते हैं। यह तीनलोक अनादिअनन्त है, इसमे त्रस और स्थावर जीव अपने अपने कर्मोंके उदय से नाना योनियों में घूमते हैं। और जिनेन्द्र के धर्म से अनन्तसिद्ध हुये और अनन्तसिद्ध होंगें और हो रहे है। जिनमार्ग को छोडकर अन्य कोई मार्ग मोक्ष का नहीं है। अनन्तकाल बीत चुके अनन्तकाल व्यतीत होगा, इस कालका अन्त नहीं। जो जीव सन्देह रूपी कलंक से कलकी है, पापसे पूर्ण है, धर्म को नहीं जानते, उनको जैन धर्म का श्रद्धान कहाँ से होगा जिनको सच्चा श्रद्धान नहीं वह सम्यक्त्व रहित हैं, उसके धर्म कहाँ से होगा और धर्मरूपी वृक्षबिना मोक्ष फल कैसे प्राप्त करेगें? अज्ञान अनन्त दुख का कारण है। जो मिथ्यादृष्टि अधर्म कार्य में अनुरागी हैं और अत्यन्त पाप कर्मरूपी शरीर से मडित है। राग द्वेषादि विषयो से भरें है। उनका कल्याण कैसे होगा, दुख ही भोगेगें। एक हस्तिनापुर नगर मे उपास्ति नाम का पुरुष, उसकी स्त्री दीपनी वह मिथ्याभिमान से कुछ नियम व्रतो को धारण नहीं करती। श्रद्धान रहित महाक्रोधवान कषायरूपी विष की भरी महादुर्भावना से निरन्तर साधुओं की निन्दा करने वाली, कटु शब्द बोलने वाली, महाकृपण, कुटिल, स्वयं किसी को कभी भी भोजनादि नहीं देती। और जो कोई दान करते उन्हें भी मना करती। धनसे पूर्ण फिर भी धर्म को नहीं जाने, इत्यादि महादोषो से भरी, मिथ्या मार्ग का सेवन करने वाली, पापके उदय से अनन्तकाल तक संसार में भ्रमण करती रही। और यह उपास्ति, दान के अनुराग से, चन्द्रपुरनगर मे भद्रनाम का पुरुष, उसके धारिणी स्त्री, उनके धारण नाम का पुत्र हुआ। महा भाग्यवान उसके नयनसुन्दरी नाम की स्त्री थी। वह धारण शुभ भावों से मुनियों को आहारदान देकर अन्त समय मे शरीर को छोडकर घातकीखंडद्वीप में उत्तरकुरु भोगभूमि के तीनपल्य तक सुख भोग देवपर्याय प्राप्तकर वहाँसे चयकर पृथुलावली नगरी में राजा नंदिघोष, रानी वसुधा उसके नंदिवर्धन पुत्र हुआ। एक दिन राजा नदिघोष यशोधर मुनि के मुख से धर्मोपदेश सुनकर, नंदिवर्धन को राज्य देकर मुनि बन महातप से स्वर्ग में गये। और नंदीवर्धन ने श्रावक के व्रतों को धारण किया। णमोकार मत्र के स्मरण मे तत्पर कोटीपूर्व कालतक राज्यपद के सुख भोग, अन्त समय में समाधिमरण कर पाँचवें स्वर्ग में देव हुये। वहाँ से

चयकर पश्चिमविदेह के विजयार्ध पर्वत वहाँ शशिपुर नगर का राजा रत्नमाली रानी विद्युत्लता उनके सूर्यजय नाम का पुत्र हुआ। एक दिन रत्नमाली महाबलवान सिंहपुर का राजा बज्रलोचन उससे युद्ध करने गया, अनेक दिव्यरथ, हाथी, घोडे, पयादे, सेना शस्त्रों के धारक साथ में लेकर राजा होठ डसता बखतर पहने रथ मे चढ़ा, शत्रु के स्थान को जलाने की इच्छा से चला उससमय एक देवने तत्काल आकर कहा, हे रत्नमाली! तू यह क्या कर रहा है। अब तुम क्रोध छोडों। मैं तेरा पूर्वभव का वृतान्त कहता हूँ, सो सुनो। भरतक्षेत्र में गाधारीनगरी, राजा भूति उसका पुरोहित उपमन्यु। वह राजा ओर पुरोहित दोनों पापी मास भक्षी थे। एक दिन राजा ने केवलगर्भ स्वामी के मुख से धर्मोपदेश सुनकर यह व्रत लिया कि मैं अब पाप का कार्य नहीं करूँगा। सो उपमन्यु पुरोहित ने छुडवा दिया। एक समय राजा से युद्ध के लिये परशत्रुओ की सेना आई तब युद्ध में राजा और पुरोहित दोनो मारे गये। पुरोहित का जीव हाथी हुआ वह हाथी युद्ध में घायल होकर अन्त समय मे णमोकार मंत्र सुनकर गांधारीनगरी में राजा भूतिकी रानी योजनगंधा उसके अरिसुदन नाम का पुत्र हुआ। पुत्र को केवलगर्भमुनि के दर्शनकर ज्ञातिस्मरण से वैराग्य प्राप्त हुआ। और मुनि पद ग्रहण किया, समाधिमरण कर ग्यारहवें स्वर्ग मे देव हुआ। सो मैं उपमन्यु का जीव हूँ और तू राजा भूति का जीव मरकर मदारण्य मे मृग हुआ। दवानल मे जला और मरकर कलिंजामा नाम का नीच पुरुष हुआ। तू पाप से मर दूसरे नरक गया, तब मैंने स्नेह के वश से नरक में तुझे संबोधा। आयु पूर्णकर नरक से निकल रत्नमाली विद्याधर हुआ। अब तू नरक के दुख भूल गया। यह बात सुन रत्नमाली, सूर्यजय पुत्र सहित परम वैराग्य को प्राप्त हुआ। दुर्गति के दुखो से डरा। तिलकसुन्दर स्वामी का शरण लेकर पिता पुत्र दोनो मुनि बने। सूर्यजय तपकर दशवेस्वर्ग में गया। वहॉ से चयकर राजा अनरण्य का पुत्र दशरथ हुआ। सर्वभूत हित मुनि कहते हैं, थोडे किये हुये पुण्यसे भी उपास्ति का जीव कुछ ही भवो में बडके बीजकी तरह वृद्धि को प्राप्त हुआ, तू राजा दशरथ उपास्ति का जीव है, और नंदिवर्धन के भव में तेरा पिता राजा नंदिघोष मुनि होकर ग्रैवेयक गया, वहॉ से चयकर मैं सर्वभूतहित हुआ। वह राजा भूतिका जीव रत्नमाली था, वह स्वर्गसे आकर जनक हुआ और उपमन्यु पुरोहित का जीव जिसने रत्नमाली को संबोधा था, वह जनक का भाई कनक हुआ। इस ससार में नही कोई अपना है, नही कोई दूसरा है। शुभाशुभ कर्मों से यह जीव जन्म मरण करते है। यह पूर्वभव का वर्णन सुन राजा दशरथ विरागी

होकर संयम के सन्मुख हुये। गुरु के चरणो में नमस्कारकर नगर में प्रवेश किया, मन में विचारते रहे कि यह महामडलेश्वर पद का राज्य महा सुबुद्धि, पडित, जो राम, उनको देकर मैं मुनिव्रतों को धारण करूँ। राम महाधर्मात्मा धीरवीर शूर धैर्यको धारण करने वाले हैं। यह समुद्र पर्यंत पृथ्वी का राज्य पालने में समर्थ है। और इनके भाई आज्ञाकारी है, ऐसा चिन्तवन राजा दशरथ ने किया। कैसे है राजा दशरथ? मोह से विरक्त और मोक्ष से रागी। उस समय शरदऋतु पूर्ण हुई, हिमऋतु का आगमन हुआ।

अथानंतर हिमऋतु मे शीत पडने लगी, वृक्ष ठडी से जले, ठंडी हवा से लोग व्याकुल हुये, धन रहित जीव कुटिया मे दुख से समय व्यतीत करते हैं। कैसेहैं दरिद्री? फट गये है हाथ पैर। दॉत बज रहे हैं। रुखे केश है। निरन्तर अग्नि का सेवन करते हैं। कभी भी पेटभर भोजन नहीं मिलता, महादुखी घरमे खोटी स्त्री के वचनरूपी शस्त्रोसे नष्ट हुआ है, धन जिनका, लकडियो को लाने के लिए कुठारी आदि कधोपर रख वन वन मे भटकते हैं। महादुख से पेट भरते है। और जो पुण्य के उदय से राजादि धनवान पुरुष हुये है, वह बडे महलो में रहते हैं। शीतको दूर करने के अनेक साधन प्राप्त होते है। और सुन्दर सुन्दर वस्त्र पहनते हैं। सोने चॉदी के पात्रों मे षट्रसो सहित सुगन्धित स्वादिष्ट पौष्टिक भोजन करते है। केशरादि सुगन्धित वस्तु से शरीर का लेपन करते है। धन से पूर्ण चिन्ता रहित हैं, झरोखो में बैठे नगर की शोभा देखते है। गीत नृत्यादि विनोद, उनके सामने होते रहते है। रत्नो के आभूषणो व सुगन्ध मालाओ से शरीर को सजाते है, जैनधर्म की कथाओ मे उद्यमी रहते हैं, विनयवान, रूपवान, गुणवान, अनेक कलाओ की पारगामी, पतिव्रता रानियॉ होती है, धूपदान मे धूप खेते है, नौकर चाकर आज्ञाकारी होकर सेवा करते है। पुण्य के उदय से ससारी जीव देवगति, मनुष्यगति के सुखो को भोगते हैं। पापकर्म के उदय से नरक, तिर्यंचगति तथा मनुष्य होकर नीचकुल में दुख रोग दरिद्रता को भोगते है। सभीलोग अपने अपने किये हुये कर्मके फलको भोगते है। ऐसे मुनिराज के वचन राजा दशरथ ने पहले सुने थे, अत. ससार से विरक्त हुये, द्वारपाल से कहा। द्वारपाल कैसा है? हाथ जोड मस्तक को भूमि की तरफ झुका विनय से खडा हैं

हे भद्रे! मत्री, पुरोहित, सेनापति, सामन्तादि सबको बुलाओ। तब द्वारपाल दरवाजे पर दूसरे मनुष्य को खडाकर आज्ञा प्रमाण बुलाने गया। सबने आकर राजा को प्रणाम किया और यथायोग्य स्थानपर बैठ विनती की, हे नाथ!

आज्ञाकरो क्या कार्य है? तब राजा ने कहा, मैं संसार का त्यागकर निश्चय से संयम धारण करूँगा। तब मत्रियों ने कहा—हे प्रभो! आपको किस कारण से वैराग्य हुआ। तब राजाने कहा जो प्रत्यक्ष यह सम्पूर्ण जगत सूखे तिनके की तरह मृत्युरूपी अग्नि मे जलता है। और जो अभव्यको दुर्लभ एव भव्य को सुलभ ऐसा सम्यक्त्व सहित संयम, ससार के ताप को हरने वाला, शिव सुख को देने वाला है। सुर असुर चक्रवर्ती विद्याधरों से पूज्य प्रशसा योग्य है। मैंने आज मुनिके मुख से जिनशासन का व्याख्यान सुना। कैसाहै जिनशासन? सभी पापो को हरने वाला है। तीनलोक में प्रगट, महासूक्ष्म, धर्म चर्चा में अतिनिर्मल, उपमा रहित है, सभी वस्तुओ मे सम्यक्त्व परमवस्तु है। उस सम्यक्त्व का मूल जिनशासन है। श्रीगुरुचरणो के प्रभाव से मेरी बुद्धि ससार से निवृति मे लगी, मेरी भवभ्रांति रूपीनदी की कथा आज मैने मुनिके मुख से सुनी और मुझे जातिस्मरण हुआ, इसलिये देखो मेरा पूरा शरीर दुख से काप रहा है। कैसी है मेरी भवभ्रांतिनदी? अनेक जन्मरूपी भ्रमरमे, मोहरूपी कीचड से मलीन कुतर्करूपी ग्रहोंसे पूर्ण, महादुखरूपी निरन्तर लहरे उठ रही है, मिथ्यात्वरूपी जलसे भरी, मृत्युरूपी मगरमच्छो के भय से पूर्ण है, रुदनके महाशब्दो को धरती हुई, अधर्म प्रवाहकर बहती, अज्ञानरूपी पर्वतसे निकली, ससाररूपी समुद्र मे प्रवेश किया है। इसीलिये अब मै इस भवरूपी नदीको पारकर मोक्षपुरी जाने का पुरुषार्थ करता हूँ। तुम मोह के कारण मेरे को वृथा कुछ मत कहो। ससार समुद्र से तिरकर निर्वाणद्वीप जाने मे अन्तराय मत करो। जैसे सूर्यके उदय होनेपर अन्धकार भाग जाता है, वैसे ही सम्यक्ज्ञान होनेपर सशयरूपी अज्ञान कहाँ रहेगा। इसलिये मेरे पुत्रको राज्य देऊँगा, अभीही पुत्रका अभिषेक कराता हूँ मै तपोवन मे प्रवेश करूँगा। ये वचन सुन मत्री आदि सामन्त राजा को वैराग्य का निश्चय जान, शोक करने लगे, मस्तक नीचे हो गये। अश्रुपात से ऑखे भर गई, क्षणमात्र मे प्रभारहित होकर मौन से बैठे, सम्पूर्ण रणवास प्राणनाथ का निर्ग्रंथ व्रत का निश्चय सुन, शोक को प्राप्त हुआ, अनेक क्रीडाओ को छोडकर वियोगरूपी दुख से विलख विलख कर रानियॉ रोने लगी। भरत ने भी पिता का वैराग्य सुन स्वय ने भी दीक्षा लेने के भाव किये। मन में सोचने लगा यह स्नेह का बधन छोडना अतिकठिन है। हमारे पिता वैराग्य को प्राप्त होकर दीक्षा लेने के इच्छुक हैं, अब इनको राज्य की चिन्ता कहाँ। मुझे तो ना किसीसे कुछ पूछना न कुछ करना। मै तो तपोवन में प्रवेश करूँगा-संयम धारूँगा। कैसा है संयम? ससार के दुखो का क्षय करनेवाला।

मुझे इस शरीर से भी क्या राग? कैसा है यह शरीर? व्याधि का घर है विनश्वर है। यदि इस शरीर से ही मेरा सम्बन्ध नहीं तो दुखरूपी बंधुओं से क्या संबंध? यह सब अपने अपने कर्मफल को भोगने वाले हैं। यह प्राणी मोह से अंधे हैं, वन में अकेले ही भटकते हैं। वन दुख स्वरूप है, अनेकभव भयरूपी वृक्षों से भरे है।

अथानंतर केकई सम्पूर्ण कलाओ को जानने वाली भरत का मन वैराग्य मय जानकर अतिशोक किया। मन में सोचती है, भरतार और पुत्र दोनों ही वैरागी होकर मुनि बनना चाहते हैं, किसउपाय से उनको मना करूँ, इस प्रकार चिन्ता से व्याकुल हुई, तब राजा ने जो वर दिया था वह याद आया और शीघ्र ही पति के पास जाकर आधे सिहासनपर बैठी और विनती करने लगी हे नाथ! सभी रानियों के निकट आपने मुझे कृपाकर कहा था जो तू मागे वह मै देऊँ, इसलिये अब मुझे देओ। आप सत्यवादी हो। दान से निर्मलकीर्ति आपकी जगत में फैल रही है। तब दशरथ कहने लगे, हे प्रिये! जो तेरी इच्छा है, वही मांगलो। तब रानी केकई ऑसू डालती हुई कहती है, हे नाथ! हमने ऐसी क्या गलती की, जो आपने अपना मन कठोर किया, हमको छोडना चाहते हो, हमारा जीवन तो आपके आधीन है, और यह जिनदीक्षा अत्यन्त दुर्धर है वह लेनेकी आपकी बुद्धि क्यो हुई? यह इन्द्र समान भोगो से लडाया आपका शरीर, सो कैसे मुनिपद को धारण करोगे? इस प्रकार रानी केकई ने कहा, तब राजा दशरथ कहते है। हे कान्ते! समर्थवानो को क्या दुलर्भ? मैं तो निसदेह मुनिव्रत धारण करूँगा, तुम्हारी जो अभिलाषा हो वह मॉग लो। तब रानी चिन्तावान होकर नीचा मुखकर कहती है, हे नाथ! मेरे पुत्रको राज्य देओ। तब राजा दशरथ बोले इसमें क्या सन्देह। तुमने धरोहर रखा था ''वर'' वह अब ले लो। तुमने जो कहा वह हमने प्रमाण किया अब शोक तजो। तुमने मुझे ऋणरहित किया। तब राम लक्ष्मण को बुलाकर दशरथ कहते है, कैसे है दोनो भाई? महा विनयवान पिता के आज्ञाकारी है। राजा कहते है, हे पुत्र! यह केकई अनेक कलाओ की पारगामी उसने पहले महाघोर सग्राम मे मेरा सारथी का काम किया। यह अतिचतुर है, मेरी जीत हुई, तब मैने तुष्टायमान होकर उसे वर दिया था जो तेरी इच्छा हो वह मांगो, तब उसने यह वर मेरे धरोहर रखा, और कहा जब इच्छा होगी तब लूंगी। अब यह कहती है कि मेरे पुत्रको राज्य दो। अगर इसके पुत्र को राज्य नहीं देता हूं तो इसका पुत्र भरत संसार का त्याग करता है, और यह पुत्र के शोक से प्राण तजती है। और मेरे वचनों की असत्यता की कीर्ति जग मे फैलती है, और यह काम

मर्यादासे विपरीत है, की बड़े पुत्रको छोडकर छोटे पुत्र को राज्य देना। और भरत को सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य दिया, तो तुम लक्ष्मण सहित कहाँ जाओगे? तुम दोनों भाई परमक्षत्री तेज के धारी हो। इसीलिये हे वत्स! मैं क्या करूँ? दोनों ही बात कठिन है। मैं अत्यन्त दुखरूपी चिन्ता के सागर में फंसा हूँ। तब श्रीरामचन्द्र महा विनय सहित कहते हैं, पिता के चरणों में दृष्टि रखते हुये, महासज्जन भावो को धारणकर कहा, हे तात्! आप अपना वचन पालो, हमारी चिन्ता छोडो। आपके वचन चूकने की अपकीर्ति हो, और हमारे हाथ मे इन्द्र की सम्पदा आये, तो क्या काम की? जो सुपुत्र है, वह ऐसा ही कार्य करते हैं जिससे माता पिता को लेशमात्र भी शोक नहीं उत्पन्न हो। पुत्र का यही पुत्र पना है, ऐसा पंडित लोग कहते है। जो माता पिता को सुख दे और कष्टसे रक्षा करे, धर्म व त्यागमार्ग में बाधक नहीं बने। दशरथ और राम लक्ष्मण के यह बात हो ही रही थी, उसी समय भरत महल से उतरकर, मन मे निश्चय किया कि मै भी मुनिव्रतों को धारणकर कर्मों को नाश करूँ। तब लोगों के मुख से हाहाकार शब्द हुआ और पिता ने विह्वल चित्त होकर भरतको वनमें जाने से रोका, गोद मे लेकर बैठे, छाती से लगा लिया मुख चूमा और कहा, हे पुत्र! तू प्रजा का पालनकर, मै तप करने के लिये वनमें जा रहा हूँ, भरतने कहा, मैं राज्य नहीं करूँगा जिनदीक्षा धारूँगा। तब राजा ने कहा—हे पुत्र! कुछ दिन राज्य करो अभी तुम्हारी यौवन अवस्था है। वृद्ध अवस्था में तप करना, भरत ने कहा, हे तात! जो मृत्यु है, वह बाल, वृद्ध और यौवन को नहीं देखती है, सबको ही मारती है। आप मुझे वृथा क्यों मोह उत्पन्न करवाते हो, तब राजा ने कहा, हे पुत्र! गृहस्थाश्रम मे भी धर्म का कार्य होता है। भरत ने कहा, हे नाथ! इन्द्रियों के वशसे काम क्रोधादि से भरे गृहस्थो को मुक्ति कहाँ है। तब राजा ने कहा, हे भरत! मुनियों में भी सभी मुनि उसीभव से मोक्ष नहीं जाते। कोई कोई मुनि ही मोक्ष जाते हैं। इसीलिये तुम कुछ दिन गृहस्थ धर्म का पालन करो, तब भरत ने कहा—हे देव! आपने जो कहा वह सब सत्य है परन्तु गृहस्थ तो मोक्ष जाते ही नहीं यह नियम है। मुनियों में कोई जाते हैं कोई नहीं जाते। गृहस्थधर्म से परम्परा से मोक्ष जाते हैं। साक्षात नहीं इसलिये हीन शक्ति वालों के लिए यह काम है। मुझे यह बात अच्छी नहीं लगती है। मै महाव्रत ही धारण करने का अभिलाषी हूँ। भोगी मनुष्य कामरूपी अग्नि की ज्वाला से परमदाह को प्राप्त हुये, स्पर्शन इन्द्रिय और जिह्वा इन्द्रिय के वशसे अधर्म कार्य को करते हैं। पापीजीव धर्म से विमुख विषय भोगों को भोगकर निश्चय से

महादुख देने वाली दुर्गति को प्राप्त होते है। यह भोग रखने से नहीं रहते, क्षणभंगुर है, दुर्गति को देते है, इसलिये छोडने योग्य ही है। जैसे जैसे कामरूपी अग्निमें भोगरूपी ईंधनडाले वैसे वैसे अत्यन्त दुख को करने वाली कामाग्नि प्रज्वलित होती है, इसीलिये हे तात्! आप मुझे आज्ञा दो, मै वनमे जाकर महाउग्र उग्र तपकरूँ, जिनेन्द्र भगवान का कहा हुआ तप परमनिर्जरा का कारण है। इस संसार से मैं अतिभय को प्राप्त हुआ हूँ। और हे प्रभो! अगर घर मे ही कल्याण होता तो आप क्यो घर छोडकर मुनि बनना चाहते हो? आप मेरे पिता हो, सो पिता का यही धर्म है, कि ससार समुद्र से तारे, तप की अनुमोदना करे, यह बात ज्ञानी पुरुष कहते है। शरीर स्त्री धन माता पिता भाई सबको छोडकर यह जीव अकेला ही, परलोक को जाता है। चिरकाल तक देवो के सुख भोगे है, फिर भी तृप्त नहीं हुआ, तब मनुष्यो के भोगो से क्या तृप्ति होगी। राजा दशरथ राजपुत्र भरत के ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न हुये, हर्ष से रोमाचित हो गये और कहा, हे पुत्र! तू धन्य है भव्यो में तू मुख्य है। जिनशासन का रहस्य जानकर वैराग्य को प्राप्त हुआ है, तू जो कह रहा है वह प्रमाण है फिर भी हे धीर? तुमने अभीतक कभीभी मेरी आज्ञा भग नहीं की तू विनयवान पुरुषो मे प्रधान है, मेरी बात सुनो, तेरी माता केकई ने युद्ध मे सारथी का काम किया वह युद्ध अतिभयानक था, उसमे जीने की आशा नहीं थी, इसके सार्थी पने से युद्ध मे विजय पाई, तब मैने प्रसन्न होकर कहा, तेरी जो इच्छा है सो मॉग, तब उसने कहा यह वचन भडार मे रखो, जिस दिन मेरी इच्छा होगी उस दिन माग लूगी। सो आज उसने यह मागा की मेरे पुत्र को राज्य दो, सो मैने प्रमाण किया। अब हे गुण निधे! तुम इन्द्र के राज्यसमान यहराज्य निष्कटक होकर करो, मेरे प्रतिज्ञाभग की अपकीर्ति जगत मे नहीं हो। और तेरी माता तेरे शोक से मरण को प्राप्त नहीं हो। कैसी है यह माता? निरन्तर सुख से शरीर को पाला है। अपत्यकहो—पुत्र उसका यही पुत्रपना है कि माता पिता को शोक समुद्र मे नहीं डाले। यह बात बुद्धिमान पडित कहते है, इस प्रकार राजा दशरथ ने कहा।

अथानतर श्रीराम भरतका हाथपकड महामधुर वचनो से प्रेम की भरी दृष्टि से देखते हुये कहते है। हे भ्रात! पिता ने जो वचन तुमसे कहे ऐसा कहने मे और कौन समर्थ है। समुद्र से जो रत्नो की उत्पत्ति होती है वह सरोवर से कहाँ, अभी तुम्हारी उम्र तपके योग्य नहीं है कुछ दिन राज्य करो, इससे पिताजी के वचन पालने की कीर्ति निर्मल होगी और तुम्हारे समान पुत्र के होते हुये, माता शोककर

मरण को प्राप्त हो, यह योग्य नहीं। और मैं पर्वत अथवा वनमें ऐसी जगह निवास करूँगा जो कोई जाने नहीं, तुम निश्चित होकर राज्य करो। मैं सम्पूर्ण राजऋद्धि को छोडकर देश से दूर रहूँगा। और पृथ्वी को किसीप्रकार की पीडा नहीं होगी। इसीलिये अब तू दीर्घ श्वांस मत लो कुछ दिन पिता की आज्ञा मानकर राज्य करो, न्यायसहित पृथ्वीकी रक्षा करो। हे निर्मल स्वभावी! यह इक्ष्वाकुवश का कुल, उसे तुम अत्यन्त शोभायमान करो, जैसे चन्द्रमा ग्रह नक्षत्रादि को शोभायमान करते है। भाई का यही भाई पना पडितों ने कहा है, भाईयों की रक्षा करे, एव संकटो से दूर करे। श्रीरामचन्द्र ऐसे वचन कहकर पिता के चरणों मे भावसहित नमस्कारकर वनके लिये निकल गये। तब पिताको मूर्च्छा आ गई, काष्ठ के स्तभ समान शरीर हो गया। राम तर्कशबांध धनुषहाथ में लेकर माताको नमस्कारकर कहते है—हे माता! हम अन्यदेश को जा रहे हैं, आप चिन्ता नहीं करना तब माताको भी मूर्च्छा आ गई, पुन सचेत होकर ऑसू निकालती हुई कहती है—हे पुत्र! तुम मुझे शोक के समुद्र में डालकर कहॉ जा रहे हो, तुम उत्तम क्रिया करनेवाले शुभ लक्षणो को धरने वाले हो, माता के लिये पुत्र ही अवलम्बन है, माता रुदनकर विलाप करती रही, तब श्रीराम माता की भक्ति मे तत्पर उन्हे प्रणामकर कहते है हे माता! आप विषाद मत करो, मै दक्षिणदिशा मे कोई स्थान बनाकर आपको निसदेह बुलाऊँगा। हमारे पिता ने माता केकई को वरदान दिया था, इसलिये भरत को राज्य दिया। इसीलिये अब मै यहॉ नहीं रहूँगा। विध्याचल के वन मे अथवा मलयाचल के वन मे तथा समुद्र के पास स्थान बनाऊँगा। मै सूर्य समान यहॉ रहूँ। तो भरत चन्द्रमा समान, इसकी आज्ञा ऐश्वर्य और काति का विस्तार नहीं होगा। तब माता पुत्र को हृदय से लगाकर रोती हुई कहती है। हे पुत्र! मुझे तुम्हारे साथ चलना ही उचित है, तुमको देखे बिना, मै प्राणो को रखने मे समर्थ नहीं हूँ। जो कुलवती स्त्री है, उनके पिता या पति तथा पुत्र ये ही आश्रय है, सो पिता तो मरण को प्राप्त हुये, और पति दीक्षा लेने को तैयार है, अब मेरे पुत्रका ही सहारा है, और तुमभी मुझे छोडकर जा रहे हो, तो मेरा क्या होगा? तब राम बोले—हे माता! मार्ग मे ककर पत्थर बहुत रहेगे, आप कैसे पैदल चलोगी? इसलिये कोई सुख का स्थान बनाकर सवारी को भेज आपको बुलाऊँगा। मुझे आपके चरणों की सौंगध है, आपको लेने मैं आऊँगा, आप चिन्ता मत करो, ऐसे कहकर माता को शांति देकर पुनः पिता के पास गये, पिता मूर्च्छित हुये थे, वह सचेत हुये, पिताको प्रणामकर और माताओं के पास गये, सुमित्रा, केकई, सुप्रभा,

कौशल्या। सबको नमस्कार कर विदाईली, कैसेहै राम? न्याय में प्रवीण, निराकुल है मन उनका, तथा भाई बन्धु मंत्री अनेक राज परिवार के लोग सबको शुभ वचन कहकर चले, सबको बहुत दिलासा दे, ह्रदय से लगाकर उनके आँसू पोंछे। सबने बहुत कहा कि यहाँ ही रहो, पर ये नहीं रहे। सामन्त हाथी घोडे रथ सबकी ओर कृपादृष्टि से देखा। पुनः बडे बडे सामन्त हाथी घोडे भेट लेके आये, परन्तु राम ने नहीं रखे। सीता अपने पति को विदेश गमन करते देख सास और ससुर को प्रणामकर पतिके साथ चली जैसे शचि इन्द के साथ चले। और लक्ष्मण प्रेम से पूर्ण, राम को विदेश गमन करते देखा तब क्रोधकर सोचने लगे, हमारे पिता ने स्त्री के कहने से यह अन्याय कार्य किया, बडे पुत्र रामको छोड़कर भरत को राज्य दिया, धिक्कार है, स्त्रीयो को। अनुचित कार्य करते हुये संकोच नहीं करती, स्वार्थ मे है आसक्त बुद्धि उनकी, और यह बडा भाई महानुभाव पुरुषोत्तम है, सो ऐसे परिणाम मुनियों के होते है। और मै ऐसा समर्थ हूँ जो सम्पूर्ण दुराचारों को दूरकर भरत को राज्य लक्ष्मी से रहित करूँ। और राज्य लक्ष्मी श्रीराम के चरणो मे लाऊँ। परन्तु यह बात उचित नहीं। क्रोध महादुखदाई है, जीवो को अधा करता है। पिता तो जिनदीक्षा लेने को तैयार हुये, और मै क्रोध कराऊँ, तो अच्छा नहीं, और मुझे ऐसे विचार करने से क्या? योग्य और अयोग्य पिता जाने अथवा बडे भाई जाने, जिसमे पिता की कीर्ति उज्वल हो वही करना है। मुझे किसी से कुछ कहना नहीं। मै मौन लेकर बडे भाई के साथ जाऊँगा। कैसा है यह भाई? साधु समान है भाव जिनके। ऐसा विचार कर धनुष बाण लेकर बडे लोगो को प्रणामकर महाविनय सहित राम के साथ चले।

दोनो भाई जैसे दैवालय से देव निकले, ऐसे राज्य मन्दिर से निकले, और माता पिता भरत शत्रुघ्न सहित सभी परिवार इनके वियोग से अश्रुपात किया मानो वर्षाऋतु आई। पुन. राम लक्ष्मण को रोकने के लिए बहुत पुरुषार्थ किया, परन्तु राम लक्ष्मण, पिताभक्त, समझाने में पडित, विदेश जाने का निश्चय कर माता पिता की बारम्बार स्तुति एव नमस्कार कर बहुत धैर्य बंधाकर, पीठ फेरी (चले) तब नगर मे हा हाकार हुआ लोग कहते है, हे माता, यह क्या हुआ, किसने ऐसा कराया, ऐसी बुद्धि किसने दी, इस नगरी का अभाग्य है। तथा सभी पृथ्वी का अभाग्य है, हे माता हम तो यहाँ नहीं रहेगे। इनके साथ जायेगें ये महासमर्थवान है, और सीता देखो अपने पति के साथ जा रही है, और यह राम की सेवा करने वाला लक्ष्मण भाई है, धन्य है यह जानकी विनयरूप वस्त्र पहने भरतार के साथ

साथ चल रही है, नगर की नारियाँ कहती हैं, हम सबको शिक्षा देने वाली यह सीता महापतिव्रता है। इस समान ओर कोई नारी नहीं जो महापतिव्रता हो, वही इसकी उपमा प्राप्त करती है। पतिव्रताओं के भरतार ही देव हैं, और देखो यह लक्ष्मण माता और रानियों को रोती छोडकर बडे भाई के साथ जा रहे हैं। धन्य है उनकी भक्ति, धन्य उनका प्रेम, धन्य उनकी शक्ति, धन्य उनकी क्षमा, धन्य उनका विनय, इनके समान और नहीं। राजा दशरथ ने भरत को यह क्यों आज्ञा की, तुम राज करो और राम लक्ष्मण को यह बुद्धि क्यो हुई, जो अयोध्या छोड के चले जायें। जिस काल मे जो होना होगा वही होगा जिसके जैसे कर्म का उदय है, वैसा ही होगा। भगवान ने जो ज्ञान में देखा है वही होगा। देवगति दुर्निवार है, यहाँ के देवता कहाँ गये? लोगों के मुख से ऐसे शब्द निकलते रहे। सब लोग इनके साथ चलने को तैयार हुये। घर से निकले नगर मे उत्साह ही नहीं रहा, शोक से पूर्ण सभी लोगो के ऑखो मे ऑसुओं की धारायें बह चली, जैसे समुद्र की लहरें उठे ऐसे लोग साथ चलने के लिए उठे। राम के साथ साथ चले, मना करनेपर भी लोग रुके नहीं। रामको लोग भक्ति से पूजते हैं, नमस्कार करते हैं, सम्भाषण करते हैं, तब राम कदम कदमपर विघ्न मान रहे है। इनके भाव चलने का है, और लोग रखना चाहते है कोई साथ चले। राम का विदेश गमन मानो सूर्य देख नहीं सका वह अस्त हो गया। अस्त समय सूर्य के प्रकाश ने सर्व दिशायें छोडी जैसे भरत चक्रवर्ती ने मोक्ष के लिये राज्य सम्पदा छोडी थी, सूर्य को अस्त होते ही, सध्या सूर्य के पीछे चली। जैसे सीता राम के पीछे पीछे चली। और सर्व विज्ञान का नाश करने वाला अन्धकार जगत मे फैल गया। मानों रामके विहार के शोक से अंधकार फैल गया। लोग साथ साथ चलने वाले रुके नहीं, तब राम लोगों को छोडने के लिये, श्री अरहनाथ भगवान के चैत्याल्य में निवास करना सोचा। संसार से तारने वाले भगवान का भवन सदा शोभायमान महासुगन्ध अष्ट मगल द्रव्यो सहित तीन दरवाजो से युक्त ऊँचे ऊँचे तोरण को देख राम लक्ष्मण सीता प्रदक्षिणादेकर चैत्यालय में प्रवेश किया। तब दो दरवाजे तक लोग रामके साथ चले गये और तीसरे दरवाजे पर द्वारपाल ने लोगों को रोका जैसे मोहनीयकर्म मिथ्यादृष्टि को शिवपुर जाने से रोके। तब राम लक्ष्मण अपना धनुषबाण और बखतर बाहर रख अन्दर दर्शन करने गये, श्री अरहनाथ का जिनबिम्ब रत्नों के सिंहासन पर विराजमान महासोम्य महा शोभायमान कायोत्सर्ग श्रीवत्सलक्षण से उर दैदीप्यमान है, सम्पूर्ण लक्षणों से पूर्ण ऐसे जिन प्रभु का

दर्शनकर भावसहित नमस्कार कर दोनों भाई परमहर्ष को प्राप्त हुये। कैसेहैदोनों भाई? बुद्धिमान रूप विनय गुणो के भरे जिनेन्द्र की भक्ति में तत्पर रात्रिमें चैत्यालय के समीप रहे। चैत्यालय मे रामादि को रुके जान माता कौशल्यादि पुत्रों के प्रेम से ऑसू गिराती हुई आयी और पुत्रो को हृदय से लगा लिया। और सीता को प्रेम से भरा वात्सल्य प्रदान करती रही। पुत्रों के दर्शन में अतृप्त विकल्प रूपी झूलो में झूल रहा है मन उनका। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है—हे श्रेणिक! सब शुद्धताओं मे मन की शुद्धता महाप्रशंसा योग्य है। स्त्री पुत्र को भी हृदय से लगाती और पति को भी हृदय से लगाती, परन्तु परिणामों का अभिप्राय भिन्न भिन्न है, दशरथ की चारों ही रानी गुणरूपी शोभा से पूर्ण महामिष्ट भाषी पुत्र को मिल पतिके पास गई, जाकर कहने लगी कैसेहैपति? सुमेरु समान निश्चल भाव है उनका, रानी ने कहा, हे देव! पुलरूपी जहाज शोक रूपी समुद्र में डूब रहा है, उसको रोको। राम लक्ष्मण को पुनः वापिस बुलाओ, तब राजा ने कहा, यह जगत विकाररूप मेरे आधीन नहीं, मेरी इच्छा तो यही है, कि सबजीव सुखी रहे, किसीको कोई दुख नहीं हो। जन्म जरा मरणरूपी ससार मे सभी जीव दुखी ही है। यह जीव नानाप्रकार के कर्मो की स्थिति को धारण करता है। इसलिये कौन विवेकी वृथा शोक करते है। धन, जीवन परिवारादि इष्ट पदार्थों के दर्शन मे प्राणियो को तृप्ति नहीं है। एव इन्द्रियो के सुखो की पूर्णता नहीं होती उसके पहले ही आयुपूर्ण हो जाती है। तब यह जीव शरीर को छोडकर नया शरीर धारण करते है। तुम पुत्रो की माता हो तुम्हीं जाकर पुत्रों को ले आओ। पुत्रो के राज्य वैभव का सुख देख कर शाति को प्राप्त होओ। मैने तो राज्य का अधिकार छोडा पाप क्रियाओ से निवृत हुआ भव भ्रमण से भय को प्राप्त हुआ। अब मै मुनिव्रत धारण करूँगा। इस प्रकार राजा दशरथ ने रानियों से कहा।

निर्मोह भावके निश्चयको प्राप्त हुआ, सम्पूर्ण विषय अभिलाषा रूपी दोषों से रहित, सूर्य समान तेजसे पृथ्वीपर तप सयम का प्रकाश करता हुआ, अन्तिम सुख को प्राप्त करूँगा।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित भाषावचनिका मे दशरथके वैराग्यका
वर्णन करनेवाला इकतीसवॉ पर्वपूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-32

राम लक्ष्मण का वन गमन और भरत का राज्य अभिषेक

अथानंतर राम लक्ष्मण अल्पनिद्रा लेकर अर्धरात्रि के समय जब सभी लोग सो रहे थे, लोगों की चर्चायें बन्द हुई, अंधकार फैल गया, उस समय भगवान को नमस्कार कर दोनों भाई कवच पहन धनुषबाण लेकर सीता को बीच में रखकर चले। घर घर दीपको की रोशनी हो रही थी। कामीजन अनेक राग भरी चेष्टाये कर रहे थे, ये दोनों भाई महाप्रवीण नगर के द्वारकी खिडकी की ओर से निकल दक्षिणदिशा का मार्ग लिया। रात्रि के अन्तमे दौडकर सामन्त लोग आकर मिले। राघव के साथ चलने की है अभिलाषा उनकी, दूर से राम लक्ष्मण को देख, महाविनय से सवारी को छोड पैदल आये, चरणों मे नमस्कार कर बातें की, बहुत सेना आई, और जानकी की बहुत प्रशसा करते रहे कि सीता के कारण हम राम लक्ष्मण को आकर मिले। राजवधु साथ नहीं होती तो ये धीरे धीरे नहीं चलते तो हम कैसे पहुँच पाते। ये दोनो भाई पवन समान शीघ्र गामी हैं, और यह सीता महासती हमारी माता है। इसके समान प्रशंसा योग्य पृथ्वीपर कोई नहीं है, ये दोनो भाई नरोत्तम सीता की चाल प्रमाण धीरे धीरे दो कोश (चारमील-छहकिलो मीटर) प्रमाण प्रतिदिन चलते। खेतो में नानाप्रकार के अन्न हरे हरे दिख रहे है, सरोवरो मे कमलखिल रहे है, वृक्षरमणीक दिखते है, अनेक ग्राम, नगरादि मे जगह जगह लोग राम लक्ष्मण को नमस्कार व वंदना करते हैं, भोजनादि सामग्री से सत्कार करते हैं, बडे बडे राजा बडी बडी फौजो से आकर मिलते, जैसे वर्षा काल में गंगा जमुना के प्रवाह में अनेक नदियो का प्रवाह आकर मिलता है। कोई सामन्त मार्ग के खेद से, इनका निश्चय जान आज्ञा पाकर पुन. लोट गये, कोई लज्जासे, कोई भयसे, कोई भक्तिसे, पैदल पैदल चले जा रहे हैं। वह राम लक्ष्मण क्रीडा करते करते, परियात्रा नामकी अटवीमें पहुँचे। कैसीहैअटवी? शेर और हाथियों के समूह से भरी महाभयानक वृक्षोंसे रात्रिसमान अंधकार से भरी वहाँ भीलो का निवास, वृक्षों के मीठे फल हैं, वहाँ आप बैठकर कई राजाओ को विदा किया, कोई वापिस नहीं जा रहे थे, तब रामने बहुत कहा, तो भी साथ ही चले। उसअटवी के मध्य नदीके तट महाभयानक उनको देखते रहे। कैसीहैनदी? पर्वत

से निकलती नीले नीले जलमें प्रचंड लहरों के महाशब्द हो रहे, एवं कल्लोलों के भयसे पक्षी उड रहे हैं, वहाँ ऐसी नदीको देखकर सभी सामन्त भयभीत होकर राम लक्ष्मण को कहने लगे—हे नाथ! कृपाकर हमें भी पार उतारो, हम सेवक भक्तिवान हमारेपर प्रसन्न होओ। हे माता जानकी! लक्ष्मण से कहो हमको भी नदी पार करायें। इसप्रकार आँसू बहाते अनेक नरपति अनेक चेष्टाओं को करनेवाले नदी में गिरने लगे, तब राम बोले अब तुम वापिस लौट जाओ। यह वन महाभयानक है, हमारा तुम्हारा यहाँ तक ही साथ था, पिताने भरतको सबका स्वामी बनाया है, सो तुम भक्ति से भरत की सेवा करो, तब वे कहते हैं, हे नाथ! हमारे स्वामी तो आपही हो, आप महादयावान हो हमारेपर प्रसन्न होओ हमको मत छोडो, आपके बिना यह प्रजा निराश्रय होकर दुखी हुई है, बताओ कहाँ किसकी शरण में जायें, आप समान और कौन है। व्याघ्र सिंह हाथी, सर्पादि का भरा यह भयानक वन उसमे आपके साथ ही रहेंगे, आपके बिना, हमारे स्वर्ग का सुख भी कोई काम का नहीं। आपने कहा वापिस जाओ सो मन फिरता नहीं, कैसे जाये? यह मन सब इन्द्रियो का स्वामी जो अनुपम वस्तु में राग करता है। हमारे भोगों से घरसे परिवारसे क्या मतलब? आप नर रत्न हो आपको छोड कहाँ जाय? हे प्रभो! आपने बालक्रीडा मे भी हमको कभी अलग नहीं किया, सो अब अत्यन्त कठोर क्यो हो गये? हमारा क्या अपराध है? आपकी चरणों की रज से परमऋद्धि को प्राप्त हुये है। आप वात्सल्य के धनी हो। अहो माताजानकी! अहो लक्ष्मणधीर! हम शीशनवाकर हाथजोड विनती करते है, नाथ को हमारे पर प्रसन्न करो। इसप्रकार सबने कहा। तब सीता और लक्ष्मण, राम के चरणो की ओर देख रहे। तब राम बोले जाओ, यही उत्तर है, सुख से रहो। ऐसा कहकर दोनों वीरो ने नदी मे प्रवेश किया। श्रीराम सीता का हाथपकड सुखसे नदीमें ले गये, जैसे कमलो को हाथी ले जाय, उस नदी के जल का भयानक बहाव, राम लक्ष्मण के प्रभाव से नाभी प्रमाण बहने लगी। दोनो भाई जल विहार में प्रवीण क्रीडा के साथ धर्मकी चर्चा करते हुये चले। राम का हाथपकडे सीता ऐसे सुशोभित हुई मानो साक्षात लक्ष्मी ही, कमलदल में बैठी है। राम लक्ष्मण क्षणमात्र में नदीपार होकर वृक्ष के आश्रय मे आये। तब लोगों की दृष्टि से दूर हुये। तब कोई सामन्त विलापकर रोते हुये घर गये, कोई राम लक्ष्मण को देखने के लिये, एक नजर से खडे रहे, कोई मूर्च्छा खाकर धरतीपर गिर पडे, कोई वैराग्य को प्राप्त होकर

जिनदीक्षा लेने गये, परस्पर कहने लगे, धिक्कार है इस असार संसार को, धिक्कार है इन क्षणभगुर भोगो को, यह काले नाग के फणसमान भयानक है, ऐसे शूरवीर महापुरुषों की यह अवस्था तो हमारी क्या बात? इस शरीर को धिक्कार जो पानी के बुदबुदा समान निस्सार, जरा, मरण, इष्टवियोग, अनिष्टसयोग इत्यादि कष्टका पात्र है। धन्य है वे महापुरुष उत्तम क्रियाओं के धारक जो बन्दर की भौह समान लक्ष्मी को चचल जान उसे छोडकर दीक्षा को धारण किया। इस प्रकार अनेक राजा विरक्त होकर मुनि दीक्षा के लिये चले गये। उन्होंने एक पहाड की तलेहटी में सुन्दरवन देखा। महासघन अनेक वृक्षो से मडित, पुष्पों की सुगन्धो से सुशोभित, वहॉ महापवित्र स्थान मे बैठे, ध्यान मे लीन महातप के धारक साधु को देखा। उनको नमस्कार कर वे राजा, जिनराज के चैत्यालय मे गये। उस समय पहाड के शिखरोपर तथा रमणीकवन मे अथवा नदियो के तटपर नगर ग्रामादि मे जिनमन्दिर थे, वहॉ नमस्कार कर एक समुद्र समान गम्भीर मुनियो के गुरु सत्यकेतु आचार्य उनके पास गये और नमस्कार कर महाशातरस से भरे आचार्य से विनती करने लगे, हे नाथ! हमको ससार समुद्र से पार उतारो, तब मुनिराज ने कहा तुमको भवसे पारकरने वाली जो जिनदीक्षा उसको अगीकार करो। यह मुनिराज की आज्ञा सुन परमहर्ष को प्राप्त हुये। राजा विदग्धविजय, मेरुकूर, सग्राम लोलुप, नागदमन, धीर, शत्रुदमन, विनोद कटक, सत्य कठोर, प्रियवर्धन इत्यादि निर्ग्रथ मुनि बने। उनके रथ गज तुरगादि सब सामान सेवक लोगो ने ले जाकर उनके पुत्रो को दिया, तब वे बहुत चिन्ताकर रोने लगे और स्वय ने अनेक नियमो को धारण किया, कोई सम्यग्दर्शन को धारणकर सन्तोष को प्राप्त हुये, किसीने मुनिराज के प्रवचन सुन, पापो का त्याग किया, बहुत लोग राम लक्ष्मण की बात को सुनकर साधु हुये, कोई श्रावक बने, किसी ने अणुव्रतो को गृहण किया, बहुत रानियॉ आर्यिका हुई, कई श्राविका हुई, कोई सुभट राम लक्ष्मण का वृतान्त भरत एवं दशरथ को जाकर कहने लगे। सो राम की बात सुनकर दशरथ और भरत कुछ खेद को प्राप्त हुये।

अथानंतर राजा दशरथ ने भरत का राज्याभिषेक करवाकर राज्य मुकुट बाध दिया। और रामके वियोग से मन मे कुछ व्याकुलता हुई उसको हृदय मे समता धारणकर, विलाप करता हुआ अन्तपुर, उसको प्रतिबोध कर, नगर से वनके लिये चले। सर्वभूतहित स्वामी को नमस्कार कर बहुत राजाओ सहित

जिनदीक्षा धारी। एकल विहारी जिनकल्पी हुये। परम शुक्लध्यान की अभिलाषा है फिरभी पुत्रके शोक से कभी कुछ कलुषता उत्पन्न होती। तब एक दिन यह ज्ञानीपुरुष विचारने लगे कि संसार के दुख का मूलकारण यह जगत का स्नेह है, इसे धिक्कार हो। स्नेह से कर्म बंधते है, मैंने अनन्त जन्मों को धारण किया, उनमे गर्भ जन्म के अनेक माता पिता भाई पुत्र हुये वह कहाँ गये? अनेकबार मैंने देवों के भोग भोगे, अनेकबार नरको के दुख भोगे। तिर्यचगति मे मेरे शरीर को अनन्त बार दूसरे जीवो ने खाया, अन्य जीवो के शरीर को मैने भक्षण किया, नाना योनियो मे मैंने बहुतदुख भोगे और बहुतबार रुदन किया। और रुदन के शब्द सुने, अनेकबार वीणा, बासुरी, वादित्रो के नाद गीत सुने, नृत्य देखे, देवो में मनोहर अप्सराओ के साथ भोग भोगे, अनेकबार नरको मे मेरा शरीर कुलहाडी से काटा गया, अनेकोबार मनुष्यगति मे महासुगन्धित स्वादिष्ट षट्रसयुक्त भोजन किया। और अनेकबार नरक मे सीसा गलाकर नारकियो ने मुझे मार मारकर पिलाया। और अनेकबार सुर नरगति मे मनके प्यारे सुन्दररूप देखे, एव धारण किये। अनेकबार नरको मे महाकुरुप को धारण किया और दुख भोगे। कईबार राजपददेवपद मे अनेक सुगध पदार्थ सूघे, कईबार नरक की महादुर्गन्ध सूघी। अनेक बार देवगति मनुष्यगति मे मनकी प्यारी, वस्त्र आभूषणों से मंडित, रानियाँ उनसे आलिगन किया, बहुत बार नरक मे कूट शाल्मली वृक्षके तीक्ष्णकाटे की और जाज्वल्यमान लोहे की पुतलियो से स्पर्श कराया। इस ससारमे कर्मके सयोगसे मैने क्या क्या नहीं देखा, क्या क्या नहीं सुना, क्या क्या नहीं सूधा, क्या क्या नहीं खाया और पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय मे कोई ऐसा शरीर नहीं जो मैने धारण नहीं किया हो, तीनलोक मे कोई ऐसा जीव नहीं जिनकेसाथ मेरे अनेक नाते रिश्ते नहीं हुये हो, यह पुत्र मेरे कईबार पिता हुये, माता हुये, शत्रु मित्र हुये, ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ मैने जन्म मरण नहीं किया हो। यह शरीर, भोगादि सब अनित्य इस जगत मे कोई शरण नहीं, यह चतुर्गतिरूप ससार दुखका निवास है। मै सदा अकेला हूँ ये छहद्रव्य परस्पर सभी भिन्न है, यह शरीर अपवित्र है मै पवित्र हूँ। मिथ्यात्व अविरति आदि कर्म आस्रवके कारण है, सम्यक्त्व व्रत सयमादि सवर के कारण है, तप से निर्जरा होती है, यह लोक आत्म स्वरूप से भिन्न है ससार में आत्मज्ञान दुर्लभ है, वस्तुका जो स्वभाव है वहीधर्म है, तथा जीवदया धर्म है। ये सभी मैने महाभाग्य से पाया।

धन्य है मुनि जिनके उपदेश से मोक्षमार्ग प्राप्त किया। इसीलिये अब पुत्रों की क्या चिन्ता, ऐसा विचारकर दशरथ मुनि, निर्मोह भावको प्राप्त हुये। जिनदेशों में पहले हाथीपर चढकर, चंवर छत्र ढुरते फिरते और रणसंग्राम मे शत्रुओ को जीतते उनदेशों मे निर्ग्रंथ बनकर बाईस परीषह को जीतते हुये शातिभावो से विहार किया। और कौशल्या तथा सुमित्रा पति को वैरागी होनेपर एव पुत्रो को विदेश जानेसे महाशोकवान होकर निरन्तर ऑखो से ऑसुओ सहित रुदन करती हैं, उनके दुख को देख भरतराज्यविभूतिको विषसमान मानता रहा, और केकई इनको दुखी देख करुणा से पुत्रको कहती है, हे पुत्र! तूने राज्य पाया, बडे बडे राजा सेवा करते है, परन्तु राम लक्ष्मण के बिना इस राज्य की शोभा नहीं, वह दोनों भाई महाविनयवान उनके बिना राज्य क्या? और सुख कहॉ, और देश की शोभा क्या, और कहॉ तेरी धर्मज्ञता। वे दोनों राजकुमार और वह सीता राजपुत्री सदा भोगों को भोगनेवाले, पाषाण कंकर पत्थर काटे जानवरादि से पूरित जो मार्ग उसमे वाहन बिना कैसे गमन करेगे? और राम लक्ष्मण के गुणो का वर्णन करती हुई दोनो माताये निरन्तर रोती है, कहीं मरण को प्राप्त हो जायेगी, इसलिये तुम शीघ्रगामी घोडेपर बैठ जल्दी जाओ, और राम लक्ष्मण दोनो कुमारो को ले आओ। उन सहित महासुख से चिरकालतक राज्यकरना, और मै भी तेरे पीछे ही उनके पास आ रही हूँ। यह माता की आज्ञासुन अतिप्रसन्न होकर महाभक्ति से, राजाभरत हजारअश्वो सहित राम के पास चले। और जो लोग राम के पास से वापिस आये थे, उनको भी साथ मे ले चले। आप तुरगपर चढ शीघ्रता से चलकर वनमे आये, उस वनमें नदी असराल पानी से बह रही थी उसमे वृक्षो की लकडियॉ डाल, पुलबनाकर क्षणमात्र मे सेना सहित पार हुये। मार्ग में नर नारियों से पूछते जाय की तुमने राम लक्ष्मण कहीं देखे? वे कहते वे दोनो भाई यहॉ से पास ही है। तब भरत एकाग्र चित्त से चले सघन वनमे एक सरोवर के किनारेपर दोनो भाईयों को सीता सहित बैठे देखा, पास मे रखा है धनुष बाण उनके। सीताके साथ दोनों भाई बहुत दिनो मे आये। और भरत छहदिन में आ गये। राम को दूरसे देख भरत अश्वसे उत्तरकर पैदल जाकर रामके चरणों में गिर मूर्च्छित हो गये, तब राम ने सचेत किया। भरत हाथजोड सिर झुकाकर रामसे विनती करता रहा।

हे नाथ! राज्य देकर मेरी क्या विडम्बना की। आप न्यायमार्ग को जानने वाले

महाप्रवीण मुझे इस राज्य से क्या प्रयोजन। आपके बिना जीवन से भी क्या प्रयोजन! आप महाउत्तम क्रिया को करनेवाले, मेरे प्राणो के आधार हो, उठो अपने नगर चलें। हे प्रभो! मेरेपर कृपाकरो आप राज्य करो, राज्य योग्य आपही हो, मुझे सुख की अवस्था देओ। मै आपके सिरपर छत्र फेरता हुआ खडा रहूँगा और शत्रुघ्न चॅवर ढोरेगा एव लक्ष्मण मत्रीपद को धारण करेगा। मेरी माता पश्चाताप रुप अग्निसे जलरही है। और आपकी माता एवं लक्ष्मण की माता महाशोक से रो रही है। यह बात भरतकर ही रहे थे, उसी समय शीघ्रही रथपर चढकर अनेक सामन्तो सहित महाशोक से भरी केकई आई, और राम लक्ष्मण को हृदय से लगाकर बहुत रोने लगी, रामने समझाकर सन्तोष दिया, तब केकई ने कहा, हे पुत्र! उठो अयोध्या चलकर राज्य करो। आपके बिना यह अयोध्यानगर वन समान है। और आप महाबुद्धिमान हो भरत को शिक्षा देना और हम तो स्त्रीयॉ नष्टबुद्धि वाली है, मेरा अपराध क्षमा करो, तब राम ने कहा, हे माता! आपतो सब बातो मे प्रवीण हो आपने क्या नहीं जाना है, क्षत्रियो का यही धर्म है, जो कहा वह वचन नहीं छोडे, जो कार्य करना सोचा है, उसे अन्यतरह से नहीं करे, हमारे पिता ने जो वचन कहा, वह हमको और तुमको निभाना है। इस बात मे भरतकी अपकीर्ति नहीं होगी। फिर भरत से कहा हे भाई! तुम चिन्तामत करो किसी प्रकार की शका नहीं करो, पिताकी आज्ञा ओर हमारी आज्ञा पालने मे अनाचार नहीं है, ऐसा कहकर वनमे सब राजाओ के समीप भरत का श्रीराम ने राज्य अभिषेक किया और केकई को प्रणामकर बहुत स्तुतिकर भरत को हृदय से लगाकर दिलासा दिया। मीठे वचनों से विदा किया, केकई एव भरत, राम लक्ष्मण सीताके पाससे पुन नगर की ओर चले। भरत श्रीरामकी आज्ञाप्रमाण प्रजाके पिता समान पालन करता रहा। राज्य मे सभी प्रजाको सुख, कोई अनाचार नहीं। सभी प्रजा आज्ञाकारी फिर भी भरत को क्षणमात्र भी राज्य से राग नहीं, तीनों काल अरहनाथ भगवान की वदना करते है। और मुनियो के मुख से धर्मोपदेश सुनकर, द्युति भट्टारक नाम के मुनि अनेक मुनियो के गुरु उनके निकट भरत ने यह नियम लिया कि रामके दर्शनमात्र से ही मै मुनिव्रतो को धारण करुगा। तब मुनिराज ने कहा–हे भव्य! जब तक राम नहीं आये, तब तक तुम गृहस्थ धर्म का पालन करो, निर्ग्रंथ मुनियो का आचरण अतिकठिन है, इसलिये पहले श्रावक के व्रत पालने के पश्चात् मुनिधर्म की साधना सुख से होगी। जब

वृद्ध अवस्था आयेगी तब तप करेंगें यह बात कहते हुये अज्ञानी प्राणी मरण को प्राप्त होंगे। अमूल्य रत्न समान मुनि का धर्म उसकी महिमा कहने मे नहीं आती, श्रावक का धर्म जो प्रमाद रहित होकर करते है, वे धन्य है, यह अणुव्रत ही ज्ञान और वैराग्य का दाता है। जैसे रत्न द्वीप मे कोई मनुष्य गया और वहॉ रत्न नहीं लिया तो वहॉ जाने की क्या सार्थकता। जैनधर्म नियमरूपी रत्नोंका द्वीप है उसमें जो नियम ले वही महाफल को देने वाला है, जो अहिंसारूपी रत्नो को स्वीकार कर जिनवर को भक्ति से पूजे वही सुर नर के सुख भोग मोक्ष को प्राप्त होते है। और जो सत्यव्रत को पालने वाले मिथ्यात्व को नाशकर जिनेश्वर को पूजते हैं उसकी कीर्ति पृथ्वीपर फैलती है। उसकी आज्ञा का कोई लोप नहीं कर सकता, और जो परधन का त्यागी जिनेन्द्र को हृदय में विराजमान कर बारबार नमस्कार करते है। वे नवनिधि चौदहरत्न का स्वामी होकर अक्षयनिधि को प्राप्त करते है। जो जिनमार्ग स्वीकार कर परनारी का त्याग करते, वह सबके नेत्रों को आनन्दकारी मोक्ष लक्ष्मी के पति होते हैं। जो परिग्रह का प्रमाणकर सतोष से जिनेन्द्र भगवान का ध्यान करते वह लोक पूजित अनन्त महिमा को प्राप्त करते एव आहार दान के पुण्य से महासुखी होते उनकी सब सेवा करते हैं। और अभयदान से निर्भयपद प्राप्तकर, सकटो से रहित होते है। ज्ञानदान से केवलज्ञानी होकर सर्वज्ञपद प्राप्त करते है। औषधदान के प्रभाव से रोग रहित निरोगपद प्राप्त करते हैं। जो रात्रि मे आहार का त्याग करते वह एक वर्ष मे छहमहिने के उपवास का फल प्राप्तकर गृहस्थपद के आरभ में प्रवृति करते हैं, तो भी शुभगति के सुख पाते हैं।

जो तीनो समय जिनेन्द्र भगवान के दर्शन वदना करते है, उनके भाव निर्मल होते हैं। सर्व पापो का नाश करते है। जो निर्मलभाव से भगवान को पूजते हैं, वह लोक मे पूज्य होते है, जो भोगीपुरुष कमल के फूल, तथा केतकी मालती, मोगरा, जूही, चमेली, चम्पा, गुलाबादि सुगन्ध फूलो से भगवान की अर्चा पूजा करते है, वह पुष्पकविमान को प्राप्तकर मनोवाच्छित स्थानो पर क्रीडा करते हैं, और जो जिनराज के मन्दिर मे अगर चन्दनादि की धूप खेते वह सुगंध शरीर को प्राप्त करते है। और जो गृहस्थी जिनमन्दिर में विवेक सहित दीपको का प्रकाश करते वह देवों में प्रभावसहित ज्योतिवान शरीर को प्राप्त करते हैं। और जो जिनेन्द्रप्रभु के मन्दिर मे छत्र चॉमर झालर घटा ध्वजा दर्पणादि मगलद्रव्य चढाते है, एवं मंदिर को सजाते हैं, वह आश्चर्य कारी विभूति को प्राप्त करते हैं। और

जो जल चन्दनादि से जिनपूजा करते है, वह देवो के स्वामी एवं महानिर्मल सुगन्ध शरीर की जो अप्सराये उनके पति होते है, और जो जलसे जिनेन्द्र का अभिषेक करते है, वह देव एव मनुष्यो से पूजित चक्रवर्ती होते है, उनका राज्य अभिषेक देव एव विद्याधर करते है। और जो दूध से अरिहन्त का अभिषेक करते है, वे क्षीरसागर के जल समान उज्वल विमानो मे परमकाति के धारी देव होकर पुन मनुष्यभव लेकर मोक्ष जाते है। और जो दही से वीतरागप्रभु का अभिषेक करते है, वे दहि समान उज्वल यशको प्राप्तकर ससार रूपी समुद्र से पार होते है। और जो घी से जिननाथ का अभिषेक करते है, वह स्वर्ग विमान में महाऋद्धि के धारी देव होकर परम्परा से अनन्तवीर्य को धारण करते है। और जो इक्षुरस से प्रभु का अभिषेक करते है, वह अमृत का आहार करनेवाले इन्द्र होकर नरेश्वरपद को प्राप्तकर मुनिश्वर बन अविनश्वर पदको प्राप्त करते है। अभिषेक के प्रभाव से अनेक भव्यजीव देवेन्द्र की पर्याय मे अभिषेक करवाते है। यह कथा पुराणो मे प्रसिद्ध है। जो भक्ति से जिनमदिर मे मयूरपख से मदिर की सफाई करते है वह पापरज से रहित होकर परम विभूति व आरोग्य पद को प्राप्त करते है। और जो गीत नृत्य बाजो से जिनमन्दिर मे उत्सव करते वह स्वर्ग मे परम उत्साह को प्राप्त करते है। और जो जिनमन्दिर बनवाते उसके पुण्य की महिमा कौन कह सकता है, देवो के सुख भोगकर परपरा से अविनाशी सुख प्राप्त करते है। और जो जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा विधिपूर्वक विराजमान कराते, वह देव मनुष्यो के सुखो को भोगकर तीर्थकर पद एव महापुरुषो के पदको प्राप्तकर परममोक्ष सुख को प्राप्त करते है। व्रत विधान तप दान इत्यादि शुभ क्रियाओ से पुण्य उत्पन्न करने पर भी वे सम्पूर्ण कार्य, जिनप्रतिमा विराजमान करने के बराबर नहीं है। जो जिनप्रतिमा विराजमान कराते है, वह परम्परा से पुरुषाकार सिद्धपद को प्राप्त करते है। और जो भव्य जीव जिनमन्दिर पर शिखर बनवाते कलश चढाते वह इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती आदि के सुख भोग लोक के शिखर पर शाश्वत सुख प्राप्त करते है। ओर जो पुराने मदिरो का जिर्णोद्धार मरम्मत कराते वह कर्मो को नाशकर निर्भय निरोगपद पाते है, और जो नये चैत्यालय बनवाकर जिनप्रतिमा विराजमान कर पचकल्याणकप्रतिष्ठा करवाते हैं, वह तीनलोक मे प्रतिष्ठा को पाते है। और जो सिद्धक्षेत्र तीर्थक्षत्रो की यात्रा करते वे मनुष्य जन्म सफल करते हैं। और जो जिनप्रतिमा के दर्शन का चिन्तवन करते उसे एक

उपवास का फल होता, और दर्शन की तैयारी करते उसे दो उपवास का फल, और चैत्यालय जानेका आरम्भ करते, उन्हे तीनउपवास का फल है, गमन करते उसे चारउपवास का फल, कुछ आगे गये पंचउपवास का फल, आधी दूर गये पक्षउपवास का फल होता है। और चैत्यालय के दर्शन करने से एकमाह के उपवास का फल होता है, और भावभक्ति से महा स्तुति करे उनको अनन्तफल की प्राप्ति होती है। जिनेन्द्र की भक्ति के समान और कोई उत्तम फल नहीं है, और कोई जिनआगम लिखवाकर छपवाकर उसका व्याख्यान करते है कराते हैं पढते है पढाते हैं सुनते है सुनाते है शास्त्र की भक्ति करते कराते वे सर्व ग्यारहअग के एवं चौदह पूर्व के ज्ञाता होकर केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं। चतुर्विधी सघ की सेवा करते हैं, वह चारों गतियो के दुखो को नाशकर पचमगति मोक्ष को प्राप्त करते हैं। मुनिराज कहते है, हे भरत! जिनेन्द्र की भक्ति से कर्मो का क्षय होता। कर्म क्षय करके अक्षयपद प्राप्त करते है। यह वचन मुनिराज के सुन राजा भरत नमस्कारकर श्रावकके व्रतों को अगीकार किया। भरत महाविनयवान धर्मवान श्रद्धावान चतुर्विधी सघ की भक्तिकर और दुखी जीवोपर दयाकर दान देता और सम्यग्दर्शनरूपी रत्नको हृदय मे धारण करता हुआ, महासुन्दर श्रावक के व्रतों मे तत्पर होकर न्याय सहित राज्य करता रहा। भरत गुणो के समुद्र उनका प्रताप और अनुराग समस्त पृथ्वीपर फैला, उनके देवॉगना समान डेढसौ रानियॉ, उनमे भी आसक्त नहीं जल मे कमल के समान अलिप्त रहते। भरतके मनमे निरन्तर यही विचार होते है, कि कब मुनिव्रत धारण करूँ। निर्ग्रंथ होकर पृथ्वी पर विहार करूँ। धन्य है वे महापुरुष जो धीरवीर सर्व परिग्रह का त्याग कर तपके बलसे सभी कर्मो को भस्मकर निर्वाण सुख को प्राप्त करते हैं। मै पापी ससार मे मग्न प्रत्यक्ष देख रहा हूँ। यह ससार का चरित्र क्षणभंगुर है। जो प्रात· काल देखते है। वह मध्याह्न मे नहीं। मै मूढ हो रहा हूँ। जो रक विषयाभिलाषी संसार में रचते हैं। तो वे कुमरण करते हैं। सर्प व्याघ्र गज जल अग्नि शस्त्र बिजली आदि एव असाध्यरोग इत्यादि कुरीति से मरण करेगे। यह प्राणी अनेक दुखो को भोगने वाले ससार मे भ्रमण करते है। बडा आश्चर्य है अल्पायु मे भी प्रमादी हो रहे है। जैसे कोई मत्त हाथी क्षीरसमुद्र के किनारे सोया हुआ तरगो के समूह से नहीं डरते, ऐसे मैं मोह से उत्पन्न भव भ्रमण से नहीं डरता हूँ। निर्भय हो रहा हूँ। हाय हाय! मै राज्य में हिंसादि आरंभ से अनेक पापकर कौनसे घोर

नरक में जाऊँगा। कैसा है नरक? बाण खड्ग चक्र के आकर तीक्ष्ण पत्ते वाले शालमली वृक्ष है। या मैं तिर्यंच गति के दुखों को पाऊँगा। देखो जिनशास्त्र का ज्ञान प्राप्तकरके भी मेरामन पापयुक्त हो रहा है। निस्पृह होकर यति का धर्म नहीं पालते वह न जाने कौनसी गति मे जायेगे। राजा भरत जैनपुराणादि ग्रन्थो को सुनने मे आसक्त है, हमेशा साधुओ की कथा सुनने मे करने में अनुरागी। रात दिन धर्म कथा मे लीन रहते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे दशरथका वैराग्य, रामका विदेशगमन, भरतका राज्य वर्णन करनेवाला बत्तीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-33

वज्रकर्ण व्रत कथानक

अथानंतर श्रीरामचद्रजी, लक्ष्मण, सीता सहित तापसी के आश्रम मे गये। अनेक तापस जटिल नानाप्रकार के वृक्षो के वक्कल (कपडे) पहने। अनेक प्रकार के स्वादयुक्त मीठेफलो से मठ परिपूर्ण है। वनमे फैले हुए वृक्षो के समान, फैले हुये पत्तो से छाये है मठ जिनके। अथवा घास से आच्छादित निवास है, बिना बोये अपने आप सहजही धान्यकी उत्पत्ति होती, वह अनाज उनके आगन मे सूख रहे है, और हिरण भयरहित आगन मे बैठे है, एव मठो के पास गुल क्यारियॉ लगा रखी है, वहॉ तापस की कन्याओ ने मीठे जल से भरे पूर्ण कलशो को थालियों मे रखे है। श्रीरामचन्द्रजी को आये जान तापसियो ने स्वादिष्ट मीठेफल सुगन्धितपुष्प मीठाजलादि से सम्मान किया। मधुर वचन बोलकर रहने के लिये कुटिया, कोमल पत्तो की सेज इत्यादि से आदर किया। तापस सहज ही सबका आदर करते है। परन्तु इनको महारूपवान महापुरुष जान अतिसत्कार कर रात्रि मे वहीं विश्राम कराया, प्रात काल उठकर चलने लगे। तब तापस इनके साथ चले। इनके रूपको देख अनुरागी हुये। इनको देख पाषाण भी पिघल जाये तो मनुष्य की क्या बात। जो वृद्ध तापस थे वे इनको कहते है, आप यहॉ ही रहो। यहतो सुखका स्थान है अगर यहॉ नहीं रहो तो इस अटवी मे सावधानी से रहना। यद्यपि यहवन जल फल पुष्पादिक से भरा है, फिरभी विश्वास नहीं करना। नदी, वन,

नारी, ये विश्वास योग्य नहीं है। आपतो सब बातो मे सावधान ही है। अतः राम लक्ष्मण सीता यहॉ से आगे चले। अनेक तापसनी इनको देखने की अभिलाषा से पत्र पुष्प फलादि जगल से लाने का बहानाकर इनके साथ चली, कईमधुर वचनों से इनको कहती है, आप हमारे आश्रममे क्यो नहीं रहते हो, हम सब आपकी सेवा करेंगे, यहॉ से तीनकोश दूरपर भयानक वन है, वहॉ सघनवृक्ष है मनुष्यो का नाम नहीं, अनेक सिह व्याघ्र दुष्ट जीवो से भरा, जहॉ लकडीयो के लिये एव फलो के लिये तापस भी नहीं जाते है। डाभ की तीखी अणियों का भी सचार है, चित्रकूटपर्वत अतिऊँचा दुर्लध्य है। आपने सुना नहीं है क्या? जो निशक होकर चले जा रहे हो। तब राम ने कहा अहो तापसनीहो! हम अवश्य आगे जायेगे। तुम अपने स्थान जाओ, बडी मुश्किल से उनको वापिस भेजा। वे परस्पर इनके रूपगुणो का वर्णन करती हुई अपने स्थान आई, इन्होने महागहन अटवी मे प्रवेश किया। पर्वत के पाषाणो से महाकर्कश बडे बडे वृक्षोपर लताओ के समूह है। सिहोने गजोको मारा है। रुधिर से पृथ्वी रक्तरूप हो रही है। सिहनी की ध्वनि से हिरण भाग रहे है, सोये हुये अजगर के श्वास की पवन से गुफाये गूज रही है। शूकरो के समूह से तालाबो मे कीचड हो रहा है। भयानकसर्प फणको ऊँचे करके फिर रहे है। अनेक प्रकार के पक्षियो के क्रूरशब्दो से वन गूज रहा है। बन्दरो की टोली के कूदनेपर वृक्षोकी शाखाये कपितहो रही है। शीघ्रवेग से पर्वतपर उतरते जल के झरने बह रहे है। वृक्षोके पत्तोसे सूर्य की किरणे भी नहीं दिख रही है। अनेक पुष्पो के कारण सुगन्धि फैल रही है। कईप्रकार के औषधियो से पूर्ण और धान्य फल फूलो से भरावन है मनोहरनीला पीला हरा वर्णो को धारण करनेवाला वन, उसमे दोनो वीरों ने सीता सहित प्रवेश किया। चित्रकूटपर्वत के महामनोहर झरने उनमे क्रीडा करते हुये वनकी अनेक सुन्दर वस्तुओ को देखते हुये परस्पर दोनो भाई बात करते वनके मिष्टफलों का वर्णन करते, किन्नरदेवो के मनको हरण करनेवाले पुष्पोके परस्पर आभूषण बनाते, सुगन्धद्रव्य शरीर मे लगाकर प्रसन्न मन में स्वच्छ हो सुर नर नागिनियो के मन को मोहने वाले नेत्रो के प्यारे उपवन की तरह भीमवन में क्रीडा करते चले। अनेक प्रकार के सुन्दर जो लतामडप उनमे विश्राम करते, नाना प्रकार की कथा विनोद रहस्य की बाते करते हुये, जैसे नन्दनवन में देवभ्रमण करते ऐसे अतिरमणीक लीला सहित वन विहार करते रहे।

अथानंतर साढेचार मासमे मालवा देश मे आये। वह देश अत्यन्त सुन्दर

कईप्रकार के धान्यो से शोभित, जहाँ गाँव पट्टन बहुत हैं, परन्तु वहां से बहुत दूर आकर देखा तो भी कोई बस्ती नगर नहीं दिखा। तब एक बड की छाया मे बैठे दोनों भाई परस्पर बात कररहे कि यह देश क्यो उजडा हुआ दिख रहा है। अनेकप्रकार के वृक्ष फल फूलो से शोभित है, गन्ने के खेत बहुत है, सरोवर मे कमलखिल रहे है, पक्षी क्रीडा कर रहे है, अनेकप्रकार के खेत फल रहे है, पर मनुष्य नहीं है। यह देश बहुत बडा दिखाई दे रहा है, पर मनुष्यो के आवागमन बिना सुशोभित नहीं। जैसे जिनदीक्षा को धारण करनेपर वीतरागभाव के बिना सयम की शोभा नहीं। इस प्रकार की सुन्दर बातें रामने लक्ष्मण से कही, वहाँ अत्यन्त कोमलस्थान देख रत्नकम्बल बिछाकर श्री राम बैठे। पास मे रखा है धनुष जिनके, और सीता प्रेमरूप जलकी सरोवर समान श्रीराम के प्रेम मे आसक्त है मन जिनका, सो उनके समीप बैठी। श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा कि तुम बड के वृक्षपर चढकर देखो कुछ बस्ती दिख रही है? सो आज्ञा प्रमाण लक्ष्मण ने देखा। और कहा, कि हेदेव! विजयार्ध पर्वत समान ऊँचे ऊँचे जिनमदिर दिख रहे है, और शरदऋतु के बादलो के समान ऊँचे शिखरो की शोभा है, ध्वजा फहरा रही है, बहुत घर दिख रहे है, कुआ बावडी सरोवरो से मडित विद्याधरो के नगर समान दिखता है। परन्तु मनुष्य कोई नहीं दिख रहा है। न जाने लोग परिवार सहित कहाँ भाग गये है। अथवा क्रूर कर्मको करनेवाले म्लेच्छ बाधकर ले गये है। एक दरिद्री मनुष्य आता हुआ दिख रहा है। मृग के समान शीघ्र आ रहा है। रुखे केश, फटे कपडे, लम्बी दाढी, हाथपैर फटे, पसीने से युक्त, मानो पूर्वजन्म के पापको प्रत्यक्ष दिखा रहा है। तब राम ने कहा शीघ्र जाकर उसे ले आओ, तब लक्ष्मण वृक्षसे उतर दरद्री के पास गये। दरिद्री लक्ष्मण को देख अतिआश्चर्य को प्राप्त हुआ कि यह इन्द्र है, कि वरुण है, अथवा नागेन्द्र है, कि नर है, किन्नर है, या चन्द्रमा है, कि सूर्य है, तथा अग्निकुमार है, या कुबेर है, यह कोई महातेज का धारक कौन है, ऐसा विचार करता हुआ डरकर मूर्च्छा से, पृथ्वीपर गिर गया, तब लक्ष्मण ने कहा, हे भद्र! भय मत करो उठो उठो। कहकर उठाया और बहुत दिलासा देकर रामके पास ले आये। वह दरिद्री पुरुष भूखादि अनेक दुखो से दुखी था, फिरभी रामको देख सब दुख भूल गया, राम महासौम्य सुन्दरकाति के समूह विराजमान, नेत्रो को उत्साहित करनेवाले, महाविनयवान, जानकी पास मे बैठी है। उस पुरुष ने हाथजोड सिर पृथ्वी से लगाकर नमस्कार किया। तब राम दयाभाव से कहते है, तू छाया मे आकर बैठ, भय मत कर। तब

वह आज्ञा पाकर दूर बैठ गया। रघुपति अमृत समान वचनों से उसे पूछते है, तेरा नाम क्या, कहाँ से आया, और तू कौन है। तब वह हाथजोड विनतीकर कहता है, हे नाथ! मै कुटुम्बी (कुनवी) हूँ मेरा नाम सिरगुप्त है, दूर से आ रहा हूँ। तब आप बोले यह देश उजाड क्यो है? तब उसने कहा, हे देव! उज्जयिनी नगरीका पति राजा सिंहोदर प्रसिद्ध अपने प्रताप से बडे बडे राजाओ को झुकाया है। देवो समान वैभव है और एक दशागपुर का स्वामी वज्रकर्ण सिंहोदर का सेवक अत्यन्त प्यारा सुभट, उनने स्वामी के बडे बडे कार्य किये। वह निर्ग्रथ मुनिको नमस्कार कर धर्मोपदेश सुनकर वज्रकर्ण ने यह प्रतिज्ञा की-कि मै सच्चेदेव, सच्चेशास्त्र, सच्चेगुरु, को छोडकर अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूँगा। साधुके प्रभावसे उसको सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हुई। वह पृथ्वीपर प्रसिद्ध है। आपने क्या अब तक उनकी बात नहीं सुनी? तब लक्ष्मण रामके अभिप्राय से पूछने लगे कि वज्रकर्णपर किस प्रकार सतो की कृपा हुई। तब पथिक सिरगुप्त ने कहा, हे देवराज! एक दिन वज्रकर्ण दशारण्य वनमे शिकार करने गया था, जन्म से ही पापी हिंसा करने वाला, इन्द्रियो का लोलुपि महामूढ, शुभ क्रियाओ से विपरीत, महासूक्ष्म जैनधर्म की चर्चा को नहीं जानता, कामी, क्रोधी, लोभी अन्धाहो भोगो को सेवन करता हुआ गर्व से पिशाच की तरह जगल मे भ्रमण करता, तब उसने गर्मीके समय मे एक शिलापर बैठे, सतपुरुषो से पूज्य महामुनि देखे। चार महिना सूर्य की किरणो का आताप सहन करने वाले, महातपस्वी, पक्षी समान निराश्रय, सिह समान निर्भय, जो तप्तायमान शिला से तपा हुआ शरीर ऐसे दुर्जय तीव्रताप को सहने वाले तपोनिधि साधु है, कैसेहैसाधु? गुण रूपी रत्नो के सागर परमार्थ के वेत्ता, जीवो के दयालु, पापो के घातक, तपरुपी विभूतिसे मडित, ऐसे साधु को वज्रकर्ण पूछता है। हे स्वामी! तुम इस निर्जनवन मे क्या करते हो, ऋषिबोले आत्म कल्याण करते है। तब वज्रकर्ण हसकर कहता है, इस अवस्था में तुमको क्या सुख है, तुमने तपसे शरीर को रूप लावण्य से रहित किया। आपको कोई काम नहीं, वस्त्राभूषण नहीं, कोई सहाई नहीं, स्नान सुगन्धलेप से रहित हो, दूसरो के घर में भोजनकर जीविका पूरी करते हो, तुम्हारे समान मनुष्य क्या आत्म हित करते, तब मुनिराज ने वज्रकर्णको काम भोगो का लोलुपी जान, दयावान मुनि बोले, क्या तुमने महाघोर नरकभूमि की वेदना के दुख नहीं सुने है। जो 'तुम' पाप क्रिया मे प्रीति करते हो। नरक की महाभयानक सातभूमि है, वे महादुर्गन्ध मई देखी नहीं जाती, स्पर्श नहीं किया जाता, सुना नहीं जाता,

महातीक्षण लोहे के काटो से भरी, वहॉं, नारकियो को घानी मे पेलते है, छुरी से तिल तिल के बराबर शरीर को काटते है, और सातो नरको मे गर्मी, सर्दी की महाभयंकर वेदना है। वहॉं महाअधकार, महाभयानक बिल, शालमली वृक्ष, तलवार की धार समान पत्ते, महादुर्गन्ध युक्त वैतरणी नदी, ऐसे नरकों मे, जो यहॉं निरंकुश होकर पाप करते है, वे वहॉं जन्म लेकर दुखो को भोगते है। हम तुम्हे पूछते है, तुम्हारे समान पापी आरभी विषयो मे लीन क्या आत्महित करते है। विषरूपी फल के समान इन्द्रियो के विषय सुखो को भोगकर सुख मानते है, इनमे हित नहीं, ये दुर्गति का कारण है। आत्मा का हित वह करते हैं, जो जीवो की दया पालते है। मुनि होकर तथा श्रावक के व्रतो का पालनकर निर्मल भावो से आत्म सुखो को प्राप्त करते है। और जो महाव्रत अणुव्रतो को नहीं धारण करते वह मिथ्यात्व अव्रत के योग से सभी दुखो के पात्र होते है। तुमने पूर्व जन्म मे कोई अच्छा पुण्य कार्य किया था, उससे मनुष्य जन्म पाया अब पाप करेगा तो दुर्गति मे जायेगा। यह बेचारे निर्बल, निरपराध, गूगे मृगादि पशु। अनाथ भूमि ही शय्या है, उनके चचल नेत्र, सदा भयवान, वन के तृण, एव जल से जीने वाले, पूर्वपापकर्मो से दुखी, भयसे कायर, आप समान सज्जन मनुष्य ऐसे दीन पशुओ को कैसे मारे, इसलिये तुम अपना हित चाहते हो तो मन वचन काय से हिसा का त्याग करो, जीव दया स्वीकार करो, ऐसे महामुनि के श्रेष्ठवचन सुनकर वज्रकर्ण प्रतिबोध (ज्ञान) को प्राप्त हुआ, जैसे फलों वाला वृक्ष झुक जाता है ऐसे साधु के चरणो मे झुक गया। घोडे से उतरकर साधुके पास गया हाथजोड प्रणामकर अत्यन्त विनय की दृष्टि से मन मे साधुकी प्रशसा करता रहा। धन्य है, यह मुनि परिग्रह के त्यागी उनको मुक्ति की प्राप्ति होती है इस वनके पशु पक्षी प्रशंसा योग्य है जो इन तपस्वीसाधु का दर्शन करते है। आज मेरा महाभाग्य जो मुझे साधु का दर्शन हुआ। आज मै पापो से रहित हुआ। यह गुरु ज्ञानस्वरूप ससाररूपी पिजराको छेदकर सिहके समान, निकले, वह साधु देखो मनरूपी शत्रुको वशकर नग्नमुद्रा धार शील पालते है। मेरी अतृप्त आत्मा पूर्ण वैराग्य को प्राप्त नहीं हुई। इसलिये श्रावक के अणुव्रतो का पालन करूँ, ऐसा विचारकर साधु के निकट श्रावकके व्रतोको धारण किया। और अपना मन शातिरूपी जलसे स्वच्छ किया। एव यह नियम लिया कि

जो देवाधिदेव परमेश्वर परमात्मा जिनेन्द्रदेव और उनके दास महाभाग्य निर्ग्रंथमुनि एंव जिनवाणी इन के बिना अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूँगा।

प्रीतिवर्धन नाम के मुनि उनके पास वज्रकर्ण ने अणुव्रतो को धारण किया। और उपवास का नियम लिया। मुनिराज ने वज्रकर्ण को विस्तार पूर्वक धर्मका व्याख्यान दिया। उसकी श्रद्धा से भव्यजीव संसार के बधनों से छूटें। एक श्रावक का धर्म दूसरा यति का धर्म इनमें श्रावक का धर्म गृहस्थारभ से युक्त है और यति का धर्म निरालंभ है, दोनों धर्मो का मूल सम्यक्त्व की निर्मलता तप ज्ञान से युक्त अत्यन्त श्रेष्ठ प्रथामानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग रूप जिनशासन मे प्रसिद्ध है, मुनि का धर्म अतिकठिन जानकर अणुव्रतों को धारण किया। और महाव्रतो की महिमा हृदय मे धारण की। जैसे दरिद्री के हाथ मे निधी आये तो हर्षको प्राप्त होते। ऐसे सुखदायी धर्मको धारण कर प्रसन्नता को प्राप्त हुआ। यह अत्यन्तक्रूर महाहिंसा करने वाला एक साथ ही शातिभाव को प्राप्त हुआ। इस बातसे मुनिभी प्रसन्न हुये। राजाने उस दिन तो उपवास किया, दूसरे दिन पारणाकर मुनिराज के चरणो मे नमस्कार कर अपने स्थान को गया। गुरु के चरणो को हृदय मे धारकर शाति को प्राप्त हुआ। अणुव्रतों को ग्रहण किया मन मे चिन्ता रही की उज्जयनी का राजा सिहोदर उसका मै सेवक सो उसका विनय किये बिना मै राज्य कैसे करूँगा। तब विचारकर एक अगुठी बनाई उसमें मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा बनवाई। और दाहिने हाथ के अगुठे मे पहनी। जब सिहोदर के पास जाता तब मुद्रिका मे प्रतिमा को नमस्कार करता, लेकिन इसका कोई शत्रु था, उसने यह बात सिहोदर को बताई कि यह वज्रकर्ण आपको नमस्कार नहीं करता, जिनप्रतिमा को करता है। तब सिहोदर क्रोध को प्राप्त हुआ, एव कपट से वज्रकर्ण को दशाग नगर से बुलाया, सम्पदा से पागल होकर वज्रकर्ण को मारने के लिए तैयार हुआ। वह वज्रकर्ण सरलचित्त सो हाथीपर चढ उज्जयनी आने को तैयार हुआ। उस समय एक जवान पुरुष उदारमन से हाथ मे डडा लेकर वहॉ आया। और कहता है, हे राजन्! अगर आप शरीर और राज्य भोगों से रहित होना चाहते हो तो उज्जैनी नगरी में जाओ। राजा सिंहोदर अतिक्रोध को प्राप्त हुआ है, तुम नमस्कार नहीं करते हो। इसलिये वह तुम्हें मारना चाहता है। मैने आपको यह सही बात बताई, अब आपको जो अच्छा लगे वह करों। यह बात सुनकर वज्रकर्ण ने सोचा कि कोई मुझे राजा से अलग करना चाहता है, इसलिये इसको भेजा है। पुन वज्रकर्ण ने सोचा कि इस बातका रहस्य तो जानना चाहिये, कि यह एकान्त की बात उसे कैसे मालूम हुई। तब उससे पूछा, तुम कौन हो, कहॉ से आये हो, और आपका नाम क्या है, और यह गुप्त

बात तुमने कैसे जानी? तब उसने कहा, कुदननगर मे महाधनवान समुद्र संगम एक सेठ है, उसके यमुना स्त्री उसके वर्षाकाल में बिजली चमकते समय मेरा जन्म हुआ इसलिये मेरा नाम विद्युदंग रखा। मै यौवन अवस्था में व्यापार करने उज्जैनी गया वहाँ कामलता वैश्याको देख मैं मोहित हुआ। एक रात उससे मैंने प्रेम किया, तब उसने मुझे प्रेम के बंधन मे बाध लिया, मेरे पिता ने बहुत वर्षों से धन कमाया था, वह मै ऐसा कुपुत्र, वेश्या के सयोग से छहमहीना मे सब नष्ट करदिया, एक दिन वह नगरनायिका अपनी सखी के पास कानों के कुंडलो की निदा करती थी, तब मैंने पूछा, वे कुडल किसके है, तब उसने कहा धन्य है रानी श्रीधरा, महासौभाग्यवती उसके कानो मे जैसे कुडल है वैसे किसी के नहीं, तब मैने सोचा कि रानी के कुडल हरकर लाऊँ, और वैश्या की आशा पूर्णकरूँ, नहीं तो मेरे जीनेसे क्या?

तब मैं कुडल हरने को रात्रि मे राजभवन मे गया, वहा राजा सिहोदर क्रोधित हो रहा था, तब रानी श्रीधरा ने पूछा, हे देव! आज नींद क्यो नहीं आ रही है? तब राजा ने कहा हे रानी! मैने वज्रकर्ण को छोटे से बडा किया, और अब मुझे वह सिर नहीं झुकाता, इसीलिये जब तक उसे नहीं मारूँ तब तक आकुलता के कारण मुझे नींद नहीं आयेगी। जैसे अपमानित, दुखी, निर्धन मनुष्य, शत्रु से घिरा हो, जीतने मे असमर्थ, मन मे शल्य, ससार से विरक्त, शरीर में रोग हो, इतने मनुष्यो से निद्रा दूरही रहती है। यह बात राजाने रानीसे कहा, सो मै सुनकर ऐसा हो गया कि किसीने मेरे हृदय मे वज्र की मारी। मै कुंडल हरने की बुद्धि छोड यह रहस्य लेकर तुम्हारे पास आया हूँ। अब आप वहाँ मत जाओ। तुम जिनधर्मी हो, निरन्तर साधुओ की सेवा करने वाले हो। अजनगिरीपर्वत से हाथी मद झरे उनपर बैठे योद्धा बखतर पहने महातेजस्वी तुरंगपर चढे सामन्त महाक्रोध से तुम्हें मारने के लिये राजाकी आज्ञा से मार्ग को रोककर खडे हैं। इसलिये तुम कृपाकर अभी वहाँ मत जाओ, मै आपके चरणो मे गिरता हूँ। मेरे वचनो से अगर आपके मन मे शका हो तो देखो, वह फौज आ रही है, धूल उड रही है, महाशब्द हो रहे है, यह विद्युदग के वचन सुन, वज्रकर्ण, पर चक्र को आता देख, इसको मित्र जान इसको साथ ले, अपने गढ में बैठ गया। सिंहोदर के सुभटो को दरवाजों मे आने नहीं दिये। तब सिहोदर सब सेना को साथ लेकर आया। वह गढ कठिन जान एव अपने कटक के लोग इनके द्वारा मारे जायेंगे, उसके डर से तत्काल गढ लेने का पुरुषार्थ नहीं किया। गढ के समीप डेरे डाल

वज्रकर्ण के पास दूत भेजा वह दूत कठोर वचन कहने लगा, तुम जिनशासन के मान से मेरे ऐश्वर्य का कटक हुआ, गृहस्थ जीवन को नष्ट करनेवाले मुनि ने तुझे बहकाया, तू न्याय रहित हुआ, देश मेरा दिया खाता और माथा अरिहंत को झुकाता, तु महामायाचारी है, इसीलिये शीघ्र ही मेरे पास आकर मुझे प्रणामकर, नहीं तो मारा जायेगा। यह बात दूत ने वज्रकर्ण से कही, तब वज्रकर्ण ने जो जवाब दिया यह दूत ने जाकर सिंहोदर को बताया। हे नाथ! वज्रकर्ण की यह विनती है कि देश नगर भंडार हाथी घोडे सब आपके हैं, सो ले लो, मुझे स्त्री सहित धर्मद्वार से निकाल दो, मेरा आपसे कोई उजर नहीं। परन्तु मैंने यह प्रतिज्ञा ली है, जो जिनेन्द्रदेव, मुनि और जिनवाणी इनको छोड अन्य किसीको नमस्कार नहीं करूँगा। आप मेरेद्रव्य के स्वामी हो, आत्मा के नहीं। यह बात सुनकर सिहोदर अतिक्रोध को प्राप्त हुआ, और नगर को चारो तरफ से घेर लिया देश को उजाड दिया, यह बात दरिद्री मनुष्य ने राम से कही। हे देव! देश उजाडने का कारण मैने आपसे कहा, अब मैं जा रहा हूँ, यहाँ से नजदीक ही मेरा गाँव है, सो गाँव सिहोदर के सेवको ने जला दिया, लोगो के विमान समान घर थे, वह सब जलकर भस्म हुये, मेरी तृण काष्ठ से बनी कुटिया थी, वह भी भस्म हो गई। मेरे घर में एक छाज, एक मिट्टी का घडा और एक हांडी यह परिग्रह था, सो वह लेने जा रहा हूँ। मेरी खोटी स्त्री उसने मुझे कटुवचन कहकर भेजा है, और वह बारबार कहती है, सूने गाँवमें घरो के उपकरण बहुत मिलेंगे सो जाकर ले आओ, इसलिये मैं जा रहा हूँ। मेरे बडे भाग्य जो आपके दर्शन हुये। स्त्री ने मेरा उपकार किया जो मुझे भेजा। यह वचन सुन श्रीरामचन्द्रजी महादयावान, पथिक को दुखी देख अमूल्य रत्नो का हार गले से निकालकर दे दिया। वह पथिक प्रसन्न होकर चरणों में नमस्कार कर हार लेकर अपने घर गया, द्रव्यसे राजा के समान हुआ।

अथानंतर श्रीराम, लक्ष्मण से कहने लगे, हे भाई! यह जेठ का सूर्य अत्यन्त तापमान ऊपर चढे उसके पहले ही चलो, नगर के पास कहीं निवास करेगे, सीता प्यास से पीडित है उसे कहीं जल पिलायें और आहार की तैयारी शीघ्र ही करे। ऐसा कहकर आगे चले सो दशागनगर के समीप जहाँ श्री चन्द्रप्रभु भगवान का चैत्यालय महा उत्तम है वहाँ आये। श्री भगवान को नमस्कार कर सुख से बैठे, भोजन की सामग्री के लिये लक्ष्मण नगर में गये, सिहोदर के कटक में प्रवेश किया। कटक के रक्षकों ने मना किया। तब लक्ष्मण ने सोचा कि ये दरिद्री

नीचकुली इनसे मै क्या विवाद करूँ, ऐसा विचार कर नगर मे आये, सो नगर के दरवाजे पर अनेक योद्धा बैठे थे। और दरवाजे के ऊपर वज्रकर्ण महासावधान होकर बैठा था। वहॉ लक्ष्मण को देख लोग कहने लगे, तुम कौन हो, कहॉ से किसलिये आये हो? तब लक्ष्मण ने कहा, दूर से आ रहे है, और आहार के लिये नगर मे आये है। तब वज्रकर्ण इनको अतिसुन्दर देख आश्चर्य को प्राप्त हुआ, और कहा, हे नरोत्तम! अन्दर प्रवेश करो तब यह हर्षित होकर गढ में गया। और वज्रकर्ण बहुत आदर से मिला और कहा, यहॉ भोजन तैयार है, आप कृपाकर यहॉ ही भोजन करे। तब लक्ष्मण बोले कि मेरे गुरुजन बडे भाई और भावज श्रीचन्द्रप्रभु चैत्यालय मे बैठे है, उनको पहले भोजन कराकर मै भोजन करूँगा। तब वज्रकर्ण ने कहा बहुत अच्छी बात भोजन वहॉ ले जाईये। उनके योग्य सब सामग्री ले जाओ। अपने सेवको के हाथ से वज्रकर्ण ने तरह तरह की सामग्री भेजी, सो लक्ष्मण साथ मे ले आये। श्रीराम लक्ष्मण और सीता भोजनकर अतिप्रसन्न हुये। श्रीराम कहने लगे, हे लक्ष्मण! देखो वज्रकर्ण की बडाई, जो ऐसा भोजन कोई अपने जमाई को भी नहीं जिमाये, सो बिना पहचानके भी अपने लिये भोजन भेजा। पीने की वस्तु महामनोहर और व्यजन महामिष्ट, अमृत समान भोजन, उससे मार्गकी थकान मिटी और जेठके आताप की तपन मिटी। चादनी समान उज्वल महा सुगन्धित दूध, और घृत, स्वादिष्ट दही, ऐसे व्यजन रस अन्य स्थानपर दुर्लभ है, उस पथिक ने पहले ही अपने को कहा था, यह वज्रकर्ण अणुव्रत का धारी श्रावक है, और देव शास्त्र गुरु को छोडकर अन्यको नमस्कार नहीं करता। ऐसा धर्मात्मा व्रत शील का धारक अपने आगे शत्रुओ से दुखी रहे तो अपना पुरुषार्थ एव बल किस काम का, अपना यही धर्म है, कि दुखियो का दुख दूर करना तो साधर्मी का अवश्य ही करना, यह वज्रकर्ण अपराध रहित साधु सेवा मे सावधान महाजिनधर्मी उसके सेवक भी जिनधर्मी ऐसे जीवो को क्यो सताते है। यह सिहोदर ऐसा बलवान है, तो इसके उपद्रव से वज्रकर्ण को भरत भी नहीं बचा सकेगा। इसलिए हे लक्ष्मण! तुम शीघ्र ही इसकी सहायता करो। सिहोदर के पास जाओ और वज्रकर्ण का उपद्रव दूर हो ऐसा कार्य करो। हम तुमको क्या शिक्षा दे तुम स्वय महाबुद्धिमान हो जैसे महामणी प्रभा सहित प्रगट होती है, ऐसे तुम महाबुद्धिमान क्षत्रियकुल मे पराक्रमी के घर प्रगट हुये हो, इस प्रकार श्रीराम ने भाई के गुणो की प्रशसा की। तब लक्ष्मण लज्जा से नीचे देखते रहे। नमस्कार कर कहा, हे प्रभो! आपजो आज्ञा करोगे वही होगा। महाविनयवान

लक्ष्मण रामकी आज्ञा प्रमाण धनुष बाण लेकर पृथ्वी को कम्पायमान करते हुये शीघ्र ही सिहोदर के पास गये, सिहोदर के कटक के रख वाले पूछते है तुम कौन हो? लक्ष्मण ने कहा—मै राजा भरत का दूत हूँ। तब कटक मे जाने दिया। अनेक डेरो को उलघकर राज द्वार गया, द्वारपाल ने राजा से मिलाया। वह लक्ष्मण महाबलवान सिंहोदर को तृण समान जान कहने लगा, हे सिंहोदर! अयोध्या के अधिपति भरत उन्होने तुमको आज्ञा की है, कि वृथा वज्रकर्ण से विरोध करने से क्या? मित्रता करो। तब सिंहोदर ने कहा—हे दूत! तू राजा भरतसे इस प्रकार कहना, जो अपना सेवक है, वह विनय मार्ग से रहित होता उसे समझाकर स्वामी सेवा मे लाते, इसमे विरोध क्या? यह वज्रकर्ण दुरात्मा, मायाचारी, कृतघ्नी, चाकरी चूक, मित्रो का निन्दक, आलसी, मूढ, विनयरहित, महाक्षुद्र, सज्जनता से रहित है। इसके दोष तब मिटे जब यह मरण को प्राप्त होगा। अथवा उसे राज्य रहित करूँ। इसलिये तुम कुछ मत कहो, मेरा सेवक है, जो चाहूँगा सो करूँगा। तब लक्ष्मण बोले बहुत कहने से क्या? यह वज्रकर्ण परममित्र है, इस सेवक का अपराध क्षमा करो, ऐसा जब कहा, तब सिहोदर क्रोध से अपने बहुत सामन्तों को देख गर्व सहित ऊँचे शब्दो से कहता है। यह वज्रकर्ण तो महामानी है, ही और तू इसके कार्य के लिये आया है, सो तू भी महामानी है। तेरा तन और मन मानो पाषाण के बराबर है, रचमात्र भी तेरे में नमृता नहीं, तू भरत का मूढ सेवक है। मालुम होता है कि भरत के देश मे तेरे समान मनुष्य होगे। जैसे पकते हुये चावलों में से एक चावल निकालकर कच्चे पक्के की परीक्षा की जाती है, ऐसे ही एक तेरे को देखने से सबकी बात जानी जाती है, तब लक्ष्मण ने क्रोधकर कहा, मै तेरी और उनकी मित्रता कराने आया हूँ। तुझे नमस्कार करने को नहीं आया हूँ, बहुत कहने से क्या? थोडे ही मे समझ जाओ। वज्रकर्ण से सन्धिकर लो, नहीं तो मारे जाओगे। वे वचन सुन सबही सभा के लोग क्रोध को प्राप्त हुये। कोई छुरी लेकर, कोई कटारी, भाला, तलवार लेकर लक्ष्मण को मारने आये। हुँकार शब्द करते अनेक सामन्तो ने लक्ष्मण को घेर लिया। जैसे पर्वत को मच्छर रोके वैसे लक्ष्मण को रोके, सो यह धीर वीर युद्ध क्रिया मे प्रवीण शीघ्र ही चरणो के घात से उनको दूर उडा दिया। किसीको घुटनो से मारे, किसीको कोहनी से पछाडे, किसीको मुष्टि के प्रहार से चूर्णकर डाला, किसीको केश पकड पृथ्वीपर पछाड कर मारे, किसीको परस्पर सिर भिडा कर मारे इसप्रकार अकेले महाबली लक्ष्मण ने अनेक योद्धाओ को विध्वस किये। और भी बहुत से सामन्त शस्त्र लेकर

हाथी घोडोपर चढ बखतर पहन लक्ष्मण को चारो तरफ से घेर लिया। लक्ष्मण अकेले बीच मे तब लक्ष्मण जैसे सिह श्याल को भगाता है। ऐसे सेना को भगाया। तब सिहोदर बलवान हाथीपर चढ अनेक सुभटो सहित लक्ष्मण से युद्ध करने आया। अनेक योद्धा मेघसमान लक्ष्मण रूपी चन्द्रमा पर आये। सो लक्ष्मण ने सब योद्धाओ को ऐसे भगाया जैसे पवन, रुईके फफूदो को उडाये। उस समय महायोद्धाओ की स्त्रीयॉ परस्पर बात करती हैं, देखो यह एक महासुभट अनेक योद्धओ से घिरा हुआ है, फिर भी यह सबको जीत रहा है। इसको कोई जीतने मे समर्थ नहीं। यह धन्य है, इसके माता पिता धन्य है, इत्यादि अनेक सुभटो की स्त्रीयॉ बाते कर रही है। और लक्ष्मण सिहोदर को कटक सहित चढा देखकर हाथी के खम्भे को उखाड कर कटक के सामने गया, जैसे अग्नि वनको भस्म करती है, ऐसे कटक के बहुत सुभटों को विध्वस किये और जो दशांग नगर के योद्धा नगर के दरवाजे पर वज्रकर्ण के पास बैठे थे, उनके मुख खुशी से फूल गये है। और स्वामी से कहते है, हे नाथ! देखो यह एक महापुरुष सिहोदर के कटक से अकेला लड रहा है, ध्वजा रथ चक्र तोड डाले परम ज्योति का धारी खड्ग समान है काति उसकी, समस्त कटक को व्याकुलता रूप भ्रमर मे डाला है। सब तरफ सेना भागी जा रही है जैसे सिंह से मृगो के समूह भागते है, भागते हुये सुभट आपस मे बता रहे है। कि बखतर उतारो, हाथी घोडे छोडो, गदा खड्डे मे डाल दो, जोर से मत बोलो, जोर के शब्दो को सुनकर एव शस्त्रो के धारक देख यह महा भयानक पुरुष आकर मारेगा। अरे भाई! यहॉ से हाथी ले जाओ। कहॉ खडा रखा है? रास्ता देओ! अरे दुष्ट सारथी! कहॉ रथ को खडा रखा है, रथ के घोडे आगे करो, यह आया, यह आया, इस प्रकार से बोलते हुये महाकष्ट को प्राप्त होकर योद्धा सग्राम को छोड भागे जा रहे हैं। नपुसक समान हो गये है, यह युद्ध मे क्रीडा करने वाला, कोई देव है, या विद्याधर है, अथवा काल है, या वायु है? यह महाप्रचड सेना को जीतकर सिहोदर को हाथीसे उतार गलेमे कपडा डाल बाधकर ले जा रहा है, जैसे बैल को बाधकर मालिक अपने घर ले जाय। यह वचन वज्रकर्ण के योद्धा वज्रकर्ण से कहने लगे। तब वज्रकर्ण ने कहा, हे सुभटो! बहुत चिन्ता करने से क्या? धर्म के प्रभाव से सब शाति होगी। सकट मे धर्मही रक्षा करता है, इसीलिये जीवन मे कितने ही कष्ट आये पर धर्मसे कभी विचलित नहीं होना चाहिए। दशागनगर की स्त्रीयॉ महलके ऊपर बैठी आपस में बात करती है, हे सखी! इस सुभट की अद्‌भुतचेष्टा अनुपमबल देखो जो अकेला

नरेन्द्रको बाधकर ले जा रहा है। अहो! धन्य इसका रूप, धन्य उसकी काति, धन्य उसकी शक्ति, यह कोई अतिशय का धारी पुरुषोत्तम है, धन्य है वो स्त्री उनका यह जगदीश्वर पति हुआ है, या होगा। और सिहोदर की पटरानी बाल एवं वृद्धो सहित रोती हुई लक्ष्मण के चरणों में गिरी। और कहा, हे देव! इनको छोड दो हमको भरतार की भिक्षा दो। अब जो आपकी आज्ञा होगी वही कार्य करेगे। तब लक्ष्मण कहने लगे, आगे वह बडावृक्ष है, वहॉ बांधकर इसे लटकाऊँगा। तब इनकी रानी हाथजोड बहुत विनय से विनती करती है, हे प्रभो! आप क्रोधित हुये हो तो हमे मारो, इनको छोडने की कृपा करो। स्वामी का दुख हमें मत दिखाओ, आप जैसे पुरुषोत्तम स्त्री बालक वृद्धो पर करुणा ही करते हैं। तब लक्ष्मण दया कर कहते हैं। तुम चिन्ता मत करो, आगे भगवान का चैत्यालय है, वहॉ इन्हें छोडेगे। ऐसा कहकर आप चैत्यालय मे गये, और राम से कहने लगे, हे देव! यह सिहोदर आया है, आप जैसा कहेगे वैसा करेगा। तब सिंहोदर हाथजोड कम्पायमान होकर श्रीरामके चरणों मे गिरा और कहा, हे देव! आप महाकांति के धारी परमतेजस्वी सुमेरुसमान अचल पुरुषोत्तम हो मै आपका आज्ञाकारी यह राज्य आपका आप जिसको चाहो उसे देओं। मै आपके चरणो की निरन्तर सेवा करूँगा। और रानियो ने नमस्कार कर पति की भीख मागी और सीता महासती के चरणो मे नमन कर कहती है हे देवी! हे शोभने! आप स्त्रियो की शिरोमणी हो हमारी रक्षा करो। तब श्रीरामने सिहोदर से कहा मानो मेघ गरजा। अहो! सिहोदर तुझे जो वज्रकर्ण कहे ऐसा करो? इस बात से तेरा जीवन है, इस प्रकार सिंहोदर को रामने आज्ञा दी।

अथानतर उसी समय वज्रकर्ण को बुलाया, वह परिवार सहित चैत्यालय मे आया। तीन प्रदक्षिणा देकर भगवान को नमस्कारकर चन्द्रप्रभु भगवान की भक्ति से स्तुतिकर प्रसन्न हुये, पुन यह विनयवान दोनों भाईयो के पास आकर स्तुतिकर शरीर की आरोग्यता पूछी और सीता की कुशल पूछी, तब श्रीराम अत्यन्त मधुर ध्वनिसे वज्रकर्ण को कहॉ हे भव्य! तुम्हारे कुशल से हमारी कुशल है। इस प्रकार वज्रकर्ण और श्रीराम की बात हो रही थी। उसी समय सुन्दर भेष का धारी विद्युदग आया और श्रीराम लक्ष्मण को प्रणाम व स्तुतिकर वज्रकर्ण के पास आया। सर्व सभा में विद्युदग की प्रशसा हुई कि यह वज्रकर्ण का परममित्र है, पुनः श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्न होकर वज्रकर्ण से कहते है, तेरी श्रद्धा महाप्रशसा योग्य है, कुबुद्धियों के उत्पाद से भी, तेरी बुद्धि रंचमात्र भी नहीं डिगी, जैसे पवन

के समूह से सुमेरुकी चूलिका नहीं डिगे। मुझे देखकर भी तेरा मस्तक नहीं झुका सो महाधन्य है, तेरे सम्यक्त्व की दृढता। जो शुद्धतत्त्व के अनुभवी पुरुष है। उनकी यही रीति है। जो जगत मे पूज्य जिनेन्द्रभगवान है, उनको नमस्कार करते हैं। दूसरो को मस्तक क्यो झुकाये। तू बुद्धिमान है, धन्य है, निकटभव्य है, चन्द्रमा समान उज्ज्वल बल कीर्ति तेरी पृथ्वीपर फैलेगी। वज्रकर्ण के इस प्रकार सच्चे गुणो का श्रीरामचन्द्रजी ने वर्णन किया। तब वह लज्जा से नीचा मुखकर श्री रघुनाथ से कहा, हे नाथ! मेरेपर आपत्ती तो बहुत थी संकट बहुत भारी था, परन्तु आप समान सज्जन जगत के हितु मेरे सहाई हुये, मेरे भाग्य से आप पुरुषोत्तम पधारे, इस प्रकार वज्रकर्ण ने कहा, तब लक्ष्मण बोले तेरी जो इच्छा होगी वह करेगे। वज्रकर्ण ने कहा आप समान उपकारी पुरुष को प्राप्तकर इस जगत मे मुझे कोई दुर्लभ नहीं। मेरी यही विनती है, मै जिनधर्मी हूँ, मेरे अन्य जीवो को पीडा देने की अभिलाषा नहीं है। यह सिंहोदर तो मेरा स्वामी है, इसलिये इनको छोडो। वज्रकर्ण ने जब ऐसा कहा, तब सबके मुखसे धन्य धन्य यह ध्वनि हुई। ऐसे जो उत्तम पुरुष है, वे द्वेष होनेपर भी दूसरो का अच्छा ही सोचते है। जो सज्जन पुरुष हैं वह दूर्जनों का भी उपकार ही करते है, और जो अपना उपकार करते उनका तो यह करते ही करते है। लक्ष्मण ने वज्रकर्ण से कहा, जैसा तुम कहोगे वैसा ही होगा। सिहोदर को छोडा एव वज्रकर्ण ओर सिहोदर का परस्पर हाथ पकडाकर परममित्र बनाये। वज्रकर्ण को सिहोदर का आधा राज्य दिया, और जो माल लूट लिया था वह पुन॰ वापिस दिलाया। एवं देश, धन, सेना, सबका आधा हिस्साकर दिया। वज्रकर्ण के प्रसाद से विद्युदग सेनापति बना। और वज्रकर्ण ने राम लक्ष्मण की बहुत स्तुति कर अपनी आठ राजकुमारियों की लक्ष्मणसे सगाई की। कैसीहैं राजकुमारी? महाविनयवान रूपवान सुन्दर वस्त्रआभूषणो से युक्त गुणवान है। और राजा सिहोदर को लेकर अन्य कई राजाओ की तीनसौ कन्याओ का विवाह लक्ष्मण से करना निश्चित किया, सिहोदर ओर वज्रकर्ण ने लक्ष्मण से कहा, इन कन्याओ को आप स्वीकार करो। तब लक्ष्मण बोले, विवाह तो तब करूँगा जब अपनी भुजाओ से राज्य स्थान जमाऊँगा। और श्रीरामचन्द्रजी ने उनसे कहा, हमारे अब तक कोई देश नहीं। पिता ने राज्य भरत को दिया है, इसलिये चन्दनगिरी के समीप या दक्षिणसमुद्र के पास कोई स्थान बनायेंगे तब हमारी दोनो माताओ को लेने मै जाऊँगा अथवा लक्ष्मण जायेगा उस समय आपकी पुत्रियो से विवाह करेगा, अब तक हमारे स्थान नहीं, कैसे विवाह करें?

जब इस प्रकार कहा, तब वे सभी राजकन्याये ऐसी हो गई जैसे ठंडी का लगा कमलो का वन हो जाये। मन मे बिचारती है, कि वह दिन कब होगा जब हमको स्वामी के संयोग रूप रसायन की प्राप्ति होगी और जो कदाचित प्राणनाथ का विरह हुआ तो हम प्राण त्याग करेगी। इन राजकन्याओ का मन वियोगरूपी अग्नि से जलता रहा। सोचती है एक तरफ गहरा खड्डा ओर एकतरफ महा भयकर सिह, क्या करे कहॉ जाये। वियोगरूपी वेदना से चिन्तवन करती हुई अपने पिता के साथ अपने स्थान गई। सिहोदर, वज्रकर्णादि सभी नरपति रघुपति की आज्ञा लेकर अपने घर गया, वह राजकुमारियॉ उत्तम बुद्धि की धारी, माता पितादि कुटुंब से अत्यन्त सम्मानित है। और पति में है मन उनका वह अनेक प्रकार की क्रीडाये करती हुई पिता के घर मे रही। और विद्युदग ने अपने माता पिता को कुटुम्ब सहित बहुत विभूति के साथ बुलाया। उनके मिलन का उत्सव किया, और वज्रकर्ण व सिहोदर के परस्पर अतिप्रेम बढा। और श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण सीता सहित अर्धरात्रि चैत्यालय से निकल धीरे धीरे अपनी इच्छा प्रमाण विहार करते रहे। प्रात· काल जो लोग चैत्यालय मे आये एव रामको नहीं देखकर शून्य ह्रदय होकर अतिपश्चाताप करने लगे। राम लक्ष्मण जानकी को धीरे धीरे चलाते एव रमणीक वनोमे विश्राम लेते और महामिष्ठ स्वादिष्ट फलो का रस पान करते। क्रीडा करते रस भरी बाते करते। प्रसन्न मन से आगे चले। चलते चलते नलकुॅवर नगर मे आये। नाना प्रकार के रत्नो के मन्दिर ऊॅचे ऊॅचे महा मनोहर शिखर और सुन्दर उपवनो से मडित जिनमन्दिरो की शोभा स्वर्गसमान निरन्तर उत्सव का भरा लक्ष्मी का निवास था।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम लक्ष्मणकृत वज्रकर्णका उपकारवर्णन करनेवाला तेतीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-34

बालिखिल्य का कथानक

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मण सीता नलकूॅवर नगर के परम सुन्दर वन मे आये, वहॉ पासके सरोवरमे लक्ष्मण जल लेने के लिये गये, और उसीसरोवरपर क्रीडा

करने के लिये, कल्याणमाला राजपुत्री राजकुमार का भेष बनाकर आई थी। कैसाहै राजकुमार? महारूपवान, पर के ऑखों को चुरानेवाला, सबका प्रिय, महाविनयवान, श्रेष्ठ हाथीपर बैठा, पयादे साथ वह नगर का राज्य करता, वहॉ सरोवर के किनारेपर लक्ष्मण को देखकर मोहित हुआ, कैसाहैलक्ष्मण? नीलकमल समान, श्याम सुन्दर लक्षणो का धारक राजकुमार ने एक सेवक को आज्ञा की कि इस रूपवान पुरुषको बुलाकर लाओ? वह सेवक पास मे जाकर हाथ जोड नमस्कार कर कहता है, हे धीर वीर। हमारे यहॉ के राजकुमार आपसे मिलना चाहते है, सो आप पधारिये। तब लक्ष्मण राजकुमार के समीप आये, वह हाथीसे उतरकर कमलसमान अपने हाथो से लक्ष्मण का हाथ पकड वस्त्रों के डेरो (तम्बू) मे ले गये। एक आसनपर दोनो बैठे। राजकुमार पूछते हैं। आप कौनहो, कहॉसे आये हो? तब लक्ष्मण ने कहा, मेरे बडे भाई मेरे बिना एकक्षण नहीं रहते, मै उनके लिये भोजन पानी की व्यवस्थाकर उनकी आज्ञा लेकर आपके पास आऊॅगा, तभी सब बात कहूॅगा। तब राजकुमार ने कहा, भोजन यहॉ ही तैयार हुआ है। अत आप सब यहीं भोजन करेगे। तब लक्ष्मण से आज्ञा पाकर सुन्दर दाल, भात, नाना प्रकार के व्यजन ताजा घी कपूर सुगन्धादिक द्रव्यो सहित दूध, दही नाना प्रकार के पीनेकी वस्तुये, मिश्री के स्वाद से सहित ऐसे लड्डू, पूडी, सॉकली इत्यादि अनेकप्रकार की भोजन सामग्री और वस्त्राभूषण माला आदि अनेक तैयार किये और अपने पास का जो द्वारपाल उसे भेजा उसने जाकर सीता सहित रामको प्रणामकर कहता है हे देव। इस वस्त्र भवन मे आपके भाई ठहरे है, और इस नगर के नाथ ने बहुत आदर से आपसे विनती की है, वहॉ ठडी हवा एव छाया है, स्थान महामनोहर है, सो आप कृपाकर पधारे तो मार्गका खेद दूर होगा। तब राम सीता सहित पधारे। जैसे चॉदनी सहित चाद प्रकाश करे, तब लक्ष्मण सहित नगर का राजा दूर से ही देख उठकर सामने आये, सीता सहित राम सिहासन पर विराजे, राजाने आरती उतारकर अर्घ चढाये और अति सम्मान किया। आप प्रसन्नहो स्नानकर भोजन किया, सुगन्धित द्रव्य लगाये। पुन राजाने सबको सीख देकर विदा किया, राम लक्ष्मण सीता और नगर का राजा ये चार ही रहे। राजाने सबसे कहा, मेरे पिता के पास से इनके हाथ समाचार आये है, वह एकान्त की बात है, यहॉ कोई आये नहीं, जो आयेगा उसे मै मारूॅगा। बडे बडे सामन्त द्वारपर खडे किये। एकान्त मे राम लक्ष्मण के आगे राजकुमार

का भेष छोड लज्जा तज राजकुमारी का रूप स्वत· प्रकट दिखाया। कैसीहैकन्या? लज्जा से नम्रीभूत है मुख उसका और रूप से मानो स्वर्ग की देवॉगना है अथवा नागकुमारी। उसकी ज्योतिसे वस्त्रभवन प्रकाशरूप हो गया, मानो चन्द्रमा का उदय हुआ, यह राज्य कन्या साक्षात लक्ष्मी समान है, और जैसा रूप गुण स्त्रीयों मे होना चाहिए वैसा ही कर्मके योगसे प्राप्त हुआ है। तत्काल नररूप तज नारीका रूपकर मनोहर नेत्रो की प्यारी सीता के चरणो मे नमनकर पास मे बैठी, जैसे लक्ष्मी रतिके पास जाकर बैठे। इसका रूप देखकर लक्ष्मण कामसे मोहित हुआ। ओर ही अवस्था हो गई, नेत्र चलायमान हुये। तब श्रीरामचन्द्रजी ने, राजकुमारी से पूछा, तू किनकी पुत्री है और पुरुष का भेष किसकारण बनाया, तब वह मधुरभाषी अपना शरीर वस्त्रो से ढककर कहती है, हे देव! मेरा वृतान्त सुनो। इस नगर का राजा बालिखिल्य सुबुद्धिवान श्रावक के व्रतो का धारी, महादयालु, जैनधर्मियो पर वात्सल्य करने वाले। राजा के पृथ्वीरानी उसे गर्भ रहा, मै गर्भ मे आई, और म्लेच्छो के स्वामी से महायुद्ध हुआ, मेरा पिता पकडा गया, मेरा पिता सिहोदर का सेवक। राजा सिहोदर ने यह आज्ञा दी की बालिखिल्य के पुत्र होगा, वह राज्य करेगा, तब मै पापिनी पुत्री हुई। हमारे मत्री सुबुद्धि उन्होने विचारकर राज्य पालन के लिये मुझे पुत्र बताया। और सिहोदर से विनती की। कल्याणमाला मेरा नाम रखा। बडा उत्सव जन्म का किया। एव मेरीमाता और मत्री तो जानते है, कि यह राजकन्या है और शेष सभी लोग मुझे राजकुमार ही जानते है। अब मैने इतने दिन व्यतीत किये, अब पुण्य के प्रभाव से आपके दर्शन हुये। मेरा पिता बहुत दुख मे है म्लेच्छो ने बदी बना रखा है, राजा सिहोदर भी छुडाने मे समर्थ नहीं है। जो भी राज्य मे द्रव्य उत्पन्न होता है, वह सब म्लेच्छ ले जाते है। मेरी माता वियोगरूपी अग्नि से जल रही है। ऐसा कहकर दुख की वेदना से पीडित मुख का रूप बदल गया और रोने लगी। तब श्रीरामचन्द्रजी ने मधुर वचनो से धैर्य बधाया, सीता गोद मे लेकर बैठी, मुख धोया। तब लक्ष्मण कहने लगे, हे सुन्दरी! चिन्ता मत करो। तुम पुरुष भेष बनाकर राज्य करो। थोडे ही दिनो मे म्लेच्छ को पकडा और अपने पिता को छूटा ही देखोगी, ऐसा कहकर परमहर्ष उत्पन्न कराया। तब इनके वचन सुनकर राजकुमारी अपने पिता को छूटा ही जाना। श्रीराम लक्ष्मण देवो के समान तीनदिन बहुत आदर से यहॉ ही रहे। पुन रात्रि में सीता सहित उपवन से निकलकर गुप्तरूप से चले गये। पुनः प्रात काल

राजपुत्री जगी तब उनको नहीं देखकर व्याकुल हुई। और कहने लगी, वे महापुरुष मेरा मन हरकर ले गये, मुझ पापिनी को नींद आ गई, और वे गुप्तरूप से चले गये। इस प्रकार विलापकर मन को रोक, हाथीपर चढ पुरुष भेष में ही नगर को आई। फिर राम लक्ष्मण कल्याणमाला के विनय से प्रसन्नमन होकर मेकला नदी के पास पहुचे। नदी पारकर क्रीडा करते हुये अनेक देशो को पार करते हुये विन्ध्याटवी मे आये। मार्ग मे जाते हुये ग्वालों ने मना किया, यह जगल भयानक है, आपके जाने योग्य नहीं है। तो भी इन्होने बात नहीं मानी और आगे चले गये। वह वन लताओं से मंडित एव अनेक वृक्षो से पूरित है उसमे दावानल अग्नि जल रही है।

अथानंतर सीता ने श्रीराम से कहा हे पुरुषोत्तम! इस काटे वाले वृक्षपर बांयी तरफ कौआ बैठा है, वह कलह की सूचना दे रहा है, और दूसरा एककौआ क्षीर वृक्षपर बैठा है, वह जीतकी सूचना दिखा रहा है। इसलिये एक मुहूर्त को शाति रखो, फिर चलो, युद्ध के पश्चात जीत है, मेरे मन मे ऐसा लग रहा है। तब दोनो भाई रुके, कुछ समय बाद चले, आगे म्लेच्छो की सेना सामने दिखाई दी। दोनो भाई निर्भय होकर धनुष बाण लेकर म्लेच्छो की सेना के सन्मुख आये, तब सभी सेना दशो दिशाओ मे भाग गई। तब अपनी सेना को भागीदेख बहुत से म्लेच्छ बखतर पहन शस्त्र लेकर आये, उनको राम लक्ष्मण ने क्रीडा मात्र मे जीते, सभी म्लेच्छ धनुष बाण डाल पुकारते हुये स्वामी के पास जाकर सर्व वृतान्त कहा। तब वे सभी म्लेच्छ क्रोधकर पुन धनुषबाण लेकर निर्दयता पूर्वक बडी सेना से आये। काकोनदजाति के म्लेच्छ पृथ्वीपर प्रसिद्ध मास भक्षी राजाओ से दुर्जय वे काली घटा समान उमडकर आये, तब लक्ष्मण ने क्रोधकर धनुषबाण चढाया उस धनुष को देख सभी म्लेच्छ डरसे कम्पायमान होकर वनमे अधो की तरह भटक गये। तब महाभयकर म्लेच्छो का स्वामी रथ से उतरकर हाथजोड प्रणामकर चरणो मे गिरा। और अपना सर्व वृतान्त राम लक्ष्मण दोनो भाईयो से कहा। हे प्रभो! कोशाम्बी नगरी मे एक विश्वानल ब्राह्मण अग्निहोत्री उसके प्रतिसंख्या स्त्री उसका पुत्र, मै, रौद्रभूत दूत कला मे प्रवीण बाल अवस्था मे क्रूरकर्मो को करने वाला एकदिन चोरी करते हुये मै पकडा गया, अब सभी मुझे शूलीपर चढाने को तैयार हुये, तब एक दयावन्त पुरुष ने मुझे छुडाया। तब में कापता हुआ देश छोड यहाँ आया। कर्मके योगसे म्लेच्छो का स्वामी बना, महाभ्रष्ट पशुसमान, व्रत क्रिया

से रहित। अब तक महा महा सेना के अधिपति बडे बडे राजा मेरे सन्मुख युद्ध करने को समर्थ नहीं होते थे, मेरे सामने नहीं आते थे। ऐसा मैं आपके दर्शनमात्र से ही आपके वशीभूत हुआ हूँ। धन्य भाग्य मेरे जो मैने महापुरुषोत्तम देखे, अब मुझे जो आज्ञा करो वही मै करूँगा। मैं आपका सेवक, आपके चरणो की सेवा सिर पर धारण करता हूँ, और यह विन्ध्याचलपर्वत रमणीकस्थान बहुत धन से भरा है, आप यहाँ राज्य करो, मै आपका दास ऐसा कहकर मूर्च्छा खाकर चरणो मे गिरा, जैसे वृक्ष निर्मूल होकर गिर पडे। म्लेच्छ को दुखी देख श्रीरामचन्द्रजी दयारूप कल्पवृक्ष समान कहने लगे, उठ उठ डरे मत और बालिखिल्य को छोडो, तत्काल यहाँ बुलाओ, उसका आज्ञाकारी मत्री बनकर रहो। म्लेच्छो की क्रिया छोड पापकर्म से निवृत हो, देश की रक्षा करो, इस प्रकार करनेपर तेरी कुशल होगी। तब उसने कहा, हे प्रभो! ऐसा ही करूँगा। यह विनतीकर म्लेच्छ गया। महारथ का पुत्र जो बालिखिल्य उसे छोडा, बहुत विनय से तेलादिक की मालिशकर स्नान भोजन कराकर आभूषण पहनाकर रथ मे चढाकर श्रीरामचन्द्रजी के पास लाने को तैयार किया। तब बालिखिल्य परम आश्चर्य को प्राप्त होकर सोचता है, कहाँ यह म्लेच्छ महा शत्रु अत्यन्त निर्दई, मेरा इतना विनय करते है, तो आज मुझे किसी की भेट देगे ऐसा मालुम हो रहा है। अब मेरा जीवन भी नहीं रहेगा। इस चिन्ता से बालिखिल्य चला, आगे जाकर राम लक्ष्मण को देख परमहर्षित हुआ। रथसे उतर राम लक्ष्मण को नमस्कार कर कहता है—हे नाथ! मेरे पुण्य के योगसे आप पधारे मुझे बधन से छुडाया आप इन्द्र समान पुरुषोत्तम महा पुरुष हो। तब राम ने आज्ञा दी, तुम अपने स्थान जाओ, अपने परिवार से मिलो। तब बालिखिल्य रामको प्रणामकर, रौद्रभूत सहित अपने नगर गया। श्रीराम बालिखिल्य को छुडाकर रौद्रभूत को दास बनाकर वहाँ से चले। बालिखिल्य को आया सुनकर कल्याणमाला महाविभूति सहित सन्मुख आई, नगर मे महा उत्साह हुआ, राजा ने राजकुमार को हृदय से लगाकर अपनी सवारी मे बैठाकर नगर मे प्रवेश किया, रानी के रोम रोम पुलकित हुये। जैसा सुन्दर शरीर पहले था ऐसा पति के आने पर हो गया। सिहोदर सहित बालिखिल्य के सभी हितकारी प्रसन्न हुये। कल्याणमाला राजपुत्री ने इतने दिन पुरुष के भेष मे राज्य किया, इस बातका सबको आश्चर्य हुआ। यह कथा राजा श्रेणिक से, गौतमस्वामी ने कहा, हे राजन! वह रौद्रभूत अनेक देशों का कांटा श्रीराम के प्रभाव से बालिखिल्य

का आज्ञाकारी सेवक हुआ। जब रौद्रभूत वशीभूत हुआ और म्लेच्छो की पृथ्वीपर बालिखिल्य का राज्य हुआ, तब सिहोदर भी शका मानने लगा। इसलिये स्नेह से सम्मान करता रहा। बालिखिल्य रघुपति के प्रभाव से परमविभूति को प्राप्तकर पृथ्वीपर प्रकाश करता रहा जैसा शरत ऋतु में सूर्य प्रकाश करता। अपनी रानी सहित देवोसमान भोग भोगता रहा। और जानता रहा कि पुण्य से ही शत्रुओ से छूटकर पुन राज्य मिला, महा पुरुषो के सानिध्य से सब कुछ प्राप्त होता है।

(इति श्रीरविषेणाचर्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे बालिखिल्य का वर्णन करनेवाला चौतीसवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-35

कपिल ब्राह्मण का कथानक

अथानतर राम लक्ष्मण देवो समान मनोहर नन्दनवन समान वनमे सुख से विहार करते हुये, एक मनोज्ञ देश मे आये। उसके बीच तापति नदी बह रही है। वहॉ एक निर्जन वनमे सीता तृषाकी वेदना से खेद खिन्न हुई। तब पतिसे कहनेलगी, हे नाथ! प्यास से मेरा कण्ठ सूख रहा है, जैसे अनन्तभव के भ्रमण से दुखी हुआ, भव्यजीव सम्यग्दर्शन को चाहता है, ऐसे मै प्यास की वेदना से शीतल जल को चाहती हूँ। ऐसा कहकर एकवृक्ष के नीचे बैठ गई। तब रामने कहा, हे देवी! हे प्रिये! तुम विषाद मत करो नजदीक ही आगे गॉव है, वहॉ सुन्दर भवन है, उठो आगे चले, इस गॉवमे तुझे शीतल जलकी प्राप्ति होगी। ऐसा जब कहा, तब उठकर सीता मद मद गमन करती हुई गजगामिनी समान चली, सीता सहित दोनो भाई अरुणग्राम मे आये, वहॉ महाधनवान किसान रहते हैं। एकब्राह्मण अग्निहोत्री कपिल प्रसिद्ध है उसके घरमे आये और अग्निहोत्री की शालामें कुछ समय बैठकर मार्गकी थकान दूर की। कपिलब्राह्मण की स्त्री जल लेकर आई, सीता ने जल पिया और थोडी देर बेठे। इतने मे ब्राह्मण जंगल से बिल्व, छीला, काष्ठ इत्यादि लेकर आया, दावानल अग्नि समान ब्राह्मण का क्रोध, कालकूट विष समान वचन बोलने लगा, उल्लू समान मुख, हाथमे कमण्डलू, चोटी मे गांठ

लगाये, लबी दाढी, यज्ञोपवीत पहने, उच्छवृति कहो, मनुष्य अपने खेतो में से अनाज काटकर ले गये, उसकेबाद अनाजके कण बीन बीन कर लाता और अपनी आजीविका पूरी करता, ऐसा ब्राह्मण राम लक्ष्मण सीताको बैठे देख टेढा मुखकर ब्राह्मणी को खोटे वचन कहने लगा, हे पापिनी! इनको घर मे क्यो प्रवेश कराया, मै आज तुझे गायों के खूटे मे बाधूगा। देख! यह निर्लज्ज ढीठपुरुष धूल से लगे इन्होने मेरा अग्निहोत्री का स्थान अपवित्र कर दिया। यह वचन सुन सीताने रामसे कहॉ, हे प्रभो! इस क्रोधी के घर में नहीं रहना, वन मे चले, जहॉ अनेक वृक्ष, पुष्प, फल पत्रो से मडित वन सुशोभित है, निर्मल जलसे भरे सरोवर हैं उनमे कमलखिल रहे हैं। हिरण स्वतन्त्र होकर क्रीडा करते हैं। यहॉ दुष्ट पुरुष के कठोर वचन नहीं सुनना। यद्यपि यह देश धन से भरा है, परन्तु यहॉ के लोग महाकठोर है, और गॉव के लोग विशेष कठोर ही होते है, ब्राह्मण के कठोरवचन सुन पास के सभी लोग आये और इन दोनो भार्ग्यो का देवो समान सुन्दर रूप देख मोहित हुये और ब्राह्मण को एकात मे ले जाकर समझाने लगे, कि यह एक रात यहॉ रहे तो तेरा क्या बिगड रहा है। ये गुणवान, विनयवान, रूपवान महापुरुष है, तब कपिलब्राह्मण सबसे लडने लगा और कहा तुम मेरे घर क्यो आये, चले जाओ। और मूर्ख इनके ऊपर क्रोध से आया जैसे कुता हाथी पर आये। इनको कहनेलगा हे अपवित्र हो, मेरे घर से निकलो, इत्यादि कटुवचन सुन लक्ष्मण क्रोधित हुये। और उसदुर्जन ब्राह्मण के पैर ऊँचेकर पृथ्वीपर उल्टाकर घुमाया, तब श्रीराम परम दयालु लक्ष्मण से मना किया, हे भाई! यह क्या? ऐसे दीन गरीब को मारने से क्या? इसको छोड देओ। इसको मारने से बडा अपयश होगा। जिनशासन मे शूरवीर ऐसे को नहीं मारते। यति, ब्राह्मण, गाय, पशु, स्त्री, बालक, वृद्ध। यह दोषो से सहित हो तो भी मारने योग्य नहीं है। इस प्रकार राम ने भाई को समझाया, ब्राह्मण को छुडाया। और श्रीराम लक्ष्मण को आगेकर सीता सहित कुटिया से निकले। आप जानकी से कहते है, हे प्रिये! धिक्कार है नीच पुरुषो की सगति को जिससे हमारे मन मे विकार का कारण, महापुरुषो को त्याज्य हैं कठोर वचन, सुनने से तो महाभयानक वन मे वृक्षो के नीचे रहना अच्छा है, भोजन पानी के बिना प्राण जायें तो अच्छा है परतु दुर्जनो के घर मे एकक्षण नहीं रहना। नदियों के तट पर, पर्वतोंकी गुफाओं मे रहेगे लेकिन ऐसे दुष्टो के घर में नहीं जायेंगे। इस प्रकार दुष्टपुरुषो की संगति को छोडते हुये ग्राम से

निकले, रामादि वन मे गये। वहाँ वर्षाऋतु का समय आया। पूर्ण आकाश को श्याम करता हुआ मेघ, बादलोकी गर्जनासे पर्वतकी गुफाये शब्दरूप हो गई, ग्रह नक्षत्र ताराओ को ढककर बिजली चमक रही हैं श्याम मेघ आकाश में अधकार करता हुआ जल की धाराओ से मानो सीता को स्नान ही कराते है

तब श्रीराम लक्ष्मण दोनो भाई वनमे एक बहुत बडा बडका वृक्ष उसमे घर समान बडी कोटर उसमे राम लक्ष्मण सीता बैठे। सो उसमे एक दभकर्णयक्ष उसवृक्ष की कोटर मे रहता था, वह राम लक्ष्मण को महातेजस्वी रूपवान जान अपने स्वामी को नमस्कार कर कहा, हे नाथ! कोई स्वर्ग से आकर मेरे स्थान पर ठहरे है, उन्होने अपने तेज से मुझे मेरे स्थान से दूर किया है, वहाँ मै जा सकता नहीं हूँ, तब यक्षके वचन सुनकर यक्षाधिपति अपने देवो सहित बटका वृक्ष जहाँ राम लक्ष्मण थे वहाँ आया। दूर से ही दोनों भाई को महारूपवान देख अवधिज्ञान से जाना कि यह बलभद्र और नारायण शलाकापुरुष है। तब वह इनके पुण्य के प्रभाव से अतिवात्सल्य रूप हुआ, क्षणमात्र मे महामनोज्ञ नगरी की रचना की वहाँ सुख से सोते हुये, प्रात काल सुन्दर गीतो की ध्वनि से राम लक्ष्मण सीता जगे, रत्नजडित सेजपर आपको देख, और मन्दिर अतिमनोहर बहुतखड का अतिउज्ज्वल और सम्पूर्ण सामग्री से पूर्ण एव सेवक बहुत आदर, विनय को करने वाले, नगर मे मधुर शब्दो की ध्वनि एव कोट दरवाजो से सुशोभित सुन्दरभवन को देखकर भी पुरुषोत्तम महानुभाव राम का मन आश्चर्य को प्राप्त नहीं हुआ। यह क्षुद्र पुरुषो की चेष्टाये है, जो थोडी वस्तु को देखकर भी आश्चर्य से चकित होते है। सभी वस्तुओ से सहित इसनगर मे राम लक्ष्मण सीता यहाँ निवास करते है। मानो ये देव ही है। यक्षाधिपति ने राम के लिये नगरी की रचना की इसलिये पृथ्वीपर रामपुरी प्रसिद्ध हुई, उस नगरी मे सुभट मत्री द्वारपाल नगर के लोग अयोध्या समान हुये राजाश्रेणिक गौतमस्वामी से पूछते हैं, हे प्रभो! यह तो देवकृत नगरी में विराजे है, और ब्राह्मण की क्या बात यह बताओ, तब गणधरबोले! वह ब्राह्मण दूसरे दिन दातेडा हाथ मे लेकर लकडी काटने वनमे गया। लकडी ढूढते ढूढते अकस्मात ऊँचे नेत्र किये, पास ही एक महासुन्दर नगरको देख चकित हुआ। अनेकरग की ध्वजाये महलोंपर लहराती हुई देखी, और एक महा राजमहल उज्जवल मानो कैलाशपर्वत का बालक ही है। ऐसा देख मनमें विचारने लगा, कि यह अटवी हिरणो से भरी हुई थी यहाँ मैं लकडी लेने प्रतिदिन आता हूँ, यहाँ

रत्नाचल समान सुन्दर भवनो सहित नगरी कहॉ से बसी। जल के भरे सरोवर कमलो सहित हैं। मैंने अब तक कभी देखे नहीं, महा मनोहर बगीचे जिसमें मनुष्य क्रीडाकर रहे है, चैत्यालय शिखर एवं ध्वजाओ से सुशोभित है, और हाथी घोडे गाय भैस सब सुख से विचरण कर रहे हैं, घटादि बज रहे है, यह नगरी स्वर्ग से आई है, या पाताल से निकली है। कोई महाभाग्य के निमित्त रचाई है, या देवमाया है। यह गन्धर्वो का नगर है क्या मै पित्तसे व्याकुल हो गया हूँ। या कोई मेरेमृत्यु का चिन्ह दिख रहा है, ऐसा विचारकर वह ब्राह्मण आश्चर्य को प्राप्त हुआ। वहॉ एक स्त्री अनेक आभूषण पहने हुये देखी उसके पास जाकर पूछा, हे देवी! यह किसकी नगरी है? तब वह कहती है, यह रामकी नगरी है, तुमने क्या नहीं सुना? यहॉ का राजा श्रीराम उनकेभाई लक्ष्मण और रानी सीता, नगरके मध्य मे बहुत बडा राजभवन है वहॉ राजा पुरुषोत्तम विराजमान है, ऐसे राजा के दर्शन लोकमे दुर्लभ है, उन्होने मनवाच्छित द्रव्यके दानसे सब दरिद्री लोगों को राजा समान बना दिये। तब ब्राह्मणबोला, हे सुन्दरी! मै कैसे राजा को देखूँ ऐसा उपाय बता, लकडी का बोझा नीचे डाल हाथजोड उसके चरणों मे गिरा। तब वह सुमायानाम की यक्षणी दया से कहती है, हे विप्र! इसनगरी के तीन दरवाजे है, वहॉ देव भी प्रवेश नहीं कर सकते, बडे बडे योद्धा रक्षक बैठे है, रात्रि मे जगते है, उनके मुह सिह, गज व्याध्र समान हैं। उनको देख सभी मनुष्य डरते है। यह पूर्व का दरवाजा है, उसके पास बडे बडे भगवान के मन्दिर है। रत्नो के ऊँचे ऊँचे तोरण, देवोद्वारा बदनीय अरहतबिंब विराजमान है, वहॉ भव्यजीव सामायिक पूजा स्तवनादि करते है, और जो णमोकार मत्र भाव सहित पढते है, वही अन्दर प्रवेश कर सकते है। जो पुरुष अणुव्रत का धारी शील गुण से शोभित है, उसको राम परमप्रीति से देखकर प्रसन्न होते है। यह वचन यक्षणी के अमृत समान सुन ब्राह्मण परमहर्ष को प्राप्त हुआ, धन प्राप्ति का उपाय जानकर यक्षणी की बहुत स्तुति की। लोभसे चरित्रशूरमुनि के पास जाकर हाथजोड नमस्कार कर श्रावक की क्रियाओ के भेद पूछे, तब मुनिराज ने ब्राह्मण को श्रावक का धर्म बताया, और चारों अनुयोगो का रहस्य कहा, वह ब्राह्मण धर्म का रहस्य जान, मुनि की स्तुति करता है, हे नाथ! आपके उपदेश से मुझे ज्ञानप्राप्त हुआ, जैसे प्यासे को शीतल जल, गर्मी की धूप से तपे हुये, पथिक को छाया, और भूखे को भोजन, रोगी को औषधि मिले, ऐसे मैं कुमार्ग में लीन था, सो मुझे आपका उपदेशरूपी रसायन

मिला, जैसे समुद्र मे डूबते हुये को जहाज मिल जाय। मैंने यह जैनधर्म का मार्ग सब दुखों को दूर करने वाला, आपके प्रसाद से प्राप्त किया। तीनलोक में मेरे आपके समान कोई मित्र नहीं, ऐसा कह मुनिके चरणोंमें नमस्कार कर ब्राह्मण अपने घर गया।

अतिहर्ष से मन फूल रहा है, सो आकर स्त्रीको कहा हे प्रिये! मैने आज गुरु के मुख से अद्भुत जैनधर्म सुना है। जो तेरे बापने अथवा मेरे बापने तथा पिताके पिताने भी नहीं सुना होगा, और हे ब्राह्मणी मैने एक अनोखा वन देखा उसमें एक महामनोहर नगरी देखी, उसे देख ऑखे चकित होती है, परन्तु मेरे गुरु के उपदेश से मुझे आश्चर्य नहीं होता है। तब ब्राह्मणी ने कहा, हे विप्रदेव! तुमने क्या देखा, सुना, वह कहो? तब ब्राह्मण ने कहा, हे प्रिये! मै हर्षसे कहने मे समर्थ नहीं। पुन ब्राह्मणी ने आदर से बार बार पूछा तो ब्राह्मण ने कहा हे प्रिये! मै लकडियॉ लाने वनमे गया था, वहॉ वनमे एक मनोज्ञ रामपुरी देखी, उस नगरी के पास उद्यान मे एक सुन्दर नारी देखी, वह कोई देवता होगी, मैने पूछा यह नगरी किसकी है, तो उसने कहा रामपुरी है यहॉ का राजा श्रीराम श्रावको को मनवाच्छित दान देते है, तब मैने मुनि के पास जाकर जैनधर्म का उपदेश सुना, मेरी आत्मा बहुत तृप्त हुई, मिथ्यात्व सहित मै दुखी था, सो अब वह दुख गया। जिनधर्म को प्राप्तकर मुनिराज मुक्ति के अभिलाषी महातप करते है। वह अरहत का धर्म तीनलोक मे एक महानिधी, सो मैने प्राप्त किया। मुनिसे जैसा उपदेश सुना वैसा ब्राह्मणी को कहा, तब ब्राह्मणी ने कहा, मैने भी आपके प्रसाद से जैनधर्म की रुचि पाई, जैसे कोई विषफल चाहने वाले को महानिधी मिले। ऐसे ही आप लकडियो को लाने गये धर्मकी इच्छा से रहित फिरभी आपको अरहंत प्रभुका धर्म मिला, अभीतक आपने धर्मको जाना नहीं था, अपने आगन मे आये महापुरुषो का आपने निरादर किया। उपवासादि तप सहित दिगम्बर साधुओं को कभी आहार नहीं दिया। इन्द्रादि देवो से वदनीय अरहतप्रभु को छोडकर व्यन्तर ज्योतिषियो को प्रणाम किया। जैनधर्म रूपी अमृत को छोड अज्ञान के उदय से पापरूपी विषका ही सेवन किया। मनुष्य ने शरीररूपी रत्नद्वीप को प्राप्तकर साधुओ की परीक्षा ली और धर्मरूपी रत्नको छोड विषयरूपी कांचके टुकडे को स्वीकार किया। और जो सर्व भक्षी रात दिन भोजन करने वाले अव्रती कुशील उनकी सेवा की। भोजन के समय अतिथि आये और जो दुर्बुद्धि अपने वैभव

प्रमाण भोजनादि नहीं दे तो उसके धर्म नहीं। अतिथि कहते है विना तिथि व निमंत्रण के निष्पृह धन रहित साधु जिनके कोई पात्र नहीं। करपात्र में ही भोजन करते वह निर्ग्रंथ आप तिरते और दूसरों को भी तारते, अपने शरीर से भी निष्पृह किसी वस्तु में उनको लोभ नहीं। वे निष्परिग्रही मुक्ति के कारण, दशधर्म से शोभित है। इस प्रकार ब्राह्मणी ने ब्राह्मण को धर्म का स्वरूप कहा। तब वह सुशर्मा ब्राह्मणी मिथ्यात्व रहित हुई। जैसे चन्द्रमा के रोहणी, बुद्ध के भरणी, ऐसे कपिल के सुशर्मा ब्राह्मणी सुशोभित हुई। ब्राह्मण ब्राह्मणीको उसीगुरु के पास ले गया, स्वय ने जो व्रत लिये थे वह स्त्री को भी श्राविका के व्रत ग्रहण कराये। कपिल को जैनधर्म का अनुरागी जान अनेक ब्राह्मण समता धारी हुये।

अथानंतर मुनिसुव्रतनाथ का धर्म प्राप्तकर अनेक सुबुद्धि श्रावक श्राविका हुये। जो कर्म के योग से प्रमादी जीव थोडी ही आयु मे पापकर घोर नरक मे जाते है। कोई उत्तम ब्राह्मण सभी परिग्रह का त्याग कर मुनि हुये, वैराग्य से पूर्ण मन मे चितवन करते हैं, कि यह जिनेन्द्र का मार्ग अन्य जन्म में प्राप्त नहीं किया। अब महानिर्मल ध्यानरूपी अग्नि से कर्मरूपी सामग्री को भावरूपी घृत से होम करेगे। जिनको परम वैराग्य हुआ वही मुनि बने। और कपिल ब्राह्मण महा क्रियावान श्रावक हुआ। एक दिन ब्राह्मणी को धर्म की रुचीवान जान कहता है—हे प्रिय! श्रीरामके दर्शन करने राम पुरी चले। कैसे है राम? महापराक्रमी सभी जीवोपर दयालु, भव्यजीवोपर वात्सल्यमयी है। जो प्राणी आशा मे तत्पर, दरिद्ररूपी समुद्र मे मग्न, पेटपूर्ति मे असमर्थ, ऐसे दरिद्री मनुष्य को दरिद्रता दूर करने के लिये परमसम्पदा को देते है। इस प्रकार रामकी कीर्ति पृथ्वीपर महाआनन्द को देने वाली फैल रही है। इसीलिये हे प्रिये! उठो भेंट लेकर चलते है। मै सुकुमार बालक को कधे पर लूंगा, ऐसे ब्राह्मणी को कहकर दोनो हर्ष से भेट लेकर रामनगर की ओर चलें। उन्होने मार्ग मे भयानक नागकुमारियॉ देखी, पुन: व्यन्तर विकराल मुख वाले, अट्टहास करते देखे, इत्यादि भयानक रूपदेखे तो भी ये दोनो निडर होकर भगवान की स्तुति करते रहे। श्रीजिनेश्वर भगवान को निरन्तर मेरा मन वचन काय से नमस्कार हो। कैसेहैंजिनेश्वर? तीनलोक में पूज्य ससाररूपी कीचड से पार उतारने वाले परम कल्याण को देने वाले, यह स्तुति पढते हुये दोनों चले जा रहे हैं। इनको जिनभक्त जान यक्ष शांत हुये और ये दोनो जिनालय मे गये। दोनो हाथजोड चैत्यालय की प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्र भगवान को

नमस्कार कर स्तोत्र पढे। हे नाथ! महाकुगति को देने वाला मिथ्यात्व, उसे छोडकर बहुत दिनो में आपका शरण ग्रहण किया, चौबीस तीर्थंकर भूतकाल के, चौबीस तीर्थंकर वर्तमानकाल के और चौबीस तीर्थंकर भविष्यकाल के उनको मैं नमस्कार करता हूँ। पॉचभरत, पॉचऐरावत, पॉचविदेह ये पन्द्रह कर्मभूमियों में जो तीर्थंकर हुये है, अब हो रहे है, और आगे होवेगें, उन सबको हमारा त्रियोग से नमस्कार हो। और जो ससार समुद्र से तिर गये, दूसरे को तार रहे है, ऐसे श्रीमुनिसुव्रतनाथ को नमस्कार हो। इस प्रकार स्तुतिकर अष्टाग दण्डवत् नमस्कार किया। पुन कपिलब्राह्मण, स्त्री सहित श्रीराम को देखने चले, मार्ग मे बडे बडे भवन ब्राह्मणी को दिखाये। और कहा ये कुदन के पुष्प समान धवल सर्व मनोकामना पूर्ण नगरीके मध्य श्रीराम के मन्दिर है। इनसे यह नगरी स्वर्ग समान दिखती है। इस प्रकार बात करता हुआ ब्राह्मण राजभवन मे गया। वहा दूर से ही लक्ष्मण को देख व्याकुल हुआ, मन मे सोचता है, मै अज्ञानी दुष्ट वचनो से इनको दुख दिया, पापिनी जिह्वा मेरी, महादुष्ट कानो को कटुलगे ऐसे वचन कहे, अब कहॉ जाऊँ? क्या करूँ? पृथ्वी में छिद्रहो तो बैठजाऊँ? अब मुझे किसका शरण है? अगर मै जानता कि येही यहॉ नगरी बसाकर रह रहे है। तो मै देश त्यागकर उत्तरदिशा को चला जाता। इसप्रकार दुखी होकर ब्राह्मणी को छोड ब्राह्मण भाग गया, तब लक्ष्मण ने देखा। और हसकर लक्ष्मण ने रामसे कहा, वह ब्राह्मण आया है, और मृगके समान व्याकुल होकर मुझे देख भाग रहा है। तब राम बोले उसको विश्वास देकर शीघ्र लाओ तब सभी सेवक दौडे और दिलासा देकर लाये। डगमगाता कापता हुआ पास आया, भयछोड दोनो भाईयो के आगे भेटरख स्वस्ति ऐसा शब्द कह स्तवन किया। रामबोले, हे द्विज! तुमने अपमानकर हमको अपने घरसे निकाला था अब क्यो पूजते हो। तब ब्राह्मण बोला, हे देव! आप प्रच्छन्न महेश्वर हो, मैंने अज्ञान से आपको नहीं जाना इसलिये अनादर किया, जैसे—राख से दबी अग्नि जानी नहीं जाती, हे जगत्के नाथ! इसलोक की यही परम्परा है, धनवान को पूजते है। सूर्य शीतऋतु मे ताप रहित होता है, तो उससे कोई नहीं, दुखी होता। अब मैने जाना आप महापुरुषोत्तम हो, हे पद्मलोचन! यह लोग द्रव्यको पूजते है, पुरुष को नहीं। जो धनसे युक्त है उसे ही लोग मानते हैं। जो परम सज्जन है, और धन रहित है तो उसे, लोग आदर नहीं करते हैं। तब राम बोले, हे विप्र! जिसके धन उसके मित्र, जिसके धन उसके भाई, जिसके

धन, वही पडित, धनके बिना न मित्र न भाई, जो धनसे सहित है, वे परजन भी स्वजन हो जाते है। और धनवहीं जो धर्मसे युक्त, धर्मवहीं जो दयासे युक्त, दयावही जो मॉसभोजन का त्याग, जब सब जीवोका मांस छोडा तब अभक्ष का त्यागहुआ। मास के त्याग बिना अन्य त्याग की शोभा नहीं। यह वचन रामके सुन कपिल ब्राह्मण ने प्रसन्न होकर कहा, हे देव! आप समान महापुरुष ही पूज्य है, उनका भी मूढ अज्ञानी लोग अनादर करते है। आगे सनत्कुमार चक्रवर्ती हुये, बडी ऋद्धि के धारी महारूपवान, उनका रूप देखने देव आये थे, वह मुनि होकर आहार के लिये नगर मे गये, महा आचार क्रिया मे प्रवीण, सो निरतराय आहार प्राप्त नहीं हुआ। एक दिन विजयपुरनगर मे एकनिर्धन मनुष्य ने आहार दिया, उनके यहाँ पचाश्चर्य हुआ। हे प्रभो! मै मदभाग्य आप समान महापुरुषो का आदर नहीं किया, इसलिये अब मेरा मन पश्चातापरूपी अग्निसे जल रहा है। आप महारूपवान आपको देख महाक्रोधी का क्रोध भी चला जाता है। सभी आपके रूपको देख मोहित हो जाते है, ऐसा कह कपिलब्राह्मण रोने लगा। तब श्रीराम ने शुभ वचन कहकर सन्तोष दिया और सुशर्मा ब्राह्मणी को जानकी ने मीठे वचनो से सन्तुष्ट किया। पुन· रामकी आज्ञा पाकर स्वर्ण के कलशो से ब्राह्मण व ब्राह्मणी को स्नान करा करअति आदरसे भोजन कराया। अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण दिये बहुत धन दिया सो लेकर कपिल अपनी पत्नि के साथ अपने घर आ गया। मनुष्यो को आश्चर्य करनेवाला धन इसके घर मे हुआ। यद्यपि इसके घर मे सभी प्रकार की सामग्री पूर्ण है फिर भी इसका मन घर मे आसक्त नहीं है, मनमे बार बार चिन्तवन करता है, कि पहले मै तो काष्ठ के भार को लाने वाला दरिद्री था लेकिन अब श्रीराम देवने मुझे तृप्त किया। इस गॉवमे मै रूखा शरीर से युक्त एव आभूषणो से रहित था, सो राम की कृपाने मुझे कुबेर समान बनाया, चिन्ता व दुख से रहित किया। मेरी कुटिया जीर्ण शीर्ण अनेक छिद्रोवाली अशुचि, पक्षियो की बींट से लिप्त थी, अब रामके प्रसादसे अनेक खड के महल हुये। बहुत धन गाय भैसादि किसी वस्तु की कमी नहीं, हाय हाय मैं दुर्बुद्धि ने क्या किया? वे दोनों भाई चन्द्रमा समान प्रसन्न बदन मेरे घर आये थे, गर्मी की वेदना से प्यासी सीता सहित, उनको मैने घर से निकाले, इस बात की मेरे हृदय मे महाशल्य है, जब तक मैं घर मे रहता हूँ, तब तक यह खेद मिटेगा नहीं। इसलिये घर एवं आरम्भ परिग्रह का त्यागकर जिनदीक्षा को धारण करूँ। जब यह विचार किया

तब इसके वैराग्य को जान सभी कुटुब के लोग और सुशर्मा ब्राह्मणी रोने लगे। तब कपिल सबको शोकसागर मे मग्न देख निर्ममत्व बुद्धि से कहने लगा। हे प्राणियों! परिवार के प्रेम से यह अज्ञानी जीव ससार रूपी अग्निमें जलता है, तुम क्या नहीं जानते हो। ऐसा कहकर महाविरक्त हो दुख से मूर्च्छित जो स्त्री कुटम्ब को छोडकर अठारह हजार गाय और रत्नो से भरा घर और घर के बालक स्त्री को सौप, दिगम्बर मुनि बने, स्वामी आनन्दमती के शिष्य हुये। कैसे है आनन्दमती? जगत मे प्रसिद्ध तपोनिधि शील के सागर है। इन कपिल ने गुरु की आज्ञा प्रमाण महातप किया। सुन्दर चारित्र को धार कर परम तप मे लीन है मन उनका। वैराग्य विभूति और साधुपद की शोभा से मंडित है शरीर उसका। जो विवेकी कपिलमुनि की कथा पढें पढाये सुने सुनाये उसे अनेक उपवासो का फल होता है व सूर्य समान प्रभा को प्राप्त होता है। ऐसे धर्मको धारणकर, सभीको मुक्ति मार्ग मे लगना चाहिये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे देवोद्वारा नगरका बसाना एव कपिलब्राह्मणका वैराग्य वर्णन करनेवाला पैतीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-36

लक्ष्मण को वनमाला की प्राप्ति

अथानतर वर्षाऋतु पूर्णहुई शरतऋतु आई, दशो दिशाये उज्वल हुई, तब वह यक्षो का अधिपति श्रीराम से कहने लगा। कैसे है श्रीराम? चलने का है मन उनका। तब यक्षने कहा, हेदेव! हमारी सेवा में कोई चूक हुई हो तो आप क्षमा करे, आप समान महापुरुषो की सेवा करने मे कौन समर्थ है। तब राम ने कहा—हे यक्षाधिपते! तुम सब बातो के योग्य हो, और तुमने पराधीन होकर हमारी सेवा की सो क्षमा करना। तब इनके उत्तम भाव देखकर अतिहर्षित हुआ, नमस्कार कर स्वयंप्रभ नाम का हार श्रीराम को भेट किया, और महा अद्भुत मणियो के कुंडल चाद सूर्य समान लक्ष्मण को भेट किये एवं सीता को कल्याणनामा चूडामणी महा दैदीप्यमान दिया। तथा महामनोहर मनवाच्छित मधुरध्वनी करने वाली देवोपनीत वीणा जो अपनी इच्छासे चले ऐसी दी। और यक्षराज ने उस नगरी को समेट

लिया, अब राम लक्ष्मणादि सबको जानेका यक्षने बहुत शोक किया, और श्रीरामचन्द्रजी यक्ष की सेवा से अतिप्रसन्न होकर आगे चले, देवो समान क्रीडा करते अनेक कथाओ मे आसक्त नानाप्रकार के रसो के भोक्ता, पृथ्वीपर अपनी इच्छा से चलते, मृगराज एव गजराजो से भरे वनको पारकर विजयपुरनगर पहुँचे। उस समय सूर्य अस्त हुआ अन्धकार फैला आकाश में नक्षत्र के समूह प्रगट हुये, तब वह नगर से उत्तरदिशा की तरफ न अतिपास, न अतिदूर, ऐसे भयानक उधान मे रहे। विजयपुर नगर का राजा पृथ्वीधर, उसके इन्द्राणी रानी संपूर्ण गुणो से मडित, उसकी वनमालानाम की पुत्री महासुन्दर वह बाल अवस्था से ही लक्ष्मण के गुण सुनकर आसक्त हुई थी। पुन· सुना की, दशरथ ने दीक्षा ली, एव केकई के वचन से भरत को राज्य दिया, राम, लक्ष्मण परदेश निकले हैं, ऐसा विचारकर राजा पृथ्वीधर ने राजकुमारी वनमाला का इन्द्रनगर के राजा का पुत्र बालिमित्र को देनी की, यह वृतात वनमाला ने सुना, तब मन में निश्चय किया कि फासी लगाकर मरना अच्छा, परन्तु लक्ष्मण को छोडकर अन्यपुरुष का सम्बन्ध शुभ नहीं, यह विचार कर सूर्य से कहा। तुम अस्त हो जाओ, शीघ्र ही रात्रि करो। अब दिन का एकक्षण भी मुझे वर्षसमान लग रहा है, सूर्य अस्त हुआ। राजपुत्री का उपवास है सध्या के समय माता पिता की आज्ञा लेकर श्रेष्ठ रथपर चढ वनयात्रा का बहानाकर रात्रि मे वहाँ आई, जहाँ राम लक्ष्मण ठहरे थे। वनमाला ने आकर उसीवन में जागरण किया। सभी लोग सो गये, तब वनमाला धीरे धीरे पैर रखती हुई, वनके हिरण समान, अपने डेरा स्थान से निकलकर वन मे चली, यह महासती पद्मिनी उसके शरीर की सुगन्धता से वन सुगन्धित हो गया। तब लक्ष्मण विचारने लगे कि यह कोई राजकुमारी महाश्रेष्ठ मानो ज्योति की मूर्ति है लेकिन वह वनमाला शोक के कारण मनसे अतिव्याकुल हो अपघात कर मरना चाहती है, पर मैं इसकी चेष्टा को छिपकर देखू। ऐसा सोचकर छिपकर बडके वृक्ष के नीचे बैठ गया, मानो कौतुक युक्त देवकल्पवृक्ष के नीचे बैठे। उसी बड वृक्ष के नीचे वनमाला आई, जल से कपडा गीलाकर वस्त्रकी फासी बनाई और महामनोहर मधुर ध्वनि से कहती हैं। हे इसवृक्ष के निवासी देवता? कृपाकर मेरी बात सुनो! कदाचित इसवन में विहार करते हुये लक्ष्मण आये तो तुम ऐसे कहना—हो लक्ष्मण! आपके वियोग से महादु खित वनमाला आपके गुणो में मन लगाकर बडके वृक्षपर वस्त्रकी फांसी लगाकर मरण को प्राप्त

हुई है हमने यह देखा। और आपको यह सन्देशा कहा है कि इस भव मे तो आपका मुझे सयोग नहीं मिला, लेकिन परभव मे आपही मेरे पति होना, यह वचन कहकर वृक्षकी शाखा से फासी लगाकर स्वय वनमाला राजपुत्री फासी लेने लगी, उसी समय लक्ष्मण ने कहा, हे मुग्धे! मेरी भुजाओ से आलिगन योग्य तेरा कंठ, उसमे फासी क्यो डालती हो? हे सुन्दरवदनी! परमगुणवान, मैं लक्ष्मण हूँ, जैसा तेरे सुनने मे आया है वैसा देख, और कोई भी शका हो तो निश्चय कर ले। ऐसा कहकर उसके हाथो से फांसी ले ली। तब वह लज्जा सहित प्रेमपूर्वक लक्ष्मणको देख मोहित हुई, कैसाहैलक्ष्मण? जगत के नेत्रों को हरण करनेवाला रूप उसका। परम आश्चर्य को प्राप्त हुई और मन मे सोचा कि किसी देवने मेरेपर उपकार किया है। मेरी अवस्था देख दया को प्राप्त हुआ होगा। जैसे मैने सुना था, वैसे ही भाग्य से पति प्राप्त हुये। उन्होने मेरे प्राण बचाये ऐसा चिन्तवन करती हुई वनमाला लक्ष्मण के मिलन से अत्यन्त अनुराग को प्राप्त हुई।

अथानतर महासुगन्ध कोमलपत्तो के बिस्तरो पर श्रीरामचन्द्रजी सोये थे, उन्होने ऑख खोली तो लक्ष्मण को नहीं देख जानकी से पूछा, हे देवी! यहॉ लक्ष्मण नहीं दिखता है। रात्रिके समय मेरेसोने के लिये पुष्प पल्लवो को बिछाकर आप यहीं बैठा था, सो अब नहीं दिखता है। तब जानकी ने कहा, हे नाथ! ऊँची ध्वनि से बुलाईये, तब राम बोले हे भाई! हे लक्ष्मण! हे बालक! कहॉ गया शीघ्र ही आओ, तब भाई बोले हे देव! आया, वनमाला सहित बडे भाई व भावज के निकट आया। अर्धरात्रि के समय मे चन्द्रमा का उदय हुआ मन्द, सुगन्ध, शीतल पवन चलने लगी उस समय वनमाला ने कोमल हाथोको जोड लज्जा से मुख नीचाकर महाविनय से श्रीराम और सीता के चरणो मे नमस्कार किया, सीताने लक्ष्मणसे कहा हो राजकुमार! तुमने चन्द्रमा की तुलना की। तब लक्ष्मण लज्जा से नीचे झुक गये। श्रीराम जानकीसे कहने लगे, तुमने यह कैसे जाना। तब प्रिया ने कहा हे स्वामिन्! जिससमय चन्द्रकला सहित चन्द्रमा का उद्योत हुआ, उसी समय कन्या सहित लक्ष्मण आये। सीता के यह वचन सुन श्रीराम अतिप्रसन्न हुये।

अथानंतर वनमाला महाआश्चर्य से युक्त प्रसन्न चित्त हो सीता के पास बैठी, और ये दोनो भाई महासुन्दर देवो समान निन्द्रा रहित होकर सुख से कथा वार्ता करते बैठे। उधर वनमाला की सखी ने जागकर देखा तो सेज सूनी हैं, राजकुमारी नहीं, तब भय से व्याकुल होकर रोने लगी, उसके रोने की आवाज

से सभी योद्धा जग गये, आयुद्ध लेकर घोडेपर चढ दशो दिशाओ मे दौडे कुछ लोग पैरो से भागे। बरछी और धनुष हाथ मे लेकर दशों दिशाये ढूढी, राजा का भय और प्रेम से ऐसे दौडे मानो हवा के बालक ही है। कोई इसतरफ दौडकर आये, राजकुमारी वनमाला को वनमे राम लक्ष्मण सीता के पास बैठी देख बहुत हर्षित होकर, राजा पृथ्वीधर के पास जाकर बधाई दी और कहा, हे राजन्! जिनको पाने के लिये बहुत यत्न किये तो भी नहीं मिले, वे सहज ही यहाँ आये है। हे प्रभो! आपके नगर मे महानिधी आई है बिना बादल आकाश से बारिश हुई खेतो मे बिना बीज डाले अन्न उत्पन्न हुआ। आपके जमाई लक्ष्मण नगर के निकट ठहरे है। उन्होने वनमाला को प्राणत्याग करते हुये बचाया। और राम आपके परम हितु, सो सीता सहित विराजे है, जैसे शचि सहित इन्द्र। यह वचन राजा ने सेवको से सुनकर महाहर्षित हो, एकक्षण मूर्च्छित हुये, पुन परम आनन्द को प्राप्त हो सेवको को बहुत धन दिया। और मन मे सोचा की मेरीपुत्री का मनोरथ सिद्ध हुआ, जीवन मे धन की प्राप्ति, इष्ट का समागम, ये सुख के कारण पुण्य के योग से प्राप्त होते है। जो वस्तु सैकडो योजन दूर और सुनने मे भी नहीं आये ऐसी वस्तु पुण्यवान जीवो को क्षणमात्र मे प्राप्त होती है। और जो प्राणी दुख को भोगने वाले पुण्य हीन हैं उनके हाथ मे इष्ट वस्तु आई हुई भी चली जाती है। पर्वत के मस्तकपर तथा वनमे सागरमें पथमे पुण्याधिकारी जीवोंको इष्ट वस्तु की प्राप्ति अपने आप होती है। ऐसा मन मे चिन्तवनकर अपनी रानी से सब वृतान्त कहा, रानी बार बार पूछती है यह बात सत्य है कि स्वप्न है। सूर्य का उदय हुआ तब राजा प्रेम के भरे सर्वपरिवार सहित हाथीपर बैठकर रामसे मिलने आये। और वनमाला की माता आठ पुत्रियो के साथ पालकीपर चढकर आई। राजा ने दूर से ही श्रीराम को देखकर, नेत्रकमल, फूल गये और हाथीसे उत्तर समीप आये, और राम लक्ष्मण से मिले, उनकी रानी सीता के चरण स्पर्शकर, कुशल मगल पूछा। वीणा बासुरी मृदगादि बाजे बजे, बन्दीजन विरद बखानते रहे, महा उत्सव हुआ। राजाने लोगों को बहुत दान दिया, नृत्य किया, दशो दिशाये नृत्य गान से गूज उठीं, श्रीराम लक्ष्मण सीताको स्नान कराकर भोजन कराया। पुनः हाथी, घोडे, रथोंपर चढे अनेक सामन्त और हिरण समान कूदते हुये पयादो से युक्त, श्रीराम लक्ष्मण सीता सहित हाथी पर बैठकर नगर में प्रवेश किया, राजा ने नगर को सजाया, मगल शब्द हुये, राम लक्ष्मण सीता ने अमूलय वस्त्राभूषण पहने।

दोनों भाई चाद सूर्य समान उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। सौधर्म ऐशान समान जानकी सहित लोगो को आश्चर्य कराते हुये राजमन्दिर में पधारे। श्रेष्ठ सुगन्धित मालाओ की सुगन्ध से युक्त महा विनयवान चन्द्रवदन इनको देख लोग मोहित होते है। कुबेरसमान वह सुन्दरनगर अपनीइच्छा से परमभोग भोगते रहे, इसप्रकार सुक्रियाओ मे मन है उनका महागहन वनमे प्राप्त हुये भोगो का विलास करते हुये धर्मका अनुभव करते है। सूर्य समान है ज्योति उनकी वे पापरूप अंधकार को नाशकरते हुये, निज पदार्थ के लाभ से आनन्दरूप है। पुण्यके उदयसे वनमे भी शान्ति है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे वनमालाका लाभवर्णन करनेवाला छत्तीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-37

अतिवीर्य का भरत के साथ युद्ध आरम्भ और राम लक्ष्मण से पराजित हो दीक्षा ग्रहण करना

अथानतर एक दिन श्रीराम सुख से विराजमान थे और पृथ्वीधर राजा भी पास ही बैठे थे। उससमय एक पुरुष दूरसे चलकर आया और नमस्कार कर पत्र दिया, राजा पृथ्वीधर ने पत्र लेकर लेखक को दिया, लेखक ने पत्र पढा उसमे इसप्रकार लिखा था कि इन्द्र समान उत्कृष्ट प्रभावी अनेकराजा नमस्कार करते है,, श्रीनन्द्यावर्तनगर का स्वामी, महापराक्रमी, सुमेरुसमान अचल, सब राजाओं का राजा, महाप्रताप से सभी पृथ्वीके राजाओ को वश किया, महानीतिवान श्रीमान पृथ्वीका नाथ राजाओ का इन्द्र अतिवीर्य, वह विजयनगर में पृथ्वीधर राजा को कुशल पूर्वक आज्ञा करते है, जो पृथ्वीपर सामन्त है वह भडार एव सर्वसेना सहित मेरे पास आये है, आर्यखण्ड एव म्लेच्छखड के राजा मेरी आज्ञा को सिरपर धारते हैं। अजनगिरी समान आठसौ हाथी, पवनपुत्र समान तीनहजारघोडे और अनेक पयादों सहित महातेजस्वी मेरे गुणो से खींचा हुआ ऐसा राजा विजयशार्दूल आया है, और अगदेश के राजा मृगध्वज, कलमकेशरी प्रत्येक

पांचहजारघोडे छहसौ हाथी, और रथ पयादे सहित आये एवं पांचालदेश का राजा प्रोढ, न्यायशास्त्र मे प्रवीण हजारहाथी, सातहजार घोडे रथ पयादो सहित आये हैं। मगधदेश का राजा अनेक राजाओ सहित आठहजार हाथी अनेकरथ तुरगों सहित आये, और म्लेच्छो का अधिपती समुद्र, मुनिभद्र, साधुभद्र नन्दनादि राजा मेरे पास आये है। दुष्कर पराक्रमी राजा सिहवीर्य आये है। राजा बग और सिहरथ ये दोनों हमारे मामा बडी सेना से आये हैं। और वत्सदेश का राजा मारुदत्त, राजासुवीर, राजा प्रोष्ठल, दशअक्षौहणी दल सहित आये उन राजाओ सहित मै बडे कटक के साथ अयोध्या के राजा भरतपर चढा हूँ। अब तेरे आने की राह देख रहा हूँ। इसलिये आज्ञापत्र पहुँचते ही प्रयाणकर शीघ्रआओ विलम्ब नहीं करना, जैसे किसान बारिश को चाहता है, वैसे मै आपके आगमन को चाहता हूँ। इस प्रकार पत्र लेखक ने पढा तब पृथ्वीधर ने कुछ कहने का विचार किया, इसके पहले ही लक्ष्मण बोले, अरे दूत राजा भरत और अतिवीर्य के विरोध किस कारण से हुआ। तब वायुगत दूतने कहा—सुनो। एक श्रुतबुद्धिनाम के दूत को हमारे राजाअतिवीर्य ने भरत के पास भेजा, सो जाकर भरत से कहा, इन्द्रसमान राजा अतिवीर्य का मै दूत हूँ, सभी राजा उन्हे प्रणाम करते है, महाबुद्धिमान सिह समान पराक्रमी उसके यह पृथ्वी वनिता समान ऐसा मै पृथ्वीपति महाप्रबल तुमको आज्ञा करता हूँ, हे भरत! शीघ्रआकर तुममेरी सेवाकरो अथवा अयोध्या को छोड समुद्र के उसपार जाओ, यह वचन सुन शत्रुघ्न महाक्रोधरूप दावानल समान प्रज्वलित होकर कहता है, अरे दूत! तुझे ऐसे वचन कहना उचित नहीं। वह भरतकी सेवाकरे या भरत उसकी सेवा करे। और भरत अयोध्या का भार मंत्रियोको सौप पृथ्वीको वश करने के लिये समुद्र के पारजाय या और किसीतरफ जाय, तेरा स्वामी ऐसे गर्व के वचन कहता है, सो गधा, मत्तहाथी की तरह गरजरहा है, उसकी मृत्यु निकट आई है, इसलिये ऐसे वचन कहता है। राजा दशरथ तो दीक्षा लेकर वनमे गये ऐसा जान वहदुष्ट ऐसी बातें करता है, यद्यपि पिता की क्रोधरूपी अग्नि, मुक्तिकी अभिलाषा से शात हुई हैं फिर भी पिता की अग्निसे हम चिनगारीरूप निकले हैं। इसलिये अतिवीर्यरूपी काष्ठ को भस्मकरनेमे हम समर्थ है। ऐसे वचन कहकर शत्रुघ्न, जलता हुआ जो वास का वन उस समान तडत्तडाकर महाक्रोधायमान हुआ, और सेवको को आज्ञा दी की इस दूत को अपमानकर निकाल दो। तब आज्ञा प्रमाण सेवकों ने अपराधी

को कुत्ते की तरह तिरस्कार कर निकाल दिया। वह पुकारता हुआ नगरी से बाहर गया। धूल मिट्टी से लिप्त शरीर खोटे वचनो से दग्ध अपने स्वामी के पास जाकर कहा, राजाभरत समुद्र समान गम्भीर परमार्थ को जानने वाला महादुर्वचन सुनकर कुछ क्रोध को प्राप्त हुआ। भरत, शत्रुघ्न दोनों भाई नगर से सेना सहित युद्ध के लिये निकले। और मिथिलानगरी का राजाजनक अपने भाई कनकसहित बडी सेना से आकर मिले और सिहोदरादि अनेकराजा भी आकर भरत से मिले। भरत बडी सेना सहित नन्द्यावर्तपुर के धनी अतिवीर्यपर चढा, पिता समान प्रजाकी रक्षा करता रहा। राजा अतिवीर्य भी दूत के वचन सुन अतिक्रोध को प्राप्त हुआ सर्वसामन्तो सहित भरत के ऊपर जानेको उद्यमी हुआ। यह बात सुन श्रीरामचन्द्रजी अपना ललाट दूजके चन्द्रमा समान वक्रकर पृथ्वीधर से कहने लगे, अतिवीर्य को भरत से ऐसा करना उचित ही है, क्योकि उसने पिता समान बडे भाईयो का अपमान किया। तब राजा पृथ्वीधरने रामसे कहा, वह दुष्ट है हम प्रबल जान उसकी सेवा करते है। पृथ्वीधर ने मत्रणाकर अतिवीर्य को जवाब लिखा मै शीघ्रही आ रहा हूँ। एव दूत को विदा किया। पुन श्रीराम से कहा अतिवीर्य महाप्रचड है, इसलिये मै जा रहा हूँ। तब श्रीरामने कहा आपतो यहॉ ही रहो, मैं आपके पुत्र एव आपके जवाई लक्ष्मण को लेकर अतिवीर्य के पास जाऊँगा।

ऐसा कहकर रथपर बैठ बडी सेना सहित पृथ्वीधर के पुत्र को साथ लेकर सीता और लक्ष्मण सहित नन्द्यावर्त नगरी को चले, शीघ्र ही गमनकर नगरी के पास पहुँचे। वहॉ पृथ्वीधर के पुत्र सहित स्नान भोजनकर राम लक्ष्मण सीता ये तीनो मत्रणा करते रहे। जानकी श्रीराम से कहती है, हे स्वामिन। यद्यपि मेरे कहने का अधिकार नहीं, जैसे सूर्य के प्रकाश मे नक्षत्रो का प्रकाश नहीं। फिर भी हे नाथ। आपके हितकी इच्छा से मैं कुछ कहती हूँ। जैसे बांस के बीडों में से मोती लेना ऐसे हम जैसो से हितकी बात लेनी। हे देव। यह अतिवीर्य महा सेनाका स्वामीक्रूर भरत से कैसे जीता जाय, इसलिये उसको जीतने का उपाय करना, आप और लक्ष्मण से कोई कार्य कठिन नहीं, तब लक्ष्मण बोले, हे देवी! यह क्या कहा आज अथवा प्रात काल ही अतिवीर्य को मेरे द्वारा मरा ही जानना। श्रीराम के चरणोकी रजसे पवित्र है सिर मेरा, मेरे आगे देवभी नहीं रूक सकते, तो क्षुद्रमनुष्य अतिवीर्य की क्या बात? जब तक सूर्य अस्त नहीं हो उसके पहले ही अतिवीर्य को मरा ही देखना। यह लक्ष्मण के वचन सुन पृथ्वीधर का पुत्र गरजना

कर कुछ कहने लगा। इतने मे श्रीरामने ऑखेफेर, उसे मना कर, लक्ष्मणसे कहा हे भाई! जानकी ने जो कहा वह युक्त है, यह अतिवीर्य बलवान है रण मे भरत के वश करने का पात्रनहीं, भरत इसके दसवे भाग भी नहीं, यह दावानल समान शेर, भरतहाथी के समान क्या करे? जहॉ बिना प्रयोजन संग्राम होगा दोनो पक्षो के योद्धा मारे जायेगे, यदि इस दुरात्मा अतिवीर्य ने भरत को वश किया, तो रघुवशो के कष्ट का क्या कहना। इनमे सन्धि भी नहीं दिखती। शत्रुघ्न अतिमानी बालक, उसने शत्रु से द्वेष किया, यह न्याय मे उचित नहीं। यह अधेरी रात्रि मे रोद्रभूत सहित, शत्रुघ्न ने अतिवीर्य के कटक मे, अनेक योद्धा मारे एव अनेक हाथी, घोडे, पवन समान तेजस्वी हजारो तुरग और सातसौ अजनगिरी समान हाथी ले गया, क्या यह लोगो के मुख से नहीं सुना? यह समाचार अतिवीर्यसुन महाक्रोध को प्राप्त हुआ, अब महासावधान रणका अभिलाषी है, और भरत महामानी वह युद्ध छोड इससे सन्धि नहीं करेगा। इसीलिये तू अतिवीर्य को वशकर। तेरी शक्ति सूर्य को भी तिरस्कार करने मे समर्थ है। और यहॉ से भरत भी निकट है, उसको हमारा यहॉ आना भी मालुम नहीं हो। जो मित्रको मालूम नहीं होने दे और उपकार करे वह पुरुष अतिशयरूप प्रशसा योग्य है। जैसे रात्रि का मेघ। इस प्रकार मत्रणाकर रामको अतिवीर्य के पकडने की बुद्धि उत्पन्न हुई। रात्रि तो प्रमाद रहित होकर थोडे लोगो से कथा कर पूर्ण की। सुख से प्रात· समय दोनो वीर उठकर प्रात काल की क्रिया कर, एक मन्दिर देखा, उसमे प्रवेशकर जिनेन्द्रभगवान का दर्शन किया, मन्दिर मे आर्यिकाओ का समूह विराजमान था, उनकी वन्दना की आर्यिकाओ की गुरु वरधर्मा आर्यिका महाशास्त्र की ज्ञाता, सीताको उनके पास रख आप भगवान की पूजाकर लक्ष्मण सहित नृत्य कारणी स्त्री का भेष बनाकर क्रीडा सहित राज मन्दिर की तरफ चले। इन्द्र की अप्सरा समान नृत्यकारणी को देख नगर के लोग आश्चर्य को प्राप्त हुये और साथ चले। ये महा आभूषण पहने सभी लोगो के मन और नेत्र को हरते हुये राजभवन में गये। चौबीस तीर्थंकरो के गुण गाये, पुराणपुरुषो के रहस्य बताये। राजा प्रफुल्लित मनसे बैठा नृत्य कारिणीयो ने नृपके पास नृत्य किया, रेचक कहो शरीर एव हाथ पैर मोडना, मुलकना, अवलोकन ऑखे फेरना, मंद मद हसना, जघा, पैर, हाथ, हिलाना, पृथ्वीपर स्पर्शकर शीघ्र ही पैरो को उठाना, राग दृढ करना, आवाज ऊँची नीची करना इत्यादि चेष्टारूप कामबाणो से सभी लोगो को

वश किया। स्वरकी ध्वनिसे वीणाको बजाते हुये सबको ऐसा मोहित किया, जहॉ नर्तकी खडी रहे वहॉ सभी सभा के लोगो के मन और नेत्र चले जाये। रूपसे सबके नेत्र, स्वरपर सबके कान, गुणोपर सबके मनको बाध लिया। गौतमस्वामी ने कहा—हे श्रेणिक! जहॉ श्रीराम लक्ष्मण नृत्य करते एव गाते बजाते वहॉ देवो के मन भी हरे जाते। तो मनुष्य की कहॉ बात।

श्रीवृषभादि चौबीस तीर्थकरों के गुण यश गाकर सभी सभाको वश किया, राजाको सगीत से मोहित देख शृगाररस से वीररस मे आये, ऑखे फेर भोहें टेडीकर महाप्रबल तेजरूप होकर अतिवीर्य से कहने लगे, हे अतिवीर्य! तूने यह क्या दुष्टता की तुझे यह मत्र किसने दिया, तूने अपने नाश के लिये भरत से विरोध किया। अगर जीना चाहता है तो महाविनय सहित भरतको प्रसन्नकर उनका दास बनकर उनके पास जाओ। तुम्हारी रानी, बडे वशकी पुत्री, काम क्रीडा की भूमि, विधवा न हो जाए, तेरा मरण होते ही सब आभूषण डाल शोभा रहित हो जायेगी। जैसे चन्द्रमा बिना रात्रि की शोभा नहीं, तेरा मन अशुभ मे आया है, अब मनको मोड और नमस्कार कर हे नीच! इस प्रकार नहीं करेगा तो अभी ही मारा जायेगा। राजा अनरण्य के पोता और दशरथ के पुत्र उनके जीते तू कैसे अयोध्या का राज्य चाहता है, जैसे सूर्य का प्रकाश होते चन्द्रमा का प्रकाश कैसे हो? जैसे पतग दीपक मे गिरकर मरना चाहता है ऐसे तू भी मरना चाहता है। राजाभरत गरुड समान महाबली उनके पास तू सर्प समान निर्बल बराबरी करता है? यह वचन भरतकी प्रशसाके और अपनी निदा के नृत्यकारिणी के मुख से सुन सम्पूर्ण सभा सहित अतिवीर्य क्रोध को प्राप्त हुआ, नेत्र लाल हो गये। जैसे समुद्र की लहर उठे वैसे सामन्त उठे और राजाने हाथमे तलवार लिया, उससमय नृत्यकारिणी ने उछलकर राजा के हाथसे तलवार को खींच, और सिरके केशपकड, अतिवीर्य को बाध लिया। एवं नृत्यकारिणीयो ने अतिवीर्य के पक्षी राजाओ से कहा अगर जीने की इच्छा रखते हो तो अतिवीर्य का पक्ष छोड भरतकी सेवा करो भरतकी आज्ञा स्वीकार करो तब लोगो के मुख से ऐसी ध्वनि निकली कि महा शोभायमान गुणवान भरतभूप जयवन्त हो, सूर्य समान तेज उनका, न्यायरूपी किरणो के मडल, दशरथ के वशरूपी आकाश मे चन्द्रमा समान लोक को आनन्दकारी ऐसा राजा भरत जयवन्त हो। अहो! यह बडा आश्चर्य है, कि नृत्यकारिणी की यह चेष्टा जो ऐसे राजा को पकड लिया। तब

भरत की शक्ति का क्या कहना, जो इन्द्र को भी जीते। हम इस अतिवीर्य से आकर मिले तो भरत महाराज हमारेपर क्रोधित होंगे, और न जाने क्या करेगे? अथवा वे महा दयावन्त पुरुष है, जाकर मिले चरणों मे नमस्कार करें, तो वे हमारे पर कृपा ही करेंगे। ऐसा विचारकर अतिवीर्य के मित्र जो राजा वे कहने लगे। और श्रीराम, अतिवीर्य को पकड हाथीपर बैठ जिनमन्दिर गये। हाथी से उतर, मन्दिर में जाकर भगवान की पूजा नमस्कार कर वरधर्मा आर्यिका को वन्दामीकर स्तुति की। राम ने अतिवीर्य को लक्ष्मण को सौपा, लक्ष्मण ने केशो को जोर से बाध दिये तब सीता ने कहा इनके केश ढीले करो। पीडा मत दो, शाति दो, कर्मों के उदयसे मनुष्य की बुद्धिहीन हो जाती है, सकट मनुष्योपर ही आते हैं, बडे पुरुषो को सबकी रक्षा ही करनी चाहिये। सज्जन पुरुष सामान्य पुरुष का भी अनादर नहीं करते तो यह अतिवीर्य हजार राजाओ का शिरोमणी है इसलिये इन्हे छोड दो। तुमने इनको वश किया अब कृपा करना ही योग्य है, राजाओ का यही धर्म है, कि शत्रुओ को पकडकर छोड दे। यह अनादिकाल की मर्यादा है। इसप्रकार जब सीताने कहा तब लक्ष्मण हाथजोड प्रणामकर कहने लगा, हे महासती! आपकी आज्ञासे छोडनेकी क्या बात? ऐसा करूँ जो देव भी इसकी सेवा करेगे। लक्ष्मण का क्रोध शात हुआ और अतिवीर्य प्रतिबोध को प्राप्त होकर श्रीरामसे विनती करने लगा, हे देव! आपने बहुत अच्छा किया, ऐसी निर्मल बुद्धि मेरी अब तक कभी नहीं हुई थी सो अब आपके प्रताप से हुई। तब श्रीराम अतिवीर्य को हार मुकुटादि से रहित देख, सतोष के वचन कहने लगे हे मित्र! चिन्ता छोडो। जैसे पूर्व अवस्था मे धैर्य था वैसा ही रखो। बडे पुरुषो मे ही हर्ष और विषाद दोनो होते है। अब तुझे कोई कष्ट नहीं। इस नन्द्यावर्तनगर का राज्य भरत का आज्ञाकारी होकर करो। तब अतिवीर्य ने कहा, अब मेरे राज्य की इच्छा नहीं। मैने राज्य का फल प्राप्त करलिया। अब मै ओर ही अवस्था धारण करूँगा। समुद्रपर्यन्त पृथ्वीको वश करनेवाला, महामान का धारी मैं कैसे पराया सेवक होकर राज्य करूँ। उसमें मेरा पुरुषार्थ क्या? और यह राज्य क्या पदार्थ है। जिनपुरुषो ने छहखंड का राज्य किया वह भी तृप्त नहीं हुये। तो मै पॉच गॉव का राजा इस अल्पविभूति से क्या तृप्त होऊँगा? पूर्वभव में किया जो कर्म उसका प्रभाव देखा। मुझे काति रहित किया। यह मनुष्य देह सारभूत देवो से अतिदुर्लभ मैंने बिना प्रयोजन समय नष्ट किया। अब में ऐसी क्रिया करूँ जिससे मुक्ति की

प्राप्ति हो। इस प्रकार कहकर श्रीराम लक्ष्मणको क्षमाकर राजाअतिवीर्य, सिंह समान पराक्रमी, श्रुतधरनाम के मुनिश्वर के पास जाकर हाथजोड नमस्कार कर कहा हे नाथ! मै दिगम्बरी दीक्षा चाहता हूँ। अब आचार्य महाराज ने कहा यही बात योग्य है इस दीक्षा से अनन्त सिद्ध हुये और होगे, तब अतिवीर्य ने वस्त्राभूषण त्यागकर केशोका लोचकर महाव्रत के धारी हुये। आत्मा मैं मग्न रागादि परिग्रह के त्यागी, तप करते हुये, पृथ्वीपर विहार किया। जहाँ मनुष्यो का आवागमन नहीं वहाँ रहे सिहादिक क्रूरजीवो से युक्त महागहन वन तथा गिरी गुफादि मे निर्भय होकर निवास करते, ऐसे अतिवीर्य स्वामी को हमारा नमस्कार हो। छोडी है सभी परिग्रह की आशा उन्होने और धारण किया है चारित्र का बोझा जिन्होने, महाशील के धारक, अनेक प्रकार के तपसे प्रशसा योग्य महामुनि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप सुन्दर है आभूषण जिनके, दशो दिशाये ही है वस्त्र उनके, साधुओ के जो मूलगुण, उत्तरगुण, यही सम्पदा, उनकी, कर्म नाश करने मे ध्यानी, सयमी, मुक्ति के वर, योगीन्द्र उनको हमारा नमस्कार हो। यह अतिवीर्य मुनि का चारित्र जो, बुद्धिमान पढे पढाये सुने, सुनाये। वह गुणो की वृद्धि को प्राप्त हो और भानु समान तेजस्वी होकर ससार के कष्टो से निवृति हो। सभी रोगो को नाशकर आरोग्यपद को प्राप्त करेगे। अनन्त बलधारी शरीर प्राप्त होगा।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे
अतिवीर्यका वैराग्यवर्णन करनेवाला सैतीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-38

लक्ष्मणको जितपद्मा की प्राप्ति

अथानंतर श्रीरामचन्द्र, महान्याय के वेत्ता, अतिवीर्यका पुत्र विजयरथ, उसे अभिषेक कराकर पिताके राज्य को दिया। उसने अपना सम्पूर्ण वैभव दिखाया। उसका धन उसको ही दिया। और विजयरथ ने अपनी बहिन रत्नमाला लक्ष्मण को देनी की, सो उन्होने प्रमाण किया। रत्नमाला लक्ष्मणके रूपको देख लक्ष्मण हर्षित हुये मानो साक्षात लक्ष्मी ही है। पुन श्रीराम लक्ष्मण जिनेन्द्र की पूजाकर पृथ्वीधर के विजयपुर नगर मे वापिस आये। और भरतने सुना कि अतिवीर्य को

नृत्यकारिणी ने पकडा, तब उन्होने विरक्त होकर जिनदीक्षा ली। अतिवीर्य की शत्रुघ्न हॅसी करने लगा, भरत ने शत्रुघ्न को मना किया। अहो भाई! राजा अतिवीर्य धन्य है, जो महादु:खरूपी विषयों को छोड शान्तभाव को प्राप्त हुआ है। वे महास्तुति करने योग्य है। उनकी हॅसी क्या? तपका प्रभाव देखो शत्रु भी प्रणाम करने योग्य गुरु होते है। यह तप देवोंको भी दुर्लभ है। इस प्रकार भरत अतिवीर्य की स्तुति करते हैं। उसीसमय अतिवीर्य का पुत्र विजयरथ आया। अनेक सामन्तों सहित राजाभरत को नमस्कार कर बैठा, कुछ समय अन्य कथा करने के बाद, जो रत्नमाला लक्ष्मण को दी उसकी बडी बहन विजयसुन्दरी अनेक आभूषणो से युक्त उसका भरत से विवाह कराया, बहुत द्रव्य दिया, सो भरत उनकी बहन से विवाहकर बहुत प्रसन्न हुये। विजयरथ से अतिस्नेह किया, यही बडो की रीति है। भरत का मन अतिहर्ष से पूर्ण है। राजा भरत तेज तुरगपर बैठकर अतिवीर्य मुनिराज के दर्शन को चले। जिस पर्वतपर मुनि विराजमान थे उनको वहॉ पहले लोग देखकर आये थे, उनको साथ मे लेकर आगे चले और पूछते जाते है कि कहॉ है महामुनि, कहॉ है महामुनि? वे कहते है आगे विराजमान है। जिस पर्वतपर मुनि थे, वहॉ पहुॅचे। कैसाहैपर्वत? विषम पाषाणो से अगम्य, अनेक वृक्षोंसे पूर्ण सिहादि क्रूर जीवो से भरा, वहॉ राजा भरत घोडे से उतर महा विनयवान मुनि के पास गये। कैसेहैमुनि? राग द्वेष रहित, शात हुई है इन्द्रियॉ जिनकी, शिलापर विराजमान निर्भय अकेले जिनकल्पी अतिवीर्य मुनिन्द्र महातपस्वी ध्यानी मुनिपद की शोभा से युक्त, उनको देख भरत आश्चर्य को प्राप्त हुये। फूल गये नेत्र कमल एव रोमाच हुआ है, शरीर जिनका ऐसे मुनि को हाथजोड नमस्कार कर पूजा स्तुति की। नम्रीभूत होकर कहने लगे, हे नाथ! परमज्ञाता, शूरवीर, परम दीक्षा के धारी, महाकुल मे उत्पन्न हुये उनकी यही क्रिया होती है। आपने महान उत्तम फल को प्राप्त किया और हम इस जगत की माया से अत्यन्त दुखी है, हे प्रभो हमारा अपराध क्षमा करो, आप कृतार्थ हो। पुज्य पदको प्राप्त हुये, आपको बारम्बार नमस्कार हो ऐसा कहकर तीन प्रदक्षिणा देकर हाथ जोड प्रणामकर पर्वतसे उतर घोडेपर बैठ हजारों सुभटों सहित अयोध्या आये। सभी राजाओ के निकट सभा में कहा, वे नृत्यकारिणी सम्पूर्ण लोगो के मनको मोहित करती हुई, अपने जीवन को निर्लोमकर राजा को जीतने वाली कहॉ गई? देखो आश्चर्य की बात अतिवीर्य के पास मेरी स्तुति करे और राजा को पकडे। स्त्रीयों मे ऐसी शक्ति कहॉं से होगी? यह कोई जिनशासन के देवों की चेष्टा है। ऐसा चिन्तवन

कर प्रसन्न हुआ। और शत्रुघ्न कई प्रकार के धान्यो से मडित पृथ्वी को देखने गया पुन: अयोध्या आया। राजा भरत अतिवीर्य की पुत्री विजयसुन्दरी सहित सुख से भोगो को भोगता रहा। जैसे सुलोचना सहित मेघेश्वर। यह तो कथा यहीं रही आगे श्रीराम लक्ष्मण का वर्णन करते है। राम लक्ष्मण सभी लोगो के प्रिय, कुछ दिन पृथ्वीधर के नगर मे रहे। जानकी सहित विचारकर आगे चलने को तैयार हुये, तब वनमाला लक्ष्मण से कहने लगी, नेत्र सजल हो गये, हे नाथ! मै मन्द भागिनी मुझे आप छोडकर जाते हो, तो पहले मरण से क्यो बचाई? तब लक्ष्मण बोले, हे प्रिये! तु विषाद मतकर थोडे ही दिनो मे तुम्हारे को लेने आयेगें, हे सुन्दरवदनी! सुलक्षणो की धारी जो तेरे लेने को शीघ्र ही नहीं आये तो हमको वह गति हो, जैसे सम्यग्दर्शन रहित मिथ्यादृष्टि की हो। हे बल्लभे! शीघ्रही तुम्हारे पास नहीं आवे, तो हमको वह पाप हो जो साधुओ की निन्दा से होता है। हे गजगामिनी! हम पिताके वचन पालने के लिये दक्षिणसमुद्र के किनारे जा रहे है, मलयाचल के निकट कोई परमस्थान बनाकर तुम्हे लेने आयेगे। तू धैर्य रख। इस प्रकार कहकर अनेक सौगन्धकर अति दिलासा देकर आप सुमित्रा के नन्दन लक्ष्मण श्रीरामके साथ चलने को तैयार हुये। लोगो को सोये हुये जान रात्रिमे सीता सहित गुप्त निकले, प्रात काल इनको नहीं देखकर नगर के लोग परमशोक को प्राप्त हुये। राजा ने महाशोक किया, वनमाला लक्ष्मण के बिना घर सूना जानती रही, अपना मन जिनशासन मे लगाया। राम लक्ष्मण सीता पृथ्वीपर विहार करते नर नारियो के मन को मोहते धीरे धीरे आगे विहार करते रहे। जगत के मन व नेत्रो को वशकरते हुये रमते है। लोग इनको देखकर सोचते है, यह पुरुषोत्तम कौन पवित्र गोत्र मे उत्पन्न हुये धन्य है वह माता ऐसे पुत्र को जन्म दिया। धन्य है वे स्त्रीयॉ जिनके ये पति बने, ऐसारूप देवोको दुर्लभ, ये कहॉ से आये, कहॉ जा रहे हैं इनकी क्या इच्छा है परस्पर स्त्रीयॉ ऐसी बातें करती है। हे सखीदेखो! यह दोनो चन्द्रमा समान और एक नारी नागकुमारी समान अद्भुत देखी न जाने वह देव है अथवा मनुष्य है, हे मुग्धे! पुण्य के बिना उनका दर्शन नहीं, अब तो वे दूर चले गये, वापिस चलो वे नेत्र और मन के चोर, जगत का मन हरते फिरते है। इत्यादि नर नारियो के वचन सुनते सबको मोहित करते, स्व इच्छा से नानादेशो मे विहार करते हुये क्षेमांजलीनगर मे आये। उनके निकट सघनवन मे सुखसे ठहरे जैसे सौमनसवन मे देव ठहरे। वहॉ लक्ष्मणने महासुन्दर अन्न के अनेक व्यजन तैयार किये। द्राक्षोका रस, वहॉ श्रीराम सीता सहित लक्ष्मण ने भोजन किया।

अथानंतर लक्ष्मण श्रीराम की आज्ञा लेकर क्षेमांजली नगर देखने के लिये चले। महासुन्दर माला पहने एव पीले वस्त्र मनको मोहित करने वाले, ऐसे लक्ष्मण अनुपम सुन्दर ऊँचे शिखरों सहित जिनमन्दिर देख नगर में प्रवेश किया। नगर के लोग इनका अद्भुतरूप देख परस्पर बात करते है। अनेक शब्द इन्होंने सुने, कि इस नगर के राजा, उनके जितपद्मानाम की राजकुमारी है, वह उससे विवाह करेगी, जो राजाके हाथकी शक्तिकी चोट खाकर जीवित रहे। सो कन्या की क्या बात, स्वर्ग का राज्य देवे तो भी यह काम कोई नहीं करे। शक्तिकी चोटसे प्राण ही चले जाये तो कन्या किस काम की? जगत में जीवन ही सबसे प्रिय है। इसीलिये कन्या के कारण अपने प्राण कौन देगा। यह वचन सुनकर जानने की इच्छा से लक्ष्मण ने किसी से पूछा, हे भद्र! यह जितपद्मा कौन है? तब उसने कहा यह कालकन्या, पडिता, सर्वलोक मे प्रसिद्ध, माननी, तुमने क्या नहीं सुनी? इस नगर का राजा शत्रुदमन रानी कनकप्रभा उसके जितपद्मा पुत्री रूपवती, गुणवती, शरीर की शोभा से कमलों को जीता है इसलिये उसे जितपद्मा कहते है। यौवन से पूर्ण सर्वकलाओ मे अद्भुत उसे पुरुष का नाम रुचता नहीं। देवो को दर्शनभी दुर्लभ तो मनुष्यो की क्या बात? उसके पास कोई पुल्लिग शब्द भी उच्चारण नहीं कर सकते? कैलाश के शिखर समान उज्ज्वल भवनो मे राजपुत्री रहती है। सैकडो सहेलियॉ सेवा करने वाली हैं। कोई मानव कन्या के पिता के हाथ की शक्ति की चोट से बचे वह कन्या का पति होगा। लक्ष्मण यह बात सुन आश्चर्य को प्राप्त हुआ और क्रोधित भी हुआ। मन मे सोचा कि महागर्विष्ट, दुष्टचेष्टा से सयुक्त जो कन्या उसको मै देखू? यह चितवन कर राजमार्ग होकर विमान समान राजमहल देख लक्ष्मण दरवाजे पर खडा हुआ, अनेक देशो के सुभट कई प्रकार की भेट लेकर कोई आ रहे है, कोई जा रहे है, सामन्तो की भीड लगी हुई है, लक्ष्मण को दरवाजे मे प्रवेश करता देख, द्वारपाल सौम्यवाणी से कहता है, आप कौनहो, किनकी आज्ञा से आये हो, किस प्रयोजन से राजमन्दिर मे प्रवेश करते हो? तब लक्ष्मण ने कहॉ राजा को देखना चाहता हूँ, तू जाकर राजा से पूछ, तब द्वारपाल अपनी जगह दूसरे को रख, राजा के पास जाकर विनतीकर कहा, हे महाराज! आपके दर्शन के लिये एक महा रूपवान पुरुष आया हैं, दरवाजे पर खडा हैं। नीलकमल समान शरीर का वर्ण महा शौभायमान सौम्यमूर्ति शुभ है, तब राजा ने प्रधानकी ओर देख आज्ञा की कि वे आये। तब द्वारपाल लक्ष्मणको राजाके पास ले गये। तब सभाके लोग इनको

अतिसुन्दर देख हर्ष को प्राप्त हुये। राजाने लक्ष्मणको प्रणामरहित दैदीप्यमान देख कुछ विचारकर पूछा, तुम कौन हो, क्या काम है और कहाँ से आये हो? तब लक्ष्मण मेघ समान शब्द बोले, मै राजा भरत का सेवक हूँ, पृथ्वीको देखने की अभिलाषा से विहार करता हूँ। आपकी राजपुत्री का वृतान्त सुन यहाँ आया हूँ। यह आपकी राजपुत्री महादुष्ट मरकनी गाय है, यह सभी लोगोको दुःखदायिनी बनी है। तब राजा शत्रुदमन ने कहाँ मेरी शक्तिको जो सहनकर सके, वह जितपद्मा से विवाह करे। तब धीर वीर लक्ष्मण ने कहा कि तेरी एक शक्ति से मेरे क्या होगा। तुम अपनी सपूर्ण शक्तियो से मेरे पाच शक्ति लगा। इस प्रकार राजा के और लक्ष्मण के विवाद हुआ। उस समय झरोखे मे बैठी जितपद्मा लक्ष्मण को देख मोहित हुई और हाथ जोड इशारा करके मना करती रही, कि आप शक्तिकी चोट मत खाओ। तब लक्ष्मण ने इशारा से कहा तुम डरो मत। इस प्रकार समस्या से ही धैर्य बधाया। और राजा से कहा कि क्यो कायर हो रहे हो, शक्ति चलाओ, अपनी शक्ति हमको दिखाओ, तब राजा ने कहा, अगर तू मरना चाहता है तो झेल। महाक्रोध से प्रज्वलित अग्नि समान एक शक्ति चलाई, वह लक्ष्मण ने दाहिने हाथ मे ग्रहण की, जैसे गरुडपक्षी सर्पको ग्रहण करे। और दूसरी शक्ति बाये हाथ मे ग्रहण की और तीसरी चौथी दोनो शक्तियॉ दोनो काख मे पकडी, तब चारो शक्तियों को ग्रहणकर लक्ष्मण ऐसे शोभित हुये मानो चारदॉतो वाला हाथीहो तब राजा ने पाचवी शक्ति चलाई वह लक्ष्मण ने दातो मे पकडी जैसे मृगराज मृगी को पकडे। तब देवो ने हर्षित होकर पुष्पवृष्टि की और दुदुभी बाजे बजे। तब लक्ष्मण ने राजा से कहाँ—ओर है तो, ओर चला। तब सभी लोग सभा मे भय से कापने लगे। राजाने लक्ष्मण का अखड बलदेख, आश्चर्य को प्राप्त हुये। लज्जा से मुँह नीचाकर लिया। और जितपद्मा लक्ष्मण के रूप गुण बल, चरित्र से मोहित हो आकर सामने खडी हुई, वह राजकुमारी सुन्दर वदनी लक्ष्मण के पास ऐसी शोभे जैसे इन्द्र के पास शची, जितपद्मा को देख लक्ष्मण का हृदय प्रसन्न हुआ। महासंग्राम मे जिसका मन स्थिर नहीं होता, वह इसके रूपको देख वश हुआ, लक्ष्मण ने तत्काल विनय से नम्रीभूत हो राजा से कहा, हे मामा! हम आपके बालक है, हमारा अपराध क्षमा करो। जो आप समान गम्भीर नर है, वह बालक की अज्ञानचेष्टा जान विकारको प्राप्त नहीं होते हैं। तब शत्रुदमन महाहर्षसे हाथीकी सूडसमान अपनी भुजाओ से राजकुमार लक्ष्मण से मिले। और कहा, हे धीर वीर महाबली! मैं महायुद्ध मे मत्त हाथियो को क्षणमात्र

मे जीतने वाला, सो आपने मुझे जीता। और वनके हाथी पर्वतसमान उनको मद रहित करने वाला मै, सौ आपने मुझे गर्व रहित किया, धन्य आपका पराक्रम, धन्य आपकारूप, धन्य आपकी निर्भयता, महाविनयवान, अद्‌भुत चरित्र के धारी आप तो आप ही हो, इस प्रकार राजा ने लक्ष्मण के गुणोका वर्णन सभा में किया। तब लक्ष्मण लज्जासे नीचे देखनेलगे।

अथानंतर राजाकी आज्ञासे मेघ की ध्वनि समान बाजे बजते रहे। याचको को इच्छापूर्ण दान दिया, नगर मे आनन्द ही आनन्द हुआ। राजा ने लक्ष्मण से कहा, हे पुरुषोत्तम! मेरी राजपुत्री से तुम पाणिग्रहण करना चाहते हो तो करो, तब लक्ष्मण ने कहा मेरे बडेभाई और भावज नगरके निकट ठहरे हैं, उनको पूछो, उनकी आज्ञा होगी वही हमको और तुमको करना उचित है। वे सब जानते हैं तब राजा ने राजपुत्री को और लक्ष्मण को रथ में बैठाकर कुटुंबसहित राम के पास चले। समुद्र समान सेना की गरजना के शब्द सुनकर धूलके पटल उडते देख क्षोभसे सीता ने भयभीत होकर कहा, हे नाथ! लक्ष्मणने कुछ उपद्रव किया है, या उस दिशा मे कुछ उपद्रव दिख रहा हैं इसलिये सावधान होकर जो करना हो वह करो। तब राम जानकी को हृदय से लगाकर कहते हैं, हे देवी! भय मत करो, ऐसा कहकर उठे और धनुष की तरफ दृष्टिडाली। तब ही मनुष्यो के समूह आगे सुन्दर स्त्रीयॉ गीतनृत्य करती हुई देखी, वे सब पास आई रूपवान स्त्रीयो को नृत्य गीत करते देख, रामको विश्वास हुआ, और सीता सहित सुख से बैठे। स्त्रीयॉ आभूषणो सहित मनोहर मगलद्रव्य हाथमें लेकर हर्षके भरे नेत्रोसे रथसे उतरकर आई। और राजा शत्रुदमन कुटुंब परिवार सहित रामके चरणों मे नमस्कार कर भक्ति विनय से बैठे। लक्ष्मण और जितपद्‌मा एकसाथ रथमे बैठकर आये थे, वह उतरकर लक्ष्मण श्रीरामचन्द्रजी एवं जानकी को शीश नवाकर प्रणाम किया और महाविनय से बैठे। श्रीरामने राजा शत्रुदमन से कुशल प्रश्नकर प्रसन्न होकर बैठे। राम के आने से राजा ने हर्षित होकर नृत्य किया, महाभक्ति पूर्वक नगर में चलने की विनती की। श्रीराम सीता और लक्ष्मण एक रथ में बैठे। परम उत्साह से राजाके महल में पधारे। मानों वह राजमंदिर सरोवर ही है स्त्रीरूपी कमल पुष्पोंसे भरा, सुन्दरता रूपी जल एवं कल्लोलें ही आभूषण है, यह दोनों वीर गुणवान यौवन महाशोभा से पूर्ण कुछ दिन सुख से यहॉ ही विराजमान रहे और राजा शत्रुदमनादि सभी परिवार उनकी भक्ति सेवा करते हैं।

अथानंतर सभी लोगों को आनन्द करने वाले राम लक्ष्मण महाधीर वीर

सीता सहित अर्धरात्रि को उठकर विहार करने लगे, लक्ष्मण ने प्रिय वचन कहकर जैसे वनमाला को विश्वास दिया था वैसा ही जितपद्मा को विश्वास देकर लक्ष्मण श्रीराम के साथ चले। नगर के सभी लोग एवं राजाको, इनके चले जाने का बहुत दुख हुआ। मन में धैर्यता नहीं रही। यह कथा गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है, हे मगध देश के राजा! वह दोनों भाई पूर्वजन्म के पुण्यफल से सब जीवो के स्वामी जहाँ जहाँ गमन करते वहाँ वहाँ की राजा प्रजा इनकी सेवा करते ओर सभी चाहते की ये यहाँ ही रहे, हमारे से दूर नहीं जाये, सब इन्द्रियो के सुख महामीष्ठ भोजन, बिना प्रयत्न के ही इनको सुलभता से ही प्राप्त होते है। पृथ्वीपर जोदुर्लभ वस्तु हैं वो इनको बिना चाहते हुये ही प्राप्त होती है। महाभाग्यशाली भव्यजीव सदा भोगों से उदास है, ज्ञानी ऐसा चिन्तवन करते है, कि इन भोगो से प्रयोजन नहीं। ये भोगदुष्ट नाशवान है। राम लक्ष्मण भोगो की चिन्ता ही नहीं करते हैं, भोगों से विरक्त ही है। दीप्ति से सूर्य को जीता है, फिर भी पूर्वउपार्जित पुण्य के प्रभाव से पहाडो के शिखरोपर निवास करते है वहाँ भी नानाप्रकार की सामग्री का सयोग होता है। जब तक मुनिपद का उदय नहीं, तब तक देवो समान सुख भोगते है। यह पूर्वपुण्यका ही फल है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे जितपद्मा का व्याख्यान करनेवाला अडतीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-39

देशभूषण कुलभूषण मुनि का कथानक

अथानंतर ये दोनो वीर महाबली सीता सहित वन में आये। कैसा है वन? अनेक वृक्ष एवं फल फूलो से शोभित। पुष्पो की सुगन्धि से सुगन्धित ऐसे वनमें राम लक्ष्मण सीता रमते रमते आये। कहीं मूगो के रग समान वृक्षों की कोपलें लेकर श्रीराम जानकी के कर्ण का अभूषण बनाते है। कहीं छोटे वृक्षमे लग रही बेले उससे झूला बनाकर राम लक्ष्मण दोनों भाई झोटा दे देकर जानकी को झुलाते है, और आनन्द की कथाओ से सीता को प्रसन्न करते है। कभी सीता रामसे कहती है हे देव! यह बेलकावृक्ष कैसा मनोज्ञ दिखता है। और सीताके शरीरकी सुगन्ध से भ्रमर आकर लगे है सो दोनो भाई उडाते है। इस प्रकार वनमे

धीरे धीरे दोनों भाई विहार करते, जैसे स्वर्गके देव वनमें क्रीडा करते, ऐसे राम लक्ष्मण वनमें क्रीडा करते। अनेक देशो को देखते हुये क्रमसे वशस्थल नगर मे आये। वे दोनों पुण्याधिकारी उनको सीता के कारण थोडी दूर आने मे ही बहुत दिन लगे। नगर के निकट एकवंशधर नामका पर्वत देखा। मानो पृथ्वी को भेदकर निकला है। वहाँ वासो के अतिसमूह से मार्गकठिन है। ऊँचे शिखरो की छायासे मानों सदा सन्ध्या ही हो रही है। उस नगर से राजा व प्रजाको निकलते ए, भागते देख श्रीरामचन्द्र पूछने लगे। अहो, क्या भय के कारण नगर छोडकर जा रहे हो? तब कोई कहता हैं आज तीसरा दिन हैं। रात्रि के समय इन पहाडों के शिखरोपर ऐसी ध्वनि होती हैं जो अभी तक कभी सुनी नहीं है, पृथ्वी कम्पित हो रही है, और दशो दिशाये शब्दरूप हो रही है, वृक्षोंकी जडे उखड जा रही है, सरोवर मे जल चलायमान हो रहा है, उस भयानक शब्दो से सभी लोगों के कान बहरे हो रहे है, मानो लोहे के मुद्गरो से मारे हो, कोई दुष्टदेव जगत का कांटा हमारे को मारने का कार्यकर रहा है, इस गिरी पर क्रीडा करते है, इसके भय से व्याकुल होकर लोग संध्या के समय भागते है, प्रात काल पुन वापिस आयेगे। पाच कोस (10 मील) दूर चले जा रहे है, जहॉ उनकी ध्वनि नहीं सुनाई दे। यह बात सुनकर सीता ने राम लक्ष्मण से कहॉ-जहॉ यह सभी लोग जा रहे है, वहा अपन भी चले जो, नीतिशास्त्र के ज्ञाता है, वह देश कालको जानकर पुरुषार्थ करते है, तो सकट को प्राप्त नहीं होते हैं, तब दोनो धीर हसते हुये कहते है, तुम बहुत कायर हो, सो यह लोग जहॉ जाये वहॉ तुम भी जाओ, प्रात·काल सब आये तब तुम आ जाना। हम तो आज इस पर्वतपर ही रहेंगे। यह अत्यन्त भयानक ध्वनि किनकी होती है, यह देखेगे, यही निश्चय है। यह लोग रक है, भय से पशु समान बालको को लेकर भागते है। हमको किसीका भय नहीं, तब सीता ने कहा, आपके हटको कौनदूर करने में समर्थ है, आपका आग्रह दूर्निवार है, ऐसा कहकर वह पति के पीछे चली, खिन्न हुये है चरण उसके, पहाड के शिखरपर ऐसी सोहे मानो निर्मल चन्द्रकांति ही है। श्रीराम के पीछे और लक्ष्मण के आगे सीता ऐसी लगे, मानो इन्द्रमणी और चन्द्रकांतमणि के मध्य पुष्परागमणि ही है। यह सीता उसपर्वत का आभूषण हुई। राम लक्ष्मण को भी सीता का भय था कि कहीं पर्वत से गिर नहीं जाये। इसलिये श्रीराम सीताका हाथ पकडकर ले जा रहे है। वे निर्भय पुरुषोत्तम पर्वत के कठिन पाषाणो को उलघकर सीता सहित पर्वत के शिखरपर पहुँचे।

वहाँ देशभूषण कुलभूषण नाम के दोनो मुनि महाध्यान में लीन दोनों भुजा लटकाये कायोत्सर्ग मुद्रा मे खडे परमतेज से युक्त, समुद्र समान गभीर, पर्वत समान स्थिर, शरीर और आत्मा को भिन्न भिन्न जानने वाले, मोह रहित, नग्न स्वरूप, यथाजात रूपके धारी, परम महासंयमी, जैनधर्म के आराधक, ऐसे महामुनि को देखकर श्रीराम लक्ष्मण सीता ने हाथ जोड नमस्कार किया और प्रसन्न मन से आश्चर्य को प्राप्त हुये। मन मे चिन्तवन करने लगे, संसारके सभी कार्य असार हैं, दुख के कारण है, मित्र स्त्री पुत्र सब परिवार और द्रव्यादिक इन्द्रिय जनित सुख यह सब दुख के ही कारण है, एक धर्मही सुखका कारण है, महाभक्ति से भरे दोनों भाई परमहर्षित होकर विनय सहित मस्तक झुकाकर मुनि के चरणो के पास बैठे। उसी समय असुरदेव के आने से महाभयानक शब्द हुआ, मायामयी सर्प बिच्छू अजगरादि दोनो मुनिराजो के शरीरपर लिपट गये। सर्प अतिभयानक महाफुंकार करने वाले, काजल समान काले, चलायमान है जीभ उनकी, और अनेक रग के अतिस्थूल बिच्छुओ को मुनियो के शरीरपर लिपटते एव चढते देखा। राम लक्ष्मण असुरदेव पर क्रोधको प्राप्त हुये, सीता भयसे राम से शरीर से लिपट गई, तब राम ने कहा, तुम भय मत करो, सीताको धैर्य बंधाया दोनों सुभटों ने मुनि के पास जाकर शरीर से सर्प बिच्छुओ को दूर किया। और मुनियो के चरणो की पूजा स्तुति भक्ति वन्दना करने लगे। और भक्तिसे भरी सीता ने झरनों के जल से उन मुनिराजो के चरण धोकर, केशर कपूर से युक्त चन्दन का लेप किया। और जो वनको सुगन्धित कर रहे थे, ऐसे पास की लताओ के फूलो को लक्ष्मण ने लाकर दिये, उनसे उनकी बहुत पूजा की। श्रीराम लक्ष्मण वीणा लेकर बजाने लगे, और मधुर स्वर से स्तुति करने लगे, भक्ति से यह शब्द कहे, हे महायोगीश्वर! धीर वीर, मन वचन काय से वंदनीय, देवों द्वारा पूज्य, महाभाग्यवत, उपमारहित, अखड, तीनलोक मे प्रसिद्ध, जैनधर्म के धुरन्धर, ध्यानरूपी वज्रदण्ड से महा मोहरूपी शिलाको चूर्ण किया, और धर्म रहित जीवो को अज्ञानी जानकर दया से धर्म मार्ग मे लगाते है। परम दयालु, आप तिरे दूसरो को तारे, इस प्रकार स्तुतिकर दोनो भाईयो ने भजन ऐसे गाये जिनसे वनके तिर्यंच भी सुनकर मोहित हो गए। भक्ति की प्रेरी सीता ने ऐसा नृत्य किया जैसा सुमेरुपर्वत पर शचि नृत्य करे। संगीत शास्त्रो की ज्ञाता सुन्दर लक्षण की धारी अमूल्य हार मालादिक पहने परम लीला सहित प्रगटरूप अद्भुत नृत्य की कला दिखाई, हाव भाव मे प्रवीण मन्द मन्द चरणो को रखती हुई महा लयसे गीत के

अनुसार भावों को दर्शाती हुई अद्भुत नृत्यकर महाहर्षित हुई। असुरकुमार द्वारा किया, उपसर्ग को मानो सूर्य देख नहीं सका सो अस्त हुआ और संध्या भी प्रगट होकर चली गई। आकाश मे नक्षत्रो का प्रकाश हुआ, दशो दिशाओ मे अधकार फैला। उस समय असुर की माया से महा रौद्र भूतो के समूह हडहड हॅसते आये, महा भयंकार मुख भूतों का, और राक्षस खोटे शब्द बोलते आये। मायामयी श्यालनी मुॅख से भयानक अग्नि की ज्वाला निकालती हुई शब्द बोलती आई, और सेकडो कलेवर भयकारी नृत्य करते हुये आये। मस्तक, भुजा, जघाादि से अग्नि की वृष्टि हुई एव दुर्गन्ध सहित मोटी मोटी खून की धाराये बरसने लगी। और डाकिनी, नग्न स्वरूप दीखे, हड्डियो के आभूषण पहने, खोटा शरीर, हाथ मे खड्ग लेकर आती हुई दिखाई दी। सिह व्याघ्रादि जैसा मुख, तपाये हुये लोहे के समान ऑखे, हाथ मे त्रिशूल लेकर, होठ डसते, टेडी भोहें, कठोर शब्द उनके ऐसे अनेक पिशाच नृत्य करते रहे, पर्वत की शिला कम्पायमान हुई, भूकम्प हुआ इत्यादि अनेक कुचेष्टाओ से असुर ने उपसर्ग किया। महामुनि शुक्लध्यान मे मग्न, उपसर्ग को जाना नहीं। असुरकृत यह उपसर्ग देख सीता भयको प्राप्त हुई, सो पति के पास आई तब श्रीराम ने कहा हे देवी! भय मत करो, सर्वविध्नो को हरने वाले महामुनि के चरण उनकी शरण गृहण करो। ऐसा कहकर सीता को मुनि के चरणो मे बैठाकर, राम लक्ष्मण धनुषबाण हाथमे लेकर महाबली मेघसमान गर्जना की, धनुष चढाने का ऐसा शब्द हुआ जैसे वज्रपात का शब्द हो, तब वह अग्निप्रभ नाम का असुर इन दोनो वीरो को बलभद्र नारायण जानकर भाग गया। उसकी सभी क्रियाये उपसर्ग रूप नष्ट हुई।

तदनन्तर–श्रीराम लक्ष्मण ने मुनिराज का उपसर्ग दूर किया, तत्काल देशभूषण कुलभूषण मुनिराज को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। चारो निकाय के देव दर्शन को आये विधिपूर्वक नमस्कार कर यथा स्थान बैठे। केवलज्ञान के प्रभाव से केवली के निकट रात दिन का भेद नहीं रहा। भूमिगोचरी और विद्याधर केवली की पूजाकर यथा योग्य स्थानपर बैठे। देव, मनुष्य विद्याधर सभी ही धर्मोपदेश सुनने लगे। राम लक्ष्मण हर्षित मन से सीता सहित केवली की पूजाकर हाथजोड नमस्कार कर पूछते है कि हे भगवन! असुर ने आपको किस कारण से उपसर्ग किया? और आप दोनों मे परस्पर अतिस्नेह क्यो है। तब केवलीभगवान की दिव्यध्वनि हुई पद्मिनीनगर मे राजा विजयपर्वत गुणरूपी अनाज उत्पन्न करने का उत्तम क्षेत्र, उनके धारणी रानी एव अमृतसुर दूत सर्वशास्त्र मे प्रवीण

राजकाज में निपुण लोकरीति को जानने वाला, इनको गुण ही प्रिय है, उसके उपभोग नामकी स्त्री उसके उदित-मुदित दो पुत्र व्यवहार मे कुशल थे। अमृतसुर दूत को राजाने कुछ काम के लिये बाहर भेजा, वह स्वामीभक्त वसुभूति मित्र सहित चला, वसुभूति पापी अमृतसुर की स्त्री से आसक्त दुष्टचित्त रात्रि में खड्गसे अमृतसुर को मारकर नगरी मे आया, और लोगो से कहा मुझे वापिस भेज दिया है, और अमृतसुर की स्त्री उपभोगा, उससे सम्पूर्ण बात कही, तब उसने कहा मेरे दोनो पुत्रो को भी मारो, तब अपन दोनो निश्चिन्त होगे। सो यह बात उदित की पत्नि ने सुनी, और सुनकर सभी बात उदित से कही। बहु सास का चरित्र पहले से ही जानती थी, इसको वसुभूति की बहु ने सब बात कही थी। जो पर स्त्री के सेवन से वसुभूति की पत्नि अपने पति से विरक्त थी। उदित ने सर्वबातो से सावधान होकर मुदित को भी सावधान किया। और वसुभूति की तलवार देख पिता के मरण का निश्चय जान, उदित ने वसुभूति को मारा, वह पापी मरकर म्लेच्छ योनी को प्राप्त हुआ। पहले वह ब्राह्मण था, कुशील हिसा के दोष से चाडाल हुआ। एक समय मतिवर्धन आचार्य मुनियो मे महातेजस्वी वह इसी पद्मिनीनगरी में आये। और बसन्ततिलक उद्यान मे सघ सहित विराजे। और आर्यिकाओं की गुरानी अनुधरा आर्यिका धर्मध्यान मे तत्पर वह भी सभी आर्यिकाओ के साथ नगरी के पास उपवन मे ठहरी। जिस वन मे मुनिराज विराजमान थे, उस वन का अधिकारी आकर, राजा से हाथजोड विनती करने लगा, हे देव! अपने उद्यान मे दिगम्बर मुनि, सघ सहित आये है। उन्हे मना करे तो डर लगता है, और नहीं मना करे तो आप क्रोध करेगे, यह हमारे पर बडा कष्ट आया है। स्वर्ग के उद्यान समान यह वन है, अब तक इसमे किसी को आने नहीं दिया, परन्तु मुनिराज का क्या करे। वे दिगम्बर साधु देवो से भी नहीं रोके जाये, हम कैसे रोके? तब राजा ने कहा तुम मना मत करो, जहाँ साधु विराजे, वह स्थान महापवित्र होता है। राजा बडी विभूति सहित मुनियो के दर्शन करने को गये। महा तपस्वी साधु उद्यान मे विराजमान थे। वन की धूल जिनके शरीरपर लगी है, मुक्ति योग्य क्रियाओ से युक्त सौम्यमुद्रा। कोई मुनि कायोत्सर्ग ध्यान से खडे हैं, कोई पद्मासन से विराजमान है बेला, तेला, चौला, पांच उपवास, दश उपवास, पक्ष, महीना आदि अनेक उपवासों से शरीर का शोषण किया है, पठन पाठन मे सावधान हैं। शुद्ध स्वरूप मे मन को लगाया है, ऐसे महामुनिको दूरसे देख राजा गर्वरहित होकर, हाथी से उतर, सभी मुनिराजो को

नमस्कार कर आचार्य परमेष्ठि की तीन प्रदक्षिणा देकर हाथजोड प्रणामकर पूछते है। हे नाथ जैसे आपके शरीर मे ज्योति है ऐसे आपके पास भोग नहीं, तब आचार्य महाराज ने कहा यह क्या तेरी बुद्धि, तू शूरवीर, भोगो को स्थिर जानता है? यह बुद्धि संसार को बढाने वाली है। जैसे हाथी के कान चचल, ऐसा जीवन चचल है। यह शरीर केले के थभ समान असार है, और ऐश्वर्य स्वप्न समान है, और घर, कुटुब, पुत्र, स्त्री, परिवार सब असार है। ऐसा जानकर ससार की माया मे क्या प्रीति करना यह ससार दुखदायी है, यह प्राणी अनेकबार गर्भ के दुखो को भोगा है। गर्भ मे महा भयानक दुर्गन्ध कृमियो का जाल, रक्त श्लेषादिका सरोवर महा अशुचि कीचड से भरा, यह प्राणी मोहरूपी अधकार से अधा हुआ गर्भ के दुखो से नहीं डरता। धिक्कार है इस अत्यन्त अपवित्र शरीर को, अशुभ का स्थान, क्षणभगुर, इसका कोई रक्षक नहीं, जीव शरीर का पोषण करता, यह शरीर जीवको दुख देता, सो यह महाकृतघ्न, नसरूपी जालो से वेष्ठित, चर्मसे ढका, अनेक रोगोका पुज, उसका गर्भ से बाहर आने का स्थान ग्लानीरूप ऐसे शरीर से प्राणी स्नेह करते है। वे ज्ञान रहित अविवेकी है। उनका कल्याण कैसे होगा? और इस शरीर मे इन्द्रिय रूपी चोर बैठे है, वे बलात्कार से धर्मरूपी धन को चुराते है। यह जीवरूपी राजा कुबुद्धि रूपी स्त्रीसे रमण करता है। मृत्यु इसको अचानक भक्षण करना चाहती है। मनरूपी हाथी विषयरूपी वनमे क्रीडा करते है। ज्ञानरूपी अकुश से हाथीको वशकर वैराग्यरूपी खूँटे से विवेकी जीव बाधते है। यह इन्द्रियरूपी घोडा मोहरूपी ध्वजा को धारणकर, परस्त्री रूपी हरीघास मे महालोभ से शरीररूपी रथको कुमार्ग मे डालते है। मन की चचलता को रोकना ही योग्य है। तुम ससार शरीर भोगो से विरक्त होकर भक्ति पूर्वक जिनराज को नमस्कार कर प्रतिसमय स्मरण करो, तो निश्चय से संसार समुद्र से तिर जाओगे। तप सयमरूपी बाणो से मोहरूपी शत्रुका नाशकर लोक के शिखर पर अविनाशी पुर का अखड राज्य करो। निर्भय होकर निजपुर मे निवास करो। इस प्रकार मुनि के मुख से वचन सुनकर राजा विजयपर्वत और सुबुद्धि राज्य छोड मुनि हुये, और दूत के दोनो पुत्र उदित मुदित ने प्रभुवाणी को सुन मुनि होकर पृथ्वीपर विहार किया। सम्मेदशिखर तीर्थक्षेत्र की यात्रा को जा रहे थे, सो मार्ग भूलकर वन में भटक गये। वह वसुभूति ब्राह्मण का जीव महारौद्र भील हुआ था। उसने इन दोनो मुनिराजो को देखा, अति क्रोधायमान होकर कुठार समान कटुवचन बोले, दोनों मुनिराजो को खडे रखकर मारने को तैयार

हुआ। तब उदित मुनिराज ने छोटे भाई मुदित मुनिराज से कहा, भय मत करो, क्षमाधर्म को धारण करो। यह मारने को आया हैं, हमने बहुत दिनों से तप द्वारा क्षमा का अभ्यास किया है, इसलिये अब दृढता रखनी हैं। यह वचन सुन मुदित मुनि बोले, हमने जिनमार्ग की श्रद्धा को धारण किया है, हमको क्या भय? देह तो विनश्वर ही है, और यह वसुभूति का जीव है उसको हमने पिता के वैर से मारा था। परस्पर दोनो मुनि यह बातकर अपने शरीर का ममत्व छोड कायोत्सर्ग को धारणकर खडे हो गये। वह भील मारने को आया, तब भीलो का स्वामी म्लेच्छराजा ने मना किया और दोनो मुनि को बचाये। यह कथा सुन रामने केवलीभगवान से प्रश्न किया, हे देव! भीलो के स्वामी ने दोनो मुनिराजों को बचाया तो उसका प्रीति का कारण क्या? तब केवलीभगवान ने दिव्यध्वनि में कहॉ। एक यक्षनाम का गॉव वहॉ सुरप और कर्षक दोनो भाई हुये। एक पक्षी को एक पारधी जीता पकडकर गॉव में लाया, तब इन दोनो भाईयो ने धन देकर छुडवा दिया। वह पक्षी मरकर म्लेच्छो का राजा हुआ। और वह सुरप-कर्षक दोनो वीर उदित मुदित हुये। उस परोपकार से इसने दोनो मुनियो को बचाया, जो जीव जिसका अच्छा करता है वह जीव उसका अच्छा ही करता है, और जो कोई जीव किसी का बुरा करता, वह जीव उसी का बुरा करता है, यह ससारी जीवो की क्रियाये हैं। इसलिये सभी जीवो का उपकार ही करना, किसी जीवो से बैर नहीं करना। एक जीवदया ही मोक्षका मार्ग हैं, दया बिना शास्त्र पढने से क्या, एकपुण्य ही सुख का कारण है, इसलिये पुण्य करना, वह उदित मुदित मुनि उपसर्गसे छूटकर तीर्थक्षेत्र सम्मेदशिखरजी की यात्रा करने गये, और भी कई क्षेत्रो की यात्राये की। रत्नत्रय का पालन करते हुये समाधिपूर्वक प्राणछोड स्वर्ग गये। और वह वसुभूति का जीव जो म्लेच्छ हुआ था। वह अनेक कुयोनियो में भ्रमणकर मनुष्य देह धारणकर तापसी बना। अज्ञान तपसे मरकर ज्योतिषी देवो मे अग्निकेतु नामका क्रूरदेव हुआ। और भरतक्षेत्र मे अरिष्टपुर नगर का राजा प्रियव्रत, महाभोगी, उसके दो रानियॉ एक कनक प्रभा, दूसरी प्रभावती वे उदित, मुदित के जीव स्वर्ग से चयकर पद्मावती रानी के रत्नरथ और विचित्ररथ नाम के दो पुत्र हुये और कनकप्रभा के वह ज्योतिषी देव चयकर अनुधर नामका पुत्र हुआ। राजा प्रियव्रत पुत्रको राज्य दे भगवान के चैत्यालय मे छहदिन के उपवास कर शरीरछोड स्वर्ग गये।

अथानतर एक राजा की पुत्री श्रीप्रभा लक्ष्मीसमान उससे रत्नरथ ने विवाह

किया। श्रीप्रभा की अभिलाषा अनुधर के थी, और रत्नरथ से अनुधर का पूर्व जन्म का बैर तो था ही, पुनः नया बैर हुआ। वह अनुधर, रत्नरथ की पृथ्वी उजाडने लगा। तब रत्नरथ और विचित्ररथ दोनों भाईयो ने अनुधर को युद्ध में जीत देश से निकाल दिया। देशसे निकालने पर और पूर्वबैर के कारण महाक्रोध को प्राप्तहोकर जटा वक्ल का धारी तापसी हुआ। वह विषवृक्ष समान कषायरूपी विष का भरा था। एवं रत्नरथ व विचित्ररथ महातेजस्वी चिरकाल तक राज्यकर मुनिबन तप से स्वर्ग मे देव हुये। महासुख भोग, वहॉ से चयकर सिद्धार्थनगर के राजा क्षेमकर, रानी विमला उनके महासुन्दर देशभूषण, कुलभूषण नाम के दो पुत्र हुये। वह दोनो भाई विद्याप्राप्त करने की योग्य अवस्था मे भी घर पर ही क्रीडा करते रहते थे। उस समय एक सागरघोष नाम का पडित अनेक देशो मे भ्रमण करता हुआ आया, राजा ने उस पडित को बहुत आदर से रखा। और इन दोनो पुत्रो को पढने के लिये उनके पास छोडे। पुत्र महाविनयवान उन्होंने सम्पूर्ण विद्याओ को एवं अनेक कलाओ को सीखा। दोनो राजकुमार केवल एक विद्या गुरु एव विद्या को ही जानते थे। कुटुब मे ओर किसीको नहीं जानते थे। उनके एक विद्या अभ्यास का ही कार्य, विद्या गुरु से अनेक विद्याये सीखी। सम्पूर्ण कला मे पारगामी होकर पिता के पास आये, पिता इनको, महाविद्वान व सर्व कलाओ मे निपुण देख प्रसन्न हुये। पडित को मनवाच्छित दान दिया। यह कथा केवली भगवान श्रीराम से कहते है, वह देशभूषण कुलभूषण हम है। हमने कुमार अवस्था मे ही सुना कि पिता ने हमारे विवाह के लिये राजकन्याये बुलवाई है। यह बात सुनकर परम विभूति सहित उन कन्याओ को देखने के लिये नगर से बाहर जाने के लिये चले। हमारी बहिन कमलोत्सवा राजकुमारी महल के झरोखे मे बैठी नगर की शोभा देख रही थी। हम विद्या के अभ्यासी कभी भी किसीको नहीं देखा, नहीं जाना, हम नहीं जानते की यह हमारी बहन है। हमने उस कन्या को अपने लिये जान विकाररूप मन किया। दोनों भाईयो के मन चले, दोनो परस्पर मे विचारते रहे की इस राजकुमारी से मैं विवाह करूँगा, अगर दूसरा भाई विवाह करेगा तो उसे मै मॉरूगा। इस प्रकार दोनो भाईयो के मन मे विकार रूप परिणाम एव निर्दया के भाव उत्पन्न हुये। उसी समय बदी जनो के मुख से ऐसा शब्द निकला कि राजा झेमकर, रानी विमला सहित जयवन्त होवे। उनके दोनो पुत्र देवो समान और यह झरोखे में बैठी कमलोत्सवा इनकी बहन सरस्वती समान दोनो वीर महागुणवान, उनकी बहिन महागुणवती ऐसी सन्तान महापुण्य

अधिकारीयो के ही होती है। जब यह बात हमने सुनी, तब मनमें सोची की देखो मोहकर्म की दुष्टता, हमारी ही बहिन की अभिलाषा हमको हुई। यह संसार असार महादुख का भरा, हाय हाय ऐसे भाव हमारे क्यो हुये। पाप के योग से प्राणी नरक जाते है, और महा दुख भोगते है। ऐसा चिन्तवन करते ही वैराग्य उत्पन्न हुआ। तब माता पिता स्नेह से व्याकुल हुये। परन्तु हमने सबसे ममत्व त्याग दिगम्बर भेष धारण किया। आकाशगमिनी ऋद्धि प्राप्त हुई। अनेक तीर्थो की वन्दना की अनेक क्षेत्रो मे विहार किया। तप ही है धन जिनके। ऐसे ध्यान मे लीन हुये। राजा क्षेमकर पूर्वभव के हमारे पिता वह शोकरूपी अग्नि से तप्तायमान होकर आहार का त्यागकर मरण को प्राप्त हो गुरुडेन्द्र हुये। भवनवासी गरुडकुमार के अधिपति देव, महासुन्दर, पराक्रमी, महालोचन नाम वह आकर देवों की सभा मै बैठा है। और वह अनुधर तापसी भ्रमण करता हुआ, कौमुदी नगरी गया, अपने शिष्यो सहित बैठा, वहॉ का राजा सुमुख उसकी पटरानी रतिवती उसके एक मदना नृत्यकारिणी मानों मदन की पताका ही है, अतिसुन्दर रूपवान उसने साधुदत्तमुनि के समीप सम्यग्दर्शन को गृहण किया, तबसे कुगुरु कुदेव कुधर्म को तृणवत् जानने लगी। उसको एक दिन राजा ने कहा यह अनुधर तापसी महातप करता है। तब मदना ने कहा, हे नाथ! अज्ञानी का क्या तप, लोक मे पाखण्डरूप है। यह सुनकर राजा ने क्रोध किया तू तपस्वी की निदा करती है, तब मदना ने कहा, आप क्रोध मत करो, थोडे ही दिनो मे इसकी क्रियाये दिख जायेगी। ऐसा कहकर घर जाकर अपनी नागदत्ता पुत्री को सिखाकर तापसी के आश्रम मे भेजी। वह देवॉगना समान परम सुन्दरी महारूपवान तापसी को अपना शरीर दिखाती रही, तापसी इसके अंगोपाग महासुन्दर देखकर अज्ञानी मोहित हुआ। ऑखे चलायमान हुई उसके शरीरपर नेत्ररूक गये और मन भी बंध गया, कामवाणो से तापसी पीडित हुआ। व्याकुल होकर देवॉगना समान जो कन्या उसके पास आकर पूछता है, तू कौन है, कहॉ से आई है? सध्याकाल मे सभी ही छोटे बडे सब अपने स्थान में रहते हैं, तू महा रूपवान अकेली क्यो वनमे भ्रमण कर रही है? तब वह कन्या मीठी वाणी से तापसी का मन हरती हुई दीनता के वचन बोली। हे नाथ! दयावान, प्रतिपालक आज मेरी माता ने मुझे घर से निकाल दी है, सो अब मैं तापसनी का भेष बनाकर आपके स्थानपर रहना चाहती हूँ। आप मेरेपर कृपा करो। रात दिन आपकी सेवा से मेरा यहलोक परलोक दोनों सुधर जायेगा। धर्म अर्थ काम इनमे कौनसा पदार्थ है, जो आपसे नहीं प्राप्त हो

सकता है। आप परम बुद्धि मान हो, मैने पुण्य के योग से आपको पाया। इस प्रकार कन्या ने कहा, तब तापसी इसका मन अनुरागी जान, काम से प्रज्वलित होकर बोला, हे सुन्दरी! मैं क्या कृपा करूँ, तू मेरेपर कृपाकर प्रसन्न हो। मैं जन्म पर्यन्त तेरी सेवा करूँगा। ऐसा कहकर हाथ पकडने को चला, तब कन्या अपने हाथ से मनाकर आदर सहित कहती है, हे नाथ! मै कुमारी कन्या हूँ, ऐसा करना उचित नहीं। मेरी घर जाकर मेरी माता से पूछो, घर भी पास ही है। जैसे मेरेपर आपकी कृपा हुई, ऐसे मेरी मॉ को प्रसन्न करो, वह तुमको देगी। तब आपकी जो इच्छा हो वह करना। तब इस कन्या के वचन सुन मूढ तापसी व्याकुल होकर तत्काल कन्या के साथ रात्रि मे उसकी माता के पास आया। काम से व्याकुल है सब इन्द्रियॉ उसकी। तब दोनो ने नृत्यकारिणी के घर मे प्रवेश किया। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है—

हे राजन! कामी मनुष्य न स्पर्शे न सूघे, न देखे, न सुने, न जाने, न डरे और न ही लज्जा करते है। महा मोह से निरन्तर कष्ट को प्राप्त होते है। जैसे अधा प्राणी सर्प के भरे कुये मे गिरता है ऐसे कामाध जीव स्त्री के विषयरूपी विषमकूप मे गिरते है। वह तापसी नृत्यकारिणी के चरणो मे लोटकर कन्या की याचना करता रहा। उसने तापसी को बाध कर रखा। राजा को समस्या थी सो राजा ने आकर रात्रि मे तापसी को बधा देखा। प्रात काल तिरस्कार कर तापसी को निकाल दिया। वह तापसी अपमानित होकर लज्जा से महादुखी होकर पृथ्वीपर भ्रमणकर मरा और अनेक कुयोनियो मे जन्म मरणकर कर्मो के योग से पुन. दरिद्री के घर जन्म लिया। जब यह गर्भ मे आया, तब ही इसकी माता ने पिता को क्रूरशब्द कहकर कलह किया, अत· वह उदास होकर विदेश चला गया और इसका जन्म हुआ। बालक अवस्था थी तब भीलदेश के मनुष्यो को बदी बनाया। उसमे बालक की माता भी बदी बनी। सर्व कुटुब रहित बालक दुखी हुआ। कुछ दिनो के बाद तापसी होकर अज्ञान तपसे ज्योतिषी देवो मे अग्निप्रभ नाम का देव हुआ। और एकसमय अनन्तवीर्यकेवली को शिष्य ने पूछा—हे नाथ! मुनिसुव्रतनाथ भगवान को मोक्ष जाने के बाद आप केवली हुये। आपके समान संसार से तारने वाला दूसरा कौन होगा। तब केवलीभगवान ने कहा, देशभूषण कुलभूषण मुनि होगे। केवलज्ञान और केवलदर्शन को धारण करनेवाले, जगत मे सारभूत धर्मोपदेश सुनकर लोग ससार समुद्र से तिरेगे। यह वचन अग्निप्रभदेव ने सुना और अपने स्थान गया। वह देव कुअवधि से हमको इसपर्वत पर ध्यान करते

जान, अनन्तवीर्यकेवली के वचन मिथ्या करूँ ऐसे मान कषाय से पूर्वबैर के कारण उपसर्ग किया, सो तुमको बलभद्र नारायण जान भय से भाग गया। हे राम! हे पद्मलोचन! तुम चरम-शरीरी तद्भव मोक्षगामी बलभद्र हो और लक्ष्मण नारायण है। उन सहित तुमने सेवा की और हमारे घातियाकर्मोके क्षयसे केवलज्ञान प्राप्त हुआ। इस प्रकार प्राणियो के बैर के कारण सर्व बैरानुबध है, ऐसा जानकर जीवों के पूर्व भव सुन हे प्राणी! राग द्वेष छोडो। ऐसे महापवित्र केवली के वचन सुन देव मनुष्य एवं असुरो ने बारम्बार नमस्कार किया, और संसार के दुखो से डरे। और गरुडेन्द्रदेव परमहर्षित होकर केवली के चरणो मे नमस्कार कर महास्नेह की दृष्टि से रघुवश मे उद्योत करनेवाले श्रीरामचन्द्रजी को कहता है—हे राजन्! आपने मुनियो की भक्ति की, सो मै आपपर अति प्रसन्न हुआ। ये मुनि मेरे पूर्वभव के पुत्र है, इसलिये जो तुम मागो वह मै देता हूँ। तब श्री रघुनाथ एकक्षण विचारकर बोले आप देवो के स्वामी हो कभी हमारेपर सकट आये तो तुम हमे यादकर हमारी रक्षा करना। साधुओ की सेवा के प्रभाव से यह फल पाया, जो आपके समान देवो से मिलन हुआ। तब गरुडेन्द्र ने कहा, आपका वचन मैने प्रमाण किया, जब तुम्हारा काम होगा, तब मै आपके निकट ही रहूँगा। आपके सकटो मे मै रक्षा करूँगा। ऐसा कहा तब अनेकदेव मेघकी ध्वनी समान बाजे बजाते रहे। साधुओ के पूर्वभव सुन कोई मनुष्य मुनि बने, किसी ने श्रावक के व्रतों का पालन किया। वे देशभूषण कुलभूषणकेवली जगत पूज्य, सब ससार के दुखो से रहित नगर गॉव पर्वतादि सभी स्थानो मे विहार करते और धर्म का उपदेश देते थे। यह दोनो कवेलीभगवान के पूर्वभव का चारित्र जो निर्मल स्वभाव के धारी भव्य जीव पढते है पढाते हैं सुनते है सुनाते है वह सूर्य समान तेजस्वी पापरूपी अधकार को शीघ्र ही नाश करते है। और ससार के कष्ट सकट उपसर्ग आदि को नाशकर ज्ञान की वृद्धि करते हुये अत मे केवलज्ञान को प्राप्तकर मुक्ति पुरी मे गमन करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे देशभूषण कुलभूषण केवलीका चरित्रवर्णन करनेवाला उनतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-40

रामगिरी पर श्रीरामचन्द्र का पदार्पण

अथानंतर केवलीभगवान की वाणी से श्रीरामचन्द्रजी को चरम शरीरी तद्भव मोक्षगामी सुनकर सभी राजा जय जय शब्द कहकर प्रणाम करने लगे। और वशस्थल पुर का राजा शूरप्रभ महानिर्मल, मन से राम लक्ष्मण सीता की भक्ति करता रहा। महल के शिखरो की ज्योति से उज्ज्वल हुआ है आकाश वहॉ, ऐसा जो नगर उसमें चलने की राजा ने प्रार्थना की। परन्तु राम ने नहीं मानी, वशगिरी के शिखर, हेमाचल के शिखर समान सुन्दर वहॉ नलिनीवन मे महा रमणीक बडी शिला, यहॉ आकर हंस समान रामचन्द्रजी बैठे। कैसाहैवन? अनेकवृक्ष लताओ से पूर्ण, पक्षियो की ध्वनि से महा रमणीक सुगन्ध पवन, तरह तरह के फल फूलो से सुशोभित, सरोवरो मे कमल खिल रहे है, अतिसुन्दर स्थान, सभी ऋतुओ की शोभा युक्त मनोज्ञ भूमि, पांचवर्ण के रत्नो से शोभित वहॉ कुन्द, मौलसिरी, मालती, अशोकवृक्ष, नागवृक्ष, इत्यादि अनेकप्रकार के वृक्ष खिल रहे हैं। वहॉ राजा की आज्ञासे, भक्तपुरुषों ने श्रीराम के निवास के लिये वस्त्रो के मनोहर मडप बनवाये। सेवक जन महा सावधान मगलवाणी को बोलने वाले स्वामी की भक्ति मे तल्लीन उन्होने तरह तरह के चोडे ऊॅचे वस्त्रो के मंडप चित्र सहित बनवाये। उनमें ध्वजाये फहरा रही है। पृथ्वीपर मगल कलश रखे हुये है, और छत्र चमर सिहासनादि राजचिन्ह का सभी सामग्री उपलब्ध है। अनेक मगलद्रव्य है। ऐसे सुन्दर स्थान पर राम लक्ष्मण सीता सुख से रहते है। जहॉ जहॉ रघुनाथ पैर रखते वहॉ वहॉ की पृथ्वी के राजा अनेक तरह की सेवा करते है। शय्या, आसन, मणि सुवर्णो के उपकरण एवं इलायची, लवंग, मेवा मिष्ठान तथा अनुपम अमूल्य वस्त्र, आभूषण, महासुगन्धित स्वादिष्ट भोजन, दही, दूध, धृत तरह तरह के अनाज, अनुपम वस्तुयें लाते है। इस प्रकार सभी जगह, सब लोग श्रीरामचन्द्रजी को पूजते है, वंशगिरी पर श्रीराम लक्ष्मण सीता को रहने के लिये मंडप बनवाये उनमें कहीपर गीत, नृत्य, बाजे हो रहे हैं, कही पुण्य की कथायें हो रही है, और नृत्यकारिणीयॉ ऐसा नृत्य करती हैं मानो अप्सरायें ही हो। कोई दान दे रहे हैं। ऐसे मंदिर और राजभवन बनाये उनका वर्णन कौन कर सकता हैं वहॉ

सब सामग्री उपलब्ध है, कोई भी याचक मागने आये तो, खाली हाथ वापिस नहीं जाता। राम लक्ष्मण दोनो भाई अमूल्य सब आभूषणों से युक्त सुन्दर वस्त्र पहने, मनवांछित दान करने वाले, महा यशसे मंडित, और सीता परम सौभाग्यशाली, पाप क्रियाओं से रहित, शास्त्रो की ज्ञाता, उसकी महिमा कहॉ तक करें। और वशगिरी पर्वतपर श्रीरामचन्द्रजी ने जिनेश्वरदेव के हजारो अद्भूत चैत्यालय जिनमन्दिर बनवाये। महादृढ हैं स्तभ उनके, योग्य है लम्बाई चौडाई ऊँचाई जिनकी एव झरोखो तोरण सहित दरवाजे, कोट खाई से मंडित सुन्दर ध्वजाओं सहित, दर्शन करनेवाले भव्यजीवो के मनोहर शब्दो से युक्त मृदग, वीणा, बांसुरी, झांझ, मजीरा, शख, भेरी इत्यादि बाजो के शब्दो से निरन्तर महा उत्सव होते है। ऐसे राम के बनवाये जिनमन्दिर वहॉ पचवर्ण के प्रतिबिम्ब जिनेन्द्र भगवान के, सर्व लक्षणों से पूर्ण, सभी जीवो से पूज्य विराजमान थे। एक दिन श्रीराम कमललोचन लक्ष्मण से कहने लगे, हे भाई! यहॉ अपने को आये बहुत दिन बीत गये और सुख से इस पर्वतपर रहे, श्रीजिनेश्वर के चैत्यालय बनवाने से पृथ्वीपर निर्मलयश कीर्ति हुई, और इस वशस्थल पुर के राजा ने अपनी बहुत सेवा की, अपने मन प्रसन्न हुये, अब यहॉ ही रहे तो कार्य की सिद्धी नहीं होगी, और इन भोगो से मेरा मन प्रसन्न नहीं है। ये भोग रोग के समान है ऐसा ही मै जानता हूँ, फिर भी यह भोग मुझे क्षणमात्र छोडते नहीं है। जब तक मेरे सयम का उदय नहीं, तब तक ये भोग बिना प्रयत्न से ही आकर प्राप्त होते है। इस ससार मे जैसेकर्म यह प्राणी करते है उसका फल वैसे ही परभव मे भोगते है। और पूर्वभव मे किये कर्मोका फल वर्तमान काल मे भोगते है। इस स्थान मे निवास करते हुए अपने सभी सुख सम्पदा है, परन्तु जो दिन जा रहे है वह पुन· लौटकर नहीं आते, नदी का वेग, आयु के दिन और यौवन जाने के बाद पुनः नहीं आता है। इस कर्णरवा नामकी नदीके पास दण्डकवन सुनते है वहॉ भूमिगोचरियो का आना जाना नहीं और वहॉ भरतकी आज्ञा का प्रवेश नहीं। इसलिये वहॉ समुद्र के तटपर कोई एक स्थान बनाकर निवास करेगे। यह राम की आज्ञा सुनकर लक्ष्मण ने विनती की। हे नाथ! आप जो आज्ञा करोगे वही होगा। ऐसा विचारकर दोनो वीर महाधीर इन्द्र समान भोग भोगते हुये वशगिरी पर्वत से सीता सहित चले। राजा शूरप्रभ वशस्थलपुर का स्वामी बहुत दूरतक साथ गया, राम लक्ष्मण ने बडी मुश्किल से राजा को वापिस विदा किया। राजा

महाशोक सहित अपने नगर मे आया। श्रीराम का वियोग किन किनको शोक का कारण नहीं हुआ होगा। सबही दुखी थे। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं। हे श्रेणिक वह वशगिरी बडा पर्वत वहॉ अनेक धातु, सो रामचन्द्रजी ने जिनमन्दिरों की पक्तियो से पर्वत को शोभायमान किया। कैसे है जिनमन्दिर? भव्यों को सम्यग्दर्शन की प्राप्त मे कारणरूप है। उस पर्वतपर श्रीराम ने परमसुन्दर अद्‌भुत जिनमन्दिर बनवाये इसलिये वशगिरी पर्वत रामगिरी कहलाया। इस प्रकार पृथ्वीपर रामगिरी प्रसिद्ध हुई। रवि समान है प्रभा उनकी।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे रामगिरीका वर्णन करनेवाला चालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-41

जटायु पक्षी का व्याख्यान

अथानतर राजा अनरण्य के पोते, दशरथ के पुत्र राम, लक्ष्मण और सीता सहित दक्षिणदिशा के समुद्र की ओर चले। कैसेहैं दोनोभाई? महा सुखो के भोक्ता, नगर गॉवो से भरे अनेक देशो को देखते हुये आगे चले, सो महाभयकर वनमे प्रवेश किया। वहॉ अनेक मृगो के समूह हैं, उत्तम पुरुषो की बस्ती नहीं, वहॉका स्थान विषम, जहॉ भील भी विचरण नहीं कर सकते। वृक्ष और लताओसे भरे वनमे मार्ग भी नहीं दिखता, अति अधकाररूपी पर्वतों की गुफाये, गम्भीरध्वनी से निकलते हुये झरने बह रहे हैं। ऐसे वन मे जानकी के साथ धीरे धीरे एक एक कोश रोज चलते है। दोनो भाई निर्भय अनेक क्रीडाओ के करने वाले नर्मदा नदी पहुँचे। नदी के तटके पास महारमणीक प्रचुरवृक्ष पुष्पफलो के समूह से सुशोभित सघन महा छायाकारी, ऐसे स्थान को देख दोनों भाई बात करते हैं। यह वन अतिसुन्दर ओर नदी भी सुन्दर इसके समीप पर्वत ऐसा कहकर रमणीक वृक्ष की छाया मे सीता सहित बैठे। क्षण एक बैठकर वहॉ के रमणीक स्थानो को देखकर जल क्रीडा करने लगे। पुनः महा मधुर स्वादिष्ठ आरोग्य दायी पकेफल, अनाज का आहार तैयार किया। सुखकी ही कथा है उनके। वहॉ रसोई की सामग्री तथा बरतन मिट्टी या

बॉसो के तुरन्त ही बनाये, महास्वादिष्ट सुगधित आहार वनके अनाज सीता ने तैयार किये। भोजन के समय दोनो वीर मुनिको आहार देने की इच्छा से पडगाहन करने के लिये खडे हुये। उस समय दो चारण मुनि गुप्ति और सुगुप्ति आहार के लिये आये। उज्ज्वल ज्योति का धारी है शरीर उनका मति, श्रुत, अवधि, तीनज्ञान के धारी, महाव्रती, परमतपस्वी, सम्पूर्ण वस्तुओ की अभिलाषा से रहित, निर्मल परिणामी, एक महीने के उपवासी महाधीर वीर, नेत्रोंको प्रिय, शास्त्रोंक्त आचरण के धारी ऐसे महामुनि आकाश मार्गसे आहार के लिये आते दूरसे ही सीता ने देखे, तब महाहर्षित होकर प्रसन्न मुद्रा से, पतिको कहने लगी, हे नाथ! हे नरश्रेष्ठ! देखो! देखो! तप से दुर्बल शरीर दिगम्बर कल्याणकारी चारणमुनि युगल आये, तब राम ने कहा—हे प्रिये! हे पंडिते! हे सुन्दर मूर्ते! वे साधु कहॉहै? हे रूपआभूषणो से सुशोभित! धन्य है भाग्यतेरे। तुमने निर्ग्रंथ मुनिदेखे, उनके दर्शनसे जन्म जन्मके पाप नष्ट होते है। भक्तिसे प्राणी अपना परमकल्याण करने वाला होता है। जब राम ने इसप्रकार कहा, तब सीताने कहा 'ये आये', ये आये 'तबही दोनो मुनिराजों को रामने देखा। जीवदया के पालक इर्यासमिति पूर्वक। राम के पास आये, तब श्रीरामने सीतासहित सन्मुख जाकर नमस्कार कर भक्ति स्तुति से युक्त श्रद्धापूर्वक नवधाभक्ति सहित युगल मुनिराजों को आहार दिया। आरणी भैसोका एव वनकी गायोका दूध, और दाख, छुहारे, गिरी बदामादि, अनेकप्रकार के बनके धान्य सुगन्धित घी मिष्ठान इत्यादि मनोहर वस्तुओ से विधिपूर्वक मुनिराजो को पारणा कराया। वे मुनिराज भोजन की लोलुपता से रहित, निरतराय आहार किया। रामने सीता सहित भक्तिपूर्वक आहार दिया, तब वहॉ पचाश्चर्य हुये। रत्नो की वर्षा, पुष्पवृष्टि, शीतल मद सुगन्धपवन, दुदुभी बाजे, जय जयकार की ध्वनी हुई। जिस समय रामके यहॉ मुनिराजो का आहार हुआ, उस समय वनमे एक गृधपक्षी (जटाऊपक्षी) अपनी इच्छा अनुसार वृक्षपर बैठा था, मुनिराजो को देख निर्मल परिणामो से अतिशय युक्त अपने पूर्वभवो को देखा, अर्थात् जातिस्मरण हुआ। तब उसने जाना कि मै कईभवो के पहले मनुष्य था, प्रमाद व अज्ञानता से जन्मको निश्फल खोया, तप सयम नहीं किया, धिक्कार है मुझ अज्ञानी को, अब मै पापके उदयसे खोटी योनि मे आकर पडा हूँ, क्या उपाय करूँ? मुझे मनुष्य भव में पापी जीवों ने बहकाया। वह कहने के लिये मित्र थे परन्तु महा शत्रु थे। उनके कहने से मैंने धर्मरूपी रत्नोको छोड दिया। गुरुके वचनो का उलघनकर पाप किया, मैं मोह से अधा अज्ञानी सो धर्म

को नहीं पहिचाना। अब अपने कुकर्म को यादकर हृदय में जलता हूँ। बहुत सोचने से क्या, दुख को दूर करने के लिये, इन साधुओं की शरण प्राप्त करूँ। यह मुनि सर्वसुख के दाता, इनसे मेरे परमकल्याण की प्राप्ति निश्चय से होगी। इस प्रकार पूर्वभवो को याद करने से, पहले तो शोक को प्राप्त हुआ, पुन. साधु के दर्शन से तत्काल परमहर्षित होकर अपने दोनो पख हिलाय ऑसुओं के भरे नेत्रोंसे विनय पूर्वक वहपक्षी वृक्षके ऊपरसे पृथ्वीपर गिरा। वह मोटा पक्षी उसके गिरने की आवाज से हाथी सिंहादि वनके जीव भय से भाग गये और सीता भी व्याकुल हुई। और कहा देखो यह ढीठपक्षी मुनि के चरणों में कहॉ से आकर गिरा। कटु शब्दो से दूर हटाने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु वह पक्षी मुनि के चरणों के गन्धोदक मे आकर गिरा, उस गंधोदक के प्रभाव से क्षणमात्र मे उसका शरीर रत्नों की राशि समान तेज से मडित हो गया। पजे तो स्वर्ण की प्रभासमान और दोनों पैर वैडूर्यमणी समान हो गये। और शरीर अनेक प्रकार के रत्नो की ज्योति समान चोच मूगा समान हुई। तब यह पक्षी अपने शरीरको और सुन्दर रूपको देखकर हर्षको प्राप्त होकर, नृत्य करने लगा। मधुरनाद से मुक्त नेत्रों से आनन्द के अश्रुपात करता हुआ मुनिराजो के आगे भक्ति करता रहा। महामुनि विधिपूर्वक पारणाकर वैडूर्यमणि समान शिलापर विराजमान हुये। निर्मल है भाव, ऐसा पक्षी पॉव व पख सकोचकर, मुनि के चरणो में प्रणामकर, आगे बैठा, तब श्रीराम पक्षीको प्रकाशरूप देख आप परम आश्चर्य को प्राप्त हुये, साधुओं के चरणो मे नमस्कार कर पूछने लगे। कैसेहै साधु? अठाईस मूलगुण और चौरासीलाख उत्तरगुण वे ही हैं आभूषण उनके। बार बार पक्षी की ओर देख राम कहते है, हे भगवान! यह पक्षी पहले तो महाकुरुप था अब यह क्षणमात्र मे सुवर्ण रत्न की ज्योति समान कैसे हुआ, यह अशुचि मासभक्षी दुष्ट गृधपक्षी आपके चरणो के निकट बैठकर महा शात हुआ, यह क्या कारण है? तब सुगुप्ति मुनिराज कहते है।

हे राजन्! पहले इस स्थानपर दण्डक नाम का सुन्दर महादेश था। यहॉ अनेक गॉव, नगर, पटण, संवाहण, मटब, घोष, खेट, करवट, द्रोणमुख थे। बाड से युक्त गॉव, कोट खाई दरवाजों से युक्त नगर, रत्नो की खानों से युक्त पट्टन, पर्वत के ऊपर संवाहण, जिसके साथ में पॉच सौ गॉव लगे हों वह मटब है, गायों के आवास और ग्वालों के निवास वह घोष, जिसके आगे नदी वह खेट, जिसके पीछे पर्वत वह करवट, समुद्र के समीप वह द्रोणमुख इत्यादि अनेक रचनाकर शोभित, वहॉ

कर्ण कुण्डल नगर मे इसपक्षी का जीव दण्डक नाम का राजा था। महा प्रतापी, प्रचड, पराक्रमी, शत्रुओं को नष्ट करने वाला, महामानी, बडी सेनाका स्वामी, इस मूढ अज्ञानी ने, अधर्म की श्रद्धासे पापरूपी मिथ्याशास्त्रो का सेवन किया, जैसे कोई घी प्राप्ति के लिये जलका मंथनकरे, राजा की रानी दण्डियों की भक्त थी। उनकी अनुरागिनी होने से राजाभी रानीके वश में होकर परिव्राजको का मार्ग अपनाया, स्त्रीके वश हुआ पुरुष क्या क्या नहीं करता। एकदिन यह राजा नगरके बाहर निकला। वहॉ वनमें कायोत्सर्ग से युक्त ध्यान करते हुये महामुनि को देखे। तब इस निर्दयी राजाने मुनिके कठमे मरा सर्प डाला, राजाका मन पाषाण समान कठोर था, वह मुनिराज ध्यान में मौनपूर्वक बैठे थे और यह प्रतिज्ञा की, कि जब तक कोई मेरे कठ से सर्पको दूर नहीं करेगे, तब तक मै हलन चलन नहीं करूँगा। योगरूप ही रहूँ। किसी भी मनुष्यने सर्पको दूर नहीं किया, सो मुनि ध्यानमें ही खडे रहे। पुन· कुछ दिनों के पश्चात राजा उसी मार्गमे गया, उसी समय कोई सज्जनपुरुषने मुनिके गले से सर्प निकाला और मुनि के पास बैठा था। राजा ने उस मनुष्य से पूछा कि मुनि के गले में से सर्प किसने निकाला और कब निकाला? तब उसने कहा, हे राजन्! किसी नरकगामी मनुष्यने ध्यान मे बैठे हुये मुनिराज के कठ मे मरा सर्प डाला था, उस सर्पके कारण साधुका शरीर अतिखेद खिन्न हुआ, परन्तु इनको तो कोई दुख नहीं, आज अभी मैने मुनि के कठ से सर्प निकाला है। तब राजा मुनिको शातस्वरूप कषाय रहित जान प्रणामकर अपने स्थान गया। उस दिनसे राजा मुनियो की भक्ति मे अनुरागी हुआ, और किसीको उपद्रव नहीं करता। यह वृतान्त रानी ने दण्डियों के मुख से सुना कि राजा जिनधर्म को मानने वाला अनुरागी हुआ। तब पापिनी रानीने क्रोधकर मुनियो के मारने का उपाय किया। जो दुष्ट जीव हैं, वह अपने जीवन का यत्नछोड दूसरो का अहित करते है। सो पापिनी ने अपने गुरु को कहा, तुम निर्ग्रंथमुनि का रूप बनाकर मेरे महल मे आओ और विकाररूप क्रिया करो। तब उन दण्डियो ने ऐसा ही किया। राजा ने यह सब वृतान्त जानकर मुनियो से क्रोधित हुआ। और मत्री आदि दुष्ट मिथ्यादृष्टि नित्य ही मुनियो की निदा करते है। और भी अन्य खोटे परिणामी जीवो ने राजा को भ्रमाया। उस पापी राजा ने मुनियों को घानी (यत्र) मे पेलने की आज्ञा दी। आचार्य और मुनि सहित सभी साधुओ को यत्र मे पेले। एक साधु शौच के लिये बाहर गये थे, पुन· वापिस लौटकर आ रहे थे, तब किसी दयावान पुरुषने कहा अनेक मुनिराजो

को पापी राजाने यत्रमें डालकर मार दिये हैं, आप यहाँ से चले जाओ, आपका शरीर धर्म का साधन है, इसलिये अपने शरीर की रक्षा आपको करनी है। तब यह समाचार सुन मुनिको संघके मरणके शोक से चुभी है दुखरूपी वज्रकी नोक उनको, क्षणएक स्थंभ समान निश्चल होकर खडे रहे। पुन नहीं सहा जाय ऐसा दुख, उससे अतिक्लेश रूप हुआ मुनिरूप जो पर्वत, उसकी समतारूपी गुफासे, क्रोधरूपी केशरीसिह निकला, मुनि के नेत्र लाल हुये, तेज से आकाश संध्या के रंग समान हो गया, क्रोध से तप्तायमान मुनि, उनके शरीर में पसीने की बूदे टपक गई फिर काल अग्नि समान प्रज्वलित बॉये कंधे से अग्नि (तेजस) पुतला निकला, उससे धरती और आकाश अग्निरूप हो गया, लोग हाहाकार करते हुये, मरण को प्राप्त हुये जैसे बांस का वन जलता है, ऐसे देश नगर जलकर नष्ट हो गया। न राजा, न अन्तपुर, नही गॉव नगर, पर्वत, नदी, वन कोईभी वस्तु एवं कोईभी प्राणी उसदेशमें नहीं बचा। महाज्ञान वैराग्य के योग से, बहुत दिनो में मुनिराज ने, समता भावरूपी जो, धन उत्पन्न किया था, वह तत्काल क्रोधरूपी शत्रुने, हरण किया। दण्डक देश का दण्डकराजा, पापके कारण प्रलयरूप हुआ, इसलिये अब यह दण्डकवन कहलाता है। कई वर्षोंतक यहॉ तृण भी उत्पन्न नहीं हुआ। फिर बहुतकाल के पश्चात् मुनियों का यहॉ विहार हुआ उनके प्रभाव से वृक्षादि उत्पन्न हुये यह वन देवोंको भी भयकारी है। विद्याधरों की तो क्या बात? सिंह व्याध्र अष्टापदादि अनेक जीवों से भरा और नानाप्रकार के पक्षीयो की कोलाहल है। वह राजा दण्डक महाप्रबल शक्तिका धारी था। सो मुनियों को मारकर पापके कारण नरक तिर्यंच गतियो मे बहुत कालभ्रमण कर यह गृध पक्षी हुआ। अब इसके पापकर्म कुछकम हुये हैं, हमको देख पूर्वभव का स्मरण हुआ। ऐसा जानकर जिनआज्ञा को मानकर संसार शरीर भोगों से विरक्त होकर धर्ममार्ग में लगे रहना चाहिये। दूसरे जीवो का दृष्टान्त अपने शात परिणामो की उत्पत्ति का कारण है। इस गृधपक्षी की अपनी विपरीत क्रियायें पूर्वभव की याद आई है, इसलिये वह कम्पायमान हैं। पक्षीपर दयालु होकर मुनि कहने लगे, हे भव्य! अब तू भयमत कर, जिस समय जैसी होनी होगी, वैसा होगा, रूदन क्यो करता है, होनहार को कोई मेट नहीं सकता। अब तू शांतिकर सुखी होगा, पश्चाताप छोड, देख कहा यह वन और कहां सीता सहित श्रीराम का आना और कहॉ हमको वनचर्या का नियम कि जो वनमे श्रावकके यहॉ आहार मिलेगा तो लेगे। और कहॉ तेरा हमको देख जातिस्मरण होना, कर्मो की गति विचित्र है, कर्मो की विचित्रता से जगत की

विचित्रता हैं, हमने जो अनुभव किया, देखा ओर सुना है वह कहते है, पक्षी को सबोधन करने के लिये श्रीराम का अभिप्राय जान सुगुप्तिमुनि अपना और दूसरे गुप्तिमुनि दोनों के वैराग्य का कारण कहने लगे। एक बाराणसी नगरी, वहाँ का राजा अचल उनकी रानी गिरदेवी उनने एकदिन त्रिगुप्तिनाम के मुनिराज को आहार दिया, जब आहार निरन्तराय हो चुका, तब रानीने मुनिसे पूछा हे नाथ! यह मेरा गृहस्थजीवन सफल होगा या नहीं, अर्थात् मेरे पुत्रहोगा या नहीं। तब वचनगुप्ति के धारी मुनिराज ने इसके सन्देह को दूर किया, और कहा तुम्हारे दो पुत्र विवेकी होगे। सो हम दोनोंपुत्र त्रिगुप्ति मुनिके आशीर्वाद से हुये, इसलिये हमारे माता पिता ने हमारा नाम सुगप्ति और गुप्ति रखा। हमदोनो राजकुमार लक्ष्मीसे पूर्ण सर्वकलाओं के पारगामी लोगो के प्यारे अनेकक्रीडाओ को करते हुये घर मे रहे।

अथानतर एक और वृतान्त हुआ, गन्धवती नगरी के राजा का पुरोहित सोम उसके दो पुत्र एकसुकेतु दूसराअग्निकेतु, उन दोनो भाईयो मे परस्पर अतिप्रेम था। सुकेतु का विवाह हुआ, तब यह चिन्ता हुई कि कभी इस स्त्री के कारण हमदोनो भाईयों को कहीं अलग नहीं होना पडे। फिर शुभकर्म के योगसे सुकेतु को वैराग्य हुआ, तब अनन्तवीर्यस्वामी के समीप मुनि बन गये। और छोटा भाई अग्निकेतु भाई के वियोग से अत्यन्त दुखी होकर बाराणसी नगरी मे तापस हुआ, तब बडाभाई सुकेतु जो मुनि हुये थे, उन्होंने छोटे भाई को तापस हुआ जान, सम्बोधन करने के लिये भाई के पास जानेकी गुरु से आज्ञा मागी। तब गुरु ने कहा, तुम भाई को समझाना चाहते हो तो यह वृतान्त सुनो, तब सुकेतु मुनिने कहा, हे नाथ! क्या वृतान्त है तब गुरुने कहा वह तुम्हारे से मतपक्ष का विवाद करेगा, और तुम्हारे विवाद के समय एक कन्या गगा के किनारे तीनस्त्रीयो सहित आयेगी। उनका गौरवर्ण, अनेकरंग के वस्त्र पहने दिनके पिछले पहर में आयेगीं। तुम इन चिन्होसे जानकर भाईसे कहना इस कन्या का क्या शुभ अशुभ होनहार है, सो बताओ तब वह दुखी होकर कहेगा। मैं तो नहीं जानता, तुम जानते हो तो कहो, तब तुम कहना इसनगर में एक प्रवरनाम का श्रेष्ठि, धनवान उसकी यह सचिरा नामकी पुत्री है, वह आजसे तीसरेदिन मरणकर कम्बरगाँव मे विलासनाम का, कन्याके पिता का मामा उसके यहाँ बकरी होगी, उसे ल्याली मारेगा। वह मरकर गेंडा होगी, फिर भैंस, फिर मरकर उसी विलास के यहाँ विधूरा नामकी पुत्री होगी। यह बात गुरुने कही, तब सुकेतु मुनिने सुनकर गुरुको प्रणामकर तापसीयो के आश्रम में आये, जिस प्रकार गुरुने

कहा था, उसी प्रकार तापसियों से कहा और उसी तरह ही हुआ। वह विलास की पुत्री विधूरा से प्रवरनाम का श्रेष्ठि विवाह करने लगा, तब अग्निकेतु ने कहा यह तेरी रुचिरानाम की पुत्री वह मरकर अजा, भेडिया, भैस हुई अब तेरे मामा के पुत्री हुई है। अब तुझे इससे विवाह करना उचित नहीं, और विलास को ही सब वृतान्त कहा, और कन्या के पूर्वभव कहे। यह सुनकर कन्या को जातिस्मरण हुआ। कुटुंब से मोहछोड सब सभा को कहती है, यह प्रवर मेरा पूर्वभव का पिता है, ऐसा कहकर आर्यिका बनी और अग्निकेतु तापस, मुनि बना। यह वृतान्त सुनकर हम दोनों भाईयों को वैराग्य हुआ और अनन्तवीर्य स्वामी के निकट मुनिव्रत को धारण किया। मोह के उदय से जीवोंको संसाररूपी वनमे भटकाने वाले अनेक अनाचार होते हैं। सत्गुरु के प्रभाव से दुराचार दूर होता है। ससार असार है माता पिता मित्र स्त्री सन्तानादि सुख दुख के सबही साधन नाशवान है। ऐसा सुनकर जटायुपक्षी संसार के दुखो से डरने लगा, धर्मगृहण की इच्छासे बार बार शब्द करता रहा। तब गुरु ने कहा, हे भव्य! तू भय मतकर श्रावकके व्रत ग्रहणकरो जिससे दुःख की परम्परा नष्ट हो जायेगी। किसी जीवको दुख मत देना, अहिंसा व्रत धारणकर मृषा वचनछोड, सत्यव्रत धारणकरो, चोरी नहीं करना, परस्त्री का त्याग करना, तथा सर्वथा ब्रह्मचर्य का पालन करना, तृष्णा छोड सन्तोष धारण करना रात्रि भोजन एव अभक्ष आहारका त्याग करना, और त्रिकाल सामायिक मे जिनेन्द्रप्रभु का ध्यान करना। हे सुबुद्धि! उपवासादि तप करना, नियम का पालन करना, प्रमाद रहित होकर इन्द्रियो को जीतना, साधु की भक्ति करना, देवअरहन्त, गुरुनिर्ग्रंथ दयामयीधर्म का श्रद्धान करना। इस प्रकार मुनिने उपदेश दिया। तब पक्षीने बारम्बार नमस्कार कर मुनिके चरणोंमें श्रावकके व्रतोंको धारण किया। सीता ने जाना कि यह उत्तम श्रावक हुआ। तब हर्षित होकर अपने हाथो से बहुत प्यार किया। पक्षीको विश्वास कराकर दोनों मुनि कहने लगे, यह पक्षी तपस्वी शातचित्त हुआ कहॉ जायेगा। गहन वनमें अनेकक्रूरजीव हैं। इस सम्यग्दृष्टि पक्षीकी तुम हमेशा रक्षाकरना, यह गुरुके वचनसुन सीता पक्षीको प्रसन्न मनसे अनुग्रह किया। जैसे गरुडकी माता गरुडको पाले ऐसे ही राजाजनक की राजपुत्री इस पक्षीको करकमलों से पालती शोभे है। श्रीराम लक्ष्मण पक्षीको जिनधर्मी जान अतिधर्मानुराग करने लगे। और मुनिराजो की स्तुतिकर नमस्कार किया, दोनो चारण मुनि आकाशमार्ग से विहारकर गये। सो जाते हुये कैसे सुन्दर लगे? मानो धर्मरूपी समुद्रकी कल्लोलही है।

और एक हाथी मदोन्मत्त वनमे उपद्रव करने लगा। लक्ष्मण ने उसे वशकर उसपर बैठ रामके पासआये वह गजराज गिरीराज समान उसे देख राम प्रसन्न हुये और वह ज्ञानी जटायुपक्षी मुनिकी आज्ञाप्रमाण यथाविधि अणुव्रतो को पालन करता रहा। महापुण्य के योग से राम लक्ष्मण सीता का सानिध्य प्राप्त किया। इनके साथही, पृथ्वीपर विहार करता। यह कथा गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे राजन्! धर्मका माहात्मदेखो इसजन्म मे वह कुरुपपक्षी भी अद्‌भुत रूप वाला हो गया, पहले मांसभक्षी, दुर्गन्धनिद्यपक्षी, सुगन्ध के भरे कचन कलश समान महासुगन्धमय सुन्दर शरीरवान हो गया। कहीं अग्नि की शिखासमान कहीं वैडूर्यमणी समान, कही स्वर्णसमान, प्रभाको धारण किया। राम लक्ष्मण के पास वह सुन्दरपक्षी श्रावक के व्रतधार महास्वाद सयुक्त भोजन करता रहा। पक्षी का महाभाग्य जो राम लक्ष्मण की संगति पाई रामके अनुग्रह से अनेकधर्म चर्चाओ को सुनकर दृढ श्रद्धानी बना। राम जटायुपक्षी का लाड करते है उसके शरीरपर रत्न स्वर्ण की किरणो समान बाल हुये इसलिये उसका नाम रामने जटायु रखा। राम लक्ष्मण सीता को अतिप्रिय, हस की चाल को जीतने वाला, महासुन्दर मनोहर रामके मनको मोहित किया, उस वनके और जो पक्षी उसको देखकर आश्चर्य को प्राप्त होते थे। यह व्रती श्रावक तीनोकाल मे सीता के साथ भक्तिपूर्वक नम्रीभूत होकर अरहत सिद्ध साधुओ की वदना करता था। महादयावान जानकी, जटायु पक्षीपर अतिकृपा करती हुई, रक्षा करे। कैसीहैजानकी? जिनधर्म मे है अनुराग। वहपक्षी महाशुद्ध अमृत समान फल शुद्ध अनाज छनाजल इत्यादि शुभ वस्तुओ का आहार करता था। श्रीभगवान की भक्तिमे लीन राजाजनककी राजपुत्री, रामकी रानीसीता, जब ताल बजावे, और राम लक्ष्मण दोनों भाई ताल के अनुसार तान लावे, तब वह जटायुपक्षी रविसमान ज्योति का धारी परमहर्षित होकर ताल और तानके अनुसार नृत्य करता है। पुण्य एव गुरु के प्रभाव से सुखमय जीवनको प्राप्त हुआ इसलिये पुण्यकार्य करना चाहिए।

इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे जटायुपक्षी का व्याख्यान करनेवाला इकतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-42

श्रीरामका दण्डकवन में निवास

अथानंतर पात्र दानके प्रभावसे राम लक्ष्मण सीता इसलोक मे रत्न स्वर्णादि सम्पदा से पूर्ण हुये। एक सुवर्णमयी, रत्नजडित, अनेक रचनाओं से सुन्दर, मनोहर स्तभ, रमणीक बेदिका, मध्य मे विराजमान होने का गर्भगृह, मोतियो की माला, सुन्दरझालर, बडे बडे झरोखे, उनपर तोरणादि की शोभा बनी हुई है, मोतियों की झालरे लटक रही है, सुगन्ध चन्दन कपूरादि से मंडित, उसमें सेज, आसन, वस्त्रसे पूरित एक विमान समान अद्भुत रथ बनाया। उसमे चारहाथी जुते थे। उसरथ मे बैठे राम लक्ष्मण सीता जटायु सहित मनोहर वनमे विहार करते थे। उनको किसीप्रकार का भय नहीं, किसी का घात नहीं, वह उस मनोहर वनमे इच्छानुसार कहीं एकदिन कहीं पन्द्रहदिन कहीं एकमास मन वाच्छित क्रीडा करते। उनको ऐसी अभिलाषा की यहाँ निवास करे या वहाँ निवास करे। नवीन शिष्य की तरह उनकी इच्छा अनेक अनेक स्थानोंपर, ठहरने की हुई। महानिर्मल पानीके झरनों को देखते हुये ऊँची नीची जमीन को छोडकर समतल भूमिपर देखते और ऊँचे ऊँचे वृक्षोको उलघनकर, धीरे धीरे आगे गये। अपनी स्वेच्छा से भ्रमण करते ये धीर वीर सिहसमान निर्भय दण्डकवनके मध्यभाग मे प्रवेश किया। कैसाहै वहस्थान? कायरो को भयकारी, वहाँके पर्वत विचित्र शिखरके धारी, महारमणीक पानी के झरने, वहाँसे नदियाँ निकली, अथवा अनेकवृक्ष, बड, पीपल, बहेडा, सरसो, इमली, केला, अखरोट, देवदारु, कदम्ब, तिल, अशोक, नील, जामुन, आम, कमल, गुलाब, कनेर, चम्पा, प्रीयगु, सप्तपर्ण, नागकेशर, आवला, अर्जुन, केतनी, केवडा, रवेर नींबु, खजूर, छुहारे, चारोली, विजोरा, दाडिम, नारियल, हरड, केत, सुपारी, अजवायन, दालचीनी, इलायची, लोंग, जायफल, जावन्तरी, तामूलकीबेल, चन्दनवृक्ष पिस्ता, काजू, किसमिस, बादाम, कालीमिर्च, जीरा, सौंफ, सेब, सन्तरा, अमरूद, पपीता, चीकू इत्यादि अनेकजाति के वृक्षोंसे सुशोभित नन्दनवन समान हो रहा है। और स्वयं उत्पन्न होने वाले अनाज महारस के भरे फल गन्ने इत्यादि अनेक वस्तुओ से पूर्ण शीतल मन्द सुगन्ध पवन से कोमल कोपलें हिल रही है सो मानो राम के आने से हर्षपूर्वक नृत्यकर रही है।

सुगधित वायु के द्वारा उडती हुई पुष्पों की रज उनके शरीर से लग रही है मानो अटवी ही आलिंगनकर रही है भ्रमर गुजारकर रहे हैं मानो रामके पधारनेसे प्रसन्न होकर सगीत कररहे हैं। मनोहर पर्वतसे झरनोके छींटे उछलकर शब्द करते है, मानो हॅसही रहे है, और पक्षी हस, कोयल, मोर, सूवा, मैनादि अनेक पक्षियों का कोलाहल हो रहा है, मानों राम लक्ष्मण सीता के आनेका आदरही कररहे हैं, मानों वहपक्षी कोमलमधुरवाणी से ऐसा वचन कहते है कि महाराज यहॉ पधारो, भलेही यहॉरहो। और सरोवरमे सफेद श्याम लाल कमल खिल रहे है। वह मानो रामको देखनेके कौतुहलसे हर्षमना रहे हैं। वृक्ष पर फल झुक गये मानो रामको नमस्कार करते है। सुगन्ध पवन चलती है मानो रामके आनेसे आनन्दके श्वास लेती है। सो श्रीराम सुमेरु के सौमनस वनसमान वनको देखकर जानकी से कहते है।

हे प्रिये! देखो यहवृक्ष बेलो से लिपटा हुआ पुष्प गुच्छो के समूह से मानो गृहस्थी समान ही दिख रहा है। और प्रियगो की बेल मौलश्री के वृक्ष से लगी ऐसी सुन्दर लगे, जैसे जीवदया जैन धर्म से शोभे। और माधवीलता के पवन से चचल पत्ते समीप के वृक्षो को स्पर्श करते है, जैसे विद्या विनयवान को स्पर्श करे। और हे पतिव्रते! यह वनका हाथी मदके कारण आलस रूप है, वह हथनी के प्रेम से कमलो के वनमे प्रवेश करता है। जैसे अज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव विषय वासना मे प्रवेश करे। और हे दृढव्रते! यह इन्द्रनीलमणि समान श्यामवर्ण का सर्प बिलसे निकलकर मोर को देख पुनः भागकर बिलमे घुस जाता है, जैसे विवेक से काम भोग भागकर ससार मे छिप जाता है। देखो यह सिह केशरी महा साहसरूपी चरित्र की इस गुफामे बैठा हुआ था, सो अपने रथका नादसुन निद्रा छोड गुफा के दरवाजे आकर खडा हुआ, जैसे ज्ञानरूपी सिह चारित्ररूपी गुफा मे सोया है, परन्तु गुरुके उपदेश सुन प्रमादछोड निर्भय होकर चारित्र की साधना के लिये बाहर आया। यह मृग मरण से कायर पापी जीवो के भय से सावधान है, आपको देख अतिप्रीति को प्राप्त हुया। हे गजगामिनी! इस वनमे अनेक हाथी विचरण करते है, परन्तु तुम्हारी जैसी चाल इनके नहीं, तुम्हारी चालको देख अनुराग होता हैं। और हे कला निधि! अष्टापदादि क्रूरजीवो से भरा है, यह वन सघनवृक्ष, पत्र, पुष्प से सहित है, कहीं हाथी वृक्षोको उखाडते है, जैसे मानीपुरुष धर्मरूपी वृक्षको उखाडता है। जगह जगह वन लाल हो रहा है, कही सफेद, कही पीला, हरा, काला, चंचल, निश्चल कहीं शब्दसहित, कहीं शब्दरहित, कहीं गहनवृक्ष,

कहीं विरस, कहीं सरस, कहीं सम, कहीं विषम, इस प्रकार अनेक तरह का दिखता है, जैसे यह दण्डकवन अनेक तरह का हैं जैसे कर्मोका फल कईतरह का होता है हे जनकसुते! जो जैनधर्म को धारण करते है वहकर्म से रहित होकर निर्वाण को प्राप्त करते हैं। जीव दयासमान कोई धर्मनहीं, जो अपने समान, दूसरे जीवों को जानता है एवं दया करता है, वह ही भवसागर से पार होता है। यह दण्डकनाम का पर्वत ऊँचा आकाश से लग रहा हैं, इसलिये इसे दण्डकवन कहते है। यह वन अनेकधातु एव औषधियो से भरा है, झरनो को पानी बहता है। हे सुबुद्धिकी धारी! इस वनमें वृक्ष फल के भार से झुक रहे है, मानो तुम्हे नमन करते है। हे प्रिये! इसपर्वत से यह क्रौंचरवानदी निकली है जैसे जिनराज के मुह से जिनवाणी निकले, नदी का जल ऐसा मीठा है, जैसे तेरी वाणी मधुर मीठी है, हे सुकेशी! पवनसे जलमे लहरे उठ रही है, उसमे मगर मच्छ भयकर है, कहीं पानी का वेग प्रवाहरूप शीध्रता से चल रहा है। जैसे ध्यानी मुनि के कर्म वर्गणाये शीघ्रता से बाहर निकलती है, कहीं शीतलजल, कही वेगरूप, कही कालीशिला, कहीं सफेद शिला उनकी ज्योति से जल नीला सफेद आदि कई रग का हो रहा है मानो हलधर-हरि का स्वरूप ही है। हे काते! यह कमल पुष्पोपर निरन्तर भवरे गुजायमान होते है, फुलो की सुगध है, परन्तु आपके शरीरकी सुगध के समान नहीं हैं। इस नदीका जल पाताल समान गभीर है, मानों तुम्हारे मन जैसी गम्भीरता को चाहता हैं। यह नदी अनेकबहाव से समुद्र मे चली जा रही है जैसे उत्तमशील की धारी राजाओं की राजकन्याये विवाहकर पति के साथ चली जाती है। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी अतिप्रेम से सीता को कहते है, तब वह पतिव्रता हर्षके समूह से भरी पतिपर प्रसन्न होकर आदर से कहती है।

हे करुणानिधे! इस नदीका जल निर्मल है, परन्तु जैसा आपका मन निर्मल है, वैसा नदीका जल निर्मलनहीं। और जैसे आप सघन ओर सुगध हो वैसा वन नहीं। जैसे आप उच्च व स्थिर हो वैसे गिरी नहीं। और जिनका मन आपमें अनुरागी हुआ है, उनका मन दूसरी जगह नहीं जायेगा। इस प्रकार राजकुमारी सीता के अनेकशुभ वचन श्रीरामचन्द्र जी ने भाई सहित सुनकर अतिप्रसन्न होकर सीताकी प्रशंसा करने लगे। नदी के किनारेपर मनोहर स्थान देख, हाथियों के रथ से नीचेउतर लक्ष्मण अनेक स्वादयुक्त सुन्दर मिष्टफल फूल लाये। पुन राम सहित जलक्रीडा के अनुरागी हुये, जैसी जलक्रीडा इन्द्र नागेन्द्र चक्रवर्ती करते हैं,

वैसी राम लक्ष्मण ने की। राम जलक्रीडा करते रहे इनकी क्रियाओ को देख वनके तिर्यंचभी मनकी एकाग्रता पूर्वक इनकी ओर देखते रहे। सीता सगीत गा रही है, धुनके अनुसार राम ताल बजा रहे है, राम जल क्रीडामे आसक्त, लक्ष्मण राम के चारो तरफ भ्रमणकर रहे है, राम अपने इच्छा प्रमाण जलक्रीडाकर समीप के पशु पक्षियों को आनन्दित कराकर जलसे बाहर आ गये। मिष्टफलो का रामादि ने भोजन किया भूख की वेदना शांतकर लताओ के मडप मे बैठे। यहॉ सूर्य कि किरणों का आताप नहीं, देवो समान सुन्दर नाना प्रकार की कथाये एवं भोग करते हुये सीता सहित आनन्दित थे। कैसीहैसीता? जटायु के मस्तकपर हाथ है उसका, तब रामने लक्ष्मण से कहा, हेभाई! यहॉ अनेकवृक्ष, स्वादिष्टफल, निर्मलजल से भरी नदी, लताओ के मडप, दण्डकनाम का पर्वत, अनेक रत्नोसे भरा, और यहॉ अनेक अनेक स्थान क्रीडा करने के है, इसलिये इसपर्वत के निकट एकसुन्दर नगरबसायेगे यह वन अत्यन्त मनोहर अन्य लोगो का आना जाना नहीं। यहॉ का निवास हर्ष का कारण है, यहॉ स्थान बनाकर, हे भाई! तुम दोनो माताओ को लेने जाओ। वे अत्यन्त शोकवान है शीघ्र ही लाना है। अथवा तुम सीता और जटायु यहॉ रहो मै माताओं को लेने जाऊँगा। तब लक्ष्मण ने हाथजोड नमस्कारकर कहा हे देव! जो आपकी आज्ञा होगी वही होगा। तब राम ने कहा, अब तो वर्षाऋतु आई, ग्रीष्मऋतु गई। यह वर्षाऋतु अतिभयकर उसमे समुद्र समान बादल गरजते हुये चारो तरफ छाये रहते, अजनगिरी समान दशो दिशाये श्याम हो जाती है, बिजलियॉ चमकती भयकर बारिश होती, जैसे भगवान के जन्मकल्याणक मे देव रत्नधारा बरसाते है। और देख हे भाई! यह श्यामघटा तेरेरग समान सुन्दरजलकी बूद बरसाते है, जैसे तू दान की धारा बरसाता। ये बादल आकाश मे घूमते हुये बिजली की चंचलता से युक्त पर्वत को पानी की धाराओ से आच्छादते ध्वनि करते कितने शोभित होते है जैसे तुम पीत वस्त्र पहने अनेक राजाओ को आज्ञा करते पृथ्वी को कृपादृष्टिरूप अमृतकी वृष्टिकर सींचते हुये शोभित होते हो। हे वीर! कोई बादल वायु के झोके से आकाश मे भ्रमण करते, जैसे यौवन अवस्था मे असयमियो का मन विषय वासना मे भ्रमण करता है, और मेघ के बादल खेतो को छोड पर्वतपर बरसते है, जैसे कोई धनवान पात्रदान एव करुणादान को छोड वेश्यादि कुमार्ग मे लगाते है। हे लक्ष्मण! इस वर्षाऋतु मे अतिप्रवाह से नदी बहती है और धरतीपर कीचड हो रहा है, प्रचड हवा चलती है पृथ्वीपर चारो तरफ

हरियाली ही हरियाली हो रही है, त्रसजीव विशेषरूप से उत्पन्नहो रहे है। इस समय महापुरुषों का विहार नहीं होता। ऐसे वचन श्रीरामचन्द्रजी के सुनकर सुमित्रा का राजपुत्र लक्ष्मण बोला, हे नाथ! जो आप आज्ञा करोगे वही मै करूँगा। ऐसी सुन्दर कथा करते दोनो वीर महाधीर रमणीक स्थान मे सुखपूर्वक वर्षाकाल पूर्णकिया कैसाहैवर्षाकाल? उस समय सूर्य भी नहीं दिखता है। पुण्य के योगसे जगल मे भी मगलहो रहे हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावाचनिका मे दण्डकवन का निवास वर्णनकरनेवाला बयालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-43

रावण के भानजे शंबूका सूर्यहास-खड्ग साधना और लक्ष्मणके हाथसे मरण

अथानतर वर्षाऋतु समाप्त हुई शरदऋतु का आगमन हुआ। मानो शरदऋतु चन्द्रमा की किरण रूपी वाणो से वर्षारूपी शत्रुको जीत पृथ्वीपर अपना राज्य जमाया। शरदऋतु के योग से फूलो की सुगन्धता फैली, उस पर भ्रंमर गुजार करते रहे। निर्मल जलसे नदी के दोनो किनारे सुन्दर दृश्यमान हुये। शरदऋतु मे कामी जनो को कामकी वासना उत्पन्न हुई, सरोवर मे कमल खिले, पक्षी नाद करे। इस प्रकार शरदऋतु प्रगट हुई। तब लक्ष्मण बडे भाई की आज्ञा लेकर सिहसमान महापराक्रमी वन देखने को अकेले निकलकर आगे गये। सुगन्ध पवन आई तब लक्ष्मण विचारनेलगे कि यह सुगन्ध किसकी है ऐसी अद्भुत सुगन्ध वृक्षोकी नहीं, अथवा मेरे शरीर की भी ऐसी सुगन्ध नहीं है। यह सीताजी के शरीर की सुगन्ध होगी या रामजी की होगी, तथा कोई देव आया हो, ऐसी शका लक्ष्मण को हुई। यह कथा राजाश्रेणिक ने सुन गौतमस्वामी से पूछा—हे प्रभो! जिस सुगन्ध का आश्चर्य वासुदेव को हुआ वह सुगध किसकी थी? तब गौतमगणधर ने कहा, कैसेहैंगौतम देव? शकारूपी अंधकारको दूर करने मे सूर्य समान है। पापरूपी रजको उडाने मे पवन समान है। गौतमस्वामी ने कहा, हे श्रेणिक! दूसरे तीर्थकर

श्रीअजितनाथ भगवान उनके समोशरण में मेघवाहन विद्याधर भयभीत होकर प्रभुकी शरण मे आया, तब राक्षसो के इन्द्र महाभीम ने त्रिकुटाचलपर्वत के पास राक्षस द्वीप में लंका नामकी नगरी मेघवाहन को कृपा करके दी। और रहस्य की गुप्त बाते बताई। हे विद्याधर सुनो! भरतक्षेत्र के दक्षिणादिशा की तरफ, और लवण समुद्र के उत्तर की तरफ, पृथ्वी के नीचे एक अलकारोदय नाम का नगर है। वह अद्भुत स्थान नाना रत्नो का खजाना, देवो को भी आश्चर्य उत्पन्न होता, तो मनुष्यो की क्या बात। भूमिगोचरियो का तो आना जाना ही नहीं है और विद्याधरो को भी अतिदुर्लभ है। चिन्तवन मे भी नहीं आता, सर्व गुणो से पूर्ण, मणियो के मन्दिर, शत्रुओ का प्रवेश उसमें नहीं है, सो कदाचित तुमको अथवा तुम्हारी सन्तान को परचक्र का भय उत्पन्न हो तो अलकारोदपुर में निर्भय होकर रहना, इसे ही पाताल लका कहते है। ऐसा कहकर महाभीम बुद्धिमान राक्षसों के इन्द्र ने आग्रह कर रावण के बडों को लका और पाताल लका दी और राक्षस द्वीप दिया। इनके वशमे अनेक राजा हुये, अतिविवेकी व्रतधारी, अब ये रावण के बडे कुल मे विद्याधर उत्पन्न हुये है। देव नहीं है? विद्याधरो में और देवो मे महा भेद है। जैसे—तिलक ओर पर्वत, कीचड ओर चन्दन, पाषाण ओर रत्न में भेद है। देवों में शक्ति कांति बहुत है, विद्याधर तो मनुष्य हैं क्षत्री, वैश्य, शुद्र ये तीनकुल है, गर्भ के दुखो को भोगते हैं। विद्याधर विद्याओ की साधना से आकाश मे गमन करते हैं, वे ढाईद्वीप पर्यन्त विहारकर सकते है। और देव गर्भ से उत्पन्न नहीं होते, महासुन्दर स्वरूप पवित्र धातु उपधातु से रहित ऑखो की टिमकार नहीं सदा जागृत बुढापा, रोग से रहित तेजस्वी उदार महासुखी स्वभाव से ही विद्यावान, अवधिज्ञान सहित, जैसी इच्छा हो वैसा रूप धारण करे। स्वेच्छाचारी देव सो विद्याधरो का क्या सम्बन्ध है। हे श्रेणिक! ये लंका के विद्याधर राक्षसद्वीप मे रहते है। इसलिये राक्षस कहलाते है। यह मनुष्य क्षत्रीवंशी विद्याधर हैं। देव नहीं राक्षस नहीं। इनके वशमे लकानगरी वह अजितनाथके समय से लेकर मुनिसुव्रतनाथ के समय पर्यन्त अनेको हजार राजा प्रशंसा करने योग्य हुये। कोई सिद्ध हुये, कोई सर्वार्थसिद्धि गये, कोई स्वर्ग में देव हुये, कोई पापी नरक गये। अब इस वशमे तीनखड का अधिपति जो रावण वह राज्य करता है, उसकी बहिन चन्द्रनखा, रूपसे अनुपम, उससे खरदूषण ने विवाह किया। वह चौदह हजार राजाओ का शिरोमणी रावण की सेना में मुख्य हुआ। वह दिग्पाल समान

अलंकारपुर जो पाताल लंका वहाँ रहता है। उसके शबू और सुन्दर ये दो पुत्र, रावण के भानजे, पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुये। माता पिता ने शंबु को बहुत मना किया, फिर भी काल के वश होकर, सूर्यहासखड्ग की साधना के लिये महाभयानक वन में प्रवेश किया। शास्त्रोक्त आचरण प्रमाण सूर्यहासखड्ग साधने को तैयार हुआ। एक ही अन्न का भोजन, ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, विद्यासाधन के लिये बांस के बीडों में ऐसा कहकर बैठा कि जब मेरी पूर्ण साधना होगी, तब ही मैं बाहर आऊँगा। उसके पहले कोई बीडे मे आया और मै देख लूंगा तो उसे मै मारूँगा। ऐसा कहकर एकान्त मे बैठा। वह कहाँ बैठा? दण्डक वनमे क्रोचरवा नदी के उत्तर किनारेपर बास के बीडो में बैठा। बारह वर्ष विद्यासाधन किया। सूर्यहासखड्ग प्रगट हुआ, वह सात दिन मे यह नहीं लेता तो खड्ग दूसरे के हाथ मे जाकर स्वय मारा जाता है। सो चन्द्रनखा निरन्तर पुत्र के निकट भोजन लेकर आती, वह खड्ग देख प्रसन्न हुई, और पति से जाकर कहा कि शबूको सूर्यहासखड्ग सिद्ध हुआ है। अब मेरा राजपुत्र मेरुकी प्रदक्षिणाकर तीन दिन में आयेगा। यह तो ऐसे मनोरथ कर रही है। और उस वनमे भ्रमण करता हुआ लक्ष्मण आया, हजारों देवों से रक्षक सूर्यहासखड्ग स्वभाव से सुगधित अद्भुत रत्न, सो गौतमस्वामी कहते हैं—हे श्रेणिक! यह देवोपनीत खड्ग दिव्यगंध आदि से लिप्त कल्पवृक्ष की फूल मालाओ से युक्त। उस सूर्यहासखड्ग की सुगध लक्ष्मण को आई, लक्ष्मण आश्चर्य को प्राप्त हुआ, सभी काम छोड सीधा ही शीघ्र वांस के बीडो की तरफ आया। सिंह समान निर्भय होकर देखा। वृक्षो से ढके महाविषम स्थान, वहाँ बेलों के समूह, ऊँचे ऊँचे पहाड उसके मध्य मे समानभूमि, सुन्दरक्षेत्र, श्रीविचित्ररथ मुनि का निर्वाण स्थल, सुवर्ण कमलो से पूरित, उसके मध्य में बांस का बीडा उसके ऊपर सूर्यहासखड्ग आकर लूम रहा था। खड्ग की किरणों के समूह से बांसों का बीडा प्रकाशित हो रहा था। लक्ष्मण ने आश्चर्य सहित निशंक होकर सूर्यहासखड्ग लिया ओर उसकी तीक्ष्णता जानने के लिये, बांस के बीडेपर मारा, सो शम्बूसहित बांस का बीडा कट गया। और खड्ग के रक्षक हजारों देव लक्ष्मण के हाथ में खड्ग आया जान, कहने लगे आप हमारे स्वामी हो ऐसा कहकर पूजने लगे।

अथानंतर लक्ष्मण को बहुत देर लगी जान, रामचन्द्रजी सीता से कहने लगे, लक्ष्मण कहाँ गया है। हे भव्य! जटायु तू उडकर देख लक्ष्मण आ रहा है? तब

सीता बोली हे नाथ! वह लक्ष्मण आये, केशर से चर्चित है शरीर उसका, अनेक प्रकार की मालायें एवं सुन्दर वस्त्र पहने एक अद्‌भुत खड्‌ग हाथ मे लिये आ रहे हैं, वे खड्‌ग से ऐसे सुन्दर लग रहे हैं, जैसे केशरी सिंह से पर्वत। तब राम आश्चर्य को प्राप्त हुये और महाप्रसन्न होकर उठे और लक्ष्मण को अपने हृदय से लगाकर सकल वृतान्त पूछा। तब लक्ष्मण ने सब बात कही। राम लक्ष्मण सहित सुख से बैठकर अनेक प्रकार की कथाये कर रहे हैं। और शम्बूक की माता, चन्द्रनखा प्रतिदिन एक ही अनाज का भोजन लाती थी, सो आकर देखा तो बांस का बीडा कटा पडा है, तब सोचने लगी की, मेरे पुत्र ने यह अच्छा नहीं किया, जहॉं इतने दिन रहा, और विद्या सिद्ध हुई उसी बीडे को काटा, सो अच्छा नहीं किया। अब यह स्थान छोडकर कहॉं गया है? इधर उधर देखा तो अस्त होता हुआ सूर्यमंडल समान कुंडल सहित शम्बूक का सिर कटा हुआ पडा देखा। उसे देखते ही मूर्च्छा आ गई, सो मूर्च्छा ने इसका परम उपकार किया, नहीं तो पुत्र का मरण देख। यह कैसे जीवित रहे? कुछ देर के बाद मूर्च्छा दूर हुई, तब हाहाकार कर उठी। यह पुत्र का सिर कटा देख शोक से अतिविलाप किया। नेत्र ऑंसुओ से भर गये। यह अकेली ही वन में कुत्ते की तरह छाती कूट कूटकर रोती हुई विलाप करने लगी। हाय पुत्र! बारहवर्ष और चारदिन यहॉं व्यतीत हुये ऐसे तीनदिन ओर क्यो नहीं निकले? तुझे मरण कहॉं से आया, हे पापी काल! मैने तेरा क्या बिगाडा, मेरे नेत्रो का निधि मेरा पुत्र तत्काल क्यों मारा? मै पापिनी ने किसीके पुत्रको परभव मे मारा होगा, इसलिये मेरा पुत्र मारा गया। हे पुत्र! मेरे दुख को दूर करने के लिये एक वचन तो मेरे से बोल। हे वत्स! आओ अपना मनोहर रूप मुझे दिखाओ ऐसे मायारूपी अमंगल क्रिया करना तुझे उचित नहीं। अब तक तो तूने माता पिता की आज्ञा कभी नहीं लोपी, अब बिना कारण ऐसे कार्य करना तुझे योग्य नहीं। इत्यादि विलाप करती हुई सोचती है कि मेरा पुत्र नि सन्देह मरण को प्राप्त हुआ है। सोचा कुछ ही ओर हुआ कुछ ही। हे पुत्र! जो तू जीवित रहता और सूर्यहासखड्‌ग सिद्ध होता तो, जैसे चन्द्रहास के धारक रावण के आगे कोई शत्रु आ नहीं सकता, ऐसे तेरे सन्मुख कोई शत्रु टिक नहीं सकता। मानों चन्द्रहास मेरे भाई के हाथ में आया तो अपना विरोधी सूर्यहास तेरे हाथ मे नहीं देख सका, और तू भयानक वनमें अकेला निर्दोष नियम का धारी तुझे मारने के लिये किसके हाथ चले। जो ऐसा पापी कौन शत्रु है? उस दुष्ट ने

तुझे मारा, अब वह जीवित कैसे रहेगा, इस प्रकार विलाप करती पुत्र का मस्तक गोद में लेकर चूमती रही। मूंगा समान लाल नेत्र कर, शोक छोड, क्रोधरूप होकर शत्रु को मारने के लिये दौडी। तब वह दौडी दौडी वहाँ आई, जहाँ राम लक्ष्मण दोनों भाई विराजमान थे। दोनों भाई महारूपवान, मन मोहित के कारण, उनको देख चन्द्रनखा का प्रबल क्रोध तत्काल समाप्त हुआ, तुरन्त ही मन में राग हुआ, मनमें सोचने लगी की, इन दोनो मे जो मुझे गृहण करे, उसे मैं अपना पति बनाऊँ। यह विचारकर तुरन्त ही कामसे आसक्त हुई। जैसे कमल के वनमें हसनी मोहित होती है, और हरे धान के खेत में हिरणी खाने की अभिलाषिनी होती है। ऐसे ही राम लक्ष्मण पर चन्द्रनखा आसक्त हुई, और पुन्नागवृक्ष के नीचे बैठकर रुदन करती, अतिदीन शब्दो को बोलकर रोती रही। वन की धूल से शरीर लिप्त हो रहा है। उसे देखकर राम की रानी सीता अतिदयालु वहाँ से उठकर उसके पास जाकर कहा, तू शोक मतकर हाथ पकडकर उसे शुभ वचन कहकर धैर्य बधाया और राम के निकट लाई। तब राम उससे पूछते हैं—तू कौन हैं? यह वन दुष्ट जीवोसे भरा उसमें अकेली क्यो भ्रमणकर रही है? तब वह कमल समान नेत्रों से, भ्रमर की गूज समान वचन उसके, वह कहती है हे पुरुषोत्तम! मेरी माता तो मरण को प्राप्त हुई, मै बालक थी मुझे तो मालुम ही नहीं है। और माता के शोक से पिता भी मरण को प्राप्त हुये। सो मेरे पूर्वमे किये हुये पापकर्म के उदय से कुटुब परिवार रहित दंडक वनमें आई, मै मरण की इच्छा से इस भयानक वन मे आई तो भी किसी हिंसक जीव ने मुझे नहीं खाया। बहुत दिनों से मैं इस वन मे भटक रही हूँ, आज मेरे कोई पापकर्म का नाश हुआ, सो आपके दर्शन हुये। अब मेरे प्राण नहीं निकले, उसके पहले मुझे कृपा करके ग्रहण करो। जो कन्या कुलवान शीलवान होती है, उसे कौन नहीं ग्रहण करता, सभी विवाह करना चाहते है। इस प्रकार लज्जा रहित वचन चन्द्रनखा के सुन, दोनों भाई नरोत्तम परस्पर एक दूसरे को देख, मौन से बैठे। कैसेहै दोनोभाई? सर्व शास्त्रों के अर्थ का जो ज्ञानरूपी जल से धोया है मन जिन्होंने, कृत्य अकृत्य के विवेक मे प्रवीण। तब वह इनका मन काम रहित जान निःश्वास नाख पूछने लगी, मैं जाऊँ, तब राम लक्ष्मण बोले जो तेरी इच्छा हो सो कर। तब वह चली गई। उसके जाने के पश्चात राम लक्ष्मण सीता आश्चर्य को प्राप्त हुये। और यह चन्द्रनखा क्रोधित होकर शीघ्र ही अपने पतिके पास गई। और लक्ष्मण मनमें सोचने लगे कि, यह

किनकी पुत्री कौन से देश में जन्म हुआ, परिवार से रहित, महावन में अकेली यहॉ हिरण समान कहॉ से आई। हे श्रेणिक! यह कार्य करने योग्य है, या नहीं, इसका क्या फल होगा, शुभ या अशुभ ऐसा विचार अज्ञानी नहीं करता है अज्ञानरूपी अंधकार से ढकीहै बुद्धिउनकी। और जिसकी बुद्धि प्रवीण है। ऐसे महाविवेकी वह इसलोक में ज्ञानरूपी सूर्यके प्रकाश से योग्य अयोग्य को जानकर अयोग्य को छोड योग्यक्रिया मे प्रवृत्ति करते है। इसलिये पापों को छोडकर पुण्य की प्रवृति करो।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे शबूका वधवर्णन करनेवाला तैतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ।

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-44

रावण द्वारा सीताका हरण और रामका विलाप वर्णन

अथानंतर जैसे तालाब का किनारा टूट जाये, और जल का प्रवाह चारो तरफ फैल जाये, ऐसे खरदूषण की स्त्री का राम लक्ष्मण के साथ, जो राग उत्पन्न हुआ था, उसकी इच्छा पूर्ति नहीं होने से राग नष्ट हुआ, और भयकर शोक का प्रवाह प्रगट हुआ, अतिव्याकुल होकर विलाप करती। दुखरूपी अग्नि से तप्तायमान है शरीर उसका, जैसे बछडे बिना गाय विलाप करती है, ऐसे यह भी पुत्रका शोक करती रही। ऑखों में ऑसू सहित विलाप करती हुई को पति ने देखी। मिट्टीसे शरीर लिप्त है, बाल बिखर रहे है, शिथिल हुये है कटिभाग जिसके, वक्षस्थल, स्तन, जघा, को नखो से विदारा है, खून की धारा बह रही है। और चोली आदि सभी वस्त्र फट रहे हैं। ऐसी अवस्था मे खरदूषण ने देखा, और पूछा—हे प्रिये! कौन दुष्ट ने तेरी ऐसी अवस्था की, वह कौन है? जिसको आज आठवॉ चन्द्रमा लगा है, अथवा उसके मरण का समय आया है। मेरी क्रोधरूपी अग्नि में पतग की तरह गिरेगा, धिक्कार है उस पापी अज्ञानी को, वह पशु समान अपवित्र उसने तुझे दुख दिया। तुम बडवानल की शिखा समान, रुदन मत करो। सामान्य स्त्रियो जैसी तुम नहीं हो, बडे घरकी राजपुत्री, बडे घर की रानी। अभी ही उस दुराचारी को हाथों से मारकर परलोक को प्राप्त

कराऊँगा। जैसे सिह पागल हाथी को मारे। इस प्रकार जब पति ने कहा तब चन्द्रनखा महाकष्ट से, रोना छोड गद गद वाणीसे, कहती हैं हे नाथ! मैं पुत्र को देखने के लिये, वनमे नित्य जाती थी, सो आज पुत्र का मस्तक कटा हुआ भूमि मे पडा देखा, और खून की धाराओ से बासो का बीडा लाल देखा। किसी पापीने मेरे पुत्रको मार खड्गरत्न ले लिया। कैसा है खड्ग रत्न? देवो द्वारा सुरक्षित। मै पुत्र का कटा मस्तक गोद मे लेकर विलाप करती थी, सो उस पापीने शंबूक को मारा था, उसने मेरे से अनीति विचारकर, हाथ पकडा तो मैने कहा मुझे छोड, तो उस पापी नीचने मुझे छोडा नहीं, नाखून व दातो से मेरा शरीर नोंच डाला। निर्जनवनमें मैं अकेली, वह बलवान पुरुष। मैं अबला, फिर भी पूर्व पुण्य से मैने अपना शील बचाया, महाकष्ट से मैं यहॉ आई। सर्व विद्याधरों का स्वामी, तीनखण्ड का अधिपति, तीनलोक में प्रसिद्ध, रावण किसी से नहीं जीता जाये, ऐसा मेरा भाई, और आप खरदूषण महाराज, दैत्यजातिके विद्याधर जिनके अधिपति, ऐसे मेरेपति फिरभी मैं दैवयोग से इस अवस्था को प्राप्त हुई। इस प्रकार चन्द्रनखा के वचन सुन महाक्रोधकर जहॉ पुत्रका शरीर मरा पडा था वहॉ गया, सो पुत्रको मरादेख अतिदुखी हुआ। जीवन काल मे पुत्र चन्द्रमा के समान था, सो अब महाभयानक रूपदिखता है। पुन: खरदूषण अपने घर आकर अपने कुटुम्ब से मत्रणा की। तब कोई मत्री क्रोधित होकर कहते है, कि हे देव! जिसने खड्गरत्न लिया और पुत्र को मारा उसे ढीला छोडेगे तो न जाने वह आगे क्या करेगा, इसलिये उसका शीघ्र ही प्रयत्न करना चाहिय। तब कोई विवेकी ने कहा—हे नाथ! यह कार्य लघु नहीं। सर्व सामन्तो को एकत्रित करो और रावण के पास पत्र भेजो। जिनके हाथ मे सूर्यहास खड्ग आया है, वह सामान्य पुरुष नहीं। इसलिये सबसे मंत्रणाकर कार्य करना, शीघ्रता नहीं करना। तब रावण के पास तत्काल दूत भेजा, दूत शीघ्रही रावणके पास पहुॅच गया। रावण का जवाब आने के पहले ही खरदूषण अपने पुत्रके मरणसे महाद्वेष के कारण सामन्तो से कहा वे रक विद्याबल से रहित भूमिगोचरी हमारी विद्याधरो की सेना रूपी समुद्र मे तिरने को समर्थ नहीं है। धिक्कार हमारे विद्याधरो को जो दूसरो का सहारा चाहते है। हमारी भुजा ही सहायता करेगी। दूसरा कौन? ऐसा कहकर अभिमान से शीघ्र ही राजमन्दिर से निकला और आकाश मार्ग से गमन किया। तब उसे युद्ध के सन्मुख जान चौदहहजार राजा साथ चले और सभी दण्डकवनमें आये। उनकी

सेना के बाजो की ध्वनि सुन सीता भयको प्राप्त हुई। हे नाथ! क्या है, क्या है, ऐसे शब्द कहकर पतिके शरीरसे लगगई, जैसे कल्पबेल कल्पवृक्ष से लगे। तब राम कहने लगे, हे प्रिये! भय मत करो, सीता को धैर्य बंधाकर देखने लगे कि यह दुर्धर शब्द सिहका है, या मेघका है, तथा समुद्रका है, या दुष्ट पक्षियो का है। सामने आकाश भरा दिख रहा है, तब सीता से कहा—हे प्रिये! ये दुष्टपक्षी हैं, जो मनुष्य और पशुओं को ले जा रहे है। धनुष की टंकार से इन्हे भगाता हूँ। इतने में ही शत्रु की सेना पास आई। अनेक आयुद्धो से युक्त सुभट दिखाई दिये, जैसे पवन के झोंके से मेघों का समूह विचरण करे। ऐसे विद्याधर विचरण करते दिखाई दिये। तब श्रीरामने सोचा यह नन्दीश्वरद्वीपको भगवानकी पूजाके लिये देव जा रहे हैं। अथवा बांसो के बीडों मे किसी मनुष्यको मारकर लक्ष्मण खड्गरत्न लाया है, और वह कन्या बनकर आई थी, सो वह कुशीलस्त्री थी, उसने अपने कुटुब के सामन्त भेजे है। इसलिये अब परसेना पासआई, सो निश्चिन्त रहना उचित नहीं, धनुषकी ओर देखा, कवच पहनने की तैयारी की। तब लक्ष्मण ने हाथजोड सिरझुकाकर विनती की, हे देव! मेरे होते हुये आपको इतना परिश्रम करना उचित नहीं। आप राजपुत्री की रक्षा करो, मै शत्रु के सामने जाता हूँ। कदाचित भीडपडेगी तो मैं सिहनाद करूँगा। तब आप मेरी सहायता करने आना। ऐसा कहकर कवचपहन शस्त्र धारणकर लक्ष्मण शत्रु के सन्मुख युद्ध करने चला। सो वे विद्याधर लक्ष्मण को उत्तम आकार का धारी, धीर वीर श्रेष्ठपुरुष देख, जैसे मेघपर्वत को ढके ऐसे लक्ष्मण को चारो तरफ से घेरने लगे। शक्ति, मुदगर, चक्र, बरछी, बाण इत्यादि शस्त्रो की वर्षा करने लगे। सो अकेला लक्ष्मण सब विद्याधरो के चलाये बाण अपने शस्त्रों से काटता रहा। और लक्ष्मण ने विद्याधरो की तरफ आकाश मे वज्रदंड बाण चलाया। यह कथा गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है।

हे राजाश्रेणिक! लक्ष्मणने अकेले ही विद्याधरो की सेनाको अपने बाणों से रोका। जैसे संयमी साधु आत्मज्ञान कर विषयवासना को रोके। लक्ष्मण के शस्त्रो से विद्याधरो के सिर रत्नो के आभूषणो से मडित कुडलों की शोभा से युक्त, आकाश से धरतीपर गिरे, मानो सरोवर के कमल ही हैं। योद्धाओ सहित पर्वतसमान हाथीगिरे, अश्वो से युक्त सामन्त बडे भयानक शब्द करते, होठ डसते, ऊँचे ऊँचे बाणो से वासुदेव वाहनो सहित योद्धाओं को मारता रहा। उसीसमय पुष्पकविमान में बैठकर रावण आया। शम्बूक के मारने वाले पुरुषपर

उत्पन्न हुआ है महाक्रोध जिसको। सो मार्गमे रामके पास सीता महासती को बैठी देखी। और देखकर महामोह को प्राप्त हुआ। कैसीहै सीता? सीताको देख रतिका रूप भी इसके समान न दिखे मानो साक्षात लक्ष्मी ही है। चन्द्रमा समान सुन्दर, मुख, चंचल कमलनेत्र, कुभस्थल समान कूच, यौवन, सर्वगुण सम्पन्न, ज्ञानवान, रूपकी पुतली, मानो नामकर्म ने अपनी चंचलता निभाने के लिये स्थिरता पूर्वक जैसारूप चाहिये वैसा ही बनाया। उसको देखकर रावण की बुद्धि नष्ट हुई। महारूप के अतिशय को धारण करनेवाली, सीता को देखने से ही शम्बूक को मारनेवाले पर जो क्रोध था वह नाश हुआ। और सीतापर राग उत्पन्न हुआ। मनकी विचित्रगति है, मन मे सोचता रहा, सीताके बिना मेराजीवन क्या, और मेरेघर मे विभूति है उससे क्या? यह अद्‌भुत अनुपम महासुन्दर रूप मेरे मनकी प्यारी। मुझे खरदूषण की सेना मे आया, कोई जाने नहीं, उसके पहले ही सीताको मै हरकर ले जाऊँ, मेरी कीर्ति चन्द्रमा समान निर्मल सम्पूर्ण लोक में फैल रही है, सो गुप्तरूपसे ले जानेमें कोई दोषनहीं। हे श्रेणिक! स्वार्थ के लिये कामी पुरुष दोष को नहीं मानता है, इसलिये गुप्तरूप से ले जाने का प्रयत्न किया। इस लोकमें लोभ समान और कोई अनर्थ नहीं है। और लोभ में भी परस्त्री लोभ समान कोई अन्यमहाअनर्थ नहीं है। रावण ने अवलोकनीविद्या से सब वृतान्त पूछा। सो विद्याके कहने से इनके नाम कुलादि सब जाना। लक्ष्मण अनेक योद्धाओ से लडने वाला अकेला युद्ध मे गया, तब राम से ऐसा कहकर गया, अगर मेरेपर भीड पडेगी। तो मै सिहनाद करूँगा। तब आप मेरी सहायता करना। तब रावण ने सोचा वह सिहनाद मै करूँ और राम धनुषबाण लेकर भाई के पास जायेगे, पीछे से मै सीताको ले जाऊँगा, जैसे पक्षी मासकी डलीको लेजाये। और खरदूषण का पुत्र तो इन्होने मारा ही था, और उसकी स्त्री का अपमान किया, इसलिये खरदूषण शक्ति आदि शस्त्रो से दोनों भाईयों को मारेगा, जैसे महा प्रबल नदी का प्रभाव दोनो किनारो को नष्ट करता है, जैसे नदी के प्रवाह की शक्ति छिपी नहीं है, ऐसे खरदूषण की शक्ति किसी से छिपी नहीं है, ऐसा सब जानते है। ऐसा विचारकर मूढ अज्ञानी काम से पीडित रावण ने मरण के लिये सीताके हरणका उपाय किया, जैसे दुर्बुद्धि बालक विषको लेनेका उपाय करता है।

अथानंतर लक्ष्मण अकेला और खरदूषण सेना सहित दोनो का महायुद्ध

शस्त्रो के प्रहार से हो रहा है। तब जाना कि यह सिहनाद लक्ष्मण ने किया है, सो सिहनाद सुनकर राम व्याकुल हुये। जाना कि भाईपर भीड पडी है। तब रामने जानकीसे कहा–हे प्रिये! भय मतकरो। क्षण एक ठहरो, ऐसा कहकर निर्मल पुष्पोमे छिपाई और जटायुसे कहा–हे मित्र! यह सीता अबला जाती है, इनकी रक्षा करना, तुम हमारे मित्र हो, सहधर्मी हो ऐसा कहकर राम धनुषबाण लेकर चले। मार्ग मे अनेक अपशगुन हुये, वह भी नहीं माने, महासती को अकेली वनमे छोड, शीघ्र ही भाईके पास गये, महारण मे भाई के आगे जाकर खडेरहे, उस समय रावण सीताको उठानेआया, कामरूपी अग्निसे प्रज्वलित है मन उसका, भूल गया है, सम्पूर्ण धर्मकी बुद्धि, वह, सीताको उठाकर पुष्पकविमान मे बैठाने लगा, तब जटायुपक्षी स्वामीकी स्त्रीको हरता देख क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित हुआ, उडकर अतिशीघ्रता से रावणपर पडा। तीक्ष्ण नाखूनो से एव चूँच से रावण का हृदयादि शरीरको नोच नोच कर खून से युक्त किया और अपने कठोर पखो से रावण के कपडे फाड डाले, रावण का पूर्ण शरीर खेद खिन्न हुआ, तब रावण ने जाना कि यह सीता को छुडायेगा और झझट करेगा, इतने मे इसका पति आ जायेगा। इसलिये महाक्रोध कर हाथके मुक्कोसे मारा। तब कठोर हाथोकी घातसे पक्षी विह्वल होकर पुकारता हुआ पृथ्वीपर मूर्च्छित होकर गिर पडा, तब रावण जनक सुताको पुष्पकविमान मे बैठाकर अपने स्थान ले चला। हे श्रेणिक! रावण जानता है कि यह कार्य योग्य नहीं, फिरभी कामके वशहोकर सर्वआचारविचार भूलगया। सीता महासती अपनेको परपुरुष द्वारा हरी जान, रामके अनुरागसे दुखित हो रहा है मन उसका, महा शोकवान होकर आर्तरूप विलापकरती रही। तब रावण सीताको निजपति मे अनुरक्त जान, रुदन करती देख कुछ उदास होकर विचारने लगा, यह सीता निरन्तर रो रही है, वियोगसे दुखी है, अपने पतिके गुणगा रही है, अन्य पुरुष के सयोग की अभिलाषा नहीं उसे, वहस्त्री अवध्य है, इसलिये मै मार नहीं सकता, और कोई होता और मेरी आज्ञा का उलघन करता तो मै मारता। और मैंने साधुओ के निकट व्रत लिया था, कि जो परस्त्री मुझे नहीं चाहे, तो मै उसे बलात्कार कामसेवन नहीं करूँगा। मुझे यह व्रत दृढ रखना है। सीताको किसी उपायसे प्रसन्न करूँ? उपाय करने से प्रसन्न अवश्य होगी। जैसे क्रोधित राजा शीघ्रही प्रसन्न नहीं किया जाता, उसी प्रकार हटवानस्त्री वशनहीं की जाती। जो कोई वस्तु है वह प्रयत्न से ही सिद्ध होती है।

मनवाछित विद्या, परलोक की क्रिया, और चाही स्त्री यत्नके बिना सिद्ध नहीं होते। यह विचारकर रावण सीताको प्रसन्न करने का समय देखता रहा। कैसाहैरावण? मरण आया है निकट उसके।

अथानंतर श्रीराम ने बाणरूपी जलकी धाराओसे पूर्ण जो रणमडल उसमें प्रवेश किया, तब लक्ष्मणने देखकर कहा हाय हाय! इतनी दूर आप क्यो आये—हे देव! जानकी को अकेली वनमे कहाँ छोडकर आये, यह वन अनेक दुष्टो से भरा है, तब रामने कहा मैं तेरा सिंहनाद सुनकर शीघ्र ही आया हूँ। तब लक्ष्मणने कहा आपने अच्छा नहीं किया, अब शीघ्र ही जाओ, जहाँ जानकी है वहाँ। तब रामने जाना वीरतो महाधीर है उसे शत्रु का भय नहीं, तब लक्ष्मण से कहा, परम उत्साह सहित बलवान बैरी को जीत। ऐसा कहकर आपको सीता की शंका हुई, सो चचल मन से जानकी की ओर चले, क्षणमात्र मे आकर देखा तो जानकी नहीं है। तब पहले तो सोचा कदाचित मै स्थान भूल गया हूँ, पुन. निर्णयकर देखा तो सीता नहीं है, तब राम हाय सीता ऐसा कहकर मूर्च्छा खाकर धरतीपर गिरपडे, वह धरती रामके विलापसे ऐसी लगी जैसे भरतार के मिलन से भार्या। पुनः सचेत होकर वृक्षोंकी ओर देखकर प्रेमसे भरे अत्यन्त व्याकुल होकर कहा हे देवी! तू कहाँ गई? क्यों नहीं बोल रही हो, बहुत हसी करने से क्या? वृक्षोके आश्रयमे बैठी हो, तो शीघ्रही आओ, क्रोध करने से क्या? मै तो शीघ्रही तुम्हारे पास आया हूँ। हे प्राण वल्लभे! यह तुम्हारा क्रोध हमें सुखका कारण नहीं। इसप्रकार विलाप करते फिर रहे हैं। तब एकनीची पृथ्वीपर जटायुको मरतेहुये एव तडफडाते हुये दुखीदेख, पक्षीकी अत्यन्त वेदनादेख, उसके पास बैठ कर आप णमोकार मत्र सुनाया और दर्शनज्ञानचारित्र और तप ये चारो अराधना सुनाई। अरहत, सिद्ध, साधु, केवलीभगवान का कहा हुआ धर्म को ग्रहण कराया।

जाटायु पक्षी श्रावकके व्रतोंको धारण करने वाला श्रीरामके प्रभाव से समाधि मरणकर देवहुआ, परंपरा से मोक्ष जायेगा। पक्षीके मरणके पश्चात, स्वयं राम ज्ञाता है, फिरभी चारित्र मोहके वशसे, महाशोकवान होकर अकेले ही, वनमें प्रियाके वियोगसे मूर्च्छित होकर गिर पडे, पुन सचेत होकर महाव्याकुल मनमें महासती सीताको जंगल जंगल मे ढूढते फिर रहे है। निराश होकर दीन वचन कहते है। जैसे भूतके आवेशसे पुरुष वृथा बकवाद करते है, समय पाकर महा भयकर वनमे किसी पापी ने मेरी प्रिया सीताको हरी, सो बहुत विपरीत किया।

मुझे मारकर गया। अब जो कोई मुझे प्रिया दिखाये मिलाये, और मेरा शोक दूरकरे, उस समान मेरा परममित्र व बन्धु नहीं। हो वनके वृक्षों! तुमने जनकराजा की दुलारी राजपुत्री जानकी देखी? चम्पाके पुष्पसमान रंग, कमलदल के समान नेत्र, कोमलचरण, निर्मलस्वभाव, गजगामिनी, उत्तमचाल, मनको उत्सव करानेवाली, कमलसमान सुगन्ध मुखका श्वॉस, स्त्रीमे श्रेष्ठ, तुमने कहीं देखी हो तो कहो। इसप्रकार वनके वृक्षो से पूछते है। तो वह ऐकेन्द्रिय वृक्ष क्याउत्तर देगे। तब राम सीताके गुणोसे मोहितहोकर पुनः मूर्च्छा खाकर धरतीपर गिर पडे। पुन: सचेत होकर महाक्रोध से वज्रावर्त धनुष हाथमे लिया, फिनष चढाई, टंकार किया, तब दशो दिशायें गुजायमान हुई। सिहको भय कराने वाला, नरसिह रामने धनुष का नाद किया, तो सभी सिह भाग गये, हाथियो के मद उत्तर गये, तब धनुष उतार अत्यन्त दुखी विषादको प्राप्त होकर बैठ गये। और अपनी भूलका सोच करते रहे। हाय-हाय! मै मिथ्या सिंहनाद को सुनकर, विश्वास मान बिना प्रयोजन से मैंने मेरी रानीको खोया। जैसे अज्ञानीजीव कुकथाओ को सुनकर, विश्वास मान पुण्य क्रियाओ को खोते है। वे तो अज्ञानी होने से आश्चर्य नहीं, परन्तु मै धर्मका ज्ञाता वीतराग के मार्ग का श्रद्धानी, बिना समझे असुर की माया से मोहित हुआ। यह आश्चर्य की बात है। जैसे इस ससाररूपी वन मे अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यजीवन महापुण्य से प्राप्त होता है, उसे वृथा नष्ट करते है, तो पुन कब प्राप्त होगा। और तीनलोक में दुर्लभ जैनधर्म महारत्न उसे समुद्र मे डाल दे तो पुन कैसे प्राप्त करें? ऐसे ही वनितारूपीअमृत मेरे हाथसे गया, वह कौनसे, उपाय से प्राप्त होगा? इस निर्जन वन मे किसको दोष दू? मै उसे छोडकर भाई के पास गया, वह क्रोधित होकर कदाचिद् आर्यिका हुई हो। भयानक वनमे कोई मनुष्य नहीं किनको जाकर पूछू, जो हमको स्त्री की बात कहे। ऐसा कोई इसलोक मे दयावान श्रेष्ठपुरुष है, जो मुझे सीता दिखाये। वह महासती शीलवान पाप रहित मेरे हृदयकी प्यारी, मेरे मनरूपी मन्दिर उसमे वियोगरूपी अग्नि जलरही है। उसको बातरूपी जलके दानसे कौन बुझावे? ऐसा कहकर परम उदास हो, धरती की ओर देख, बार बार नये नये विचारकर शिथिल हो गये। एक चकवी का शब्दसुन उसकी ओर देखा, पुन सोचा कि इस गिरी का तट अत्यन्त सुगन्धित हो रहा है, सो उसकी ओर गई होगी, या यह कमलोका वन है, यहाँ कौतुहल के लिये गई होगी, पहले इसने यह वन देखा था, स्थान मनोहर अनेकपुष्पो से पूर्ण

है, कदाचित वहॉ गई हो, यह विचारकर आप वहॉ गये। वहॉभी सीताको नहीं देखा, चकवी देखी, तब सोचा कि वह पतिव्रता महासती मेरेबिना अकेली कहॉ जाए? पुन. दुख से सन्तप्त हो पर्वत के पास जाकर पर्वतसे पूछते हैं, गिरी राज! तू अनेक धातुओ से भरा है, मैं राजा दशरथ का पुत्र रामचन्द्र तुझे पूछता हूँ, कमल समान हैं नेत्र, ऐसी सीता मेरे मनकी प्यारी, हसगामिनी, सुन्दर, स्तनके भारसे नम्रीभूत है, शरीरउसका, सो तुमने कही देखी? वह कहॉ है? तब पहाड क्याजवाब देता, इनके ही शब्दो से गूजा, तब राम ने जाना कि पहाड ने कुछ स्पष्टनहीं कहा उसने नहीं देखी। वह महासती मर गई होगी। यह नदीप्रचंड लहरो से युक्त अत्यन्त प्रवाह से बह रही है, यह अज्ञानी नदी, उसने मेरी रानी को हरी, जैसे पाप की इच्छा विद्या को हरे। अथवा कोई सिह भूख की वेदना से भक्षण कर गया होगा? सीता महाधर्मात्मा साधुओ की सेवक, सिहादि को देखते ही नखादि के स्पर्श बिनाही प्राण दे दिये होगे। मेराभाई भयानक रणसग्राम मे है, सो जीवन का सशय ही है, यह ससार असार है, सभी जीव सशयरूप ही है, अहो! यह बडा आश्चर्य है, जो मै ससार का स्वरूप जानता हूँ फिर भी दुखोसे शून्य हो रहा हूँ, एक दुख समाप्त नहीं होता दूसरा ओर तैयार होता है। इसलिये जानना चाहिये कि ससार दुख का सागर ही है। जैसे लगडे का पैर काटना, जलेपर नमकडालना, डिगते हुये को खड्डे मे डालना। रामचन्द्रजी ने वनमें भ्रमणकर हिरण सिहादि अनेक जानवर देखे परन्तु सीता नहीं देखी। तब अपने स्थान पर आकर अत्यन्त दीन मुख से धनुष को डाल पृथ्वीपर बैठे। बार बार विकल्प सहित सीताके गुणोको यादकर कर महादुखी होकर पुकारते थे। हे श्रेणिक? ऐसे महापुरुषो को भी पूर्वउपार्जित अशुभकर्म के उदय से दुख होता है, ऐसा जानकर हे भव्यजीवो! हमेशा जिनधर्म में मनको लगाओ ससार से ममता छोडो, जो पुरुष ससार के विषयो में लीन होकर जिनवचन को नहीं धारण करता ससार मे शरण रहित होकर पापरूपी वृक्षके कटु फल को भोगते है, कर्मरूपी शत्रुके कारण दुखी होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे सीताका हरण व राम का विलाप वर्णन करनेवाला चवालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-45

राम के सीता-वियोग जनित दुख का वर्णन

अथानंतर लक्ष्मण के समीप युद्धमें खरदूषण का शत्रु विराधित विद्याधर अपने मत्री आदि योद्धाओं सहित शस्त्र लेकर आया। वह लक्ष्मण को अकेला युद्ध करता देख महा नरोत्तम जान अपने कार्य की सिद्धि इनसे जान प्रसन्न हुआ। महा दैदिप्यमान होकर वाहन से उतरकर हाथजोड धरतीपर मस्तक लगाकर, नमस्कार किया और विनय से कहा हे नाथ! मै आपका भक्त हूँ, कुछ मेरी विनती सुनो, आप जैसे सज्जन पुरुषों की संगति हमारे दुखों का क्षय करने मे कारण है। विराधितने थोडासा कुछ कहा और लक्ष्मणने पूर्ण समझ लिया। उसके मस्तकपर हाथरखकर कहा तुम डरो मत, हमारे पीछे खडे रहो। तब वह नमस्कार कर आश्चर्य को प्राप्त होकर कहा हे प्रभो! यह खरदूषण शत्रु महाशक्तिवान है, इनसे आप युद्ध करो, और सेना के योद्धाओं से मै लडूँगा। ऐसा कहकर खरदूषण के योद्धाओं से लडने लगा। दौडकर उनके कटक पर गया। विराधित उनको प्रगटरूप से कहता है, मै राजा चन्द्रोदय का पुत्र विराधित बहुत दिनों से पिता का बैर था, उसका बदला लेने को आया हूँ, युद्ध का अभिलाषी अब तुम कहाँ जाओ, युद्ध मे प्रवीण हो तो खडे रहो। मै ऐसा भयकर फल दिखाऊँगा, जैसा मरण हो जाए, ऐसा कहा तब योद्धाओ का आपस मे महायुद्ध हुआ, दोनो सेनाओ के लोग मारे गये। हाथियो से हाथी, घोडो से घोडे, रथो से रथ परस्पर हर्षितहोकर युद्ध करने लगे, वह उसको बुलाते, वह उसको बुलाते इसप्रकार परस्पर युद्धसे दशों दिशाये बाणो से भर गई। लक्ष्मण और खरदूषण का महायुद्ध हुआ। उस समय खरदूषण क्रोध सहित लक्ष्मण से लाल नेत्रकर कहा मेरापुत्र तेरा शत्रु नहीं था, फिर भी तूने मारा, और हे चपल! तूने मेरीस्त्री के कूचमर्दन किये, सो अब पापी तू मेरी दृष्टि से कहाँ जायेगा? आज तीक्ष्ण बाणो से तेरे प्राणों का नाश करूँगा। तूने जैसे कर्म किये है वैसे ही फल भोगेगा। हे क्षुद्र! निर्लज परस्त्री संगलोलुपी! मेरे सन्मुख आकर मर। तब उसके कटु वचनो को सुन क्रोधित होकर लक्ष्मण कहता है—अरे क्षुद्र! बिना मतलब क्यो गरज रहा हैं, जहाँ तेरा पुत्र गया, वहाँ ही तुझे भेजूंगा, ऐसा कहकर आकाश मे खडे जो खरदूषण उसे रथ

रहित किया, और धनुष तोडा, ध्वज उडाई एवं प्रभा रहित किया, तब खरदूषण क्रोध से भरा पृथ्वीपर गिरा जैसे पुण्यक्षीण हुआ देवस्वर्ग से गिरे। पुनः महासुभट खड्ग लेकर लक्ष्मणपर आया, तब लक्ष्मण सूर्यहासखड्ग लेकर उसके सामने गया। इन दोनों में महायुद्ध हुआ देव पुष्पवृष्टि करने लगे। और धन्य धन्य शब्द करने लगे। महायुद्ध में सूर्यहासखड्ग से लक्ष्मण ने खरदूषण का मस्तक काटा, सो निर्जीव होकर खरदूषण पृथ्वीपर गिरा, मानो स्वर्गसे देव गिरा हो। सूर्य समान तेज उसका, मानो रत्नपर्वत का शिखर हाथी ने गिराया हो। खरदूषण का सेनापति दूषण, विराधित को रथ रहित करने आया, तब लक्ष्मण ने बाणों से मर्म स्थलपर घात किया। वह घूमता हुआ भूमिपर गिरा। और लक्ष्मणने खरदूषणका राज्य कटक पाताल लका पुरी, विराधित को दिया। लक्ष्मण प्रसन्नमन से अतिस्नेह के भरे राम के पास आये, आकर देखा तो रामभूमि मे पडे है। उस स्थानपर सीता नहीं थी। तब लक्ष्मणने कहा हे नाथ! कहाँ सो रहे हो। जानकी कहाँ गई, तब राम उठकर लक्ष्मण को घावरहित देख कुछहर्षको प्राप्त हुये। लक्ष्मणको हृदयसे लगाया और कहा हे भाई! मै नहीं जानता जानकी कहाँ गई। कोई हरले गया या सिह भक्षणकर गया, बहुत ढूढी पर वह नहीं मिली, कोमल शरीर उद्वेग से विलायमान हो गई। तब दुख के साथ क्रोधकर कहा हेदेव! सोचने से क्या? यह निश्चय करो कोई दुष्टदैत्य हरकर ले गया है। जहाँ होगी वहाँ से लायेंगे। आप सन्देह मत करो। अनेक प्रकार के प्रिय वचनो से राम को धैर्य बधाया और निर्मल जल से लक्ष्मण ने रामका मुंह धुलाया। उसीसमय विशेष शब्द सुन राम ने पूछा यह शब्द किसका है? तब लक्ष्मण ने कहा हे नाथ! यह चन्द्रोदय विद्याधर का पुत्र विराधित इसने रण मे मेरा बहुत उपकार किया है, वह आपके पास आया है, इसकी सेना का शब्द है। इस प्रकार दोनो वीर धीर, बात कर रहे थे, विराधित बडी सेना सहित आया, हाथजोड नमस्कार कर, जय जय शब्द कहकर अपने मत्रियों सहित विनती की हे नाथ! आप हमारे स्वामी हो, हम आपके सेवक है, जो कार्यहो उसकी आज्ञा दो तब लक्ष्मणने कहा हे मित्र! ये मेरेप्रभु उनकी रानी सीता। कोई दुराचारी दुष्ट उसे हरकर ले गया है। उसके बिना रामचन्द्रजी शोक के कारण कदाचित प्राणों को छोडेगें तो मैं भी उनके साथ अग्नि में प्रवेश करूँगा। इनके प्राणो के आधार मेरे प्राण हैं। यह तू निश्चय जान! इसीलिये यह कार्य करना है, जैसे अच्छा जाने ऐसा तू कर। तब यह बात

सुन वह अतिदुखी हुआ और नीचा मुख कर लिया। और मन में विचार किया इतने दिन मुझसे स्थान भ्रष्ट हुये हुआ, अनेक वन वन में भटका, इनने मेरा शत्रु नाश किया मुझे स्थान दिया, उनकी यह दशा है, मैं जिस जिस बेल को पकडता हूँ, वही बेल उखड जाती है। यह ससार कर्मोके आधीन है। इसलिये मै कुछ पुरुषार्थकर इनका कार्य सिद्ध करूँ। ऐसा विचार कर अपने मंत्री से कहा इन पुरुषोत्तम की स्त्रीरत्न, पृथ्वीपर जहाँ हो वहाँ जल थल आकाशपुर वन गिरी गुफा ग्रामादिक मे प्रयत्नकर देखो जहाँ हो वहाँ ढूढो। यह कार्य करने पर मनवांछित फल पाओगे, इस प्रकार विराधित की आज्ञासुन यश के लिये सभी विद्याधर दौडे।

अथानंतर एक अर्कजटी का पुत्र रत्नजटी विद्याधर आकाशमार्ग मे जा रहा था, उसने सीता के रोने की आवाज हाय राम हाय लक्ष्मण सुना, तब रत्नजटी ने वहाँ आकर देखा तो रावण के विमान मे सीता बैठी विलाप कर रही है। तब सीताको विलाप करती देख रत्नजटी क्रोधसे कहने लगा हे पापी दुष्टरावण! ऐसा अपराधकर तू कहाँ जायेगा। यह भामडल की बहिन है, रामदेव की रानी है। भामडल का मै सेवक हूँ। हे दुर्बुद्धे! अगर जीना चाहता है तो इसे छोड दे। तब रावण अतिक्रोध से युद्ध को उद्यमी हुआ। पुन विचारकिया अगर कहीं युद्ध से दुखी होकर सीता मरण को प्राप्त हो तो अच्छा नहीं होगा। यद्यपि यह विद्याधररक है फिर भी इसे नहीं मारना। ऐसा विचारकर रावण महाबली ने रत्नजटी की विद्या हरली। सो आकाश से पृथ्वीपर गिरा। मत्रके कारण धीरे धीरे समुद्र के मध्य कम्बुद्वीप मे आकर गिरा। आयुकर्म के योगसे जीवित रहा। जैसे व्यापारी का समुद्र मे जहाज फट जाय और जीवित बचे। वह रत्नजटी विद्या जाने के बाद भी जीवित रहा। विद्यातो चली गई लेकिन विमान मे बैठ घर पहुँचा। कम्बुपर्वतपर चढ दिशा को देखता रहा समुद्र की शीतल पवन से खेद दूर हुआ, वनके फलोको खाकर पर्वतपर रहा। और जो विराधित के सेवक विद्याधर सब दिशाओ मे ढूढने गये, कहीं भी सीता को नहीं देख वापिस आये। उनका मुख उदास देख रामने जाना की सीता इनको नहीं दिखी। तब रामने दीर्घश्वास लेकर कहा।

हे विद्याधरों! तुमने हमारे काम के लिये अपनी शक्ति प्रमाण बहुत प्रयत्न किया, परन्तु हमारे अशुभकर्म का उदय, इसलिये अब तुम सुख से अपने स्थान जाओ। हाथसे गिरा बडवानल मे रत्न फिर कहाँ से मिले। कर्म का फल है, सो अवश्य भोगना, हमारे तुम्हारे करने से दूर नहीं होता। हमकुटुम्ब से छूटे, वनमे

आये, फिरभी कर्म, शत्रुओ को दया उत्पन्न नहीं हुई। इसलिये हमने सोचा हमारे असाताकर्म का उदय है। सीता ही गई, इससे ज्यादा और दुख क्या होगा? इस प्रकार कहकर राम रोने लगे। महाधीर मनुष्यो के अधिपति, तब विराधित धैर्य बंधाने में पंडित सो हाथजोड नमस्कार कर कहने लगा। हे देव! आप इतना विषाद मत करो, थोडे ही दिन मे आप जनकसुता को देखोगे। कैसीहैजनकसुता? पाप रहित है शरीर उसका—हे प्रभो! यह शोक महाशत्रु है, शरीरका नाश करता है, और वस्तु की क्या बात, इसलिये आप साहस व धीरता धारण करो, धैर्य ही महापुरुषों का आभूषण है, आप जैसे महापुरुष, विवेक के निवासी है, और यह समय विषाद का नहीं, दुख करनेसे भी गई वस्तु की प्राप्ति नहीं होती है। आप मनलगाकर सुनो, विद्याधरो का महाराजा खरदूषण को मारा है, सो इसका फल आगे कटु है। सुग्रीव किहकंधापुर का स्वामी और इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण त्रिशिर, अओम, भीम, क्रूरकर्मा, महोदरादि अनेक विद्याधर महायोद्धा बलवान इनके परममित्र है। खरदूषण के मरण के दुख से क्रोधको प्राप्त हुये होगे, ये सभी युद्ध क्रियाओ मे प्रवीण है, हजारो स्थानोपर रणमे कीर्ति प्राप्तकर चुके है, और वैताड्यपर्वत के अनेक विद्याधर खरदूषण के मित्र है, और पवनंजय का पुत्र हनुमानको देखकर सभीसुभट दूरसे ही डरते है, उसके सन्मुख देवभी नहीं आते है। और वह खरदूषण का जमाई है, इसलिये वहभी इसके मरण का क्रोध करेगा। अत यहॉ वनमें नहीं रहना, अलकारोदय नगर जो पाताल लका उसमे आप विराजिये, और भामडलको भी सीताके समाचार कहलायेगें। वह नगर महादुर्गम है, वहॉ निश्चल होकर कार्य का उपाय करेगे। इस प्रकार विराधित ने प्रार्थना की। तब दोनो भाई चारों घोडों के रथ पर बैठ पाताल लका को चले। सो दोनो पुरुषोत्तम सीताके बिना नहीं शोभते। जैसे सम्यग्दर्शन बिना ज्ञानचारित्र नहीं सोहे। चतुरंग सेना सहित दण्डक वन से चले, विराधित आगे गया। वहॉ चन्द्रनखा का पुत्र सुन्दर सो लडने को नगर के बाहर आया। युद्धमे जीत नगरमें प्रवेश किया। देवोके नगर समान वह रत्नमयी नगर। वहॉ खरदूषण के मन्दिर मे विराजे, महामनोहर देवों के नगर समान वहरत्नमयीनगर वहॉ सीताबिना क्षणमात्र भी विश्राम को प्राप्त नहीं हुये। राम का मन सीता के बिना मनोज्ञनगर भी वनके समान लगता है। सीताके साथ रहने से भयकर वनभी महामनोज्ञ नगर के समान लगता था। अथानंतर खरदूषण के राजभवन में जिनमन्दिर को देखकर रघुनाथ

ने प्रवेश किया, वहाँ अरहत की प्रतिमा को देखकर रत्नमयी पुष्पो से अर्चा की, एकक्षण सीताके दुखको भूलगये, जहाँ जहाँ भगवान के चैत्यालय थे, वहाँ वहाँ दर्शन किये। एकक्षण के लिये शातहुई है, दुख की लहरें जिनके। रामचन्द्र खरदूषण के महल मे विराजे। और सुन्दर अपनी माता चन्द्रनखा सहित पिता और भाई के शोक से महाशोक सहित लंका मे गया। यह परिग्रह नाशवान है महादुख का कारण है। विघ्नो से सहित है। इसलिये हेभव्यजीव! शरीरकी इच्छाओ को दूरकरो। यद्यपि जीवोंके पूर्वकर्म के सम्बन्ध से परिग्रहकी अभिलाषा होती है, फिरभी साधुओं के उपदेशसे यह इच्छा तृष्णादूर होती है, जैसे सूर्य के उदय से रात्रि का अन्धकार दूर होता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे रामको सीताका वियोग और पाताललकामे निवास वर्णन करनेवाला पैंतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-46

लंका के मायामयी कोट का वर्णन

अथानंतर रावण सीताको लेकर, विमान के ऊँचे शिखरपर बैठ धीरे धीरे आकाशमार्ग से सूर्यसमान चला। शोक से रुदन करती हुई सीता का मुख, कमल के समान मुरझा गया। उसे देख रागसे अज्ञानी होकर रावण, सीताके चारोतरफ फिरता हुआ दीन वचन कहता है, हे देवी! कामके बाणोंसे मै मरा जारहा हूँ, सो तुझे मनुष्यकी हत्याका दोष लगेगा। हे सुन्दरी! यह तेरा मुखरूपी कमल हर क्षण क्रोधरूप है, फिरभी मनोज्ञसे अधिक महामनोहर लगता है, प्रसन्नहो, एकबार मेरीतरफ दृष्टिकर देख तेरे नेत्रोकी ज्योतिरूपी जलसे मुझे स्नान करा, और जो कृपादष्टि से नहीं देखे तो अपने चरण कमलों से मेरा मस्तक तोड दे। हाय हाय तेरे क्रीडाके वनमे मै अशोकवृक्ष क्यो नहीं हुआ, जो तेरे चरणो की पगतली के घातसे अत्यन्त प्रशसा योग्य मुझे खिलने का अवसर मिलता। भावार्थ–अशोकवृक्ष स्त्रीके पगतली के घात से फूलता है। हे कृषोदरी! विमानके शिखरपर बैठकर सर्व दिशाओं को देख मै सूर्यके ऊपर आकाश मे आया हूँ। मेरु कुलाचलपर्वत एव समुद्रसहित पृथ्वीको देख, मानो किसी शिल्पी ने बनाई है। ऐसे वचन रावण ने

कहे। तब वह महासती शील का सुमेरु पटके अन्दरसे अरुचि के शब्द कहने लगी। हे अधम! दूरहट, मेरेशरीर को स्पर्श मतकर और ऐसे हीन पापके वचन मतबोल। रे पापी, अल्पायु कुगति मे जाने वाला अपयशी तेरा यह दुराचार तुझेही भयकारी है, परस्त्री की अभिलाषा से तू महादुख को प्राप्त करेगा। जैसे भस्म में दबी अग्नि पर कोई पैर रखे तो अवश्य ही जलता है ऐसे तू इन कर्मो से बहुत पछतायेगा। तू महामोह रूपी कीचड से लचपच हो रहा है, तुझे धर्मका उपदेश देना वृथा है, जैसे अधे मानव के निकट नृत्य करना वृथा है। हे क्षुद्र! जो परस्त्री की इच्छा करता हैं, वह इच्छामात्र से ही पापों को बाधकर नरक गति मे महाकष्ट को भोगता है, इत्यादि रुखे कटु वचन सीताने रावण से कहे। फिरभी कामसे मर रहा है उसका मन सो अज्ञानी वहां से हटा नहीं। और खरदूषण के युद्ध में गये थे, हितकारी लोग, शुक हस्त प्रहस्तादि, वे खरदूषण को मरने से पुन उदास होकर लका मे आये। फिर भी रावण किसीकी तरफ देखता नहीं है। जानकी को अनेक प्रकार के वचनो से प्रसन्न करना चाहता है पर सीता कैसे प्रसन्न होगी। जैसे अग्नि की ज्वालाओ को कोईपी नहीं सकता। और सर्पके मस्तक मे से मणि कोईले नहीं सकता, ऐसे सीताको कोई शीलसे नहीं डिगा सकता है। पुन. रावण हाथजोड सिर झुकाकर नमस्कार कर, कई प्रकार के दीनता के वचन कहता है तो भी सीता इसके वचन एकभी नहीं सुन रही है। और मंत्री आदि एव सभी दिशाओ के योद्धा आये। राक्षसोका स्वामी रावण अनेक योद्धाओ से मडित हुआ, लोग जय जयकार करने लगे। गीत नृत्य हुये, अनेक प्रकार के वादित्र बजे। तब रावण ने इन्द्रके समान लकामे प्रवेश किया। और सीता मन मे विचार करने लगी कि ऐसा राजा मर्यादा से रहित क्रियाये करता है, तो, पृथ्वी की रक्षा कौन करेगा? जब तक मेरे स्वामी रामचन्द्रजी की कुशलमगल की बात मैं नहीं सुनू, तब तक मेरे चारोप्रकार के आहारपानी का त्याग है। पतिके कुशल समाचार सुनने के बाद ही आहार पानी ग्रहण करूगी। रावण देवारण्य नामके उपवन मे सीताको रखकर अपने राजभवन में गया। वह वन कैसा है? स्वर्ग समान परम सुन्दर, वहा कल्पवृक्ष रूप राजभवन में उसी समय खरदूषण की मृत्युके समाचार आये, तब महाशोक से रावण की अठारह हजार रानी ऊचे शब्दो को कहकर रोने लगी, और चन्द्रनखा रावण की गोद मे लोट पोट होकर अतिरुदन विलाप करने लगी। हाय हाय मै अभागिनी मर गई, मेरा पतिमर गया, मेरा बेटामर गया, बडे बडे आसू ऑखों में भरकर रोने लगी, ऑसुओं के झरने बहने लगे, पति और पुत्र

दोनों के मरण से शोकरूपी अग्निसे जल रहा है उसका हृदय, सो चन्द्रनखा को इसप्रकार विलाप करती देख, इसका भाई रावण कहने लगा, हे बालिके! रोने से क्या, इस संसार के चरित्र को तू नहीं जानती है, बिना कालसे, कोई वज्र से भी मारा नहीं मरता है, और जब मृत्यु आती है, तो सहजही मर जाता है। कहॉ वह भूमिगोचरी रक और कहा तेरा पति विद्याधर, दैत्योका अधिपती खरदूषण, उसे वह कैसे मारे, यह कालका ही कारण है। जिसने तेरे पति व पुत्रको मारा है उसे मै मारूँगा, इस प्रकार बहिनको दिलासा देकर कहा, अब तू भगवान की पूजा अर्चनाकर, श्राविका के व्रतका पालनकर। चद्रनखा को ऐसा कहकर रावण महल मे गया, और सर्पसमान श्वास लेता हुआ सेजपर गिरा। वहॉ पटरानी मदोदरी आकर पतिको व्याकुलदेखकर कहने लगी, हे नाथ! खरदूषण के मरने से आप चिन्तित है, सो आपके लिये वह बात उचित नहीं है, जो शूरवीर है, वे महादुख आनेपर भी विषाद नहीं करते है, आप वीराधिवीर क्षत्रीहो, आपके कुलमें, परिवार मे, एवं आपके अनेकमित्र रणसग्राम मे क्षय हुये (मर गये) अब किन किनका शोक करोगे, आपने कभी किसीका शोक नहीं किया, अब खरदूषण का इतना शोक क्यो करते हो? पहले इन्द्र के सग्राम मे आपका काका श्रीमाली, मरण को प्राप्त हुआ, और अनेक बधु रणमे मरे, तबभी किसीका शोक नहीं किया, आज आपको इतना आर्तध्यान क्यो हो रहा है जो हमने पहले कभी देखा नहीं। तब रावण श्वास लेकर बोला—हे सुन्दरी! सुन, मेरे मन की बात तुझे कहता हूँ, तू मेरे प्राणो की स्वामिनी है, और हमेशा मेरी इच्छा पूर्ण करती है, अगर तू मेरा जीवन चाहती है, तो क्रोध मत करना, मैं जैसा कहूँ ऐसाकर, सब वस्तुओ का मूल प्राण है, तब मन्दोदरी ने कहा, आप जो कहोगे वही मै करूँगी।

अथानंतर तब रावणने दुखी होकर कहा, हे प्रिये! एक सीता रूपवती स्त्री जो कि स्त्रियो की सृष्टिमे ऐसी ओर कोई नहीं, वह सीता मुझे नहीं चाहे तो मेरा जीवन नहीं, मेरा तीनखड का राज्य एवं रूप, बल, यह सब उस सीताको प्राप्त करने से ही सफल होगा। तब मन्दोदरी ने रावण की यह दशा देख, हसकर कहा, हे नाथ! यह बडा आश्चर्य है, आप जैसे प्रार्थना करे और वह आपको नहीं चाहे, तो वह मन्दभागिनी है, इस संसार मे ऐसी कौन रूपवान सुन्दरी है, उसका मन आपको देखने से खंडित नहीं होगा, और मन मोहित नहीं होगा। अथवा वह सीता कोई त्रैलोक्यसुन्दरी है, जो आप चाहो और वह आपको नहीं चाहे। आप हाथी के सूंड समान अपने हाथोसे बलात्कार कर क्यों नहीं सेवन करते। तब

रावण ने कहा, इस सर्वांगसुन्दरी को मै बलात्कार कर सेवन नहीं करता हूँ, उसका कारण सुन। अनन्तवीर्य केवली के सान्निध्य में मैने एक व्रत लिया है। उन अनन्तवीर्य केवली ने देवों के द्वारा वदनीय कल्याणकारी उपदेश दिया। इस संसार मे भ्रमण करते हुये जीवों को दु.ख एव पापों की निवृति का कारण एकभी नियम व्रत महाफल को देनेवाला है। और जिनके एक भी व्रत नहीं वह मानव फूटेकलश के समान है। उनमें और पशुओ मे कोई अन्तर नहीं। इसलिये अपनी शक्ति प्रमाण पापोको छोड पुण्यरूपी धनको प्राप्त करो। इसलिये जन्म के अधे व्यक्तिकी तरह संसाररूपी कूएमे मत गिरो। इस प्रकार केवलीभगवान के मुख से अमृतरूपी वचन सुनकर कोई मनुष्य तो मुनि बने, कोई अल्प शक्ति वाले अणुव्रतों को धारण कर श्रावक हुये, तब वहाँ केवली भगवान के समीप एक मुनिराज ने कृपाकर मेरे से कहा, हे दशानन! तुम भी कुछ नियम ग्रहण करो। तुम दया धर्मरूपी रत्नद्वीप मे आये हो सो, नियमरूपी रत्नों को ग्रहण किये बिना खाली मत जाओ, ऐसा कहा, तब मैंने निश्चयकर देव असुर विद्याधर मुनिराज इन सब की साक्षी पूर्वक व्रत लिया कि जो परनारी मुझे नहीं चाहे तो मै उसे बलात्कार ग्रहण नहीं करूँगा। हे प्राण प्रिये! मैने सोचा था कि मेरे जैसे रूपवान पुरुष को देखकर ऐसी कौन नारी होगी जो मुझे नहीं चाहेगी। इसलिये मै बलात्कार सेवन नहीं करता हूँ। राजाओं का यही नियम होता है, जो वचन कहे उसका निर्वाह करे। अन्यथा महादोष लगता है। इसलिये मेरा मरण हो उसके पहले सीता को प्रसन्न करो। घर में आग लगने के बाद कूंआ खोदना वृथा है। तब मन्दोदरी रावण से कहने लगी—हे नाथ! आपकी आज्ञा प्रमाण करूँगी। ऐसा कहकर देवारण्य उद्यान में गई। और मन्दोदरी की आज्ञा से रावण की अठारह हजार रानियॉ गई। मन्दोदरी ने जाकर सीतासे कहा, हे अनुपमसुन्दरी! हर्ष के स्थान मे क्यों दुखी हो रही हो? जिस स्त्री के रावण पति है, वह जगत में धन्य हैं। सब विद्याधरों का स्वामी, देवों को जीतने वाला तीनलोक मे सुन्दर रूपवान उसे क्यो नहीं चाहती हो। निर्जनवन के निवासी, निर्धन, शक्तिहीन, भूमिगोचरी उनके लिये क्या दुख करती हो, सब लोक मे श्रेष्ठ रावण उसे अंगीकारकर, क्यों नहीं सुख भोगती हो? अपने सुख के साधन करने मे क्या दोष है। जो कुछ करना है वह अपने सुख के लिये करना है। अगर मेरा कहना नहीं करोगी तो तुम्हारा जो होनहार होगा सो होगा ही होगा। रावण महा बलवान है, उसकी प्रार्थना भंग से क्रोध करे तो तेरी इस बात मे कोई सार नहीं है। और राम लक्ष्मण तेरे सहाई

है, वह रावण के क्रोध से जीवित नहीं रह सकते है। इसलिये शीघ्र ही विद्याधरो का ईश्वर रावण को स्वीकार करो एवं ऐश्वर्य को प्राप्त कर देवॉगनाओ के समान सुख भोगो। जब मन्दोदरी ने ऐसा कहा, तब जानकी ऑखों में आसुँओं सहित दुखी होकर गद गद वाणीसे कहती है।

हे नारी! यह बात तूने सर्वथा विरुद्ध ही कही। तू पतिव्रता कहलाती है, तो पतिव्रताओ के मुख से ऐसे वचन कैसे निकले। यह मेरा शरीर छिदजाए, भिदजाए, खड खड हो जाए, मर जाए, परन्तु मैं अन्य पुरुष को नहीं इच्छूँगी। रूप से सनतकुमार समान हो, या इन्द्रसमान हो तो मेरे क्या काम? मैं कभी भी अन्य पुरुष को नहीं चाहूँगी। तुम सब अठारह हजार रानियॉ इक्कठी होकर आई हो, तो भी मैं तुम्हारा कहना नहीं करूँगी, तुम्हारी जो इच्छा हो वह करो। उसी समय रावण आया काम सेवन से दुखी, जैसे प्यासा हाथी गगा के किनारे आये, ऐसे रावण सीता के पास आकर मधुर वाणीसे आदर पूर्वक कहता है हे देवी! तुम भय मत करो मै तुम्हारा भक्त हूँ। हे रूपवानसुन्दरी! मन लगाकर मेरी एक विनती सुन, मै तीनलोक का स्वामी मेरे पास किन वस्तु की कमी है। जो तुम मुझे नहीं चाहती हो? ऐसा कहकर स्पर्श करने की इच्छा से आगे बढा, तब सीता क्रोधकर कहती है—हे पापी! अधमनर! दूर हट मेरे शरीरको स्पर्श मतकर, तब रावणने कहा—हेदेवी! क्रोध एव अभिमान को छोड प्रसन्न हो, शचि इन्द्राणी समान दिव्यभोगो की स्वामिनी हो। तब सीता बोली-कुशील पुरुष का वैभव मलमूत्र समान है, और शीलवान पुरुष की दरिद्रता ही आभूषण है, जो उत्तमवश मे उत्पन्न हुये है, उनके शील भग से दोनो लोक बिगडते है। इसलिये मेरे तो मरण ही शरण है। तू परस्त्री की अभिलाषा रखता है। तो तेरा जीवन ही मरण है। जो शील को पालता हुआ जीता है, उसका जीवन सफल है। इस प्रकार जब सीता ने तिरस्कार किया, तब रावण क्रोधसे मायाचार की प्रवृति दिखाने लगा। तब अठारह हजार रानियॉ वहॉ से चली गई। रावण की माया के भय से सूर्य अस्त हो गया। मद झरती मायामयी हथनियो की भीड आई तो भी सीता भयभीत होकर रावण की शरण मे नहीं गई, पुन· अग्नि के स्फुलिग बरसने लगे, जीभ निकालते हुये भयानक सर्प आये तो भी सीता रावण के समीप नहीं आई। पुन· महाक्रूर बन्दर मुखफाडे हुये उछल उछल कर अतिभयानक शब्द करते हुये आये, तो भी सीता रावणकी शरण मे नहीं गई। अग्निकी ज्वालासमान चचल जीभ ऐसे मायामयी अजगरो ने आकर भय उत्पन्न कराया, तो भी सीता रावणकी शरणमें

नहीं आई। इस प्रकार रावण ने अनेक उपसर्ग किये फिर भी सीता डरी नहीं, रात्रि पूर्ण हुई। जिन मन्दिरमे बाजो की ध्वनी हुई, दरवाजे खुले, रात्रि का अधकार दूर हुआ, सूर्य का उदय हुआ, प्रात· कालकी क्रियाकर विभीषणादि रावण के भाई खरदूषण के शोक से रावण के पास आये, सब नीचा मुखकर ऑसू डालते हुये भूमि मे बैठे। उस समय पटके अन्दर से शोक की भरी सीता के आक्रन्दन पूर्वक रोने के शब्द विभीषण ने सुने, और सुनकर कहा यह कौन स्त्री रो रही है? अपने पतिसे बिछुडी है। इसके दुखरूपी शोकके शब्द दुख को स्पष्ट दिखा रहे है। यह विभीषण के शब्द सुन सीता और अधिक रोने लगी। सज्जनको देख शोक बढता ही है। विभीषण ने पूछा, हे बहिन! तुम कौनहो? तब सीता कहती है, मै राजा जनक की पुत्री, भामडल की बहिन, राम की रानी, दशरथ मेरा सुसरा, लक्ष्मण मेरा देवर, वह खरदूषण से युद्ध करने गया, उसके पीछे मेरा स्वामी भाई की मदद मे गये, मै अकेली वनमे रही। तब इसदुष्ट रावणने मुझे हरी, सो मेरा पति मेरे बिना प्राण छोडेगा? इसलिये हे भाई! मुझे मेरे पति के पास शीघ्र ही भेज दो, ये वचन सीता के सुन विभीषण ने रावण से विनयकर कहा हे देव! यह परनारी अग्नि की ज्वाला समान है, आशीविष सर्प के फण समान भयकर है। आप क्यो लेकर आये, अब शीघ्र ही पहुँचा दो। हे स्वामी! मेरी विनती सुनो आपने मुझे आज्ञा दी थी कि जो उचित बात हो तो हमारे से कहना, इसलिये मै आपकी आज्ञासे कहता हूँ। आपकी कीर्तिरूपी लता भस्म हो जाए, यह परदारा की इच्छा महानिन्द्य, दोनो लोकको नाश करने वाली, जगत मे दुखदाई है। जो उत्तम मानव है, ऐसा अप्रिय अनीति कार्य नहीं करते। आप सबके ज्ञाता हो, सबकी मर्यादा आपसे ही रहनी है, आप विद्याधरो के महेश्वर जलता कोयला क्यो हृदय मे लगाते हो। पाप बुद्धि परदारा सेवी नरक मे प्रवेश करते है। जैसे लोहे का गर्म गोला जलमे प्रवेश करता, ऐसे पापी नरक मे जाते है। यह वचन विभीषण के सुन रावण बोला हे भाई! पृथ्वीपर जो सुन्दर वस्तु हैं, उसका मै स्वामी हूँ, सब मेरी ही वस्तु है, पर वस्तु कहाँ से आई, ऐसा कहकर दूसरी बात करने लगा। पुनः महानीतिवान मारीच मत्री ने कहा, देखो यह मोहकर्म की लीला। रावण समान विवेकी सब रीति को जानने वाला ऐसा कर्म करता है, जो ज्ञानी पुरुष हैं उनको प्रातःकाल उठकर अपनी कुशल व अकुशल का चिन्तवन करना चाहिये। विवेक से चूकना नहीं, इस प्रकार निर्भय होकर बुद्धिमान मंत्री ने कहा, तब रावण ने कोई जवाब नहीं दिया। उठकर त्रिलोकमडल हाथीपर

चढकर सभी सामन्तो सहित उपवन से नगर की ओर चला। बरछी खड्ग तोमर चमर छत्र ध्वजाादि अनेक वस्तुयें हाथों मे लेकर योद्धा पुरुष आगे आगे चले रहे हैं, इस प्रकार रावण ने लका मे प्रवेश किया। रावणके चक्रवर्ती की सम्पदा फिरभी सीता तृण से भी अधिक हीन जानती है। सीता का दृढमन रावण लुभाने मे समर्थ नहीं हुआ, जैसे जलमें कमल अलिप्त रहे ऐसी अलिप्त रही। सर्वऋतुओ के पुष्पो से शोभित अनेकवृक्ष लताओ से पूर्ण ऐसा प्रमदनाम का वन वहाँ सीताको रखी। यह वन नन्दनवन समान मन और नेत्रो को सुन्दर लगे, देवो का मनभी इस वनको देखकर प्रसन्न होता है, तो मनुष्यो की क्या बात है। वह सप्तवनो से सहित शोभा जैसे, भद्रशाल आदिवनसे सुमेरुपर्वत सोहते हैं।

हे श्रेणिक! सातही वन अद्‌भुत है उनकेनाम सुनो, प्रकीर्णक, जनानद, सुखसेव्य, समुच्च्य, चारणप्रिय, निबोध, प्रमद। यह सातों ही वनोमें ऊँचे ऊँचे वृक्ष, स्त्री पुरुष क्रीडा करते, चारणमुनि ध्यान करते, अनेक खण्ड के महल, और वहा नारगी, बिजोरा, नारियल, छुहारा, ताडवृक्ष इत्यादि अनेकवृक्ष, पुष्पो के गुच्छों सहित हैं भ्रमर गूज रहे है, लताये मंद मद पवन से हिल रही है युगल मोर विचरण करते है उस वनकी विभूति, मनोहर कुए, सहस्रदल कमल है, और सरोवर मे मद मद पवन से लहरे उठ रही हैं, मानो सरोवर नृत्य ही करता है, कोयल बोलती है, बहुत कहने से क्या, वह प्रमदनाम का वन, सब उत्साहो सहित, उत्तम भोगो का निवास, नदनवन से भी अधिक वह वन अशोकमालिनी नाम की बावडी कमलो से युक्त, मणि सुवर्ण की सीढियो से युक्त अनेक आकार की है, मनोहर महल, सुन्दर खिडकीया, वहाँ पानी के झरने बह रहे है। ऐसे अशोकवृक्ष के नीचे सीता को रखी। कैसीहै सीता? श्रीरामचन्द्रजी के वियोग से दुखी महाशोक को धरे, जैसे इन्द्र से बिछुडी इन्द्राणी। रावण की आज्ञा से अनेक विद्याधरियाँ खडी ही रहे अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण सुगन्धित पदार्थ हाथो मे लिये नानाप्रकार की चेष्टाकर सीताको प्रसन्न करना चाहे। दिव्यगीत, दिव्यनृत्य, दिव्यबाजे, अमृतसमान दिव्यवचनो से सीता को हर्षित करना चाहती है। परन्तु सीता कहाँ हर्षित होवे? जैसे मोक्ष लक्ष्मी को अभव्यजीव प्राप्त नहीं कर सकते, वैसे रावण की दूती सीताको प्रसन्न नहीं कर सकती। बार बार रावण दूतियो को भेजता है, कामरूपी अग्निसे प्रज्वलित ज्वालाओ से व्याकुल महाउन्मत्त की तरह अनेक प्रकार से अनुराग के वचन सीता को कहलवाता है। परन्तु सीता कुछ जवाब नहीं देती, दूतियाँ जाकर रावण से कहती है, हे देव! सीता तो आहार पानी

सब त्याग करके बैठी है। आपको कैसे चाहेगी, वह किसीसे बात नहीं करती, हमारी तरफ देखती भी नहीं है, अमृत समान अनेक स्वाद युक्त भोजन दुधादि रस व्यजन उसके सामने रखते हैं, परन्तु वह सामने भी नहीं देखती, स्पर्श भी नहीं करती, खाने की कहाँ बात। दूती की यह बात सुनकर रावण महादुखी होकर आर्तध्यान रूपी चिन्ता के सागर में डूबा। कभी जोर जोर से श्वास लेता है, कभी विचारता है, कभी गाता है, बोलता है, बकता है, कामरूपी अग्निसे जला हुआ हृदय उसका सोच सोचकर अपना शरीर भूमि मे डाल देता है, फिर उठता है, शून्य सा हो जाता है, बिना विचारे उठकर चलता है, वापिस आता है, जैसे हाथी अपनी सूंड पृथ्वीपर गिराता है, वैसे ही रावण अपने हाथ पृथ्वीपर पटकता है, सीता को बार बार याद करता ऑखो से ऑसू डालता है। कभी सीता सीता कहकर बुलाता है, कभी हुकार करता है, कभी चुप होता, कभी वृथा बकवास करता, कभी नीचा मुखकर नखो से धरती कुचरता, कभी अपने हाथ हृदयपर लगाता, कभी भुजाये ऊँची करता, कभी सेजपर पडता, कभी उठकर बैठता, कभी कमलको हृदयपर लगाता, कभी दूर फेकता, कभी शृगार काव्य पढता, कभी आकाशको देखता, कभी हाथोसे हाथ मसलता, कभी पैरसे पृथ्वी कुचलता, कभी कह कहकर शब्द करता, कभी अपने बाल बिखेरता, कभी बाधता, कभी जभाई लेता, कभी मुखपर कपडा डालता, कभी सब कपडे पहनता, कभी सीता के चित्र बनाता, कभी ऑखो मे ऑसुओ सहित दीन होकर हॉ हॉ करता, आशारूपी ईंधनसे प्रज्वलित जो कामरूपी अग्निसे उसका हृदय एव शरीर जलता है, कभी मन मे सोचता है कि मै कौन अवस्था को प्राप्त हुआ हूँ जिससे अपना शरीर भी नहीं संभाल सकता हूँ। मैने अनेक गढ और सागर के बीच में बैठे, बडे बडे विद्याधरो को हजारोबार युद्ध मे जीते और लोक में प्रसिद्ध इन्द्रनाम का विद्याधर उसको जीता, अब मैं मोहसे उन्मत्त होकर प्रमाद के वशहोकर विपरीत क्रिया कर रहा हूँ। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं—हे राजन्! रावण तो काम के वश हुआ, और विभीषण महाबुद्धिमान मत्रणा मे निपुण सब मत्रियो को इकट्ठाकर मंत्रणा की। कैसा है विभीषण? रावण के राज्य का भार उसके ऊपर आया है, रावणको विभीषण के समान कोई हितु नहीं, विभीषण को रावण के हित की चिन्ता है, तब सब मत्रियों से कहा, हे मंत्रीगणो! राजाकी तो यह दशा, और अपने को क्या कर्त्तव्य है सो कहो? तब विभीषण के वचन सुन समिन्नमति मत्री कहता है, हम क्या कहें, सब काम बिगडा रावण की दाहिनी

भुजा, जो खरदूषण था वह मरा, और विराधित क्या,जो श्याल से सिंह बन गया है। लक्ष्मण के युद्ध मे सहायता की थी। और बानरवशी तो जोर से वश रहे है, इनका आकार तो कुछ और ही हो रहा है, और इनके मनमे कुछ और ही है, जैसे सर्प ऊपर से तो मुलायम और अन्दर मे विष, और पवनका पुत्र हनुमान, खरदूषणकी पुत्री अनगकुसुमा का पति उसने सुग्रीवकी पुत्री से विवाह किया है, सो सुग्रीव का पक्ष विशेष है, यह वचन सभिन्नमति के सुन, पंचमुख मत्री बोला तुमने खरदूषण के मरने का सोच किया तो शूरवीरो का यही कार्य है, कि सग्राम मे प्राण छोडे। और एक खरदूषण के मरने से रावण का क्या घट गया, जैसे पवनके योगसे समुद्र के जलकी एक बूंद गई तो समुद्र मे क्या कमी हुई? और तुम ओरो की प्रशसाकर रहे हो वह शर्मकी बात है, कहॉं वह रावण जगत का स्वामी और कहॉं वह वनवासी भूमिगोचरी? लक्ष्मण के पास सूर्यहासखड्ग आया तो क्या? और विराधित आकर मिला तो क्या? तब सहसमति मत्रीने कहा, बिना प्रयोजन की बाते क्यो करते है। जिसमे स्वामीका हितहो वह करना, दूसरा छोटा है हम बडे है, यह विचार बुद्धिमानो का नहीं, समय पाकर एक अग्नि की चिनगारी सम्पूर्ण पृथ्वी को जलाती है, जैसे अश्वग्रीव के महासेना थी, वह पृथ्वीपर प्रसिद्ध था, तो भी छोटे से त्रिपष्ट ने रणमे मार दिया। इसलिये अन्य बाते छोड लका की रक्षा का यत्न करो, जिससे कोई प्रवेश न कर सके। महा मायामयी भयानक यत्र सब दिशा मे फैलाओ। जिससे नगर मे परचक्र का मनुष्य कोई भी आ नहीं सके। और प्रजा को धैर्य बधाओ, रक्षा करने का उपाय करो, जिससे रावण सुख को प्राप्त हो। मधुरवाणी से नानाप्रकार की वस्तुओ को भेटकर सीताको प्रसन्न करो। जैसे दूध पिलाकर नागिनी को प्रसन्न करते हैं। बानरवशी योद्धाओ को नगर के बाहर चौकीदारी पर बैठाओ, ताकि परचक्र का योद्धा कोई आ नहीं सके। और यहॉं की सूचनाए परचक्र मे नहीं जावे। इसप्रकार गढका यत्न करे तो कौन जान सकता है कि सीता किसने हरी और कहाँ है? सीताके बिना राम निश्चय से मर जायेगे, जिसकी रानी जावे वह कैसे जीवे। राम मरे तब अकेले लक्ष्मण क्या करेगे। अथवा राम के शोक से लक्ष्मण अवश्य ही मरेगे। जीवेगे नहीं, जैसे दीपक के बुझने से प्रकाश नहीं रहता, और ये दोनो भाई मर गये, तब अपराधी वह विराधित क्या करेगा। और सुग्रीव का रूप बनाकर विद्याधर उसके घर मे आया है तो वह रावण को छोड सुग्रीव का दुख कौन दूर करेगा। मायामयी यत्र की रखवाली सुग्रीव को सौपे जिससे वह प्रसन्न होगा और

रावण इसके शत्रु का नाश करेगा। लकाकी रक्षा का उपाय मयामयी यंत्रसे करना, यह मंत्रणाकर हर्षपूर्वक सब अपने अपने घर गये। विभीषण ने मायामयी यंत्र से, लका के चारोंतरफ कोट द्वारा रक्षा की। अत. ऊपर नीचे तिरछे से कोई आ नहीं सकता, अनेक विद्याओ से लकाको अगम्य किया। गौतमगणधर कहते हैं, हे श्रेणिक! ससारी जीव सभीही लौकिक कार्य में लीन है, व्याकुल चित्त है, और जो आकुलता से रहित निर्मल मनवाले हैं, उनको जिनवचन के अभ्यास को छोड, और कुछ नहीं करना चाहिये। और जो जिनेन्द्रभगवान ने कहा है वह पुरुषार्थ के बिना सिद्ध नहीं। इसलिये जो भव्यजीव है वह संसार से विरक्त होकर मोक्ष का पुरुषार्थ करे। नारकी तिर्यच मनुष्य और देव ये चारो ही गति दुखरूप है, अनादिकाल से यह प्राणी कर्मो के उदय से राग द्वेष मे प्रवृति करता है, इसलिये इनके मन मे कल्याण करने की भावना नहीं होती है। अशुभ को छोड शुभ की प्रवृत्ति करते है, तब शोकरूपी अग्नि से तप्तायमान नहीं होते है। शुभ क्रियाये करने से सुख रूपी फल की एव अशुभ क्रियाओ से दुखरूपी फल की प्राप्ति होती है, इसलिये शुभ कार्य करना।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे लकामे मायामयी कोटका वर्णन करनेवाला छयालीसवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-47

साहसगति के वध का वर्णन

अथानतर किहकधापुर के स्वामी सुग्रीव का रूप बनाकर साहसगति विद्याधर सुग्रीव के नगर मे आया है, और सुग्रीव अपनी रानी के वियोग से दुखी होकर भ्रमता हुआ वहां आया जहॉ खरदूषण की सेना के सामन्त मरे थे। बिखरे रथ, मरे हाथी, मरे घोडे, छिन्न भिन्न कई शरीर पडे थे, कई राजाओं के दाह संस्कार हो रहे थे, कोई श्वास ले रहे थे। किसीकी भुजाये कट गई हैं, किसीकी जघाये कट गई है, किसीकी आते गिर पडी है, किसीके मस्तक पडे हैं, किसीको श्याल भक्षणकर रहे है, किसीको पक्षी नोच रहें हैं, किसीके परिवार रो रहे हैं, किसीको टाग रखा है, यह रण का वृतान्त देख, सुग्रीव ने किसीसे पूछा, तब उसने कहा

कि खरदूषण मर गया। तब सुग्रीव को खरदूषण के मरण का समाचार सुन अतिदुख हुआ। मन मे सोचने लगा बडा अनर्थ हुआ, वह महा बलवान था, उससे मेरा दुख दूर होता। मै पुण्य हीन अब मेरा दुख कैसे शात होगा? कालरूपी हाथी ने मेरा आशारूपी वृक्ष तोडा। फिर भी बिना पुरुषार्थ से जीव को सुख नहीं होता। इसलिये दुख दूर करने का उपाय करूँ। तब सुग्रीव हनुमान के पास गया। हनुमान ने दोनो का समानरूप देख वापिस चले गये। तब सुग्रीव चिन्ता करने लगा, कि क्या उपाय करूँ जिससे कार्य सिद्ध हो। अगर रावण के शरण मे जाऊँ तो रावण मेरा और शत्रु का एक समानरूप जान शायद मुझे ही मार देगा, अथवा दोनो को मार कर स्त्री हरकर ले जायेगा। वह कामाध है अत कामाध का विश्वास नहीं होता। मत्र, दोष, अपमान, दान, पुण्य, धन, शूरवीरता यह वस्तुयें खोटे मित्र को नहीं बताना चाहिये। जो बतायें तो महादुखी होते। इसलिये सग्राम मे खरदूषण को जिसने मारा है, उसीकी शरण मे जाऊँ वह मेरा दुख दूर करेगा। जिसके ऊपर दुख पडा हो, वे ही दुखी के दुख को जानते हैं। सीता के वियोग का सीता के पति को ही दुख उत्पन्न हुआ है, ऐसा विचारकर विराधित के निकट अति प्रीतिसे दूत को भेजा। तब दूतने जाकर सुग्रीव के आगमन की बात विराधित से कही। तब विराधित सुनकर मन मे खुश हुआ, सोचता है कि यह बडा आश्चर्य है। सुग्रीव जैसे महाराज भी मुझ से प्रीति करने की इच्छा करते है, सो बडों के आश्रय से क्या नहीं होगा? मैने श्रीराम लक्ष्मण का आश्रय लिया तो सुग्रीव जैसे पुरुष मेरे से स्नेह करना चाहते है। सुग्रीव आये, तब मेघ की गर्जना समान बाजे बजे, तब पाताल लका के लोग सुनकर व्याकुल हुये। और लक्ष्मण ने विराधित से पूछा, बाजो का शब्द कहाँ से आ रहा है? तब अनुराधा का पुत्र विराधित ने कहा, हे नाथ! यह वानरवशीयो का स्वामी प्रेम से भरा आपके निकट आया है। किहकधापुर के राजा सूर्यरज का पुत्र इस पृथ्वीपर प्रसिद्ध बडा बाली और छोटा सुग्रीव। सो बाली ने तो रावण को नमस्कार नहीं किया, सुग्रीव को राज्य देकर विरागी हुआ सुग्रीव निश्कटक राज्य करते है, उनकी सुतारा रानी जैसे शचि सहित इन्द्र ऐसे सुग्रीव सहित सुतारा। उसके अंगदपुत्र गुणरूपी रत्नो से शोभायमान, उसकी कीर्ति पृथ्वीपर फैल रही है। यह बात विराधित कह रहा था, उसी समय सुग्रीव आया। राम और सुग्रीव मिले, राम को देख सुग्रीव का मन प्रसन्न हुआ, सभी सुवर्ण के आंगन मे बैठे, अमृत समान मधुर वाणी से

परस्पर मगल वार्ता हुई। सुग्रीव के साथ वृद्ध विद्याधर आये हैं, वह राम से विनती करने लगे हे देव! यह राजा सुग्रीव किहकधापुर का स्वामी महाबली गुणवान पुरुषों को प्रिय, कोई एक दुष्ट विद्याधर माया से सुग्रीव का रूप बनाकर आया, और इनकी रानी सुतारा और राज्य लेने का कार्य कर रहा है, यह वचन सुन राम मन मे सोचने लगे कि यह कोई मेरे से भी अधिक दुखी है, इसके बैठे ही दूसरा पुरुष इसके घर में आकर घुसा है, इसके पास राज्य का वैभव है, परन्तु कोई शत्रुको दूर करने मे समर्थ नहीं है, तब लक्ष्मणने सभी बात सुग्रीवके मंत्री जामवन्त को पूछा, तब वह मुख्य मत्री महाविनय सहित कहता है, हे नाथ! कामकी फासी से युक्त वह पापी सुतारा के रूपपर मोहित हुआ, मायामयी सुग्रीव का रूप बनाकर राजभवन मे आया और सुतारा के महल मे गया। सुतारा महासती अपने सेवकों से कहती है। यह कोई दुष्ट विद्याधर विद्या से मेरेपति का रूप बनाकर आया है, यह पापी है, इसका आदर सत्कार मत करो, वह पापी निडर होकर सुग्रीव के सिहासनपर बैठ गया, उसी समय सुग्रीव भी आया, और अपने लोगो को चिन्तावान देख, विचार करता है, कि मेरे घरमे क्यो विषाद है, सभी लोग उदास मन से जगह जगह क्यो खडे हो रहे हैं।

कदाचित् अगद मेरुके चैत्यालयो की वदना के लिये सुमेरुपर्वतपर गया होगा, और वह नहीं आया हो, अथवा रानीने किसी पर क्रोध किया हो, ऐसा विचारकर, दरवाजेपर आया, रत्नमयी द्वार गीत गान रहित देखा, लोग भी चिन्तावान दिखे, तब मनमे सोचा मनुष्य सब ओर ही हो गये हैं। भवनके अन्दर स्त्रीयो के बीच अपने समान रूप का धारी दुष्टविद्याधर बैठा देखा, दिव्यहार वस्त्र मुकुट की काति से प्रकाश रूप। तब सुग्रीव क्रोध से बोला, जैसे वर्षाकाल का मेघ गरजे। तब वह पापी कृत्रिम सुग्रीव भी गरजा, कामसे विहव्ल होकर, सुग्रीव से लडने को उठा, दोनो होट डसते हुये युद्धको तैयार हुये। तब श्री चन्द्रादि मत्रियो ने मना किया, और सुतारा पटरानी ने स्पष्ट कहा, यह कोई दुष्ट विद्याधर मेरेपति का रूप बनाकर आया है, शरीर, बल, वचन से तो समान है, परन्तु मेरे पति मे महापुरुषों के लक्षण है, वह इसमें नहीं हैं, जैसे घोडा और गधा समान नहीं है। ऐसे मेरे पति की और इसकी तुलना नहीं। इस प्रकार रानी सुतारा के वचन सुनकर किसी मत्रीयो ने मानी, किसीने नहीं मानी, जैसे निर्धन की बात धनवान नहीं माने? दोनों का समान रूप देखकर सबका मन विचलित हो गया,

इसलिये सब मन्त्रियो ने मत्रणा की, कि बालक वृद्ध, स्त्री, मद्यपायी, वैश्यासक्त इनके वचनों का प्रमाण नहीं, स्त्रीयो को शीलकी रक्षा करनी, शीलकी शुद्धि के बिना गोत्रकी शुद्धी नहीं, स्त्रीयो का शील ही धर्म है, इसलिये राजलोक में दोनो ही अन्दर नहीं आ सकते, बाहर ही रहें, तब इनका पुत्र अंगद तो माताके वचनसे इनके पक्ष में आया, और जाबुनन्द ने कहा, हम भी इनके साथ है, और सात अक्षोहणीदल सुग्रीव के पास है और सात ही उसके पास है, नगर के दक्षिणकी ओर उसको रखा, और उत्तर की ओर इनको रखा और बाली का पुत्र चन्द्ररश्मि उसने यह प्रतिज्ञा की, कि जो सुतारा के महल मे आयेगा उसे ही खड्ग से मारूँगा। तब सच्चा सुग्रीव, रानी के वियोग से दुखी होकर शोकको दूर करने के लिये खरदूषण के पास गया, खरदूषण तो लक्ष्मण के खड्ग से मर गया। फिर यह हनुमान के पास आकर अपनी प्रार्थना की कि मै दुख से पीडित हूँ, मेरी सहायता करो, मेरे जैसारूप बनाकर कोई मेरे घर मे आकर बैठा है, जाकर उसे मारो। तब सुग्रीव के वचन सुन हनुमान बडवानल समान क्रोध से प्रज्वलित होकर अपने मन्त्रियों सहित, अप्रतिघात नाम के विमान मे बैठकर किहकधापुर आया। हनुमान को आया सुन मायामयी सुग्रीव हाथीपर बैठ युद्ध करने आया, तब हनुमान ने दोनो का समान रूपदेख आश्चर्य को प्राप्त हुआ, मन मे सोचा कि ये दोनो समान रूप वाले सुग्रीव ही हैं, इनमे से मै किसको मारूँ, यह मालुम नहीं हो रहा है, बिना जाने सुग्रीव को ही मारूँ तो बडा अनर्थ होगा। कुछ क्षण अपने मन्त्रियों से विचारकर उदास हो हनुमान अपने नगर चला गया। हनुमान को जाने से सुग्रीव महादुखी हुआ, सोचने लगा कि हजारो विद्या और माया से मडित महाबली वायुपुत्र वह भी सन्देह को प्राप्त हुआ है। यह बडा कष्ट है अब कौन सहायता करेगा। ऐसा विचारकर दुखी होकर सकटो को दूर करने के लिये, स्त्री के वियोग से तप्तायमान आपकी शरण मे आया है। आप शरणागत व प्रतिपालक है, यह सुग्रीव अनेक गुणवान रूपवान है, हे रघुनाथ! प्रसन्न हो, सुग्रीव को अपना समझो, आप जैसों का शरीर पर दु:खो का नाशक है, ऐसे जाबुनद के वचन सुन राम लक्ष्मण एव विराधित कहने लगे, धिक्कार है पर स्त्री लम्पटी, पापी, जीवो को। राम ने सोचा कि मेरा और इसका दु ख समान है, यह मेरा मित्र होगा, मै इसका उपकार करूँ, और यह मेरा उपकार जरूर करेगा। नहीं तो मै निग्रथमुनि होकर मोक्ष का साधन करूँगा। ऐसा विचारकर रामने सुग्रीव से कहा, हे सुग्रीव!

मैंने तुझे अपना मित्र बनाया, और जो तेरा रूप बनाकर आया है, उसको जीत तेरा राज्य तुझे निष्कंटक दिला दूगा, और तेरी स्त्री को तुझे मिला दूगा और तुम्हारा काम होने के पश्चात तुम हमारी सीता का पता लगाकर हमको बताना कि सीता कहाँ है। तब सुग्रीव ने कहाँ, हे प्रभो! मेरा कार्य होनेके बाद सात दिनोमें सीता की खबर नहीं लाकर दूँ, तो मैं अग्निमे प्रवेश करूँगा। यह बात सुन राम प्रसन्न हुये, सुग्रीव के अमृतसमान वचन सुनकर रामका मुखकमल फूल गया, मन रोमांचित हुआ। जिनराज के चैत्यालय मे दोनो परम मित्र हुये, और यह प्रतिज्ञा की कि परस्पर कोई द्रोह नहीं करेगे। पुन राम लक्ष्मण सामन्तो सहित सुग्रीव के साथ किहकधापुर आये और नगर के पास डेरा डाल सुग्रीव ने मायामयी सुग्रीव के पास दूत भेजा, मायामयी सुग्रीव बडीसेना सहित युद्ध के लिये निकला। दोनो का परस्पर युद्ध हुआ, बहुत समय के बाद मायामयी सुग्रीव ने सच्चे सुग्रीव को गदा की मारी तो वह गिर पडा, तब मायामयी सुग्रीव इसको मरा जान हर्ष सहित नगर मे गया। और सच्चा सुग्रीव की मूर्च्छादूर होने के बाद रामसे कहा, हे प्रभो! मेरा चोर हाथ मे आया था, उसको नगर मे क्यो जाने दिया, और रामचन्द्रजी के चरणो मे आने पर भी मेरा दुख नहीं मिटे तो, इस समान दुख क्या? तब राम ने कहा तेरा और उसका रूप देखकर हम भेद नहीं जान सके, इसलिये तेरे शत्रुको नहीं मारा, बिना जाने अगर तेरा ही मरण हो जाये तो योग्य नहीं, तुम हमारे परममित्र हो, तुम्हारी और हमारी जिनमन्दिर मे प्रतिज्ञा हुई है।

अथानंतर रामने मायामयी सुग्रीव को पुन· युद्ध के लिये बुलाया। तब वह बलवान क्रोधरूपी अग्नि से जलता हुआ, राम के सन्मुख आया, उस समय लक्ष्मणने सच्चे सुग्रीवको पकडरखा कि कभी स्त्री के बैर से शत्रु के सन्मुख नहीं चला जाए। और श्रीरामको देखकर मायामयी सुग्रीव के शरीर मे जो बैतालीविद्या थी, वह उसको पूछकर उसके शरीर से निकली तब सुग्रीव का रूप मिटकर वह साहसगति विद्याधर इन्द्रनील के पर्वत समान दिखा। जैसे सांपकी काचली दूर होती है, ऐसे सुग्रीव का रूपभी दूर हो गया। तब जो आधी सेना वानर वंशीयों की इसमे मिल गई थी वह वहाँ से पुन· अलग हो गई, सभी वानरवंशी एक होकर अनेकशस्त्रों सहित साहसगति से युद्ध करने लगे। सो यह साहसगति महातेजस्वी प्रबलशक्ति का धारी सब वानर वंशीयो को दशो दिशाओ मे भगा दिये। जैसे

पवन धूलको उडाती है। पुनः साहसगति धनुषबाण लेकर राम के पास आया, मेघमंडल समान बाणोंकी वर्षा करता रहा। राम और साहसगति का महायुद्ध हुआ, महापराक्रमी शक्तिशाली ऐसे राम रणक्रीडा मे प्रवीण क्षुद्रबाणों से साहसगति का बखतर छेदा और तीक्ष्णबाणों से साहसगति का शरीर चलनी के समान कर दिया। तब वह प्राणों से रहित होकर पृथ्वीपर गिरा। सबने निश्चय किया कि यह मर गया। तब सुग्रीव ने राम लक्ष्मण की महास्तुति की, और अपने राजभवन में लेकर आये। नगर की शोभा हुई सुग्रीवको सुतारा का सयोग हुआ, सो वह भोग सागर मे लीन हो गया। और आनन्दनाम के उद्यान मे श्रीरामचन्द्रजी को रखा। उस उद्यान की रमणीकता का वर्णन कौन कर सकता है। जहॉ महामनोज्ञ श्रीचन्द्रप्रभु का चैत्यालय वहॉ राम लक्ष्मण ने पूजा की, और विराधितादि सब कटक का डेरा उद्यान मे हुआ। और सभी आनन्द से रहे। सुग्रीव की तेरह राजपुत्रियो ने रामचन्द्रजी के गुण सुनकर अतिअनुराग से विवाह करने की इच्छा की। उनके नाम सुनो चन्द्राभा, हृदयावली, हृदयधर्मीत, अनुधरी, श्रीकाता, सुन्दरी, सुरवती यह देवागनासमान, चारुश्री, मदनोत्सवा, गुणवती, मनोवाहिनी, पद्मावती तथा जिनमती जिनपूजा मे तत्पर यह त्रयोदशा कन्याओ को लेकर सुग्रीव राम के पास आये, नमस्कार कहा—हे नाथ! यह हमारी राज कन्याये तेरह अपनी इच्छा से ही आपसे विवाह करना चाहती है, हे लोकेश! इन राज पुत्रियो के आप पति होओ। इनका मन जन्म से ही यह था कि विद्याधरो से विवाह नहीं करेगे। और आपके गुणो से अनुरागी हुई है ऐसा कह राम से विवाह कराया। यह राजकुमारीया लज्जा से नीचा मुखकर रामका आश्रय प्राप्त किया। महासुन्दर नव यौवन उनके गुण वर्णन मे नहीं आये, शरीर की काति से विनयरूप गुणोसे मडित राम के पास ठहरी। यह कथा गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं हे श्रेणिक! पुरुषो मे सूर्य समान श्री राम महापुरुष उनका मन विषयवासना से विरक्त है परन्तु पूर्वजन्म के सयोग से कुछदिन विरक्तरूप गृह मे रहकर पुन त्याग करेंगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे सुग्रीवका व्याख्यान एव साहसगति के मरण का वर्णन करनेवाला सैतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-48

लक्ष्मण का कोटिशिला उठाकर नारायण होने की परीक्षा करना

अथानंतर वे सुग्रीव की राजपुत्रिया राम के मनको मोहित करने के लिए अनेक प्रकार की चेष्टाये करती, जैसे देवलोक से ही उतरकर आयी है, वीणा बजाना, गीत गाना, इत्यादि कई सुन्दर क्रीडाये करती, फिर भी रामचंद्रजीका मन मोहित नहीं हुआ, भोगों मे मन नहीं लगाया। सीता में अत्यन्त दत्तचित्त, सभी क्रियाओ से रहित महाआदर से सीता का ध्यान करते बैठे। जैसे मुनिराज मुक्ति का ध्यान करते है। वह विद्याधरो की पुत्रिया सगीत करती है तो उनकी ध्वनि नहीं सुनते हैं और देवागना समान उनका रूप नहीं देखते है, रामको सभी दिशाये जानकीरूप ही दिखती है, वे कुछ भी कथा नहीं करते हैं। यह सुग्रीव की पुत्रियॉ पास मे बैठी है सो उनको जनकसुते! ऐसा कहकर बुलाते है। कौआ से प्रेम पूर्वक पूछते है, अरे काक! तू देश देश मे भ्रमण करता है, तेने जानकी देखी? और सरोवर मे चकवा चकवी को कल्लोल करते देख, सीता बिना यह दृश्य राम को फीका लगा। सीता के शरीर से स्पर्शकर पवन आया है अथवा जिस भूमि मे सीता जी बैठी है, वह पवन वहभूमि धन्य है ऐसा मानते है। सीता बिना चन्द्रमा की चादनी भी अग्नि समान जानते और सोचते कि कदाचिद् मेरे वियोगरूपी अग्नि से सीता भस्म हुई होगी, मद मद पवन से लताओ को हिलती देख जानते है कि यह जानकी ही है। और बेल पत्ते हिलते देख जानते है कि जानकी के वस्त्र फहरा रहे हैं। भ्रमरो से युक्त फूल देख जानते है कि जानकी के लोचन ही है, कोपले देख मानते हैं जानकी के हाथ ही है, श्वेत, श्याम, आरक्त इन कमलों को देख जानते है कि सीता के नेत्र तीन रग के धारे है। पुष्पो के गुच्छे देख जानते है कि जानकी के स्तन ही है। लाल कमलो को देख जानते कि जानकी के चरण ही हैं। सम्पूर्ण शोभा जानकी रूप ही देखते है। और सुग्रीव सुतारा के महल मे ही रहा, रामके पास बहुत दिन तक नहीं आया तब रामने विचार किया कि उसने भी सीता नहीं देखी होगी। मेरे वियोग से वह शीलवती मर गई होगी, इसलिए सुग्रीव मेरे पास नहीं आया। अथवा अपना राज्य प्राप्तकर निश्चिन्त हुआ, हमारा

दुख भूल गया। यह चिन्तवनकर राम की ऑखों से ऑसू गिरे। तब लक्ष्मण राम को चिन्तावान देख, क्रोध से लाल नेत्रकर नगी तलवार हाथ में लेकर सुग्रीव के पास चले। नगर मे सभी भयभीत हुये, सम्पूर्ण राज्य के अधिकारियों को छोडकर सीधे ही सुग्रीव के महल मे पहुॅचकर सुग्रीव से कहा, हे पापी! अपने परमेश्वर रामतो स्त्री के वियोगसे दुखी है, और तू दुर्बद्धि स्त्री सहित सुख से राज्य करता है, रे विद्याधरवायस! विषय लोलूपि दुष्ट! जहॉ रघुनाथने तेरा शत्रु भेजा है वहॉ मे तुझे भेजूॅगा। इस प्रकार से अनेक क्रोधके वचन लक्ष्मण ने कहे तब सुग्रीव हाथजोड नमस्कार कर लक्ष्मण का क्रोध शात किया। सुग्रीव ने कहा, हे देव! मेरी भूल को आप क्षमा करो, मै पापी भूल गया, और सुग्रीव की सभी रानियॉ भय से लक्ष्मण को अर्घ देकर आरती करती रही, और हाथ जोड नमस्कार कर पतिकी भिक्षा मागी। तब आप उत्तम पुरुष सुग्रीवको दीनजान कृपा की। महापुरुष प्रणाममात्र से ही प्रसन्न होते है, और दुर्जन महादान देनेपर भी प्रसन्न नहीं होते है। लक्ष्मण ने सुग्रीवको प्रतिज्ञा का स्मरण कराया। जैसे यक्षदत्त को माता का स्मरण मुनिराज ने कराया था, यह बात सुन राजा श्रेणिक ने पूछा, हे नाथ! यक्षदत्त का वर्णन मै अच्छी तरह जानना चाहता हूॅ? तब गौतमस्वामी ने कहा, हे श्रेणिक! एक क्रौचपुरनगर वहॉका राजायक्ष, रानी राजिलता उसका पुत्रयक्षदत्त वह एकदिन एकस्त्री को नगरके बाहर कुटिया मे बैठी देख मोहित हुआ, और उसके पास चला। तब रात्रि में अयननाम के मुनिराज ने इसको मना किया। तब यक्षदत्त खड्ग हाथ मे लेकर मुनिराज से पूछा, हे भगवन! क्यो मुझे मना किया? तब मुनिराज ने कहा, जिसको देख तू कामके वश हुआ है वह स्त्री तेरी माता है, तब यक्षदत्त ने पूछा हे स्वामी! यह मेरी माता कैसे? तब मुनिराज ने कहा सुन, एक मृत्युकावती नगरी, वहॉ कणिकनाम का वणिक, उसके द्युनाम की स्त्री, उसके बधुदत्त पुत्र, उसकी स्त्री मित्रवती, लतादत्त की पुत्री, उस स्त्री को गुप्तगर्भ कर बन्धुदत्त जहाज मे बैठकर अन्य देश गया, उसके जाने के बाद, बहु को गर्भवती देख, सास ससुर ने दुराचारणी जान घरसे निकाल दिया। वह उत्पलका दासी को साथ में लेकर बडे सारथी के साथ पिता के घर चली, सो मार्गमे उत्पलका को सर्पने काटा वह मर गई, और यह मित्रवती शीलवान क्रौचपुरनगर मे आई, महाशोक से भरी, इसके उद्यान मे पुत्र का जन्म हुआ, तब यह सरोवर में वस्त्रधोने गई और पुत्रको रत्नकम्बल से ढक गई। सो पश्चात

कम्बलसहित पुत्रको कुत्ता ले गया। तब किसी ने छुडाकर राजा यक्षदत्त को दिया, उसकी रानी राजिलता को अपुत्रवती जान यह पुत्र रानीको दिया, उसका नाम यक्ष दत्त रखा, वह यक्षदत्त तू है, और तेरी माता वस्त्र धोकर आई, तुझे नहीं देख विलाप करने लगी, तब एकदेवपुजारी ने दया से दिलासा दी, और कहा तू मेरी बहिन है ऐसा कहकर रखा। यह मित्रवती सहायता रहित लज्जा एवं अपकीर्ति के भय से पिता के घर नहीं गई। महाशीलवान जैनधर्म में लीन दरिद्री कुटिया मे रहे। और तूने भ्रमण करते हुये उसे देख कुभाव किये। और इसका पति बधुदत्त रत्नकंबल दे गया था, उसमे तुझे लपेट आप सरोवरपर गई, सो वह रत्नकंबल राजा के घर मे है, वह बालक तू हैं, इस प्रकार मुनिराज ने कहा। तब यह नमस्कारकर हाथमे खड्ग लेकर राजा यक्षदत्त के पास गया, और कहने लगा या तो मेरे जन्म का वृतान्त कहो? नहीं तो इसखड्ग से मैं तेरा सिर काट दूंगा। तब राजा ने जैसा का तैसा वृतान्त कहा और वह रत्नकबल दिखाया। सो वह कम्बल लेकर यक्षदत्त अपनी माता से जाकर मिला, और अपने पिता बधुदत्त को बुलाया, महा उत्सव, महावैभवकर मडित माता पिता से मिला। जैसे यक्षदत्त को मुनिने माता का वृतात बताया, वैसे लक्ष्मण ने सुग्रीव को प्रतिज्ञा की याद दिलायी। सुग्रीव लक्ष्मण के साथ शीघ्र ही रामचन्द्र के पास आया, नमस्कार कर, अपने सब विद्याधर सेवको को बुलाया। और समझाकर कहा, हे विद्याधरो! राम ने मेरा बडा उपकार किया है, अब सीता के समाचार लाकर इनको देना है, इसलिये तुम सभी दिशाओ मे जाकर ढूढो, देखो श्रीरामचन्द्रजी की महारानी महासती सीताजी कहाँ है, यह खबर लाओ। सम्पूर्ण पृथ्वीपर जल मे, थल मे, आकाशमें, जम्बूद्वीप मे, लवणसमुद्र, धातकीखड, कुलाचल पर्वत, वन, सुमेरुपर्वत विद्याधरों की नगरीयो में सभी जगह सभी दिशाओ मे ढूंढो।

अथानंतर ये सभी विद्याधर सुग्रीव की आज्ञा सिरपर धार हर्षित हो सभी दिशाओं मे शीघ्र ही गये, सबने सोचा हम पहले समाचार बताये तो राजा हमारेपर अतिप्रसन्न होगा। और भाई भामडल को समाचार भेजे की सीताको कोई हरकर ले गया सो पृथ्वीपर ढूढो। तब भामडल बहिन के दुख मे महादुखी हुआ, और ढूढने का प्रयत्न किया। एवं सुग्रीव स्वय भी ढूढने को निकला वह विमान मे बैठा ज्योतिषचक्र के ऊपर होकर चला, सब विद्याधरो के नगर देखे और समुद्र के मध्य जम्बूद्वीप देखा, वहाँ महेन्द्र पर्वतपर आकाश से सुग्रीव उतरा वहाँ रत्नजटी

विद्याधर बैठा था, वह सुग्रीव को देखकर डरा जैसे गरुड से सर्प। पुनः विमान नजदीक आया तब रत्नजटी ने देखा कि यह सुग्रीव है, लकापति ने क्रोधकर मेरे पास भेजा है, वह मुझे मारेगा, हाय हाय! मै समुद्र में क्यो नहीं डूब मरा, अब मैं अन्तरद्वीप में मारा जाऊँगा? विद्या तो मेरी रावण हरकर ले गया, अब प्राण हरने इसको भेजा है। मेरी इच्छा थी कि जैसे तैसे मैं भामडल के पास पहुँचूं, तो सब काम सिद्ध होगा। सो मै नहीं पहुँच सका। यह विचारकर ही रहा था कि इतने मे सुग्रीव आया। मानों दूसरा सूर्य ही है। इसको वनकी धूल से लिप्त देख दयाकर पूछता है, कि हे रत्नजटी! पहले तो तू विद्या सहित था अब हे भाई! तेरी यह क्या अवस्था हुई। इस प्रकार सुग्रीव ने दयासे पूछा, तब रत्नजटी अत्यन्त डर से कुछ कह नहीं सका। तब सुग्रीव ने कहा तुम भयमत करो, अपनी बात कहो, बार बार धैर्य बधाया, तब रत्नजटी ने नमस्कार कर कहा, हे राजन्! सुनो, रावणदुष्ट सीता को हरणकर ले जा रहा था, इसलिये रावण के और मेरे परस्पर विरोध हुआ, मेरी विद्या छेद डाली, अब मै विद्यारहित चिन्तावान होकर बैठा था, हे कपिवश के तिलक! मेरे भाग्य से आप आये। यह वचन रत्नजटी के सुन सुग्रीव हर्षित होकर उसे साथ मे लेयकर अपने नगर में श्रीरामके पास लाये। रत्नजटी ने राम लक्ष्मण को नमस्कार कर सबके सामने कहा, हे देव! सीता महासती है, उसको दुष्टनिर्दयी लकापति रावण हरकर ले गया, वह सीता रुदन एव विलाप करती विमान मे बैठी मृगी समान व्याकुल मैने देखी, वह रावण महाबलवान बलात्कार ले जा रहा था, तब मैने क्रोध से कहा, यह महासती मेरे स्वामी भामण्डल की बहिन है, तू इसे छोड दे, तब रावणने क्रोधकर मेरी विद्या छेदी, वह महा प्रबल उसने युद्ध मे इन्द्र को पकडा, कैलाश पर्वत उठाया, तीन खड का स्वामी, देवो से भी नहीं जीता जाय। उसे मै कैसे जीतू? उसने मुझे विद्या रहित किया, यह सभी वृतान्त रामने सुनकर उसको हृदय से लगाया, और बार बार उससे पूछते रहे। पुन- रामने पूछा—

हे विद्याधरो! कहो लका कितनी दूर है? वे सभी विद्याधर नीचा मुख कर निश्चल हो गये, मुख की छाया और ही हो गई, कुछ जबाब नहीं दिया। तब रामने उनका अभिप्राय जान लिया, कि यह विद्याधर रावण से भयभीत है, तब रामने कहा, हमको आप लोग कायर जानते हो? तब वह शर्मिंदा होकर हाथजोड सिर नवाय कहते है। हे देव! जिसके नाम सुनने मात्र से हमको भय होता है, हम

उसकी बात कैसे कहें। हम अल्पशक्ति के स्वामी और कहाँ वह लंका का ईश्वर इसलिये आप यह हट छोडो और यह वस्तु गई जानो। अथवा आप सुनों तो हम सब वृतान्त कहते हैं। लवणसमुद्र में राक्षसद्वीप प्रसिद्ध है अद्‌भुत संपदा का भरा, सातसौ योजन चौडा हैं। और प्रदक्षिणा से देखे तो कुछ अधिक इक्कीसौ योजन उसकी परिधि है, उसके मध्य में त्रिकूटाचलपर्वत है, वह नवयोजन ऊँचा, पंचास योजन विस्ताररूप अनेक प्रकार के मणि सुवर्ण से मडित पहले मेघवाहन को राक्षसों के इन्द्र ने दिया था, उस त्रिकुटाचल के शिखर पर लका नाम की नगरी है, वह शोभायमान, रत्नके विमान समान महल, अनेक क्रीडा करने के स्थान, तीसयोजन के विस्तार प्रमाण, लकापुरी, कोट खाई से युक्त मानों दूसरी वसुन्धरा ही है। लका के चारोतरफ बडे बडे रमणीक स्थान, मणि सुवर्ण समान मनोहर राक्षसो के स्थान है, उनमें रावण के बंधु जन भ्राता, पुत्र, मित्र, रानियाँ, परिवार, सेवक, जनों सहित लंकापति रहते है, वह विद्याधरो सहित क्रीडा करता देख लोगो को ऐसी शका होती हैं, मानो देवो सहित इन्द्र ही है। उनका महाबली विभीषण भाई युद्ध मे नहीं जीता जाये, उसके समान बुद्धि देवो में भी नहीं, उसके समान कोई मनुष्य नहीं, उन सबसे सहित रावण का राज्यपूर्ण है, रावण का भाई कुम्भकरण त्रिशूलका धारी, युद्ध मे उसकी टढी भोहे देवभी नहीं देख सकते तो मनुष्यकी क्या बात, और रावण का पुत्र इन्द्रजीत पृथ्वीपर प्रसिद्ध उसके अनेक सामन्त सेवक विद्या के धारी, शत्रुओ को जीतने वाले, सदा रणसग्राम मे सुभट पने का विरद प्रगट किया है। रावण के छत्रको देख सबका मानगर्व नष्ट होता है। रावण का चित्र देखे, नाम सुने, शत्रु भय को प्राप्त होता है। ऐसा रावण बलवान उससे युद्ध कौनकर सकते? इसीलिये यह कथा ही नहीं करना। ओर बात करो। यह बात विद्याधरों के मुख से सुनकर लक्ष्मण बोला मानों मेघ गरजा? तुम इतनी प्रशसा रावण की करते हो वह सब झूठ है। अगर वह बलवान होता तो अपना नाम छिपाकर परस्त्री चुराकर क्यो ले जाता, वह पाखडी अतिकायर मूढ, पापी, नीच, राक्षस उसको रचमात्र भी शूर वीरता नहीं। और राम ने कहा बहुत कहने से क्या, पहले तो सीता की खबर ही कठिन थी, अब खबर आई तब सीता आ ही गई, और तुमने कहा, ओर बात करो, दूसरा चिन्तवन करो, अब हमारे, ओर कोई बात नहीं, ओर कोई चिन्वन नहीं। सीता को लाना यही उपाय है। रामके ऐसे वचन सुनकर वृद्ध विद्याधर विचार कर बोले, हे देव! शोक तजो

हमारे स्वामी हो और अनेक विद्याधरो की राजपुत्रियॉ देवांगना समान गुणवान रूपवान उनके भरतार बनो। और सभी दुख की बात छोडा, तब राम कहने लगे, हमारे ओर स्त्रीयों से प्रयोजन नहीं जो शचि समान सुन्दर है, तो भी हमारे उनकी अभिलाषा नहीं। आपको हमारे से प्रेम है, तो सीता हमे शीघ्र ही दिखाओ। तब जाम्बूनद ने कहा, हे प्रभो! यह हट को छोडो, एक क्षुद्रपुरुष ने बनावटी मयूर का हट किया, उसी प्रकार आपभी स्त्री का हटकर दुखी मत होओ। एक कथा सूनो— एक वेणातरग्राम मे सर्वरूची नाम का गृहस्थ उसके विनयदत्त नाम का पुत्र, उसकी मा गुणपूर्णा-विनयदत्त का मित्र विशालभूत, वह पापी विनयदत्तकी स्त्रीपर आसक्त हुआ। स्त्री के वचनोसे विनयदत्तको कपटपूर्वक वनमे ले गया। वहॉ एक वृक्षपर बाधकर वह दुष्ट घर आ गया। कोई विनयदत्त के समाचार उसे पूछता है, तो झूठा उत्तर दे देता। और जहॉ विनयदत्तको बाधा था वहॉ एक क्षुद्रनामका पुरुषआया ओर वृक्षके नीचे बैठा। वृक्ष महागहन विनयदत्त कराह रहा था। क्षुद्रने देखा कि वृक्षकी शाखापर मनुष्यको दृढ बधनो से किसीने बाधा है। तब क्षुद्रदया से ऊपर चढ विनयदत्तको बधनों से मुक्त किया। विनयदत्त धनवान था। उसने क्षुद्रको उपकारी जान अपनेघर ले आया। भाई से भी अधिक प्रेम करता, विनयदत्त के घर मे उत्साह हुआ। विशालभूत कुमित्र कहीं दूर भाग गया। और क्षुद्रविनयदत्त का परममित्र हुआ। एक समय क्षुद्र का क्रीडा करने का पत्रमयी मयूर को पवन उडाकर ले गया और राजपुत्र के घर डाल दिया। वह पत्रमयी मयूर राजपुत्र ने रख लिया उसके कारण क्षुद्र महाशोक से मित्रको कहता है कि मेरा जीवन चाहते हो तो मेरा वही मयूर लाकर देओ। विनयदत्त ने कहा, मै तुझे रत्नो का मयूर बनवा दूॅ, या सच्चे मोर मगवा दूॅ, वह पत्रमयी मयूर हवा से उड गया और राजपुत्र ने रखा वह मै कैसे लाऊॅ, तब क्षुद्र ने कहा, मुझे वही चाहिये, रत्नो के एव सच्चे नहीं लूगा। विनयदत्त ने कहा जो चाहो सो लेओ, पर वह मयूर मेरेहाथ मे नहीं है। क्षुद्र बार बार वही मागता है, पर वहतो मूढ था। आप पुरुषोत्तम होकर ऐसे क्यो भूल रहे हो, वह बनावटी मयूर राजपुत्र के हाथ मे गया तो विनयदत्त कैसे लाये। इसलिये अनेक विद्याधरो की पुत्रिया, सुवर्ण समान रूपवान मनोहर गुणो की धारी उनके पति होओ। हे रघुनाथ! महाभाग्य! हमारेपर कृपाकरो यह दुख बढाने वाला शोक सताप छोडो तब लक्ष्मण बोले, हे जाम्बूनद! तुमने यह दृष्टान्त यथार्थ नहीं दिया, हम कहते है सो सुनो! एक कुसुमपुर नगर

प्रभवनाम का गृहस्थ उसके यमुना स्त्री उसके धनपाल, बन्धुपाल, ग्रहपाल, पशुपाल, क्षेत्रपाल ये पांचों ही पुत्र गुणो के धारी, धन को कमाने वाले, परिवार के पालक, क्षणमात्र आलस नहीं इन सबसे छोटा आत्मश्रेयनाम का कुमार पुण्यके योग देवो समान भोग भोगे। तब इनके माता पिता और बडे भाई ने कठोर वचन कहा। एक दिन यह नगर के बाहर भ्रमण करता था कोमल शरीर, पुरुषार्थ करने मे असमर्थ, दुखी होकर मरने की इच्छाकर रहा था, उस समय उसके पुण्य के उदय से एक राजपुत्र ने उससे कहा हे पुण्यशाली मैं पथुस्थान नगर के राजा का पुत्र भानुकुमार अन्यदेशो मे गया और अनेक देश देखे, पृथ्वीपर भ्रमण करते हुय भाग्य से कर्मपुरनगर गया, वहॉं एक निमित्तज्ञानी पुरुषकी सगति में रहा, उसने मुझे दुखीजान करुणाकर यह मत्रमयी लोहे का कडा दिया, और कहा कि यह सब रोगोका नाशक है बुद्धि वर्धक है, गृह सर्प पिशाचादि को वश करने वाला हैं इत्यादि अनेक गुण हैं सो तू रख ले, ऐसा कहकर मुझे दिया, और अब मेरे राज्य का उदय आया। मै राज्य करने के लिये अपने नगर मे जा रहा हूँ यह कडा मैं तुझे देता हूँ, तू ले, मरे मत। जो वस्तु अपने पास आई और अपने कार्य होने के बाद दूसरोको दे देना येमहाफल है। आत्मश्रेय को ऐसा कहकर राजकुमार ने अपना कडा देकर अपने नगर गया। और यह कडा लेकर अपने घर आया, उसी दिन उसनगर के राजाकी रानीको सर्पने काट लिया था, वह मूर्च्छित हो गई थी। उसे मरी जान लोग जलाने के लिये जा रहे थे, तब आत्मश्रेय ने मत्रमयी लोहे के कडेके प्रसाद से विषरहित किया। तब राजा ने आत्मश्रेय को बहुत द्यान देकर सत्कार किया, आत्मश्रेय कडे के प्रभाव से महाभोग सामग्री को प्राप्त हुआ, सभी भाईयो मे यह श्रेष्ठ रहा। पुण्यकर्म के प्रभावसे पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ, एक दिन कडे को कपडे मे बाधकर सरोवर पर गया, वहॉं गोह आई और कडे को लेकर वृक्ष के नीचे गहरे बिलमें चली गई। वह बिल शिलाओं से ढका हुआ था। वह गोह बिल मे बैठी बैठी भयानक आवाज करती है, आत्मश्रेय ने समझा कडे को गोह बिल मे ले गई और गरजना करती है तब आत्मश्रेय ने वृक्ष को जडसे उखाड, शिलाको दूरकर, गोहका बिल चूर चूर कर दिया, आर नीचे बहुत धन मिला, सो रामतो आत्मश्रेय है, सीता कडे समान है, लका बिलसमान है रावण गोहके समान है। इसलिये हे विद्याधरो आप निर्भय हो। लक्ष्मणके यह वचन जाम्बूनद के वचनको खडित करने वाले सुनकर विद्याधर आश्चर्य को प्राप्त हुये।

अथानंतर जाम्बूनदादि सब रामसे कहने लगे, हे देव! अनन्तवीर्य योगींद्र को, रावण ने नमस्कार कर अपने मृत्यु का कारण पूछा, तब अनन्तवीर्य केवली ने कहा, जो कोई कोटिशिला को उठायेगा उससे तेरी मृत्यु होगी। तब ये सर्वज्ञ के वचन सुन रावणने विचार किया कि ऐसा कौन पुरुष है जो कोटिशिला को उठायेगा? ये वचन विद्याधरों के सुन लक्ष्मण बोले मै अभी ही यात्रा के लिये वहाँ चलूँगा, तब सभी इनके साथ गये, जाम्बूनद, सुग्रीव, विराधित, अर्कमाली, नल, नील इत्यादि नामीपुरुष विमान में राम लक्ष्मण को बैठाकर कोटिशिला की ओर चले। अंधेरी रातमें शीघ्र ही पहुँचकर शिला के पास उतरे, शिला महामनोहर सुर असुर मनुष्यों से पूज्य, ये सभी दिशाओ में सामन्तो को रखवाली के लिये रखकर शिलाकी यात्रा करने गये। हाथजोड, शीश झुकाकर नमस्कार किया, सुगन्धित पुष्पों से शिला की पूजा की, उस शिलापर जो सिद्ध हुये हैं, उनको हाथजोड नमस्कार कर भक्तिपूर्वक तीन प्रदक्षिणा दी। सब विधि मे निपुण लक्ष्मण कमरबांध विनय सहित णमोकार मत्र जप भक्ति स्तुति करने लगा, सुग्रीवादि वानरवशी सभी जय जयकार कर स्तोत्र पढते रहे। एकाग्र चित्त से सिद्धो की स्तुति की। सिद्ध परमेष्ठि अविनश्वर, अविनाशी, जन्म मरणसे रहित, अपने स्वभाव मे लीन, सर्वकर्म रहित, ससार समुद्र के पारगामी, केवलज्ञान केवलदर्शन, के आधार, पुरुषाकार, परमसूक्ष्म, अमूर्ति, अगुरुलघु, असख्यात प्रदेशी, अनन्तगुणोको एक समयमे जानें देखे शुक्लध्यानरूपी अग्निसे अष्टकर्मो को भस्म करने वाले, इन्द्र धरणेन्द्र चक्रवर्ती आदि सब आपकी पूजा स्तुति करते है, वे भगवान अपने निजस्वभाव मे लीन, अनन्तसिद्ध हुये, अनन्तहोंगे। अढाईद्वीप मे मोक्षमार्ग का प्रवर्तन करनेवालें वर्तमान में है। एकसौ साठ विदेहक्षेत्र पॉचभरत पॉचऐरावत ऐसे एकसौ सत्तर आर्यखड मे जो सिद्ध हुये है, होगे और जो वर्तमान मे हो रहे है, उन सबको हमारा नमस्कार हो। इस भरतक्षेत्र में यह कोटिशिला यहॉ से सिद्धशिला को प्राप्त हुये वे हमको कल्याण के कर्त्ता होवे। जीवो को महामगलरूप, इस प्रकार चिरकाल स्तुतिकर मन मे सिद्धों का ध्यानकर सभी ने लक्ष्मण को आशीर्वाद दिया।

इस कोटिशिला से जो सिद्ध हुये, वे सब आपका विध्न दूर करे। और लक्ष्मण के लिए सिद्धपरमेष्ठि मंगल के कर्ता होवे। इस प्रकार सभीने मंगल कामना की। और लक्ष्मणने सिद्धोका ध्यानकर शिलाको गोडे प्रमाण उठाई। अनेक आभूषण

पहने भुजबधनों से शोभित भुजाओ से कोटीशिला उठाई। तब आकाश में देवों ने जय जयकार किया। सुग्रीवादि आश्चर्य को प्राप्त हुये। कोटिशिला की यात्राकर फिर सम्मेदशिखर कैलाशपर्वत, भरतक्षेत्र के सभी तीर्थों की वंदना प्रदक्षिणा की। सध्यासमय विमान में बैठकर जय जयकार करते हुये राम लक्ष्मण के साथ किहकंधापुर आये। और अपने अपने स्थानपर जाकर शयन किया। पुनः प्रात काल सभी इकट्ठे होकर परस्पर मंत्रणा की। देखो अब थोडे ही दिनों मे इन दोनों भाईयों का निश्कंटक राज्य होगा। यह महाशक्ति शाली है। इन्होने निर्वाण शिला उठाई सो यह सामान्य पुरुष नहीं। यह लक्ष्मण रावण को निश्चित मारेगा। तब किसीने कहा। रावणने कैलाशपर्वत उठाया, उसका बल भी कम नहीं, तब ओर किसीने कहा, उसने कैलाशपर्वत विद्याके बलसे उठाया था, तब कोई कहने लगे, क्यों विवाद करते हो, जगत में कल्याण के लिये इनका उनका हित करादो। रावण से प्रार्थनाकर सीताको लाकर राम को सोंप दो। युद्ध से क्या प्रयोजन, आगे, तारक मेरु महाबलवान थे तो भी सग्राम मे मारे गये, वह तीनखंड के स्वामी महापराक्रमी थे। ओर भी अनेक राजा रणमे मरे इसलिये समता धरो परस्पर मे मित्रता श्रेष्ठ है। तब वे विद्याधर परस्पर मत्रणाकर रामके पास आये, अतिभक्ति से राम के पास नमस्कार कर बैठे, जैसे इन्द्र के पास देव। तब रामने कहा, अब तुम क्यों ढीलकर रहे हो। मेरे बिना जानकी लका मे महादुख से व्याकुल है। इसलिये दीर्घ विचारो को छोड अभी ही लकाकी तरफ गमन करो। तब सुग्रीव के जाम्बूनदादि मत्री राजनीति मे प्रवीण वह राम से विनती करने लगे, हे देव! हमारे ढील नहीं परन्तु यह निश्चय कहो कि सीता को लाने का प्रयोजन है, या राक्षसों से युद्ध करना है। यह सामान्य युद्ध नहीं, विजय पाना अतिदुर्लभ है, रावण भरतक्षेत्र के तीनखड का राज्य करता है। द्वीप समुद्रों में रावण प्रसिद्ध है। जम्बूद्वीप मे उसकी महिमा अधिक है अद्भूत कार्य करने वाला सबके हृदय का शल्य है, सो यह युद्ध योग्य नहीं। इसीलिए रणकी बुद्धि छोडो हम जो कहें वह करो। हे देव! युद्ध करने से अनेक प्राणियों का नाश होगा। इसलिये विभीषण रावण का भाई पापकर्म रहित श्रावक के व्रतो का धारक है, रावण उसकी बात को जरूर मानेगा, उन दोनों भाईयों मे परमप्रीति है, इसलिये विभीषण चतुरता से रावण को समझायेगा। अपकीर्ति से डरेगा और शर्मिंदा होकर सीता को भेज देगा। इसलिये विचारकर रावण के पास ऐसा पुरुष भेजना

जो बात करने में निपुण राजनीति में कुशल अनेक नयोंको जाने और रावणका कृपापात्र हो, ऐसा मनुष्य भेजो, तब महोदधि विद्याधर ने कहा तुमने कुछ सुना है, लंका के चारोंतरफ मायामयी कोट यंत्र रचा है, उसमें आकाशमार्ग से एवं पृथ्वीके मार्गसे कोई जा सकता नहीं हैं। लंका अगम्य है महाभयानक देखी नहीं जाय, ऐसा महामयी यंत्र से कोट बनाया है। सो यहाँ जो बैठे हैं, इनमें से कोई लंकामें प्रवेशकर सकता नहीं, इसलिये पवनजय का पुत्र श्रीशैल (हनुमान) महाविद्याओं से बलवान पराक्रमी प्रताप रूप है। उसे बुलाओ वह रावण का परममित्र है, और पुरुषोत्तम है, वह रावणको समझाकर संकटदूर करेगा। तब यह बात सबने प्रमाण की। हनुमान के निकट श्रीभूतनाम के दूतको शीघ्रही भेजा। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहतें है, हे राजन! महाबुद्धिमान हो महाशक्ति का धारी हो और उपाय करते तो भी होनहार हो वही होगा। जैसे उदयकाल में सूर्यका उदय होगा ही, ऐसे जो होनहार है वह होगा ही होगा। फिरभी पुण्यके पुरुषार्थसे सकट, कष्ट, शत्रु, दूर होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे कोटिशीलाउठाने का वर्णन करनेवाला अडतालीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-49

हनुमान का लंका को प्रस्थान

अथानंतर श्रीभूतनाम का दूत शीघ्रही आकाशमार्ग से, लक्ष्मी का निवास श्रीपुरनगर, अनेक जिनभवनों से शोभित वहॉ गया। वहॉ सुवर्ण रत्नसमान मन्दिर, रमणीक उपवनादि नगरकी शोभा सुन्दरता, एवं लोगों को देख आश्चर्य को प्राप्त हुआ। पुन: इन्द्रके महल समान राजमन्दिर की अद्‌भुत रचनादेख चकित हो गया। हनुमानकी पत्नि अनंगकुसुमा खरदूषणकी बेटी रावणकी भानजी उसको खरदूषण पिता के मरणका शोक, कर्मके उदयसे, शुभ अशुभ फल प्राप्त होता है, उसे कोई दूर करनेमें समर्थ नहीं है। मनुष्योंकी क्या बात, देवभी समर्थ नहीं। दूत ने दरवाजे पर आके अपने आने का वृतान्त कहा, तब अनंगकुसुमा के मर्यादानाम की द्वारपाली दूतको भीतर लेकर आई। अनगकुसुमा ने सभीबात

पूछी, तब श्रीभूतने प्रणामकर विस्तारसे कहा। दण्डकवन में श्रीराम लक्ष्मण का आना, शम्बूक का मरण, खरदूषण से युद्ध, बडे बडे योद्धाओं सहित खरदूषण का मरण, यह बात सुन अनंगकुसुमा मूर्च्छा को प्राप्त हुई। तब चन्दनके जलसे छींटे लगाये, सचेत होकर, आँसू निकालती हुई विलाप करने लगी। हाय पिता! हाय भाई! तुम कहाँ गये, एक बार मुझे दर्शन दो, बातकरो, भयानक वनमें भूमिगोचरियों ने आपको कैसे मारा, इस प्रकार पिता और भाईके दुखसे महादुखी हुई। महाकष्ट से सखियों ने शांति दिलाई, तब यह जिनमार्ग में प्रवीण, संसार के स्वरूप को जान लोकाचार रूप पिताके मरणकी क्रिया की। पुनः दूतको हनुमान, महाशोक के भरे सभी बात पूछते रहे। दूतने सभी बात विस्तारपूर्वक कही, हनुमान, खरदूषण की मृत्यु के कारण क्रोधित हुये। भोहे टेडी हो गई मुख नेत्र लालहो गये, तब दूत ने क्रोध को दूर करने के लिये मधुर वाणीसे विनती की, हे देव! किहकंधापुर के स्वामी सुग्रीवको दुःख हुआ वह आप जानते ही हो, साहसगति विद्याधर सुग्रीव का रूप बनाकर आया, उससे दुखी होकर सुग्रीव श्रीरामके चरणो मे गया, तब राम सुग्रीव का दुख दूर करने के लिये किहकधापुर आये। पहले सुग्रीव और साहसगति का युद्ध हुआ वह जीत नहीं सका, पुन. श्रीरामके और बनावटी सुग्रीव के युद्ध हुआ तब एक अतिशय हुआ कि श्रीरामचन्द्रजी को देख बनावटी सुग्रीवके शरीरमे वैतालीनाम की विद्या थी, वह भाग गई तब यह साहसगति का असलीरूप प्रगटहो गया। महायुद्ध मे रामने साहसगति को मारा, सुग्रीवका दुख दूर किया। यह बात सुन हनुमानका क्रोधदूर हुआ मुखकमल खिल गया। हर्षित होकर कहने लगे अहो! श्रीरामने हमारा बडा उपकार किया, सुग्रीवका कुल अकीर्ति रूपी सागरमे डूब रहा था, सो शीघ्र ही बाहर निकाला। सुवर्ण कलश समान सुग्रीव का गोत्र अपयशरूपी गहरे कुये में डूबा था, श्रीराम सत्बुद्धि के धारी, गुणरूपी हाथोंसे बाहर निकाला। इस प्रकार हनुमान ने राम की बहुत प्रशंसा की। एवं बहुत प्रसन्न चित्त हुये। हनुमान की दूसरी रानी सुग्रीव की पुत्री पद्मरागा पिताके शोकका अभाव सुन हर्षित हुई, और बडे उत्साह सहित दान पूजादि अनेक शुभ कार्य किये। हनुमान के घर में अनंगकुसुमा को खरदूषण का शोक हुआ, और पद्मरागा को सुग्रीव का हर्ष हुआ। इस प्रकार घरके लोग सुख दुखको प्राप्त हुये। उन को समाधान कर हनुमान किहकधापुर की ओर महाऋद्धि एवं सेना सहित चले। आकाश की सुन्दरता बढ़ी, रतन समान हनुमान का विमान उसकी किरणो से सूर्य की प्रभा मंद हो गई। हनुमान के साथ अनेक

राजा गये। जैसे इन्द्र के साथ बडे बडे देव गमन करते हैं। आगे पीछे दाहिनी बाहिनी ओर अनेक राजा साथ जा रहे हैं। आकाशगामी हाथी, घोडे, विमान, रथ, ध्वजाओं सहित आकाश ऐसा शोभित हो रहा है, मानो कमलों का वन ही हो। हनुमान के बाजों की ध्वनीसुन कपिवंशी हर्षित हुये। जैसे मेघ की ध्वनी सुन मोर हर्षित होते है। सुग्रीवने नगरको सजाया, मन्दिरो पर ध्वजा चढाई, रत्नों के तोरण दरवाजोपर लगवाये, सभी राजा हनुमान के सन्मुख गये, हनुमानने देवोंसमान नगर में प्रवेश किया, सुग्रीव के राज भवन में आये, सुग्रीवने बहुत आदर किया। एव राम का सभी वृतान्त कहा। तभी सुग्रीव हनुमान सहित हर्षित होकर रामके निकट आये, सो हनुमान ने दूर से ही श्रीराम को देखा, महासुन्दर सूक्ष्म स्निग्ध श्याम सुगन्धवक्र नरम महामनोहर लम्बेकेश, कोमलशरीर, सूर्यसमान प्रतापी, चन्द्रमा समान ज्योतिवान, नेत्रो के मनोहर, सुखदाई, अतिप्रवीण, आश्चर्य को कराने वाले, मानो स्वर्गलोक से देवही आये है। दैदीप्यमान, निर्मल, स्वर्णकमल समानप्रभा, सुन्दर नाक, सर्वांग सुन्दर मानो साक्षात कामदेव ही है। कमल नयन, पूर्णचन्द्रमा समान वदन, मूंगासमान लाल होठ, कुदके पुष्पसमान उज्जवल दात, शखसमान कठ, सिहसमान साहस, सुन्दरकटी, सुन्दर वक्षस्थल, महाभुजाये, दक्षिणावर्त गम्भीर नाभी, लालकमलसमान चरण, लालनख, अतुलबल, महायोद्धा, महाउदार, समचतुरससंस्थान वज्रवृषभनाराचसहनन, मानो तीनलोक की सुन्दरता को एकत्रितकर शरीर बनाया हो। महाप्रभाव सयुक्त, परन्तु सीताके वियोगसे व्याकुल मन, मानो शचि रहित इन्द्र विराजे है। या रोहणी रहित चन्द्रमा। रूप सौभाग्य से मंडित, सर्व शास्त्रो के ज्ञाता, महाशूरवीर, जिनकी यशकीर्ति जगत मे फैल रही है। महा बुद्धिमान, गुणवान ऐसे श्रीरामको देखकर हनुमान आश्चर्य को प्राप्त हुआ। रामके शरीर की काति हनुमानपर पडते ही रामके प्रभावको देख हनुमान कामदेव वशीभूत हुआ। अजनाका पुत्र मन मे सोचने लगा कि ये श्रीराम दशरथ के पुत्र, भाई लक्ष्मण, लोक मे श्रेष्ठ रामका आज्ञाकारी। संग्राम में राम के छत्र को देख साहसगति की वैताली विद्या उसके शरीर से निकल गई। और मैंने इन्द्रको भी देखा है, परन्तु रामको देखकर परम आनन्द से युक्त मेरा हृदय झुक गया। श्रीरामचन्द्रजी के दर्शनों के लिये पवनपुत्र हनुमान आगे आया। और लक्ष्मण ने पहले ही राम से कह रखा था, सो हनुमान को दूरसे ही देख श्रीराम उठे और हृदय से लगाकर मिले। परस्पर अतिस्नेह हुआ। हनुमान अति विनय सहित बैठे, श्रीराम सिहासनपर विराजे। अमूल्य सुन्दर रत्नमयी आभूषण वस्त्रोंसे

युक्त राजाओं के चूडामणी, महासुन्दर हार पहने, दिव्य पीताम्बर धारे, हारकुंडल, सहित, नीलाम्बरशरीर, सुमित्रा के पुत्र श्री लक्ष्मण, ऐसे शोभित है मानो बिजली सहित मेघ और बानरवंशियो का मुकुट राजा सुग्रीव कैसा है? मानो लोकपाल ही है। लक्ष्मणके पीछे बैठा विराधित कैसा है? मानो लक्ष्मण नरसिहका चक्ररत्न ही है रामके पास हनुमान बैठे जैसे पूर्णचंद्र के पास बुध, सुग्रीव के दोनों पुत्र अंगज और अंगद मानो कुबेरही है, और नल नील और सैकडो राजा श्रीराम की सभा में ऐसे सुशोभित हुये जैसे इन्द्रकी सभा में देव। अनेक प्रकार की सुगन्ध एवं आभूषणों के प्रकाश से सभा मानो इन्द्रकी ही है। तब हनुमान आश्चर्य सहित अतिप्रीति को प्राप्त हुये और श्रीरामसे कहनेलगे-

हे देव! शास्त्रों मे ऐसा कहा है प्रशसा परोक्ष करना प्रत्यक्ष नहीं। परन्तु आपके गुणों से यह मन वश हुआ प्रत्यक्ष स्तुति करता है। जैसी महिमा आपकी हमने सुनी वैसेही प्रत्यक्ष देखी, आपसभी जीवों के दयालु महापराक्रमी गुणों के समूह, आपके निर्मलयश से जगत शोभायमान है, हे नाथ! सीता के स्वयवर विधान में हजारो देव जिसकी रक्षा करे ऐसा वज्रावृत धनुष आपने चढाया, वह सब पराक्रम हमने सुने, जिनका पिता दशरथ, माता कौशल्या, भाई लक्ष्मण, भरत शत्रुघ्न, स्त्री का भाई भामडल, सो रामजगतपति आप धन्यहो, आपकीशक्ति आपकारूप धन्य है, सागरावर्त धनुषके धारक लक्ष्मण जो सदा आपके आज्ञाकारी, धन्यहै धैर्य, धन्यहै त्याग, जो पिताके वचन पालने के लिये राज्य का त्यागकर महाभयानक दडकवनमे प्रवेश किया। और आपने हमारा, जैसा उपकार किया, ऐसा इन्द्रभी नहीं करते। सुग्रीवका रूप बनाकर साहसगति विद्याधर सुग्रीव के घर में आया सो आपने कपिवंशियों का कलंक दूर किया। आपके दर्शनमात्र से वैतालीविद्या साहसगति के शरीर से निकल गई। आपने उसे युद्ध में मारा। आपने तो हमारा बहुत उपकार किया। अब हम आपकी क्या सेवा करे। शास्त्र की यह आज्ञा है, जो उपकारी का उपकार नहीं करते, उसके भाव शुद्ध कैसे होवें। और जो कृतघ्न उपकारी का उपकार भूले वह न्याय धर्मसे विमुख है, पापियो मे महापापी है, पराधीन में पारधी है निर्दयी है। इसलिये हम अपने शरीर को छोड आपके काम के लिए तैयार हैं। मैं जाकर लंकापति को समझाऊँगा, और आपकी रानी आपके पास लाऊँगा। हे राघव! महाबाहु सीताका मुखरूपी कमल पूर्णचन्द्रमा समान, आप निसंदेह शीघ्रही देखेंगें। तब जाम्बूनद मत्रीने हनुमानको परमहित के

वचनकहे—हेवत्स वायुपुत्र! हमारे सबके एक तेराही सहारा है। सावधानी पूर्वक लंकामें जाना, किसीसे विरोध नहीं करना, तब हनुमानने कहा—आपकी आज्ञाप्रमाण होगा। हनुमान लंका जानेको तैयार हुये, तब राम अति प्रीति को प्राप्त हुये, एकात में हनुमान से कहा हे वायुपुत्र! सीताको ऐसे कहना कि हे महासती! आपके वियोगसे रामका मन एक क्षणमात्र भी शाति रूप नहीं, और रामचन्द्रजी ने ऐसे कहा है कि जब तक तुम दूसरो के आधीन हो, तब तक हम अपना पुरुषार्थ नहीं जानते है। और आप महानिर्मल शीलसे पूर्ण है। एवं हमारे वियोग से प्राणों को छोडना चाहती हो, सो प्राणोको छोडना नहीं, अपने मनमें शान्ति रखना, विवेकीजीव आर्तरौद्र ध्यान से मरते नहीं हैं। मनुष्य जीवन अतिदुलर्भ हैं उसमें जिनधर्म महादुलर्भ हैं, उसमे समाधिमरण दुलर्भ हैं, अगर समाधि मरण नहीं हुआ तो मनुष्यशरीर तृणवत् असार है, और यह मेरे हाथकी मुद्रिका सीताको देना ताकि उसको विश्वास होगा, और उनका चूडामणि महाप्रभाव रूप वह हमारे पास ले आना। तब हनुमान ने कहा आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। ऐसा कहकर हाथजोड प्रणामकर लक्ष्मणको नमनकर बाहर निकला। विभूति से पूर्ण अपनेतेज से दिशाओ को प्रकाशित करता हुआ, सुग्रीव के राजभवन मे आया, एव सुग्रीव से कहा, जब तक मै नहीं आऊँगा, तब तक आप बहुत सावधानी से यहाँ ही रहना, ऐसा कहकर विमानपर चढे, ऐसे लगे जैसे सुमेरूके उपर जिनमदिर शोभे। हस समान सफेद चमर ढुर रहे है, पवनसमान अश्व, पर्वतसमान हाथी, और देवो की सेनासमान, सेना सहित महाविभूति से आकाश मे गमन करते रामादि सबने देखे। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है हे राजन! यह ससार अनेक जीवो से भरा हैं, इनमे कोई परमार्थ के कारण पुरुषार्थ करते हैं, वह प्रशसा योग्य हैं, एव स्वार्थ के कारण जगत भरा है। जो दूसरों का उपकार करते वह प्रशसा योग्य हैं, और जो बिना कारण से उपकार करते उनके बराबर इन्द्र चन्द्र कुबेर भी नहीं हैं। और जो पापी कृतघ्नी किसी का उपकार नहीं करते वह नरक निगोद के पात्र हैं, लोक में निन्दनीय है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषा वचनिका मे हनुमानका लकामे गमन वर्णनकरने वाला उनचासवा पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-50

हनुमान का अपने नाना राजामहेन्द्र के साथ युद्ध और मिलन

अथानंतर अजना का पुत्र हनुमान आकाश में गमन करता हुआ ऐसा सुशौभित हुआ मानों भाई भामंडल सीता को लेने जा रहा है। कैसेहैं हनुमान? श्रीरामकी आज्ञा में तत्पर, महा विनयवान, ज्ञानवान, शुभभाव राम के कार्य में है उत्साह जिनके, सो दिशाओ को देखते हुये, लंकाके मार्गमे राजामहेन्द्र का नगर देखा, मानों इन्द्रका नगर है, पर्वतके शिखरपर नगरबसा हैं वह नगर दूरसे हनुमान ने देखा, तब हनुमान ने सोचा कि यह दुर्बुद्धि महेन्द्रका नगर हैं मेरा नाना कैसे? मेरी माताको उसने दुख के समय मे शरण नहीं दिया, पिता होकर पुत्रीका इतना अपमान करते और अपने नगर में नहीं रखी, तब मेरी माता वन वन मे भटकी, वहां अमितगति मुनिराज विराजमान थे उन्होने अमृतसमान वचन कहकर शाति दी और मेरा जन्म गुफा में हुआ, वहॉ कोई बंधु परिवार नहीं, मेरी माता शरण मे आयी, और यह नहीं रखे, यह क्षत्रियों का धर्म नहीं। इसलिये इनका मान गर्व नष्ट करू। तब क्रोधसे रणके नगाडे ढोल बजवाये, शख की ध्वनि हुई, योद्धाओ के आयुद्ध दिखने लगे। राजा महेन्द्र परचक्र आया सुनकर सेना सहित बाहर निकला, दोनो सेनामे महायुद्ध हुआ। महेन्द्र राजा रथमें चढा, मस्तकपर छत्र फिरता धनुष चढाकर हनुमान पर आया। हनुमान ने उसके बाणों से ही उसका रथ तोड दिया, धनुष छेद दिया जैसे मुनिराज तीन गुप्तियो सहित मानको नष्ट करते हैं। पुन. महेन्द्र ने दूसरा धनुष लेने को गया, उसके पहले ही रथ के घोडे छुडा दिये सो रथ के पास ही महेन्द्र भम्रण करते रहे। तुरन्त ही महेन्द्र का पुत्र विमान में बैठ हनुमान पर आया, तब हनुमानका एव मामाका परस्पर महायुद्ध हुआ, हनुमान ने विद्याबल से उसके शस्त्र तोड फोड दूर कर दिये। जैसे योगीश्वर आत्म चिंतवन कर परीषहों से कर्म नष्ट करते हैं। मामा ने अनेक शस्त्र चलाये पर हनुमान को एक भी नहीं लगा, जेसे मुनिराज को काम का एक भी बाण नहीं लगता। महेन्द्रके पुत्रके सभी शस्त्र निरर्थक हुये और हनुमानने उसे पकडा, जैसे सर्पको गरुड पकडे। तब राजा महेन्द्र पुत्रको पकड़ा

देख, महाक्रोधित होकर हनुमानपर आया, जैसे साहसगति राम पर आया था। हनुमान महा धनुषधारी सूर्य समान रथ पर चढा, शूरवीरों में महाशूरवीर नाना के सन्मुख आया, दोनों के करोत, कुठार, खड्ग इत्यादि अनेक शस्त्रों से पवन एवं मेघ समान महायुद्ध हुआ। दोनों सिंह समान ही उद्धत क्रोध के भरे बलवान अग्नि की चिनगारी समान नेत्र, दोनों अजगर समान भयानक शब्द परस्पर करते रहे, कि धिक्कार हे तेरे शरूपने को, तू कहाँ युद्ध करना जानता है इत्यादि वचन कहते रहे। दोनो विद्याबल सहित अपने लोगो को हा हाकार जय जयकार कराते रहे। राजामहेन्द्र महाशक्ति का धारी क्रोध सहित हनुमानपर शस्त्रों के समूह डालता रहा, फरसा, बाण, मुदगर, गदा, शालवृक्ष, वटवृक्ष इत्यादि अनेक आयुद्ध हनुमानपर महेन्द्र ने चलाये। तब भी हनुमान व्याकुलता को प्राप्त नहीं हुये, और विद्या के प्रभाव से सब को नष्टकर दिये पुन अपने रथ से उछलकर महेन्द्र के रथ में कूद पडे, हाथी की सूंड समान हनुमान ने राजा महेन्द्र को पकड लिया। और अपने रथ मे ले आये। शूरवीर पनेसे जीतका शब्द प्राप्त किया। सभी लोग प्रशंसा करने लगे। राजा महेन्द्र भी हनुमान को बलवान जान, सौम्य मधुर वाणी से प्रशंसा करने लगा, हे पुत्र! तेरी महिमा हमने सुनी थी, अब तो प्रत्यक्ष देख ली। मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्तिको आज तक किसीने जीता नहीं था, रथनूपुर का राजा इन्द्र भी नहीं जीत सका, विजयार्ध गिरी के निवासी विद्याधर उनमे प्रभाव सहित सदा महिमा को धारण करनेवाला मेरा पुत्र प्रसन्नकीर्ति को तूने जीता और पकडा। धन्य पराक्रम तेरा, तेरे समान ओर कोईपुरुष पृथ्वीपर नहीं। अनुपमरूप तेरा, हेपुत्र हनुमान! तूने हमारे सब कुल प्रकाशकिये। चरम शरीरी अवश्य ही योगीश्वर होगा। तेराशरीर बल तेजकी राशि कल्याणमूर्ति कल्पवृक्ष प्रकट हुआ है, तू जगत मे गुरु कुलका आश्रय, मेघ समान है, इस प्रकार नानाने प्रशसा की, मोह राग से आखों मे पानी आ गया, रोमांचित हुये, मस्तक चूमा, हृदय से लगाया, तब हनुमानने हाथजोड प्रणामकर क्षमा कराई, एकक्षण मे ओर ही हो गया, हनुमानने कहा, हे नाथ! मैं बालबुद्धि जो आपका अविनय किया हो सो क्षमा करना। और श्रीरामचन्द्रजी का किहकंधापुर आने का सभी वृतांत कहॉ, एवं स्वय को लंका जाना है यह बात कही। और कहा कि मैं लंका जाकर आता हूँ आप किहकंधापुर जाओ, रामकी सेवा करो, ऐसा कहकर हनुमान आकाशमार्ग से लंका की ओर चले, जैसे स्वर्ग को देव जाये। और राजामहेन्द्र रानी सहित एव

पुत्र प्रसन्नकीर्ति सहित राजकुमारी अंजना के पास गये। अंजनाको माता पिता और भाई का मिलन हुआ सबको महाहर्ष प्राप्त हुआ। पुनः राजा महेन्द्र किहकंधापुर आये तब राजा सुग्रीव विराधितादि सन्मुख गये और श्रीराम के निकट लाये, राम बहुत आदर सहित मिले। जो राम समान महापुरुष महातेज प्रताप रूप निर्मलचित्त उन्होंने पूर्वजन्म में दान वृत तपादि महापुण्य किया है, इसलिये देव विद्याधर भूमिगोचरी सबही सेवा करते है, जो महामानी बलवान पुरुष है, वह सब रामके वश होते हैं। इसलिये सभी प्रकार से अपने मनको जीतकर पुण्य कार्य का प्रयत्न करना चाहिये, हे भव्यजीवों! सत्कर्म के फलसे सूर्य समान दीप्तिको प्राप्त होओ।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे महेन्द्रका पुत्रीअजनासेमिलन पुन श्रीरामकेनिकटआने का वर्णन करनेवाला पचासवापर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-51

श्रीराम को गंधर्व कन्याओं की प्राप्ति

अथानतर हनुमान विमान मे बैठकर आकाशमार्ग से जा रहा था, मार्ग मे दधिमुखनाम का द्वीप आया, उसमें दधिमुखनगर मे दही समान सफेद भवन, उद्यान, उज्ज्वल जल से भरी बावडियॉ, सीढियों सहित, कमल पुष्पो से शोभित है। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते है, हे राजन! इस नगरसे दूर वन है, उसमे तृण बेल वृक्ष कॉटे आदि एवं दुष्टसिंहादि जीव, भयानक उल्लू आदि दुष्टपक्षी विचरण करते है। ऐसे भयानक वन में दो चारण मुनिराज, आठ दिनो का कायोत्सर्ग कर ध्यानमुद्रा में खडे थे। और वहॉ से चारकोस दूरीपर, तीन कन्यायें रूपवान, मनोज्ञ, सफेद कपडे पहने विधिपूर्वक महातप से निर्मल चित्त उनका मानों तीनों कन्यायें तीनलोक का आभूषण ही है। वनमें अग्नि लगी, दोनो मुनिराज धीर वीर वृक्ष समान खडे, संपूर्ण वन अग्नि से जल रहा हैं, दोनों निर्ग्रन्थयोगी मोक्षाभिलाषी राग द्वेष के त्यागी, शांत मुद्रा, नासादृष्टि, कायोत्सर्ग को धारण किया, जीवन मरण समान, शत्रु मित्र समान, कंचन पाषाण समान, ऐसे महातपस्वी दोनों मुनिराजों को अग्नि में जलते देख हनुमान का हृदय कंपित

हो गया। वात्सल्य गुणों से सहित वैयावृत करने में तत्पर समुद्र का जल लेकर मूसलाधार बारिश बरसायी। तब क्षणमात्र मे पृथ्वी जलसे भर गई। उस अग्निको जल से हनुमान ने ऐसे बुझाई, जैसे मुनि क्षमाभाव रूपी जल से क्रोधरूपी अग्नि का नाश करे, मुनिराजो का उपसर्ग दूरकर पूजन की। और वह तीनों कन्यायें विद्याओं का साधन करती थी, उनको दावानल की दाह से आकुलता हुई, वह हनुमान के द्वारा नष्ट हुई, और तीनों को विद्यासिद्ध हुई। उन्होंने मेरु की तीन प्रदक्षिणाकर मुनियों के पास आकर नमस्कार किया, और हनुमान की स्तुति की, अहो तात्! धन्य आपकी जिनेश्वर भक्ति, आप कहाँ जा रहे थे, सो यहाँ साधुओं की रक्षा की हमारे कारण वनमें उपद्रव हुआ, सो मुनिराज ध्यानरूढ ध्यान से नहीं डिगे। तब हनुमान ने पूछा तुम कौन हो। इस निर्जनस्थान में किस कारण रह रही हो, तब सबसे बडी बहिन कहने लगी, यह दधिमुखनगर, यहाँ का राजा गन्धर्व उनकी हम तीनों पुत्रीयॉ बडी चन्द्ररेखा, दूजी विद्युतप्रभा तीसरी तरंगमाला सभी की प्यारी। विजयार्धपर्वत के विद्याधरो के सभी राजकुमार हमारे विवाह के लिये हमारे पिता से याचना करते। और एक दुष्टअगारक काम का अभिलाषी आताप रूप रहे। एक दिन हमारे पिता ने अष्टाग निमित्त ज्ञानी मुनिराजसे पूछा, कि, हे भगवान्! मेरी पुत्रियों का वर कौन होगा। तब मुनिराज ने कहा, जो रण संग्राम मे साहसगति को मारेगा वही आपकी राजकुमारियो का पति होगा। तब मुनियो के मधुर वचन सुन हमारे पिता ने विचारा कि विजयार्ध की उत्तरश्रेणी में साहसगति रहता है, उसे कौन मार सकता है। जो भी इसको मारे वह पुरुष इसलोक मे इन्द्र के समान होगा। मुनि के वचन अन्यथा नहीं होते, इसलिये हमारे माता पिता सभी परिवारको मुनियोके वचनपर दृढ श्रद्धा। और अगारक निरतर हमारे पितासे याचना करता है, हमारे पिता ने उसे हमको नहीं दी। इसलिये वह शत्रुता को प्राप्त हुआ। हमारे यही इच्छा हुई कि वह दिन कब होगा, हम साहसगति के मारने वाले को देखे, इसलिये हम मनोअनुगमिनी विद्या सिद्ध करने के लिये इस भयानक वन में आई। वह अनुगमिनी विद्या सिद्ध करते हमको बारहवॉ दिन है, और मुनिको आज आठवॉदिन है, आज अंगारकने हमको देख क्रोधसे वनमें अग्नि लगाई। वह विद्या छह वर्ष कुछ अधिक दिनों में सिद्ध होती, परन्तु हमको उपसर्ग से भय नहीं करने के कारण बारह ही दिनमें विद्या सिद्ध हुई। इस उपसर्ग में, हे महाभाग! अगर आप सहायता नहीं करते तो अग्नि से

हमारा मरण होता और मुनिराज की समाधि होती, आप धन्य हो। तब हनुमान ने कहा आपका पुरुषार्थ सफल हुआ, जिसको श्रद्धा होती उसको सिद्धि होती है। धन्य है निर्मल बुद्धि आपकी, धन्य आपका भाग्य, बडे स्थान में आपके मनोरथ, ऐसा कहकर श्रीराम के किहकधापुर आनेका सम्पूर्ण वृतान्त कहा, राम की आज्ञा प्रमाण अपनेको लकामें जाने का वृतान्त कहा, उसी समय वनमें अग्नि शांत होने का एवं मुनि का उपसर्ग दूर होना, यह राजा गन्धर्वने सुना और हनुमानके पास आये, विद्याधर राजागन्धर्व, हनुमान के मुख से श्रीराम का किहकंधापुर विराजने की बात सुन अपनी पुत्रियों सहित राम के निकट आये, महाविभूति सहित अपनी पुत्रियों का विवाह राम से कराया, राम महाविवेकी ये विद्याधरो की राजकन्याये अनेक विभूति सहित है तो भी सीता बिना दशो दिशाये शून्य देखते है। समस्त पृथ्वी गुणवान जीवों से शोभित है, फिर भी सीताके बिना नगर भी गहनवन समान लगता है। कैसे है गुणवानजीव? महामनोहर हैं, अतिसुन्दर है भावउनके। ये प्राणी पूर्व उपार्जित कर्मोके फलसे सुख दुख भोगतें हैं, इसलिये जिसको सुख की इच्छा है वह जिनधर्म रूपी सूर्यसे प्रकाशित जो पवित्र जिनमार्ग है उसमें प्रवृति करे। धर्मसे ही मुक्तिकी प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे रामको राजागन्धर्व की कन्याओ का लाभवर्णन करने वाला इक्कावनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व–52

हनुमान को लंकासुन्दरी का लाभ

अथानंतर महाप्रताप से पूर्ण महाबली हनुमान जैसे सुमेरूपर सोम जाए, ऐसे त्रिकुटाचलपर्वत पर चला। आकाश में जाती हुई हनुमान की सेना को महाधनुष के आकार वाले मायामयी यंत्र ने, लंका में प्रवेश करने से रोका। तब हनुमान ने अपने पास के लोगों से पूछा, मेरी सेना किस कारण से आगे नहीं चल सकती? यहाँ गर्व का पर्वत असुरों का नाथ चमरेन्द्र है, या इन्द्र है, या पर्वत के शिखरपर जिनमन्दिर है, या चरमशरीरी मुनि है? यह हनुमान के वचन सुनकर पृथुमति

मंत्रीने कहा, हे देव! यह क्रूरता सहित मायामयी यंत्र है। तब हनुमान ने ध्यानसे देखा, ओर कोट में प्रवेश करना कठिन जाना, यह कोट विरक्त स्त्री के मन समान कठिन प्रवेश है, अनेक आकार को लिये, वक्रता से पूर्ण, भयानक सर्वभक्षी, वहाँ देवभी प्रवेश नहीं कर सकता। अग्निकी ज्वाला समान तीक्ष्ण आगे का भाग, करोत समान चमक, रक्तवर्ण जीह्वा समान हजारों सर्पों के भयानक फण, विकराल शब्द, विषरूपी अग्निके कण बरषे। जो कोई मूर्खयोद्धा मान से प्रवेश करना चाहे तो मायामयी सर्प निगल जाते। जैसे मेंढक को सर्प निगले। लका का कोट ज्योतिषी देवों से भी ऊँचा है। सर्व दिशाओं मे दुर्लभ देखा नहीं जाये, महाभयानक मेघसमान शब्दों से युक्त, ऐसे कोट को देख हनुमान ने सोचा यह मायामयी कोट राक्षसो के नाथने रचा है। अपनी विद्याकी चतुरता दिखाई है। अब मै विद्याके बलसे इस कोट का भंगकर राक्षसो का मददूर करू। जैसे आत्मध्यानी मुनि मोहमद को दूरकरे। तब हनुमान ने अपनी समुद्र समान सेना को आकाश मे छोडकर, स्वय विद्यामयी बखतर पहन हाथ मे गदा लेकर मायामयी पुतली के मुख में प्रवेश किया। जैसे राहु के मुखमें सूर्य प्रवेश करे। हनुमान नरसिंह ने गदा के घात से कोट को चूर्णकर दिया। जैसे शुक्ल ध्यानी मुनि निर्मलभावो से घातियाकर्म की स्थितिको चूर्ण करते हैं। यह विद्या भगहुई तब मेघकी ध्वनी समान आवाज हुई, विद्या भागगई कोट नष्ट हुआ। जैसे जिनेन्द्रके स्तोत्र से पापनष्ट हो जाते है। उस समय प्रलयकाल के मेघ समान भयकर शब्द सुन एव मायामयी कोट बिखरा देख, कोट का स्वामी वज्रमुख क्रोधित होकर शीघ्र ही रथपर चढ हनुमान को मारने के लिये दौडा। जैसे सिंह अग्नि की तरफ दौडे। जब वज्रमुख को सामने आता देख पवन पुत्र हनुमान महायोद्धा युद्ध के लिये तैयार हुआ, तब दोनों सेनाओ के योद्धा प्रचड पराक्रमी अनेक वाहनोपर चढ शस्त्रो सहित परस्पर युद्ध करने लगे। ऐसा युद्ध हुआ जैसे मान और मार्दव के। पुनः हनुमान के सुभटो ने वज्रमुख के योद्धाओ को क्षणमात्र में दशों दिशाओं में भगाया और हनुमान ने सूर्य से अधिक ज्योति वाले चक्र और शस्त्रों से वज्रमुख का सिर काटकर पृथ्वीपर डाला। यह सामान्य चक्र है, चक्री अर्द्धचक्री का सुदर्शन चक्र नहीं। युद्ध मे पिता का मरण देख लंकासुन्दरी वज्रमुखकी पुत्री को पिताका शोक हुआ उसे दूरकर क्रोधरूपी विषसे भरी तेज तुरंग वाले रथपर चढ भोहे टेढीकर लाल लाल नेत्रोंसे हनुमानपर दौडी, मानों क्रोधायमान शचि ही है।

और कहा मैं तुझे देखती हूँ तेरे में शक्ति है, तो मेरे से युद्धकर जो क्रोधित हुआ रावण नहीं करेगा, वह मैं करूँगी, हे पापी! तुझे यमरूपी मंदिर में भेजूँगी, तू दिशाओं को भूल अनिष्ट स्थानपर आया है। ऐसा कहकर वह शीघ्र ही आई, तब उसके आते ही हनुमान ने उसका छत्र उडाया, तब उसने बाणों से हनुमान का धनुष तोड दिया। और शक्ति लेकर चलाने लगी, उसके पहले ही हनुमान ने शक्ति को बीचमें ही तोड दिया, तब वह विद्याके बलसे बाण, फरसी, बरछी, चक्र, मूसल, शिला इत्यादि हनुमान के रथपर बरसाने लगी, तब हनुमान विद्या की विधि में प्रवीण महापराक्रमी उसने शत्रु और शस्त्र अपने तक आने नहीं दिये। तोमरादि बाणों से बाण दूर किये, और शक्तियों से शक्तियाँ दूर की। दोनों का परस्पर महायुद्ध हुआ, उसने उनके बाण एवं उनने उसके बाण आपस मे दूर हटाते रहे। कोई भी नहीं हारे। गौतमस्वामी ने राजाश्रेणिक से कहा हे राजन! हनुमानको, लंकासुन्दरी ने बाणशक्ति अनेक शस्त्रों से जीता और काम के बाणो से स्वयं दुखी हुई। कैसीहै लकासुन्दरी? साक्षात् लक्ष्मी समान, रूपवान, गुणवान उसने हनुमान के हृदय मे प्रवेश किया। तब हनुमान भी मोहित होकर मनमें सोचने लगे। यह लकासुन्दरी मनोहर आकार वाली बाहर से तो विद्या के बाण एव सामान्य बाणों से मुझे छेदा है, और अन्तरंग मे मेरे मनको कामके बाणों से भेदा है। यह मुझे अन्दर और बाहर दोनो तरफ से मार रही है। तन ओर मनको दुखीकर रही है। इस युद्धमें इसके बाणोंसे मेरा मरण हो तो अच्छा है, परन्तु इसके बिना जीवन अच्छा नहीं, इसप्रकार अंजना के पुत्र लंकासुन्दरी पर मोहित हुये। और वह लकासुन्दरी हनुमान के रूपको देखकर मोहित हुई। क्रोधित होकर हनुमानको मारने के लिये जो शक्ति हाथ में ली थी, वह शीघ्र ही हाथसे भूमिपर डाल दी, हनुमान पर नहीं चलाई। कैसेहैं हनुमान? प्रफुल्लित है तन और मन उनका, पूनम के चन्द्रमा समान मुख उनका, मुकुट में बन्दर का चिन्ह एवं साक्षात् काम देव ही है। लंकासुन्दरी ने मन में सोचा कि इन्होंने मेरे पिता को मारा और बडा अपराध किया, यद्यपि यह हमारे द्वेषी हैं, फिरभी अनुपमरूप से मेरे मनको हर लिया है, अगर मैं इनके साथ रमण नहीं करूँ तो मेरा जीवन निष्फल है। तब मोहित होकर एकपत्र में अपना नाम लिखकर बाणमें रखकर चलाया। उस पत्रमें यह समाचार थे कि हे नाथ! देवों के समूह से भी मैं नहीं जीती जाऊँ, ऐसी, मुझे आपने कामके बाणों से जीती, इस पत्र को पढकर

हनुमान प्रसन्न होकर रथसे उतर वहाँ जाकर लोकसुन्दरी से मिले, जैसे काम रतिसे मिले। वह प्रशान्त बैर होकर पिताके मरण का शोक उससे ऑखों से आँसू बहाती रही, तब हनुमान कहने लगे हे चन्द्रवदनी! रुदन मत करो, तुम शोकको दूर करो। तेरे पिता क्षत्रीय महाशूरवीर उनकी यही रीति है, जो युद्ध में स्वामी कार्य के लिये प्राण तजे, और तुम शास्त्रों में प्रवीणहो सब अच्छी तरह जानती हो, इस राज्य में यह प्राणी कर्मोंके उदयसे ही मरते हैं, इसलिये तुम आर्तध्यान छोडो, पिता पुत्र परिवारादि सभी प्राणी अपने किये कर्मों को भोगते है। दूसरे जीव तो निमित्त मात्र है। इन वचनो से लकासुन्दरी शोक रहित हुई। हनुमान लंकासुन्दरी से मिलकर प्रेम के समूह से पूर्ण दोनों ने संग्राम का खेद दूर किया, और दोनोंका मन परस्पर प्रेमरूप हुआ। आकाश मे स्तम्भिनी विद्यासे कटकको रोका एवं सुन्दर मायामयी नगर बसाया। उस नगर मे मनोहर राजभवन, उसमें राजा ने हाथी घोडे रथ एवं विमानो पर चढकर बडे बडे राजाओ सहित नगर में प्रवेश किया। महा उत्साह सहित रात्रिमें शूरवीरों का वर्णन युद्ध मे जैसा हुआ वैसा सामन्त लोग कहने लगे। हनुमान लंकासुन्दरी के साथ प्रेम करता रहा।

अथानंतर प्रातः काल हनुमान चलने को तैयार हुआ। तब लंकासुन्दरी महाप्रेम से कहने लगी। हे स्वामिन! आपके पराक्रम नहीं सहे जाए ऐसे अनेक मनुष्यों के मुख से रावण ने सुना होगा, वह सुनकर महाक्रोधी होगा, इसलिये आप लंका में क्यों जा रहे हो? तब हनुमान ने सभी वृतान्त कहा, राम ने वानरवंशियों का उपकार किया और सब के प्रेमी राम उनके प्रति उपकार के लिये मै जा रहा हूँ। हे प्रिये! राम का सीता से मिलन कराऊँ। राक्षसों का इन्द्र सीताको अन्याय मार्गसे हरकर ले गया, मैं सीता को लेकर आऊँगा, तब लंकासुन्दरी ने कहा, आपका और रावण का प्रेम नहीं और प्रेम के नष्ट होने पर सम्बन्ध का व्यवहार नहीं रहता है। जब आप लंकामें आते तब नगर गली मोहल्ले में हर्ष होता, मन्दिर एवं नगर को सजाया जाता, जैसे स्वर्ग में देव प्रवेश करे ऐसे आप प्रवेश करते। अब रावण आपसे द्वेषरूप है तो निःसन्देह आपको पकड़ेगा। इसलिये आपके और उनके जब प्रेम हो तब मिलना योग्य है। तब हनुमान बोले हे प्यारी! मैं वहाँ जाकर उनका अभिप्राय जानना चाहता हूँ, और वह सीता सती जगत में महाप्रसिद्ध है, रूपसे अद्वितीय है, देवों की अप्सरायें भी सीताके रूपको देखकर एकक्षण के लिये शर्मिंदा हो जाती है। ऐसी रूपवान सीताको देखकर

रावण का मन सुमेरू समान अचल था, फिर भी चलायमान हुआ, वह महापतिव्रता हमारे नाथकी रानी, हमारी माता समान उनका मै दर्शन करना चाहता हूँ। हनुमान ने ऐसा कहा और सब सेना लंकासुन्दरी के पास छोड, आप लंकासुन्दरी से विदा होकर लका गये। गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिक से कहा हे राजन्! इसलोक में बडा आश्चर्य है, यह प्राणी क्षणमात्र मे कभी रागको छोडकर द्वेष में आ जाये, और द्वेष को छोडकर राग में आ जायें। संसारी जीवों में कर्मो की अद्भुत क्रियायें हैं, और सभी जीव कर्मों के आधीन है। जैसे सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण आता वैसे प्राणी एक अवस्था से दूसरी अवस्था मे आता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे हनुमानको लकासुन्दरी कौ लाभवर्णन करनेवाला बावनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-53

हनुमान का लंका में जाकर सीता से भेंट कर लंका को नष्ट भ्रष्ट करना

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं—हे श्रेणिक! उस पवनके पुत्रने महा प्रभाव सहित थोडे ही सेवकों के साथ नि·शक होकर लंका में प्रवेश किया। और विभीषण के राजभवन में गया। विभीषण ने बहुत सम्मान किया, कुछ समय बैठने के पश्चात परस्पर चर्चा के बीच मे ही, हनुमान ने कहा रावण तीनखंड का स्वामी, यह क्या उचित है दरिद्र मनुष्य के समान चोरीकर परस्त्री को लेकर आया। जो राजा है, वह मर्यादा के मूल है, जैसे नदीका मूलपर्वत। राजा ही अनाचार करता है, तो सर्वलोक में अन्याय की प्रवृत्ति होती है। और राजाकी भी निंदा होती है। इसलिये जगत के कल्याण निमित्त रावणको शीघ्र ही कहो कि न्याय को छोडकर, अन्याय में प्रवृत्ति नहीं करें। जगत मे अपयश का कारण है, आपके कुलका निर्मल चारित्र केवल पृथ्वीपर ही प्रशंसा योग्य नहीं, स्वर्ग में देव भी हाथजोड नमस्कार कर आपकी प्रशंसा करते हैं। आपका यश पृथ्वीपर फैल रहा है। तब विभीषणने कहा मैंने बहुत बार भाईको समझाया परन्तु

मानता नहीं है, और जिस दिन से सीताको लाया, उस दिन से हमारे से बात भी नहीं करता, फिरभी आपके कहने से मैं पुन. जोर देकर कहूँगा। परन्तु यह हठ उससे छूटना कठिन है। और आज ग्यारहवां दिन है, सीता निराहार है, जलभी ग्रहण नहीं किया है। तोभी रावणको दया नहीं आई। रावण कामसे विरक्त नहीं हो रहा है। यह बात सुनकर हनुमान को दया आई, और प्रमदनामके उद्यानमें सीता विराजमान है, वहाँ हनुमान गया। इस वनकी अनुपम सुन्दरता है। यह वन भोगभूमि के वन समान है, उस वनकी लीलाको देखता हुआ, हनुमान सीताके दर्शन के लिये आगे गया। चारोंतरफ वनमें अवलोकन किया, तब दूरसे ही सीताको देखा, सम्यग्दर्शन सहित, महासती सीता को देखकर, हनुमान मनमें चिन्तवन करने लगा, यह रामदेवकी परमसुन्दरी महासती निर्धूम अग्नि समान, ऑखों मे ऑसू भरे हैं, चिन्ता सहित बैठी, मुख से हाथ लगाकर, सिर के केश बिखर रहे हैं, कृश हुआ है शरीर उसका, यह देखकर हनुमान मन में कहता है, धन्य है इसलोक मे इस माताका रूप जो अपने रूपसे सर्वलोक को जीता है, मानो यह कमलसे निकली साक्षात लक्ष्मी ही विराजमान है, दुखके समुद्रमे डूब रही है, फिरभी इसके समान ओर कोई नारी नहीं। मै जैसे भी हो, ऐसे महामाता को श्रीरामसे मिलाऊँगा, इनके ओर श्रीराम के कारण अपना शरीर भी दे दूगा। महासती सीता का ओर रामका वियोग मै नहीं देख सकता, यह विचारकर अपना रूप अदृश्यकर मंद मद चाल से आगे चले। श्रीराम की मुद्रिका (अगूठी) सीता के गोद में डाली सो शीघ्रही अगूठीको देख प्रसन्न हुई और कुछ चेहरा हर्षित हुआ। तब पासमें बैठी जो दासियॉ वह सीताकी प्रसन्नता के समाचार जाकर रावण से कहे, तब रावणने संतुष्ट होकर इनको वस्त्र रत्नादि दिये। तब सीताको प्रसन्न जान रावण कार्य की सिद्धि समझने लगा। उसी समय मन्दोदरी आदि सभी रानियों को सीता के पास भेजी। सभी रानियॉ अपने स्वामी की आज्ञा से सीता के पास आई, और मंदोदरी ने सीता से कहा—हे बाले! आज तुम प्रसन्न हुई, ऐसा हमने सुना सो तुमने हमारेपर बडी कृपा की। अब तीनखण्ड का स्वामी रावण उसकी रानी बनो। यह वचन सुन सीता क्रोधसे मंदोदरी से कहने लगी, हे खेचरी! आज मेरे पति के समाचार आये हैं, मेरे पति आनन्दसे हैं, इसलिये मुझे हर्ष हुआ है, तब मन्दोदरी ने समझा कि इसको आहार पानी किये ग्याहरदिन बीत गये, इसलिये वायुसे बोल रही है। तब सीता ने अंगूठी लाने वाले से कहा, हे भाई!

मैं इस समुद्र के अन्तरद्वीप मे भयानक वनमें पडी हूँ। जो कोई श्रेष्ठ मनुष्य मेरे भाई समान अतिवात्सल्य का धारी मेरे पति की मुद्रिका लेकर आया है, वह मुझे प्रगट दर्शन दो। तब हनुमान भव्यजीव पर उपकारी सीता का अभिप्राय जान, मनमें सोचने लगे। कि पहले दूसरे का उपकार करना चाहे, और बाद में कायर होकर छिपे रहें, वह अधम पुरुष हैं। जो दूसरे जीवोंको कष्टके समय में एवं दुखी देख सहायता करते हैं, उन जीवों का जन्म सफल होता हैं। रावणकी मन्दोदरी आदि सभी रानियाँ देख रही है। उसी समय दूरसे ही हनुमान ने सीता को देख हाथ जोड सिर झुकाकर नमस्कार किया। कैसाहै यह हनुमान? महा निःशंक कांति से चन्द्रमा समान, दीप्ति से सूर्यसमान, वस्त्र आभूषण से मंडित, महाबलवान, वज्रवृषभनाराचसंहनन, सुन्दर लम्बेकेश, लाल होंठ, महागुणवान, रूपवान, सीताके पास आता हुआ ऐसा लग रहा था, मानों भाई भामंडल लेनेको आया है। पहले अपना कुल गोत्र माता पिता का नाम सुनाकर पुन· अपना नाम बताया। पुन. श्रीराम ने जो समाचार कहे थे वह सब कुछ बताया। और हाथजोड विनती की, हे साध्वी! स्वर्गविमान समान राजमहलों मे श्रीराम विराजमान हैं। परन्तु आपके वियोगरूपी समुद्रमें मग्न है। किसी जगह भी राग एव शातिको प्राप्त नहीं हो रहे है। सम्पूर्ण भोग उपभोगको छोडकर मौन पूर्वक आपका ध्यान करते है। और वीणा की मधुरध्वनी, स्त्रीयों के सुन्दरगीत, राग भरी कथायें कभी नहीं सुनते है। प्रतिसमय आपकी ही कथा करते हैं। आपको देखने के लिये केवल जीवन जी रहे है। यह वचन हनुमानके सुन सीता बहुत आनन्दको प्राप्त हुई। सीता के समीप हनुमान महाविनयवान हाथजोडकर खडा है। सीता ऑखों मे ऑसू भर कहनेलगी—

हे भाई! मैं दुख के सागर में गिरी हूँ, अब पतिके समाचार सुन सन्तोष को प्राप्त हुई हूँ, सो आपको क्या दूँ? तब हनुमानने प्रणामकर कहा, हे जगत पूज्य! आपके दर्शनों का ही मुझे महालाभ हुआ। तब सीताने मोती समान ऑसुओं की बूंदे गिराते हुए, हुनमानसे पूछा, हे भाई! यह नगर अनेक जलचर जीवों से भरा, महाभयानक समुद्र पारकर तू कैसे आया। और सच कहो, मेरे प्राणनाथ को तुमने कहॉ देखा? और लक्ष्मण युद्ध में गये थे वह कुशल मंगल है? और मेरे स्वामी कदाचित तुम्हें यह सन्देशा कहकर परलोक गये हो, या जिनमार्ग मे प्रवीण, सभी परिग्रह का त्यागकर तप करते हों, या मेरे वियोग से शरीर शिथिल हो गया हो, और यह अंगूठी अंगुली से गिर गई हो, यह मेरे मनमें शंका है। अभीतक मेरेप्रभु

का तुमसे परिचय नहीं था, सो अब कैसे मित्रता हुई, सब मुझे विस्तार पूर्वक कहो, तब हनुमानने हाथजोड विनयपूर्वक कहा, हेदेवी! सूर्यहासखड्ग लक्ष्मण को सिद्ध हुआ, और चन्द्रनखा ने घर जाकर पतिको क्रोध उत्पन्न कराया, वह खरदूषण दण्डकवनमें युद्ध करने आया, लक्ष्मण युद्ध करने गया, यह वृतान्ततो आप जानती ही हो, पुन: रावण आया और आप श्रीराम के पास विराजमान थी, वह रावण सभी शास्त्रों का ज्ञाता एवं धर्म अधर्म का स्वरूप जानने वाला, फिरभी आपको देखकर अज्ञानी होकर सभी नीति भूल गया, बुद्धि नष्ट हुई। आपको हरकर ले जाने के लिये कपटसे सिंहनाद किया, उस सिंहनादको सुनकर श्रीराम लक्ष्मण के पास गये। और वह पापी आपको हरके ले आया। लक्ष्मणने रामसे कहा, हे देव! आप क्यो आये? शीघ्रही जानकी के पास जाओ, तब राम अपने स्थानपर आकर आपको नहीं देख महादुखी हुये, आपको ढूढने के कारण वन वनमे बहुत घूमें, वहाँ जटायुको मरता देख उसको णमोकार मत्र एवं चारो आराधना सुनाकर पक्षीका समाधिमरण कराकर परलोक सुधारा। आपके वियोग से महादुखी हुये जो हम कह नहीं सकते। लक्ष्मण खरदूषण को मार श्रीराम के पास आये और सतोष दिया। चन्द्रोदय का पुत्र विराधित लक्ष्मण से युद्ध मे आकर मिला। सुग्रीव रामके पास आये और साहसगति विद्याधर सुग्रीव का रूप बनाकर, सुग्रीव की रानी के लिये आया। तब वह रामको देख साहसगति की विद्या भाग गई, सुग्रीव का रूप मिट गया। साहसगति ने राम से युद्ध किया, सो रामने साहसगति को मारा। सुग्रीव का उपकार किया। तब सभीने मुझे बुलाकर राम से मिलाया। अब मै श्रीराम का भेजा आपको छुडाने के लिये यहाँ आया हूँ। परस्पर युद्ध करना ठीक नहीं है। और लकापुरी का नाथ दयावान विनयवान धर्म अर्थ काम का वेत्ता है, कोमलहृदय, सौम्य, वक्रतारहित, सत्यवादी महाधीर वीर है, वह मेरा वचन मानेगा और आपको श्रीराम के पास भेजेगा। उनकी निर्मलकीर्ति पृथ्वीपर प्रसिद्ध है, लोकअपवाद से डरते हैं। तब सीता ने हर्षित होकर हनुमान से पूछा, हे कपिध्वज! तुम्हारे समान पराक्रमी धीर वीर विनयवान मेरे पतिके पास कितने हैं? तब मन्दोदरीने कहा, हे जानकी! तू इनको क्या समझ रही है, तू इनको नहीं जानती है, इसलिये ऐसा पूछ रही है। इन हनुमान समान भरतक्षेत्र में अन्य ओर कोई नहीं है, यह एक ही हैं। यह महासुभट योद्धा इसने कईबार रावणकी सहायता की है, यह पवनका पुत्र, अंजनाका प्यारा सुत, रावण का

भानजा जमाई है। चन्दनखा की पुत्री अनगकुसुमा से विवाह किया है। इस अकेले ने अनेको को जीता है। प्रतिसमय लोग इसके दर्शनों की अभिलाषा करते है। चन्द्रमा की किरणो समान, हनुमान की कीर्ति जगत मे फैल रही है। लंका का स्वामी हनुमान को भाईसे भी अधिक मानता है। यह हनुमान पृथ्वीपर प्रसिद्ध गुणो से पूर्ण हैं। परन्तु यह बडा आश्चर्य है कि भूमिगोचरियों का दूत बनकर आया है। तब हनुमान ने कहा तुम राजामय की पुत्री, रावण की पटरानी दूती बनकर आई हो। पतिके कारण देवों जैसे सुखो को भोगे, उसे विपरीत कार्य के लिये मना नहीं करती हो? और विरुद्ध कार्य की अनुमोदना कर रही हो? अपना पति विषका भरा भोजन करता है, सो तुम उसे दूर नहीं करती हो? जो अपना अच्छा बुरा नहीं जानता, उसका जीवन पशु समान है, और अपना सौभाग्य सबसे अधिक। और पति परस्त्री से मोहित हुआ उसका दूतीपना करती हो? तुम सब बातो में प्रवीण, बुद्धिमान थी, अब अज्ञानी जैसी क्रिया करती हो। तुम अर्धचक्रवर्ति की महिषी कहो पटरानी हो, सो अब मै महिषी से भैस समान समझता हूँ। यह वचन हनुमान के सुन मन्दोदरी क्रोधित होकर बोली, अहो! तू महादोषी है, कदाचित रावण को यह बात मालूम हो जायेगी कि हनुमान रामका दूत होकर सीताके पास आया है, तो जो किसीको दण्ड नहीं देंगे, ऐसा महादण्ड तुझे देंगे। और जिसने रावण के बहनोई को मारा, उसके सुग्रीवादि सेवक बने, रावणकी आज्ञा छोड, वे मंदबुद्धि रक क्या करेंगें। उनकी मृत्यु निकट आई है, इसीलिये भूमिगोचरियो की सेवा करते है। वे अज्ञानी निर्लज्ज कृतघ्नी वृथा गर्वरूप होकर मृत्यु को चाहते है, ये वचन मन्दोदरी के सुन सीता क्रोधसे कहने लगी, हे मन्दोदरी! तू मद बुद्धि है, जो वृथा ऐसा कहती है। मेरेपति अद्भुत पराक्रम के धनी क्या तूने नहीं सुना है? शूरवीरों मे एवं विद्वानो की गोष्ठी में मेरे पति श्रेष्ठ कहे गये है। उनके वज्रावृत धनुष का शब्द रणसंग्राम मे सुनकर महाधीरवीर योद्धा भय से कम्पायमान होकर दूर भाग जाते है, और उनका छोटा भाई लक्ष्मण, लक्ष्मी का निवास शत्रुको क्षय करनेमे समर्थ, ऐसे लक्ष्मणको देखते ही शत्रु दूर भागते है। बहुत कहने से क्या? मेरेपति श्रीरामचन्द्रजी लक्ष्मण सहित समुद्र तिरकर शीघ्र ही यहाँ आयेगें, सो युद्ध मे थोडे ही समय मे अपने पति को मरा देखेगी। मेरे पति महाप्रबल महापराक्रम के धारी है, तू पापी पति की आज्ञा से दूती बनकर आई है, सो तू निश्चय से ही विधवा होगी, और बहुत रुदन करेगी।

अतः ऐसे वचन सीताके मुख से सुनकर, मन्दोदरी अतिक्रोधित हुई एवं अठारह हजार रानियॉं हाथोंसे सीताको मारने के लिये कटुशब्द कहती हुई आई। तब हनुमानने बीचमें आकर उनको रोका। वह सब सीता को दुख का कारण बनकर वेदनारूप होकर मारने को आई थी, तब हनुमान ने वैद्यरूप होकर दूर किया। तब मन्दोदरी आदि सभी रानियॉं मान भंग होनेसे रावण के पास गई। उनके जाने के पश्चात हनुमानने सीताको नमस्कार कर आहार करने के लिये प्रार्थना की। हे देवी! यह समुद्रपर्यन्त पृथ्वी श्रीरामचन्द्रजी की है, इसीलिये यहॉं का अन्न श्रीरामचन्द्रजी का ही है, शत्रुओ का नहीं , इस प्रकार हनुमानने कहा, और प्रतिज्ञा भी यही थी, कि पतिके समाचार सुनूँ, तब ही भोजन करूँगी। सो समाचार तो आये है, तब सीता ज्ञानवान महासाध्वी शीलवान, दयावान, देशकाल की मर्यादा को जानने वाली, भोजन करना स्वीकार किया। तब हनुमानने एक ईरा नाम की दासी को आज्ञा दी कि शीघ्र ही श्रेष्ठ उत्तम भोजन की सामग्री लाओ। और हनुमान विभीषण के पास गये। वहॉं ही भोजन किया, पश्चात् विभीषण से कहा, कि मै सीताजी केलिये भोजन की तैयारी करा कर आया हूँ। और दासी ईरा चारमुहूर्त मे सभी सामग्री लेकर आई, दर्पण समान पृथ्वीको चन्दनसे लीपकर शुद्ध किया, महा सुगधित शुद्ध सामग्री सुवर्णादि के कई पात्रो मे घी बूरा दाल चावलादि अनेक पदार्थ लेकर आई। तब सीता ने अनेकरस नानाप्रकार के व्यजन, दूध, दही, आदि से तरह तरह का आहार विधिपूर्वक क्रियासे तैयार किया। और ईरादि अपने पास मे रहने वाली सब सखियो को भोजन केलिये निमत्रण दिया। हनुमान से भाई का भाव प्रगटकर वात्सल्य किया, महा श्रद्धासहित पवित्र है मन, ऐसीसीता, महापतिव्रता, भगवानको नमस्कार कर अपना नियम पूर्णकर, उत्तम, मध्यम, जघन्य, तीनपात्रोको आहार देनेकी अभिलाषा कर, महागुणवान श्रीरामचन्द्रजी को हृदय मे विराजमान कर, पवित्र मनसे, सूर्यके प्रकाश (दिन) मे शुद्ध आहार ग्रहण किया। दिनमे सूर्यके प्रकाशमे ही पवित्र मनोहर, पुण्यको बढानेवाला शुद्ध आहार करना योग्य है। रात्रि में योग्य नहीं। सीता भोजन करने के पश्चात् कुछ विश्राम किया। पुनः हनुमानने नमस्कार कर विनती की हे पतिव्रते! हे गुणभूषणे! मेरे कंधे चढो, समुद्र पारकर क्षणमात्र मे रामके निकट ले जाऊँगा। आपके ध्यानमें लीन महावैभव सहित जो राम उनको शीघ्र ही देखो। आपके मिलनसे सबको आनन्द होगा। तब सीता रोती हुई कहने

लगी, हे भाई! पतिकी आज्ञा बिना मेरा गमन उचित नहीं। जो पूछा कि तू बिना बुलाये क्यों आई, तो मैं क्या उत्तर दूंगी। हे हनुमान! रावणने उपद्रवतो सुना होगा, इसलिये अब तुम जाओ, तुमको यहाँ देर करना उचित नहीं! मेरे प्राणनाथ के समीप जाकर, मेरी तरफ से हाथजोड नमस्कार कर मेरे मुख के वचन इसप्रकार कहना, हे देव! एकदिन मैने और आपने चारणमुनि की वंदना एव महास्तुति की, बाद मे कमलोसे भरे जलके सरोवरमें जलक्रीडा की थी, उसी समय वनका एक भयानक हाथी आया, वह महामत्त प्रबल हाथी आपने क्षणमात्र में वशकर सुन्दर क्रीडायें की, हाथी गर्वरहित हुआ। एक दिन नंदनवन समान वनमे मै वृक्ष की शाखा पकड झूल रही थी तो मधु-मक्खियां मेरे शरीर को लगी तब आपने शीघ्रता से मुझे भुजाओ मे उठा ली। एक दिन आपके पास सरोवर पर बैठी थी तब आपने मुझे शिक्षाके उद्देश्य से कोमल कमल नालकी मुझे मधुरता से दी थी। एक दिन करण कुडल नदी के किनारेपर आप और मैं दोनों ही बैठे थे, तब मध्यान्ह के समय दोचारण मुनिराज आये तो आपने उठकर भक्ति से मुनिराजों को आहार दिया, तब पचाश्चर्य हुये, "रत्नवर्षा, कल्पवृक्षों के पुष्पोकी वर्षा, सुगधजल की वर्षा, शीतल मद सुगंध पवन, दुंदुभी बाजे एव आकाश में देवो द्वारा जय जयकार की ध्वनि, धन्य येपात्र, धन्य येदाता, धन्य येदान, यह सब रहस्य की बाते कही। और चूडामणि सिरसे उतारकर दिया, क्योकि यह दिखाने से रामचन्द्रजी को विश्वास होगा और यह कहना कि मैं जानती हूँ, आपकी कृपा मेरेपर बहुत हैं, फिरभी आप अपने प्राण यत्न पूर्वक रखना। आपसे मेरा वियोग हुआ है, अब आपके पुरुषार्थ से ही मेरा मिलन होगा। ऐसा कहकर सीतासती रूदन करने लगी। तब हनुमान ने धैर्य दिलाकर कहा, हे माता! जो आप आज्ञा करोगी वही होगा। और शीघ्र ही स्वामी से मिलन होगा। यह कहकर हनुमान ने सीतासे विदाई ली। और सीता ने पतिकी अंगूठी अपनी अगुली मे पहनकर ऐसा सुख माना जैसे पति का समागम ही प्राप्त हुआ हो।

अथानंतर वनकी नारियाँ हनुमान को देखकर चकित हो गई, और परस्पर कहने लगी, यह कोई साक्षात कामदेव ही है, या देव है सो वनकी शोभा देखने आया हैं, कोई मोहित होकर बीन बजाने लगी, इस प्रकार वन की स्त्रीयों कई क्रियाये करने लगी। अनेक बातें रावणने वनमें सुनी, और क्रोधित होकर रावणने महानिर्दयी योद्धाओं को आज्ञा देकर भेजा व कहा कि मेरे क्रीडा करने का

पुष्पउद्यान में एक द्रोही आया है। उसे मार डालो, तब योद्धाओं ने जाकर वनके रक्षकों से कहा, तुम कहाँ सो रहे हो, कोई उद्यान में दुष्ट विद्याधर आया है। उसे शीघ्र ही मारना या पकडना, महा अविनयी है। तब किंकरों ने कहा, वह कहाँ है, कौन है, यह हनुमान ने सुना और धनुष शक्ति गदा खडग बरछी आदिको लेकर अनेक योद्धा आते हुये हनुमान ने देखे। तब सिंह से भी अधिक पराक्रमी हनुमान मुकुट में रत्न जडित बन्दरों के चिन्ह से आकाश में प्रकाश एवं अनेक रूप दिखाये। निकलते सूर्य समान क्रोध से होठ डसते हुये लाल नेत्रकर सबको डराया, तब भयसे सभी किकर भाग गये। तब दूसरे क्रूर सुभट आये, शक्ति तोमर गदा धनुष इत्यादि शस्त्र हाथमें लेकर चलाये, तब अंजनाका पुत्र शस्त्र रहित था, सो उसी वनके ऊँचे ऊँचे वृक्षो को उखाडे एव पर्वत की शिलाओ को निकालकर रावण के सुभटोंपर चलाये, तब रावण के सामन्त बहुत मारे। और किसीको मुक्कोंसे किसीको लातोंसे मारे समुद्र समान रावण की सेना क्षणमात्र मे बिखर गई, कोई मर गये, कोई भाग गये। हे श्रेणिक! उस वनके सभी भवन, विमानसमान उत्तम राजमन्दिर सब खंडितकर गिरा दिये। केवल भूमि रह गई। वृक्षोको नाश किया तो मार्ग बन गया। और नगर मे अनेक मकान दुकान महल भवनोंको तोड दिया तो पहाड बन गया। और अनेक किंकर मरे तो बाजार संग्राम की भूमि बन गई। तोरण टूटे ध्वजाओं की पक्तियॉ गिरी तो मानो इन्द्रधनुष हो गये। पैरो की लातो से ऊँचे ऊँचे घरों को तोडा तो भयानक शब्द हुये, किसीको हाथोसे, किसीको छातीसे, कधो से मारे, इस प्रकार रावण के हजारो सुभट मारे, सो नगर मे हा हाकार हुआ, रत्नो के महल गिरे। इस प्रकार लंकामे हनुमानने बहुत उपद्रव किया। तब इन्द्रजीत मेघवाहन कवच पहन बडी सेनाको लेकर आये, लंका के बाहर हनुमान के साथ परस्पर महायुद्ध हुआ। बहुत समय तक युद्ध होने के बाद इन्द्रजीत ने हनुमान को नागफास से पकडा और नगर में ले आये। उनको आने के पहले ही, रावण के पास हनुमान की शिकायत हो रही थी, कि सुग्रीव ने इसे बुलाया, अपने नगर से किहकंधपुर आये, रामसे मिले, फिर लकाकी ओर आया सो मार्ग में महेन्द्र को जीतकर साधुओं का उपसर्ग दूर किया, दधिमुख की राजकुमारियॉ राम के पास भेजी, वज्रमयी कोटको नष्ट किया और वज्रमुख को मारा, उनकी पुत्री लकासुन्दरी से विवाह किया। एवं पुष्पक वनको नाश किया, वनपालक को कष्ट दिया, बहुत सुभट

मारे, इत्यादि बातें सुन रावण ने क्रोध किया, इतने में इन्द्रजीत हनुमान को लेकर आया, तब रावण ने हनुमान को लोहे की सांकलों से बंधवाया, और कहा यह पापी निर्लज दुराचारी इसको देखने से क्या? अनेक अपराधों को करनेवाला इस दुष्टको क्यों नहीं मारें। सभाके सब लोग माथा हिलाकर कहने लगे, हे हनुमान! रावण के प्रभाव से पृथ्वीपर तू कीर्तिको प्राप्त होता था, ऐसे स्वामी को छोड़ भूमिगोचरियों का दूत हुआ, तीनखंड के स्वामी को छोड जो भिखारी निर्धन जंगल जगल में भटकते फिर रहे हैं, उनका तू सेवक हुआ। और रावण ने कहा—तू पवनका पुत्र नहीं, ओर किसीका है, तेरी क्रिया नीच पुरुषो के समान दिखती है, जो जारजात है उनके चिन्ह शरीर मे नहीं दिखते, परन्तु जब अनाचार की क्रिया करते हैं तब जारजत जाना जाता है। क्या सिंह का बालक श्याल का आश्रय करे? नीच लोगों के आश्रय से कुलवान पुरुष नहीं जीते हैं? अब तू राजद्रोही है अतः मारने योग्य है। तब हनुमान ने यह वचन सुन, हँसकर कहा, न जाने कौन मारने योग्य है। हे रावण! इस खोटी बुद्धि से तेरी मृत्यु पास आई है। कुछ ही दिनों मे तुझे दिख जायेगी। लक्ष्मण सहित श्रीराम बडी सेना से आयेगे, वह किसीसे रोके नहीं जायेंगे। जैसे कोई अनेकप्रकार के अमृत समान भोजन करनेपर भी तृप्त नहीं हुआ, और विष की एक बूंद खाकर नाशको प्राप्त होता है। ऐसे हजारों स्त्रीयो से भी तू तृप्त नहीं हुआ, तो परस्त्री की अभिलाषा से नाशको प्राप्त होगा। जैसा शुभ अशुभ होना होता है उसी कर्मो के अनुसार बुद्धि होती है। इन्द्रादि भी कुछ नहीं कर सकते। कुबुद्धि वालो को अनेकों हितकारी उपदेश दो, तो भी कुछ नहीं लगता जैसा होनहार है, वैसी ही बुद्धि होती है। विनाश कालमें बुद्धि विपरीत होती है। कोई प्रमादी विष का भरा सुगन्ध युक्त मीठा जल पीये तो मरण को प्राप्त होता है। ऐसे हे रावण! तू परस्त्री का लोलुपी अवश्य ही मरणको प्राप्त होगा। तू गुरु परिवार मित्र वृद्ध मंत्री आदि सबके हितकारी वचनो को छोडकर पाप की प्रवृति करता है, तो निश्चय से दूराचार रूपी समुद्र मे काम की लहरों के बीच नरक के दुखो को भोगेगा। हे रावण! तू रत्नश्रवा राजाके कुल का क्षय करनेवाला नीच पुत्र हुआ है। तेरे द्वारा राक्षसवंश का क्षय होगा। पहले तेरे वशमे मर्यादा को पालने वाले पृथ्वीपर बडे बडे पूज्य पुरुष मुक्ति में जाने वाले हुये। जब हनुमानने ऐसे वचन कहे तब रावण क्रोध से लाल नेत्रकर कहता है, यह पापी मृत्यु से डरता नहीं है वाचाल है,

इसलिये शीघ्र ही हनुमान के हाथ पैर लोहे की जंजीरों से बांधकर कुवचन कहते हुये पूरे नगरमें भ्रमण कराओ, और घर घर यह वचन कहो, कि यह भूमिगौचरियों का दूत आया है, इसे देखो, इसके पीछे श्वान बालक साथ, साथ घूमें और नगरकी औरते धिक्कार धिक्कार कहे, बालक धूल डाले, श्वान भौंके, पूर्णनगरी मे इसे इस प्रकार घुमाओ दुख देओं। तब महाबली हनुमान ने लोहे की जंजीरों के बंधन को तोडकर ऊँचे आकाश में चले गये। जैसे यति मुनि मोहपास को छोडकर मोक्ष मे चले जाये। हनुमान ने आकाश मे उछलकर अपने पैरों की लातो से लंकाका बडा दरवाजा गिराया। कई छोटे दरवाजे एव इन्द्र के महल समान रावण का राजभवन हनुमान के चरणों की घातसे बिखर गया। महलों के केवल बडे बडे स्तम्भ रह गये। महल के आस पास रत्न सुवर्ण का कोट भी चूर्ण हो गया। यह हनुमान का बल एव पराक्रम सुन सीता प्रसन्न हुई, परन्तु हनुमान को बधा सुन दुखी हुई। तब पासमे बैठी हुई बज्रोदरी ने कहा, हे देवी! तुम क्यो वृथा रो रही हो यह हनुमान बंधनों को तोड आकाश मे चला जा रहा है। वह देखो। तब सीता अतिप्रसन्न हुई, और मनमे सोचने लगी, कि यह हनुमान मेरे समाचार मेरे पति के पास जाकर जरूर कहेगा। सीता वहीं बैठी बैठी आशीष देती रही और पुष्पाजली डालती रही, कि तुम कल्याण से पहुँचो, सभी ग्रह तुझे सुखदाई होवे, तेरे विघ्न सभी नाश हो। तू चिरजीव हो। इस प्रकार परोक्षरूप से आशीषरूप शुभ कामनाये की। जो पुण्य अधिकारी हनुमान समान पुरुष है, वह अद्‌भुत आश्चर्यको उत्पन्न करते हैं। उन्होने पूर्व जन्म में उत्कृष्ट तप वृत सयम को धारण किया है। तीनलोक मे कीर्ति फैल रही है। और जो कार्य कोई नहीं करसके वह करने मे समर्थ होते है। और जो चिन्तवन मे नहीं आते ऐसे आश्चर्यकारी कार्य करते है। इसलिये सबको छोडकर बुद्धिमान मनुष्य धर्मका पालन करो। और जो नीचकर्म है वह खोटे फलको देने वाले हैं। इसलिये अशुभ कर्म छोडो। पुण्य कार्य करो, पुण्यसे सूर्यके तेजको जीतने वाले तीर्थंकर जैसे महापद को प्राप्त होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे हनुमानको लकासे वापिसआने का वर्णन करनेवाला तिरेपनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-54

राम लक्ष्मण का लंका को प्रस्थान

अथानंतर हनुमान अपने कटक में आकर किहकंधापुर को आये। लंका में विघ्न किया। ध्वजा छत्र नगरकी मनोज्ञता को नष्टकर के आये। किहकंधापुर के लोग हनुमान को आये जान बाहर आये, नगर में उत्साह किया, नगर में प्रवेश करते समय, नर नारियों को, हनुमान के देखने की, इच्छा से अतिभीड हुई। जहाँ अपना निवास था, वहाँ सेना ने अपने अपने डेरे डाले। राजा सुग्रीव ने सभी वृतान्त पूछा, सो हनुमान ने पूर्ण रूपसे सभी बताया, पुन राम के पास गये, राम यह चिन्तवन करते थे, कि हनुमान आया है, वह कहेगा कि आपकी प्रिया सुखसे जीवित है। उसी समय हनुमान ने आकर राम को देखा। महाक्षीण, वियोगरूपी अग्निसे तप्तायमान, हाथजोड रामको नमस्कार कर प्रसन्न मुख से सीता की बात कहने लगे। जितने रहस्य के समाचार सीता ने कहलाये थे, वे सब विस्तार पूर्वक कहे और सिर का चूडामणी सौंप दिया, चिन्ता से हनुमान का मुख ओर ही हो गया, ऑखो से ऑसू बहने लगे। राम भी हनुमानको देख रूदन करने लगे। अर उठकर हनुमान से मिले। श्रीराम पूछते है, हे हनुमान! सत्य कहो मेरी रानी जीवित है? तब हनुमानने नमस्कार कर कहा, हे नाथ! जीवित है। आपका ध्यान करती है। हे पृथिवीपते! आप सुखी हो, आपके वियोगसे वह सत्यवती निरन्तर रूदन करती है, नेत्रोंके जलसे चातुर्मास कर रखा है, गुणों के समूहकी नदी सीता, उसके केश बिखर रहे हैं, अत्यन्त दुखी है, चिन्ता के सागर में डूब रही है। स्वभाव से ही दुर्बल शरीर है, अब विशेष कमजोर हो गई है। रावण की स्त्रीयॉ, बात करना चाहती हैं, परन्तु यह मौन लेकर बैठी निरन्तर आपका ही ध्यान करती है, शरीर का सस्कार सब छोड दिया है। हे देव! आपकी महारानी बहुत दुख से जीवित है। अब आपको जो करना है, वह करो? यह हनुमान के वचन सुन, श्रीराम चिन्तित हुये, मुखकमल मुरझा गया। अपने जीवन को धिक्कार मानते रहे। तब लक्ष्मण ने दिलासा दिया, हे महाबुद्धि! क्या सोच कर रहे हो, कर्तव्य में मन लगाओ। और लक्ष्मण ने सुग्रीव से कहा, हे किहकधाधिपते! तुम महाबुद्धिमान हो, अब सीता के भाई भामंडल को शीघ्र ही बुलाओ, रावण की

नगरी में हमको अवश्य ही जाना है। जहाजो से समुद्र पार करें या भुजाओ से। यह बात सुन सिहनाद विद्याधर बोला आपचतुर महाप्रवीण होकर ऐसी बात मत कहो, हमतो आपके साथ हैं, परन्तु ऐसा करना जिसमे सबका हित हो, हनुमान ने लका मे जाकर उपद्रव किये सो रावण क्रोधित हुआ होगा, हमारी तो मृत्यु आई है। तब जामवन्त बोला, तू शेर होकर मृग समान कायर हो रहा है क्या? अब रावण भी भय रूप है, वह अन्याय मार्गी है उसकी मृत्यु निकट है। और अपनी सेना में भी बडे बडे योद्धा विद्यावैभव से पूर्ण है, हजारो आश्चर्यकारी काम किये है, उनके नाम, धनपति, भूतानन्द, नल, नील, मन्दर, अर्णव, चन्द्रज्योति, दिवाकर, हनुमान महाविद्यावान, विद्याधरो का ईश्वर भामडल, उग्रपराक्रमी महेन्द्रकेतु, प्रसन्नकीर्ति, सुग्रीवादि अनेक महाराजाओ की बडी बडी सेनायें महा बलवान है। आज्ञा के पालक विद्याधर यह वचन सुन लक्ष्मण की ओर देखते रहे, और श्रीराम को देखा, महासौम्यता. रहित महा विकराल रूप, भृकुटी चढा मानो काल के धनुष ही है। श्रीराम लक्ष्मण लका की और क्रोध के भरे लाल नेत्रों से देखा मानो रावण को क्षय करने मे तत्पर हैं। पुन वही दृष्टि धनुषकी ओर गई, सिर के केश ढीले हो गये। इन दोनो भाईयो का मुख क्रोधित देख सभी विद्याधर गमन करने को तैयार हुये। राघव का अभिप्राय जान सुग्रीव हनुमान अनेक शस्त्र एवं सम्पदा सहित चलने को तैयार हुये। राम लक्ष्मण दोनो भाईयो के प्रयाण के समय युद्ध के बाजो की ध्वनी दशो दिशाओ मे पूरित हुई। और मगसर कृष्णा पचमी के दिन सूर्य के उदय समय महाउत्साह सहित शुभ शुभ शकुन मे प्रयाण किया। क्या क्या शकुन हुये वह कहते है। निर्धूमअग्नि की ज्वाला दक्षिणावर्त देखी, मनोहर शब्द बोलते हुये मोर, सौभाग्यवती नारी, सुगन्धपवन, निर्ग्रन्थमुनि, छत्र, अश्वों का गम्भीर हींसना, घंटा का शब्द, दही का भरा कलश, कौआ पैर फैलाये, मधुर शब्द बोलता, भेरी और शंख का शब्द, आपकी जयहो सिद्धि हो, नन्दो, वरदो इत्यादि शुभ शकुन हुये। और सुग्रीव के साथी अनेकों विद्याधरों के समूह आये, नाना प्रकार के विमान, ध्वजायें, वाहन, आयुध, वे सभी विद्याधर आकाश मे जाते शोभित हो रहे थे। राजा सुग्रीव हनुमान, शल्य, नल नील, सुषेण, कुमुद आदि अनेक राजा श्रीराम के साथ हुये, उनके ध्वजाओंपर दैदीप्यमान रत्नमई बानरों के चिन्ह है। विराधित की ध्वजाओ पर नाहर का चिन्ह। जम्बू की ध्वजापर वृक्षका चिन्ह। सिहरव की ध्वजा में व्याघ्र का चिन्ह। मेघकान्त के

हाथीका चिन्ह। इनमें भूतनाद लोकपाल समान फौज का अग्रेश्र हुआ, अर लोकपाल समान हनुमान भूत नाद के पीछे, परमतेज सहित लंका पर चढे। श्रीराम के सन्मुख विराधित बैठा, उसके बाद जामवंत, बॉई भुजा सुषेण, दहिनी भुजा सुग्रीव बैठा। एकनिमिष मे बेलन्धर पहुॅचे, वहॉ राजा समुद्र को बांधा फिर भी रामसे मिलाया, वहॉ ही सबने डेरे डाले। श्रीरामने समुद्रपर कृपाकी उसका राज्य उसको दिया, राजा ने हर्षित होकर अपनी राजकन्या सत्यश्री, कमला, गुणमाला, रत्नचूडा, देवॉगना समान लक्ष्मण से विवाह कराया, एक रात्रि वहॉ रहे, पुनः यहॉ से प्रयाण कर, सुबेलपर्वतपर सुबेलनगर गये, वहॉ का राजा सुबेलको जीत, राम के अनुचर क्रीडा करने लगे, और वहॉ अक्षयनामके वनमें आनन्द से रात्रि पूर्ण की। पुनः प्रयाणकर लंका जानेको तैयार हुये। कैसीहै लंका? ऊॅचे कोट, सुवर्ण के मन्दिरों से पूर्ण कैलाश के शिखर समान आकार अनेक रत्नों का प्रकाश कमलोंके वन, उनमें वापी कूप सरोवरादि से शोभित रत्नो के ऊॅचे ऊॅचे चैत्यालयों से मंडित, महापवित्र इन्द्र की नगरी समान ऐसी लंकाको दूरसे देख सभी विद्याधर आश्चर्य को प्राप्त हुये। और हंसद्वीप में डेरे डाले, वहॉ हसपुरनगर का राजाहंसरथ उसे युद्ध में जीत हंसपुरमें क्रीडा करते रहे। वहॉ से भामंडलपर पुन· दूत भेजा, भामंडल को आने तक वहीं निवास किया। जो जो देश में पुण्य अधिकारी गमन करते हैं वहॉ, वहॉ के शत्रुओ को जीतकर महाभोग उपभोग को भोगते हैं। इन पुण्य अधिकारियों के पुरुषार्थ में कोई शत्रु नहीं है, सभी आज्ञाकारी हैं। जो जो उनके मनमें अभिलाषा है वह सब इनकी मुठ्ठी में है। इसलिये तीनलोक मे सार ऐसा जो जिनराज का धर्म वह प्रशंसा योग्य है। जो कोई जगत को जीतना चाहते है, वह जिनधर्म को धारण करे। यह भोग क्षणभंगुर हैं इनकी क्या बात। यह वीतराग का धर्म निर्वाण को देनेवाला है। और कोई जन्मले तो इन्द्र चक्रवर्ती आदि पदको देने वाला है। उस धर्मके प्रभावसे, हे भव्यजीवों! वे सब सूर्यसे अधिक प्रकाशको धारण करते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे राम लक्ष्मणका लकामे गमन करनेवाला चौवनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-55

राम लक्ष्मणको विभीषण का समागम

अथानंतर रामकी सेना पास आई जान, प्रलयकाल की तरंग समान लंकाके लोग क्रोधको प्राप्त हुये, और रावण क्रोधित हुआ, सामन्त के लोग रणकथा करते बादित्रों की ध्वनि से सर्व दिशायें गुंजायमान हुई, रण भेरी की ध्वनि से सुभट महाहर्षित हुये। साज बाज सहित स्वामी के हित के लिये स्वामी के पास आये। उनके नाम मारीच, अमल चन्द्र, भास्कर, सिंहप्रभ, हस्त, प्रहस्त इत्यादि अनेक योद्धा शस्त्रों सहित स्वामी के निकट आये। लंकापति महायोद्धा संग्राम के लिये तैयार हुआ। तब विभीषण ने रावण के पास आकर प्रणाम किया, शास्त्र के अनुसार प्रशंसा योग्य सुखदायी, भविष्य में कल्याण, वर्तमान में शांतिदायक ऐसे वचन विभीषण ने रावणसे कहे, हे प्रभो! आपकी कीर्ति कुंदके पुष्पसमान उज्वल महाश्रेष्ठ इन्द्र समान पृथ्वीपर फैल रही है। वह परस्त्री के निमित्त यह कीर्ति क्षणमात्र मे क्षय हो जायेगी। इसलिये हे स्वामी! हे परमेश्वर! हमारेपर प्रसन्न हो, शीघ्रही सीताको रामके पास भेजो, इसमे कोई दोष नहीं, केवल गुण ही है। सुख रूपी समुद्रमे आप निश्चिंत होकर ठहरो। हे विचक्षण! जो न्यायरूप महाभोग हैं, वे सब आपके स्वाधीन है। श्रीराम यहाँ आये हैं, वे बडे पुरुष है, आपके समान है। सो जानकी को उनके पास भेज दो। सभी प्रकार से अपनी वस्तु ही प्रशंसा योग्य है, दूसरे की वस्तु यशको नाश करती है। यह वचन विभीषण के सुन इन्द्रजीत रावण का पुत्र पिताके मनकी बातको जानकर विभीषण से कहा हे मानी! तुमको किसने पूछा है, किसने अधिकार दिया है, जिससे इस प्रकार उन्मत्त के समान कह रहे हो, तुम अत्यन्त कायर हो, दीन लोगों की तरह युद्ध से डरते हो, तो अपने घर के कोने में बैठे रहों। ऐसी बातों से क्या? ऐसी दुर्लभ स्त्रीरत्न प्राप्तकर अज्ञानी की तरह कौन छोडेगा? तुम क्यों वृथा बोल रहे हो। जिस स्त्रीके लिये सुभटपुरुष संग्राममें तीक्षण खड्ग की धारा से महाशत्रुओं को जीत, वीरलक्ष्मी भुजाओं से प्राप्त करते हैं। उनके क्या कायरता? यह वचन इन्द्रजीत के सुनकर तिरस्कार करता हुआ विभीषण बोला, रे पापी! अन्याय मार्गी! क्या तू पुत्र होकर शत्रु है, तुझे शीत वायु लगी है, अपना हित नहीं जानता, शीतकी वेदना का

उपाय छोड स्वयं शीतल जलमें प्रवेश करेगा तो अवश्य मरेगा। और घर में आग लगे, और उस अग्निमें सूखी लकडियाँ डाले, तो अग्नि शांत कैसे होगी, अहो! मोहसे तू दुखी है, तेरी चेष्टा विपरीत है, यह स्वर्ण समान लंका, देवो के विमान समानघर, लक्ष्मण के तीक्षण वाणों से चूर्ण न हो जाये, उसके पहले महासती जनकसुता पतिव्रताको रामके पास भेज दो। सभी लोगों के कल्याण के लिये शीघ्रही सीताको भेजना योग्य है। तेरा पिता कुबुद्धि यह सीता नहीं लाया है, बल्कि राक्षसरूपी सर्पोंका बिल यह लका, उसमें विष नाशक जडी लाया है। सुमित्रा का पुत्र लक्ष्मण, वह क्रोधित सिंहके रूप हुआ है, उसे तुम गजसमान दूर करने मे समर्थ नहीं। उसके हाथ मे सागरावर्त धनुष और आदित्यमुख अमोघबाण और उनके भामडल जैसा सारथी सो लोक मे कैसे जीता जायेगा। और बडे बडे विद्याधरो के अधिपति राम आकर मिले। महेन्द्र, मलय, हनुमान, सुग्रीव, त्रिपुर, नल नील इत्यादि अनेकराजा और रत्नद्वीप का स्वामी बेलधर, संध्या, हरद्वीप, आकाशतिलक, केली, किल, महाबलवान विद्या के वैभव से पूर्ण अनेक विद्याधर आकर मिले हैं। इस प्रकार के कठोर वचन विभीषण कह रहा था, तब विभीषणपर महाक्रोधित होकर म्यान से खड्ग निकाल रावण मारने को आया, तब विभीषणने भी क्रोध के आवेश में, रावण से युद्ध करने के लिए वज्रमयी स्तम्भ उखाडा, ये दोनों भाई उग्रतेज के धारक युद्धको तैयार हुये। तब मंत्रियोंने समझाकर मना किया, विभीषण अपने घर गया, रावण अपने महल में गया। पुनः रावणने कुम्भकरण इन्द्रजीत को कठोर शब्दों से कहा यह विभीषण मेरे अहित में तत्पर है, वह दुरात्मा है, उसे मेरी नगरी से निकाल दो। यह लंका में रहे और मैं उसे नहीं मारूँ तो मेरा जीवन निरर्थक है। यह बात विभीषण ने सुनकर कहा मैं क्या रत्नश्रवा का पुत्र नहीं? ऐसा कहकर लंका से निकला, महा सामन्तों सहित तीसअक्षोहिणी दल लेकर राम के पास चला। (तीस अक्षोहिणी दलका प्रमाण) छहलाख छप्पनहजार एकसौ हाथी, इतनेहीरथ, उन्नीसलाख अडसठहजार तीनसौ तुरंग (घोडे) और बत्तीसलाख अस्सीहजार पॉचसौ पयादे। विद्युतधन, इन्द्रवज्र, इन्द्रप्रचंड चपल, उद्धत एक अशनि सम्धात, काल, महाकाल ये सब विभीषण सम्बन्धी परम सामन्त अपने कुटुम्ब समुदाय सहित शस्त्रों से मंडित राम के समीप चले। नानाप्रकार के वाहनों से युक्त आकाशमार्ग से सर्व परिवार सहित हंसद्वीप में आये, उसद्वीप के पास मनोज्ञ स्थान देख जलके किनारेपर सेना

सहित ठहरे। जैसे नन्दीश्वर द्वीप में देव ठहरते हैं। विभीषण को आया सुन वानरवंशियों की सेना कम्पित हुई, लक्ष्मण ने सागरावर्त्त धनुष और सूर्यहास खड्ग की तरफ देखा, राम ने वज्रावर्तधनुष हाथमें लिया, और सभी मंत्री मत्रणा करने लगे, जैसे सिह से हाथी डरते, ऐसे विभीषण से वानरवंशी डरे, उसी समय विभीषण ने राम के निकट बुद्धिमान द्वारपाल को भेजा। द्वारपाल राम के पास आकर हाथ जोड नमस्कार कर मधुरवाणी से कहता है, हे देव! इन दोनो भाईयों में जबसे रावण सीताको लेकर आया है, तब से ही विरोध हुआ हैं, आज बिलकुल बिगड गई। इसलिए विभीषण आपके पास आये है। आपके चरणों में नमस्कार पूर्वक विनती की है। कि आप शरणागत प्रतिपालक हो, मैं आपका भक्त आपके चरणो मे आया हूँ, जो आपकी आज्ञा होगी वही मैं करूँगा, आप कृपा करने योग्य है। यह द्वारपाल के वचन सुन रामने मंत्रियों से विचार विमर्श किया, तब राम से सुमतिकात मन्त्री ने कहा, कदाचित रावण ने कपटकर भेजा हो, तो इसका क्या विश्वास? राजाओं की अनेक चेष्टायें होती है। और कदाचित कोई बातसे दोनो भाईयो मे कलुषता हुई हो, और पुनः मिल जाये तो कुल और जल इनको मिलने का कोई आश्चर्य नहीं। तब महाबुद्धिमान मतिसमुद्र बोला इन दोनो भाईयों में विरोध हुआ, यह बात सबसे सुनते है, और विभीषण महाधर्मात्मा नीतिवान शास्त्रो का ज्ञाता, दयावान है। और मित्रता मे दृढ है। और भाई की बात कहते हैं, तो भाई से कोई मतलब नहीं, कर्म का उदय जीवो को अलग अलग होता है। इस विषय में एक कथा है सो सुनो। एक गिरी और गौभूत ये दोनों भाई ब्राह्मण थे, वहाँ एक राजा सूर्यमेघ रानीमतिक्रिया उन्होने दोनों भाईयों को पुण्यकी इच्छासे चावल मे छिपाकर गुप्तरूप से सुवर्णका दान दिया, वह गिरी कपटी ने भात मे सुवर्णजान गोभूतको उछलकर मारा और दोनोका स्वर्ण ले लिया, लोभसे भाईको मारा और भी एक कथा सुनो कौशबी नगरी मे एक वृहदधन गृहस्थ, उसके पूरविदा स्त्री, उनके अहिदेव महिदेव पुत्र, पिता को मरने के बाद दोनों भाई धन कमाने के लिये समुद्र से पार होने के लिये जहाज मे बैठे। तब इन्होंने सब धन बेचकर एकरत्न खरीद लिया। उसरत्न को जो भाई हाथ में लेता उसके यह भाव होते कि मैं दूसरे भाई को मारूँ। सो परस्पर दोनों भाईयो के परिणाम खराब हुये, तब पुनः घर आये और वह रत्न माता को दिया, तो माता के भी यही भाव हुये। कि दोनों पुत्रो को विषदेकर मार दूँ। तब इसने सब बात कही, इस रत्नके कारण

मेरेभाव ऐसे हुये कि मैं तुम दोनों को मारूँ। तब माता और दोनों भाईयों ने उसरत्न से मोह छोडकर कालिन्दीनदी में डाल दिया। उस रत्न को एकमछली ने निगल लिया। उसी मछली को धीवर ने पकडी, वही मछली अहिदेव महिदेव को बेच दी, उनकी बहिन मछली को काट रही थी उसमें वह रत्न निकला, उसके भी रत्न को लेते ही यही भाव हुये कि माँ और दोनों भाईयो को मारूँ। तब सबने मिलकर रत्न को चूर डाला, माता बहिन दोनों भाई संसारसे विरक्त होकर जिनदीक्षा को धारण किया। इसीलिये धनके लोभसे भाईयों में भी बैर होता है, और ज्ञान होनेपर बैर मिट जाता है। देखो गिरीने लोभ के कारण भाई को मारा। और अहिदेव महिदेव के बैर मिटा। महा बुद्धिमान विभीषण का द्वारपाल आया है, उसको मधुर वचन कहकर विभीषण को बुलाओ। तब द्वारपाल को प्रेम से कहा, और विभीषण को आदर से बुलाया।

विनयवान विभीषण श्रीराम के समीप आया, और राम विभीषण से आदर पूर्वक मिले, विभीषण विनती करने लगा, हे देव! हे प्रभो! निश्चय से इस जन्म में आपही मेरे प्रभु हैं, श्रीजिननाथ तो इस भव व परभव के स्वामी है, और रघुनाथ इस लोकके स्वामी है इस प्रकार प्रतिज्ञा की। तब श्रीराम ने कहा, तुझे नि·संदेह लंका का अधिपति बनाऊँगा। सेनामे विभीषणके आने का उत्साह हुआ। और उसी समय भामण्डल भी आया। कैसाहै भामण्डल? अनेक विद्यायें सिद्ध हुई हैं उसको। विजयार्धपर्वत का अधिपति, जब भामण्डल आया, तब श्रीराम लक्ष्मणादि सभी महाहर्षित हुये। भामण्डल का अति समान किया, आठ दिन हंसद्वीप में रहे। पुनः लका की तरफ चले, अनेकरथ, पवन से भी अधिक तेजसे चलने वाले घोडे इत्यादि महासेना सहित श्रीरामने प्रयाण किया। सभी विद्याधर आकाश मार्गसे रामके साथ चले, सबसे आगे वानरवशी हुये। जहाँ रणक्षेत्र का स्थान है वहाँ गये। सग्रामभूमि बीसयोजन चौडी है, लम्बाई से अधिक विस्तार विशेष है, वह युद्धभूमि मानो मृत्युकी भूमि ही है, इस सेना के हाथी, घोडे, पयादे, और विद्याधरों के वाहनादि के शब्दों से युद्धभूमि गुंजायमान हुई। यह सुनकर रावण हर्षको प्राप्त हुआ। मन में सोचा कि बहुत दिनोंमे मेरे रणका उत्साह हुआ है, सभी सामन्तों को आज्ञा दी कि युद्ध के लिये तैयार होओ। आज्ञा प्रमाण सभी योद्धा आये और एक मन से सभी कार्य में लीन हुये। अनेक नगर के राजा आये, भास्करपुर, पयोधपुर, कंचनपुर, व्योमपुर, कंपनपुर, विशालपुर, अश्वपुर, रत्नपुर, इत्यादि नगरों के

बडे, बडे विद्याधर अपनी सेनाओ सहित रावण के पास आये। रावण ने राजाओं का सम्मान किया, शस्त्र वाहन बखतरादि युद्धकी सामग्री सभी राजाओं को दी, चारहजार अक्षोहिणीदल रावण के पास हुआ। और दोहजार अक्षोहिणीदल राम के पास हुआ। हजारअक्षोहिणी दल भामंडल का और हजार अक्षोहिणी दल सुग्रीव का। इस प्रकार सुग्रीव और भामडल दोनों मुख्य अपने मत्रियों सहित राम लक्ष्मण से मत्रणा कर युद्ध को चले। अनेक वंशोके जन्में, नाना जातियों के अनेकगुण क्रियाओ से प्रसिद्ध, कई भाषाओं के बोलने वाले विद्याधर श्रीराम रावण के पास एकत्रित हुये। गौतमस्वामी ने राजाश्रेणिक से कहा, हे राजन्! पुण्य के प्रभावसे महापुरुषों के शत्रुभी मित्रहोते है, और पुण्यहीन जीवों के मित्रभी शत्रुहो जाते है। इस असार ससार मे जीवोकी विचित्र गति जानकर यह चिन्तवन करना चाहिये, कि मेरे भाई सदा सुख देने वाले नहीं, तथा मित्र परिवार सभी सुख देने वाले नहीं है, कभी मित्र शत्रु हो जाते है कभी शत्रु मित्र हो जाते है। ऐसे विवेकरूपी सूर्यके उदयसे हृदय मे प्रकाश करो, बुद्धिमानो को सदा धर्म एव पुण्य का चिन्तवन करना चाहिये उससे मनोवांच्छित फल को पाते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविराचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे विभीषण का रामसे मिलन और भामडल का आगमन वर्णन करनेवाला पचपनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-56

राम और रावण की सेना का प्रमाण वर्णन

अथानंतर राजाश्रेणिक ने गौतमस्वामी से पूछा कि हे प्रभो! अक्षोहणी का प्रमाण क्या है? तब इन्द्रभूति गणधर कहते हैं, हे मगध देश के राजन! अक्षोहणी का प्रमाण सुनो, आगम मे आठ भेद बताये है, प्रथम भेद पत्ति, दूसरा भेद सेना, तीसरा भेद सेनामुख, चौथा गुल्म, पॉचवां वाहिनी, छटा पृतना, सातवॉ चमू, आठवॉ अनीकिनी। अब इनके यथार्थ भेद सुनो, एकरथ, एकगज, पॉंचपयादे, तीनतुरंग, इनका नाम पत्ति हैं। तीनरथ, तीनगज, पन्द्रहपयादे, नवतुरंग, इनका नाम सेना हैं। नवरथ, नवगज, पैंतालिस-पयादे, सत्ताईस तुरग, इनको सेनामुख कहते है। सत्ताईसरथ, सत्ताईसगज, एकसौपैंतीस पयादे, इक्यासी अश्व इसे

गुल्म कहते हैं। इक्यासीरथ, इक्यासीगज, चारसौपॉच पयादे, दोसौ तैंतालिस अश्व, इसे वाहिनी कहते हैं। दोसौ तियालिसरथ, दोसौ तियालिस गज, बारहसौ पन्द्रह पयादे, सातसौ उनतीस घोड़े इसे पृतना कहते हैं। सातसौ उनतीस रथ, सातसौ उनतीस गज, छतीस सौ पैंतालिस पयादे, इक्कीस सौ सत्तासी तुरंग, इसे चमू कहते है। इक्कीस सौ सत्तासी रथ, इक्कीस सौ सत्तासी गज, दशहजार नौ सौ पैंतीस पयादे, पैसठ सौ इकसठ तुरंग इसे अनीकिनी कहते हैं। यह पत्तिसे लेकर अनीकिनी तक आठ भेद है। यहॉं तक तो तिगुने तिगुने बढे। दश अनीकिनी की एक अक्षोहिणी सेना होती है। उसका वर्णन रथ-इक्कीसहजार आठसौ सत्तर, गज-इक्कीसहजार आठसौ सत्तर पयादे-एकलाख नौहजार तीनसौ पचास, घोडे-पैसठहजार छहसौदश, यह एक अक्षौहिणी का प्रमाण है। ऐसी चारहजार अक्षोहिणी सेना सहित रावण अतिबलवान था। फिर भी किहकधापुर के स्वामी सुग्रीव की सेना श्रीरामकी भक्ति से निर्भय होकर रावण के सन्मुख हुई। श्रीरामकी सेना को निकट आई जान, अनेकपक्ष के लोग परस्पर चर्चा करने लगे, कि देखो रावणरूपी चन्द्रमा विमानरूपी नक्षत्रो का स्वामी, शास्त्रों में प्रवीण, वह परस्त्री की इच्छारूपी बादलो से ढका हुआ है। रावण के महारूपवान अठारह हजार रानियॉं। उनसे तो तृप्त नहीं हुआ, और देखो एकसीता के कारण क्षयहोता है? राम की सेनामे पवनका पुत्र हनुमान महाभयकर दैदीप्यमान, इस प्रकार कोई तो रामके पक्षके योद्धाओ के यशका वर्णन करते रहे, और कोई समुद्र से भी गम्भीर रावणकी सेनाका वर्णन करते रहे। कोई दण्डक वनमे खरदूषण एवं लक्ष्मण का युद्ध हुआ था, उसका वर्णनकर रहे थे। अतिबलवान लक्ष्मणने खरदूषणको मारा उनका बल क्या तुम नहीं जानते हो, तब किसी ने कहा कि राम लक्ष्मण की क्या बात वे तो महापुरुष हैं एक हनुमान ने कितने काम किये, मन्दोदरी का तिरस्कार, सीताको धैर्य दिया, और रावण की सेना को जीत लकामें विघ्न किया, कोट दरवाजे तोडे इस प्रकार अनेक तरह की चर्चा करने लगे। तब एक सुबक्र नामा विद्याधर ने हँसकर कहा, कि कहॉं समुद्र समान रावण की सेना, और कहॉं गाय के खुर समान बानरवंशीयो का बल? रावण इन्द्रको पकड लाया और अनेको को जीतनेवाला वह बानरवंशीयो से कैसे जीता जायेगा? मनुष्यों का सरताज चक्रवर्ती का नाम सुनके कौन धैर्य रखता है। उसका भाई कुभकरण महाबलवान त्रिशूलका धारी युद्धमें प्रलयकाल की अग्नि समान पराक्रमी उसको कौन जीत सकता है। चन्द्रमा समान उसके छत्र को देखकर शत्रुओ की

सेना रूपी, अंधकार नाश होता है। उसके तेज के सामने कौन ठहर सकता है। जो मरना चाहते हैं, वही उसके सन्मुख होंगे। इस तरह राग द्वेष रूपी वचन परस्पर लोग कहने लगे। दोनों सेनाओं में तरह तरह की चर्चायें होती रही। जीवों के परिणाम अनेक प्रकार के है, राग द्वेषके प्रभावसे यह जीव अपनेही कर्म उत्पन्न करता है, जो जैसा कर्मका उदयहो उसकी वैसीही प्रवृति होती है। जैसे सूर्यके उदयमें पुरुषार्थी जीव अनेककार्य करते हैं, वैसेही कर्मके उदयमें जीवोंके कईप्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं। पुण्य कार्य करने से सर्व सुखकी प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे दोनोकटककी सख्याका प्रमाणवर्णन करनेवाला छप्पनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-57

रावण का युद्ध के लिये सदल-बल प्रयाण

अथानंतर पर सेना को समीप आई जान योद्धा प्रसन्न होकर युद्ध के लिये तैयार हुये। योद्धा अपने घरो से विदा होकर सिह के समान लंका से निकले। कई सुभटो की नारियॉ रणसंग्राम का वृतान्त जान अपने पतिके हृदयसे लग कहने लगी, हे नाथ! आपके कुल की यही परम्परा है, जो रण संग्राम से कभी पीछे न हटे। और कदाचित् तुम रणसे भागकरके आओगे तो मै सुनते ही प्राण त्याग करूँगी। क्योंकि लोग कायरों की स्त्रयो को धिक्कार शब्द कहते है। इस समान और कष्ट क्या? जो तुम छातीपर घाव लगाकर अच्छा कार्यकर आओगे तो वह घाव ही आप के आभूषण है। बखतर टूट गया, अनेक योद्धा स्तुति करते, इस प्रकार आपको मैं देखूँगी तो अपना जीवन सफल मानूंगी। और सुवर्ण के कमलो से जिनेश्वर की पूजा कराऊँगी। जो महायोद्धा रणमें मृत्युको प्राप्त होते उनका मरण ही धन्य है। और जो युद्धसे भागकर आते हैं उनका जीवन ही मरण समान है। कोई योद्धानी अपने पतिसे लिपटकर कहने लगी जो तुम अच्छे कार्यकर आओगे तो हमारे पतिहो अगर भागकर आओगे तो तुम्हारे हमारे कोई सम्बन्ध नहीं। कोई अपने पतिसे कहती है, आपके पुराने युद्धके घाव अब ठीक हुये हैं, अब नये घाव लगे तो शरीर की शोभा है। वह दिन कब होगा जो तुम वीरलक्ष्मी के

वर प्रफुल्लित वदनसे आओ तो हम तुमको हर्ष से देखे। आपकी हार हम खेलमें भी नहीं देखसके तो युद्धमे कैसे देखें। कोई योद्धानी नई थी परन्तु पतिको संग्राममें जाते देख प्रसन्न हुई। कोई स्त्री मानके कारण पति से अनबन थी तो पतिको रणमें जाते देख मान छोड पति के गले लगकर अति स्नेह दर्शाया और रण योग्य शिक्षा दी। कोई क्षत्राणी अपने पतिके वक्षस्थल में अपने नखका चिन्हकर होनहार शत्रुओं के घातको दर्शाती रही। इस तरह अनेक रानियॉ योद्धानियॉ अपने प्रीतमों से स्नेहकर रण में दृढ करने लगी। महा संग्राम में जाने वाले योद्धा अपनी प्राण बल्लभाओं से कहते हैं। नर वही श्रेष्ठ है, जो रणमें प्रशंसा प्राप्त करते, जो युद्ध मे मरण करते, शत्रुओं के घाव बाण सहते, उनकी शत्रु भी कीर्ति गाते है। पुण्यके उदय बिना ऐसा सुभटपना नहीं होता, हाथियों को विदारने वाला नरसिह को जो हर्ष होता है, वह कहने में कौन समर्थ है। हे प्राण प्रिये! क्षत्रियों का यही धर्म है, जो कायरो को, शरणागत को न मारे और न मारने दे। जो भाग जाता एवं जिसके पास आयुध नहीं हो उससे युद्ध नहीं करे। बाल वृद्ध दीनको छोड हम योद्धाओ से लडेगें। हम युद्ध मे विजयकर तुमसे आकर मिलेंगे। तब तक तुम हर्ष पूर्वक रहना। ऐसे योद्धा अपनी अपनी स्त्रीयो को दिलासा देकर संग्राम के लिये घर से रणभूमि की तरफ निकले। कोई क्षत्राणी चलते हुए पति के कंठ में दोनों भुजाओ से लिपट गई, कोई क्षत्राणी, बखतर पहने पति के अग से लगी तब शरीर का स्पर्श नहीं हुआ तो महादुखी हुई। कोई स्त्रीवाची कवचपहने पति को देख ईर्षाकरने लगी कि हमको छोड दूसरी कौन स्त्री उनके हृदय से लगी है, तब पतिने प्रियाको अप्रसन्न जान कहा कि हे प्रिय! यह आधा वक्तर है स्त्री नहीं। तब पतिके शब्द सुन हर्षित हुई। कोई पति के साथ पीछे पीछे जाने लगी, पतिके रणकी अभिलाषा से इनकी ओर देखा नहीं। रणके बाजे बजे, सो योद्धाओं का मन रणभूमि मे, और स्त्रीयो से विदा होना, सो दोनों तरफ योद्धाओं का मन झूले मे झूलने लगा। रोतानियो को छोड रोवत चले तो उनकी स्त्रीयो ने ऑसू नहीं निकाले, ऑसू अमगल के सूचक है। कोई युद्धमें जानेकी शीघ्रता से वखतर भी नहीं पहना और जो हथियार हाथ में आया वही लेकर चले। किसी योद्धा को हर्षसे पुराने घाव फटकर रुधिर बहने लगे। किसीने नया कवच पहना और शीघ्रता से चले। कोई स्त्रीयॉ अपने पति वियोगके दुख से सेजपर सो गई। सबसे पहले लका से हस्त प्रहस्त राजा युद्ध के लिये निकले, हाथियो के रथपर चढे, रावण

को बिना पूछे ही निकले, यद्यपि स्वामी की आज्ञा के बिना कार्य करना दोष है, फिर भी बिना आज्ञा स्वामीका कार्यकरना महागुण है। मारीच, स्वयंभू, शम्बू, शूक, चारण, मकर, वज्रघोष, कुम्भ, माल्यवान, जम्बूमाली, महाबलादि योद्धा शेर के रथपर बैठकर निकले। और वज्रोदर, शक्रधनु, चन्द्र, चन्द्रनख, महामाली, कनक, इत्यादि अनेक राजा व्याघ्र के रथपर चढकर चले। कोई कहता है मैं आगे चलूँ। अनेको योद्धा तेज तुरंग पवन समान रथोपर बैठकर निकले, कोई हाथियो के रथ से चले। गौतमस्वामी ने राजाश्रेणिक से कहा, हे राजन्! कहाँ तक सेनाओ के नाम कहे? सबसे अग्रेसर अढाई करोड निर्मल वंश के उत्पन्न हुये राक्षसवश के राजकुमार इन्द्र समान पराक्रमी युद्ध के लिये निकले। महा बलवान मेघवाहन, इन्द्रजीत, कुम्भकरण, ज्योतिप्रभ नाम के विमान मे त्रिशूल का आयुद्धले कर निकले। रावण भी पुष्पकविमान मे बैठ इन्द्रसमान पराक्रमी सेनाको आकाशमे आच्छादित करता हुआ देवों पुनीत शस्त्रों को लेकर अनेक सामन्तो सहित लका से निकला। कोई रथ पर तथा तुरग, हाथी, सिह, बैल, भैसा, ऊँट, भेडिया, मृग, अष्टापद, मगरमच्छ, पक्षी आदि का विद्या से अनेक रूपकर देवरूपी वाहनोपर चढकर अनेक योद्धा रावण के साथ चले।

अथानतर रावण को, भामंडल और सुग्रीव पर महाक्रोध, सो राक्षसवशी इनसे युद्ध करने आये। रावण को प्रयाण करते समय अनेक अपशकुन हुये। दाहिनी तरफ शल्य कहो, मडल को बॉधकर भयानक शब्द करती युद्ध को रोक रही है। गृद्ध पक्षी भयकर अपशब्द करते हुये आकाश मे भ्रमण करते, मानो रावणकी मृत्यु बताते है। औरभी अनेक रोने आदि के अपशकुन हुये। रावणादि सभी पडित सभी शास्त्रो के ज्ञाता थे फिर भी शूरवीरताके मानसे, महासेना सहित सग्राम के लिये निकले, कर्मो के उदय से जीवो का जब काल आता है, तब ऐसा ही कारण होता है। कालको इन्द्रभी दूर करने मे समर्थ नहीं और की क्या बात। वे राक्षस वंशी योद्धा बडे बडे बलवान युद्ध मे तत्पर अनेक वाहनो पर चढे, अनेक शास्त्रों को लेकर गये, तब अनेक अपशकुन हुये। तो भी नहीं गिने। निर्भय होकर रामकी सेनाके सन्मुख आये। पापोके बढनेसे पुण्यक्षीण हो जाता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रावणकी सेना लकासे निकली युद्धकेलिये आनेका वर्णन करनेवाला सत्तावनवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व–58

युद्ध में हस्त-प्रहस्त के मरण का वर्णन

अथानंतर समुद्र समान रावणकी सेनाको देख नल नील हनुमान जामवन्तादि अनेक विद्याधर रामके हित के लिये, राम के कार्य में तत्पर, महाउदार शूरवीर अनेक हाथीयों के रथ चढ कटक से निकले। महेन्द्र, रतिवर्द्धन, भानुमंडल, अनुधर, शर्वद, शरभ, इत्यादि विद्याधर शेर के रथपर बैठकर निकले, कोई हाथियों के रथ, कोई घोडों के रथ, अनेक राजा, महाराजा, विद्याधर, क्षत्रिय अनेक वाहनोंपर चढकर निकले। कई राजा हनुमान के साथ निकले, और विभीषण रावण का भाई रत्नप्रभ विमान पर चढ़ा, श्रीराम का हितकारी अतिप्रशसनीय हुआ। राम लक्ष्मण सुग्रीव हनुमान हंस विमानपर बैठकर निकले। राम के सुभट महामेघमाला समान अनेक वाहनोपर चढ लका के सुभटों के साथ युद्ध करने आये। प्रलयकाल के मेघ समान भयंकर झझा, भेरी, मृदग, कम्पाल, इत्यादि अनेक बाजे बजे, सिंह के, हाथियों के, भैंसो के, ऊँटों के, पक्षियों के, मृगों के, शब्दो से दिशाये गुजायमान हुई, जब राम रावण की सेना का आमना सामना हुआ, तब सभी लोग जीवन के सन्देह को प्राप्त हुये, पृथ्वी एव पर्वत कम्पित हुये। योद्धा मानके भरे दोनों कटक अतिप्रबल देखे नहीं जाते। दोनों सेनाओं मे युद्ध होने लगा, सामान्य शस्त्र करोत कुठार खड्ग शेल गदा शक्ति बाण इत्यादि शस्त्रो से परस्पर युद्ध हुआ। योद्धा योद्धाओ को आवाज लगाकर बुलाते रहे, एक दूसरे पर योद्धा गिरते रहे, शीघ्रता से दौडते रहे, पर सेना मे प्रवेश करते रहे, ऐसे परस्पर महायुद्ध हुआ। लंका की सेना ने बानरवंशियों को दबाया, जैसे शेर गज को दवाये। फिर वानरवंशियों की प्रबल सेना राक्षसों की सेना को मारते रहे और अपनी सेना को धैर्य बंधाया। लंकाकी सेनाको दबी देख महायोद्धा हस्त प्रहस्त हाथियों के रथपर चढ बानरवंशियों पर दौडे और अपने लोगों को धैर्य बधाया और कहा, हे सामन्तो! भय मत करो। हस्त प्रहस्त दोनों महातेजस्वी वानरवंशियों के योद्धाओं को भगाया, तब वानरवंशियों के नायक शूर वीर सुग्रीव के चाचा के पुत्र नल नील महाभयंकर क्रोधायमान होकर हस्त प्रहस्त से युद्ध करने लगे, दोनों तरफ के अनेक योद्धा मरे, नलने उछलकर हस्तको मारा और

नीलने प्रहस्तको मारा, जब ये दोनों मरगये, तब राक्षसो की सेना शिथिल हो गई। गौतमस्वामीने कहा, हे राजन्! सेना के लोग सेनापति को देखते है, तब तक रणमें ठहरते है, सेनापति के मरते ही सेना बिखरती है। जैसे माला के टूटते ही दाने बिखर जाते है। पुण्य अधिकारी बडे बडे राजा सभी बातों में पूर्ण हैं, फिर भी बिना प्रधान के कार्य की सिद्धि नहीं, प्रधान पुरुषोंके योगसे ही मनवांछित कार्य की सिद्धि होती है। महापुरुषों के संयोगबिना सामान्य पुरुषोकी शोभा नहीं, जैसे राहुके योगसे सूर्यकी किरणेमदहो जाती है। पुण्य के योगसे सभी सुख साधन अनायास प्राप्त होतें हैं। पुण्यबिना सबनष्ट हो जाते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषा वचनिकामे हस्त प्रहस्त के मरणका वर्णनकरनेवाला अट्ठावनवापर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-59

हस्त-प्रहस्त, नल-नीलके पूर्वभव का वर्णन

अथानंतर राजाश्रेणिक ने गौतमस्वामी से पूछा, हेप्रभु! हस्त प्रहस्त जैसे सामंत विद्यामे प्रवीण थे, बडा आश्चर्य है नल नील ने कैसे मारे? इनके पूर्वभव का बैर था, या इसीभव का? तब गणधरदेव कहनेलगे—हे राजन्! कर्मोसे बधे ससारी जीवोकी कई योनियॉं है। पूर्वकर्म के कारण यही परम्परा हैं, जिसने जिसको मारा हो, वह उसको अवश्य मारेगा। और जिसने जिनको छुडाया हो, उसको वह छुडायेगा। एक कुशस्थलनगर वहॉं दोभाई निर्धन एकमाता के पुत्र इधक ओर पल्लव ब्राह्मण खेतीका कार्य करते। स्त्री पुत्रादि परिवार दयावान साधुओ की भक्ति में तत्पर वहॉं एकजैनी मित्रके प्रभावसे दानादि धर्मके धारी हुये। और एकदूसरा निर्धन युगल महानिर्दयी मिथ्यामार्गी थे, राजाके यहॉं दान बटता था, तब विप्रोंमें परस्पर कलह हुआ, तब इंधक और पल्लव को इनदुष्टोने मारा, सो दानके प्रभावसे मध्यम भोगभूमि में जन्म लिया। वहॉं दोपल्य की आयु भोगकर मरे, और दोनों देव बने। और वहक्रूर इनको मारनेवाले अधर्मी पापी मरकर कालिंजर नामके वनमें चूहा हुये। मिथ्यादृष्टि साधुओं के निदंक पापी

कपटी उनकी ऐसी ही गति होती है। तिर्यचगति में भ्रमणकर मनुष्य तापसी हुये, फल पती का भोजनकर तीव्र तपसे शरीर को कृश किया। कुज्ञान के अधिकारी दोनों मरकर विजयार्ध की दक्षिणश्रेणी मे अरिंजयपुर वहाँ का राजा अग्निकुमार, रानीअश्विनी उसके दो पुत्र जगतप्रसिद्ध रावण के सेनापति हुये। और वह दोनों भाई इंधक ओर पल्लव देवलोकसे चयकर मनुष्य हुये। पुनः श्रावक के व्रतपाल स्वर्गमें उत्तम देव हुये। और स्वर्ग से चयकर किहकधापुर में नल नील दोनो भाई हुये। पहले भवमे हस्त प्रहस्त के जीवने, नल नीलके जीवको मारेथे। इसीलिये अब नल नीलने हस्त-प्रहस्त को मारा। जो जीव जिसको मारे, वह उसको मारेगे। जो जिसका पालन करता, वह उसका अवश्य पालन करेंगा। जो जिससे उदासीन होगे, वह उनसे उदासीन होंगे। जिनको देखकर बिना कारणसे क्रोध उत्पन्न होता है, तो जानना कि यह पूर्वभव का शत्रु है। किसीको देखकर प्रेम होता है, तो जानना कि पूर्वभव का मित्र है। जो जलमे जहाज फट जाये और मगर मच्छादि दुखदे, पृथ्वीपर म्लेच्छ बाधा करते वह सब पापका फल हैं। हाथी, तुरग एव बडे बडे राजा, सामत इत्यादि अपारसेना सहित जो राजा है, उसको भी पुण्यके उदयबिना युद्धमें उसकी रक्षा कोई नहीं कर सकता। चाहे जगलमें हो, या नगरमें हो, कहींभी कोई साथी नहीं हो, वहाँ तप, दान पुण्यही जीवकी रक्षा करता है। पुण्य बिना देव, बधु परिवार कोई किसीकी रक्षा नहीं करता हैं। और प्रत्यक्ष देखो धनवान शूरवीर कुटुंब का स्वामी सभी परिवारके मध्यमे मरण करते, फिर भी कोई बचाने वाला रक्षा करने वाला नहीं हैं। पात्रदान, व्रत, शील, सम्यक्त्वसे जीवोंकी रक्षा होती हैं जिसने दयारूपी दानका पुण्य नहीं प्राप्त किया, वह बहुतकाल जीवनको चाहते हैं, तो कैसे प्राप्त होगा? जीवो को तपके बिना कर्मोका नाश नहीं होता है, ऐसा जानकर जो ज्ञानी है, उनको शत्रुओपर भी क्षमा करनी चाहिये। क्षमा समान और तप नहीं हैं। इस जीवका हित-अहित केवल कर्मोंके आधीन है, कर्मही सुख दुख के कारण है, ऐसा जानकर जो बुद्धिमान पुरुष हैं वह विषय सम्बन्धी सुख दुख के कारण अन्य पुरुषोंपर राग द्वेष के भाव नहीं करते हैं। अंधकार सहित जो मार्ग उसमें नेत्रवाला पुरुष पृथ्वीपर गिरते हैं, और सूर्यके प्रकाशसे मार्ग दिखता है, तब नेत्र वाले सुख से गमन करते है। ऐसे मिथ्यात्वरूपी अंधकारसे प्रशस्तमार्ग नहीं दिखता तब नरकादि मे जन्म लेते हैं।

और जब ज्ञानरूपी सूर्यका उदय हुआ तब सुख से अविनाशीपुर में जाकर पहुँच जाते है। इसलिये मिथ्यात्वरूपी अधकारको नाशकर सम्यक्त्वरूपी प्रकाश को प्राप्त करेगे तो कभी न कभी मोक्ष पहुँच जायेगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषा वचनिका मे हस्त–प्रहस्त नल नीलके पूर्वभव का वर्णन करनेवाला उनसाठवापर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-60

राम-लक्ष्मण को अनेक विद्याओं का लाभ

अथानतर हस्त-प्रहस्त को नल नील ने मारे, यह सुनकर बहुत योद्धा क्रोध से युद्ध के लिये आये, मारीच, सिहजगधन, स्वयभू इत्यादि राक्षसपक्ष के योद्धा सिंह अश्व, रथ चढकर आये, वानरवशीयों को ललकार कर युद्ध किया। मदन, मदनाकुर नन्दन इत्यादि वानरवंशी योद्धा राक्षसो से लडे। उन्होने इनको बुलाया—इन्होंने उनको बुलाया। सन्ताप से मारीच, प्रस्थितसिह से जगधन, विध्न से उद्यान, परस्पर अनेक योद्या युद्ध कर रहे थे। मारीचने सतापको मारा, उद्याननने विध्नको मारा, उस समय सूर्य अस्त हुआ, अपने अपने पतिको प्राणरहित सुन उनकी स्त्रीयॉ रुदन करने लगी, उनकी रात्रि महादीर्घ हुई। दूसरे दिन महाक्रोध से भरे सामन्त युद्ध के लिये आये। वज्राक्ष, क्षुभितार, मृगेन्द्र और विधि इत्यादि राक्षसपक्ष के एव वानरवश के परस्पर महाक्रोध से युद्ध करते रहे, अपने जीवन से निष्पृह होकर। बाहुबली ने मृगारीदमन को बुलाया। शार्दूलने वज्रोदर को घायल किया। क्षितितारी ने संक्रोधको मारा। सम्भूने विशालद्युति को मारा। स्वयंभूने विजयको लोहेके शस्त्र से मारा। विधिने वितापि को गदासे मारा। अनेक योद्धा मरे बहुत देरतक युद्ध चला। राजा सुग्रीव अपनी सेनाको राक्षसोंकी सेनासे बहुत योद्धाओ को दुखी देख, आप महाक्रोध से युद्ध के लिये आये। और अंजना का पुत्र हनुमान हाथियों के रथपर चढ राक्षसों से युद्ध करने लगा। राक्षस योद्धाओं के समूह पवनपुत्र को देखकर जैसे सिंहको देख गायडरे ऐसे राक्षस योद्धा डरने लगे। राक्षस परस्पर बात करने लगे कि यह हनुमान वानरध्वज आज बहुत लोगों की स्त्रीयों को विधवा करेगा। तब हनुमान के सामने माली आया।

मालीको आया देख हनुमानने धनुषबाण लेकर महायुद्ध किया। मंत्रि मंत्रियों से, घोडेके असवार-घोडोंके असवारो से, हाथीके असवार हाथीके असवारोंसे लडे। और हनुमानकी शक्ति से माली पराङ्मुख हुआ। तब वज्रोदर हनुमानसे युद्ध करने लगा। तब हनुमानने वज्रोदरका रथ तोड दिया। तब दूसरे रथपर चढ हनुमान पर दौडा। तब हनुमानने पुन· उसका रथ तोडा, और हनुमानने वज्रोदरको मार दिया। तब हनुमान के सामने महाबलवान रावण का पुत्र जम्बूमाली आया, आते ही हनुमानकी ध्वजा छेदी, हनुमानने उसका बखतर भेदा धनुष तोडा, तब जम्बूमाली ने हनुमान के वक्षस्थल मे तीक्षणबाणो से घाव किया, तब हनुमान ने जाना कि नवीनकमल की डंडीका स्पर्श हुआ। पुन. हनुमान ने चन्द्रवक्र नामका बाण चलाया, तो जम्बूमाली का रथ टूटा और सिह भाग गये। उनके कटककी सेना भयसे व्याकुल होकर रावणकी सेना युद्ध छोड दशो दिशाओं में भागी। तब पवनका पुत्र सबको पैरों से रौदता हुआ, रावण के पासतक पहुँचा। दूरसे रावणको देखा, सिंह के रथपर चढा हनुमान धनुषबाण लेकर रावण के पास गया, रावण सिहो से सेनाको भयभीत देख और हनुमानको कालसमान महादुर्धर जान रावण स्वय युद्ध करने लगा। तब महोदर, रावणको प्रणामकर हनुमान से युद्ध करने लगा। महोदर व हनुमान के महायुद्ध हुआ, उस समय उन सिहो को योद्धाओ ने वश मे किये। सिहवश मे हुये देख सभी राक्षस हनुमान पर आये, तब अजना का पुत्र महासुभट पुण्याधिकारी उन सबको अनेक बाणोंसे रोका, राक्षसों ने अनेकबाण हनुमान पर चलाये, परन्तु हनुमान को चलायमान नहीं कर सके। जैसे दुर्जनों के बाण सयमी को चलायमान नहीं कर सकते। हनुमान को राक्षसों का एकबाणभी नहीं लगा। अनेक राक्षस अकेले हनुमानको घिरा देख वानरवंशी विद्याधर युद्ध के लिये आये। सुषेण, नल, नील, विराधित, जाम्बूनद, महाबल इत्यादि अनेक राजा, कोई नाहर के रथपे, कोई गज, कोई तुरंगके रथपर चढे रावणकी सेनासे युद्ध करने लगे। तब वानरवंशियो ने राक्षसों की सेना का विध्वस किया। जैसे क्षुधा की वेदना से कायरपुरुष व्रतोको विध्वस करतें है। तब रावण अपनी सेनाको व्याकुलदेख आप स्वयं युद्ध करने आये। उसी समय कुभकरण रावणको नमस्कार कर आप युद्ध को चला, कुभकरण को महाबलवान जान, वानरवंशी व्याकुल हुये, उनको देख चन्द्ररश्मि, रतिवर्दन, अंग, अंगद, कुमुद, रत्नजटी, इत्यादि अनेक योद्धा राम के, कुभकरण से युद्ध करने लगे तब

कुभकरण ने निद्रा नामकी विद्या से सबको वश किया, तब वानरवंशी निद्रा से घूमने लगे। उनके हाथों से हथियार गिर पडे। इन सबको निद्रा के आवेशमे देख, सुग्रीवने प्रतिबोधनी, विद्या प्रकाशी, सो सब वानरवशी प्रतिबोध को प्राप्त हुये। और हनुमान युद्ध करने लगे। कपिध्वजो मे बल का उत्साह हुआ, पुन· युद्ध करने लगे, तब रावणकी सेना हटी, तब रावण स्वयं युद्ध करने आया। तब बडा बेटा इन्द्रजीत ने प्रणामकर कहा।

हे नाथ! हमारे होते हुये आप युद्ध करेगे तो हमारा जन्म निश्फल है, इसलिये आप निश्चित होवें, मै आपकी आज्ञा प्रमाण करूँगा। ऐसा कहकर हाथीपर चढ युद्ध करने लगा। इन्द्रजीत ने आतेही वानरवशियो की सेनाको विह्वल किया। सुग्रीव की सेना में ऐसा कोई सुमट न रहा हो जो इन्द्रजीत के बाणो से घायल नहीं हुआ हो। लोगो ने कहा यह इन्द्रजीत नहीं, अग्निकुमार है या सूर्य है। सुग्रीव और भामडल, ये दोनो अपनी सेना को इन्द्रजीत से दबी देख, स्वय युद्ध करने लगे। वहाँ परस्पर योद्धा एक दूसरे को हुकार कर बुलाने लगे। शस्त्रो से आकाश में अधकार हो गया। सेनाको जीनेकी आशा नहीं, गज से गज, रथ से रथ, तुरंग से तुरग, सामतो से सामन्त, उत्साह सहित युद्ध करने लगे। उसी समय सुग्रीव को पास आया देख, इन्द्रजीत महा शब्दो से शस्त्र जैसे दुर्वचन कहने लगा। हे वानरवशी! पापी, स्वामी द्रोही, रावण जैसे स्वामी को छोड, शत्रु का किकर हुआ है, वह दोनो भाई भूमिगोचरी तेरी रक्षा करेगे। तब सुग्रीव ने कहा, मान के कारण ऐसे वचन वृथा कहकर मानके शिखरपर चढा है। सो अभी ही तेरा माननष्ट करता हूँ। यह सुन इन्द्रजीत ने क्रोधसे धनुषचढा बाण चलाया। और सुग्रीव ने इन्द्रजीत पर चलाये। दोनो महायोद्धा परस्पर बाणोंसे लडते रहे। मेधवाहन ने भामंडल को हुंकारा सो दोनो भिडे। विराधित ने वज्रनक्र से युद्ध किया, विराधित और वज्रनक्र ने चक्ररूपी शस्त्रसे एक दूसरे के बखतर पीस डाले, अग्निके कण उछलकर आकाश से उल्कापात समान गिरने लगे। लंकानाथ के पुत्र ने सुग्रीवपर अनेक शस्त्र चलाये और संग्राम में अटल रहे। तब सुग्रीव ने वज्रदंड से इन्द्रजीत के शस्त्र दूर किये, जिनके पुण्य का उदय हो उनका घात नहीं होता। इन्द्रजीतने हाथीसे उतर सिंह के रथपर चढ सुग्रीवपर मेघबाण चलाया, सम्पूर्ण दिशायें जलरूप हो गई। तब सुग्रीव ने पवनबाण चलाया सो मेघबाण विलायमान हुआ। और इन्द्रजीत का छत्र उडाया, ध्वजा उडाई। मेघवाहन ने भामंडलपर अग्निबाण

चलाया सो भामंडल का धनुष भस्म हुआ, सेना में अग्नि प्रज्वलित हुई। तब भामंडलने मेघवाहनपर मेघबाण चलाया सो अग्निबाण विलायमान हुआ। अपनी सेनाकी रक्षा की। मेघवाहनने भामंडल का रथ तोडा, तब भामंडल दूसरे रथ में बैठ युद्ध करने लगे। मेघवाहन ने तामस बाण चलाया, भामंडल की सेना मे अंधकार हुआ, अपना दूसरा कुछ भी दिखता नहीं। तब मेघवाहन ने भामडलको नागपास से पकडा, तब शरीर पर मायामयी सर्प लिपट गये। जैसे चंदनके वृक्षोंपर नाग लिपटे। तब भामडल पृथ्वीपर पडा। इसी तरह इन्द्रजीत ने सुग्रीव को नागपास से पकडा सो वह भी धरती पर गिरा। तब विभीषण विद्याबल में महा प्रवीण श्रीराम लक्ष्मण को दोनों हाथजोड शीश नमाकर कहने लगे, हे राम महाबाहु! हे लक्ष्मण महावीर! इन्द्रजीत के बाणोसे सभी दिशायें देखो। आकाश और पृथ्वी बाणो से भर गई है। उल्कापात के स्वरूप नागबाणो से सुग्रीव और भामडल दोनों पृथ्वीपर बंधे पडे हैं। मन्दोदरी के दोनों पुत्रो ने अपने दोनों महासुभट पकडे, अपनी सेना के दोनो मूल योद्धा थे वह पकडे गये, तब हमारे जीने से क्या? इनके बिना सेना शिथिल हो गई है, देखो दशो दिशाओ मे लोग भागे जा रहे है। और कुभकर्ण ने महायुद्ध मे हनुमान को पकडा। कुम्भकर्ण के बाणो से हनुमान जरजर हो गये, छत्र उड गये। ध्वजा उड गई। धनुष एवं बखतर टूटा। रावण के पुत्र इन्द्रजीत और मेघवाहन युद्ध मे लगे है। और वे आकर सुग्रीव और भामडल को ले नहीं जाये, उसके पहले ही आप उनको ले आओ। वे दोनो मूर्च्छित है, मै उनको लेने जाऊँ, आप भामंडल और सुग्रीव की सेना निराश्रय होकर भाग रही है, उन्हे रोको, इसप्रकार विभीषण राम लक्ष्मणसे कह रहे थे, उसी समय सुग्रीवका पुत्र अगद चुपके चुपके कुंभकरण के पास गया और उसका उत्तरासन (धोती) नीचे का वस्त्र खींचकर निकाल दिया, तब वह लज्जा से व्याकुल होकर कपडों को पकडने लगा। इतने में हनुमान उनके हाथोंसे निकल गया, जैसे पक्षी पिजरे से निकल जाये। हनुमान और अंगद दोनो एक विमान में बैठे, मानों देवही है। अंगद का भाई अग और विराधित लक्ष्मणसहित सुग्रीव और भामडल की सेना को शाति देकर रोकने लगे, और विभीषण इन्द्र जीत और मेघवाहन के पास गया। विभीषण को आता देख इन्द्रजीत मन मे विचारने लगे कि न्याय से देखे तो हमारे पिता मे और चाचा मे कोई भेद नहीं है, इसलिये चाचा विभीषण से युद्ध करना उचित नहीं, ऐसा विचारकर यहाँ खडा

रहना योग्य नहीं, यह दोनों भामंडल और सुग्रीव नागपास से बधे हैं, वह अवश्य ही मर जायेगें, और चाचाके सामने से भाग जाने में कोई दोष नहीं। ऐसाकर दोनों भाई अभिमानी विभीषण से टलकर निकल गये। और विभीषण, त्रिशूलको लेकर रथसे उत्तर सुग्रीव और भामंडल के पास गये। उन दोनों को नागपाश से बंधे मूर्च्छित देख विभीषण खेद खिन्न हुये। तब लक्ष्मण ने राम से कहा, हे नाथ! सुग्रीव भामंडल ये दोनों विद्याधरो के अधिपति महासेना के स्वामी महाशक्ति के धारी, इनको रावण के पुत्रो ने शस्त्र रहितकर नागपाश से बांधा है। सो इनके बिना आप रावण को कैसे जीतोगे। तब रामको पुण्यके उदयसे गरुड इन्द्रने जो वर दिया था, उसको यादकर, रामने लक्ष्मण से कहा, हे भाई! वशस्थल पर्वतपर देशभूषण कुलभूषण मुनिराजो का उपसर्ग दूर किया, उस समय गरुडइन्द्र ने वर दिया था, ऐसा कहकर रामने गरुडइन्द्रको याद किया, उसका सिहासन कपित हुआ, तब अवधिज्ञान से राम लक्ष्मण का काम जान चिन्तावेगनाम के देवको दो विद्यायें देकर भेजा। देव ने आकर आदर सहित राम लक्ष्मण को प्रणामकर राम को सिंहवाहिनी और लक्ष्मण को गरुडवाहिनी विद्या दी, तब राम लक्ष्मण दोनो धीर वीर पुण्यशाली, विद्या को लेकर चिन्तावेग देव का बहुत सम्मानकर जिनेन्द्रप्रभु की पूजा करने लगे। और गरुडइन्द्र की बहुत प्रशसा की। उस देवने अपनी तरफ से राम लक्ष्मण को जलबाण, अग्निबाण, पवनबाण इत्यादि अनेक दिव्यशस्त्र दिये। और दोनों भाईयो को चांद सूर्य के समान छत्र चमर दिये। और कई प्रकार के रत्न ज्योतिवान दिये। विद्युतवक्र नाम का गदा लक्ष्मण को दिया, हल मूसल शत्रुओं को भय कराने वाले राम को दिये। इस प्रकार वह देव राम लक्ष्मण को देवोपुनीत शस्त्र एव सैकडो आशीष देकर अपने स्थान गया। यह सब धर्म का फल जानना। पुण्य क्रिया करने से एवं धर्म की आराधना से अनायास ही अनुपम फल की प्राप्ति होती है। पुण्यवान जीवो को देवो की सामग्री सुलभता से प्राप्त होती है। इसलिये निरन्तर पुण्य उपार्जन करो। हे भव्यजीवों! सुख चाहते हो तो प्राणियो को सुख देओ! जिनधर्म के प्रभाव से सूर्य समान तेज के धारी होंगे। पुण्यसे ही मनवाञ्छित वस्तु का सयोग प्राप्त होगा।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम लक्ष्मणको अनेकविद्यालाभ का वर्णन करनेवाला साठवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-61

सुग्रीव भामंडल का नागपाश से बंधन मुक्त होना

अथानंतर राम लक्ष्मण दोनों भाई महातेजस्वी लक्ष्मी के निवास मनोज्ञ कवच पहने सिंहवाहन और गरुडवाहन पर चढे। सेनारूपी सागर के बीचमे सिंहकी और गरुडकी ध्वजा के धारी शत्रु को क्षय करने में पुरुषार्थी महा सुभटों के ईश्वर सग्रामभूमि के मध्य में प्रवेश करने लगे, आगे आगे लक्ष्मण दिव्यशस्त्रों के तेजसे सूर्यको शर्माता हुआ चला जा रहा है। हनुमानादि बडे बडे योद्धा वानरवंशियों से युक्त, बलवान महा गुणवान ऐसे देवो समान रूपके धारी लक्ष्मण को विभीषण ने देखा। वह जगत को आश्चर्य कराने वाले तेजसे मंडित गरुडवाहन के प्रभाव से नागपाश का बंधन भामडल और सुग्रीव का दूर हुआ। गरुडविद्या से सभी सर्प विलायमान हो गये। तब भामडल सुग्रीव नागपाश से छूट विश्राम को प्राप्त हुये। मानो सुखरूपी निद्रासे सो कर जागे है। इनको देखकर सभी विद्याधर विस्मय को प्राप्त हुये। और सभी ही श्रीराम लक्ष्मण की पूजाकर विनती करने लगे, हे नाथ! आप जैसी विभूति हमने अब तक कभी नहीं देखी। वाहन वस्त्र सम्पदा छत्र चमर रत्न ध्वजा मे अद्भुत शोभा दिखती है। तब श्रीरामने जबसे अयोध्या से चले, तबसे लेकर सभी वृतान्त कहा। कुलभूषण देशभूषण मुनिराज का उपसर्ग दूर किया उनको केवलज्ञान हुआ, और गरुडइन्द्र हमसे प्रसन्न होकर वर दिया था, उसका हमने चिन्तवन किया, उसको अभी अभी याद किया, उससे यह विद्या की प्राप्ति हुई है। यह सब वृतान्त कहा। सभी विद्याधर वानरवंशी यह कथा सुन परमहर्ष को प्राप्त हुये। और कहने लगे इसी भव में साधु सेवा का परम यश फल प्राप्त हुआ। जैसा साधु सेवा से कल्याण होता है, वैसा माता पिता मित्र भाई कोई जीव भी नहीं कर सकते। जिस जीवने साधु सेवामें मनको लगाया, जिनेन्द्रभगवान की श्रद्धा की वह प्राणी बलभद्र नारायण के समान महाविभूति को प्राप्त होते है। यह पवित्र कथा सुनकर सभी हर्षित हुये, श्रीराम लक्ष्मण की सेवा में अतिप्रीति करने लगे। भामंडल और सुग्रीव मूर्च्छा से दूर होकर श्रीभगवान की पूजा करने लगे। श्रेष्ठ विद्याधर देवों समान, सभी धर्म में श्रद्धा करने लगे। जो पुण्याधिकारी जीव है। वह इसलोक में परम उत्सव एवं आनन्दको प्राप्त होते हैं। यह प्राणी

अपने स्वार्थ से ससार की महिमा को नहीं प्राप्तकर सकते, केवल धर्मार्थ से ही महिमा होती है। जैसे सूर्य प्रकाश करता, वैसे पुण्य संसारी जीवोंको संपत्ति का प्रकाश कराता, और साधु सेवा का फल इस लोक में यश का कारण और परलोक मे आत्मसुख का कारण है। इसलिये भव्यजीवो को गुरुओं की सेवा में तत्पर रहना चाहिये। गुरु भक्ति ही चारित्र को प्राप्त कराकर मोक्ष को प्राप्त कराती हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविराचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे सुग्रीव–भामडलका नागपाशसे छूटना और हनुमानको कुभकर्णकी भुजासे छूटना एव राम–लक्ष्मणको सिहवाहन–गरुडवाहनादि अनेकविद्याओ की प्राप्ति का वर्णन करनेवाला इकसठवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-62

लक्ष्मणको रावणकी शक्तिका लगना और मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरना

अथानंतर श्रीराम पक्षके योद्धा, रणनीति के ज्ञाता, युद्ध के लिये आये, वानरवंशियो की सेना से रणसग्राम भर गया, तब रावण अपनी सेना सहित लका से निकला। दोनो सेनाओं में परस्पर युद्ध होने लगा। कपिध्वजो की सेना राक्षसो के योद्धाओ से दबी, देख नल नील युद्ध करने लगे। पुनः राक्षसो की सेना डरी। तब लकेश्वरने अपनी सेनाको कपायमान देख, मारीचादि योद्धा भेजे। और रावण स्वय युद्ध के लिये आया। तब विभीषण महायोद्धा वानरवशियों को धैर्य बधाकर स्वय विभीषण रावण से युद्ध करने को सन्मुख हुआ। तब रावण अपने छोटे भाई को युद्धमे देख क्रोधपूर्वक निरादर के वचन कहने लगा। हे बालक! तू मेरा छोटा भाई है, सो मारने योग्य नहीं, मेरे सामने से दूर हट जा, मैं तुझे देख प्रसन्न नहीं, तब विभीषणने रावणसे कहा, कालके योग से अब तुम मेरी दृष्टिमे आये हो अब मेरे सामने से तुम कहॉ जाओगे? तब रावण अतिक्रोध से कहने लगा, हे पापीष्ठ! दुष्ठ! तेरे जैसे दीनको मारने से मुझे हर्ष नहीं, तू निर्बल, रंक मारने योग्य नहीं। तेरे जैसा मूर्ख और कौन होगा। जो विद्याधरों की संतान होकर भूमिगोचरियों की

शरण ले। जैसे कोई अज्ञानी पापकर्म के उदय से जिनधर्म को छोड मिथ्यात्व को ग्रहण करे। तब विभीषण बोला, हे राजन्! बहुत कहने से क्या? तेरे कल्याण की बात तुझे कहता हूँ। सो सुनो, इतना हुआ तो भी कुछ नहीं बिगडा अगर तुम अपना जीवन चाहते हो, तो राम से प्रीति करो, और सीता राम को दे दो, और अभिमान छोडो। रामको प्रसन्न करो। स्त्री के निमित्त अपने कुलको कलंक मत लगाओ, अथवा आप मेरे वचन नहीं मानते हो तो जानना की आपकी मृत्यु निकट है। सभी बलवानों मे, मोह महा बलवान है, तुम मोह से उन्मत्त हुये हो। यह वचन भाई के सुनकर रावण महाक्रोधित हुआ, तीक्षणबाणों को लेकर विभीषणपर दौडा। विभीषण ने रावण को आता देख अर्धचन्द्र बाणसे रावण की ध्वजा उडाई, रावण ने क्रोधसे बाण चलाया तो विभीषण का धनुष तोडा और हाथ से बाण गिर गया, तब विभीषण ने दूसरा धनुष लिया और बाण चलाया, तब रावण का धनुष तोडा, इस प्रकार दोनो भाई महायोद्धा जोर से युद्ध करने लगे। अनेक सेना का क्षय हुआ, तब इन्द्रजीत पिताभक्त विभीषणपर आया, तब लक्ष्मण ने उसे रोका। जैसे पर्वत सागरको रोके। श्रीराम ने कुभकर्ण को घेरा, सिंहकरी से नील, शम्भू से नल, विध्न से विराधित, मय से अगद, कुभकर्णका पुत्र कुभ और हनुमान का पुत्र हनु, और सुमाली से सुग्रीव, केतु से भामडल इत्यादि बडे बडे राजा परस्पर युद्ध करने लगे। वह उसको बुलावे वह उसको बुलावे। सब समान बल के सुभट कोई कहता मेरा शस्त्र आ रहा है उसे झेल, कोई कहता है तू मेरे से युद्ध करने योग्य नहीं, बालक हैं, वृद्ध है, रोगी है, तू हट जा। दूसरा सुभट युद्ध के योग्य है वह आओ। कोई कहता है इसे मारे, बाण चलाओ, मार लो, पकड लो बांध लो, छेद दो, छोड दो, घाव लगे सहन करो, आगे हो मूर्च्छित मत होवो, सावधान रहो, तू क्या डरता है, मैं तुझे नहीं मारूँगा, कायरको, भागने वालेको, गिरनेवाले को नहीं मारना। रोगी, दीन, बालक, वृद्ध, यति, वृति, स्त्री, शरणागत, तपस्वी, पागल, पशु, पक्षी, इत्यादिको सुभटलोग नहीं मारते यह सामन्तो की वृत्ति है। कोई अपनी सेनाको भागते देख, कहते है तू क्यो कायर हो रहा है, तेरी बुद्धि नष्टहो गई है क्या? कंपित मत हो, कहाँ जा रहा है, अपनी सेना में खडे रहो, तुझे क्या हुआ है, तेरे से कौन डरेगा, तू किस कामका क्षत्री, शूर और कायरों की परीक्षा का समय है। मीठा मीठा अनाज तो बहुत खाते अब युद्ध में क्यों पीछे हट रहे हो। इसप्रकार वीरों की गरजना और बाजों का बजना उनसे दशों दिशाओं

में आवाज हो रही है। पैरों की धूलसे रणभूमि में अधंकार हो रहा है। लोग घायल होकर पडे हैं। दोनों सेना ऐसी दिख रही है, मानों लाल अशोकका वनही है। या टेशुका वन है। कोई योद्धा अपना बखतर टूटा देख दूसरा पहनने लगा, जैसे साधुको व्रतोंमें दोष लगनेपर छेदोपस्थापना करे। कोई दांतों से तलवार पकड वस्त्र को टाईटकर पुनः युद्ध करने लगा। कोई सुभट निश्चिन्त होकर हाथी के दांतोंपर सो रहा है। कोई भव्यजीव महासग्राम से अत्यन्त घायल होकर कषायो का त्यागकर सन्यास धारणकर, अविनाशी पद का ध्यान करते हुये नियम पूर्वक शरीरको छोड, उत्तमगति को प्राप्त होते है। किसी योद्धा के मस्तक गिरे पडे है, सैकडों धड नाच रहे हैं, कोई शस्त्र रहित हुये, घावों से जरजरे होकर पानी की वेदना से जल पीनेको बैठते है, इन्द्रजीत ने तीक्ष्णबाण लक्ष्मणपर छोडे। और लक्ष्मणने उसपर छोडे, इन्द्रजीतने लक्ष्मणपर तामसबाण चलाया तो अधकार हो गया। लक्ष्मणने सूर्यबाण चलाया तो अंधकार दूर हुआ। इन्द्रजीत ने आशीविषजाती के नागबाण चलाया तो लक्ष्मण के रथपर नागलिपट गये, तब लक्ष्मणने गरुडबाण के योग से नागबाणको दूर किया। जैसे योगी महातप से पूर्व उपार्जित पापोको दूर करते हैं। लक्ष्मणपर तप्तबाण चलाया, लक्ष्मण ने अपनी विद्यासे दूरकर इन्द्रजीतपर आशीविष जाती का नागबाण चलाया, तब इन्द्रजीत नागबाण से अचेत होकर भूमि मे गिरा। और राम ने कुभकर्ण को रथ रहित किया, पुन· कुंभकर्ण ने रामपर सूर्यबाण चलाया तो राम ने उसका बाण निराकरण किया, और नागबाणो से कुम्भकर्ण को घेर लिया। सो कुभकर्णभी नागबाणसे घिरा हुआ धरतीपर गिरा

गौतमस्वामी ने राजाश्रेणिक से कहा—हे राजन्! बडा आश्चर्य है, नागबाण धनुष के लगते ही उल्कापात रूप हो जाते है, और शत्रुओ के शरीर से लगते ही नागरूप होकर लिपट जाते है। यह देवोंपुनीत दिव्यशस्त्र है, मनवाच्छित रूपकरते हैं। एकबाण, एकक्षण में दण्ड, और एकक्षण मे पाशरूप हो जाते हैं। नागपाश से कुम्भकर्ण बंधा उसको राम की आज्ञा से भामंडल ने अपने रथ मे रखा। और इन्द्रजीत को लक्ष्मण ने पकडा सो विराधित ने अपने रथ में रखा। उस समय युद्ध मे रावण ने विभीषण से कहा, यदि तू अपने आपको योद्धा मानता है, तो मेरा एक घाव सहनकर जिससे तेरे रणकी खाज बुझे। कैसाहै विभीषण? क्रोध से रावण के सन्मुख है, और विकराल की है रण की क्रिया जिसने। रावण ने क्रोध

सहित विभीषणपर त्रिशूल चलाया, वह त्रिशूल लक्ष्मण ने विभीषण तक आने नहीं दिया। अपने बाणों से बीच में ही भस्म किया। तब रावण अपने त्रिशूलको भस्म किया देख अतिक्रोधायमान हुआ, और नागेन्द्र की दी हुई शक्ति महादारुण उसको लिया, सामने देखे, नीलकमल समान श्याम सुन्दर महादैदीप्यमान पुरुषोत्तम गरुडध्वज लक्ष्मण खडे है उनको रावण ने कहा, मानों ताडना ही करता हो। कहाँ तेरा बल? जो मृत्यु का कारण मेरे शस्त्र तू सहनकर, तू दूसरो की तरह मुझे मत जानना। हे दुर्बुद्धि लक्ष्मण! जो तू मरना चाहता है तो मेरे शस्त्रकी चोट खा। तब लक्ष्मण बहुत समयतक युद्धकर थके हुये थे, फिर भी विभीषण को पीछेकर लक्ष्मण आगे होकर रावण की तरफ दौडे। तब रावण ने महाक्रोध से लक्ष्मणपर शक्ति चलाई। कैसी है शक्ति? निकले है ताराओ के आकार समान स्फूलिंगों के समूह ऐसी अमोघक्षेपा नामकी शक्ति वृथा नहीं जाती, महापर्वत के तट समान लक्ष्मण का वक्षस्थल, उसपर रावणने शक्ति की चोट मारी। लक्ष्मण के शरीर से लगी शक्ति ऐसी सोहे जैसे प्रेमकी भरी वधू ही है। लक्ष्मण शक्तिके प्रहारसे भूमिपर गिरे, जैसे वज्रके मारे पहाडगिरे। लक्ष्मणको भूमिपर पडा देख, श्रीराम कमललोचन शोक को दबाकर शत्रु का घात करने के लिये युद्ध करते रहे। सिंह के रथपर चढ क्रोधके भरे शत्रुको तत्काल रथ रहित किया। तब रावण दूसरे रथ चढा। पुन रामने रावणका धनुष तोडा। रामने छहबार रावण को रथरहित किया। तथापि रावण अद्‌भुत पराक्रमी राम द्वारा मारा नहीं गया। तब रामने रावणसे कहा, तू अल्प आयु नहीं, तेरे आयु के कुछ दिन बाकी है, इसीलिये मेरे बाणों से तू मरा नहीं, मेरी भुजा से चलाये जो बाण महातीक्ष्ण, उससे पहाड भी खड खड हो जाये, तो मनुष्य की क्या बात? फिर भी तेरी आयु ने तुझे बचाया है, अब मैं तुझे कहता हूँ, सो सुन, हे विद्याधरो के अधिपति! मेरे भाईको सग्राम में शक्ति से तूने मारा है, सो उसकी मृत्यु क्रियाकर, मै तेरे से प्रातः काल ही युद्ध करूँगा। तब रावण ने कहा ऐसा ही करो। ऐसा कहकर रावण लंका में गया। कैसा है रावण? प्रार्थना भग करने में असमर्थ है। रावणने मनमें सोचा कि, इन दोनों भाईयों में एक यह मेरा शत्रु अतिप्रबल था, उसको तो मैने मारा, यह विचारकर हर्षित होकर महल में गया। कोई योद्धा युद्ध से जीवित आये उनको देख हर्षित हुआ। पुनः सुना कि इन्द्रजीत, मेघनाथ और भाई कुंभकर्ण ये पकडे गये है। तो रावण महादुखी हुआ। उनके जीवन की अब

आशा नहीं। गौतमस्वामी ने श्रेणिकसे कहा, हे भव्योतम! अपने किये कर्मोंके कारणसे, जीवोको साता असाता का फल प्राप्त होता है। और अपने कर्मके उदयसे रणमें मृत्यु को प्राप्त होते है। कोई पुण्यके उदयसे शत्रुओं को जीत यशको प्राप्त करते है। पाप कर्मके उदय से महाशक्ति भी निष्फल हो जाती है, एवं बंधन को प्राप्त होते है। जैसे सूर्य पदार्थो को प्रकाश करने में समर्थ है, ऐसे कर्म जीवों को सुख दुखरूपी फल देने मे समर्थ है। हे भव्यजीवों! प्रति समय शुभ कार्य करो, उससे सुखरूपी फलकी प्राप्ति होगी।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे लक्ष्मणको रावणके हाथकी शक्तिलगना और मूर्च्छितहोकर भूमिपर गिरनेका वर्णन करनेवाला बासठवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-63

लक्ष्मण को शक्तिके प्रहारसे मूर्च्छित होनेपर रामका विलाप

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मण के शोक से व्याकुल हुये, जहॉ लक्ष्मण गिरा हुआ था वहॉ आये। पृथ्वीमंडल का मडन जो भाई उसको शक्तिसे मूर्च्छित हुआ देख, स्वयं राम मूर्च्छित हुये। बहुत समयके बाद सचेत होकर महाशोक सहित दुखरूपी अग्नि से प्रज्वलित अत्यन्त विलाप करने लगे। हे भाई! कर्मके योग से तेरी यह दुखमय अवस्था हुई। आप समुद्र पारकर यहॉ आये, तू मेरी भक्ति में सदा सावधान, मेरे कार्यके लिये सदा तत्पर, शीध्रही मेरे से बातकर। क्यों मौन लेकर सोये हो? तू नहीं जानता क्या? मैं तेरे वियोग को एकक्षण मात्रभी सहन करने में शक्य नहीं। उठो मेरे ह्रदयसे लगो। तेरा विनय कहॉ गया। और तुझे माता पिताने मुझको धरोहर सौपा था, अब मैं महानिर्लज्ज उनको क्या उत्तर दूँगा? अत्यन्त प्रेमसे भरे महाभिलाषी राम, हाय-लक्ष्मण हाय-लक्ष्मण ऐसा जगत में उपकारी तेरे समान कोई नहीं। इस प्रकार से राम विलाप करने लगे। सभी लोग देख रहे हैं, राम महादीन होकर भाई से कहते है, तू सुभटो में महारत्न है। तेरे बिना मैं कैसे जीऊँगा, मैं अपना जीवन पुरुषार्थ तेरे बिना निष्फल मानता हूँ, पाप का उदय मैने प्रत्यक्ष देखा, मुझे तेरे बिना सीता से क्या और अन्य पदार्थों से भी क्या?

सीता के निमित्त तेरे जैसे भाईको शक्तिसे युक्त पृथ्वीपर गिरा देखता हूँ, तेरे समान मेरे भाई कहाँ? काम अर्थ पुरुषोंको सब सुलभ है, और पृथ्वीपर जहाँ जाये वहाँ सभी वस्तुयें प्राप्त होती है, परन्तु माता पिता और भाई नहीं मिलते हैं। हे सुग्रीव! तुमने अपनी मित्रता मुझे दिखाई अब तुम अपने स्थान जाओ, और हे भामडल! तुम भी जाओ अब मैंने सीताकी भी आशा छोडी एव जीवनकी भी आशा छोडी अब मै भाई के साथ निसंदेह अग्नि मे प्रवेश करूँगा। हे विभीषण! मुझे सीताकी भी चिन्ता नहीं, और भाई की भी चिन्ता नहीं परन्तु तुम्हारा उपकार हमारे से कुछ नहीं बना, यह मेरे मनमे महादुख है, जो उत्तम श्रेष्ठ पुरुषहै, वह पहले ही उपकार करते है, और जो मध्यम पुरुष है वह उपकार के बाद उपकार करते है। और जो बादमे भी नहीं करते, वे अधमपुरुष हैं। हे विभीषण! तुम उत्तम पुरुष हो, हमारा पहले उपकार किया, भाई से विरोधकर हमारे पास आये, और हमारे से तुम्हारा, कुछ भी उपकार नहीं हुआ। इसीलिये मैं महापश्चाताप करता हूँ। हो भामडल सुग्रीव! चिता रचो, मै भाई के साथ अवश्य ही अग्निमे प्रवेश करूँगा। तुम्हारे को जो योग्य हो वह करना। ऐसा कहकर लक्ष्मण को राम स्पर्श करने लगे। तब जांबूनद महाबुद्धिमान मना करने लगे। हे देव! यह दिव्यअस्त्रों से तुम्हारा भाई मूर्च्छित हुआ है। उसको स्पर्श मत करो, आपका भाई अच्छा हो जायेगा, शक्ति से ऐसा ही होता है। आप धैर्य रखो, कायरता मत लाओ, संकट मे उपाय ही कार्य कारी है। आप सुभट हो, आपको विलाप करना उचित नहीं, विलाप करना क्षुद्र लोगो का काम है। इसलिये आप अपने मनको शात करो, अभी ही कोई उपाय बनता है, आपका भाई नारायण है, सो अवश्य जीवेगा, अभी उनकी मृत्यु नहीं। यह कहकर सभी विद्याधर सोचने लगे। यह दिव्यशक्ति है, इसको औषधि से दूर करने मे कोई समर्थ नहीं। कदाचित् सूर्यका उदय हुआ तो लक्ष्मणका जीना कठिन है। यह चिन्ता विद्याधर बार बार करते हुये, कवच शस्त्रो को दूरकर क्षणमात्र में पृथ्वीको शुद्धकर कपडो के तम्बू बनाये, और कटक की रक्षा के लिये सात चौकी रखी। सो बडे बडे योद्धा बखतर पहने धनुष बाण लेकर बहुत सावधानी से चौकी पर बैठे। प्रथम चौकीपर धनुषबाण हाथ मे लेकर नील राजा बैठे, दूसरी चौकीपर गदा हाथ में लेकर नल राजा बैठे। तीसरी चौकीपर त्रिशूल लेकर उदार मन से, कल्पवृक्ष की माला रत्नों के आभूषण पहने, ईशान इन्द्र समान राजा विभीषण बैठे। चौथी चौकीपर महासाहसी, तरकश बांधे कुमुद

राजा बैठे। पाचवीं चौकीपर महा प्रतापी बरछी सम्भाले राजा सुषेण बैठे। छठी चौकीपर महादृढ भुजा इन्द्रसमान शोभायमान भिण्डीपाल लेकर राजा सुग्रीव बैठे। सातवीं चौकीपर महाशस्त्रो का निकन्दक तलवार संभाले आप राजा भामडल बैठे। और पूर्व के दरवाजेपर अष्टापद की है ध्वजा जिनके ऐसे महाबली राजा बैठे। और पश्चिम के द्वारपर जाम्बूकार राजा विराजमान हुये। उत्तर के द्वारपर मंत्रियों के समूह सहित बालीराजा का पुत्र महाबलवान राजा चन्द्रमरींद्र बैठे। इसप्रकार सभी विद्याधर चौकीदारी पर बैठे, ऐसे लगे जैसे आकाश में नक्षत्रमंडल। और वानरवशी महासुभट सभी दक्षिणदिशा की तरफ चौकीपर बैठे। इस प्रकार रक्षा का यत्नकर विद्याधर बैठे। लक्ष्मण के जीवनका संदेह है सबको, महाशोक सहित बैठे। जीवोंके कर्मरूपी सूर्यके उदयका फल प्रकाशमय होता है। उसे कोईभी मनुष्य देव, नागकुमार, असुरकुमार दूर करने में समर्थ नहीं है। प्रत्येक प्राणी अपने किये कर्मों का फल अपने आपही भोगते है। दयामयी शुभ परिणामो से ससारमें दीर्घायु निरोगशरीर आदि शुभफल की प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविराचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे रामका विलापवर्णन करनेवाला त्रैसठवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व–64

लक्ष्मण की शक्ति दूर करने का उपाय और विशल्या के पूर्वभव का वर्णन

अथानंतर रावण अपने भाई एवं दोनो पुत्रोंको मरणरूप ही जान अत्यन्त दुखी हुआ। रावण विलाप करता है। हे भाई! कुभकरण परम उदार कहॉ ऐसे बधनको प्राप्त हुये हो। हाय इन्द्रजीत मेघनाथ! महापराक्रमी मेरी भुजा समान दृढ़ कर्मी क्यों बंधन को प्राप्त हुये। तुम्हारी ऐसी अवस्था अब तक कभी नहीं हुई थी, मैने शत्रु का भाई मारा है, वह न जाने शत्रु व्याकुल हुआ तुम्हे क्या करेगा। तुम समान उत्तम पुरुष मेरे प्राणो के आधार तुम सभी दुख अवस्था को प्राप्त हुये हो। इस समान मुझे और कष्ट क्या? रावण ऐसे गुप्त रूपसे भाई और पुत्रों का शोक

करता रहा। और जानकी लक्ष्मण को शक्ति लगी सुन महारुदन करने लगी--हाय लक्ष्मण! विनयवान! कुलभूषण! तुम मेरे मन्दभागिनी के लिये ऐसी अवस्था को प्राप्त हुये हो। मैं तुम्हे ऐसी अवस्था में भी देखना चाहती हूँ, सो भाग्यके योग से देख नहीं सकती हूँ। तुम्हारे समान योद्धाको पापी शत्रुने मारा, सो क्या मेरे मरण का सन्देह नहीं किया, तुम्हारे समान श्रेष्ठपुरुष इस संसार मे और कोई नहीं, जो बडे भाई की सेवामे आसक्त है मन आपका, समस्त कुंटुब परिवारको छोड भाई के साथ निकले। और यहाँ समुद्र पारकर आये अब मैं तुम्हे कब देखूँगी। तुम बाल क्रीडामे महाप्रवीण, महाविनयवान, महामधुरभाषी, अद्‌भुत कार्यको करने वाले, ऐसा दिन कब होगा जो मै तुम्हे देखूँ। सभी देव सबप्रकार से तुम्हारी रक्षा करे। हे लक्ष्मण! सभी जीवो के दुख हरनेवाले तुम शक्तिकी शल्यसे रहित हो। इस प्रकार महाकष्ट से शोकपूर्वक जानकी विलाप करने लगी। जानकी के पास बैठी सखियो ने धैर्य बधाकर जानकी को शांति दी और कहा, हे देवी! तेरे देवरको अभी मरनेका निश्चय नहीं, इसलिये तुम रुदन मत करो। महाधीर वीर सामन्तों की यही गति है, और पृथ्वीपर अनेक प्रकार के उपाय हैं। ऐसे विद्याधरियों के वचनसुन सीता कुछ शांतिको प्राप्त हुई। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहतेहै, हे राजन्! अब जो लक्ष्मण का वृतान्त हुआ सो सुनो। एक योद्धा को दरवाजे में प्रवेश करता भामंडल ने देखा, और उससे पूछा तू कौन है, कहाँ से आया है। किसलिये अन्दर प्रवेशकर रहे हो, यहाँ ही खडे रहो, आगे मत जाओ, तब उसने कहा, मुझे महीनो से ऊपर कईदिन हुये, मुझे रामके दर्शनो की अभिलाषा है, मैं राम का दर्शन करूँगा, और आप लक्ष्मण के जीवन की इच्छा करते हो तो, मैं उसके जीवन का उपाय बताऊँगा। योद्धाने ऐसा कहा तब भामंडल प्रसन्न होकर, दरवाजेपर दूसरा सुभट छोड उसे साथ लेकर श्रीराम के पास आये। विद्याधर श्रीरामको नमस्कार कर कहने लगा--हे देव! आप दुखी मत होओ, राजकुमार लक्ष्मण अवश्य ही जीवित रहेगे। देवगतिनाम का नगर वहाँ राजा शशिमंडल, राणी सुप्रभा, उनका पुत्र मै चन्द्रप्रीतम, एक दिन आकाश में भ्रमणकर रहा था, राजा बेलाध्यक्ष का पुत्र सहस्रविजय उससे मेरा यह बैर था कि मैंने उसके प्रसन्न की जो राजकुमारी थी उससे विवाह किया। सो मेरा वह शत्रु हुआ इसीलिये उसके और मेरे महायुद्ध हुआ। तब उसने मुझे चंडरवानामकी शक्तिलगाई, तब मै आकाशसे अयोध्याके महेन्द्र उद्यान में गिरा। सो मुझे गिरता देख अयोध्या के राजा भरत आकर खडे हुये। शक्तिकी चोटसे मेरा वक्षस्थल देख वे महादयावान

उत्तमपुरुष जीवनदाता मेरेको चन्दन सहित गन्धोदक के जल से छीटे लगाये तब शक्ति निकलकर भाग गई। जैसा मेरारूप पहले था उससे भी अधिक सुन्दर हो गया। राजा भरतने मुझे नया जन्म दिया, जिससे आपके दर्शन हुये।

यह सुनकर श्रीरामचन्द्रजी पूछते है कि उस गन्धोदक की उत्पत्ति तुम जानते हो क्या? तब उसने कहा, हे देव! जानता हूँ आप सुनो! मैंने राजा भरतसे पूछा था, तब उन्होंने बताया कि, हमारे देशमें उरोघात, महादाहज्वर, सर्वशूल, फोडे इत्यादि अनेक रोग सर्व प्राणियो के हुये, अनेक प्रकार की औषधियो से भी अच्छे नहीं हुये। और राजा द्रोणमेघ प्रजा सहित निरोग था। तब मैने उनको बुलाकर पूछा, हे राजन्! तुम जैसे निरोग हो ऐसा शीघ्रही मुझे और मेरी प्रजाको निरोग करो। तब राजा द्रोणमेघ ने जिसकी सुगन्धसे दशो दिशाये सुगन्ध हो, ऐसे सुगन्ध जलसे मुझे छींटे लगाये तो मै निरोग हुआ, और उसी जलसे मेरा राजभवन, नगर, देशके सभीलोग रोगो से निवृत हुये। सबका रोग समाप्त हुआ। तब मैंने द्रोणमेघ से पूछा यह जल कहॉ का है, जिससे सभी रोग नाश होते है। तब उसने कहा, हे राजन्! मेरे विशल्यानाम की राजकुमारी सब विद्याओ मे प्रवीण महागुणवती, जब गर्भ में आई, तब मेरे देशमे अनेक व्याधि रोग नष्ट हुये, मेरी राजपुत्री जिनशासन मे प्रवीण, जिनेन्द्र भगवान की पूजा मे तत्पर है। सभी कुटुब की पूजनिक है, उसी राजकुमारी विशल्या के स्नानका यहजल है। उसके शरीरकी सुगन्ध से यह जल महासुगन्धमयी है। क्षणमात्र मे सभीरोग नाश होते हैं। यह वचन सुनकर मै आश्चर्य को प्राप्त हुआ। उसके नगर मे जाकर, उनकी राजकुमारी की स्तुति की और नगर से निकलकर सर्वहितनामके मुनिराजको प्रणाम कर पूछा, हे प्रभो! द्रोणमेघ राजाकी पुत्री विशल्याका चरित्र कहो?

तब चारज्ञान के धारी महामुनिराज ने कहा, हे भरत! विदेहक्षेत्रमे स्वर्गसमान पुंडरीकदेश, वहॉ त्रिभुवनानदनगर, वहॉ चक्रधर नाम का चक्रवर्ती राज्य करता था, उनकी पुत्री अनगशरा गुणरूपी आभूषणो सहित, रूपवान। एक प्रतिष्ठितपुर का राजा, पुनर्वसु विद्याधर चक्रवर्ती का योद्धा कन्याको देखकर मोहित हुआ। और राजकुमारी को विमान मे बैठाकर ले गया। चक्रवर्ती ने क्रोधित होकर सेना को भेजा सो पुनर्वसु विद्याधर से युद्ध करने लगे, और उसका विमान चूर डाला तब उसने व्याकुल होकर राजकुमारी अनंगसरा को आकाश से नीचे गिरा दी। शरद के चन्द्रमा की ज्योति समान पुनर्वसु की पर्णलघुविद्या से महा भयानक जगल में आकर गिरी, वह जंगल दुष्टजीवों से भरा महाभयानक, उस जगलका

नाम स्वापदरौरव वहाँ विद्याधरों का भी गमन नहीं। वृक्षोंके समूहसे महाअंधकार अनेक ऊँचे ऊँचे वृक्ष बेलोंसे घिरे हुये, उनकी सघनता से सूर्य की किरणों का भी प्रवेश नहीं। वहाँ सिंह, व्याघ्र, चीता, अष्टापद, गेंडा, रींछ इत्यादि अनेक वनके जीव भ्रमण करते ऊँची नीची पृथ्वी बडे बडे गड्ढे, कंकर, पत्थर, कांटे उस महाभंयकर वनमें चक्रवर्ती की राजदुलारी अनंगसरा बालिका अकेली दुखी होकर रहती थी। नदी के किनारेपर जाकर दिशाओ की और देखती हुई माता पिता को यादकर कर रुदन करती रहती थी। हाय! मैं राजा चक्रवर्ती की पुत्री मेरा पिता इन्द्र समान उनकी मै अतिप्यारी बेटी भाग्यके वश इसजगल मे आ पडी हूँ। अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, किनसे कहूँ। इस वनका कोई अन्त नहीं। इस वनको देख दुख उत्पन्न होता है। हे पिता! आप पराक्रमी सम्पूर्ण लोक में प्रसिद्ध, मै इस वनमे असहाय पडी हूँ। मेरी दया करो, हाय! माता ऐसे महादुखों के लिये आपने मुझे गर्भमे क्यो रखा, अब क्यों नहीं मेरी दया करती हो। हे! मेरे परिवारके उत्तमबधु! एकक्षण मात्र मुझे नहीं छोडते अब क्यो मुझे तज दी। हे प्रभो! मैं होती ही क्यों नहीं मर गई, यह दुख की वेदना कहाँ से आई, चाहूँ तो भी मृत्यु नहीं आती, क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, मैं पापिनी कैसे रहूँ? यह सब स्वप्न है या साक्षात है, इसप्रकार बहुतकाल तक विलापकर दुखी हुई। उस वनमें अनंगसराने ऐसा विलाप किया, जिससे वनके पशुपक्षी भी दुखी हुये। यह दुखी होकरभूख प्यास के जगल के फल पत्ते आदि भक्ष पदार्थों से अपनी वेदना को शान्त करती थी, कर्मके योगसे उस वनमें अनेक शीत काल, ग्रीष्मकाल और वर्षाकाल के भयंकर दुखो को सहन किया। कैसी है गर्मी? जलके समूह सूख गये, दावानल अग्नि से अनेकवृक्ष जल रहे हैं, गर्म गर्म लू से अनेकजीव जन्तु मर रहे है। वर्षाकाल कैसाहै? घनघोर बादलो से महाअधकार हो रहा है, मूसलधार वर्षासे अनेक पहाडो मे दरारे पडगई है, वर्षा से जमीन धुलकर साफ हुई है। ऐसी भयकर ऋतु मे बैठी बैठी माता पिताको यादकर अनेक वचन कहकर रोती है, मैने चक्रवर्ती के घरमे जन्म लिया, पूर्व पापकर्म के उदयसे ऐसे वनमें दुखों को प्राप्त हुई। इस प्रकार ऑसुओं की धाराओ से चातुर्मास करती रही। और वृक्षोंसे टूटे फलोंको खाकर बेला तेलाादि अनेक उपवास कर अपने शरीर को कृष किया, फिरभी दिनमें एकबार ही फल और जलसे पारणा करती थी। यह चक्रवर्ती की राजपुत्री पुष्पो की सेजपर सोने वाली स्वयंके बालभी उसको चुभते थे, वह आज कंकरीली भूमिपर खेद रहित शयन करती है। जब यह जागती तो अनेक सुन्दर गीतों की

ध्वनि सुनती, परन्तु अब वह श्याल शेरादि के शब्द सुनकर रात्रि व्यतीत कर रही है। इस प्रकार तीनहजार वर्षतक तप किया। पुन वैराग्य को प्राप्तकर प्रासुक फल एवं जल सूर्यके प्रकाशमें एक स्थानपर बैठ गृहण करती थी, शरीर शिथिल होनेपर चारों प्रकार के आहार पानी का त्यागकर सल्लेखना व्रत धारण किया। सौहाथ भूमिको छोडकर उसके बाहर नहीं जाऊँगी, ऐसा नियम लिया। आयु के छहदिन शेष बचे, तब एक अरहदास नामका विद्याधर सुमेरूपर्वत की वंदनाकर आ रहा था, सो मार्गमें जगलके अन्दर चक्रवर्ती की पुत्रीको देख पिता के पास ले जाना चाहा, तब अनगसरा ने सल्लेखना के कारण मनाकर दिया। तब अरहदास विद्याधर शीघ्रही चक्रवर्ती को लेकर राजकन्या के पास आये। जिस समय चक्रवर्ती आये, उस समय एकभयकर अजगर (सर्प) राजकुमारीको भक्षणकर रहा था, तब अनगसराने चक्रवर्ती पिता को देख अजगरको अभयदान दिलाया और स्वय समाधिमरण कर शरीर छोड तीसरे स्वर्गमे जन्म लिया। पिता पुत्रीकी यह अवस्था देख बाईसहजार पुत्रो सहित वैराग्यको प्राप्त होकर मुनिपद को प्राप्त किया। अनगसराने अजगरको क्षमा कराकर मारने नहीं दिया, और अजगर को अभय दान दिया, ऐसी श्रद्धा उसीको ही थी। और वह पुनर्वसु विद्याधर जगल जगल मे अनगसरा को देखता ढूढता रहा, अनगसरा रूपवान राजदुलारी कहीं भी नहीं मिली, तब पुनर्वसु विद्याधर दुखी होकर द्रुमसेनमुनि के चरणो मे मुनिहोकर महातप किया, और तपसे स्वर्गमे देव बना वहॉसे आकर लक्ष्मण हुआ। और वह अनगसरा चक्रवर्ती की पुत्री स्वर्ग से चयकर द्रोणमेघ राजा के विशल्या नाम की राजकुमारी हुई। और पुनर्वसु से अनंगसरा के लिये निदान किया था, सो अब लक्ष्मण विशल्या से विवाह करेगा। यह विशल्या इसनगर में इस देशमे तथा भरतक्षेत्र मे महागुणवान है, इसके समान तीनलोक मे अन्यकोई सुगन्ध शरीर सहित अनेक गुणोकी खान रूपवान और कोई नहीं है। पूर्वभव मे किये हुये तपके प्रभावसे महापवित्र शरीर है। अजगरको अभयदान दिया उसीका यह फल है, कि उसके स्नान के जलसे सभी शक्तियॉ एव सभी रोग, दूर होकर शात होते है। इसने उपसर्ग सहन किया और महातप किया उसका यह फल है। उसके स्नान के जलसे तेरे देश मे वायु विकार रोग उत्पन्न हुआ था, वह नाश हुआ। यह मुनिके वचन सुन भरतने मुनिराज से पूछा, हे प्रभो! मेरे देशमें रोग किस कारणसे उत्पन्न हुये? तब मुनिराज ने कहा, हस्तिनापुर नगरमें एकविन्ध्य नामका व्यापारी महाधनवान, वह गधा, ऊँट, भैंसा लादकर अयोध्या में आया और ग्यारह

महीने अयोध्या में रहा। उसमें एक भैंसा बहुत बोझ रखने के कारण घायल हुआ, और तीव्र रोगकी वेदना से इस नगर में मरा, और अकाम निर्जराके कारण अश्वकेतु नामका वायुकुमार देव हुआ, उसने अवधिज्ञान से पूर्वभवको जाना कि मै पूर्वभव में भैसा था, पीठ कट रही थी रोगों से दुखी होकर मार्गमें कीचडके अंदर पडा था, सभी लोग मेरे सिरपर पैर रखकर इधर उधर आते जाते। लोग महानिर्दयी अब मैं देव हुआ, सो मै इनका निग्रह नहीं करूँ तो देव पर्याय क्या? ऐसा विचारकर अयोध्यानगरी में अनेकरोगों को फैलाया। यह सभी रोग विशल्याके गन्धोदक के प्रभाव से नष्ट हुये। यह कथा मुनिराजने भरत महाराज से कही, और राजा भरतने मेरे से कहीं और मैंने आप से कही। सो आप विशल्या का स्नानजल शीघ्र ही मगाओ, लक्ष्मण की शक्ति एव मूर्च्छा दूर करनेका यही एक उपाय है अन्य प्रयत्न कोई नहीं। इस प्रकार चन्द्रप्रीतम विद्याधर ने रामसे कहा, तब सभी सुनकर प्रसन्न हुये। गौतमस्वामी कहते है हे श्रेणिक! जो पुण्य अधिकारी जीव हैं, उनको पुण्यके उदय से अनेक उपाय अचानक प्राप्त होते हैं। इसीलिए प्रत्येक प्राणी को अभयदान देकर तपस्या पूर्वक पुण्य प्राप्त करना। उसी पुण्यसे सुन्दर निरोग शरीर, अतुलबल, महासुख, संसार के भोग उपभोग की सामग्री प्राप्त होती है। पुण्यसे ही सकटके समय मे सभी उपाय स्वय सिद्ध होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे विशल्याका पूर्वभव वर्णन करनेवाला चौसठवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-65

राम के कटक में विशल्या का आगमन और लक्ष्मण का शक्ति रहित होना

अथानंतर चन्द्रप्रीतम विद्याधर की सभी ने बहुत प्रशंसा की, हनुमान भामंडल, अगदादि सभी मत्रणाकर अयोघ्या की तरफ चले। क्षणमात्र मे आयोध्या पहुँचे। भरत महाराज राजभवन में शयन कर रहे थे। उनको बाजों की ध्वनी से जगाया, भरत जगे। सबने भरत को प्रणाम किया और सीता का हरण, रावणसे युद्ध लक्ष्मणको शक्ति लगना यह सभी समाचार कहे। उनको सुनकर भरत को शोक

और क्रोध हुआ। उसी समय युद्ध की भेरी बजाई सम्पूर्ण अयोध्या के लोग जागकर व्याकुल हुये, और विचारने लगे कि राजभवन में क्या कल कलाहट हो रहा है। अर्धरात्रि के समय क्या अतिवीर्य का पुत्र आ गया? कोई सुभट अपनी स्त्रीयों सहित सोये थे, उनको छोड बखतर पहन खड्ग हाथ में लीया। कोई स्त्री बालक को लेकर इधर उधर देख सोचती रही। कोई क्षत्राणी स्वय जगकर अपने पति को जगाया। कोई सुभट कह रहा है, आज अयोध्या के राजभवन में प्रकाश हो रहा है, रथ हाथी घोडे पयादे राजद्वार की तरफ जा रहे हैं। सभी सावधान होकर खडे हो गये। कोई पुरुष अपनी स्त्री से कहता है, यह सुवर्णकलश मणिरत्नो के पिटारे तहखानो मे रखो और सुन्दर वस्त्रो की पेटियॉ और सभी द्रव्य अच्छी तरह अन्दर रखो। और भाई शत्रुघ्न निद्रा छोड हाथीपर चढ मत्रियो सहित शस्त्रो के धारक योधाओ को लेकर राजमहल मे आये, और भी अनेक राजा और सैनिक आये। भरत ने सब को युद्ध का आदेश दिया, तब भामडल, हनुमान अगद, भरत को नमस्कार कर कहा, हे देव! लकानगरी यहॉ से बहुत दूर है, बीचमे समुद्र है, तब भरतने कहा अब क्या करना? तब हनुमानादि ने विशल्या का वृतान्त कहा, हे प्रभो! राजा द्रोणमेघ की अनुपम राजकुमारी विशल्या, उसके स्नान का जल शीघ्र ही देने की कृपा करो। हम लेकर जाते है। अगर सूर्य का उदय हुआ तो लक्ष्मण का जीवित रहना कठिन है। तब भरत ने कहा उसके जल को क्या, राजकुमारी विशल्या को ही लेकर जाओ। मुझे मुनिराज ने कहा था कि विशल्या लक्ष्मणकी रानी होगी। तब द्रोणमेघके पास एक विश्वासी पुरुष उसी समय भेजा, द्रोणमेघने लक्ष्मणको शक्ति लगी सुन, महाक्रोध किया और युद्ध को तैयार हुये। तब भरत और माता केकई ने जाकर द्रोणमेघ को समझाया, फिर राजकुमारी विशल्या को भेजने को तैयार किया। तब भामडल, हनुमान, अगद विशल्याको विमान मे बैठाकर एकहजार अधिक राजाओं की राज कन्याये साथ मे लेकर राम के कटक मे आये। एकक्षण मात्र में सग्रामभूमि में आ पहुँचे। राजकुमारियॉ विमान से उतरी, ऊपर चॅवर दुर रहे हैं। कमल समान नेत्रो से हाथी घोडे बडे बडे योद्धाओ को देखती हुई आई। जैसे जैसे वह विशल्या कटक मे प्रवेश करती है, वैसे वैसे लक्ष्मण के शरीरमें मूर्च्छा दूर होती गई। वह शक्ति देवरूपिणी लक्ष्मण के शरीर से निकली। ज्योति के समूह से युक्त मानो दुष्टस्त्री घरसे निकली, दैदीप्यमान अग्नि के स्फुलिंगों के समूह आकाश मे उछलते हुये

दिखे तब उस शक्ति को हनुमान ने पकडी, दिव्य स्त्री का रूप धारी, वह देवागना शक्ति थी। तब हनुमान को हाथ जोडकर कहने लगी, हे नाथ! प्रसन्न हो, मुझे छोडो मेरा अपराध नहीं हमारी यही रीति है, कि हमारी जो साधना करे, हम उसके वश होते है। मैं अमोधविजया नाम की शक्तिरूपीविद्या तीनलोक में प्रसिद्ध हूँ। कैलाशपर्वत पर बाली मुनिराज प्रतिमा योग धारणकर तिष्ठे थे, और रावण ने भगवान के चैत्यालय में भक्ति की अपने हाथकी नसबजाई और जिनेन्द्र भगवान के गुण गाये, तब धरणेन्द्र का आसन कम्पायमान हुआ, तब धरणेन्द्र ने मध्यलोक में आकर, रावणपर प्रसन्न होकर मुझे रावण को दिया। रावण अन्य वस्तु जान मुझे नहीं गृहणकर रहा था, तब धरणेन्द्र ने हट पूर्वक मुझे दिया। मैं महाविक्राल स्वरूप जिसके लगूँ उसके प्राण नाश करूँ। कोई मुझे दूर करने में समर्थ नहीं, परन्तु एक विशल्या सुन्दरी महासती को छोड मैं देवोंको भी जीतने वाली। मै विशल्या के दर्शनमात्र से ही भागकर जा रही हूँ। इसके प्रभावसे मैं शक्ति रहित हुई। तप का ऐसा प्रभाव है, चाहे तो सूर्यको शीतल करे और चन्द्रमा को ऊष्ण करे। विशल्या ने पूर्वजन्म में महातप किया, सुकोमल शरीरको इसने तपमे लगाया, ऐसा उग्र तप किया, जो मुनियो से भी नहीं हो सके। सुमेरू की चूलिका समान दृढ, विशल्या उपसर्गो में भी चलायमान नहीं हुई। धन्य है इसका रूप, साहस, धर्ममें दृढश्रद्धा और इसका तप और कोई स्त्री करने में समर्थ नहीं। जिनमत के अनुसार तप करते है, तो तीनलोक को जीतते हैं। इस बात का क्या आश्चर्य? तपसे ही मोक्ष प्राप्त करते हैं, मै दूसरों के आधीन, जो मुझे वश करें मैं उसके शत्रु का नाश करूँ। अब मुझे विशल्याने जीती, मै अपने स्थान जा रही हूँ। आप मेरा अपराध क्षमा करो। इस प्रकार शक्तिदेवीने कहा, तब तत्वों को जानने वाला हनुमान शक्ति को विदाकर, अपनी सेना में आया। द्रोणमेघ राजा की राजकुमारी विशल्या अतिलज्जा से भरी, राम के चरणों में नमस्कार कर, हाथजोड खडी हुई। विद्याधर लोग प्रशंसाकर नमन करते हुये आशीर्वाद देते रहे। जैसे इन्द्रके समीप शची इन्द्राणी जाकर ठहरे वैसे विशल्या, सुलक्षण, महा भाग्यवती, सखियों के कहने से लक्ष्मण के समीप बैठी। पुर्णिमा के चन्द्रमा समान मुख और नेत्रों से महाअनुराग की भरी उदारमन से पृथ्वीपर सुख से सोये जो लक्ष्मण, उनके चरणों के निकट बैठ, अपने कोमलकर कमलों से लक्ष्मण के पैर स्पर्श किया, और मलियागिरी चन्दन से, पतिका सर्व अंग लिप्त किया। इस के

साथ, हजार राज कन्याये आई थी उन्होंने विशल्या के हाथ से चन्दन लेकर विद्याधरों को छींटे लगाये सभी घायल, मूर्च्छित सैनिक, राजा, विद्याधरादि सभी अच्छे हुये। इन्द्रजीत कुम्भकरण, मेघनाथ मुर्च्छित थे, उनको भी चन्दनके लेपसे अच्छे किये। वे परम आनन्दको प्राप्त हुये। और भी सभी योद्धा एवं हाथी, घोडे, पयादे जो घायल थे, वे सभी अच्छे हुये। सभी कटक अच्छा हुआ। और लक्ष्मण जैसे सोयें हुये जगते, ऐसे वीणाके नादसुन अतिप्रसन्न हुये, और मूर्च्छित शय्या छोडकर, श्वासले आँख खोली और उठकर क्रोधके भरे दशों दिशाओं मे देखकर कहने लगे, कहाँ गया वो रावण, कहॉ गया वो रावण? यह वचन सुन राम अतिहर्षित हुये, फूल गये हैं नेत्र कमल उनके, महाआनन्द के भरे बडे भाई रोमांचित होकर अपनी भुजाओं द्वारा भाई से मिले। और कहा हे भाई! वह पापी तुझे शक्तिसे अचेतकर, आपको कृतार्थ मानकर घर गया। और इस राजकुमारी विशल्याके प्रभाव से तू अच्छा हुआ। और जामवतादि सभी विद्याधरोने शक्तिलगी वहॉ से लेकर निकलने पर्यन्त सभी वृतान्त कहा। और लक्ष्मण ने विशल्या को अनुराग की दृष्टि से देखी। कैसी है विशल्या? श्वेत श्याम आरक्त तीनवर्ण कमल समान नेत्र, चन्द्रमा समानमुख कोमलशरीर मानो साक्षात् रूपवान मूर्तिवान कामकी क्रीडा ही है, मानों तीनलोक की शोभा एकत्रकर नामकर्म ने विशल्या को बनाई है, विशल्या को देख लक्ष्मण आश्चर्य सहित सोचने लगें कि यह लक्ष्मी है, या इद्रकी इन्द्राणी है, या चन्द्र की कान्ति है? यह विचार करते है, और विशल्या के साथकी स्त्रीयां कहती है हे स्वामी! आपका विवाह उत्सव विशल्या के साथ हम देखना चाहते हैं, तब लक्ष्मण प्रसन्न हुये मंद मुस्कान हुई, और विशल्या से प्राणिग्रहण किया। और विशल्याकी सर्व जगत में कीर्ति फैली। इस तरह जो उत्तम श्रेष्ठ पुरुष है उन्होने पूर्व जन्म मे महा शुभ क्रियाये की है उनको मनवांछित मनोज्ञ, सुन्दर वस्तु की प्राप्ति होती है, सूर्य चन्द्र समान ज्योति फैलती है, पुण्य से जगल मे भी मंगल होता और पाप से नगर भी जगल होता। इसीलिये सभी प्राणी सुख चाहते हो तो पुण्य कार्य करो।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहा पद्मपुराणभाषावचनिका मे विशल्याका समागम वर्णन करनेवाला पैसठवापर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-66

रावण के द्वारा राम के पास दूत भेजना

अथानंतर लक्ष्मण का विशल्या से विवाह करना, और शक्ति का निकलना यह सब समाचार रावण ने, हलकारों के मुख से सुनकर, कुछ हंसा और मंद बुद्धि कहने लगा कि शक्ति निकली तो क्या? और विशल्या से विवाह किया तो क्या? तब मारीचादि मंत्री विचारों मे प्रवीण कहने लगे, हे देव! आपके कल्याण की बात कहेगे, आप क्रोध करों या प्रसन्न हो। सिंहवाहिनी और गरुड़वाहिनी विद्या, राम लक्ष्मणको बिना पुरुषार्थ से प्राप्त हुई, वह आपने देखी। और आपके दोनो बलवान पुत्र और भाई कुम्भकरण को उन्होंने बांध लिये, यह आपने देखा। और आपकी दिव्यशक्ति निरर्थक गई। आपके शत्रु महाप्रबल है। उनसे आप कदाचित जीतेगें तो भी आपके दोनो पुत्र और भाई का निश्चय से नाश होगा। इसीलिये ऐसा जानकर हमारेपर कृपा करो, हमारी विनती अब तक आपने कभी भी अस्वीकार नहीं की। अत· अब आप सीता को छोडो। और हे प्रभो! आपको धर्मकी बुद्धि हमेशा से है, वैसी ही रखो, उससे सभी लोगो की कुशल होगी, एवं राघवसे प्रेम करो, यह काम करने में दोष नहीं हैं, महागुण ही हैं, आपके द्वारा ही सम्पूर्ण लोकको मर्यादा रहेगी, धर्मकी उत्पत्ति आपके द्वारा ही होगी, जैसे समुद्रसे ही रत्नकी उत्पत्ति होती है। ऐसा कहकर सभी मंत्रियो ने मत्रणाकर, रावण को हाथजोड प्रणामकर विनती करने लगे। सबने यह विचार किया कि एक दूत विद्या मे प्रवीण, सधि केलिये श्रीराम के पास भेजे उसी समय एक बुद्धिमान, तेजस्वी, मधुरभाषी दूत को बुलाया, और अमृत एव औषधि समान वचन कहे। परन्तु रावणने दूतको ऑखों से इशाराकर, मत्रियों का कहा हुआ अर्थ दूषित कर डाला। राम रावणको प्रीति करने की बात मत्रीयो ने कही, लेकिन रावणने उस बात का परिवर्तन कर दिया, दूत रावण को नमस्कार कर आकाशमार्ग से जा रहा था, दूरसे रामके भयानक कटक को देखकर भी भय नहीं हुआ। दूत के बाजे सुनकर, बानर वंशियों की सेना, क्षोभको प्राप्त हुई। रावणको आनेकी शंका हुई, जब दूत पास में आया उसे देख, मन शांत हुआ, तब सोचा यह रावण नहीं है और कोई है, सेना को विश्वास हुआ। रावण का दूत दरवाजेपर आया। तब

द्वारपालने भामडलसे कहा, और भामडलने विनतीकर राम से कहा। तब रामकी आज्ञासे बहुत लोगों के साथ, दूतको पास में बुलाया और उसकी सेना कटक में उतरी। रामको नमस्कार कर दूत कहने लगा। हे रघुचन्द्र! मेरे वचनों से मेरे स्वामी ने आपको कुछ कहा है, वह आप मन लगाकर सुनो, युद्ध करने से कोई प्रयोजन नहीं, पहले युद्ध के अभिमानी बहुत योद्धा मरण को प्राप्त हुये। इसीलिये प्रीति करना ही योग्य है, युद्ध से लोगों का क्षय होता, और महादोष एव अपवाद होता है, अब मेरे साथ आपको प्रीति ही योग्य है, जैसे सिह पर्वत की गुफाको प्राप्तकर सुखी होता है। ऐसे हमारे से प्रीति करनेपर आपको सुख होगा। मैं रावण जगत् प्रसिद्ध, क्या तुमने नहीं सुना इन्द्र जैसे राजाओ को मैंने बंदी बनाया। मेरी आज्ञा सुर असुर देव भी टालते नहीं, पाताल मे, जल मे, आकाश मे, कोईभी प्राणी आज्ञा को अस्वीकार नहीं करते। मै अनेक युद्धो में शत्रुओ को जीतने वाला वीर लक्षण का धारी रावण, सो आपको मै सागर पर्यन्त पृथ्वी विद्याधरो से मंडित दूगा, और लंका के दो भागकर बाट दूगा।

भावार्थ—सम्पूर्ण राज्य और आधी लका आपको देता हूँ, तुम मेरे भाई और दोनों पुत्रो को मेरे पास भेजो, और सीता मुझे दो, जिससे तुम्हारी कुशल होगी। और तुम अगर ऐसा नहीं करोगे, तो मेरे भाई और पुत्र जो बधन में है, उनको मैं बलात्कार से छुडाकर ले आऊँगा, और तुमको कुशल नहीं। तब राम बोले, मुझे तेरे राज्य से कोई प्रयोजन नही, और स्त्रीयो से भी कोई प्रयोजन नहीं, बस सीता हमारी हमारे पास भेजो। हम आपके भाई और दोनो पुत्रों को भेज देते है। और आपकी लंका आपके पास ही रहे। सम्पूर्ण राज्य आपही करो। मैं सीता सहित दुष्ट जीवो से युक्त वन मे ही सुख से विहार करूँगा। हे दूत! तू लंका के स्वामी से जाकर कहना कि इसी बात में तुम्हारा कल्याण है और तरह से नहीं। ऐसे श्रीराम के सर्वपूज्य वचन, सुखको देने वाले, उन वचनो को सुनकर दूत ने कहा हे नृपति! आप राज कार्य में समझते नहीं हो, मैं तुमको फिर से कल्याण की बात कहता हूँ, निर्भय होकर समुद्र पारकर, यहॉ आये हो, सो अच्छा नहीं किया, इस जानकी की आशा आपको अच्छी नहीं है, यदि लंकेश्वर क्रोधित हुआ तो सीताकी क्या बात, तुम्हारा जीना भी कठिन है। राजनीति में ऐसा कहा है। जो बुद्धिमान है उनको निरन्तर अपने शरीर की रक्षा करनी चाहिये, स्त्री और धन पर दृष्टि नहीं रखनी, और गरुडइन्द्रने सिंहवाहन और गरुडवाहन तुम्हारे पास

भेजे तो क्या? और तुमने छल कपटकर मेरे पुत्र और भाई को बाधे तो क्या? जब तक मैं जीवित हूँ, तब तक इन बातों का गर्व करना तुमको वृथा है। और तुम युद्ध करोगे तो न जानकी का और न तुम्हारा जीवन है। इसलिये दोनों मत मरो, सीता का हट छोडो। और रावण ने कहा है, जो बडे बडे विद्याधर इन्द्र समान पराक्रमी उन सबको मैंने युद्ध में जीते अथवा उनको मारे। कैलाशपर्वत के शिखर समान उनकी हड्डीयो के समूह देखो। जब दूत ने ऐसा कहा, तब भामडल क्रोधित हुआ, महा विकराल मुख करके कहा, हे पापी! दूत, श्याल चतुरता रहित दुर्बुद्धी वृथा क्या बोल रहा है? सीता की क्या बात, सीता तो राम लेगे ही, और यदि श्रीराम क्रोधित हुये तब रावण कुदृष्टि पशु कहाँ। ऐसा कहकर दूत को मारने के लिये खड्ग निकाला, तब लक्ष्मण ने हाथ पकडकर मना किया। भामंडल का, क्रोधसे नेत्र और मुख लाल हो गया। तब मत्रियो ने योग्य वचन कहकर भामडल को शात किया। हे नरेन्द्र! क्रोध छोडो यह दीन मारने योग्य नहीं, यह तो पराया नौकर है, जैसा वह कहलाते है, ऐसा यह कहता है, इनको मारने से क्या? स्त्री, बालक, दूत, पशु, पक्षी, वृद्ध, रोगी, सोया हुआ, शस्त्र रहित, शरणागत, तपस्वी, गाय ये मारने योग्य नहीं होते है। यह दूत राजाके शब्द एव मनके अनुसार बोलते है। तोता को जैसा पढाते है। वैसा बोलता है। यंत्र को जैसा बजाते वैसा बाजता है। ऐसे शब्द लक्ष्मण ने कहे, तब सीता का भाई भामडल शात हुआ। श्रीराम ने दूतसे कहा रे मूढदूत! तू शीघ्र ही जा और रावण से कहना, तू मूढ मत्रियो का बहकाया गलत काम करेगा तो ठगायेगा, तू अपनी बुद्धि से सोच विचारकर दूसरे किसी को पूछे मत। सीता का प्रसग छोड, सम्पूर्ण पृथ्वी का इन्द्रहो पुष्पकविमान मे बैठकर, जैसे भ्रमण करता था ऐसे कर। यह मिथ्या हट छोडदे, क्षुद्र लोगोकी बात मत सुन। करने योग्य कार्य मे मन लगा, तो सुख की प्राप्ति होगी। ऐसा कहकर श्रीराम तो चुप हो गये, और अन्य लोगोने दूतको पुन: बात नहीं करने दी, और निरादर कर निकाल दिया। दूत मनमे दुखी होकर रावण के पास गया और जाकर रावण से कहा—हे नाथ! मैने आपके आदेश प्रमाण रामसे कहा यह पृथ्वी अनेक देशों से पूर्ण, समुद्र पर्यत महारत्नो से भरी विद्याधरो के नगर सहित, मैं तुमको देता हूँ, बडे बडे हाथी तुरंग रथादि देता हूँ और यह पुष्पकविमान ले लो, जो देवो से भी दूर नहीं किया जाये, इसमे बैठकर विहार करो, और तीनहजार राजकन्यायें अपने परिवार की उनसे तुम्हारा विवाह करवा दूंगा, और सूर्य समान

सिंहासन, चन्द्रमा समान छत्र लो, और निडर होकर राज करो, इतनी सभी बातें मुझे प्रमाण है। और तुम्हारी आज्ञा से सीता मुझे चाहे, यह धनओर पृथ्वी हे राम! तुम ले लो। मैं थोडी विभूति रखकर ही, बेत के सिंहासनपर बैठूंगा। तुम अगर समझदार हो तो एक वचन मेरा मानो, सीता मुझे दो, यह वचन मैंने राम से बार बार कहा, फिर भी रघुनन्दन सीता का हट नहीं छोडते। उनको केवल सीता से ही अनुराग है, और वस्तुओं से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं। हे देव! जैसे मुनि शातचित्त अठाईस मुलगुणो की क्रिया नहीं छोडते, वह क्रिया मुनिव्रत की मूल है। ऐसे श्रीराम सीताको नहीं छोडते। सीता ही राम के लिये सब कुछ है। कैसी है सीता? तीनलोक मे ऐसी कोई अन्य रूपवान, गुणवान, श्रद्धावान सुन्दरी नहीं। और रामने तुम्हारे से कहा है, हे दशानन! लोकमे निद्यवचन तुम्हारे, राजाओं को कहना योग्य नहीं, ऐसे वचन पापी कहते है, उनकी जीभ के सौ टुकडे क्यो नहीं होते,। इस सीताके बिना मुझे इन्द्रके भोगोसे भी कोई मतलब नहीं, यह पृथ्वीका भोग तू कर, मै तो सीता सहित वनवास मे ही विचरण करूँगा। और तू परस्त्री का हरणकर मरनेको तैयार हुआ है। तो मै अपनी स्त्रीके लिये तुझे क्यो नहीं मारूँ? और मुझे तीनहजार कन्या देता है, सो उनसे मेरे कोई मतलब नहीं, मै वनके फल खाकरही सीता सहित वनमे विहार करूँगा। और सुग्रीव ने हसकर मुझे कहा, क्या तेरा स्वामी कोई शनिग्रह के वश हुआ है, क्या कोई वात विकार रोग उत्पन्न हुआ है। जो ऐसी विपरीत बात रक जैसा बकता है। क्या लकामे कोई ऐसा वैद्य नहीं या कोई मंत्र वादी नहीं, जो वायु का तेलादि से इलाज क्यो नहीं करवाते, नहींतो सग्राममे लक्ष्मण सम्पूर्ण रोग नाश करेगा। अर्थात मारेगा।

तब यह सुन, मैं क्रोधरूपी अग्निसे प्रज्वलित हुआ, और दूत ने सुग्रीव से कहा हे वानरध्वज! तू ऐसे बके है जैसे हाथी के पीछे कुत्ते भौंके। तू रामके मानसे मरना चाहता है, जो चक्रवर्ती को निंदा के शब्द कहता है। मेरे और सुग्रीव के बहुत बात हुई। और विराधित से कहा अगर तेरे मे शक्ति है, तो मेरे अकेले के साथ युद्धकर। और राम से कहा हे राम! तुमने महारण मे रावण का पराक्रम नहीं देखा, कोई तुम्हारे पुण्य के योग से वह वीर क्षमामें है। कैलाशको उठाने वाला, तीनलोक मे प्रसिद्ध तुम्हारा हित चाहकर तुम्हे राज्य देता है। उस समान और क्या, तुम अपनी भुजाओ से दशमुख रूपी समुद्र कैसे पार करोगे। हे राम! तुम कैसे रावण रूपी वनमे प्रवेश करोगे। हे राम! जैसे कमलके पत्तोंकी पवन से

सुमेरू नहीं डिगता, और सूर्य की किरणों से समुद्र नहीं सूखता, और बैल के सींग से धरती नहीं उठाई जाती, ऐसे तुम्हारे जैसे पुरुषों से नरपति दशानन नहीं जीता जायेगा। ऐसे प्रचंड वाक्य मैंने कहें, तब भामंडल महाक्रोध से, मुझे मारने के लिये खड्ग निकाला, तब लक्ष्मणने मना किया, कि दूत को मारना न्याय नहीं, श्याल पर सिंह कोप नहीं करते। हे भामंडल! क्रोध छोड प्रसन्न होओ। जो शूरवीर राजा गरीबपर प्रहार नहीं करते, ऐसे शब्दो से महापंडित लक्ष्मणने समझाकर भामंडल को शांत किया। और कपिवंशों के कुमारों ने महावज्र समान शब्दों से मुझे ललकार कर अनादर पूर्वक बाहर निकाल दिया। तब मैं आयुकर्म के योग से आकाश में गमनकर आपके निकट आया हूँ। हे देव! आज लक्ष्मण नहीं होता तो मेरा मरण ही होता। शत्रु और मेरे में जो विवाद हुआ, वह मैने आपसे कहा, कोई छिपा नहीं रखा। अब आप जैसा चाहो वैसा करो। दूतने ऐसा कहा तब गौतमगणधर ने श्रेणिक से कहा हे श्रेणिक! जो अनेक शास्त्रों के ज्ञाता नय मे प्रवीण हों। उनके मत्री निपुण हों और सूर्य समान तेजस्वी हों फिर भी मोहकर्म से लिप्त है, तो वे प्रकाश रहित होते हैं। यह मोहादि आठो कर्म प्रत्येक जीवोंको ससार मे भ्रमण कराते हुये, सुख दुखके फलको देते है। अत इन कर्मो से बचने का प्रयत्न करना चाहिये। मोहकर्म महाशत्रु है, इसलिये ज्ञानी पुरुषों को मोहसे दूर रहना चाहिये। विषयो मे फसकर मोह करना नरक का कारण है। अतः मोह त्यागकर अनन्त सुख प्राप्त करना।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहा पद्मपुराणभाषा वचनिका मे रावणके दूतका गमनागमन वर्णन करनेवाला छयासठवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-67

बहुरुपिणी विद्या साधन के लिये रावण द्वारा शांतिनाथ मंदिर में पूजा का आयोजन

अथानंतर रावण ने दूत के वचन सुन मंत्रियों से मत्रणाकर गाल पे हाथरख, नीचे देख कुछ चिन्ता करता हुआ सोचने लगा, शत्रुओं को युद्ध में जीतता हूँ, तो

भाई और पुत्रों की अकुशल है। और कदाचित शत्रुओं के कटक में बलात्कार पूवर्क भाई और पुत्रों को ले आऊँ, तो शूरवीरता मे हीनता दिखती है। यह कार्य क्षत्रियो को योग्य नहीं, क्या करूँ मुझे कैसे सुख होगा? यह सोचते हुये रावण के मनमे आया कि, मैं बहुरूपिणी विद्या सिद्ध करूँ। ऐसा विचारकर सेवकों को आज्ञा दी कि श्रीशांतिनाथभगवान के मन्दिर में तोरणादि से सजावट करो चैत्यालय में विशेष पूजा कराओ, और पूजा का कार्य मन्दोदरी को सौंपा गौतमगणधर कहते है हे श्रेणिक यह बीसवे मुनिसुव्रतनाथ तीर्थकर का समय, इस भरतक्षेत्र में जगह जगह जिनमदिर थे, उन मन्दिरो में चारो प्रकार के सघ का विहार होता था, नगर में राजा, सेठ, प्रजा के लोग सभी जैनी होते थे, वे जिनमन्दिर बनवाते उनमें जिनशासन के भक्त देव धर्मकी रक्षा करने में प्रवीण, शुभ कार्यो में तत्पर, पुण्यशाली भव्यजीवों से पृथ्वी ऐसी सुन्दर लगती, मानों स्वर्ग के विमान ही हैं। जगह जगह मन्दिरो मे दान पूजाादि से प्रभावना होती। पर्वत पर्वत, गॉव गॉव, नगर नगर, वन वन, भवन भवन, घर घर में जिनेन्द्र भगवान के मन्दिर थे, महा सजावटो से युक्त, गीतो की ध्वनि से मनोहर, बाजो की ध्वनि से गुंजायमान होते थे, तीनो काल लोग दर्शनो को आते थे। साधुओ के समागम से युक्त रहते थे। मन्दिरो मे महा सुगन्ध युक्त धूप घट एवं पुष्पो की मालायें, झालर घंटा ध्वाजाओ से शोभित मन्दिर मे स्वर्णमयी पचवर्ण की प्रतिमायें विराजमान एव ऊँचे ऊँचे शिखरो से विशेष शोभायमान थे। रावण के राजभवन के मध्य मे, श्री शातिनाथ भगवान का चैत्यालय है। कैसाहै चैत्यालय? जगतके जीवोसे वदनीय। ऐसे चैत्यालय में पूजा पाठ स्वाध्याय जाप सामायिक करने से मन मे शाति एव सुख मिलता है। धर्मका लाभ होकर स्वर्गमोक्ष के सुखकी प्राप्ति होती है। यह जिनधर्म ही, मनवाच्छित फलको देने वाला है, जैसे सूर्य के प्रकाश मे नेत्रवाले जीव सभी पदार्थो को देखते है ऐसे जिनधर्म के प्रभाव से भव्यजीव स्वर्गमोक्ष के सुखोको भोगते हैं। जिन भगवान के दर्शनसे जन्म जन्मके पाप नष्टहोते है और संसारकी कामनाओ को पूर्णकर, पश्चात् आत्मसुख को प्राप्त करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे श्रीशातिनाथ के चैत्यालयका वर्णन करनेवाला सडसठवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-68

लंका में अष्टान्हिका महोत्सव के समय सिद्धचक्र व्रत की आराधना

अथानंतर फाल्गुन शुक्ला अष्टमीसे लेकर पूर्णिमा पर्यन्त, अष्टान्हिका पर्व है। उन दिनो में सिद्धचक्र का व्रत होता है। इन आठ दिनों मे, लंका के लोग और लश्कर के लोग नियम व्रतको ग्रहण करने लगे। सेना के सभी उत्तम लोगोंने सोचा कि, यह आठदिन धर्मके है, इन दिनो में युद्ध नहीं करेगे। और आरम्भ की क्रियाये भी नहीं करेगे, यथा शक्ति व्रत उपवास नियम एव भगवान की पूजा करेगे। इन पर्वके दिनोमे देवभी पूजा प्रभावना मे लीन रहते है, क्षीरसागर के जलको स्वर्ण कलशो में भरकर जिनेन्द्रभगवान का अभिषेक करते है। और मनुष्य भी अपनी शक्ति प्रमाण अभिषेक पूजा करते है। इन्द्रादि देव नन्दीश्वर द्वीप में जाकर जिनराज का अर्चन करते है, तो क्या मनुष्य यहॉ चैत्यालयो की पूजाादि नहीं करते, अवश्य ही करते हैं, देव-स्वर्ण रत्न कलशों से अभिषेक करते, और मनुष्य अपनी सम्पदा प्रमाण कलशों से अभिषेक करते हैं। जो महानिर्धन मनुष्य है तो भी वे पलाश पत्तो के कलश बनाकर अभिषेक करते है। देव रत्नस्वर्ण के कमलादि अष्टद्रव्य से पूजा करते है, तो मनुष्य भी अपनी शक्ति प्रमाण अष्टद्रव्य चावलादि से पूजा करते है। लंका के लोगो ने ऐसा विचारकर भगवान के चैत्यालयो को उत्साह सहित ध्वजा पताकाओ से एवं स्वर्ण रत्न मोतियों से सजाया। और रत्न स्वर्ण के चूर्ण से मंडल बनाये। मणि स्वर्ण के कलशो में दूध दही घृत से पूर्ण भर, कमलो के पत्तों से ढके एव मोतियो की माला कलशों के कंठ मे लगाकर, ऐसे कलशोको भक्तिसे हाथोमें लेकर जिनेन्द्रभगवान का महाभक्ति से मंत्र पूर्वक अभिषेक किया। नन्दनवनके पुष्प, अथवा लकावनके अनेक पुष्प कर्णिकार, कदंब, चम्पा, पारिजात, मंदार, गुलाब, जुही, चमेली, केवडाादि मणि सुवर्णादि के कमलों से जिनराज प्रभुकी अष्टद्रव्य से पूजा करने लगे। तथा ढोल, मृदंग, ताल, मजीरा, शंख इत्यादि अनेक बाजों के साथ नृत्य गान हुये। लका के निवासी बैर छोड आनन्दरूप से आठ दिनों मे भगवान की अतिमहिमा पूर्वक पूजा करते रहे। जैसे नन्दीश्वर द्वीप में देव पूजा करते। ऐसे

रावण श्रीशातिनाथ के मन्दिर मे जाकर पवित्र मनसे भक्तिपूर्वक पूजा करने लगा। गौतमगणधर कहते हैं। हे श्रेणिक! जो महाविभूति सहित भगवान जिनेन्द्र की पूजा करते हैं, उनके पुण्य का वर्णन कौन कर सकते हैं, वह श्रेष्ठदेवगति के सुख भोगते पुन: चक्रवर्तियो के भोगो को प्राप्त होते, पश्चात राज्य को छोड मुनिव्रत को धारणकर महातप से परममुक्ति को प्राप्त होते हैं, कैसा है तप सूर्य से अधिक है तेज जिसका। जिनेन्द्र भगवान की पूजा भक्ति से सम्यक्त्व की प्राप्ति होती, सम्यक्त्व से रत्नत्रय की आराधना करते हुये, आत्म सुख में लीन होते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे शातिनाथ चैत्यालय मे अष्टान्हिका का उत्सव वर्णन करनेवाला अडसठवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-69

रावण का अष्टान्हिका पर्वमें लोगों को व्रत नियम धारण करने का आदेश

अथानतर शांतिका कारण श्रीशांतिनाथ का मन्दिर, कैलाश के शिखर समान ऊँचा, रावण के राजभवन के मध्य मे, सुमेरुपर्वत के समान सुशोभित हो रहा था, रावण ने मन्दिरमे जाकर विद्यासाधन की इच्छा से अद्भुत अनुपम द्रव्यो से भगवान का अभिषेक, अनेक बाजों की ध्वनी एव मत्रो की शुद्धि पूर्वक किया। पश्चात् मनोहर द्रव्य, महासुगन्धित धूप, रत्नमई दीपक एवं अष्टद्रव्यो से, श्रीशांतिनाथ भगवान की पूजा की। सफेद वस्त्र पहन, मस्तक पर मुकुट उस पर चूडामणी महा ज्योति स्वरूप, ऐसे रावण ने दोनों हाथजोड मन वचन काय से शातिनाथ भगवान को अष्टाग नमस्कार किया। और भगवान के सन्मुख पवित्र भूमिपर स्फटिक मणि की माला हाथ मे लेकर कायोत्सर्ग मुद्रा मे खडे हुये। शांतिनाथ के चैत्यालय मे जाने से पहले, रावण ने मन्दोदरी को आज्ञा दी, कि तुम मंत्री और कोतवाल को बुलाकर नगर मे घोषणा करवाना, कि सभी प्रजा के लोग नियम पूर्वक धर्म कार्य मे रत रहे। सम्पूर्ण व्यापार को छोड जिनबिब की पूजा करें।

गरीबों को मन वांच्छित दान दो। अहंकार छोडे जब तक मेरा नियम पूरा नहीं होगा, तब तक सभी लोग श्रद्धा एवं संयम का पालन करें। कोई कदाचित् तुमको कष्ट दें, तो तुम सहन करना। महा बलवान हो तो बल का गर्व नहीं करना। इन दिनो में कोई भी क्रोध करेगा। तो अवश्य दण्ड पायेगा। जो मेरे पिता समान पूज्य भी हों, और इन दिनों में कलह करेगे तो मै उन्हें मारूँगा। कोई भी पाप क्रिया नहीं करेगा, यह आज्ञा मन्दोदरी को देकर रावण मन्दिर में गये। मन्दोदरी ने मत्री और यमदण्ड कोतवाल को, बुलाकर पति की आज्ञा का आदेश दिया। तब सबने कहा जो आप आज्ञा करोगी, वही हम करेगें। आज्ञा का पालन करते हुये संयम नियम व्रत धर्ममें लीन हुये। सभी प्रजाके लोग जिनपूजा में विशेष अनुरागी हुये। सम्पूर्ण कार्य छोड सूर्य की ज्योति समान जिनमन्दिर में निर्मल भावो से सयम तप त्याग का साधन करने लगे। तपसे ही कर्मो कि निर्जरा होती है। शुभ भावोसे पुण्यका फल ससार के सुखोंको प्राप्त कराता है। शुद्धभावो से कर्मोकी निर्जराकर, मोक्ष सुख प्राप्त होता है। अत फलकी इच्छा रहित शुद्धभावोसे पुण्यकी क्रियाकरे, तो स्वर्ग मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणभाषावचनिका मे लकाके लोगोका नियमव्रत धारणवर्णन करनेवाला उनहतरवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-70

रावण का विद्या साधना और वानरवंशी कुमारों द्वारा लंका में उपद्रव करना

अथानंतर श्रीराम के कटक में, हलकारों के द्वारा, समाचार आये कि रावण बहुरूपिणी विद्या साधने के लिये, शातिनाथ के मन्दिर में बैठा है। चौबीस दिनों में बहुरूपिणी विद्या सिद्ध होगी। यह विद्या ऐसी प्रबल है, जो देवो के मद को भी चूर्ण कर देगी। तब सभी वानरवंशीयों ने सोचा, कि यह नियम पूर्वक विद्यासाधन कर रहा है, उसको क्रोध उत्पन्न कराने का प्रयत्न करना चाहिये, इससे रावण को विद्यासिद्ध नहीं होगी। अगर विद्या सिद्ध हो गई, तो इन्द्रादि भी जीतने मे समर्थ नहीं होगें, तो हमारी क्या बात। तब विभीषण ने कहा, कि रावण को क्रोध

आये, ऐसा उपाय शीघ्र ही करो। तब सबने विचारकर, राम से कहा, कि लका लेने का यह समय है, और रावणको विद्या सिद्ध करने में विध्न करे। और भी अपने को जो कुछ करना हो वह कर सकते है। यह शब्द कपिध्वजो के सुन श्रीरामचन्द्रजी महाधीरवीर कहने लगे, हे विद्याधरो आप महा अज्ञानता की बात करते हो, क्षत्रियकुल का यह धर्म नहीं है, जो ऐसे कार्य करे। अपने क्षत्रियकुल की यही परम्परा है, जो भयसे भाग जाता, उसका बध नहीं करना, जो नियमपूर्वक जिन मन्दिर मे बैठे है उन पर उपद्रव कैसे करे। यह नीचकर्म कुलवानो को योग्य नहीं, यह अन्याय प्रवृति क्षत्रियो की नहीं, यह मधुरशब्द रामके सुन, सबने विचार किया कि हमारे प्रभु श्रीराम महाधर्म के धारी है, उत्तम भावो के धारक है, इनकी कभी भी अधर्म मे प्रवृति नहीं होगी। तब लक्ष्मण की जानकारी मे विद्याधरो ने अपने राजकुमारो को उपद्रव करने के लिए लकामे भेजे। और सुग्रीवादि बडे बडे राजा, आठ दिनो का नियमकर, जप तप करने लगे। और विद्याधरो के राजकुमार प्रीतकर, दृढरथ, रतिवर्धन, नल, नील, अग, अगदादि अनेक राजकुमार, सिह, व्याध्र, गज, अष्टापदादि के रथोपर या विमान मे बैठकर, कोई घोडोपर चढे उनपर छत्र ध्वजाये फहरा रही है, दशो दिशाओ को गुजायमान करते हुये लका में प्रवेश किया। और मन में विचार करने लगे कि बडा आश्चर्य है, यहाँ लका के लोग निश्चित बैठे है, किसीको सग्राम का भय नहीं। देखो रावण की गम्भीरता कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनाथ बधन मे पडे है। रावण के योद्धा हस्त प्रहस्त मारे गये और अक्षादि अनेक योद्धा कटगये, मरगये तो भी लकापति को कोई चिन्ता नहीं। इस प्रकारकी चर्चा परस्पर कर रहे है। विभीषण का पुत्र सुभूषण ने कपिकुमारो से कहा, कि तुम निर्भय होकर लका मे प्रवेश करो, बालक वृद्ध स्त्री इनको तो कुछ नहीं करना, शेष लोगो को परेशान करो। तब सभी राजकुमार चचलता पूर्वक लकामे उपद्रव करने लगे। लकाके लोग इनको भयानक क्रियाओ को करते देख दुखी हुये। रावण के राजमहल मे भी कपिकुमारो ने महाउपद्रव किया, तब राजमहल में अनेक राजाओ को चिन्ता हुई, कि यहाँ तो मृदगादि के मगल ध्वनी होती, निरन्तर स्त्रीयाँ नृत्य करती, जिन पूजा मे लीन, राजकन्याये धर्म कार्य में तत्पर हैं। वह शत्रुसेना के क्रूरशब्द एव उपद्रवोको देख भयभीत हुई। सब मनमे सोच रहे हैं, कि अब न जाने क्या होगा। इस प्रकार नगरीके सभी लोग व्याकुल हुये। तब मन्दोदरी का पिता राजामय, सेनासहित कवच पहन आयुध ले, युद्धके लिये राज दरवाजे पर आया,

तब रानी मन्दोदरीने पिता से कहा, हे तात! जिस समय लंकेश्वर मन्दिर में पधारे, उस समय आज्ञाकर गये थे, कि सभी लोग शातिसे रहना, कोई कषाय मत करना, इसलिये आप कषाय पूर्वक युद्ध मत करो, ये दिन धर्मध्यान के है। धर्म का सेवन करो, अगर युद्ध करेगे तो स्वामी की आज्ञा भग होगी। और आप फल अच्छा नहीं पायेगे, यह वचन मन्दोदरी के सुन, राजामय शात हुये, और शस्त्र नीचे डाल दिये। वानरवंशी राजकुमारों ने, अपनी मर्यादा तोड, नगरका कोट भंग किया, वज्रके कपाट दरवाजे तोडे।

अथानंतर वानरवंशी कुमारो को देख, लंकाके लोग घर घर मे भय से कहते है, कहॉ भागकर जाये, ये आये, बाहर खडे नहीं रहो, अन्दर घुसो, हाय मॉ, यह क्या हुआ? हे तात! देखो, हे भाई! हमारी रक्षा करो, यह शत्रु आये, अभी मारेगे, क्या करे इस तरह नगरीके लोग महादु.खी हुये। लोग भागकर रावण के महल मे आये, अपने वस्त्रहाथमे ले एव बालको को गोदमे लेकर स्त्रीया भागी हुई जा रही है, कोई गिरती पडती जा रही है, हाथ पैर एव गले के हार टूट गये, मोतीयों की माला टूट रही है, कोई भयसे पतिके हृदय से लिपट रही है, इस प्रकार लोगों को दु खी देखकर, जिनशासन के देव, श्रीशान्तिनाथ के मन्दिर मे से, महाभैरव भयकर आकार सहित, मध्यान के सूर्य समान तेज, होठ कम्पित, नेत्र लाल, भयानक शब्द को करते हुये, विकराल रूप से बाहर आये, तब उन्हे देख वानरवशी कुमार भयसे कम्पित हुये, वह देव क्षणमे सिह, क्षणमे हाथी, घोडा, सर्प, वायु, वृक्ष, पर्वतादि की विक्रियाकर कपिकुमारो को दुखी करने लगे। तब कटक के देव मदद करने लगे। तब कटक के देवो का और लका के देवो का परस्पर महाभयकर युद्ध हुआ। यक्ष का स्वामी पूर्णभद्र क्षेत्रपाल को महाक्रोध हुआ, दोनो पक्ष परस्पर बात करने लगे, देखो ये कपिध्वजों के कुमार, महाउपद्रव कर रहे है, रावण तो आहार पानी त्यागकर, शरीर से ममत्व एव जगतका सभी कार्य छोड विद्या साधना कर रहा है, ऐसे शातचित्तधारी रावणको यह पापी उपद्रव कर रहे हैं। यह योद्धाओ की क्रिया नहीं है। यह वचन पूर्णभद्रके सुन, मणिभद्र बोले हे पूर्णभद्र! रावण का मन इन्द्रभी डिगानेमे समर्थ नहीं है। रावण पूर्णरूप से शात स्वभावी है। तब पूर्णभद्र ने कहा, लंका के उपद्रवको हम दूर करेगे। यह कहकर दोनो धीर सम्यग्दृष्टि जिनधर्मी यक्षों के ईश्वर, युद्धको तैयार हुये, तब वानरवशी कुमार, और उनके पक्षके देव सब भाग गये। इन दोनों यक्षोने महावायु चलाई पाषाण वर्षाये, गर्जना की, तब कपिदल सूखे पत्तो की तरह उड गये। उनके साथ

ही दोनो यक्ष, राम के निकट उलाहना देने को पहुँचे, पूर्णभद्र महापुरुष सुबुद्धि रामकी स्तुतिकर कहने लगे, राजा दशरथ महा धर्मात्मा उनके तुम राजकुमार, अयोग्य क्रिया के त्यागी, शास्त्र के पारगामी, गुणो के सागर, आपकी सेनाके लोग लका के लोगोपर उपद्रव करते है, यह कहाँ की बात? जो जिसका द्रव्य हरते है, वह उसका प्राण हरते हैं। यह धन जीवो का बाह्य प्राण है। अमूल्य हीरे, वैडूर्यमणी, मूगा, मोती पद्मरागमणि इत्यादि अनेक रत्नो से भरी लंकामे उपद्रव किया। यह वचन पूर्णभद्र के सुन, राम का भाई लक्ष्मण ने कहा, यह श्रीरघुनन्दन उनकी रानीसीता प्राणों से भी प्यारी, शीलरूपी आभूषणो की धारी, महासती को वह दुरात्मा रावण कपटपूर्वक हरकर ले गया, उसका पक्ष आप क्यो ले रहे हो? हे यक्षेन्द्र! हमने तुम्हारा क्या अपराध किया, और उन्होने तुम्हारा क्या अच्छा किया, जो तुम भोहे टेडी और ऑखे लालकर, हमको उलाहना देनेको आये हो, सो अच्छा नहीं। ऐसा लक्ष्मण ने कहा, और राजासुग्रीव महाभयभीत होकर पूर्णभद्र को अर्घ चढाया। और कहने लगे, हे यक्षेन्द्र क्रोध छोडो हम लका मे कोई उपद्रव नहीं करते, परन्तु बात यह है कि रावण बहुरूपिणी विद्या साधता है, और अगर उसको विद्या सिद्ध हुई, तो उसके सामने कोई ठहर नहीं सकेगा। यह क्षमावान होकर विद्या साध रहा है, उसको क्रोध उत्पन्न कराये, तो विद्या सिद्ध नहीं होगी, इसलिये यह कार्य किया है, और कोई मतलब नहीं, तब पूर्णभद्र बोले, ऐसा करो। परन्तु लकाके लोगों को कोई कष्ट मत दो, तुम रावणके शरीरको कष्ट मत दो। अन्य बातों से क्रोध उत्पन्न कराओ, परन्तु रावण अतिदृढ है, उसे क्रोध आना कठिन है। ऐसा कहकर दोनो यक्षेन्द्र, भव्यजीवो में है वात्सल्य जिनका, प्रसन्न है नेत्र जिनके, मुनियो के भक्त, वैयावृत मे लीन, ऐसे जिनधर्मी यक्ष अपने स्थान को गये। राम को उलाहना देने आये थे, सो लक्ष्मण के वचनो से लज्जावान हो समता भावकर, अपने स्थान आये। गौतमस्वामी कहते है, हे श्रेणिक! जब तक प्राणी निर्दोषी दिखता है, तब तक परस्पर प्रेम होता है, और जब प्राणीयों के दोष मालुम होते है, तब प्रेमनष्ट होता है। जैसे सूर्य बादलों में नहीं दिखता। जहाँ सत्यता हो एवं निर्दोषता हो वहाँ देव भी आकर रक्षा करते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रावणका विद्यासाधन कपिकुमारोका लकामे गमन, पुन मणिभद्र पूर्णभद्रका क्रोध, एव क्रोधकी शातिका वर्णन करनेवाला सत्तरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-71

रावण को बहुरूपिणी विद्या का सिद्ध होना

अथानंतर पूर्णभद्र, मणिभद्रको शान्तदेख, सुग्रीव के पुत्र, अगद ने लंका में प्रवेश किया, वह अंगद किहकंधनाम के हाथीपर बैठकर, महाऋद्धि सहित, सुन्दर वस्त्र स्वर्ण के आभूषण पहने आगे पीछे, दाईं बाईं तरफ पयादे चल रहे है, वीणा बासुरी आदि बाजे बज रहे हैं, आगे नृत्य हो रहा हैं, कपिवंश के राजकुमारो ने, लंका में ऐसे प्रवेश किया, जैसे स्वर्ग मे देव प्रवेश करे। लका में प्रवेश करते अगद को देख, स्त्रीयॉ परस्पर कहती हैं, देखो यह अगद रावण के राजभवन में चला जा रहा है, इसने क्या सोचा हैं? यह क्या करेगा? इस तरह प्रजाके लोग बातें कर रहे है। और अगदादि सब रावण के राजभवन मे पहुँचे। वहॉ मणियो का चौक देख, इन्होने जाना कि, यह सरोवर है, तो परेशान हुये। पुनः ध्यान से देखा तो जाना कि यह मणियों का चौक है, तब आगे गये, सुमेरू की गुफा समान रत्नोसे बना मन्दिर का दरवाजा देखा, मणियों के तोरणों से दैदिप्यमान, अंजनगिरी के समान नीलमणि के हाथी, उनके बडे बडे मनोज्ञ दात, उन हाथीके मस्तकपर सिहके चिन्ह, तीक्ष्ण दाढ, भयकर विकराल केशो को देखकर, सभी सामन्त डरे। तब अगदने सबको समझाया कि यह बनावटी हाथी है। तब सभी आगे चले। रावणके राज महल में कपिवशी ऐसे जाने लगे, जैसे सिंहकी गुफामे डरकर मृग जाता है। अनेक दरवाजो को पारकर, आगे गये। महलों की रचना ऐसी गहन थी, उसमे सभी ऐसे भटके जैसे जन्म से अंधे मनुष्य भटके। स्फटिक मणियो के महलो को देख, आकाश जानकर भटकते रहे। इन्द्रनीलमणि की दिवालो के अन्धकार से मस्तकपर पत्थर की चोट लगी, तब पृथ्वीपर मूर्च्छित होकर गिरे। किसी तरह मार्गको देखकर आगे गये, वहॉ स्फटिकमणि की दिवालो से घुठने फूटे, ललाटों पर चोट लगी, पुनः वापिस जाने लगे तो मार्ग नहीं मिला, सामने एक रत्नों से निर्मित स्त्रीको देख साक्षात स्त्री जानकर, उससे पूछा तो वह क्या कहे? तब वे आगे गये वहॉ स्फटिक की भूमिपर गिरे, पुन. उठकर चले तो सामने शातिनाथ भगवान के मन्दिर का शिखर दिखाई दिया। परन्तु स्फटिकमणि की दीवाल बीच में थी इसलिये वे जा नहीं सके, तब एक रत्नमई द्वारपाल को देखा, उसके हाथ में सोनेकी एक छडी थी। उससे कहा, कि श्रीशांतिनाथ भगवान के

मन्दिर का मार्ग बताओ, तो वह क्या बताये? तब उन्होने द्वारपाल को हाथों से मारा, तो मारने वालो की अंगुली ही टुट गई। पुन: आगे गये तब देखा कि यह इन्द्रनीलमणि का दरवाजा है, वहॉ एक बोलता हुआ मनुष्य मिला, उसके बाल पकडकर कहा, कि तू हमारे आगे आगे चल और शातिनाथभगवान का मन्दिर बता, जब वह आगे चला तब यह निसंकोच होकर मदिर में पहुंचे। जय जयकार कर पुष्पाजली चढाये, मन्दिर को देख आश्चर्य करने लगे कि चक्रवर्ती के राजभवन मे जिनमन्दिर हो ऐसा यह मन्दिर है। अगद पहले ही वाहन और सेनाादि को छोड अन्दर गया, और भगवान की तीनप्रदक्षिणा देकर स्तोत्र पढ अष्टाग नमस्कार किया। दिवालोंपर सोलह स्वप्नादि के चित्र देख, हर्षित होकर पुन भगवान की वन्दना की। और शांतिनाथ भगवान के सामने रावण को पद्मासन से बैठा देखा। जैसे सूर्य के सन्मुख राहु बैठा हो। जैसे भरत जिनदीक्षा को चाहते, वैसे रावण विद्या को चाहता। रावण से अगद कहता है, हे रावण! कहो अब तेरी, क्या इच्छा है। तुझे ऐसा करूँ जैसे मृत्यु भी नहीं करे, तूने यह क्या पाखड रचा है धिक्कार है तुझे, तू पापी है, वृथा विषयो के लिये विद्या साधन की शुभ क्रिया करता है, ऐसा कहकर उसकी धोती निकाल दी। उनकी रानियो को खोटे वचन कहकर उनके सामने मारा, रावण के सामने पुष्प रखे थे, वह उठा लिये, रावण के हाथ मे स्फटिक की माला थी उसे छीन ली, एव मोती बिखर गये, पुन माला बनाकर रावण के हाथ मे दी, पुन छीन ली, फिर गलेमे डालदी, फिर निकालकर मस्तकपर डाल दी। और राजलोक में उपद्रव करने लगे, किसीके कठमे कपडे की रस्सी बनाकर बाध दिया, किसीके गलेमे, नीचे वाला वस्त्र पहनाया, खम्भे से बाध दिया, पुन छोड दिया, किसीको पकडकर अपने लोगो से कहा कि इन्हे बेच आओ। तो उसने हसकर कहा पाच दिनारो में बेच आया, इस प्रकार अनेक क्रियाये की। किसी के कानो मे बिछिया पहनाई, किसी के बालोमें करधनी लगाई, किसी के मस्तक का मुकुट चरणो में बांध दिया, किसीको परस्पर में केशो से बाध दिया, किसीके मस्तकपर बोलते हुये मोर बैठाये, इस प्रकार रावण के सन्मुख सभी को दुखी किया। और अगदने क्रोधसे रावण को कहा, हे अधमराक्षस! तूने कपट पूर्वक महासती सीता का हरण किया, अब हम तेरे देखते ही तेरी सब रानियो को हरणकर ले जा रहे हैं, तेरे मे शक्ति हो तो युद्धकर, ऐसा कहकर रावण के सामने मन्दोदरी को पकड़कर लाया, जैसे मृगराज मृगी को पकडकर लाता है। मन्दोदरी की चोटी पकड कर खींचने लगा।

जैसे भरत राजलक्ष्मी को खींचता है। पुनः रावण से कहा हे पापी! देख यह तेरी पटरानी प्राणो से प्यारी, मन्दोदरी गुणवान उसे हम हरणकर ले जा रहे है। यह सुग्रीव के चमर ढोरने वाली दासी होगी, तब मन्दोदरी ऑखों से ऑसू बहाती हुई विलाप करने लगी। मन्दोदरी कभी रावण के पैरो को पकडती है, कभी हाथों को पकडकर कहती है हे नाथ! मेरी रक्षा करो, ऐसी दशा यह मेरी क्या आप नहीं देखते हो, क्या तुम रावण हो या और कुछ हो गये हो। जैसे निर्ग्रंथमुनि वीतरागी होते, ऐसे आप वीतरागी बने। धिक्कार है आपके बलको, जो इस पापीका मस्तक खड्ग से नहीं काटते हो। तुम महा बलवान, चॉद सूर्य समान, पुरुषों का अपमान नहीं सहते, अब ऐसे रको का अपमान कैसे सहन करते हो। हे लंकेश्वर! ध्यान मे मन लगाया, न किसी की सुनते हो, न किसीको देखते हो। अहंकार छोड अर्धासन से बैठे हो, जैसे सुमेरू का शिखर अचल होता, ऐसे आप अचल होकर बैठे है। विद्या की आराधना मे निश्चल शरीर महाधीर, ऐसे बैठे मानो काठ के हो, या चित्राम के हो। जैसे श्रीराम सीता का चिन्तवन करते ऐसे तुम विद्याका चिन्तवन करते हो? विद्या की प्राप्ति के लिये सुमेरू के समान स्थिर हुये हो। जब इस प्रकार मन्दोदरी ने रावण से कहा, उसी समय बहुरूपिणी विद्या दशो दिशाओ मे प्रकाश करती हुई जय जयकार शब्द का उच्चारण करती रावण के समीप आकर खडी हुई, और कहने लगी, हे देव! आज्ञा से उद्यमी मै आपको सिद्ध हुई, मुझे आदेश दीजिये। चक्रवर्ती और अर्धचक्रवर्ती को छोड और कोई आपकी आज्ञा से विमुख हो, उसे मैं वश करूँ, इसलोक मे मैं आपकी आज्ञाकारणी हूँ, हम जैसों की यही परम्परा है, कि हम चक्रवर्ती से समर्थ नहीं, और जो तुम कहो तो मै सभी राक्षसों को जीतूँ, एव देवों को वश करूँ। जो आपका कोई शत्रु हो, उसे भी वश करूँ, और विद्याधर तो मेरे सामने तृण समान हैं। यह विद्या के वचन सुन रावण, साधना पूर्णकर शातिनाथ भगवान की प्रदक्षिणाकर नमस्कार किया। उसी समय अगद मन्दोदरी को छोड आकाशमार्ग से गमनकर रामके समीप आया। कैसाहै अंगद? सूर्य समान तेजस्वी। जिन आगम के मन्त्रोमे श्रद्धा एव दृढता हो तो सभी कार्य सफल होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे शातिनाथकेमन्दिरमे रावण को बहुरूपिणी विद्या सिद्धहोने का वर्णन करनेवाला इकहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-72

रावण का युद्ध के लिए पुनः संकल्प

अथानंतर रावण की अठारह हजार रानियॉं, रावण के पास एक साथ रोती हुई आई। और कहने लगी, हे स्वामिन! आप सब विद्याधरों के अधीश, आप हमारे प्रभु, आपके होते हुये मूर्ख अंगदने आकर हमारा अपमान किया। आपकी प्रभा सूर्य समान है, आप ध्यान मे लीन थे, तब आपके सामने सुग्रीव के पुत्र पापी ने, हमारेपर उपद्रव किया। रानियों के वचनों को सुन, रावण ने सबको सतोष देकर कहा, हे प्रिये! उस पापी ने तुमको सताया, मैं उसको मारूँगा। तुम दुख मत करो। जैसे आनन्द से रहती हो ऐसे ही रहो। मैं सुग्रीव को प्रात. काल ही मस्तक रहितकर भूमिपर डालूंगा। और वे दोनों भाई राम लक्ष्मण भूमिगोचरी कीडा समान है, उन पर क्या क्रोध, ये दुष्ट विद्याधर इनके पास इकट्ठे हुये है, उनका क्षय करूंगा। हे प्रिये! मेरी भोहे टेढी करते ही शत्रु नष्ट होते है, सो अब तो मुझे बहुरूहपणी विद्या सिद्ध हुई, मेरे आगे शत्रु कैसे रहेगे। इस प्रकार सभी रानियो को धैर्य बधाकर मन मे सोचा कि मैने शत्रु को मार दिया। भगवानशातिनाथ के मन्दिर से बाहर निकला। अनेक बाजे बजे गीत नृत्य हुये, रावण का स्वर्ण, रत्नो के कलशो से, स्त्रीयों ने अभिषेक किया। कोई गजमोती के कलशो से, कोई स्फटिकमणी के कलशों से, कोई केले के पत्तो से ढके नीलमणी के कलशो से, किसीने सुगन्धित पदार्थो से अभिषेक किया। रावण स्नानकर आभूषणपहन, शातिनाथ भगवान के मन्दिर मे गया, और भगवान की पूजा स्तुतिकर नमस्कार किया। पुन. भोजनशाला में आकर चारो प्रकार के (खाद्य स्वाद्य लेय पेय) उत्तम भोजन किये। पश्चात् विद्याकी परीक्षा करने के लिय क्रीडा भूमिपर गया, वहाँ विद्याधरो से नहीं बन सकते ऐसे अद्‌भुत रूप, बहुरूपिणी विद्याके बल से, रावण ने अनेक रूप बनाये। अपने हाथोके मुक्कों से भूकम्प किया, राम के कटक में कपिवशियो को ऐसा भय हुआ कि मृत्यु ही होगी। और रावण को मंत्री कहने लगे, हे नाथ! आपको छोड रघुनाथ को जीतने वाला अन्य कोई नहीं है। राम महायोद्धा है क्रोधित हुये तो क्या कहना? उनके सामने रण मे आप ही जाना, और कोई उनके सन्मुख जाने में समर्थ नहीं है।

अथानंतर रावण ने बहुरूपिणी विद्या से मायामयी सेना बनायी, और रावण स्वय जहॉ सीता उद्यान मे बैठी थी, वहॉ मंत्रियो सहित देवो समान गया, सूर्य समान ज्योतिका धारी रावणको आता हुआ देख, विद्याधरी दासियां सीता से कहने लगी, हे देवी! महा ज्योतिवान रावण पुष्पकविमान से उतर कर आया, जैसे गर्मी की ऋतु मे सूर्य किरणो की तपन से तप्तायमान होकर गजेन्द्र सरोवर की ओर आता, उसी प्रकार कामरूपी अग्नि से तापमान होकर आ रहा है। तब सीता बहुरूपिणी विद्या से युक्त रावण को देखकर भयभीत हुई। मनमें विचारने लगी कि यह पापी रावण है, इसके बल की सीमा नही। क्या राम लक्ष्मण इसको नहीं जीत सकेगे? मै मद भागिनी मेरेस्वामी रामको, अथवा मेरे देवर लक्ष्मण को, या मेरे भाई भामडल को, एव मेरे पतिके हितकारी हनुमान को, और सेना मे भी किसी को मरा हुआ नहीं सुनूं। यह विचारकर आकुलित मन से कम्पायमान हो चिन्ता से रूदन करती हुई बैठी है, वहॉ रावण आया और कहने लगा, हे परमसुन्दरी! मै पापी! कपट से तुझे हरणकर ले आया, यह बात क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुई है। जो धीरवीर पुरुष है, उनको यह बात सर्वथा उचित नहीं, परन्तु कर्मकी गति ऐसी है, मोह कर्म महाबलवान है, और मैंने पहले अनन्तवीर्य स्वामी के समीप व्रत ग्रहण किया था, कि जो परनारी मुझे नहीं चाहे, तो मै उसे बलात्कार ग्रहण नहीं करूँगा। उर्वशी, रम्भा, देवागना या परमअप्सरा महामनोहर हो, तो भी मेरे प्रयोजन नहीं, यह प्रतिज्ञा का पालन करते हुये, मैने तेरी कृपा ही की, अभिलाषा की, परन्तु बलात्कार सेवन नहीं किया। हे जगत में उत्तम अप्सरा! अनुपम सुदरता तेरी, तीनलोक मे अद्‌भुतरूप तेरा! अब मेरी भुजाओं के चलाये जो बाण, उनसे तेरे अवलम्बन राम और लक्ष्मण को मरे ही जानना। और तू मेरे साथ पुष्पकविमान में बैठकर आनन्द पूर्वक विहार कर। सुमेरूपर्वत, पचमेरू के चैत्यालय, चैत्यवृक्ष अनेकवन, उपवन, नदी, सरोवर, का अवलोकन करती हुई आनन्द लो। तब सीता अपने दोनों हाथ कानो-पर रख गद गद वाणी से, दीनता पूर्वक, कहने लगी, हे दशानन! तुम बडे कुल मे उत्पन्न हुये हो, तो मेरा यह एक काम करना, कदाचित संग्राम में मेरे स्वामी का और तुम्हारा शस्त्र प्रहार हो, उसके पहले यह एक सन्देशा, कहे बिना, मेरे कथ, मेरे प्राणों के आधार, मेरे स्वामी को, मत मारना, और यह कहना, कि हे पद्‌मनाभी! भामडलकी बहिनने, आपको यह कहा है, कि आपके वियोग से, महाशोक के भारसे, महादुखी होकर,

मेरे प्राण आपके प्राणों तक ही है। मेरी दशा यह हुई है, जैसे पवनकी हवासे दीपक की लो, हे राजा दशरथ के पुत्र! जनक की पुत्री ने, तुमको बार बार स्तुति कर कहा है कि आपके दर्शनों की अभिलाषा से मेरे ये प्राण टिक रहे हैं, ऐसा कहती हुई मूर्च्छित होकर गिर पडी। महासती सीता को यह अवस्था देख, रावण का मन अति कोमल निर्मल हुआ, महा दुखी होकर चिन्ता करने लगा, अहो! कर्मों के योग से राम और सीता का नि:सन्देह स्नेह का क्षय नहीं, धिक्कार मुझे मैने अति अयोग्य कार्य किया, ऐसे स्नेहवान युगल का मैने वियोग किया। अहो महापापी, मायाचारी, महानीच, मनुष्यसमान, मैं बिना कारण अपयश रूपी मैल से लिप्त हुआ, शुद्ध चन्द्रमा समान हमारा गोत्र, उसे मैंने कलकित किया, मेरे सामन दुरात्मा, मेरे वंश मे नहीं हुआ, ऐसा काम किसीने भी नहीं किया, वह मैने किया, जो पुरुषों मे इन्द्र है, वह नारी को तुच्छ गिनते है, यह स्त्री साक्षात विषके समान है। कलह की उत्पत्ति का कारण है। सर्प के मस्तक की मणी समान, महामोह का कारण है। पहले तो स्त्री मात्रका ही त्याग करना श्रेष्ठ है, तो परस्त्री की क्या बात? परस्त्री सर्वथा त्याज्य ही है। परस्त्री नदी समान, कुटिल, महा भयंकर, धर्म, अर्थ का नाश करनेवाली, सदा सज्जनो को छोडने योग्य ही है। मै महापापी, अब तक तो यह सीता मुझे, देवागना से भी अतिप्रिय लगती थी, वह अब मुझे विष के कुभ समान दिखती है, यह तो केवल राम से ही अनुरागिनी है, यह तो मुझे नहीं चाहती थी, परन्तु मेरे अभिलाषा थी, अब यह मुझे जीर्ण तृण समान दिखती है, यह तो केवल राम से ही तन्मय है। मेरा भाई महापडित विभीषण सब जानता था, उसने मुझे बहुत समझाया, पर मेरा मन विकारको प्राप्त हुआ, मैने नहीं माना, और उससे द्वेष किया। जब विभीषण के कहने से ही मित्रता करलेता तो अच्छा था, अब महायुद्ध हुआ अनेक मारे गये फिर कैसी मित्रता? यह मित्रता सुभटो को योग्य नहीं, और युद्ध करते हुये दयाका पालन होता नहीं। अहो मै सामान्य मनुष्यकी तरह सकट में फसा हूँ। क्वचित् जानकी को, रामके पास भेजता हूँ, तो लोग मुझे असमर्थ जानेगे, और युद्ध करता हूँ, तो महाहिंसा होती है। कोई ऐसे भी लोग है, जिनको दया नहीं, केवल क्रूरता ही क्रूरता है, वह भी मरते ओर मारते है। कोई दया सहित हैं, संसार के कार्य से रहित है, वह सुख से जीवन जीते है, मैं महामानी, युद्ध अभिलाषी, मेरे में कुछ भी करुणाभाव नहीं, वह मेरे जैसे महादुखी है। और रामके सिहवाहनी एव लक्ष्मण

के गरुडवाहनी विद्या, सो इनसे वे महान हैं, इसलिये उनको मैं शस्त्र रहित करूँ, और उनको मै जीवित पकडूं। पुनः बहुत धन दूंगा, तो मेरी बडी कीर्ति होगी, मुझे पापभी नहीं लगेगा, यह न्याय है, इसलिये ऐसा ही करूँ। ऐसा मन में सोचकर, महावैभव सहित, रावण राज दरबार में गया। पुन विचार किया कि अगदने बहुत अनीति की, इस बातसे क्रोधकर, नेत्रोको लालकर, रावण कहता है, वह पापी सुग्रीव नहीं दुग्रीव है, उसे निग्रीव कहिये मस्तक रहित करूँगा, उसका पुत्र अंगद सहित चन्द्रहास खडग से दो टुकडे करूगा। और लोग तमोमंडल को भामंडल कहते है, वह महादुष्ट है, उसे दृढ बधनों से बांधकर लोहे के मुद्गरों (डंडो) से मारूँगा। एवं हनुमान को तीक्ष्ण करोत की धार से चीर डालूँगा। वह महा अन्यायी है। एक राम न्यायमार्गी है, उन्हे छोड़ूँगा, और सम्पूर्ण कपिवंशी सेना अन्याय मार्गी है, उनको शस्त्रों से विदारूंगा, चूर डालूगा। ऐसा विचार रावण करता रहा। उसी समय सैकडों उत्पात होने लगे, सूर्य मडल आयुध समान तीक्षण दिखाई दिया, पूर्णिमा का चन्द्रमा अस्त हो गया, आसनपर भूकम्प हुआ, दशो दिशायें कम्पित हुई, उल्कापात हुये, स्यालनी विरस शब्द बोलती रही, तुरग नाड हिलाकर हींसते रहे, हाथी रूखे शब्द करते हुये सूड को धरतीपर मारते रहे, यक्ष यक्षणी की मूर्तियो के ऑखो मे ऑसू बहने लगे। सूर्य के सन्मुख कौआ कटु शब्द बोलने लगे, जलसे भरे सरोवर सूख गये, रुधिरकी वर्षा हुई थोडे ही दिनो में लकेश्वरकी मृत्यु होगी, ऐसे अपशकुन मालूम होते हैं। और कोई वजह नहीं। जब पुण्य क्षीण होता, तब इन्द्रभी मरणसे नहीं बचते। पुरुषो मे महापुरुष पुण्यके उदय से होते हैं, जो कुछ प्राप्त होना होता है, वह उतना ही प्राप्त होता है, कम ज्यादा नहीं। प्राणियो की शूरवीरता पुण्यसे ही होती है। देखो रावण नीतिशास्त्र मे प्रवीण, लौकिक नीति रीति न्यायको जाननेवाला व्याकरण का पाठी, वह कर्मों के योगसे अनीति मार्गको प्राप्तकर, अज्ञानी हुआ, ससार मे मरणके समान और कोई बडा दुख नहीं, यह मानके कारण रावणने सोचा नहीं, रावणके सभी ही ग्रह अतिक्रूर हुये इसलिये अविवेकी रणक्षेत्र का अभिलाषी हुआ। रावण महा शूरवीरता के रससे युक्त अनेक शास्त्रो का ज्ञाता है, फिर भी अपने मानभंग के अभिमान से युक्त अयुक्त को नहीं जाना। गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं, हे राजन्! रावण महामानी अपने मन में सोचता है वह सुनो, सुग्रीव भामंडलादि समस्त सेनाको जीतूँ और कुम्भकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाथ, को छुडाकर लंका मे ले आऊँ,

वानरवंशियों के वंशका नाश करूँ, भामंडलको पराजित करूं, एव भूमि गोचरियों को भूमिपर नहीं रहने दूगा। और शुद्ध विद्याधरों की, भूमिपर स्थापना करूगा, तब तीनलोक के नाथ तीर्थंकरदेव, चक्रवर्ती बलभद्र नारायण हमारे जैसे विद्याधर कुलमें ही उत्पन्न होंगे, ऐसे बिना प्रयोजन के ही विचार करता रहा, हे राजन्! जिस मनुष्यने जैसा कर्म किया है, ऐसा ही फल भोगते हैं, ऐसा नहीं होता तो शास्त्रो के ज्ञाता कैसे भूलते, शास्त्र सूर्य समान है, उसके ज्ञान का प्रकाश होते ही अन्धकार कैसे रहे। प्रत्येक प्राणी संसार के विषय भोगोंकी चिन्ता करता है, लेकिन अपने आत्म कल्याणकी चिन्ता नहीं करता, दूसरोंका नौकर बना है, स्वयंको भूल रहा है, इसीलिये प्रत्येक जीवको सुखकी इच्छा है, तो विषय भोगोंको छोडकर हमारा कल्याण कैसे हो, ऐसा चिंतवनकर उसी अनुसार कार्य भी करे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रावणके युद्धका वर्णन करनेवाला बहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-73

मन्दोदरी का युद्ध के लिये मना करना रावण का हठ नहीं छोड़ना

अथानतर दूसरे दिन प्रात काल, सूर्य के उदय होते ही, राज दरबार मे कुबेर वरुण, ईशान, यम, सोम, समान बडे बडे राजाओं सहित, सभा मे रावण इन्द्र के समान सिंहासनपर विराजमान हुआ, उस समय परम ज्योतिको धारण करता हुआ जैसे गृह, तारा, नक्षत्रो से युक्त चन्द्रमा की शोभा ऐसे ही रावण की शोभा। ऐसी सभाको देखकर, रावण चिन्ता करने लगा, कि यहाँ कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनाथ, नहीं दिखते है, उनके बिना इस सभाकी शोभा नहीं। सभी पुरुष कुमुदरूप बहुत है, पर कमलरूप वे पुरुष नहीं है। यद्यपि रावण का महारूपवान सुन्दर महामनोज्ञ चेहरा था, फिर भी भाई और पुत्र की चिन्ता से मुख मुरझाया हुआ दिख रहा था। रावण महाक्रोधित, आशीविष सर्प समान, भयंकर विकराल, रूप उसका देख, मंत्री डरे कि आज रावण को ऐसा क्रोध क्यों

हुआ तब हाथजोड नमस्कार कर राजामय, उग्र, शुक, लोकाक्ष, सारण इत्यादि सभी नीचे की तरफ देखते हुये, विनती करने लगे—हे नाथ! आपके समीपवर्ती सभी योद्धा प्रार्थना करते हैं, आप प्रसन्न होओ। कैलाश के शिखर समान ऊँचे महलों में बैठी हुई, सभी रानियो सहित मन्दोदरी देखती रही। रावण उठकर आयुधशाला में गया। अनेक दिव्यशस्त्र, सामान्यशस्त्र, अमोघबाण, और चक्रादि अमोघरत्नों से भरी, जैसे वज्रशाला में इन्द्र जाय। जिस समय रावण आयुधशाला में गया, उस समय अनेक अपशकुन हुये। (पहले ही छींक हुई, शकुन शास्त्र मे पूर्वदिशा की छींक हो तो मृत्यु का कारण, अग्निकोण मे शोक, दक्षिण में हानि, नैऋत्य मे शुभ, पश्चिम में मिष्ठभोजन, वायुकोण में सर्व सम्पदा, और उत्तर मे कलह, ईशान में धनप्राप्ति, आकाश मे सर्वसहार, और पाताल में सर्वसम्पदा) ये दशो दिशा में छींक के फल बतायें। रावणको मृत्यु की छींक हुई, पुन. आगे मार्गको रोका हुआ महाभयंकर नाग देखा, और हा शब्द, ही शब्द, धिक शब्द, कहाँ जा रहा है, ऐसे शब्द हो रहे हैं, हवाके द्वारा छत्र के वैडूर्यमणि का डडा टूट गया, रावण का उत्तरासन गिर गया, दाहिनी तरफ बैठा कौवा बोला, इत्यादि और भी कई अपशकुन हुये, वह युद्ध के लिये मना करते रहे। जो पुरुष शकुन शास्त्रो के ज्ञाता थे, वह अत्यन्त व्याकुलित हुये। मन्दोदरी ने शुक सारण इत्यादि बडे बडे मन्त्रियो को बुलाकर कहा, तुम स्वामीको कल्याण की बात क्यो नहीं करते हो, अब तक अपनी और राम की क्या चेष्टाये नहीं देखी? कुम्भकरण, इन्द्रजीत, मेघनाथ, को रामने बधनो मे डाले, राम लक्ष्मण लोकपाल समान महातेज के धारक अद्भुत कार्य को करने वाले है। तब मत्री आदि मन्दोदरी को नमस्कार कर कहते हैं हे महारानी स्वामिनी! रावण महामानी, यमराज समान, क्रूर अपने आपही प्रधान है। इस लोक मे ऐसा कोई नहीं, जो रावण उनकी बात को माने, जो कुछ होनहार होता उसी प्रमाण बुद्धि होती है। बुद्धि कर्मोके अनुसार होती है, उसे इन्द्रादि देवो के समूह भी दूर नहीं कर सकते। सम्पूर्ण न्याय शास्त्र धर्मशास्त्र को तुम्हारा पति जानता है, परन्तु मोहसे उन्मत्त हो रहा है, हमने बहुत तरह से समझाया लेकिन वह मानता नहीं है, जो हट पकडा है, वह छोडने को तैयार नहीं, जैसे वर्षाऋतु में नदीके जलके बहाव मे तिरना कठिन है, ऐसे कर्मो के सयोग से जीवको समझाना कठिन है। स्वामी का स्वभाव दुर्निवार है, फिरभी आपका कहना करें तो करे, इसलिये आप हित की बात कहो, इसमें कोई दोष नहीं है। मत्रियों ने कहा, तब पटरानी मन्दोदरी साक्षात् लक्ष्मी समान, निर्मल

मनसे भयभीत होकर, पतिके पास जाने को तैयार हुई। सुन्दर वस्त्र आभूषण पहने, जैसे रति कामके समीप जावे ऐसे चली, सिरपर छत्र फिरते हैं, अनेक सहेली चमर ढोर रही है, जैसे अनेक अप्सराओं सहित इन्द्राणी इन्द्र के पास जावे, ऐसे यह पटरानी अनेक दासियों सहित पति के पास गई। चिन्ता से चेहरा मुरझा गया, पति के कार्य मे तत्पर अनुराग की भरी स्वामी को स्नेह की दृष्टि से देखती रही। मन्दोदरी को आते देख रावण ने कहा, हे मनोहरे! हंसनी समान चालको चलने वाली, हे देवी! ऐसा क्या कारण है, जो तुम शीघ्रता से आ रही हो। हे प्रिये! मेरा मन क्यों हरती हो, तब वह पतिव्रता पूर्ण चन्द्रमा समान सर्वांग सुन्दरी, पतिकी इच्छा पूर्ण करने वाली उसका शरीर, महामधुर वाणीसे पतिके मनको चुराने वाली, भरतारकी कृपा भूमि, वह अपने नाथको प्रणामकर कहती है।

हे देव! मुझे पतिकी भिक्षा दो, आप महादयावन्त, धर्मात्माओं से स्नेहवान हैं, मैं आपके वियोगरूपी नदीमें डूब रही हूँ। मुझे हे महाराज! आप निकालो, कैसीहै नदी? दुखरूपी जलसे भरी सकल्प विकल्परूपी लहरो से पूर्ण है, हे महाबुद्धिमान महाराज! कुटुबरूपी आकाशमे सूर्य समान प्रकाश को करने वाले स्वामिन् मेरी एक विनती सुनो आपका कुलरूपी कमलो का महावन प्रलय होने जा रहा है, उसकी क्यो नहीं रक्षा करते। हे प्रभो! आपने मुझे पटरानी का पद दिया था, तो मेरे कठोर वचनों को क्षमा करना, जो आपके मित्र है, उनके वचन औषधी समान गृहण करने योग्य हैं, मै यह कहती हूँ कि क्यो आप चिन्ता करते हो और हम सबको कराते हो। अभी भी कुछ नहीं बिगडा है, आपका सब राज काज वैसा ही है, सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी आपही हो, आपके भाई ओर पुत्रो को बुला लो, आप अपना मन वश करो, आपकी इच्छा विपरीत मार्ग मे भटक रही है, इन्द्रियरूपी तुरंग को, विवेकरूपी दृढ लगामसे वश करो, इन्द्रियों के कारण कुमार्ग में मनको क्यो भटकाते हो, आप अपवाद को देने वाले, उद्यान मे क्यो प्रवृति करते हो, जैसे अष्टापद अपनी छाया कुये मे देख क्रोधसे कुये में गिरता है, ऐसे आप दुखरूपी कुयेंमें गिरते हो। यह क्लेश का कारण अपयशरूपी वृक्ष उसे छोडकर सुखसे रहो, केले के थंभ समान असार यह विषय इसकी क्या इच्छा करते हो, यह आपका कुल, समुद्रसमान गम्भीर, प्रशसायोग्य, उसको सुशोभित करो, यह भूमिगोचरियों की स्त्री, बडे कुलवानों को अग्निकी शिखा समान जान छोड देनी चाहिये। हे स्वामिन्! जो सेना सेनाओं से युद्ध करते हैं, वे मन में यह निश्चय करते हैं कि हम मरेंगे। हे नाथ! आप किसके लिये मरते हो। पर स्त्रीके कारण क्यों मरना?

इस मरण का यश नहीं, और उनको मार आपकी जीत हो तो भी यश नहीं, क्षत्रिय मरते हैं यश के लिये, इसलिये सीता सम्बन्धी हटको छोडो। बडे बडे व्रतों में उनकी महिमा क्या बताई, एक परस्त्री का त्यागही पुरुष के होता है। तो दोनों जन्म सुधरते हैं, शीलवान पुरुष ससाररूपी सागर से पार होते हैं। जो सर्वथा स्त्रीमात्र का त्याग करते है, वह तो महाश्रेष्ठ ही है। काजल समान कालिमा को उत्पन्न करने वाली यह परनारी उनमें जो लोलुपी है, उनके मेरु समान गुणहो तोभी तृण समान अल्पहो जाते है। जो चक्रवर्ती का पुत्र हो देव उसकी पक्षमे हो और परस्त्री के संगरूपी कीचड मे डूबता है, तो वह महाअपयश को प्राप्त होता है। जो अज्ञानी परस्त्री से प्रेम करते हैं, वह पापी नागिन से रमते है। आपका कुल अत्यन्त निर्मल, उसको अपयशरूपी मलसे कलंकित मत करो। दुर्बुद्धि छोडो जो महा बलवान थे, दूसरो को कमजोर जानते थे, अर्ककीर्ति, अशनधोषादि अनेक मरण को प्राप्त हुये, आपने क्या नहीं सुना है, यह वचन मन्दोदरी के सुन रावण मन्दोदरी से कहता है। हे प्रिये! तू क्यो कायर हुई है। मैं अर्ककीर्ति नहीं, जो जयकुमार से हारा। मै अशनघोष नहीं जो अमिततेज से हारा। मै दशमुख हू तू क्यो कायरता की बात करती है। मै शत्रुरूपी वृक्षोंके समूह को दावानल रूप हूँ, सीता कदाचित् नहीं दू, हे मन्द बुद्धि! तू भय मत कर, इस कथा से तुझे क्या मतलब? तुझे सीता की रक्षा सौपी है, उसकी रक्षा तुम अच्छी तरह करो, अगर रक्षा करने मे समर्थ नहीं हो, तो शीघ्र ही मुझे सौप दो। तब मन्दोदरी ने कहा, आप उससे रति सुख चाहते हो, इसलिये ऐसा कहते हो, कि मुझे सौप दो, यह निर्लज्जता की बात कुलवानों को उचित नहीं। पुन· कहा आपने सीताकी क्या महिमा देखी, जो उसे बार बार चाहते हो, सीता ऐसी गुणवान नहीं, ज्ञाता नहीं, रूपवतियो का तिलक नहीं, कलाओ मे प्रवीण नहीं, मन मोहित करने वाली नहीं, पति के छाने चलने वाली नहीं, उससे आप प्रेम की बुद्धि करते हो। सो हे कन्थ! यह क्या बात इसमे अपनी लघुता होती है, यह तुम नहीं जानते हो, मैं अपने मुख से अपनी प्रशंसा क्या करूँ। अपने मुखसे अपने गुणोंकी प्रशंसा करता है, वह लघुता है, और दूसरोके मुखसे सुने तो प्रशंसा होती है। इसलिये मै क्या कहूँ, आप अच्छी तरह जानते हो। बेचारी सीता क्या? लक्ष्मी भी मेरे समान नहीं, इसलिये सीताकी अभिलाषा छोडो, मेरा निरादरकर आप भूमिगोचरी स्त्री की इच्छा करते हो, सो आप मंद बुद्धि हो, जैसे बालक वैड्र्यमणि को छोड कांच की इच्छा करता है, कांच में वह दिव्यपना नहीं, आपके मनमें क्या इच्छा है, यह

गांवकी नारी के समान अल्पमति सीता उसकी क्या अभिलाषा करना? और मुझे आज्ञादो मैं वैसा ही रूप धारण करूँ। आपके मनको हरने वाली मैं लक्ष्मी का रूप धारण करूँ, या शचि इन्द्राणी का रूप धारण करूँ, कहो तो रतिका रूप बनाऊँ। हे देव! आप इच्छा करो वही रूप बनाऊँ। यह बात मन्दोदरी की सुन रावण ने नीचा मुख कर लिया, और शर्मिंदा हुआ। पुनः मन्दोदरी ने कहा, आप परस्त्री मे आसक्त होकर अपनी आत्मा को नरको में गिरा रहे हो, विषयरूपी विषकी इच्छा है, जिसको वह पाप का भाजन है, धिक्कार है ऐसे क्षुद्र प्राणी को। मन्दोदरी के वचन सुन रावणने कहा हे चन्द्रवदनी! तुमने कहा कि जो कहो ऐसा रूप बनाऊँ, जो दूसरोके रूपसे तुम्हारा रूप क्या कम है, तुम अपने आपही महारूपवान हो, मुझे अतिप्यारी हो, हे उत्तमे! मुझे अन्य स्त्रीयो से क्या? तब मन्दोदरी हर्षित होकर कहने लगी। हे देव! सूर्य को दीपक क्या दिखाना, मैने जो आपको हितके वचन कहे, वह दूसरो से पूछकर देखो, मै अबला हूँ मेरे मे ऐसी बुद्धि नहीं, फिर भी आगम मे कहा है, कि पति सब कुछ जानता है। फिर भी प्रमाद के कारण भूल रहा है। तो उसे स्त्री समझावे, जैसे विष्णुकुमार स्वामी को दूसरो के कहने से विक्रियाऋद्धि का स्मरण हुआ। यहपुरुष, यहस्त्री, ऐसा विकल्प अज्ञानीको होता है, बुद्धिमान लोग सबके हितकारी वचनमान लेते है। आपकी कृपा मेरेपर है, मै कहती हूँ आप परस्त्री का प्रेम छोडो। मै जानकी को लेकर राम के पास जाऊँ, और राम को आपके पास लेकर आऊँ, एव कुभकर्ण, इन्द्रजीत, मेघनाथ को लेकर आऊँ, अनेक जीवो की हिसा करने से क्या? ऐसे वचन मन्दोदरी ने कहे, तब रावण ने क्रोधकर कहा जाओ-जाओ शीघ्र ही जाओ, जहॉ तेरा मुख नहीं देखूँ, वहॉ जाओ। अहो तू अपने आपको पडित मानती है, अपना पक्ष छोड, परपक्ष की प्रशसा करती है, तेरा मन दीन है, योद्धाओ की माता इन्द्रजीत मेघनाथ जैसे पुत्र, राजामय की पुत्री, मेरी पटरानी, तेरे में इतनी कायरता कहॉ से आई, तब मन्दोदरी ने कहा, हे पतिदेव! सुनो, गुरुओ के मुख से बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण, का जन्म सुनते है, पहला बलभद्र विजय, नारायणत्रिपृष्ट, और प्रतिनारायण अश्वग्रीव, इसी तरह, अब तक सात बलभद्र नारायण हो चुके, और इनका शत्रु प्रतिनारायण, उसको इन्होंने मारा। अब आपके समयमे यह बलभद्र नारायण हुये है और आप प्रतिवासुदेव हो। पहले प्रतिवासुदेव हठ से मारे गये, ऐसे आपभी मरनेकी इच्छा करते हो, बुद्धिमानो को ऐसा कार्य करना, कि इसलोक एव परलोक मे सुख हो। दुख के अकुर की उत्पत्ति नहीं हो वह कार्य

करना चाहिये। यह जीव अनादि कालसे, विषयोंमे तृप्त नहीं हुआ, तीनलोक मे ऐसा कौन जीव है, जो विषयो से तृप्त हुआ हो, आप पापसे वृथा मोहित हुये हो, आपके लिये उचित मार्गतो यह है, कि आपने बहुत काल भोग किये, अब मुनिव्रतको धारण करो, या श्रावक के व्रतोको धारणकर, दुखों का नाश करो, अणुव्रतरूपी खड्गकी ज्योतिसे आपका शरीर, नियमरूपी क्षत्रिय कुलसे शोभित, सम्यग्दर्शनरूपी कवच पहनों, शीलरूपी ध्वजा चढाओ, अनित्यादि बारह भावनाओ के चिन्तवन से आत्मबल जागृत करो, ज्ञानरूपी धनुष को धारणकर, इन्द्रियो को वश करो। शुभध्यान के प्रभाव से मर्यादारूपी अकुशसे युक्त होकर, निश्चल मनरूपी हाथीपर चढ, जिनेन्द्रभगवान की महाभक्ति से, दुर्गतिरूपी नदीके कुटिल पापरूपी वेग के भयकर प्रवाह में, ज्ञानी जनही तिरते हैं। तो आपभी उसमें तिरकर सुखी होओ। और हिमवान एव सुमेरूपर्वत पर जिनालयों के दर्शन करते हुये, मेरे सहित ढाईद्वीप मे विहार करो, अठारहहजार रानियोंके बीचमे सुमेरूपर्वत के वन मे क्रीडा करो, और गगाके तटपर या अन्य मनोवाच्छित रमणीक क्षेत्रो मे, हे नरेन्द्र! सुख से विहार करो, इस युद्धसे कोई प्रयोजन नहीं, प्रसन्न होओ, मेरे वचन सुखके कारण हैं, यह लोक अपवाद का कार्य मत करो, अपयशरूपी समुद्र मे क्यो डूबते हो, यह अपवाद विषसमान महानिन्द्य, परम अनर्थ का कारण अच्छा नहीं है, दुर्जन लोग सहज ही दूसरो की निदा करते हैं, सो ऐसी बात सुनकर तो अवश्य करेगे ही करेगे, यह आपका अपवादरूपी अपयश भवभव मे लोगे के द्वारा होता रहेगा। हे स्वामिन्! जैसा राजा ऐसी प्रजा, आपही ऐसा करेंगें तो प्रजा मर्यादा को छोडकर भटकती रहेगी। उसके पाप का छट्ठा हिस्सा आपको प्राप्त होगा, राजासे ही धर्मकी वृद्धि होती है, राजा ही अगर धर्मसे विरुद्ध कार्य करे, तो प्रजा क्या नहीं करेगी? बाड ही खेतको खाये, तो खेतकी रक्षा कौन करेगा? इस प्रकार पतिके हित के लिये शुभ वचनो को कहकर महारानी मंदोदरी हाथजोड पति के चरणों मे गिरी।

तब रावण मन्दोदरी को उठाकर कहने लगा कि बिना कारण तुम क्यों भयको प्राप्त हुई हो हे प्यारी! मेरे से अधिक बलवान इस ससार मे कोई नहीं है, तू स्त्री पर्याय के कारण भयभीत हुई है, तेने कहा यह बलदेव नारायण है, सो नामनारायण नामबलदेव हुआ तो क्या हुआ। नाम होनेसे कार्य सिद्ध नहीं होता, नामसे सिंहहुआ तो क्या? सिह काबल होनेसे सिंह कहलाता है, कोई मनुष्य का सिद्धनाम है, तो क्या सिद्ध हो गया? हे देवी! तू क्यों कायरता की बात करती है,

रथनुपुर का राजा इन्द्र कहलाता, तो क्या इन्द्र हुआ? ऐसे यह भी बलभद्र नारायण नहीं, इस प्रकार रावण, प्रतिनारायण ने ऐसा कहकर, पटरानी मन्दोदरी सहित क्रीडा भवन मे गया। जैसे इन्द्र इन्द्राणी सहित क्रीडा गृह मे जावे। संध्या फूली सूर्य अस्त हुआ। जैसे सयमीको कषाय अस्त हो, सूर्यको अस्त होनेसे नक्षत्रोंकी सेना आकाश में फैली, रात्री के समय घर घरमे रत्नो के दीपको से प्रकाश हुआ, कोई नारियॉ अपने नरसे मिलकर कहती है, एक रात्रि तो आप सहित व्यतीत करेगे, आगे क्या होगा देखेगे? रात्रि के समय विद्याके बलसे विद्याधरों ने, मनवाच्छित क्रीडाये की, घर घर मे भोगभूमि समान रचना, महासुन्दर गीत, नृत्य, वीणा, बॉसुरी, की मधुरध्वनी से, हर्षित होकर, भोग उपभोग की सामग्री सहित देवो समान सुख को भोगते रहे। कोई नारी बालिका थी, तो प्रीतम ने अमल खिलाकर उन्मत्तकी, तब वह काम भावको प्राप्त होकर, लज्जा को छोड पतिसे प्रेम करने लगी। सभी नरनारी अपने अपने विषय सुखो को भोगते हुये भी, सन्तुष्ट नहीं हो रहे थे। और राक्षसो का इन्द्र रावण ने अपनी अठारहहजार रानियो को, एक साथ विक्रियाके द्वारा सबको सन्तुष्टकर बार बार मन्दोदरी आदि रानियो से स्नेह करता रहा। रात्रि पूर्ण हुई, युद्ध का उत्साह जागृत हुआ। मन्दोदरी के रूपको देखते हुये रावण के नेत्र तृप्त नहीं हुये, मन्दोदरी रावणसे विनती करने लगी, हे नाथ! मै एकक्षण मात्रभी आपको नहीं छोडूगी, प्रतिसमय आपके पास ही रहूगी, जैसे बेल बाहुबली के शरीर से लगी रहती है ऐसे रहूँगी। आप युद्ध मे विजयकर जल्दी ही आओ, मै रत्नो के चूर्ण से चौक पूरूँगी, आपको अर्ध देकर विजयमाला पहनाऊँगी, प्रभुकी महामह पूजा कराऊँगी, ऐसे प्रेमके वचन कहते हुये रात्रि पूर्ण हुई। भगवान के चैत्यालय मे मनोहर घटा झालरादि की ध्वनि हुई, सब रानियॉ पतिको छोडते हुये उदास होरही थी, तब रावणने सभीको बहुत संतोष दिया। और युद्ध के बाजे बजे, रावणकी आज्ञासे युद्धमे जो चतुर योद्धा थे, वे अपने नगर से निकले, हाथी, घोडा, रथ, पयादे खड्ग धनुष, बरछी इत्यादि अनेक आयुधो सहित चमर छत्र ढुरते फिरते देवो के समान विद्याधरो के अधिपति योद्धा अनेक विद्याओ के धारी युद्ध के लिये तैयार हुये। उस दिन नगर की स्त्रीयोको, दयासे युक्त दुखी देखते हुये घर से निकले। स्त्रीयो को दुखी देख दुर्जनभी दयालु हो जाते हैं, कोई स्त्री योद्धा के साथ साथ चली, तब वे कहते है, हे प्यारी! तुम घर जाओ, हम अच्छी तरह जा रहे है, कोई क्षत्राणी पतिका मुख देखनेकी इच्छा से पीछे जाकर कहती

है, कि हे स्वामिन्! यह नीचे का कवच लो, यह यहॉ रह गया है, तब वे सन्मुख होकर लेने लगे। कोई पतिको जानेसे मूर्च्छा खाकर गिर पडी। कोई सामन्त अणुव्रत के धारी पीठ पीछे स्त्रीको देखा और सामने देवॉगनाओं को देखा, कोई योद्धा युद्धके अभिलाषी सिरपर टोप और कवच पहन शस्त्र लेकर सेना सहित युद्ध के लिए इकट्ठे हुये, मारीच, विमल चन्द्र, सुनन्द, आनन्द, इत्यादि हजारोराजा दिव्यरथोंपर चढे मानो अग्निकुमार देवही हो। कोई तीक्ष्ण हथियारो सहित हाथीपर, तुरंगपर, रथोंपर चले। बंदी जनो के जय जय शब्द वीररस के भरे अनेक शब्दो से धरती आकाश गुंजायमान हुआ, विजय की इच्छा से आगे आगे चले जा रहे हैं। ऐसे उपाय करते हुये भी, इस जीवके पूर्वकर्म का, जैसा उदय होता है, वैसा ही फल प्राप्त होता है। यह प्राणी अनेक चेष्टायें करता है, परन्तु अन्यथा नहीं होती, जैसा होनहार है वैसा ही होता है, सूर्य भी बदलने मे समर्थ नहीं होता है। जो जीवमात्र की रक्षा करते है, दयाधर्म का पालन करते है, वह जीव भयकर युद्धमे भी मरणको प्राप्त नहीं होते है। जो कोई प्राणी किसीभी भवका शत्रु होगा, उसीके द्वारा वह मारा जायेगा, जो कोई जीव जिनकी रक्षा करते हैं। वही जीव कभी न कभी उनकी रक्षा करते है, इसलिये महापुरुष युद्ध मे भी बिना प्रयोजन किसी को मारते नहीं है, न्यायसे युद्ध करते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रावणका युद्धमे जानेका वर्णन करनेवालातेहतरवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-74

रावण का राम लक्ष्मण के साथ युद्ध

अथानंतर लंकेश्वर मंदोदरी से कहने लगे हे प्रिये! न जाने पुन. तुम्हें देखूॅ अथवा न देखूँ? तब मन्दोदरी ने कहा, हे नाथ! सदा वृद्धि को प्राप्त होओ, शत्रुओ को जीत शीघ्रही आकर हमको देखोगे। संग्राम से अवश्य ही आप जीतकर आयेगे। ऐसा मन्दोदरी ने कहा। तब रावण हजारो-रानियो को बार बार अवलोकन करता हुआ राक्षसों का नाथ, राजभवन से बाहर आया। विद्याधरों का बनाया हुआ, इन्द्रनामका रथ ऐरावत हाथी के समान हजार हाथी उस रथको खींचरहे

थे, ऐसे हाथियो के रथपर रावणचढा, मानो, साक्षात इन्द्र ही है, अपने समान लोकमें श्रेष्ठ, दशहजार विद्याधरो सहित रावण महाबलवान, देवों समान रण मे आया। उसको देख सुग्रीव हनुमान क्रोध को प्राप्त हुये, जब रावण युद्ध के लिये आया, तब अनेक अपशकुन हुये, आकाश मे गृद्धपक्षी बोलते हुये भ्रमण करने लगे, यह मरण की सूचना के अपशकुन हुये, परन्तु रावणादि सभी योद्धाओ ने इनको नहीं माना, और युद्ध के लिये आये। तब श्रीरामचन्द्रजी अपनी सेना के लोगो से पूछने लगे, कि इस नगरी के समीप यह कौनसा पर्वत है? तब सुषेणादि तो तत्काल जवाब नहीं दे सके, लेकिन जाम्बूनादादि कहने लगे, की यह बहुरूपिणी विद्या से बना पद्मनागनाम का रथ है, बहुत लोगो के मृत्यु का कारण है। अगदने नगर में जाकर रावण को क्रोध कराया, तब बहुरूपिणी विद्या सिद्ध हुई, रावण हमारे से महाशत्रुता लेकर बैठा है, यह वचन सुन लक्ष्मण ने सारथी से कहा, मेरा रथ शीघ्र ही चलाना, तब सारथी ने रथ तैयार किया, युद्ध के बाजो की ध्वनी सुन, योद्धा, लक्ष्मण के समीप आये, कोई रामकी सेना का सुभट, अपनी स्त्री से कहता है, हे प्रिये! तुम शोक छोडो वापिस जाओ, मै लकेश्वर को जीत तुम्हारे पास आऊँगा। इस प्रकार गर्व से भरे योद्धा अपनी अपनी स्त्रीयो को समझाकर, परस्पर स्पर्धा करते हुये, महायोद्धा शस्त्र के धारक युद्ध के लिये निकले। भूतस्तवन नाम का विद्याधरो का स्वामी हाथियो के रथचढा, इस प्रकार रामके सुभट क्रोधित होकर रावण के सुभटोपर गर्जने लगे, जैसे समुद्र गाजे। राम लक्ष्मण डेरा से निकले, कैसे है दोनोभाई? पृथ्वीपर यशफैल रहा है उनका, क्रूर आकार को धारणकर, कवच पहने सिहके रथपर चढे, महा बलवान सूर्य समान श्रीराम सुशोभित हुये। लक्ष्मण के गरुड की ध्वजा और गरुड के रथपर चढे मुकुट बाधे, कुडल पहने, कवच पहनकर धनुष बाण ले अजनगिरी समान सुशोभित हुये। गौतम स्वामी कहते हैं—हे श्रेणिक! बडे बडे विद्याधर अनेक वाहनोपर रथोपर एवं विमानोपर चढ युद्ध करने के लिऐ निकले, श्रीराम भी युद्ध के लिये चले। तब अनेक शुभ शकुन हुये। रामको युद्ध के लिये चढ़े जान, रावण शीघ्र ही युद्ध के लिये आया, दोनो ही कटक के योद्धाओं पर आकाश से गन्धर्वदेव एवं अप्सरायें पुष्पवृष्टी करने लगे, हाथी घोडे रथ पयादे भी हर्ष से दैदीप्यमान होते हुये, गर्व से पृथ्वीपर उछलने लगे, बोलने लगे, परस्पर स्पर्धाकर आगे आगे दौडने लगे,अनेक शस्त्र लाठी मुक्का खड़गादि से महायुद्ध हुआ, कोई परस्पर केशो को बाधते है, कोई खड्ग से शरीर को काटते हैं, कोई बाणों से बींधते हैं,

मारते हैं, प्रहार करते हैं, मुष्ठीयुद्ध, गदायुद्ध, बाणयुद्ध, शैलयुद्ध हुआ, बहुत शत्रु घायल हुये, कई मारे गये, किसीके हाथपैर कट गये है, फिर भी युद्ध कर रहे हैं, कोई मरते मरते भी दूसरो को मारकर मर रहे है, सभी राजकुमार देवो समान कोमल शरीर, रत्नों के महलों में क्रीडा करने वाले महाभोगी पुरुष यहाँ सग्रामभूमि मे मरे पडे हैं। उनको गृद्ध पक्षी श्यालादि भक्षणकर रहे हैं, किसी की श्वांस चल रही है। जीवो के शुभ अशुभ कर्मो का उदय, युद्ध में देखा जाता है, दोनों सेना महाबलवान फिर भी किसीकी हार, किसीकी जीत होती है, कभी अल्पसेना का स्वामी भी पूर्व पुण्य के उदय से जीत जाता है, कोई बहुत पापकर्म के उदय से महासेना होनेपर भी हार जाता है। जिन जीवो ने पूर्वभव मे महातप किया हैं, वह राज्य के अधिकारी होकर विजय प्राप्त करते है। जिन्होंने तप नहीं किया, या तपको भंग किया, अथवा नियम व्रत लेकर छोड दिया। उनकी हार होती है। गौतमस्वामी कहते हैं, हे श्रेणिक! यह धर्म ही मर्म की रक्षा करता है। दुर्जय को जीतता है, धर्म ही बडी सहायता करता है। घोडे सहित रथ, पर्वत समान हाथी, पवन समान तुरग, इत्यादि सभी सामग्री पूर्वपुण्य के उदयसे ही प्राप्त होती है, पापकर्म के उदयसे सब नष्ट होती है। पुण्य अधिकारी ही शत्रुओं को जीतते हैं। इसतरह राम और रावण के युद्ध मे योद्धा मारे गये, मर गये, उससे रणक्षेत्र भर गया। योद्धा मरते मरते भी उछल रहे है। अन्यको मार रहे है।

अथानतर मारीच, चन्द्रनीकर, बज्राक्षादि राक्षसो की सेना ने राम की सेना को दबाया। तब हनुमान, चन्द्र मारीच नील मुकुद इत्यादि राम पक्ष के योद्धाओ ने राक्षसों की सेना दबाई। तब रावण के अनेक बडे बडे राजा शीघ्र ही युद्ध के लिये सामने आये, तब अचल, सम्मेद, अंगद, सुषेणादि बानरवशी योद्धा उनके सामने आये, दोनो पक्षके योद्धा परस्पर महायुद्ध करने लगे, अजनाका पुत्र हाथीपर चढ रणमें क्रीडा करने लगा। जैसे कमलो के भरे सरोवर मे महागज क्रीडा करे। हनुमान महाशूर वीर ने राक्षसो की सेना को चलायमान किया, जो उसकी इच्छा वही किया। तब राजा मय मन्दोदरी का पिता क्रोध से हनुमान के सामने लाल नेत्र कर आया। तब हनुमान बाणवृष्टि करने लगा, तो मयराजा का रथ चकना चूर हो गया। तब मयने दूसरे रथपर चढकर युद्ध किया, पुनः हनुमान ने रथ तोडा। मयराजा को व्याकुल देख रावण ने बहुरूपिणी विद्या से उत्तमरथ शीघ्र ही भेजा, तब मयने उस रथपर चढ पुनः हनुमान से युद्ध किया, और मयने हनुमान का रथ तोडा। हनुमानको दबा देखा भामंडल मदद के लिये आया, मयने

बाण वर्षा से भामडल का रथ तोडा, तब सुग्रीव इनकी मदद में आया, मयने सुग्रीवको भी शस्त्र रहित किया और भूमिपर डाला। तब इनकी मदद विभीषण आया, विभीषण और मय के महायुद्ध हुआ, परस्पर बाण चले, मयने विभीषण का बखतर तोडा, तब विभीषण के रुधिर की धाराये निकल पडी, तब बानरवंशियों की सेना ब्याकुल हुई। और राम युद्धके लिये आये, विद्यामयी सिंहके रथपर चढे शीघ्र ही मयके सामने आये और वानरवंशियो से कहा तुम भय मत करो। रावण की सेनामें सूर्य के समान श्रीरामने प्रवेश किया, तब हनुमान भामंडल, सुग्रीव, विभीषण को सतोष हुआ और कपिवशियो की सेना तेजी से युद्ध करने लगी। रामके बलको प्राप्तकर रामकी सेनाका भय मिटा, दोनो सेनाओ का भयंकर युद्ध देख, देवो को आश्चर्य हुआ, श्रीराम राजामयको बाणो के द्वारा थोडे ही समय में विह्वलकर दिया, तब रावण क्रोधकर रामसे लडने आया। तब लक्ष्मण, रामकी तरफ रावण को आता देख, महातेज से कहता है, हे विद्याधर! तू किधर जा रहा है, मैंने तुझे आज देखा, खडा रह। हे रक! पापी, चोर, परस्त्री रूप दीपक के पतंग, अधम दुराचारी पुरुष आज मै लक्ष्मण तेरे से ऐसी करू जैसी काल नहीं करे। हे नीच पुरुष! श्रीराघवदेव समस्त पृथ्वीके पति, उन्होने मुझे आज्ञा दी है कि जाओ इस चोर को सजा दो। तब दशमुख महा क्रोधकर लक्ष्मण से कहता है, रे मूढ! तूने क्या लोक प्रसिद्ध मेरा प्रताप नहीं सुना है? इस पृथ्वीपर जो सुख देने वाली वस्तु है, वह सब मेरी ही है, मै राजा तीनखड की पृथ्वी का पति, जो उत्कृष्ट वस्तु है, वह मेरी है। घटा गजके कठमे शोभा देता है, श्वान के नहीं? तू दीन, मेरे समान नहीं, मै तेरे जैसे रकसे क्या युद्ध करूँ। तू अशुभ के उदय से मेरे से युद्ध करना चाहता है, तो जीवन से उदास होकर मरना चाहता है। तब लक्ष्मण बोला, तू जैसा पृथ्वीपति है, वैसा मै तुझे अच्छे से जानता हूँ। आज तेरी गर्जना पूरी करता हूँ। जब लक्ष्मण ने ऐसा कहा, तब रावण ने अपने बाण लक्ष्मण पर चलाये, और लक्ष्मण ने रावण पर चलाये। जैसे वर्षा के जलसे पर्वत ढक जाता। ऐसे परस्पर बाणोंकी वर्षा हुई। रावण के बाण वज्रदंड से लक्ष्मण ने बीच मे ही तोड डाले, अपने तक आने ही नहीं दिये। बाणों के समूह को छेद भेद, तोड फोडकर चूर डाले। धरती आकाश बाणो से भरगया। लक्ष्मण ने रावण को सामान्य शस्त्रों से व्याकुल किया, तब रावण ने सोचा कि यह शत्रु सामान्य शस्त्रों से नहीं जीता जाय, तब लक्ष्मणपर मेघबाण चलाया, तब धरती एव आकाश जलरूप हो गया, तब लक्ष्मणने पवनबाण चलाया, तो क्षणमात्र में मेघ नष्ट हुये,

पुनः दशमुख ने अग्निबाण चलाया तब दशो दिशाओं में अग्नि जली, लक्ष्मण ने वरुणबाण से एक निमिष में अग्निबाण को नष्ट किया, लक्ष्मण ने पापबाण चलाया तो धर्मबाण से रावण ने दूर किया, लक्ष्मण ने इन्धनबाण चलाया तो रावण ने अग्निबाण से भस्म किया, लक्ष्मण ने तिमिरबाण चलाकर अधकार किया, तो रावण ने सूर्यबाण से दूर किया। रावण ने लक्ष्मणपर नागबाण चलाया, तब लक्ष्मण ने गरुडबाण से दूर किया, पुन· लक्ष्मण ने रावण पर सर्पबाण चलाया, तब रावण ने मयूरबाण से सर्पबाण को दूर किया। रावण ने लक्ष्मणपर विघ्न बाण चलाया वह विघ्नबाण महा कठिन, उस का उपाय सिद्धबाण लक्ष्मण को याद नहीं आया, तब वज्रदंडादि अनेक शस्त्र चलाये रावण ने भी सामान्य शस्त्रों से युद्ध किया, दोनों योद्धा समान, परस्पर महायुद्ध किया। जैसे त्रिपृष्ठ और अश्वग्रीव के युद्ध हुआ। वैसा ही रावण और लक्ष्मण के युद्ध हुआ। जैसे पूर्वोपार्जित कर्म का उदय होता है, वैसा ही फल होता है, वैसी ही क्रिया करते है। जो महाक्रोध के वश होकर, खोटे कार्य का उद्यम करते है, वे मानव आगम शास्त्र को भी नहीं मानते हैं, और कार्य अकार्य का ज्ञान नहीं करते हुये पापों में प्रवृतिकर अपने आपको दुखी बनाकर नरक निगोद के दुखो को प्राप्त करते हैं अतः मानवको मोहका त्यागकर ज्ञानरूपी सूर्य का उदय प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रावण लक्ष्मण का युद्धवर्णन करनेवाला चौहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-75

रावण का लक्ष्मणपर चक्र चलाना और लक्ष्मण की प्रदक्षिणाकर उसके हाथ में आना

अथानंतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं—हे भव्योत्तम! दोनो ही सेना के लोगों को, जो प्यासे है, उन्हें शीतल मीठा जल पिलाते हैं, भूखों को अमृत समान भोजन कराते हैं। मूर्च्छित सैनिकों को शीतल चन्दन के छींटे लगाते हैं। ताडवृक्ष के पंखों से हवा करते हैं, बर्फके जलसे छींटे लगाते हैं। और भी अनेक उपचार करते हैं। अपना या दूसरा कोई भी हो सबका इलाज एवं उपचार करते

है। यही सग्राम की रीति है। दस दिनतक बराबर युद्ध चलता रहा, दोनों ही महाधीर वीर रावण लक्ष्मण दोनों समान जैसा यह वैसा वह। आकाश मे यक्ष गंधर्व किन्नर अप्सरायें आश्चर्य को प्राप्त होकर दोनों का यश कीर्तन करते हुये, दोनोंपर पुष्पों की वर्षा की। एक चन्द्रवर्धन विद्याधर राजा की आठ राजकुमारियाँ आकाश मे विमानपर बैठी देख रही थी, उनका कौतुहल देख अप्सरायें पूछने लगी, अहो! तुम देवांगना समान कौन हो, तुम्हारी भक्ति लक्ष्मण मे विशेष दिखती है, तुम सुन्दर रूपवान हो? तब वे लज्जा से कहती है, आपको सुनने की इच्छा है तो सुनो! जब सीता का स्वयवर मडप हुआ था, तब हमारे पिता हमको लेकर वहॉ आये थे, तब लक्ष्मण के साथ हमारे विवाह का निश्चय किया था। और हमारा मनभी लक्ष्मण से मोहित हुआ। इसीलिये अब सग्राम में न जाने क्या होगा? यह हमारे प्राणनाथ इनकी जो दशा वही हमारी होगी। ऐसे इनके मधुर शब्द सुनकर लक्ष्मण ऊपर को देखने लगे, तब ये आठो ही कन्यायें लक्ष्मण को देखने से परम हर्षित होकर, विनती करने लगी कि हे नाथ! आपका कार्य सिद्ध हो। तब लक्ष्मण को विध्नबाण का उपाय सिद्धबाण याद आया, प्रसन्न मुख से सिद्धबाण चलाया तो विध्नबाण नष्ट हुआ, जो जो शस्त्रबाण रावण ने चलाये। वह राम का भाई वीर महाधीर युद्ध मे प्रवीण सभी बाणो को छेद डाले। तब रावण ने बहुरूपिणी विद्या के बलसे युद्ध किया, लक्ष्मणने रावण का एक सिर छेद दिया, तो दो हो गये, दो छेदे, तो चारहो गये, दो भुजाये छेदी तो चार हो गई, इस प्रकार लक्ष्मण जैसे-जैसे छेदता गया वैसे वैसे बहुरूपिणी विद्या से दूना दूना होता गया। हजारो सिर और हजारो भुजाये हुई। रणक्षेत्र पूरा भर गया, रावण अकेला ही महासेना समान अनेक मस्तक बनाये, उनपर छत्र फिरते है। रावणने विचार किया कि, मै अकेला लक्ष्मण से क्या युद्ध करूँ, इसलिये बहुरूपिणी विद्या से अनेक रूप बनाये। रावण ने हजारो भुजाओ के द्वारा लक्ष्मणपर बाणशक्ति खड्ग सामान्य चक्रादि शस्त्रो की वर्षा करने लगा, सो लक्ष्मण सभी बाणो को एव शक्तियो को बीच में ही छेद डाले। महाक्रोध रूप होकर लक्ष्मण सूर्यसमान तेजरूप बाणो से, रावण को छेदने लगा, एक, दो, चार, दस, बीस, सौ, हजार, मायामयी रावण के सिर और भुजायें लक्ष्मण ने छेदे, सो भूमिपर गिरीं, रणभूमि पर बिस्तर बिछ गया अथवा सर्प के फण समान वन दिखाई दिया। बहुरूपिणी विद्या से रावण के सिर एव भुजाये सुमित्रा का नन्दन लक्ष्मण ने छेदे, जैसे

महामुनि कर्मों के समूह को नाश करें, खून की धाराये निरन्तर बहती जा रही हैं। दो भुजा के धारक अकेले लक्ष्मणने रावण की असख्यात भुजाये निष्फल करदीं। तब रावण का शरीर पूरा पसीने से भीग गया, शरीर में थकान मालुम हुई, श्वास फूल गया। यद्यपि रावण महाबलवान है फिर भी व्याकुल हुआ।

गौतमस्वामी कहते हैं, हे श्रेणिक रावण की बहुरूपिणी विद्या का बल लक्ष्मण के आगे कोई कार्य नहीं कर सका। तब रावण ने मायाचार छोड सहज रूप से क्रोध का भरा महायुद्ध करने लगा, अनेक दिव्यशस्त्र एव सामान्य शस्त्रो से भी युद्ध किया, परन्तु वासुदेव को नहीं जीत सका। तब प्रलयकाल के सूर्य समान प्रभाका धारी, परशत्रु का नाश करने वाला जो चक्ररत्न, उसे रावण ने याद किया। कैसाहै चक्ररत्न? अप्रमाण प्रभाव का समूह है, उसमे मोतियों की झालरों से मंडित, महादैदीप्यमान दिव्य वज्रमई महाअद्‌भुत, कई प्रकार के रत्नो से जडित अंग जिसका, दिव्यमाला सुगन्ध का लेपन, अग्नि के समूह समान, महाधारा रूप प्रकाशवान, वैडूर्यमणि के सहस्र आरोंसे युक्त, जिसको देखा नहीं जाता, प्रति समय एक हजार यक्षदेव रक्षा करते, महाक्रोध का भरा, जैसे कालका मुख हो उसके समान वहचक्र, चिन्तवन करते ही रावणके हाथमे चक्ररत्न आया, चक्ररत्न की ज्योति से ज्योतिषी देवों की प्रभा मंद हुई,सूर्य की कान्ति ऐसी हो गई, जैसे चित्राम का सूर्य हो, और आकाश में अप्सरायें, विश्वासु, नारदादि रणका कौतुक देख रहे थे, वह भी भयसे दूर चले गये, और लक्ष्मणने शत्रुको चक्र सहित देख, अत्यन्त क्रोधसे कहने लगा, हे अधमनर! इसको क्यो ले रहा है, जैसे कृपण कौडीको ग्रहण करता है। अगर तेरे में शक्ति है, तो प्रहारकर, ऐसा कहा तब रावण महाक्रोधयमान होकर दांत होठ कटकटाते हुये, लाल नेत्रो को कर भयकर क्रोध से विकाररूप होकर चक्रको घूमाकर लक्ष्मणपर चलाया, कैसाहै चक्र? मेघमडल समान है शब्द उसका, महातेज से चलनेवाला, प्रलय काल के सूर्य समान, मनुष्यों के जीवन में संशय का कारण, ऐसे भयानक चक्रको सन्मुख आता देख, लक्ष्मण वज्रमयी है मुख जिनका, ऐसे बाणो से चक्र को रोकने के लिये तैयार हुये, और श्रीराम बज्रावर्त धनुष को चढा कर अमोधबाणों से चक्र को रोकने लगे, और हल मूसल को घुमाकर चक्र के सन्मुख हुये, और सुग्रीव गदाको फिराकर चक्र के सन्मुख हुये, एवं भामडल खड्‌गादि शस्त्र लेकर रोकने लगे, और विभीषण त्रिशूल लेकर खडे हुये, और हनुमान-मुदगर, लांगूल, कनकादि

शस्त्र लेकर सन्मुख खडे हुये, अंगद पारणनाम का शस्त्र लेकर खडे हुये, और अंगद का भाई अग, महातेज कुठार लेकर खडे हुये। और भी विराधित, जाम्बूनादादि सैकडों श्रेष्ठ विद्याधर, अनेक आयुधो सहित सब एक होकर जीवन की आशा छोड, चक्र को रोकने में, दूर करने में, सभी विद्याधर कपिवंशी भूमिगोचरी बडे बडे महाबलवान राजा, सब मिलकर चक्र को रोकते रहे, फिर भी चक्र को कोई भी रोक नहीं सके। चक्रने आकर लक्ष्मणको तीन प्रदक्षिणा देकर अपना स्वरूप विनयरूपकर लक्ष्मणके हाथमे सुखदाई शात आकार मय होकर ठहरा। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं कि हे श्रेणिक! राम लक्ष्मण महाऋद्धि के धारक हुये। यह महात्म्य तुझे सक्षेप में कहा। कैसीहै इनकी महिमा? जिसको सुनने से परम आश्चर्य उत्पन्न होता है, एव लोक में परमश्रेष्ठ है। किसीको पुण्य के उदय से महाविभूति प्राप्त होती है, और किसीको पुण्यके क्षय से हाथमे आई लक्ष्मी भी नष्ट हो जाती है, लक्ष्मीतो पुण्यकी दासी है जब तक मानव का पुण्य है, तब तक लक्ष्मी आपका साथ देगी, पुण्य क्षय होते ही नाग बनकर प्रलायमान हो जायेगी। धन कमाने के लिये कितना भी पुरुषार्थ क्यो न करो, फिरभी पुण्य के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। पुण्यशाली जीवोको अल्प पुरुषार्थ से ही महाविभूति लक्ष्मी सम्पदा की प्राप्ति होती है, जैसे सूर्य के अस्त होते ही चन्द्रमा का उदय होता है, ऐसे ही लक्ष्मण के पुण्य का उदय जानना।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषावचनिका मे लक्ष्मणके चक्ररत्नकी उत्पत्ति का वर्णन करनेवाला पचहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-76

राम-लक्ष्मण ,के साथ रावण का महायुद्ध और रावण का वध

अथानतर लक्ष्मणके हाथमे महा सुन्दर चक्ररत्न आया देख सुग्रीव, भामंडल, विराधितादि विद्याधरों के अधिपति राजा अति हर्षित हुये, और परस्पर कहने लगे पहले भगवान अनन्तवीर्य केवली ने कहा था कि लक्ष्मण आठवॉं वासुदेव है, और राम आठवॉ बलदेव है, यह महा ज्योति के धारी लक्ष्मण अर्धचक्री हुये। इसका उत्तम शरीर, अनुपम बल का कौन वर्णन कर सकता है, श्रीराम बलदेव उनके

रथको महा तेजवान सिह चलाते, उन्होंने राजा मयको पकडा और हल मूसल महारत्न दैदीप्यमान उनके हाथो मे सुन्दर लग रहे है। ये बलभद्र नारायण दोनों भाई पुरुषोत्तम प्रगट हुये। पुण्य के प्रभाव से, लक्ष्मणके हाथमें सुदर्शनचक्र को देख, राक्षसो का अधिपति रावण, मन मे चिन्तवन कर रहा है, सोच रहा है, चिन्ताकर रहा है। जो भगवान अनन्तवीर्य केवली ने कहा था वही हुआ, निश्चय से कर्म के योग से यह समय आया, मेरा छत्र देख विद्याधर डरते, सेना, शत्रु आदि सभी भाग जाते। मेरे प्रभाव से शत्रुओ की ध्वजायें छत्र दूर दूर भागते। हिमाचल विध्याचल पर्वतपर्यन्त यह पृथ्वी मेरी दासी समान आज्ञा कारणी थी, ऐसा मै रावण, सो रण सग्राम मे, भूमिगोचरियों ने मुझे जीता, यह अद्भुत महाकष्ट की अवस्था प्राप्त हुई है। धिक्कार यह राजलक्ष्मी कुलटा स्त्री समान, इस पापिनी को पूज्य पुरुष तत्काल छोडते है। यह इन्द्रियो के भोग नाशवान है। अत्यन्त दुख के कारण है। अथवा साधुओं के द्वारा निद्यनीय है। पृथ्वीपर उत्तम पुरुष भरत चक्रवर्ती आदि हुये वे धन्य है, जिन्होने छहखड पृथ्वी का राज्य किया और पुन· विष मिला भोजनके समान जान राज्य को छोड जिनेन्द्र व्रतो को धारणकर रत्नत्रय की आराधना से परमपद को प्राप्त हुये। मै रक विषयाभिलाषी, मोह बलवान ने मुझे जीता, यह मोह ससार भ्रमण का कारण, धिक्कार मुझे जो मोह के वश होकर, मैंने ऐसी खोटी चेष्टा की। रावण तो यह चिन्तवन कर रहे है, और लक्ष्मण के हाथमे चक्ररत्न आया, महातेज का धारी वह विभीषण की ओर देख, रावण से कहने लगा—हे विद्याधर! अभी भी कुछ नहीं गया है, जानकी को लाकर श्रीरामदेव को सोप दे, और यह कहो कि—मै राम के प्रसाद से जीवित हूँ। हमको तेरा कुछ नहीं चाहिये। तेरी राजलक्ष्मी तेरे ही पास रहे, तब रावण कुछ हसकर कहने लगा—हे रक! तुझे बिना प्रयोजन गर्व हुआ है, अभी ही मेरा पराक्रम तुझे दिखाता हूँ—हे अधमनर! मैं तुझे जो अवस्था दिखाता हूँ वह भोग। मै रावण पृथ्वीपति विद्याधर और तू भूमिगोचरी रंक। तब लक्ष्मण बोले बहुत कहने से क्या, नारायण तुझे मारने वाला मै उत्पन्न हुआ हूँ। तब रावण ने कहा—इच्छा मात्रसे नारायण नहीं होता, तू जो चाहता है वह नहीं हो सकता। तू कुपुत्र है तेरे पिता ने तूझे देश, नगरसे बाहर निकाला है, तू महादुखी, दरिद्री, भिखारी, वन वन मे भटकने वाला, निर्लज्ज तेरी वासुदेव पदवी हमने जानी, तेरे मनमे मान है, सो मै तेरे मनोरथ को नाश करूँगा, यह धेघली समान चक्र है, उससे तू मानी हो रहा

है। तुम रको की यही रीति है, कि खली का टुकडा प्राप्तकर, मन मे उत्सव करता है। बहुत कहने से क्या, यह पापी विद्याधर तुझसे आकर मिले है, उन सहित एवं वाहन और चक्र सहित तेरा नाशकर तुझे पाताल को पहुँचाऊंगा। रावण के यह वचन सुनकर लक्ष्मण ने क्रोध पूर्वक चक्रको घुमाकर रावण पर चलाया। वज्रपात के शब्द समान महा भयंकर शब्द, और प्रलय काल के सूर्य समान तेजको धारण करने वाला, वह चक्र रावण पर आया, तब रावण ने बाणो से, चक्र को रोकने का, आयुधों से दूर करने का, अनेक उपायो से पुरुषार्थ किया, प्रचंड दड शीघ्रगमन करने वाला बज्रनाग से, चक्रको रोकने का प्रयत्न किया, फिर भी रावण का पुण्य क्षीण हुआ, चक्र नहीं रूका, समीप आया, तब रावण ने चन्द्रहास खड्ग लेकर चक्रके समीप आकर, चक्रको खड्ग से मारा, तो अग्नि के कणों से आकाश प्रज्वलित हुआ, खड्ग का जोर चक्रपर नहीं चला, सन्मुख खडा जो रावण महाशूरवीर राक्षसो का इन्द्र, उसका चक्रने हृदय स्थल चीर दिया। पुण्य के क्षय से अजनगिरी समान रावण भूमिपर गिरा मानो स्वर्ग से देव गिरा। अथवा रति का पति पृथ्वीपर गिरा, ऐसा लगा मानो वीररस का स्वरूप ही है। भोंहे चढ रही है, होठ ठस रहे है। ऐसा रावण भूमिपर पडा। स्वामी को पडा देख, समुद्र समान सेना भागी जा रही है। ध्वजा छत्र स्वामी बिना ऊडे ऊडे फिर रहे है, समस्त राज लोग एव, रावण की सेना के लोग विह्वल व्याकुल दुखी होकर विलाप करते हुये रोते रोते भागे जा रहे है। और कहते है, रथ को दूर करो, मार्ग दो पीछे से हाथी आ रहा है, कोई कहता है विमान को एक तरफ करो, पृथ्वी का पति गिरा, महा भयकर अनर्थ हुआ, भय से कपित होकर, एक दूसरो पर गिरते, पडते, लौटते, भागते, दौडते हुये जा रहे है। तब सबको दुखी एव शरण रहित देख, भामडल, सुग्रीव, हनुमान, राम की आज्ञा से कहने लगे भय मतकरो, भय मत करो, डरो मत, धैर्य रखो, और वस्त्र फेरा, किसी को कोई भय नहीं। यह अमृत समान कानो को प्रिय लगे, ऐसे वचनो को सुनकर सेना को विश्वास हुआ। यह कथा गौतमगणधर ने, राजा श्रेणिक से कहा-हे राजन! रावण ऐसी महाविभूति को भोग, समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का राज्यकर, पुण्य क्षय हुआ, तो अन्तदशा को प्राप्त हुआ। इसलिये ऐसी लक्ष्मी को धिक्कार है, यह राजलक्ष्मी महाचचल पाप की खदान, ऐसा जानकर बुद्धिमान लोग शुभ क्रियाओं की आशा से, तप सहित मुनिपद को धारण करते है। कैसे है मुनि? तप रूपी धन, सूर्य से

भी अधिक तेजवान है, मोहरूपी अंधकार को नाश करते है। पाप कर्म का तीव्र उदय आने से, एवं आयु का क्षय होने से, चाहे चक्रवर्ती राजा महाराजा आदि किसी को भी, मरण से राज लक्ष्मी भी नहीं बचा सकती है। इसलिए राजलक्ष्मी एव गृहस्थ जीवन को छोडकर मुनिपद धारण करना चाहिये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रावणका वधकरनेवाला छहतरवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-77

रावण के वियोग से रावण का परिवार एवं रणवास का विलाप करना

अथानंतर विभीषण ने बडे भाई को पृथ्वीपर गिरा देख, महादुख की वेदना से अपने मरण के लिये छूरीपर हाथ लगाया, तब विभीषण को मूर्च्छा आ गई, पुन· सचेत होकर दुखके कारण मरने को तैयार हुआ, तब श्रीराम रथ से उतरकर विभीषण का हाथ पकड हृदय से लगाकर, धैर्य एव सतोष दिया, फिर मूर्च्छा से अचेत हुआ, तब श्रीराम ने सचेत किया, विभीषण दुखी होकर विलाप करने लगा, हाय भाई! उदार क्रियावान सामन्तो के पति, महाशूर वीर, रणधीर, शरणागत पालक, आप ऐसी अवस्था को क्यों प्राप्त हुये हो, मैने हित के वचन आपको कहे थे, वह आपने नहीं माने। आपको यह क्या हुआ, मैं आपको चक्र द्वारा विदारे हुये पृथ्वीपर गिरे देख रहा हूँ। हे देव! विद्याधरो के महेश्वर! हे लकेश्वर! उत्तम भोगों के भोक्ता! पृथ्वीपर कहॉ शयन करते हो, महा भोगों से आपने शरीर को लडाया था। यह सेज आपको शयन करने योग्य नहीं है हे नाथ! उठो मैं आपका छोटा भाई, बालक हूँ, मुझे शिक्षा के वचन कहो, मै शोकरूपी समुद्र में डूब रहा हूँ मुझे आप सहारा देकर निकालो। इस प्रकार विभीषण, शस्त्र कवचादि भूमि में डालकर, रोता हुआ दुखीहो रहा है। अथानंतर रावण की मृत्यु के समाचार रणवास मे पहुँचे, सो सभी रानियॉ ऑसुओं की धारासे पृथ्वी को गीली करती हुई सम्पूर्ण अतपुर सहित शोक से व्युाकल होकर, रोती हुई, रण

भूमि में, गिरती पडती-गिरती पडती आईं। महा घोर रणसग्राम मे आकर, वे सभी रानियॉ, पति को चेतना रहित, देख पृथ्वीपर गिरी। मन्दोदरी, रभा, चन्द्रमडला, महादेवी, रूपिणी, रूकमणी, शीला, रत्नमाला, मृगावती, श्रीमाला, मानवी, लक्ष्मी, अनगसुन्दरी, वसुधरा, पद्मा, सुखादेवी, कांति, प्रीति, मनोवेगा, मनोवती इत्यादि अठारह हजार रानीयॉ अपने-अपने परिवार एवं सखियो सहित महाशोक से रुदन करने लगी, किसीको मोह से मूर्च्छा आगई, कोई पतिके अगसे लिपटकर महाविलाप करने लगी, कोई मूर्च्छा से सचेत होने के बाद छाती पीट पीटकर रोने लगी, कोई पतिका हाथ एवं मुखको अपनी गोदी मे लेकर व्याकुलता से मूर्च्छित हो गई, कोई कहती है, हाय नाथ! मै आपके वियोग से महादुखी हूँ, आप मुझे छोडकर कहॉ गये। आपका परिवार महाशोक सागर मे डूब रहा है। सो क्यो नहीं देखते हो? आप महा बलवान्, विभूति से युक्त, इन्द्र समान, भरतक्षेत्र के भूपति पुरुषोत्तम महा राजाओ के राजा, महा विद्याधरो के महेश्वर, क्यो पृथ्वीपर शयनकर रहे हो, उठो उठो हे स्वामी! अमृत समान वचन हमारे से कहो, हे प्राणेश्वर! हमारा क्या अपराध है, आप क्यो क्रोधकर रहे हो। हमसे क्यो नहीं बोल रहे हो। पहले हम सबको हॅसाते थे। हमारा दुख नहीं देखते थे, अब क्यो मौन लिया है, हे स्वामिन्! प्रतिसमय आप प्रसन्न रहते थे, और हमको प्रसन्न करते, अब क्यों आपका चेहरा मुरझा गया, आपका वक्षस्थल महाक्रीडा का स्थान था, उसमे चक्रकी धाराने कैसे पाव रखा। हम नाराज होती तो आप हमे मना लेते, अब क्यो हमारी तरफ नहीं देखते हो। इन्द्रजीत मेघनाथ स्वर्ग से आये और आपके यहॉ भी स्वर्ग समान भोग भोगे, अब दोनो बधन मे पडे है, एव कुभकरण भी बधन मे पडा है, इसलिये महापुण्य अधिकारी महासुभट महागुणवान श्रीरामचन्द्रजी उनसे प्रीतिकर भाई और पुत्रको छुडाकर लाओ। हे प्राण नाथ! उठो हमारे हितकी बात कहो, बहुत देर सोना अच्छा नहीं, राजाओ को राजनीति में सावधान रहना, आप राज काज मे महानिपुण हैं, हे प्राणो के ईश्वर! आपके वियोगरूपी अग्नि से हम जल रही है, आप स्नेहरूपी जल से हमें शात करो। आपकी यह अवस्था देखकर भी हमारा हृदय पापी वज्र का है, हमारे हृदय के टुकडे क्यों नहीं हो रहे है, हमारे प्राण क्यो नहीं निकल रहे है, आपका यह दुख हम नहीं देख सकती है, हे विधाता हमने तेरा क्या बिगाडा, जो तू निर्दयी होकर हमें पति का

दुख दिया। हे स्वामी! हमारे से मौन छोडो। आपके चरणो में हम गिरती है, हमारा हृदय फटा जा रहा है, अब हम आपका वियोग सहन नहीं कर सकती। हे राजेश्वर! उठो हमारे से प्रेम करो, परम आनन्द को देने वाली क्रीडायें हमको याद आ रही है, हमारा हृदय इसलिये जल रहा है। हम बार बार आपके चरणों मे गिरती है। आप क्रोध छोडो, प्रीतिकरो, हम नमस्कार करे हमे आशीर्वाद दो, हम आपके चरणों मे गिरती तो आप तुरन्त उठा लेते, अब आप हमारी तरफ नजर करके भी नहीं देखते है। हे श्रेणिक! इस प्रकार रावण की सभी रानियॉ अत्यन्त विलाप करती रही, उनके दुख को देखकर किसका हृदय दुखी नहीं होगा, उनके आक्रन्दनरूपी शोकको देखकर सबका हृदय कोमल हो जाता है

(राम लक्ष्मणादि के द्वारा विभीषणका शोक निवारण करना)

अथानंतर श्रीराम लक्ष्मण भामडल सुग्रीवादि राजा, परमस्नेह सहित विभीषणको हृदय से लगाकर, ऑसू बहाते हुये महाकरुणावान, सन्तोष देने मे प्रवीण कहने लगे—हे राजन्! बहुत रोने से क्या? गया मनुष्य पुन लौट कर आता नहीं, अब विषाद छोडो, यह कर्मकी चेष्टा क्या तुम प्रत्यक्ष नहीं जानते हो, तुम्हारा भाई सदा प्राणियो के हित मे सावधान, परमप्रीति का भाजन, बुद्धिशाली राज कार्यमे दक्ष, प्रजाका पालक सर्व शास्त्र शस्त्रो का ज्ञाता, फिर भी मोह महाबलवान के कारण दुखको प्राप्त हुआ एव मरण को प्राप्त हुआ। जब जीवो का विनाश काल आता है, तब उसकी बुद्धि अज्ञानरूप हो जाती है। ऐसे शुभ वचन श्रीराम ने कहे, पुन भामडल ने मधुरता से कहा—हे विभीषण महाराज! आपका भाई रावण महाउदारचित्त, रण मे युद्ध करता हुआ, वीर मरणकर, परलोक को प्राप्त हुआ। उसका कुछ भी नहीं गया, धन्य है वे सुभट जो वीर मरण करते है, उनका नाम नहीं जाता है। इसलिये उनका शोक नहीं करना। एक राजा अरिदमन की कथा सुनो, अक्षयपुर नगर, वहॉ का राजा अरिदम महाविभूति का स्वामी, एकदिन घोडेपर चढकर अकस्मात अपने राजभवन मे आये। और रानीको शृगार सहित एव महल की शोभा देख रानीसे पूछा कि हम आज ही आ जायेगे, ऐसा तुमको कैसे मालुम हुआ। तब रानी ने कहा मन.पर्याय ज्ञान के धारी कीर्तिधर मुनिराज आज आहार को आये थे, उनको मैने पूछा कि राजा कब आयेगे, तब मुनिराज ने कहा कि आज अचानक आयेगें। यह बात सुन राजा मुनिराज के पास गये। और ईर्षा

पूर्वक पूछा कि हे मुनि! तुमको ज्ञान है तो बताओ मेरे मन मे क्या है? तब मुनिराज ने कहा, तेरे मन मे यह है कि मैं कब मरूँगा? सो तुम्हारे पर आजसे सातवे दिन बिजली गिरने से तुम मरोगें, और विष्टा में कीडा बनोगे। यह मुनि के वचन सुन राजा अरिंदम घर गये, और अपने पुत्र प्रीतिकर से कहा, कि मैं मरकर विष्टा के घर मे स्थूल कीडा बनूगा। मेरा रग रूप ऐसा होगा, सो तुम तत्काल मुझे मार देना। यह वचन पुत्र से कहा, ऐसे ही सातवे दिन मरकर विष्टास्थान मे कीडा हुआ। सो प्रीतिकर कीडे को मारने गया, तो वह कीडा मरने के डर से बार बार विष्टा मे घुस जाता है। तब प्रीतिकर ने मुनि के पास जाकर पूछा हे प्रभो! मेरे पिताजी ने कहा था, कि मै मलमे कीडा बनूगा, तो तुम मुझे मार देना, लेकिन वह कीडा अब मरने से डरता है, और उसी मल मे भाग जाता है। तब मुनिराज ने कहा तुम चिन्ता मत करो। जो जीव जिस गति मे जाता है, वह वहाँ ही रम जाता है। इसलिये तुम भी आत्म कल्याण करो तो पापो से छूट जाओगे। यह जीव अपने अपने कर्मो का फल स्वय भोगते है, दूसरे का कुछ नहीं करते। ससार का स्वरूप दुख का कारण जान, प्रीतिकर मुनि हुये। इसलिये हे विभीषण! जगतकी मायाको क्या तुम नहीं जानते हो, तुम्हारे भाई रावण महाशूरवीर को भाग्य के योग से नारायण ने मारा। सग्राम मे मरे महापुरुषकी क्या चिन्ता करना। तुम अपने मनमे शाति लाओ, यह शोक दुख का कारण है, इसे छोडो। यह प्रीतिकर की कथा भामडल से विभीषण ने सुनी, प्रीतिकर मुनि की कथा ज्ञानप्राप्ति मे कारण है, यह सुनकर विभीषणरूपी सूर्य शोकरूपी मेघ पटल से रहित हुआ। मानवको दुख शोक ताप आक्रन्दन रूप रोने से आसाता वेदनीयकर्म का बध होता है, जब कर्मफल उदय मे आता है, तब जीवको महाभयंकर रोगरूपी वेदना को भोगना पडता है। प्रत्येक ससारी प्राणी को जन्म मरण के दुख एव इष्टवियोग अनिष्टसयोग जब तब ससार में है, तब तक जीव के साथ लगा हुआ है। अत दुख मे घबराना नहीं, और सुख में फूलना नहीं, सुख दुख मे समता भाव रखना ही मानव जीवन का शृगार है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे विभीषणका एव रानियो का शोक निवारण का वर्णन करनेवाला सत्तहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-78

अनंतवीर्यकेवली के समीप इन्द्रजीत-मेघनाथ तथा मंदोदरी आदि का दीक्षा लेना

अथानंतर श्रीरामचन्द्रजी ने भामडल, सुग्रीव, हनुमान आदि से कहा महापुरुषों की शत्रुता शत्रुओं के मरणपर्यत ही रहती है, लंकेश्वर परलोक गये, ये महापुरुष थे, इनके उत्तम शरीर का अग्नि सस्कार करना है। तब सबने प्रणाम किया, और विभीषण सहित राम लक्ष्मण जहॉ मन्दोदरी आदि अठारहहजार रानियॉ विलापकर रो रही थी, वहॉ वाहन से उतर सभी विद्याधरो सहित गये। राम लक्ष्मण को देख सभी रानियॉ महा विलाप करती हुई चूडियॉ आदि आभूषण तोडकर फेक दिये। तब श्रीराम महादयावान अनेक शुभ वचनो से सभी रानियो को सतोष से दिलासा दिया। और आप स्वय राम सभी विद्याधरो को साथ लेकर रावण के दाह सस्कार के लिये लोकाचार को गये। कपूर, घी, मलयागिरी, चन्दन इत्यादि अनेक प्रकार के सुगन्धित द्रव्यो से पद्मसरोवर पर प्रतिनारायण रावण का दाह सस्कार किया। एव सरोवर के किनारेपर श्रीराम बैठे। कैसे है राम? महा दयावान गृहस्थाश्रम मे ऐसे निर्मल परिणाम कोई विरले जीवो के ही होते है। राम ने आज्ञा दी की कुभकर्ण इन्द्रजीत मेधनाद सभी सामन्तो को सेना सहित छोडो, तब कोई कहने लगे, वे महाक्रोधित शत्रु है, छोडने योग्य नहीं है। बधन ही में मरने दो, तब श्रीराम ने कहा, यह क्षत्रियो का धर्म नहीं है, जिनशासन मे क्षत्रियो की कथा क्या तुमने नहीं सुनी है? सोये हुये को, बधेको, डरने वालेको, शरणागतको, भागने वालेको, खाने वाले को एवं बाल वृद्ध स्त्री को नहीं मारना, ऐसा क्षत्रियों का धर्म शास्त्रो मे प्रसिद्ध है। तब सबने रामकी आज्ञा प्रमाण बडे बडे योद्धा अनेक शस्त्रों को साथ लेकर लेने के लिये गये। कुभकरण, इन्द्रजीत, मेघनाथ, मारीच राजामय, इत्यादि पुरुषो को स्थूल बंधनो सहित, सावधानी पूर्वक लेकर आ रहे है। उनको देख वानरवंशी योद्धा परस्पर चर्चा करने लगे, कि कदाचित् इन्द्रजीत, मेघनाथ, कुंभकर्ण, रावण की चिता जलती देख क्रोध करे तो कपिवंशी इनके सन्मुख युद्ध करने में कोई समर्थ नहीं होंगे। जो कपिवशी जहॉ बैठा, वहॉ से उठ नहीं सका। भामंडल ने अपने योद्धाओं से कहा, इन्द्रजीत, मेघनाथादि सभी योद्धाओं को बधे हुए ही लाना। अभी विभीषण का भी विश्वास नहीं है। अगर भाई

भतीजे को देख, एव भाई के मरण को यादकर, इसको भी क्रोध आ सकता है। भाई के मरण से विभीषण बहुत दुखी है। ऐसा विचारकर भामडलादि, उनको राम लक्ष्मण के पास लेकर आये, वे महाविरक्त, रागद्वेष रहित मुनि होने के भाव महाशातमुद्रा से, भूमि को देखते हुये आये। वे सभी महाधीर वीर चिंतवन करते आ रहे है, कि ससार असार है, एक धर्महीं सार है, अगर आज बधनो से छूटे तो दिगम्बर भेषको धारणकर पाणिपात्र मे आहार करेगे, यह प्रतिज्ञा करते हुये, राम लक्ष्मण के पास आये, और इन्द्रजीतादि विभीषण के पास आकर बैठे, सभी ने परस्पर बात की। पुन कुभकर्णादि सभी राम लक्ष्मण से कहने लगे, अहो! आपका परम धैर्य, परम गम्भीरता, अनुपम विचार देवोसे भी नहीं जीता जाये, ऐसा राक्षसो का इन्द्र, रावण मृत्युको प्राप्त हुआ। आप ज्ञानियो मे श्रेष्ठ गुणोके धारी ऐसे शत्रु भी प्रशसा करने योग्य है। तब श्रीराम, लक्ष्मण कुम्भकर्णादि को बहुत सतोष देकर, मनोज्ञ वचन कहने लगे। हे कुभकरण! पहले आप, जैसे सुखमय भोगो को भोगते थे, वैसे ही रहो, आपके भोग आपकी सम्पदा वैभव सब कुछ जैसा का तैसा आपका ही है, आप अपने स्थानपर आनन्द से रहो। तब इन्द्रजीतादि सभी कहने लगे, अब हमारे इन भोगो से कोई प्रयोजन नहीं है, यह विष समान भोग, महादुख देने वाले, महामोह के कारण, महाभयकर नरक निगोद मे ले जाकर दुखो को देने वाले इस जीव को वहाँ क्षणमात्र भी सुख नहीं, इसलिये इन भोगोकी इच्छा नहीं करना। राम लक्ष्मण ने सभी को बहुत समझाया, फिर भी इनका मन भोगो मे आसक्त नहीं हुआ। कुम्भकर्णादि पहले भोगो मे महालीन थे परन्तु इस निमित्तरूपी ज्ञानके प्रकाश से, भोगरूपी शत्रुओ से, विरक्त हुये अथवा वैराग्य को प्राप्त हुये। राम ने इनके बधन खोल दिये और इन सबके साथ पद्म सरोवर पर स्नान किया। स्नान के पश्चात् कपिवश के राजा, और राक्षसवश के राजा अपने अपने स्थान को गये। कोई सरोवर के किनारेपर बैठकर, आश्चर्य पूर्वक शूर वीरो की कथा करने लगे, कोई पूर्वकर्म को दोषी बताते रहें, कोई हथियार डालकर रावण के गुणो को याद कर कर आक्रन्दन पूर्वक रोने लगे, कोई कर्मो की विचित्र गति का वर्णन करने लगे, कोई ससार के भोगो की निदा करने लगे, कोई भोगो को नाशवान जान, राजलक्ष्मी को महाचचल मानने लगे। कोई रावण के गर्वका वर्णन करने लगे, कोई रामके गुण गाने लगे, कोई लक्ष्मणकी शक्तिका, कोई पुण्यकी प्रशंसा का, वर्णन करने लगे। घर घर मे मरण की क्रियाये हुई, बाल वृद्ध आदि लकाके सभी लोगो ने, रावण

के शोक से ऑसुओं को बहाते हुये चातुर्मास किया। सभी के मुखसे एकही चर्चा चली, कि धिक्कार है, यह क्या हुआ, बहुत दुख की बात है, नगर का नायक गया, अल्प विषयरूपी सुखोंके कारण अपना जीवन नष्ट किया, इसलिये जीवोको जितनी भोग सामग्री मिले, उतने में ही संतोष करना चाहिये। तीनखंड का अधिपति हमारी रक्षा करने वाला, यह रावण मृत्यु को प्राप्त हुआ। इस प्रकार लोग विलाप करते हुये ऑसुओ की नदिया बहाई है। कोई मौन पूर्वक जमीनपर काष्ठ समान सोये हैं, किसीने शस्त्रों को फेक दिया, किसीने आभूषण तोड दिये, किसीने स्त्री परिवार से बोलना बन्द किया, कोई ससार के भोगो से विरक्त हो दीक्षा के लिये तैयार हुये।

अथानतर पिछले पहर संध्या समय मे, महा संघ सहित अनन्तवीर्य मुनिराज लका के, कुसुमायुद्ध नाम के वनमे, छप्पनहजार मुनिराज सहित आये। जैसे ताराओ से युक्त चन्द्रमा सुन्दर लगे, ऐसे हजारो मुनियो सहित अनन्तवीर्य मुनि सुशोभित हुये। अगर यह मुनिराज रावण को जीवित रहते आ जाते, तो रावण का मरण नहीं होता, और रावण एवं लक्ष्मण के विशेष प्रीति होती। जहॉ ऋद्धिधारी मुनिराज विराजमान होते है, वहॉ सब मगल ही होता है। और जहॉ केवलीभगवान विराजमान होगे, वहॉ चारो ही दिशाओ मे, सौ सौ योजन तककी पृथ्वी स्वर्ग समान उपद्रव रहित होती है। जीवो मे शत्रुता नहीं होती, अग्नि में उष्णता, जल मे शीतलता, पृथ्वी मे सहन शीलता, ऐसे स्वभाव मे महाज्ञानी, महामुनि लोकमे आनन्द दायक, अनुपम गुणोके धारी, ऐसे अनन्तवीर्यस्वामी विराजमान है। गौतम स्वामी कहते है, हे श्रेणिक! ऐसे ऋषियो के गुणो का वर्णन कौन कर सकता है। जैसे स्वर्ण के घडे मे अमृत भरा, ऐसे महा मुनिराज मे अनेक ऋद्धियॉ भरी। जीवो से रहित स्थान मे एक शिलापर शुक्ल-ध्यानको धारणकर विराजमान हुये। उसी रात्रिमें केवलज्ञानको प्राप्त किया। उनके गुणो का वर्णन पापोंका नाश करता है। उनकी पूजा के लिये असुरकुमार, नागकुमार, गुरुडकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, पवनकुमार, मेघकुमार, दीपकुमार, उदधिकुमार, दिक्‌कुमार ये दसप्रकार के भवनवासीदेव। तथा आठ प्रकारके व्यन्तरदेव-किन्नर, किपुरुष, महोरग, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, पिशाच। पांच प्रकार के ज्योतिषदेव सूर्य, चन्द्र, गृह, तारा, नक्षत्र। सोलह स्वर्ग के कल्पवासीदेव सौधर्म, ईशान, सानतकुमार, माहेन्द्र ब्रह्म, ब्रह्मोतर, लान्तव, कापिष्ट, शुक्र, महाशुक्र, शतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत। ये सभी चारोप्रकार के

देव आये। धातकीखण्ड द्वीपमे तीर्थकरप्रभु का जन्म हुआ था, तब इन सभी देवों ने क्षीरसागर के जलसे सुमेरु पर्वतपर अभिषेक किया और जन्म कल्याणक का उत्सव कर, बालक को माता पिता को सौप ताडव नृत्य कर, प्रभु की बार बार स्तुति की। वहॉ जन्म कल्याणक मनाकर, सभी देव लका मे अनन्तवीर्यकेवली के दर्शन एवं पूजा करने आये। कोई विमान से, कोई राजहसो पर, कोई अश्व, सिंह, व्याघ्रादि अनेक वाहनोंपर बैठकर आये। ढोल, मृदग, बासुरी, वीणा आदि बाजो के साथ मनोहर गीत नृत्य किये। उनके बाजो की ध्वनि एव जय जयकार के शब्दो से दशों दिशाये गूंज उठी। तब राम लक्ष्मण भगवानको केलवज्ञान होने का वृतान्त जान, परमहर्ष को प्राप्त हुये, सभी वानरवशी, राक्षसवशी, विद्याधर, इन्द्रजीत, मेघनाथ, कुंभकर्णादि सैकडो राजा, राम लक्ष्मण के साथ केवली भगवान के दर्शनो के लिये चले। राम लक्ष्मण हाथीपर चढे, कोई रथो पर, कोई घोडो पर बैठे। छत्र, चमर, ध्वजाओ सहित देवो समान भक्ति करते हुये, प्रसन्न मनसे वाहनो से उतरकर विनयपूर्वक प्रणाम करते हुये स्तोत्र पढ केवलीभगवान के चरणो मे बैठे। अष्टांग दडवत् नमस्कार किया। धर्मोपदेश की अति अभिलाषा ऐसे, केवली भगवान के मुख से, धर्म श्रवण करने लगे, दिव्य ध्वनी मे उपदेश हुआ—जो प्राणी आठो कर्मो से बंधे है महादुख रूपी चक्रपर बैठकर, चारो गतियो मे भ्रमण करते है। आर्तरौद्रध्यान से शुभ अशुभ कर्मो का बध करते है। महामोहनीय कर्म ने इस जीव को ज्ञान रहित किया, इसलिये नित्य ही हिंसा झूठ, चोरी कुशील परिग्रह आदि पाचो पापो को करता है। दूसरो की निदा करता, पाप एव कषाय सहित अशुभ कार्य करता हुआ, मरकर नरक मे जाता है। महादुखो को देने वाले सातो नरको के नाम सुनो—रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा, महातमप्रभा। ये नरक अधकार सहित दुर्गध युक्त जिसे सूध नहीं सकते, देख नहीं सकते, स्पर्श नहीं कर सकते, ऐसी भयकर भूमिपर कई प्रकार के छेदना, भेदना, ताडना, मारना, काटना, चीरनाादि सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, बध बंधनादि महातीव्रदु ख पाप कर्मो के उदय से सागरो पर्यन्त भोगते है। ऐसा जानकर ज्ञानी जीव पापो से रहित होकर धर्म, व्रत, नियम, सयम, तप का पालन करते है। उन तप सयम से स्वर्ग सुखों को भोगकर, पुन. मनुष्य भव धारणकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। जो तप, व्रत, धर्मादि कल्याण मार्ग से रहित हैं, वे बार बार जन्म मरण करते हुये, महा दुखी ससार मे भ्रमण करते है। जो भव्यजीव सर्वज्ञ वीतराग प्रभु के वचनो मे धर्म की श्रद्धा करता है, वह मोक्ष मार्गी

शील, सत्य, शौच, सहित रत्नत्रय का पालनकर, जब तक आठों कर्मो का नाश नहीं करता तब तक इन्द्र अहमिन्द्रादि एव चक्रवर्ती पदों को प्राप्तकर, उत्तम सुखों को प्राप्त करता हैं। इन्द्रादि अद्भुत सुखों को भोग वहॉं से चयकर महाराजाधिराज होकर पुनः जिनमुद्रा को धारणकर महातप से केवलज्ञान प्राप्तकर अष्टकर्मों से रहित होकर सिद्ध होते हैं। अनन्त अविनाशी अनन्त सुख को भोगते है। भगवान की यह दिव्यवाणी सुनकर इन्द्रजीत मेघनाथ अपने पूर्वभव पूछने लगे।

तब केवली भगवान ने अपनी दिव्यध्वनी में कहा—एक कौशाम्बी नगरी मे दो भाई दरिद्री, एकका नाम प्रथम दूसरेका नाम पश्चिम। एक दिन भवदत्त मुनिराज विहार करते हुये आये, तब दोनो भाईयो ने धर्मोपदेश सुनकर ग्यारह प्रतिमा के धारी उत्कृष्ट श्रावक क्षुल्लक हुये। उन्हीं मुनिराज के दर्शन करने के लिये कौशाम्बी के राजा इन्द्र आये, मुनिराज ने राजा को देखकर अवधिज्ञान से जाना, कि इसका मिथ्यात्व प्रगाढ है, उसी समय नन्दिनाम का एक सेठ जिनभक्त वह भी मुनिराज के दर्शन के लिये आया। उसका राजा ने आदर किया, उस सेठको देख छोटे भाई पश्चिम ने यह निदान किया कि। हे प्रभो! मै इस धर्मके प्रभाव से नन्दिसेठ का पुत्र बनूँ। तब बडे भाई और गुरु ने, छोटे भाई को सम्बोधन किया, की जिनशासन मे निदान महानिद्यनीय बताया है। तब यह निदानबध से दुखी हुआ, और मरकर के नन्दिसेठ की स्त्री इन्दुमुखी के गर्भ मे आया। गर्भ मे आते ही बडे बडे राजा इसको महानर जान जन्म से ही आदर सन्मान कर अनेक द्रव्य देते थे। इसका नाम माता पिता ने रतिवर्द्धन रखा, सभी राजा एवं कौशाम्बी के राजा भी सेवा करते थे। एव नित्य आकर नमस्कार करते थे। इस प्रकार रतिवर्द्धन के महा विभूति हुई। और बडा भाई मरकर स्वर्ग मे देव हुआ, छोटे भाई के जीवको संबोधन करने के लिए, क्षुल्लक का भेष बनाकर आया। सो वह राजाओं के मान सन्मान के मद से अधा हो रहा था, उस क्षुल्लक को दरवाजे में आने नहीं दिया तब उस देव ने क्षुल्लक का रूप दूर कर, रतिवर्द्धन का रूप बनाकर उसका नगर उजाड दिया, और कहा कि अब तेरी क्या बात है, तब वह चरणो मे गिरकर स्तुति करने लगा। तब देव ने सभी वृतान्त कहा, कि अपन दोनो भाई थे, मैं बडा और तू छोटा, तूने क्षुल्लक के व्रतधार नन्दिसेठ को देख, निदान किया, और मरकर नन्दिसेठ के घर जन्मलिया। और राजविभूति प्राप्त की। और मैं स्वर्ग में देव हुआ। यह बात सुन रतिवर्द्धन को सम्यक्त्व हुआ। नन्दिसेठ सहित अनेक राजा रतिवर्द्धन के साथ मुनि बने। रतिवर्द्धन तपस्या से

जहॉ भाई का जीव देव था, वहॉ ही यह देव हुआ। पुन· दोनो भाई स्वर्ग से आकर राजकुमार हुये, एकका नाम उर्व, दूसरेका नाम उर्वस राजा नरेन्द्र, रानी विजया के पुत्र। यहॉ जिनधर्म की आराधना कर स्वर्ग में देव हुये। वहॉ से चयकर तुम दोनो भाई रावण की रानी मन्दोदरी उसके इन्द्रजीत, मेघनाथ पुत्र हुये। और नन्दिसेठ के इन्द्रमुखी, रतिवर्द्धन की माता कई जन्मो के पश्चात् मन्दोदरी हुई, पूर्वभव के स्नेह के कारण, अब इस जन्म मे माता का अति स्नेह हुआ। इस प्रकार अपने पूर्वभव सुन, संसार से वैराग्य हुआ। फिर जिनेश्वरी दीक्षा धारण की। और कुभकरण, मारीच, राजा मय, और भी बडे बडे राजा ससार से विरक्त होकर विषय कषाय एव विद्याधरों की राजविभूति को छोड महामुनि बने। महायोगीश्वर होकर अनेक ऋद्धियो के धारी पृथ्वीपर विहार करते हुये, भव्यजीवो को धर्मोपदेश देते रहे। पुन मुनिसुव्रतनाथ भगवान के मोक्ष जाने के बाद उनके तीर्थ मे, यह बडे बडे महापुरुष हुये। महातप के धारी अनेक ऋद्धियो से युक्त हुये। वे भव्य जीवो के लिये बार बार नमस्कार करने योग्य है। और मन्दोदरी पति और पुत्र दोनो के वियोग से महादुखी होकर शोक से मूर्च्छित हो गई, पुन सचेत होकर मृगी के समान विलाप करती हुई, रोने लगी। दुखरूपी समद्रु मे गिरती हुई, कहने लगी हाय पुत्र इन्द्रजीत, मेघनाथ यह तुमने क्या किया, मै तुम्हारी माता अतिदीन दुखी मुझे क्यो छोडी, यह क्या तुमको योग्य है? जो दुखरूपी अग्नि मे जलती हुई, माता को बिना मिले बिना पूछे चले गये। हाय पुत्र हो तुम कैसे मुनिव्रत का पालन करोगे। तुम देवो समान महाभोगो को भोगने वाले, शरीर का पोषण करने वाले, अब कठोर भूमिपर कैसे शयन करोगे, सम्पूर्ण वैभव छोडा, विद्याये छोडी केवल आत्मध्यान एवं अध्यात्मविद्या मे तत्पर हुये। और राजा मय भी मुनि बने उनका महाशोक किया, हाय पिता यह क्या किया, जगत को छोड मुनि बने, आपने मेरे से तत्काल स्नेह क्यो छोड दिया। मै आपकी राजपुत्री मेरेपर दया क्यो नहीं की। बाल्यावस्था में मेरे से आपका महाप्रेम था, मै पिता, पुत्र, पति सब से रहित हुई, सभी मुझे छोडकर चले गये। स्त्री के यही रक्षक होते है, अब मै किनकी शरण मे जाऊँ, मै पुण्य हीन महा दुखी हुई, इस प्रकार दुख से रुदन किया, उसके रुदन को देख सभी के ऑखो में ऑसुओ से चातुर्मास हुआ। तब शशिकान्ता नाम की आर्यिका ने मन्दोदरी को धर्मोपदेश दिया। हे मूर्खे! क्यो रो रही है? इस ससार चक्रमे जीवों ने अनन्तभव धारण किये, इनमे नारकी और देवो के सन्तान नहीं होती, मनुष्य तिर्यच के होती है, चारो गतियो

में भ्रमण करते हुये, मनुष्य तिर्यंच के अनन्त जन्म धारण किये, उनमें तेरे अनेक पिता, पुत्र, पति, परिवार हुये, उनके लिये जन्म जन्म मे रोये, अब क्यों विलाप करके रोती है, मन को शांतकर। संसार असार है एक आत्मधर्म ही सार है, तू जिनधर्म की आराधना कर। इससे तुझे दुखो से निवृति होगी। आर्यिका ने मन्दोदरी को ऐसे प्रिय वचन कहकर सम्बोधन किया। मन्दोदरी को आर्यिका के वचनो को सुनकर वैराग्य हुआ। मन्दोदरी सम्पूर्ण परिग्रह राजवैभव छोड, एक सफेद साडी को धारणकर, आर्यिका बनी। कैसी है मन्दोदरी? मन, वचन, काय, से निर्मल स्वच्छ परिणामो से जिनशासन मे अनुरागिनी। और चन्द्रनखा रावण की बहिन इन्हीं आर्यिका के निकट आर्यिका बनी, जिस दिन मन्दोदरी ने दीक्षा ली, उस दिन मन्दोदरी के साथ अडतालीसहजार आर्यिकायें हुई। इस अध्याय को पढकर सुनकर सभी मानव को समझना चाहिये कि ससार केले के वृक्ष के समान नि सार है अत असार वस्तु का त्याग करके सार वस्तु को ग्रहण करे, असार अन्धकार मय है, और सार सूर्य के समान प्रकाशवान है, सार वस्तु ही मोक्षमार्ग मे अनन्त सुखों को प्राप्त कराने का साधन है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे इन्द्रजीत मेघनाथ कुभकरण और मन्दोदरी आदि रानियो का वैराग्य एव दीक्षाधारण करनेका वर्णन करनेवाला अठहतरवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-79

राम और सीता का मिलाप

अथानंतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं, हे राजन्! अब श्रीराम लक्ष्मण ने महा विभूति सहित लका मे प्रवेश किया वह सुनो। विमान, हाथी, घोडे, रथ और विद्याधरों के समूह, बडे बडे राजा, हजारों देव उन सहित दोनो भाईयों ने, महा ज्योतिवान, देवों समान, लंका में प्रवेश किया। राम लक्ष्मण को ऐसी विभूति सहित देख लंका के लोग महाप्रसन्न हुये। पूर्व पुण्य का फल प्रत्यक्ष देखा। राजमार्ग मे चलते हुये श्रीराम लक्ष्मण को देख नगर के नरनारी अपूर्व आनन्द को प्राप्त हो रहे थे। प्रसन्न मुख से स्त्रीयाँ झरोखों मे बैठकर खिडकियों में से देख

रही थी, कोई दरवाजों पर खडे होकर देख रहे थे। परस्पर में कौतुक मनसे सभी बातेकर रहे थे। हे सखी! देखो यह राम राजादशरथ के पुत्र गुणरूपी रत्नों के भडार, पूर्णिमा के चन्द्रमा समान मुख इनका, कमल समान नेत्र के धारी, महान अद्‌भुत पुण्यसे यह पद प्राप्त किया है, अतिप्रशंसा योग्य इनका रूप, धन्य हैं इनकी रानियॉ जो ऐसे पति को पाये। उन रानियो ने पूर्व भव मे अनुपम पुण्य व धर्मकार्य किया होगा, इसलिये ऐसे पुण्यवान पति की रानियॉ बनी। उनके समान अन्य नारियॉ कौन होगी। राजा जनक की राजपुत्री महाकल्याण रूपिणी, पुण्यशाली, पूर्वभव मे महापुण्य कार्य किये है। इसलिये ऐसे पति उनको प्राप्त हुये। जैसे शचि इन्द्र के वैसे सीता राम के। और यह लक्ष्मण वासुदेव चक्रके धारी सुरेन्द्र समान उसने रावण को रणमे मारा, नीलकमल समान लक्ष्मणनारायण, स्वर्ण समान बलदेव रामचन्द्र ऐसे सुन्दर लगे जैसे प्रयाग मे गंगा जमुना के प्रवाह का मिलन। और राजा चन्द्रोदय का पुत्र विराधित ने लक्ष्मण से मिलकर महा विभूति प्राप्त की, यह भामंडल सीता का भाई राजा जनक का पुत्र, राजा चन्द्रगति विद्याधर ने पालन पोषण किया, यह विद्याधरो का इन्द्र है। और यह अगदकुमार राजा सुग्रीव का पुत्र है, उसने ही रावणपर बहुरूपिणी विद्या को सिद्ध करते समय, उपसर्ग किया था, और हे सखी! सुनो, यह हनुमान महारूपवान, सुन्दर, हाथियों के रथ पर बैठा है, पवन समान ध्वजा, बन्दर चिन्हो से युक्त फहरा रही है, इसने महारणभूमि मे शत्रुओ को बहुत दौडाया भगाया, यह राजा पवन का पुत्र अंजना का राजदुलारा उसने लका मे अनेक उपद्रव किये। इस प्रकार ये सभी स्त्रीयॉ परस्पर अनेक चर्चा कर रही थीं। राम लक्ष्मण राजमार्ग होकर जगह जगह लोगो के द्वारा सम्मानित होते हुये, पुष्प स्वर्णादि की मालाओ से पूजित आगे आगे अनेक सेना एव विभूति से युक्त लश्कर सहित आये। एक चमर ढोरती स्त्री से रामचन्द्रजी ने पूछा—हमारे वियोग के दुख से दुखी तप्तायमान, जो भामडल की बहिन, वह कहॉ विराजमान है? तब वह रत्नों की चूडियों की ज्योति से, प्रकाश रूप है, भूजाये उसकी अपनी अगुलियो के इशारे से स्थान दिखाने लगी। हे देव! यह पुष्प प्रकीर्णक नामका पर्वत, झरनों के जल से मानो हंस ही रहा है, वहॉ पर नन्दनवन समान महामनोहर उद्यान में, राजा जनक की राजदुलारी भामंडल की बहिन, कीर्ति शील है, परिवार उसका वह वहॉ विराजमान है।

इस प्रकार—श्रीरामचन्द्रजी से चमर ढोरती हुई स्त्री ने कहा—और सीता के

समीप जो उर्मिका नामकी सहेली, सभी सहेलियो में प्रिय, वह अपनी अगुली के इशारे से सीताको कहने लगी—हे देवी! हे महासती! चन्द्रमा समान छत्र के धारी, चाद सूर्य समान कुंडल, रत्नों के आभूषण, अमूल्यवस्त्र, अनुपमगुणों के धारी, महारूपवान, महाशक्ति शाली, वे पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी आपके पतिदेव पधारे। तुम्हारे वियोग के दुख से अतिदुखी महाचिन्ता से भरे, जैसे दिग्गज आये वैसे आ रहे हैं। यह बात सुन सीता ने पहले तो स्वप्न समान जाना। परन्तु अनुपम आनन्द सहित जैसे बादलों मे से चन्द्रमा निकले, ऐसे विद्याधरों के मध्य हाथी से उतरकर राम आये, जैसे रोहिणी के निकट चन्द्रमा आये, ऐसे सीता के समीप राम आये। तब सीता ने अपने नाथ को पास मे आये देख, महाहर्ष पूर्वक प्रसन्न मुख से उठकर राम के सन्मुख गई, कैसीहै सीता? शरीरपर मिट्टी लग रही है केश बिखर रहे है, चेहरा मुरझा गया, स्वभाव से ही दुर्बल शरीर था, पति के वियोग से अतिकृश हुई, अब पतिके दर्शनसे महाहर्ष को प्राप्त हुई, और जीवन की आशा लगी, मानो प्रेमसे भरी पतिसे मिल रही है। और नेत्रो की ज्योतिरूपी जलसे पतिको स्नान कराती है। क्षणमात्र में ही शरीर की ज्योति राम के दर्शनमात्र से ही बढ गई है। कैसीहै सीता? राम के नेत्रो को विश्राम की भूमि। अपने हाथो की सुन्दरता से लक्ष्मी के करकमलो को जीतने वाली, सौभाग्यरूपी रत्नो की खान, चन्द्रमा समान मुख की ज्योति उसकी चन्द्रमा कलकित, परन्तु सीता निश्कलकित, बिजली समान चमक उसकी, बिजली चंचल, यह निश्चल, मानों नामकर्मसे सुन्दर पुण्य परमाणुओ से इसके शरीर की रचना की है। ऐसी मदनसुन्दरी सरल स्वभावी वह कौशल्या का राजपुत्र, रानी विदेहाकी राजपुत्री को पास मे आती देख, कहने मे नहीं आये, ऐसे महाहर्ष को प्राप्त हुये, और यह रति समान परम सुन्दरी, रूपवान पतिको आते देख, विनय सहित हाथजोड खडी ऑसुओ से भरे है, नेत्र उसके, जैसे शचि इन्द्राणी इन्द्रके निकट आये, रति काम के निकट आये, दया जिनधर्म के निकट आये, सुभद्रा भरत के पास आये, ऐसे ही महासती सीता रामके पास आई, बहुत दिनों के वियोग से, खेद खिन्न राम ने सैकडो पुरुषार्थ कर, ऑखो में प्रेम के ऑसुओ सहित अपनी भुजाओं से प्राण प्रिया से मिले। सीता को हृदय से लगाकर सुख के सागर में तृप्त हुये। हृदय से अलग नहीं कर सके मानो वियोग से डरते है। और सीता निर्मल मनसे पति के कठ में, अपनी भुजाओ की माला डाली, सो ऐसी सुन्दर लगी, जैसे कल्पवृक्षो से लिपटी कल्पबेल। दोनो के शरीर मिलन के हर्ष से पुलकित हुये। देवो के युगल समान, यह रूपवान

युगल, ऐसे देव देवागना समान दोनों सुशोभित हुये। महासती सीता और राम का मिलन देख, देव भी प्रसन्न होकर, आकाश से दोनोपर पुष्पो की एवं सुगध जल की वर्षा करने लगे, और मुख से ऐसे वचन कहने लगे, अहो! अनुपम है शील सीता का, धन्य है महासती सीता, इसकी अचलता, गम्भीरता, व्रतशील की मनोज्ञता, उसके निर्मल परिणाम धन्य है। सतियों में श्रेष्ठ यह महासती सीता उसके मनसे भी एव स्वप्न मे भी कभी रामको छोडकर अन्य पुरुष की इच्छा नहीं की। एव राग भरी दृष्टि से किसी को देखा तक भी नहीं। अपने पति की भक्त, अपने स्वामी की आज्ञाकारणी, शुद्ध है नियम व्रत उसका, इस प्रकार देव प्रशंसा कर रहे थे। उसी समय महाभक्ति से भरे लक्ष्मण ने आकर सीता के चरणो में विनय पूर्वक नमस्कार किया, सीता ऑसुओ को बहाती हुई, लक्ष्मण को हृदय से लगाकर कहने लगी—हो लक्ष्मण! महाज्ञानी मुनिराज ने कहा था, कि यह लक्ष्मण वासुदेव पद के धारी होगे। सो यह बात सत्य हुई, अर्धचक्री पद का राज्य तुमको मिला, निर्ग्रंथमुनि के वचन असत्य नहीं होते, और यह आपके बडे भाई, पुरुषोत्तम बलदेव, उन्होने मुझे वियोग रूपी अग्नि मे जलती हुई को निकाला। पुन. विद्याधरो का स्वामी, भाई भामंडल बहिन के समीप आया, उसे देख सीता मिली। कैसाहै भाई? महाविनयवान, रण मे महापराक्रम दिखाया है। और सुग्रीव, हनुमान, विभीषण, नल, नील, अगद, अंग, विराधित, चन्द्र, सुषेण, जाम्बूनाद इत्यादि बडे बडे विद्याधर अपने अपने नाम सुनाकर, वन्दना और स्तुतिकर, अनेक प्रकार के वस्त्र आभूषण एव रत्नो से निर्मित पुष्पो की मालाये सीता के चरणो के समीप स्वर्णपात्र मे रखकर भेट किया। और भक्ति से कहने लगे—हे देवी! तुम तीनलोक मे प्रसिद्ध हो, महाउदारवान गुण सम्पदा मे सबसे महान हो, देवो के द्वारा स्तुति करने योग्य हो, आपके दर्शन महामगल रूप है, जैसे सूर्य की प्रभा सूर्य सहित प्रकाश करे, वैसे आप श्रीरामचन्द्र सहित जयवत हो। इस अध्याय को जो पढे, पढाये सुने, सुनाये, उसको जिससे मिलने की कामना हो, उससे उसका मिलन होगा। जैसे कोई विदेश गया हो, या अपहरण हुआ हो, वह सुख पूर्वक आकर आपसे मिलेगा। इस अध्याय को पढने से इष्ट संयोग की प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम और सीताका मिलनवर्णन करनेवाला उन्यासीवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-80

विभीषण का अपने दादा आदि को संबोधना

अथानंतर सीता के मिलन से प्रसन्न है मुख कमल उनका, ऐसे राम अपने हाथों से, सीता का हाथ पकडकर उठे, और ऐरावत हाथी समान हाथीपर सीता सहित बैठे, हाथी की पीठपर जानकीरूपी रोहणी और रामरूप चन्द्रमा दोनो अतिप्रेम के भरे प्राणियों को आनन्दरस देने वाले, बडे बडे विद्याधरों के साथ, महाभक्त भाई लक्ष्मण सहित, स्वर्ग विमान समान रावण का राजमहल उसमें श्रीराम पधारे। रावण के महल के मध्य मे श्रीशांतिनाथ भगवान का मन्दिर अतिसुन्दर स्वर्ण के हजारो खंभे, रत्नों से निर्मित दीवाले, रत्नों की अतिशय कारी प्रतिमाये सुन्दर घटा तोरण ध्वजाओं से सुशोभित हैं। ऐसे शांतिनाथभगवान का मन्दिर अनुपम है उसका वर्णन नहीं कर सकते। श्रीराम हाथी से उतरकर सीता लक्ष्मण सहित अनेक विद्याधरो के साथ मन्दिर में प्रवेश किया, जानकी सहित राम कुछ समय के लिये कायोत्सर्ग रूप प्रतिज्ञा की, तत्पश्चात हाथ जोड शातिनाथ भगवान का स्तोत्र सभी पापों का नाश करने वाला पढा, हे प्रभो! आपके गर्भ जन्म कल्याणक मे तीनो लोको के जीवो को शाति प्राप्त हुई। जन्म कल्याणक मे इन्द्र आदिक देवों ने हर्षित होकर क्षीरसागर के जल से आपका सुमेरू पर्वतपर जन्माभिषेक किया, आप तीर्थकर और कामदेवपद के साथ चक्रवर्तीपद को धारणकर छह खड का राज्य किया। बाहर के शत्रु बाहर के चक्र से जीते और मुनि होकर अन्तरंग शत्रु राग द्वेषादि को ज्ञानचक्र से जीते। केवलज्ञानरूपी धर्मचक्र को प्राप्तकर, जन्म जरा मरण से रहित होकर मोक्ष सुख का अविनाशी राज्य किया। कैसा है मोक्ष? उपमा रहित, नित्य, निरंजन, शुद्ध निर्विकार रूप है। आपने मोक्ष को प्राप्त किया और सबको मोक्ष मार्ग बताया। आप ससार के सभी प्राणियों को शांति के कारण है हे शांतिनाथ भगवान! मेरा मन वचन काय से आपको नमस्कार हो। हे जिनेश! ससारी जीवो के नाथ, जो आपकी शरण में आता है, उसके आप रक्षक हो, आप एक परमेश्वर होकर, फिर भी सबके गुरु हो, सौ इन्द्रों के द्वारा पूज्य, धर्मतीर्थ के कर्ता, अनन्तसुखों के भोक्ता, आपके प्रभाव से सब दुखो से रहित जो मोक्ष स्थान, उसे मुनि ही प्राप्त करते हैं। हे देवाधिदेव! सर्व पापो को नाश कराने में आप कृत्य-कृत्य हैं, आपको

हमारा नमस्कार हो। आप शरणागत पालक हो, हे प्रभो! आपही गुरु आपही बधु, भव्यजीवो के दुखों को हरने वाले सुखों को देने वाले, आपको हमारा नमस्कार हो। महा शांत स्वभाव मे विराजमान, सब दोषो से रहित। हे भगवान! कृपा करो वह अखंड अविनाशी पद हमको देओ। इत्यादि महा स्तुति करते कमलनयन के धारी श्रीराम तीन प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया। राम के पीछे दोनो हाथजोड विनयपूर्वक सीता स्तुति करती रही, श्रीराम के शब्द महादुन्दुभि समान और जानकी के शब्द महामधुर कोमलवाणी समान, भक्ति से स्तुति करते रहे। भामडल सुग्रीव हनुमान विराधितादि सभी विद्याधर मगल स्तोत्र पढते रहे। महाभक्ति से गीत नृत्य सहित भगवान की स्तुति की और यथा योग्य स्थानपर बैठे। उस समय राजा विभीषण अपने दादा (बाबा) सुमाली उनके छोटे भाई सुमाल्यवान, और सुमाली के पुत्र रत्नश्रवा, रावण के पितादि जो बडे पुरुष उनको शांति पूर्वक दिलाषा कहा–हे तात्! ससार के सभी जीव अपने किये कर्मोंके फलको भोगते है। इसलिये शोकको छोडो और अपने मन मे शाति लाओ। आप जिनागम के ज्ञाता है, आप दूसरों को उपदेश देने वाले हैं। आपको हम क्या कहे। जिस प्राणी का जन्म होता है, उसका मरण अवश्य होता है, बिजली की चमक समान यह जीवन है, पानी के बुद बुदे समान परिवार का साथ है, संध्या के बादलो के रग समान यह भोग है, और जगत की क्रियायें स्वप्न समान है, जो जीव पर्यार्थिक नयसे मरण नहीं करते तो, हम आपके वशमे कैसे जन्म लेते। हे तात्! अपना शरीर ही नाशवान है, तो दूसरे का शोक क्यो करे, शोक करना अज्ञानता है, सज्जन पुरुषों को शोक दूर करने के लिये ससार के स्वरूप का चिन्तवन करना चाहिये, देखे सुने अनुभव में किये वे पदार्थ उत्तम पुरुषो को शोक उत्पन्न कराते है, परन्तु विशेष शोक नहीं करना, क्षणमात्र के लिये हुआ तो हुआ। शोक करने से, गया मनुष्य आता नहीं है, बुद्धि का विनाश होता है, इसीलिये शोक नहीं करना। इस असार संसार मे, किन किन जीवों के साथ, सम्बन्ध नहीं हुआ, सभी जीव अपने हैं, और सभी जीव दूसरे हैं, ऐसा जानकर, शोक छोड देना। अपनी शक्ति प्रमाण जिनधर्म को धारण करना, यह वीतराग प्रभु का मार्ग ही संसार से पार कराने वाला है, जिनशासन में मन लगाकर आत्म कल्याण करना चाहिये। इत्यादि अनेक मधुर धर्मरूपी शब्दों से अपने परिवार को समझाया।

रामको सेनासहित विभीषणके घर भोजन के लिये आमत्रण

अथानंतर विभीषण अपने राजमहल मे गया, और अपनी विदग्ध नाम की पटरानी व्यवहार में कुशल हजारों रानियो में मुख्य, उसे श्रीरामचन्द्रजी को भोजन का निमंत्रण देने के लिये भेजा। उसने आकर सीता सहित राम लक्ष्मण को नमस्कार कर विनती करने लगी हे देव! हमारे पति का घर आप अपने चरण कमलों से पवित्र करे। और हमारी विनती भोजन के लिये स्वीकार करें। इस प्रकार रानी ने विनती की, उसी समय विभीषण ने आकर आदर पूर्वक विनयकर कहा—हे देव! उठिये और मेरा घर पवित्र कीजिये। तब राम विभीषण के साथ उनके घर जाने के लिये तैयार हुये। अनेक वाहन हाथी, घोडा, रथादि मे बैठकर अनेक राजा एवं सेना सहित विभीषण के घर चले, विभीषण ने नगर को सजाया, बाजे बजवाये झझा भेरी आदि हजारो बाजे बजे, दुदुभी समान बाजों की ध्वनी से दशों दिशाये गूज उठी। ऐसे ही बाजो के अनेक वाहनो के एवं सेना के शब्दो से दिशाये गूंज उठी। कोई सिह एव शार्दूल के रथोपर कोई हाथी घोडे आदि विद्यामयी अनेक वाहनोंपर चढे, नृत्य कारणी नृत्य करती हैं, नट भाट अनेक कलाओं की चेष्टा कर रहे हैं, सुन्दर नृत्यगान युक्त बदीजन विरद बरवानते हैं, ऊँचे ऊँचे स्वरों से स्तुति करते है। लका के सभी नर-नारियों को आनन्द पूर्वक हर्षित करते हुये श्रीराम विभीषण के घर पधारे। गौतमस्वामी कहते है—हे श्रेणिक उस समय की विभूति कह नहीं सकते, देवो समान शोभा सजावट हुई। विभीषण ने अर्धपाध किये। श्री शान्तिनाथ भगवान के मन्दिर से लेकर अपने राजमहल तक महामनोज्ञ तांडव नृत्य किये। श्रीराम ने हाथी से उतरकर सीता और लक्ष्मण सहित विभीषण के घर मे प्रवेश किया। विभीषण के महल मे श्रीपद्मप्रभु भगवान का मन्दिर रत्नो के तोरण, स्वर्ण के अनेक जिनमन्दिर जैसे पर्वतो के मध्य में सुमेरूपर्वत होता वैसे पद्मप्रभु भगवान का मन्दिर, सुवर्ण के हजारों खभो के ऊपर दैदीप्यमान जिन मन्दिर सुशोभित था। पद्मरागमणिकी पद्मप्रभु भगवान की प्रतिमा अतिअनुपम विराजमान है, उनकी ज्योति से मणि की भूमिपर मानों कमलों का वन फूल खिल रहा है, वहॉ राम लक्ष्मण सीता सहित वदना एव स्तुतिकर यथायोग्य बैठे। विद्याधरों की रानियॉ राम लक्ष्मण सीता के स्नान कराने की तैयारियॉ करने लगी, अनेक प्रकार के सुगन्धित तेलादि लगाकर पूर्वदिशा की तरफ मुखकर स्नान की चौकीपर बैठाया, सोना, मरकत मणि, हीरा, स्फटिक, इन्द्रनीलमणि आदि के कलशो में सुगन्धित जलभर कर, बडी

ऋद्धिपूर्वक स्नान कराया। अनेक प्रकार के बाजे बजे, गीत गाये, स्नान करने के पश्चात् रामादि सभी लोग अमूल्य पवित्र वस्त्रआभूषण पहनकर सुन्दर सामग्री, पूजन की लेकर, पद्मप्रभु के चैत्यालय जाकर भगवान की पूजा की। विभीषण ने रामचन्द्रजी की आदर पूर्वक मनुहार की। उसका वर्णन कहाँ तक करें। दूध दही घी शरबत की बावडियॉ भरवाई, पकवान और अन्न के पर्वत बनाये, अद्‌भुत वस्तुये नन्दनादि वन से मंगवाई, मन, नेत्र, एव नासिका को प्रिय लगे, जीभको अतिस्वादिष्ट लगे, ऐसा षट्‌रस सहित भोजन तैयार कराया, सामग्री तो सभी सुन्दर स्वादिष्ट ही थी, फिरभी सीताके मिलन की खुशी से रामचन्द्रजी को भोजन अतिस्वादिष्ट एव प्रिय लगा। राम के मन की प्रसन्नता का वर्णन करने मे नहीं आता, जब इष्टका संयोग होता, तब पाचो ही इन्द्रियो के सभी भोग अतिप्यारे लगते। जब अपने पतिका सयोग होता, तब भोजन भी अच्छा लगता, अथवा वस्त्र आभूषण देखना बोलना सुनना सभी मित्रोका सयोग अच्छा लगता है। और जब अपने मित्र एव परिवार का वियोग होता है, तब स्वर्ग भी नरक समान लगता है। और प्रिय के संयोग मे महाघनघोर भयानक वन भी स्वर्ग समान लगता है। महासुन्दर अमृत समान रस, अनेक वर्ण के अद्‌भुत मीठे पकवान, उनसे राम लक्ष्मण सीता को सम्मान पूर्वक भोजन कराया। भूमिगोचरी विद्याधर परिवार सहित सबको अतिमान सम्मान से जिमाये। चन्दनादि सुगन्धित पदार्थो का लेप किया। और भद्रशाल नन्दनादि वनो के पुष्पो की मालाये पहनाई। महा सुन्दर कोमल रेशम के महीन वस्त्र पहनाये, और अमूल्य रत्नो के आभूषणो से सोलह प्रकार का श्रृगार कराया। जितने राम की सेना के लोग थे, उन सबको विभीषण ने सम्मानकर प्रसन्न किया। सबके मनोरथ पूर्ण हुये। रात और दिन लकाके एव राम की सेनाके सभी लोग विभीषण का ही यशकीर्तन करते हैं। अहो! यह विभीषण राक्षसवश का आभूषण है, उसने राम लक्ष्मण की भक्ति से महासेवा की ये विभीषण प्रशंसा योग्य महापुरुष है। ये विभीषण लंका मे एव देश विदेशो मे प्रशसा का पात्र हुआ। उसके घरपर राम लक्ष्मण पधारे। इस प्रकार विभीषण के गुणो को ग्रहण करने में लोग तत्पर हुये। सब लोग सुख से रहे। राम लक्ष्मण और सीता एवं विभीषण की कथा पृथ्वीपर प्रसारित हुई।

राम लक्ष्मण का लका मे छहवर्ष सुख पूर्वक बिताना

अथानंतर विभीषणादि सम्पूर्ण विद्याधर राम लक्ष्मण का अभिषेक करने के लिये विनय पूर्वक तैयार हुये। तब श्रीराम लक्ष्मण ने कहा, अयोध्या में हमारे माता

पिता ने, भाई भरत को अभिषेक कराकर राज्यदिया। भरत ही हमारे प्रभु हैं। तब सबने कहा आपका कहना ठीक है। परन्तु अब आप तीनखड के अधिपति हुये हो, इसलिये यह मंगल स्नान योग्य है, इसमे कोई दोष नहीं। और ऐसा सुनने मे आ रहा है, कि भरत महाधीर है मन वचन कायसे आपकी सेवा भक्ति मे तत्पर है, इसके लिये विरोध नहीं करेगे। ऐसा कहकर राम लक्ष्मण का महा अतिशयकारी राज्याभिषेक किया। जगत मे बलभद्र नारायण की अतिप्रशसा हुई। जैसे स्वर्गो में इन्द्र प्रतीन्द्र की महिमा होती है। ऐसे लकामे राम लक्ष्मण की प्रशसा हुई। इन्द्रके नगर समान लकानगरी मे महाभोगो से पूर्ण राम लक्ष्मण की आज्ञा से विभीषण राज्य करते है। नदीपर सरोवर के किनारे गॉव नगर देशो में सभी विद्याधर राजा महाराजा प्रजादि सब राम लक्ष्मण का यश गाते रहे। विद्याधरो समान अद्भुत वस्त्र आभूषण हार मुकुटादि से युक्त होकर क्रीडा करते थे। जैसे स्वर्ग मे देव क्रीडा करे। और श्रीरामचन्द्रजी एव सीता का मुख देखते देखते तृप्त नहीं हो रहे थे। रामके मनको चुराने वाली सीता, उस सहित राम निरन्तर वनों के रमणीक स्थानो मे आनन्द लेने लगे। और लक्ष्मण विशल्यासहित प्रेमको प्राप्त हुये। मनवाच्छित सम्पूर्ण सुखदाई वस्तुओ का सयोग उन दोनो भाईयो को प्रतिदिन प्राप्त होता रहा। बहुत दिन भोग उपभोग सहित सुखके दिन बीते एक दिन समान लगे। एक दिन लक्ष्मण ने विराधित को अपनी सभी रानियो को लेने के लिए पत्र लिखकर ऋद्धि से भेजा। उसने जाकर राजकुमारियो के पिताओ को पत्र दिया, माता पिता ने बहुत हर्षित होकर अपनी अपनी राज कुमारियो को बहुत विभूति सहित भेजा। दशागनगर का राजा वज्रकर्ण की राजपुत्री रूपवती महारूपवान और कुवरस्थान के स्वामी बालिखिल्य की राजकुमारी कल्याणमाला, पृथ्वीपुर नगर का राजा पृथ्वीधर उनकी राजपुत्री वनमाला गुणवान, और खेमाजली का राजा जितशत्रु की पुत्री जितपद्मा, उज्जैन नगरी का राजा सिंहोदर की पुत्रियॉ अनेक। लक्ष्मण की रानियो को विराधित लेकर आया। पूर्व पुण्य के उदय से दया, दान, मन इन्द्रियो को वश करना शील, संयम, गुरुभक्ति, महाउत्तम तप, इन शुभ क्रियाओं के पुण्य से लक्ष्मण समान शक्तिशाली रूपवान पति मिले। इन पतिव्रताओ ने पूर्व मे महातप किये होगे। रात्रि मे भोजन छोडा होगा, चारप्रकार के सघकी सेवा की होगी इसलिये वासुदेव जैसे पति प्राप्त हुये। उनके लक्ष्मण जैसे पति योग्य हैं और लक्ष्मण को ऐसी ही स्त्रीयॉ योग्य है। इसलिये लक्ष्मण को एव रानियो को महा सुख होता है, एव दोनो परस्पर सुखी हुये। गौतमस्वामी ने

कहा, हे श्रेणिक! संसार में ऐसी कोई सम्पदा नहीं, ऐसी कोई शोभा नहीं, ऐसी कोई कला नहीं, जो इनको प्राप्त नहीं हुई हो, इन महापुरुषो को और रानियों को इच्छा से भी अधिक सुख सामग्री साधन पूर्वपुण्य से अनायास ही प्राप्त होती थी। राम लक्ष्मण सीता एव इनकी रानियों की कथा कहॉ तक कहे। सीता आदि रानियो की उपमा लक्ष्मी और रति भी नहीं कर सकती। राम लक्ष्मण की ऐसी सपदा देख विद्याधरो के समूह आश्चर्य चकित होते थे। चन्द्रवर्धनादि अनेक राजाओ की राजकुमारियों से श्रीराम लक्ष्मण का महा उत्सव से विवाह हुआ। सभी जीवो को आनन्द देने वाले दोनो भाई उत्तम भोगो को भोगते हुये मनवाच्छित सुख को प्राप्त होते हैं। इन्द्र प्रतीन्द्र समान राम लक्ष्मण आनन्द पूर्वक लका मे क्रीडा करते रहे। सीता मे अत्यन्त राग, ऐसे राम उन्होने छह वर्ष लंका मे व्यतीत किये। सुख के सागर मे मग्न, सुन्दर क्रियाओ के धारी महाआनन्द को भोगने वाले श्रीरामचन्द्रजी सम्पूर्ण दुख को भूल गये।

इन्द्रजीत आदि का निर्वाण गमन

अथानतर इन्द्रजीत आदि मुनिराज सब पापो के नाशक, अनेक ऋद्धियो के धारी पृथ्वीपर विहार करते रहे। वैराग्यरूपी दृढता से ध्यानरूपी अग्नि द्वारा कर्मरूपी वनको नाश किया। और मेघनाथ मुनि विषयरूपी ईधनको अग्नि समानजान आत्मध्यान से कर्मो को नाशकर केवल ज्ञान को प्राप्त किया। केवलज्ञान जीव का निज स्वभाव है। और कुभकर्ण मुनिराज सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र के धारी शुक्ल लेश्या से निर्मल परिणामों द्वारा शुक्लध्यान के ध्याता चारो घातिया कर्मो को नाशकर केवलज्ञान को प्राप्त किया। लोक अलोक को जानने देखने वाले मोहादि आठो कर्मो से रहित इन्द्रजीत, कुभकर्ण, मेघनाथ, केवलीभगवान आयु पूर्णकर अनेक मुनिराजो सहित नर्मदा नदी के तटपर सिद्धपद को प्राप्त हुये। सुर असुर मनुष्य तिर्यचादि सौ इन्द्रो के द्वारा पूज्य शुद्धशील के धारी दैदीप्यमान जगत के बधु समस्त ज्ञेयपदार्थो के ज्ञाता, ज्ञान के समुद्र लोकालोक प्रकाशक, ससार भ्रमण से रहित सिद्धपद को प्राप्त हुये। पुन. वहॉ से आवागमन नहीं, उपमा रहित, निर्विघ्न, अखड सुख को प्राप्त किया। जो कुंभकरण आदि अनेकसिद्धपरमेष्ठी हुये, वह जिनशासन के श्रोताओ को अथवा हमको आरोग्य पद देओ। सम्पूर्ण कर्मरूपी शत्रुओ का नाश किया है, वह स्थान, सिद्धक्षेत्र है। यह स्थान महापवित्र, महा उत्तम परमाणुओं से भरा, आत्म विशुद्धि करानेवाला, मन को शाति देने वाला, पुण्य प्राप्ति के लिये भव्यजीवो को यह तीर्थस्थान

वन्दना करने योग्य है। विंध्याचल के वनमे इन्द्रजीत, मेघनाथ केवली विराजमान हुये थे, इसलिये वह क्षेत्र मेघरव कहलाता है और जम्बूमाली महा बलवान तूणीमतपर्वत से अहमिन्द्रपद को प्राप्त हुये, वह पर्वत अनेकवृक्ष पशु पक्षी आदि वनचर जीवों से भरा था। हे भव्यजीवो! जीव दया आदि अनेक गुणो से सहित, जो जिनधर्म, उनका पालन करने से कोई वस्तु दुर्लभ नहीं। जैन धर्म के प्रभाव से सिद्धपद, अहमिन्द्रपद इत्यादि सभी पद सुलभ हैं। जम्बूमाली का जीव अहमिन्द्र पद से ऐरावत क्षेत्र मे मनुष्य होकर दीक्षा लेकर केवलज्ञानके धारी होकर सिद्धपद को प्राप्त करेगे। और मन्दोदरी का पिता राजामय मुनिराज महातपस्वी ज्ञानज्योति के धारी चारणऋद्धि के प्रभाव से अढाई द्वीप मे कैलाशपर्वतादि निर्वाणक्षेत्रो, की एव अकृत्रिम चैत्यालयों की वन्दना करते हुये, रत्नत्रय के आभूषण ऐसे महामुनि ने पृथ्वीपर विहार किया। और मारीचमत्री महामुनि स्वर्ग मे महाऋद्धि के धारी देव हुये। जिनका जैसा तप वैसा फल प्राप्त किया। सीता के व्रतो की दृढता से पति का मिलन हुआ। उसको रावण भी डिगा नहीं सका। सीता का अतुलधैर्य अद्भुतरूप, महानिर्मलबुद्धि, अपने स्वामी मे अतिस्नेह वह कहने मे नहीं आता। सीता सम्पूर्ण गुणो से पूर्णशील के प्रभाव से जगत मे प्रशंसा का पात्र हुई। कैसी है सीता? एक निज पति में है सन्तोष उसको, भवसागर से पार होने वाली, परम्परा से मोक्ष की पात्र, उसकी प्रशंसा साधु भी करते है। गौतमस्वामी ने कहा, हे श्रेणिक! जो स्त्री विवाह नहीं करती, जन्म से बाल ब्रह्मचारणी रहे, वह महा भाग्यशाली ही है। एव जो मन वचन काय से परपुरुष का त्याग करे, स्वपति मे सन्तोष रखे, यह भी एक ब्रह्मचर्य व्रत है। यह व्रत भी परम्परा से स्वर्ग और मोक्ष देने मे समर्थ है। शीलव्रत समान और कोई व्रत नहीं, शील भवसागर से पार करने में नौका है। राजा मय राज्य अवस्था मे मायाचारी एव कठोर परिणामी थे। अब जिनधर्म के प्रभाव से रागद्वेष से रहित होकर अनेक ऋद्धियों के धारी मुनि हुये। ब्रह्मचारी चार प्रकार के होते है। उत्कृष्ट ब्रह्मचारी संसार मुक्त होकर तेरहवें गुणस्थान वाले अरहन्तकेवली सर्वज्ञ, वीतराग, हितोपदेशी, सामान्यकेवली, तीर्थंकरकेवली जो अठारहहजार शील के दोषो से रहित, पूर्ण चारित्र के पालक, आत्मा में रमण करने वाले उत्कृष्ट ब्रह्मचारी हैं। दूसरे ब्रह्मचारी जो जन्म से ही बाल ब्रह्मचारी है, जिन्होंने अपने शरीर पर रागरूपी विषय सेवन का कीचड ही नहीं लगाया, वे ब्रह्मचारी है। जैसे पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी, ब्राह्मी, सुन्दरी आदि। तीसरे ब्रह्मचारी विवाह करने

के पश्चात् भी स्वस्त्री और परस्त्री मात्र का त्याग करता हैं। एव उनको राग भरी दृष्टि से नहीं देखता अथवा इन सभी से रहित होना ब्रह्मचर्य व्रत है, जैसे सातवीं प्रतिमाधारी श्रावक। चौथे ब्रह्मचारी-स्वस्त्री को छोड परस्त्री, अपने से छोटी को पुत्री समान, अपने बराबर की स्त्री को बहिन समान, अपने से बडी स्त्री को माता समान जानकर, उनका त्याग करना, मन वचन काय से एव स्वप्न मे भी कभी उनके प्रति हमारी भावना रतिभाव की नहीं होना। इस प्रकार के शील व्रतो को पालन करने वाले प्राणियो को स्वर्गसे देव भी आकर नमस्कार कर उनकी पूजा करते हैं, उपसर्ग आनेपर उनकी रक्षा करते है।/

मयमहामुनिराज के तप का वर्णन

यह कथा सुन राजा श्रेणिक—गौतमस्वामी से पूछते है। हे नाथ! मैने इन्द्रजीतादि भगवान का चारित्र सुना, अब राजामय मुनिराज का चारित्र सुनना चाहता हूँ। और हे प्रभु! जो इस पृथ्वीपर पतिव्रता, शीलवान अपने पति मे ही सतोष रखती है, वह निश्चय से स्वर्ग मोक्ष की अधिकारी है, उनकी महिमा मुझे अधिक विस्तार पूर्वक बताईये। तब गणधरदेव कहते हैं। जो निश्चय से सीता समान पतिव्रत शील को धारण करते हैं, वे अल्प भवों मे ही मोक्ष जाते हैं। पतिव्रता स्वर्ग मे जाती है और परम्परा से मोक्ष मे जाती है। अनेक गुणो से पूर्ण शीलवान मन वचन कायसे मनकी इच्छाओ को जिन्होने रोका है वे ही धन्य है। सब ही नारी पतिव्रता नहीं होती, सभी पुरुषो मे विवेक नहीं होता, शीलरूपी अकुश से मनरूपी हाथी को वश करे वह ही पतिव्रता है। बिना प्रयोजन से पतिव्रता का अभिमान किया तो क्या? जो शीलधर्म की महिमाको नहीं जानती, वह मनरूपी हाथी को वशकरने मे समर्थ नहीं। वीतराग प्रभु की वाणी से निर्मल परिणाम जिनके, वही मनरूपी हाथी को, विवेकरूपी अंकुश से वशकर, दयाशील के मार्ग मे चलने को समर्थ है। हे श्रेणिक! एक अभिमानी स्त्री की कथा सुनो। एक धान्यनाम का गॉव वहॉ नोदनब्राह्मण उसके अभिमाना स्त्री। वह ब्राह्मण की पुत्री थी, उसकी माताका नाम मानिनी। वह अतिमान से भरी। नोदनब्राह्मण ने भूखकी वेदनासे अपनी पत्नी अभिमाना को छोडदिया। वह गजवनपुर (पोदनपुर) मे करुहराजा को प्राप्त हुई, वह राजा पुष्पप्रकीर्णनगर का स्वामी विषयोका लम्पटी उसने ब्राह्मणीको रूपवान देख, ले गया। और प्रेम से अपने घर मे रखी। एकसमय राग के कारण अभिमाना स्त्री ने राजा के मस्तकपर लात मारी, प्रात. समय सभा मे राजा ने पंडितो से पूछा जिसने मेरे सिरपर लात मारी हो, उसे

क्या करना। तब मूर्ख पंडित ने कहा—हे देव! उसका पैर काटना या मारना, उस समय एक हेमांक ब्राह्मण राजाके मनको जाननेवाला उसने कहा, जिसने मारा उसके पैरो की आभूषणादि से पूजा करनी। तब राजा ने हेमाक से पूछा, हे पंडित! तुमको यह रहस्य कैसे मालुम हुआ? तब उसने कहा स्त्री के दातो के चिन्ह तुम्हारे मुहपर दिखते हैं इसीलिये यह जाना कि स्त्री के पैर की लगी। तब राजा ने हेमांक को अभिप्राय का ज्ञाता जान अपने पास रखा। और बहुत धन दिया। उस हेमांक के घर के पास एक मित्रयशा विधवा ब्राह्मणी रहती थी, उसने अपने पुत्र को शिक्षा दी, हे पुत्र! बालक अवस्था मे जो ज्ञान प्राप्त करता है, वह हेमाक की तरह धनवान होता है। हेमाक ने बालपन में ज्ञान प्राप्त किया, सो अब उसकी कीर्ति देखो। और तेरे पिता धनुषबाण विद्या मे महाप्रवीण थे, उसके तुम मूर्ख पुत्र हुये, यह ऑसू बहाते हुये माता ने कहा। मॉ के वचन सुन, माता को शाति देकर, महा अभिमान से श्रीवर्धित पुत्र विद्या सीखने के लिय व्याघ्रपुरनगर मे गया। वहॉ गुरु के पास शास्त्र और शस्त्रादि की सभी विद्या प्राप्त की। उसी नगरके राजासुकात की पुत्री शीलाको श्रीवर्धित साथ मे लेकर निकला। तब शीला का भाई सिहचन्द्र इससे युद्ध करने आया, तब इस अकेले ने शस्त्र विद्या के कारण सिहचन्द्र को जीता, और स्त्री सहित माता के पास आया। माता प्रसन्न हुई, शस्त्र कला मे दक्ष श्रीवर्धित की कीर्ति पृथ्वीपर फैली। शस्त्रो के बल से पोदनपुर के राजा करुरुह को जीतकर वह राजा हुआ। व्याघ्रपुर का राजा, शीला का पिता मरगया। तब शीला के भाई सिहचन्द्र को शत्रुओ ने दबाया, वह सुरग के मार्गसे अपनी रानीको लेकर निकला। राजभ्रष्ट होकर पोदनपुर मे अपनी बहिन के यहॉ पत्तोकी झोली सिरपररख स्त्रीसहित आ रहा था रात्रि मे पोदनपुरके वनमे रहा उसकी स्त्रीको सांपने काट लिया, तब वह स्त्रीको कधेपर लेकर गया, जहॉ मयमुनिराज कायोत्सर्ग मुद्रा में अनेक ऋद्धियो के धारी विराजमान, उन मुनिराज को सर्वौषिधी ऋद्धि उत्पन्न हुई थी, ऐसे मुनि के चरणों के पास सिंहचन्द्र ने अपनी रानीको सुला दिया। मुनिराज की ऋद्धिके प्रभावसे रानीका विष दूर हुआ। सिहचन्द्र रानी सहित मुनिराज के पास बैठा था, उन मुनिराज के दर्शनों के लिये विनयदत्त श्रावकआया और वह सिहचन्द्र से मिला। सभी वृत्तान्त विनयदत्त से सिहचन्द्र ने कहा, तब विनयदत्त ने जाकर, गजवनपुर के राजा श्रीवर्धित को कहा, कि तुम्हारी रानी का भाई सिहचन्द्र आया है। तब वह अपना शत्रुजान युद्ध के लिये तैयार हुआ। तब विनयदत्त ने कहा वह

दुखी होकर तुम्हारी शरण में आया है। तब श्रीवर्धित प्रेम से महाविभूति सहित सिहचन्द्र के सन्मुख गया, दोनों मिलकर प्रसन्नहुये। श्रीवर्धित ने मय मुनिराज को पूछा, हे भगवन! मैं मेरे अथवा मेरे परिवार के पूर्वभव सुनना चाहता हूँ। तब मुनिराज ने कहा—एक क्षोभपुरनगर मे एक भद्रनाम के आचार्य श्री चातुर्मास किया, वहॉ अमलनगर का राजा प्रतिदिन आचार्य महाराज के दर्शनकरने आता था, एकदिन एककोढी स्त्री के शरीर की महादुर्गन्ध आई, तब राजा उसदुर्गन्ध को सहन नहीं करसका और भागकर अपने घरगया। उस कोढीस्त्री ने मन्दिरो के दर्शनकर भद्र नाम के आचार्य के समीप श्राविका के व्रतो को धारण किया। और समाधि मरण कर स्वर्ग मे गई। वहॉ से मरकर तेरी स्त्री शीला हुई, और वह राजाअमल जो भागकर चलागया था, उसने अपने पुत्र को राज्य देकर, श्रावक के व्रतो को धारण किया, और आठ गॉव अपने पास रखे और स्वय समाधि पूर्वक मरणकर स्वर्ग में गया, वहॉ से चयकर तू श्रीवर्धित हुआ, अब तेरी माता के भव सुनो, एक विदेशी मानव भूख की वेदना से गॉव मे आकर भोजन मॉगने लगा, जब भोजन नहीं मिला, तब उसने क्रोध से कहा—कि मैं तुम्हारे गॉव मे आग लगादूगा, ऐसे कहकर निकला और भाग्य के वश उसी समय उस गाव मे आग लगी, तब गाव के लोगो ने, जाना कि उसी ने लगाई, तब क्रोधित होकर लोग दौड के गये उसे पकडकर लाये और अग्नि मे जलाया। वह मरकर नरक के दुखो को प्राप्त हुआ, वहॉ से निकल तेरी माता मित्रयशा हुई, और पोदनपुर मे एक गोवाणीज गृहस्थ उसके भूजापत्रा स्त्री, वह गोवाणीज मरकर सिहचन्द्र हुआ, और भुजपत्रा मरकर रतिवर्धना हुई सो पूर्व भव मे पशुओ पर बोझा ढोते थे, अब इस भव मे ये स्वय बोझा ढोते हैं। इस प्रकार सबके पूर्वभव कहकर मय महामुनि आकाश मार्ग से विहारकर चले गये। पोदनपुर का राजा श्रीवर्धित, सिहचन्द्र सहित नगर मे गया। गौतमस्वामी कहते है—हे श्रेणिक! ससार की गति विचित्र है, कोई निर्धन से धनवान होता है, कोई धनवान से निर्धन होता है, कोई राजा से रक और रक से राजा होता है। श्रीवर्धित, ब्राह्मण का पुत्र रक से राजा हो गया और सिंहचन्द्र राजा का पुत्र राज्य भ्रष्ट होकर श्रीवर्धित के पास रंक होकर आया। एक गुरु के मुख से कोई प्राणी धर्म उपदेश सुनते है, उनमे कोई समाधि मरणकर सुगति को प्राप्त होते है, और कोई मरण कर दुर्गति मे जन्म लेते है। कोई रत्नो के भरे जहाजो सहित समुद्र को पारकर सुख से अपने घर पहुँचते है, कोई समुद्र मे डूब जाते है, कोई को चोर लूट लेते है। ऐसे जगत के स्वरूप को

जानकर विवेकी जीव, दया, दान, विनय, तप, वैराग्य, इन्द्रियो का निरोध, शास्त्र अध्ययन, आत्म ध्यान और आत्म कल्याण करते हैं, ऐसे मय मुनिराज के वचन सुनकर राजा श्रीवर्धित के साथ बहुतलोग शान्तिभाव से जिनधर्म की आराधना करने लगे। यह मयमहामुनि अवधिज्ञानी, महागुणवान, शान्तस्वभावी, समाधि मरणकर ईशान स्वर्ग मे महान देव हुये। यह मयमुनिराज का चारित्र जो मन लगाकर पढ़ता है, पढाता है, सुनता है, सुनाता है, उनको शत्रुओ से भय नहीं होता, शत्रु भी मित्र हो जाते है, सर्प, बिच्छू आदि विषैले जानवर काटते नहीं और सिह व्याघ्रादि मारेगे खायेगे नहीं। ऐसे ऋद्धिधारी मयमुनि राज का वर्णन करने से शरीर के सभी रोग नष्ट होते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे मयमुनिराज का वर्णन करनेवाला अस्सीवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-81

कौशल्या का राम-लक्ष्मण के बिना शोकाकुल होना, और नारद का आकर समझाना

अथानंतर लक्ष्मण के प्रिय भाई श्रीरामचन्द्रजी, स्वर्ग समान राज लक्ष्मी को, मध्य लोक मे ही भोग रहे थे। और इनकी माता कौशल्या पति और पुत्र के वियोग से, अग्नि की ज्वाला समान शोक को प्राप्त हुई। अपनी सखियो के साथ महल के सातवे खड मे बैठी, अति उदास ऑसुओ के भरे नेत्रो से, जैसे-गाय को बच्चे का वियोग होता और वह दुखी होती, उसी तरह कौशल्यामाता पुत्र के स्नेह मे तीव्र दुखरूपी शोक के सागर मे लीन दशोदिशाओ की और देखरही थी। राजभवन के शिखरपर बैठा कौवा, उसे कहती है—हे वायस! मेरा पुत्र राम आये तो मै तुझे खीर का भोजन दूगी, ऐसा कहकर महादुखपूर्वक रुदन करने लगी—हे बालक! तुम कहॉ गये, मैने तुम्हारा सुख से निरन्तर लालन पालन किया था, तुम्हारा शरीर कोमल, तुम्हे विदेश भ्रमण करने की प्रीति कहॉ से हुई। तुम्हारे रेशम समान कोमल चरण, उनसे कठोर मार्ग, ककर पत्थरो पर कैसे गमन करोगे। सर्दी गरमी बारिश के दुखो को कैसे सहन करते होगे, जगल जंगल में

भ्रमण करते हुये कहॉ भोजन पानी मिलता होगा, रात्रि में विश्राम के समय कहॉ तुम्हे सेज मिलती होगी, तुम दोनो मेरे राजकुमार, राजपुत्री सीता राजभवन के सुखो को भोगने वाले, कहॉ वन के दुखो को भोगरहे हो। मै महलो मे, सुख से खाना पीना सोना करती हूँ, फिर भी एकक्षण मुझे तुम्हारे बिना शाति नहीं, मेरे सुकुमार पुत्रो तुम कहॉ-कहॉ भटक रहे होगे, जगल मे सर्दी गर्मी वर्षाऋतु के कष्टो को कैसे सहन करते होंगे? हे सीता! तू राजपुत्री जगल के क्रुर पशुओ को देख, भयभीत होती होगी। हाय राम! महागहनवन मे कौनसे वृक्षके नीचे, विश्राम करते होगे। मै मदभागिनी अत्यन्त दुखी, मुझे छोडकर, तू भाई लक्ष्मण के साथ किस दिशा मे गया होगा? इस प्रकार माता विलाप कर रही थी। उसीसमय नारदऋषि आकाशमार्ग से आये। कैसेहै नारद? पृथ्वीपर प्रसिद्ध, सदा ढाईद्वीप मे विहार करते, सिरपर जटा, शुक्लवस्त्र पहने उनको अपनेपास आते देख, कौशल्या ने उठकर सन्मुख जा, नारद को आदर से सिहासन पर बैठाकर सम्मान किया। तब नारद कौशल्या को, ऑखो मे ऑसूसहित शोकवान देख पूछनेलगे—हे राज माता! तुम इतनी दुखी क्यो हो, तुम्हारे दुख का क्या कारण है, सुकौशल महाराज की राजपुत्री लोक मे प्रसिद्ध, राजादशरथ की महारानी प्रशसा योग्य, श्रीरामचन्द्र मनुष्यों मे रत्न उनकी तुम माता, महागुणवान तुमको किसने दुखी किया, जो तुम्हारी आज्ञा नहीं मानते, उनको अभी ही राजा दशरथ दण्ड देगे। तब नारदको माताने कहा—हे देवऋषि! आप हमारे घर की कहानी नहीं जानते हो, इसीलिये ऐसा कह रहे हो। और आपका जैसा वात्सल्य इसघर से था, वह आप अब भूल गये, अब आपने यहॉ आना ही छोड दिया, आप हमारे से क्यो नाराज हुये हो, आप हमारी दुख सुख की बात भी नहीं पूछते हो। हे भ्रमणप्रिये! आप यहॉ बहुत दिनो के बाद आये। तब नारदने कहा हे माता! घातकीखंड द्वीपमे पूर्वविदेहक्षेत्र वहॉ सुरेन्द्ररमण नाम का नगर वहॉ तीर्थकरभगवान का जन्मकल्याणक हुआ, इन्द्रादि देव आये और भगवान को सुमेरू पर्वतपर ले जाकर पापो का नाशक जन्माभिषेक किया, देवाधिदेव कर्मो के नाशक उनका मैने अभिषेक देखा। देवो ने आनन्द से नृत्य किया, अभिषेक से जैनधर्म की प्रभावना होती है, जिनेन्द्रप्रभु के दर्शन मे मेरा विशेष अनुराग है, इसलिये मैने तेईसवर्ष सुख से धातकीखड मे व्यतीत किये। आप मेरी माता समान हो, आपको यादकर, मै इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे आपके पास आया हूँ, अब कुछ दिन, इसी भरतक्षेत्र मे आपके पास रहूँगा। अब मुझे आप अपनी सभी बात कहो।

भामडल का यहॉ आना और सभी विद्याधरो का आना, भामंडल को विद्याधरों का राजा बनना। राजा दशरथ का अनेक राजाओं सहित वैराग्य। रामचन्द्रजी का सीता सहित लक्ष्मण के साथ विदेश गमन। पुन सीता का हरण, सुग्रीव आदि का राम से मिलन, रावण से युद्ध, रावण की शक्ति लक्ष्मण को लगना, द्रोणमेघ की राजपुत्री को लंका में भेजना, इतनी बात हमको मालुम है, इसके आगे क्या हुआ, हमे कुछ मालूम नहीं, ऐसा कहकर महादुखी होकर रोनेलगी, ऐसा विलाप किया कि—हाय-हाय मेरे पुत्र तुम कहॉगये। शीघ्र ही आकर मेरे से बात करो। मै शोक के सागर मे गिरी हूँ मुझे निकालो, मैं पुण्य हीन तुम्हारे मुख को देखे बिना दुखरूपी अग्नि से जल रही हूँ। मुझे शीतल करो दर्शन देओ और सीता राजपुत्री बालिका को पापी रावण हरकर ले गया, उसे जगल मे कहॉ डाली होगी, वह महा दुखी हो रही होगी, निर्दयी रावण ने लक्ष्मण को शक्ति लगाई, वह न जाने जीवित है कि नहीं, हाय दोनो दुर्लभ पुत्र हो। हे सीता! तू पतिव्रता क्यो दुखी हुई, यह वृतान्त कौशल्या के मुख से सुन, नारद अति दुखी हुये। वीणा को धरतीपर डाल दी और मूर्च्छित हुये, मूर्च्छा दूर होने के बाद कहा—हे माता तुम दुखमत करो, मै शीघ्र ही आपके पुत्रो की खबर क्षेमकुशल की लाता हूँ। मै सब बातो में समर्थ हूँ। यह प्रतिज्ञाकर नारद ने वीणा को लेकर आकाश मार्ग से गमनकिया। पवन समान वेग से अनेक देशो को देखते हुये, लका की ओर चले। लका के पास जाकर विचार किया कि राम लक्ष्मण की बात किसतरह से जानी जायेगी। राम लक्ष्मण की बात पूछूंगा, तो रावण के लोग विरोध करेगे। इसीलिये रावण की बात पूछना अच्छा है। रावण की बात पूछने से, राम लक्ष्मण की बात मालूम हो जायेगी। ऐसा विचारकर, नारद पद्मसरोवर पर गया, वहॉ अन्तपुर सहित अगद क्रीडाकरता था, उसके सेवकों से रावण की कुशल पूछी। वे किकर रावण का नाम सुनते ही क्रोधित हुये। और कहा कि यह दुष्ट तापस, रावण का है। नारद को अगद के पास ले जाकर कहा कि यह रावण की कुशल पूछता है। तब नारद ने कहा, मेरे रावण से कोई प्रयोजन नहीं। तब उन्होने कहा, तुम्हारा रावण से कोई प्रयोजन नहीं, तो फिर उसकी कुशल क्यों पूछते हो। तब अंगद ने हसकर कहा, इस तापस को पद्मनाभी के पास ले जाओ। तब किंकर नारद को खींचकर ले गये। नारद ने सोचा कि कौन पद्मनाभी है, अगर कौशल्य का पुत्र हो, तो मेरे साथ ऐसा क्यों करे। ये मुझे कहॉ ले जा रहे है, मैं सकट मे पडा हूँ। हे जिनशासन के यक्षदेव मेरी रक्षाकरो। अंगद के सेवक विभीषण के महल में

श्रीराम के पास नारद को ले गये। श्रीराम ने दूर से ही नारदऋषि को देख, सिंहासन से उठकर विनय पूर्वक आदर सम्मान किया, और सभी सेवकों को कहा कि तुम सब इनसे दूर हटो। नारद श्रीराम लक्ष्मण को देख महाहर्षित हुये। आशीर्वाद देकर इनके पास बैठे। तब राम बोले। अहो! क्षुल्लकऋषि कहाँ से आये हो? बहुत दिनो के बाद आपके दर्शन हुये, आप कुशलमंगल हैं, तब नारद ने कहा—आपकी मातायें कष्ट से शोकसागर में दुखरूपी लहरो मे डूब रही है। यह बात कहने के लिये, अयोध्या से तुम्हारे पास शीघ्र ही आया हूँ। कौशल्या माता महासती, जिनमती, निरन्तर आँसू बहा रही है, तुम्हारे बिना महादुखी हैं, उसके दुखको देखकर पाषाण भी पिघल जाता है। तुम्हारे जैसे पुत्र, माता के आज्ञाकारी होते हुये, माता ऐसी कष्ट रूप रहे, यह बहुत बडी आश्चर्य की बात है। वह महागुणवान, शाम सुबह ही मर जायेगी, तुम उनको नहीं देखोगे। तुम्हारे वियोग से शरीर सूख गया है, इसलिये कृपाकर उठो और शीघ्र ही मेरे साथ चलो। माता के दर्शनकरो, संसार में माता के बिना अन्य कोई पदार्थ नहीं, तुम्हारे दोनो की माताओं को दुखी देखकर कैकई सुप्रभा भी महादुखी है। कौशल्या सुमित्रा दोनो मरण समान हो रही है। खाना पीना सोना सब छूट गया, रातदिन रुदन करती है, उनको शाति तुम्हारे दर्शनो से होगी। सिर और हृदय हाथो से पीटती है, दोनो ही मातायें तुम्हारे वियोग से मर रही है। आपके दर्शनरूपी अमृत की धारा से उनका दुख दूर करो। नारद ने ऐसा कहा, तब दोनो भाई माता के दुख से महादुखी हुये, शस्त्रो को डालकर महारुदन करने लगे, तब सभी विद्याधरो ने सतोष दिया। और राम लक्ष्मण ने नारद से कहा, अहो ऋषिराज! आपने हमारा बडा उपकार किया, हम दुराचारी हमारी माताओ को हम भूल गये थे, सो आपने आकर याद कराया। आप समान और कोई हमारा मित्र नहीं है। वो ही मनुष्य महा पुण्यवान है, जो माता पिता की विनय पूर्वक सेवा करते, जो माता पिता के उपकार को भूल जाता, वह महा कृतध्न है। इस प्रकार माता के स्नेह से दुखी होकर नारद की प्रशंसा करने लगे।

अथानतर राम लक्ष्मण ने उसी समय विभीषण को बुलाया। और भामडल सुग्रीवादि सभी पास मे ही बैठे थे। दोनो भाई विभीषण से कहने लगे—हे राजन! इन्द्र के भवन समान तुम्हारा भवन, यहाँ हम बहुत दिनो तक रहे, समय बीतते हुये मालुम नहीं पडा, अब हमको माता के दर्शनो की अभिलाषा है, हमारा मन बहुत दुखी है, हम माता के दर्शनकर शांति को प्राप्त होगे। और आयोध्या नगरी को

देखने का हमारा मन है। वह अयोध्या हमारी दूसरी माता है। तब विभीषण ने कहा, हे स्वामिन्! आप जो आज्ञा करोगे वही प्रमाण है। अभी ही तुरन्त अयोध्या को दूत भेजते हैं, वह आपकी शुभ बातें माताओ से कहेंगे, आपकी माताओ को सुख होगा। और आप कृपाकर सोलह दिन ओर यहाँ विराजमान रहो। हे शरणागत! प्रतिपालक! मेरेपर कृपाकरो। ऐसा कहकर अपना मस्तक राम लक्ष्मण के चरणों मे झुकाया। तब राम लक्ष्मण ने प्रमाण किया।

राम लक्ष्मण का माताके दर्शनकरने के लिये उत्कठित होना और अयोध्या को जाने का विचार करना

अथानतर गुणी गुणी विद्याधरों को अयोध्या मे भेजे, वहाँ कौशल्या और सुमित्रा दोनों मातायें राजभवन की छतपर चढकर दक्षिणदिशा की ओर देख रही थी, दूर से ही विद्याधरों को देख, कौशल्या सुमित्रा से कहती है। हे सुमित्रा! देखो यह विद्याधर पवनसमान शीघ्र आते हुये दिखाई दे रहे हैं। वह अवश्य ही कुछ शुभ समाचार कहेंगे। हो सकता है इनको दोनो भाईयो ने भेजा हो, तब सुमित्रा ने कहा, ऐसा ही हो सकता है। यह चर्चा दोनों माताओं मे हो रही थी, उसीसमय सभी विद्याधर, पुष्पो की वर्षा करते हुये, आकाश से उतरकर राजा भरत के समीप आये, राजा भरतने प्रसन्न होकर विद्याधरों का बहुत सम्मान किया। सभी विद्याधरों ने राजा भरतको नमस्कार कर, योग्य आसन पर बैठे, और सभी वृत्तान्त कहने लगे। हे प्रभो! राम लक्ष्मण ने रावण को मारा, और विभीषण को लका का राज्य दिया। श्रीराम को बलभद्र पद एव लक्ष्मण को नारायण पद प्राप्त हुआ, लक्ष्मण के हाथ मे चक्ररत्न आया, उन सहित दोनों भाईयो को तीनखड का राज्य प्राप्त हुआ, रावण के पुत्र इन्द्रजीत, मेघनाथ, भाई कुंभकर्ण जो बदी गृह मे थे, उनको राम ने छोडा। उन्होंने दीक्षा लेकर निर्वाणपद को प्राप्त किया। देशभूषण, कुलभूषण मुनिराज के उपसर्ग श्रीराम लक्ष्मण ने दूर किये, तब से गरुडेन्द्र प्रसन्न थे, जब रावण से युद्ध हुआ उसी समय गरुडेन्द्र ने सिहविमान और गरुडविमान दिया। इस प्रकार राम लक्ष्मण का प्रभाव और विभूति सुन राजा भरत अतिप्रसन्न हुये, और उनको लेकर दोनो माताओं के पास गये। राम लक्ष्मण की विभूति का वर्णन विद्याधरों के द्वारा सुन दोनो माताये महा प्रसन्न हुई। उसीसमय अनेक विद्याधर आकाश, से हजारो वाहन विद्यामई स्वर्ण एवं रत्नों से भरे हुये लेकर। अयोध्या मे आकर, आकाश मे ठहरे। नगर मे नाना प्रकार के रत्नों की वर्षा करने लगे, रत्नों की ज्योति से दशो दिशाये प्रकाशित हुई।

अयोध्या में प्रत्येक गृहस्थ के घरो मे पर्वतसमान रत्न स्वर्ण के ढेर हुये, अयोध्या के लोग देवों समान लक्ष्मीवान हुये। नगर में यह घोषणा की-कि जिसको जिस वस्तु की इच्छा हो वह ले जाओ। तब लोगो ने आकर कहा हमारे घर मे स्वर्ण रत्नादि के अटूट भडार भरे है, हमे किसी वस्तु की कमी नहीं, अयोध्या में दरिद्रता का नाश हुआ। राम लक्ष्मण का प्रभाव एवं आने के समाचार को सुनकर नगर के नर नारी अतिप्रसन्न होकर प्रशसा करने लगे। अनेक शिल्पी विद्याधरों ने आकर स्वर्ण रत्नमई मदिर, एवं राजभवनो का निर्माण किया। भगवान की सुन्दर सुन्दर अमूल्य रत्नों की प्रतिमाये विराजमान की, मन्दिर पर तोरण ध्वजाये कलश चढाये, अयोध्या के प्रत्येक घरों मे ध्वजाये फहराई, लंका की शोभा को जीतने वाली अयोध्या की शोभा करवाई, मन्दिर के चारोतरफ वनरूपी उद्यान में अनेक सुगन्धित वृक्ष फल फूलो सहित सुशोभित, जैसे नन्दनवन ही है। अयोध्या नगरी बारहयोजनलम्बी, नवयोजनचौडी, सौलह दिन मे विद्याधरो के चतुर शिल्पियो ने ऐसी बनाई सजाई, उसका वर्णन सौ वर्षो मे भी नहीं किया जा सकता है। वहॉ की बावडियॉ रत्नो की, एव सीढियॉ सोने की, और सरोवरो के किनारे रत्नो के उसमे कमलखिल रहे है। उनके निकट भगवान के मन्दिर एव वृक्षो की सुन्दरता स्वर्गो के समान बनाई। तब बलभद्र नारायण ने लका से अयोध्या की तरफ विहार किया। गौतमस्वामी ने कहा—हे श्रेणिक! जिस दिन से नारद के मुख से राम लक्ष्मण ने माताओ की बात सुनी उसदिन से ओर सब भूल गये, केवल दोनों भाई माताओ का ही ध्यान करने लगे, पूर्व पुण्य के उदय से, ऐसे महागुणवान पुत्र होते हैं, पुण्य के प्रभाव से सभी वस्तुओ की सिद्धि होती है। पुण्य से ही पुत्र पुत्रियॉ माता पिता की सेवा करते है, एव पुण्य से ही पति पत्नि का अखड प्रेम होता है। पुण्य से ही नगर गाव प्रजा के लोग अपनी आज्ञा का पालन करते है। पुण्य से ही शरीर निरोग सुन्दर प्राप्त होता है, पुण्य से ही स्वर्ग के देव किकर समान आज्ञाकारी होते है। पुण्य कार्यकरने से शोकरूपी सूर्य का आताप दूरहोता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिकामे अयोध्यानगरी का वर्णन करनेवाला इक्यासीवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-82

राम लक्ष्मण का अयोध्या में आगमन

अथानंतर सूर्य का प्रकाश होते ही बलभद्र और नारायण ने, पुष्पकविमान में बैठकर अयोध्या की तरफ विहार किया। अनेक वाहनों पर विद्याधरों के अधिपति बैठकर, राम लक्ष्मण की सेवा में तत्पर, परिवार सहित साथ चले। छत्र चमर और ध्वजाओं की लहरों ने सूर्य की प्रभा को रोकी है। ऐसे आकाश में विहार करते हुये दूर से पृथ्वी को देख प्रसन्न होते हुये चले जा रहे हैं। पृथ्वी गिरी वन उपवन नगरादि की सुन्दरता देख लवण समुद्र को पार कर विद्याधर हर्ष के भरे गमन करते हुये आगे आये। धर्म के समीप सीता महासती अनेक गुणों से पूर्ण मानों साक्षात लक्ष्मी एव देवांगना ही है। सुमेरूपर्वत को देखकर सीता राम को पूछती है, कि हे नाथ! यह जम्बूद्वीप के मध्य मे अत्यन्त मनोज्ञ स्वर्ण समान वह क्या दिखाई दे रहा है। तब राम कहने लगे। हे देवी! हे प्यारी! यह सुमेरूपर्वत है, यहाँ पर देवाधिदेव मुनिसुव्रतनाथ भगवान का जन्माभिषेक इन्द्रादि देवों ने किया था। यह सुमेरूपर्वत रत्नों से निर्मित अकृत्रिम ऊँचे शिखरों वाला जगत मे प्रसिद्ध है। पुन राम आगे आके कहने लगे। यह दण्डकवन है, यहाँ से लकापति ने तुम्हारा हरण किया और अपने दोनो का वियोग कराया। इस वन में चारण मुनिराजो को हमने आहार कराया था। और इसके बीच मे यह सुन्दर नदी है हे प्रिये! यह वंशस्थलपर्वत यहाँ देशभूषण, कुलभूषण मुनिराजो का उपसर्ग दूर किया, उसी समय उन मुनिराजों को केवलज्ञान हुआ था। हे सौभाग्यवती! यह बालिखिल्य का नगर जहाँ लक्ष्मण ने कल्याणमाला से विवाह किया था, और इस दशांगनगर में रूपवती का पिता वज्रकर्ण परम श्रावक राज्य करता है। पुनः जानकी पृथ्वीपति को पूछने लगी कि हे देव! यह नगरी कौनसी है जहाँ विमान समान घर महल भवन इन्द्रपुरी समान सुन्दर दिखते हैं? अभीतक यहनगरी मैंने कभी नहीं देखी, ऐसे जानकी के वचन सुन, जानकी के नाथ सामने देखकर कहते हैं हे प्रिये! यह अयोध्यापुरी विद्याधरों के चतुर शिल्पीयों ने बनाई है। लंकापुरी की ज्योति एवं शोभा को जीतने वाली। राम आगे आये तब सूर्य के विमान समान रामका विमान देख, भरत हाथीपर चढ आनन्द सहित इन्द्र समान

विभूति से युक्त राम के सन्मुख आये, सभी दिशाओं से विमान आते हुये दिखाई दिये, भरत को आते देख राम लक्ष्मण ने पुष्पकविमान को पृथ्वीपर उतारा, भरत हाथी से उतर कर पास आये, स्नेह से भरे राम लक्ष्मण दोनों भाईयों को नमस्कार कर चरणों मे भेंट रखी, और आरती उतारी। दोनों भाई विमान से उतर भरतको हृदय से लगाकर मिले परस्पर कुशल मंगल की शुभ कामनायें पूछी। और भाई भरत को पुष्पकविमान में बैठा लिया, और अयोध्या में प्रवेश किया। अयोध्या को राम के प्रवेश के लिये महा सुन्दर सजाई गई थी, कई प्रकार के विमान, रथ, अनेक हाथी, घोडे आदि सवारी के कारण मार्ग में जगह नहीं। अनेकों प्रकार के बाजे, शंख, झांझ, भेरी, ढोलादि बाजों का कहाँ तक वर्णन करे, महा मधुर बाजों की ध्वनि, हाथियो की गर्जना, सेनाओं के शब्द मायामयी सिंहादि की गर्जना, वीणा बांसुरी की ध्वनिओं से दिशायें गुंजित हो गईं। बदीजन वीरद कहते हैं, नृत्यकारिणीये नृत्य करती हैं, ऐसी महाविभूति सहित दोनों भाई महामनोहर सुन्दर, रूपवान, गुणवान, विनरवान, बलभद्र-नारायण ने अयोध्या में प्रवेश किया। अयोध्यानगरी, स्वर्गसमान, राम-लक्ष्मण इन्द्र प्रतीन्द्र समान सभी विद्याधर देवोंसमान, उनकी महिमा का कहाँ तक वर्णन करे। श्रीरामचन्द्रजी को देख प्रजा के लोग आनन्द सहित प्रसन्न होकर अर्घ्य चढाते, आरती उतारते, जगह-जगह, कदम-कदम पर जगत के लोगो से पूज्य दोनोंवीर महाधीर उनके लिये सभी लोग शुभ कामनायें करने लगें, यह दोनोभाई सबको आशीष देते रहे। कोई कहते हैं—हे देव! आप जयवंत हो, वृद्धि को प्राप्त हो, चिरंजीव रहो, जुग जुग जियों, महाऋद्धियों के सुख भोगो, इसप्रकार नगरवासी लोगों ने शुभकामनाये की। अपने अपने महलों के ऊपर चढ़कर अनेक प्रकार के पुष्पो से वर्षा करने लगे, मोतियों के अक्षतों का क्षेपण किया। पूर्णिमा के चन्द्र समान राम, नीलमणि समान लक्ष्मण, उनको देखने के लिये नगर के नर नारी अनुरागी हुए, सभीकाम को छोड़ झरोखों पर, खिडकियों में, छतों पर, बैठकर स्त्रीयॉ देख रही हैं। गली गली, मोहल्ले मोहल्ले में मार्ग मार्ग पर अनेक लोगों का सेबाल हो रहा है। भीड के कारण किसी के मोतियों के हार टूट गये, वे ऐसे लगे जैसे मोतियों की वर्षा हो रही है। कोई स्त्रीयॉ कह रही है, श्रीराम के पास राजाजनक की पुत्री सीता बैठी हैं, उसकी माता रानी विदेहा हैं, श्रीराम ने साहसगति विद्याधर को मारा, सुग्रीव का रूप बनाकर घर में आया था, विद्याधरों का दैत्य राजा वृत्रका का

नाती कहलाता था। यह लक्ष्मण रामका छोटा भाई इन्द्रसमान पराक्रम का धारी, उसने लकेश्वर को चक्र से मारा, और यह सुग्रीव इसने राम से मित्रता की, यह भामडल सीता का भाई, जन्म से ही इन्हें देव हरकर ले गये थे, पुनः दया कर छोडा राजा चन्द्रगति ने पालन किया, देवों ने कान में कुंडल पहनाये। उस कुंडलों की ज्योति से उसका मुख चन्द्रसमान दिखा, इसीलिये उसका नाम भामंडल रखा, यह राजा चन्द्रोदय का पुत्र विराधित, यह पवन का पुत्र हनुमान कपिध्वज, इस प्रकार आश्चर्य से युक्त नगर के सभी लोग चर्चा करते रहे।

अथानंतर राम लक्ष्मण राजमहल मे पधारे, महल की छतों पर बैठी हुई दोनों माताये पुत्रों के स्नेह में अनुरागी उनके स्तनों से दूध झरने लगा, महागुणवान कौशल्या, सुमित्रा, कैकई, सुप्रभा, चारों ही मातायें पुत्रों के पास आई, राम लक्ष्मण पुष्पकविमान से उतरकर माताओ से मिले। माताओं को देख परम हर्ष हुआ। दोनो भाईयों ने लोकपाल समान हाथजोड विनयपूर्वक अपनी रानियो सहित माताओ को प्रणाम किया। उन चारों ही माताओ ने अनेक प्रकार की आशीषें दी, उनकी आशीष ही महान कल्याण करने वाली थी, चारों ही मातायें राम लक्ष्मण को हृदय से लगाकर परम आनन्द को प्राप्त हुई, पुत्र मिलन का उनका सुख वे ही जाने, कहने मे ही नहीं आता। बार बार हृदय से लगाकर सिरपर हाथफेरती रही। आनन्द के ऑसुओं से भरे नेत्रों से परस्पर माता पुत्र को कशुल क्षेम एवं सुख दुख की बाते पूछ कर संतुष्टि हुई, माताये जो इच्छाये करती थी, सो हे श्रेणिक! इच्छाओं से अधिक मनोरथ पूर्ण हुये। वह माताये योद्धाओं को जन्म देने वाली साधुओं की भक्त, जैनधर्म की अनुरागिनी। अपने राजपुत्रो की हजारोरानियों को देख चारों ही मातायें परम हर्षित हुई। अपने योद्धा पुत्रो के प्रभाव से और पूर्वपुण्य के उदय से अतिमहिमा से युक्त जगत मे चारों मातायें पूज्य हुई। राम लक्ष्मण को समुद्र पर्यंत शत्रुओं से रहित पृथ्वीपर एकछत्र तीनखंड का राज्यहुआ। सभी लोग आज्ञाकारी हुये। राम लक्ष्मण का अयोध्या में प्रवेश और माताओं से तथा भाईयों से मिलनरूपी यह अध्याय जो पढता है, पढाता है, सुनता है, सुनाता है, वह शुद्ध बुद्धि का ज्ञाता पुरुष, उसको मन वाच्छित संपदा की प्राप्ति होती है। पुर्व पुण्य के उदय से परिवार का मिलन सुख पूर्वक आनन्द दायक होता है। बुद्धिमान जीव एकही नियम का दृढतापूर्वक भावो की शुद्धि से पालन करता है। वह महाऋद्धियों को प्राप्त होता है। पृथ्वीपर

सूर्यसमान ज्योति का धारी होता है। इसीलिये अव्रत को छोडकर नियमादि का पालन करना। मानव जीवन में क्षणमात्र भी नियम के बिना नहीं रहना। अपने जीवन में मानवको छोटा मोटा नियम भी अवश्य कल्याणकारी होता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे अयोध्यानगर मे रामलक्ष्मण का आगमनवर्णन करनेवाला ब्यासीवाँपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-83

राम लक्ष्मण की राज्य विभूति का वर्णन

अथानंतर राजाश्रेणिक नमस्कार कर गौतमगणधर से पूछते हैं। हे देव! राम लक्ष्मण की लक्ष्मी का विस्तार सुनने की मेरी अभिलाषा है। गौतमस्वामी ने कहा, हे श्रेणिक! राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न इनका वर्णन कौन कर सकता है। फिर भी मैं तुम्हें संक्षेप से कहता हूँ। राम-लक्ष्मण के वैभव का वर्णन–हाथी बयालीसलाख, इतने ही रथ, नौकरोड घोडे, ब्यालीस करोड पयादे, और तीनखंड के देव विद्याधर सेवक, रामके चाररत्न-हल मूसल, रत्नमाला और गदा। और लक्ष्मण के सातरत्न-शंख, चक्र, गदा, खड्ग, दण्ड, नागशय्या, कौस्तुभमणि। राम लक्ष्मण दोनों ही धीर वीर धनुषधारी उनके महल इन्द्र के भवन समान लक्ष्मी का निवास, ऊँचे दरवाजे, चतुश्शालकोट महापर्वत के समान ऊँचा, वैजयन्तनाम की सभा, प्रभासकूट नाम का अत्यन्त ऊँचा दशोदिशाओं को देखने वाला महल। वर्द्धमान नाम की नृत्यशाला, महाअद्‌भुत शीतकाल का शयनकक्ष, गर्मी के मध्यान में बैठने का धारामंडप गृह। रानियों के महल रत्नोसे निर्मित, महा सुन्दर दोनों भाईयों के सोने की स्वर्णशय्या उनके पद्मरागमणि से युक्त सिंह वाले आकार के पाये। अमौदकाड नाम की बिजली समान चमक उसकी, वर्षाऋतु का शयन कक्ष, वहाँ महाश्रेष्ठ स्वर्ण का सिहासन, चन्द्रमा समान चमर, छत्र। महासुन्दर विषमोचक नाम की खडाऊं, के प्रभाव से सुख पूर्वक आकाश में गमन करते हैं। अमूल्यवस्त्र, महादिव्यआभूषण, अभेद्य कवच, मनोहरमणियों के कुंडल, अमोघगदा, खड्ग, कनक, अनेकबाण अनेकशस्त्र, महासुन्दर महारण में जीत करानेवाले पचासलाख हल, एककरोड से अधिक गाय, अक्षयभंडार और अयोध्यादि अनेक नगर उनमें

न्याय की प्रवृति, प्रजा सभी सुखी संपदा से पूर्ण मनोहर वन उपवन, फल फूलों से सुन्दर, रत्न स्वर्ण से निर्मित, सुन्दर तालाब वापिकायें क्रीडा करने के लिये। नगर गॉव के लोग सभी महासुखी, ऊँचे ऊँचे, बडे बडे महल, किसानो को भी कोई दुख नहीं, गाय भैसादि पशुओं को भी सभी तरह का सुख, लोकपाल जैसी सेना, इन्द्र समान वैभव के धनी, महा तेजस्वी, अनेकों राजा सेवक, राम के रानियॉ आठ हजार, लक्ष्मण की रानियाँ देवागना समान सोलह हजार। उनके सभी सामग्री उपकरण मन वाच्छित सुख को देने वाली हैं। श्रीराम ने भगवान के हजारो मन्दिर, चैत्यालय बनवाये, जैसे हरिषेण चक्रवर्ती ने बनवाये थे। ऐसे देश, गाव, नगर, वन, गृह, गली, सभी जगहपर मन्दिर बनवाये। सभी जगह लोग धर्मकथाकरते, अतिसुखी, सुकौशल देश के मध्य मे इन्द्रपुरी समान अयोध्या नगरी, वहॉ ऊँचे ऊँचे जिनमन्दिर उनका वर्णन करना अति कठिन है। क्रीडा करने के लिये ऊँचे ऊँचे पर्वत। समुद्र की वेदी समान ऊँचा अयोध्या का कोट। स्वर्ण रत्नो की ज्योति समान ऊँचे आकाश को छूने वाले प्रकाश मान शिखर। यह अयोध्या नगरी पवित्र मनुष्यो से भरी सदा मनोज्ञ वचनों से अगोचर थी। और राम लक्ष्मण ने उसे अति सुशोभित की। जैसे स्वर्ग ही है। राम लक्ष्मण स्वर्ग से आये थे, सो मानों स्वर्ग की सभी सपदा ही लेकर आये हों। पुण्य हीन जीवों को मुकान घर स्त्री धन धान्य खेती जमीन जायजाद, सोना चादी जेवर वस्त्र आभूषण वाहन पशु आदि संसार की सभी भोग सामग्री देकर सभी जीवों को राम लक्ष्मण ने स्वर्ग के देवों समान बनाया। जगह जगह, नगर नगर, गांव गाव, मोहल्ले मोहल्ले, घर घर, में प्रत्येक मानव के मुख से राम लक्ष्मण के यश का वर्णन ही होता हैं। परन्तु सीता के पूर्वपाप कर्मके उदयसे अज्ञानीलोग कोई कोई अपवाद करते हैं। देखो विद्याधरों का नाथ रावण, उसने सीता का हरण किया, राम पुन. लेकर आये। घर मे रखी, यह क्या योग्य है? राम महाज्ञानी, कुलवान, चक्री, महाशूरवीर, महापुरुष उनके घर में यही रीति, तो और सामान्य लोगो की क्या बात। इस प्रकार मूर्ख अज्ञानी लोग बाते करते हैं।

भरत राज्य करते हुये भी विरक्तमन रहना और दीक्षा के लिये तैयार होना

अथानंतर स्वर्ग को शर्मिन्दा करनेवाली अयोध्या, वहॉ राजा भरत इन्द्र समान फिर भी भोगों मे सुखनहीं मानते थे, अनेक रानियों के स्वामी एवं लक्ष्मी से भरपूर फिर भी राज्य लक्ष्मी से निरन्तर उदास, प्रतिसमय भोगों की निंदा ही करते हैं। राजा भरत का राजमहल, अनेक रत्न स्वर्ण मोतियों से निर्मित सभी

भोग सामग्री उपलब्ध, देवांगना समान रानियॉ, सेना, हाथी, घोडे, रथादि का वैभव और क्रीडा का स्थान, जिसे देख देव भी प्रसन्न होते थे, परन्तु भरत संसार से भयभीत उनको विषयों में रूची नहीं, भरत बार बार चिंतवन करते हैं, कि मैंने यह मनुष्य जन्म महाकष्ट से प्राप्त किया हैं, पानी के बुदबुदासमान क्षणभंगुर भोग, अति असार दोषो से भरे इनमे क्या सुख हैं यह जीवन स्वप्न समान, परिवार का सम्बन्ध पक्षी समान, जैसे वृक्षपर पक्षी रात्रि में आकर बैठते हैं, प्रातः काल ही दशों दिशाओं मे उड कर चले जाते हैं। ऐसा जानकर मोक्ष का कारण जो जिनधर्म हैं, उसको नहीं धारण करता है, तो वह बुढापे में शरीर जर जर होकर शोकरूपी अग्निसे जल जायेगा। इस यौवन अवस्था मे यह जीव अज्ञानी होकर विषयों में राग करते हैं, वह नरक निगोद में जन्म लेते हैं, ज्ञानी विवेकी जीव कभी भी राग नहीं करते हैं। यह मानव जीवन का शरीर अनेक रोगों का घर, पिता के वीर्य और माता के रज से उत्पन्न हुआ, इनमें क्या राग करना। जैसे ईधन से अग्नि कभी भी तृप्त नहीं होती, समुद्र जल से तृप्त नहीं होता, ऐसे इन्द्रिय के विषय, भोगों से तृप्ति नहीं होती। यह विषय अनादि काल से भोगते आ रहे हैं, और अनन्त काल तक इन विषयों का सेवन करते रहेगे, फिर भी कभी तृप्ति नहीं होगी। देवों मे उत्कृष्ट रूप से बाईससागर पर्यंत, इन विषयो को भोगा, तीनपल्यतक उत्कृष्टभोगभूमि में अनेक रूप बनाकर विषयों को भोगा, फिर भी तृप्ति नहीं हुई। यह भोग मूर्ख जीव आसक्ति पूर्वक भोगना चाहते है। यह अज्ञानी जीव काम मे आसक्त होकर, अच्छा बुरा नहीं जानता है, विषयरूपी अग्नि मे पतंगसमान गिरकर पापी महाभयकर दुखो को प्राप्त होता है। यह स्त्री के स्तन मांस का पिण्ड है, उनमें कहॉ राग करें? और स्त्रीयों का मुखरूपी बिल, दांतरूपी कीडे, ताबूलरूपी रस, लाल छूरी के घाव समान, उनसे स्त्रियो की कहॉ शोभा? स्त्रियो की चेष्टा वायुविकार समान उन्मादक, भोग रोगसमान, खेदरूप दुख की खान, गीतरूपी नाद रुदनसमान, स्त्रीयों का शरीर मल मूत्रकर पूर्ण चर्म से वेष्टित विष्टा के कुम्भसमानसंयोग, ये सभी नारियों के भोग भोगते हुये मूर्ख प्राणी सुख मानते हैं। देवों के भोग इच्छा मात्र से पूर्ण होते हैं, फिर भी तृप्त नहीं होते, तो मनुष्यो के भोग कहॉ से तृप्त होगें। जैसे पत्ते पर गिरी ओस की बूंद उससे क्या प्यास बुझेगी, जैसे इन्धन को बेचने वाला मस्तक पर बोझा लेकर दुखी होता है, ऐसे ही राजा राज्य के भार से दुखी होता है। विषयों में लीन रहने से पापी जीव नरक निगोद में जन्म लेते हैं। एक राजा सौदास उत्तम श्रेष्ठ भोजन से

संतुष्ट नहीं हुआ, और पापी अभक्ष भक्षण कर राज्यभ्रष्ट हुआ। जैसे गंगा के बहाव में मांस का लोभी कौआ, मरे हुये हाथी के मांस को खाता हुआ तृप्त नहीं होकर, समुद्र में डूबकर मरता है। ऐसे यह विषय अभिलाषी जीव भवरूपी समुद्र में गिर कर मरता है। मानव मेंढक के समान मोहरूपी कीचड में फसकर लोभरूपी सर्प के द्वारा खाया जाता है। पुनः नरक में गिरता है। ऐसे चिन्तवन करते हुये। राजा भरत कुछ दिन गृहस्थ जीवन में भी विषय भोगों को दुखरूप जान विरक्त हुये। जैसे सिंह समर्थवान होकर भी पिंजरे में बंद रहता है, तो उसको बार बार वन में भ्रमण करने की इच्छा होती है। ऐसे राजा भरत की प्रतिसमय महाव्रत धारण करने की इच्छा बनी रही। घर मे हमेशा उदास ही रहे। महाव्रतरूपी शस्त्रों से ससाररूपी भोगों का नाश होता है। एक दिन राजाभरत घर त्यागकर वन जाने को तैयार हुये, तब कैकई ने आकर राम से कहा, कि भरत वन जाने को तैयार हुये हैं। तब राम लक्ष्मण ने हाथ पकडकर भरत को रोककर महाप्रेम से कहा कि हे भाई! पिताजी को वैराग्य प्राप्त हुआ, तब तुम्हें पृथ्वी का राज्य दिया और सिहासन पर बैठाया, इसलिये तुम सभी रघुवशियों के स्वामी हो, प्रजा का पालन करो। यह सुदर्शनचक्र, देव, विद्याधर तुम्हारी आज्ञा मे तत्पर रहेंगे, इस पृथ्वी को नारी समान भोगों, मैं तेरे सिरपर छत्र लेकर खडा रहूँगा, और भाई शुत्रुघ्न चमर ढोरेगा, और लक्ष्मण तुम्हारा बुद्धि एव शक्ति शाली मंत्री होगा, अगर तुम हमारा कहना नहीं मानोगे तो मै पुन. विदेश चला जाऊँगा। मृगों के समान वन उपवन में रहूँगा। मैं तो राक्षसों का स्वामी रावण उसे जीत कर, तेरे दर्शन करने आया हूँ। तू निश्चल होकर राज्य कर। बाद में तुम्हारे साथ मैं भी मुनिव्रत धारण करूंगा, इस प्रकार राम ने भाई भरत को समझाया। तब भरत महानिस्पृह, विषयरूपी विष से विरक्त होकर कहने लगे, हे देव! मै राज्य संपदा को तुरन्त ही छोडना चाहता हूँ। शूर वीर पुरुष राज्य को छोडकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

हे नरेन्द्र! राज्य लक्ष्मी और भोग महा चंचल दुख के ही कारण है जीवों के शत्रु हैं। महा पुरुषों के द्वारा त्याज्य हैं। अज्ञानी मूर्ख जीव ही भोगों का सेवन करते हैं। हे भाई राम हलायुध! यह क्षणभंगुर भोग उनमें मेरी तृष्णा नहीं। स्वर्ग समानभोग आपके पुण्य से अपने घर में है, फिर भी मुझे रुचि नहीं, यह संसार सागर महा भयानक है, जहाँ मृत्युरूपी पातालकुंड महादुखदाई है, जन्म रूपी जिसमें कल्लोलें उठती हैं, राग द्वेष रूपी जलचर जीव है, रति अरति रूपी खारे जल से पूर्ण है, शुभ अशुभ रूपी चोर भ्रमण करते है इसलिये में मुनिव्रत रूपी

जहाज में बैठकर, ससार समुद्र से तिरना चाहता हूँ। हे राजेन्द्र! मैंने अनेक योनियों मे अनन्तकाल तक जन्म मरण किये, नरक निगोद के अनन्त कष्टों को सहन किया, अनेकों बार गर्भ के दुख सहन किये, इसप्रकार भरतकी बातको सुनकर बडे बडे राजा ऑखो से ऑसू बहाते हुये, महाआश्चर्य को प्राप्त होकर गद् गद् वाणी से कहते है। हे महाराज! पिताकी आज्ञाका पालनकर, कुछ दिन राज्य करो, तुम इस राज्य लक्ष्मी को चंचल जान विरक्त हुये हो, तो कुछ दिन पश्चात् मुनि दीक्षा लेना। अभी तुम्हारे बड़े भाई आये हैं, उनको सुख दो। तब भरत ने कहा–मैंने तो पिता की आज्ञाप्रमाण बहुत दिन राज्यसम्पदा भोगी, प्रजा के दुखों को दूरकिया, प्रजा का पुत्रवत् पालन किया, दान पूजादि गृहस्थ धर्म का पालन किया, साधुओ की सेवा की, अब तो पिताजी ने जो किया है, वह मैं करना चाहता हूँ। तुम सभी इसकी अनुमोदना क्यो नहीं करते हो। अच्छे कार्य मे क्यो रूकावट करते हो हे भाई श्रीराम! हे भाई लक्ष्मण! आपने महा भयकर युद्ध मे शत्रुओ को जीत बलभद्र नारायण की लक्ष्मी प्राप्त की है, वह आपकी लक्ष्मी अन्य मनुष्यों जैसी नहीं है, यह राज्यलक्ष्मी मुझे अच्छी नहीं लगती, जैसे गगादि नदियॉ समुद्र को तृप्त नहीं करती, इसी प्रकार यह राजलक्ष्मी मुझे तृप्त नहीं करती, मै तो अवश्य ही महाव्रतो को धारँण करूगा। ऐसा कहकर राम लक्ष्मण को बिना पूछे ही वैराग्य सहित वन में जाने को तैयार हुये। तब स्नेह से भाई लक्ष्मण ने भरत को हाथ पकडकर रोक लिया, उसीसमय माता कैकई रुदन करती हुई आई, राम की आज्ञा से दोनो भाईयों की रानियॉ आई और भरत को रोक लिया। उन रानियो के नाम सुनो। सीता, उर्वशी, भानुमति, विशल्या, रत्नवती, गुणवती, सुभद्रा, नलकूवरा, कल्याणमाला, मनोरमा, प्रियनन्दा, कलावती, सरस्वती, श्रीकाता, पद्मावती इत्यादि सब आई, महा रूपवती गुणवती जिनका वर्णन करना अति कठिन है। दिव्यवस्त्राभूषण पहने कुलवती, शीलवती, पुण्य की भूमि, समस्त कार्य मे निपुण, वे सभी भरत के चारों तरफ खडी ऐसी लग रही थी मानो कमलो का वन ही फूल रहा हो। राजा भरत का मन राज भोगों में फसाने के लिये अनेक उपायों को कहती रही। हे देवर! हमारा कहना मानों, कृपा करो आज सरोवर मे जलक्रीडा करने चलें। चिता छोडो, तुम्हारे भाई और माताओं को दुख नहीं हो ऐसा काम करो। हम आपकी भाभीयॉ है हमारी विनती मानिये। आप विवेकी विनयवान हो ऐसा कहकर भरत को सरोवर पर ले गईं। भरत का मन जलक्रीडा से विरक्त सभी भाभीयॉ सरोवर मे क्रीडा करने लगी, भरत विनय सहित सरोवर

के किनारे खडे रहे। सभी रानियॉ भरत के शरीर पर सुगंधित वस्तुओं का लेपन कर जल क्रीडा करने लगी, परन्तु भरत ने किसीपर भी जल नहीं डाला, एवं जल क्रीडा में भरत का मन नहीं लगा। जल से स्नानकर सरोवर के किनारे पर जिनमन्दिर में भगवान की पूजा करने लगे।

त्रैलोक्यमडल हाथी का उन्मत्त होना और भरत को देखकर जातिस्मरण होना

उसी समय त्रैलोक्यमडल हाथी, गजबंधन तोडकर भयानक शब्दो को करता हुआ अपने स्थान से बाहर निकला। मद झरने से गर्जना की आवाज सुनकर अयोध्या के लोग भयभीत होकर कापने लगे, दूसरे हाथियो के महावत् अपने अपने हाथियो को दूर लेकर भाग गये। त्रैलोक्यमडल हाथी पर्वत समान नगर का दरवाजा तोडकर जहॉ भरत पूजा करते थे, वहॉ आया, तब राम लक्ष्मण की सभी रानियॉ डरकर भरत के पास आई, हाथी भरत के समीप आया, तब सभी लोग हाहाकार करने लगे, और भरत की माता कैकई व्याकुल होकर पुत्र के स्नेह से रोने लगी। राम लक्ष्मण हाथी को बांधने में प्रवीण, सो हाथी को पकडने के लिये आये। हाथी महाप्रबल सामान्य लोग उसे देख भी नहीं सकते, महाभयकर शब्द करता हुआ, महा तेजवान, जिसे नागफास से भी रोका नहीं जा सकता। राजा भरत निर्भय होकर रानियों के आगे खडे हो गये। त्रैलोक्यमडल हाथी को भरत को देखकर जातिस्मरण हुआ, तब वह शातचित्त होकर अपनी सूड शिथिल कर महा विनय से खडा हो गया। भरत के सामने हाथी को खडा देख, भरत ने मधुर वाणी से कहा, अहो गजराज! तुमने किस कारण से क्रोध किया? भरत के वचन सुन, हाथी निश्चल, सौम्य, शात होकर भरत की ओर देखता हुआ खडा रहा, भरत महाशूरवीर, शरणागत प्रतिपालक हाथी के समाने ऐसे लगे, जैसे स्वर्ग मे देव। हाथी को पूर्वभव का ज्ञान हुआ, सो क्रोध रहित होकर शांत हुआ, हाथी मन में चिंतवन करने लगा, राजाभरत मेरापरम मित्र है, छठे स्वर्ग में हमदोनो एकसाथ रहते थे, यह तो पुण्य के प्रभाव से, देव गति से आकर उत्तमपुरुष हुआ और मैने पापकर्म के उदय से तिर्यंचगति में जन्मलिया। कार्य अकार्य के विवेक से रहित पशुगति में जन्म लिया, मैं कौनसे कर्मके योगसे हाथीहुआ। धिक्कार इसजन्म को, अब चिन्ता करने से क्या होगा? ऐसा कार्य करूँ जिससे आत्म कल्याण हो और ससार मे भ्रमण नहीं करना पडे। चिन्ता करने से क्या? अब ऐसा पुरुषार्थ करूँ, जो संसार के दुखो से छूट सकूँ। हाथी ने अपने पूर्व भवो को जानकर, पाप से रहित होकर, पुण्य उत्पन्न करने के लिये एकाग्र मन से

चिन्तवन करने लगा। यह कथा गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहा—हे राजन्! पूर्वभव में इस जीव ने अशुभ कर्म किये है, वह दुखों को भोगते हैं। इसलिये हे भव्य जीवों! अशुभ कर्म को छोडो तो दुर्गति मे जाने से बच जाओगे, जैसे सूर्य के प्रकाश में नेत्र वाला मानव मार्ग मे भटकता नहीं है। ऐसे ही जिनधर्म को धारण करने से विवेकी जीव कुगति में नहीं जाते, पहले अधर्म को छोडो धर्म को धारण करो, पुन शुभ अशुभ से रहित होकर शुद्ध आत्मधर्म से निर्वाणपद को प्राप्त करे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे त्रैलोक्यमडल हाथीको जातिस्मरण होनेका वर्णन करनेवाला तिरासिवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-84

त्रैलोक्यमंडल हाथीका आहार विहार छोड़कर निश्चल निश्चेष्ट होकर मौनगृहण करना

अथानंतर वह गजराज विनयवान, धर्मध्यान का चिन्तवन करते हुये, को राम लक्ष्मण ने देखा, और धीरे धीरे हाथी के पास आये, पर्वत समान ऊँचे हाथी को मिष्ट वचन बोलकर पकडा। पास के लोगो को आज्ञा दी की हाथी को सर्व आभूषण पहनाओ, हाथी शांत हो गया है, तब नगर के लोगो को भय मिटा। हाथी ऐसा प्रबल उसकी चाल को विद्याधरो के अधिपति भी नहीं रोक सकते, सम्पूर्ण नगरी में लोग हाथी की चर्चा करते हैं। यह त्रैलोक्यमंडल हाथी रावण का पट्ट हाथी है, इसके बल समान और कोई हाथी नहीं। राम लक्ष्मण ने इसे पकडा, प्रजा के लोगो को महापुण्य का उदय, राजा भरत, रानी सीता, विशल्या, हाथीपर चढ महाविभूति सहित नगर में आये, अमूल्य वस्त्र आभूषणों से सुन्दर सभी रानियॉ अनेक प्रकार के वाहनो पर बैठ भरत को लेकर नगर में आई, भाई शुत्रुघ्न ने घोडे पर बैठकर महा विभूति सहित भरत के हाथी के आगे बाजो की ध्वनी के साथ नगर में प्रवेश किया, जैसे देव स्वर्ग में आवे। भरत हाथी से उतरकर भोजनशाला में गये, साधुओं को आहार देकर परिवार सहित भोजन किया। और सभी भाभीयों को भोजन कराया। सभी लोग अपने अपने स्थान को

गये, हाथी शांत होकर भरत के सामने जाकर खडा हो गया, यह सबको महा आश्चर्य हुआ। गौतम गणधर कहते है, हे राजन! हाथी के सभी महावत राम लक्ष्मण के पास आकर प्रणाम कर कहने लगे। हे देव! आज गजराज को चौथा दिन है, कुछ खाना पीना नहीं करता, निंद्रा भी नहीं लेता, निश्चल होकर चारदिन से खडा ही है। जिस दिन से क्रोध किया था, और शांत हुआ उसी दिन से ध्यान में आरुढ होकर निश्चल खडा है। हम अनेक प्रकार से उसकी स्तुति प्रशंसा करते हैं, अनेक प्रिय वचन कहते हैं, फिर भी आहार पानी नहीं करता है, हमारे शब्द सुनने को तैयार नहीं है। अपनी सूंड को दातों में लेकर एकाग्र मन से खडा है। मानों चित्र का बना हाथी है। इसको देख लोगो को ऐसा भ्रम होता है, कि यह चित्र का बना हाथी है, या सच्चा हाथी है। हम मधुर शब्द बोलकर भोजन कराना चाहते हैं, फिर भी वह नहीं करता है। चिन्ता सहित खडा है। सम्पूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता हाथियो के वैद्य को भी दिखाया, फिर भी हाथी का रोग पकड में नहीं आया। गधर्व गीत गाते हैं, तो नहीं सुनता है। नृत्य कारणी नृत्य करती है तो भी नहीं देखता है। पहले नृत्य देखता था गीत सुनाता था, अनेक क्रियाये करता था, सो अब उसने सब छोड दी। मत्र विद्या औषधी आदि अनेक इलाज किये तो भी ठीक नहीं हुआ। आहार, विहार, जल, पान, निद्रादि सब छोड दिया। हम बहुत समझाते है, फिर भी नहीं मानता। जैसे नाराज मित्र को अनेक प्रकार से मनाओ, तो भी नहीं मानता है। न जाने इस हाथी के मन मे क्या है? कोई भी वस्तु से किसी तरह भी प्रसन्न नहीं होता है। किसी वस्तुपर लोभ नहीं। नाराज रूप क्रोध नहीं है, चित्र जैसा खडा है। यह त्रैलोक्यमंडल हाथी सम्पूर्ण सेना का शृंगार है, जो आपको करना हो वह करो, हमने हाथी का सब वृतान्त आपसे निवेदन किया, तब राम लक्ष्मण हाथी की बात सुनकर चिन्ता करने लगे, यह हाथी बधन को तुडाकर निकला और किस कारण से क्षमा को प्राप्त हुआ, आहार पानी क्यों नहीं करता है। दोनों भाई हाथी की चिन्ता करने लगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे त्रैलोक्यमडल हाथीका शातहोने के वर्णन करनेवाला चौरासिवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-85

देशभूषण कुलभूषण केवलीद्वारा भरत और त्रैलोक्यमंडल हाथी के पूर्वभव का वर्णन

अथानंतर गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं। हे नराधीश! उसी समय अनेक मुनिराजो सहित, देशभूषण कुलभूषण केवलीभगवान जिनका वंशस्थल पर्वत कुथलगिरी पर राम लक्ष्मण ने उपसर्ग दूर किया था, तब गरुडेन्द्र ने राम लक्ष्मण पर प्रसन्न होकर, अनेक दिव्यशस्त्र दिये, जिससे युद्ध में विजय प्राप्त की। वे केवलीभगवान सुरअसुर मनुष्य एव तिर्यंचो से पूज्य लोक में प्रसिद्ध अयोध्या के महेन्द्रोदय नाम के वन मे, महा संघसहित आकर, विराजमान हुये, तब राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न दर्शनो के लिये प्रात· काल जाने के लिये परिवार सहित तैयार हुये। त्रैलोक्यमंडल हाथीको जातिस्मरण हुआ है, वह भी आगे आगे चल रहा है। जहॉ वे दोनों केवलीभगवान कल्याण के पर्वतपर विराजमान है, वहॉ राम लक्ष्मण निर्मल परिणामो से माता कौशल्या, सुमित्रा, कैकई, सुप्रभादि चारो ही साधुभक्ति मे तत्पर जिनशासन की ज्ञाता, देवियो समान सैकडो राज बधुओं के साथ चले सुग्रीवादि सभी विद्याधर महाविभूति के साथ चले। केवलीभगवान की गधकुटी को दूर से ही देखकर रामादि चारो भाई चारो माताये राजरानियॉ राजा प्रजा सैनिक सभी परिवार के साथ, हाथी से उतरकर त्रैलोक्यमंडल हाथी सहित आगे आये, विनय पूर्वक दोनों हाथ जोड नमस्कार कर केवलीभगवान की पूजा की। रामादि योग्य भूमिपर विनय से बैठ कर, केवलीभगवान की दिव्यवाणी प्रसन्न होकर सुनने लगे। भगवान की वाणी वैराग्य का मूल कारण रागद्वेषादि को नाश कराने वाली है। क्योकि राग द्वेषादि सभी ससार के कारण हैं, और सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र मोक्ष के कारण है। अणुव्रत श्रावको का धर्म और महाव्रत मुनिराजों का धर्म, ये दोनो ही धर्म कल्याण का कारण है। यति धर्म साक्षात निर्वाण का कारण है, और श्रावक का धर्म परम्परा से मोक्ष का कारण है। गृहस्थ का धर्म अल्प आरम्भ अल्पपरिगृह रूप है, और साधु का धर्म निरारम्भ निष्परिग्रह अतिकठिन महाशूरवीर ही पालन करते है। यह लोक अनादिनिधन उसका आदिअन्त नहीं, उसमें यह प्राणी लोभ से मोहित होकर अनेक कुयोनियो में,

महादुख को प्राप्त करते हैं, संसार से तिराने वाले, ये दोनो धर्म ही है। धर्म ही जीवों का परममित्र है, जैनधर्म का मूल जीवदया है। उसकी महिमा कहने में नहीं आती, जीवदया के प्रभाव से प्राणी मन वांच्छित सुख भोगता है, धर्म ही पूज्य है, जो धर्म का साधन करते हैं, वही ज्ञाता सज्जनपुरुष है, दया धर्म जीवों को कल्याण कराने वाला हैं। जो प्राणी भगवान के कहे हुये धर्म में लगे रहते हैं, वह तीनलोक के ऊपर मोक्षस्थान को प्राप्त करते है, जैनधर्म महादुर्लभ है, धर्म का मुख्यफल मोक्ष ही है, और गौणफल इन्द्र, धरणेन्द्र, नागेन्द्र, पृथ्वीपर चक्रवर्ती, अर्धचक्री, बलदेव, राजा, महाराजा, शलाकापुरुष, महापुरुष इत्यादि अनेकफल हैं। इसप्रकार केवलीभगवान ने धर्म का निरुपण किया, तब विनय पूर्वक लक्ष्मण पूछने लगे, हे प्रभो! यह त्रैलोक्यमंडल हाथी बंधनों को तोडकर क्रोधित हुआ, पुनः तत्काल शातभाव को प्राप्त हुआ, वह क्या कारण है। तब देशभूषणकेवली कहनेलगे, पहले तो हाथी लोगों की भीड देखकर उन्मत्त हुआ, पुनः भरत को देखकर जातिस्मरण हुआ। पूर्वभवों को यादकर शातभाव को प्राप्त हुआ। तीसरे काल के अन्त में अयोध्यानगरी के नाभिराजा उनकी रानी मरुदेवी, उनके श्रीऋषभदेवभगवान का जन्म हुआ। पूर्वभव मे सोलह कारण भावनायें भाई, वे यहाँ तीर्थकर पदको प्राप्त हुये। इन्द्रादि देवों ने गर्भ जन्मादि पंच कल्याणक मनाये। भगवान पुरुषोत्तम तीनलोक मे पूज्य नमस्कार करने योग्य है, पृथ्वीरूपी पत्नि के पति हुये। बहुत दिन तक राज्य किया, इनके गुण केवली के बिना कोई जानने मे समर्थ नहीं है। इनका ऐश्वर्य देख इन्द्रादि भी चकित हो जाते हैं।

एक समय नीलाजना अप्सरा नृत्य करती हुई मर गई, उसको देख भगवान को वैराग्य हुआ। लोकान्तिक देवों ने आकर भगवान के वैराग्य की प्रशसा की, जगत गुरु भरतको राज्य देकर विरक्त हुये। इन्द्रादि सभी देवों ने तप कल्याणक मनाया, तिलक नाम के उद्यान में महाव्रतों को धारण किया, तब से यह स्थान प्रयाग कहलाया। भगवान ने एकहजारवर्ष तप किया, सर्वपरिग्रह के त्यागी, सुमेरुसमान अचल, महातप करनेलगे, उनके साथ चारहजार राजाओं ने दीक्षा ली। वह परिषह सहन नहीं कर सके, तब वे व्रतों को छोडकर, स्वेच्छा पूर्वक वन के फलादि का भोजन करनेलगे। उनके मध्य में मारीच, भगवान आदिनाथ का पोता, राजाभरत का पुत्र, उसने दंडी का भेष धारणकिया, उसके प्रसंग से सूयोदय, चन्द्रोदय राजासुप्रभ रानी प्रहलादनी के पुत्र, दोनो भाई मारीच के

कहने से चारित्र भ्रष्ट होकर कुमार्ग में लगे। मिथ्यात्व के आचरण से चारों गतियों में अनेकबार जन्म मरण किया, पुनः अनेकभवों के पश्चात् चन्द्रोदय का जीव नागपुर नगर में, राजाहरिपति उनकी रानीमनोलता के, कुलंकरनाम का पुत्र हुआ, पुनः राज प्राप्तकिया। और सूर्योदय का जीव भी अनेक भवों में भ्रमणकर, उसीनगरी में विश्वनामका ब्राह्मण, अग्निकुण्ड नामकी ब्राह्मणी, उसके श्रुतिरत नाम का पुत्रहुआ, वह श्रुतिरत पुरोहित पूर्वजन्म के स्नेह से राजा कुलंकर का प्रिय पात्र हुआ। एक दिन राजा कुलंकर तापसियों के पास जा रहा था, सो मार्ग में अभिनन्दन नाम के मुनिराज का दर्शन हुआ, मुनिराज अवधिज्ञानी, सभी जीवों का कल्याण करनेवाले उन्होंने राजा से कहा तेरा दादा (बाबा) सर्प हुआ, वह तापसियों के यहाँ लकडी के बीच मे बैठा है, वह तापसी लकडियों को काटेंगें इसीलिय तुम जाकर सर्प की रक्षा करो। तब वह वहाँ गया, मुनिराज ने जैसा कहा था, वैसा ही देखा, इसने सर्प की रक्षा की, और तापसियो को हिंसा करने वाले जान, उनसे उदास होकर, मुनिव्रतों को धारण करने के लिये तैयार हुआ, तब श्रुतिरत ब्राह्मण पापीने कहा–हे राजन् आपके कुल मे परम्परा से वैदिक धर्म चल रहा है, और तापसी ही आपके गुरु होते हैं। इसीलिये तू राजा हरिपति का पुत्र है, तो वैदिकधर्म का ही पालनकर, जिनधर्म को धारण नहीं करना। पुत्र को राज्य देकर वैद्योक्त तापस का भेष धारणकर, मै भी तेरे साथ तापसी बनूँगा। इस प्रकार पापी श्रुतिरत, ब्राह्मण, अज्ञानी ने राजा कुलकर का मन जिनधर्म से विचलित किया, और कुलकर की रानी श्रीदामा वह पापिनी परपुरुष में आसक्त, उसने सोचा मेरी ये खोटी क्रियायें राजा ने जान ली हैं, इसीलिये तापसी बनना चाहता है, कौन जाने तपको धारण करे या नहीं करे। कदाचित् मुझे ही मार डालेगा। इसलिये मै ही राजा कुलंकर को मार डालू। तब उसने अपने पति राजा कुलंकर को और पुरोहित को दोनो को ही मार दिया। वे मरकर निकुजिया नाम के वन में पशु हिंसा के पाप से दोनो चूहा बने। पुन. वहाँ से मरकर मेंढक, मूसा, मोर, सर्प, कुत्तादि तिर्यंच के, अनेक भवो को धारण किया। पुरोहित श्रुतिरत का जीव हाथी हुआ, राजा कुलंकर का जीव मेंढक हुआ, हाथी के पैर के नीचे दबकर मरा, पुनः मेढक ही हुआ, सो सूखे सरोवर मे कौवा ने खाया, तब कूकडा हुआ, हाथी मरकर बिल्ली हुआ, उसको कुत्ते ने खाया, कुलंकर का जीव ने तीन बार कूकडा पर्याय को धारण किया। पुरोहित का जीव बिल्ली बना उसने उसको

खाया, पुनः दोनों मूसा, मार्जर, मगरमच्छ हुये, धीवर ने उन्हें जाल में पकडकर कुलहाडी से काटे, तब दोनों मरकर राजगृही नगर में ब्रह्माश नाम का ब्राह्मण उलकानाम की ब्राह्मणी के ये दोनों पुत्र हुये। पुरोहित के जीवका नामविनोद और कुलंकर के जीव का नामरमण, महादरिद्री विद्या रहित हुये। तब ब्राह्मण ने सोचा विदेश में जाकर ज्ञान प्राप्त करूँ, ऐसा विचारकर घर से निकला पृथ्वीपर भ्रमण करता हुआ चारों वैद और वैदों के अंगों को पढा, पुनः राजगृही नगरी में आया, भाई को देखने की अभिलाषा थी, परन्तु नगर के बाहर सूर्य अस्त होने से अंधकार हो गया, तब यह जीर्ण उद्यान के मध्य एकयक्ष का मन्दिर उसमें बैठा, इसका भाई विनोद उसकी स्त्री समिधा महा कुशील एक अशोकदत्त पुरुष में आसक्त थी, उसने यक्ष के मन्दिर का संकेत किया था। अशोकदत्त को मार्ग मे कोतवाल के किंकरों ने पकडा और विनोद खड्ग हाथ में लेकर अशोक दत्त को मारने के लिये यक्ष के मन्दिर में आया। उसको कुशील पुरुष समझकर खड्ग से भाई रमण को मारा, अंधेरे मे दिखा नहीं, रमण मर गया, विनोद अपने घर आ गया। पुनः विनोद भी मर गया, दोनों ने अनेक भवों को धारण किया।

पुनः विनोद का जीव तो, सालकी वन में आरण भैंसा हुआ। और रमण का जीव अधा रीछ हुआ, दोनों दावानल अग्नि नें जलकर मरें, और गिरीवन में भील हुये, पुनः भील मरकर हिरण बना, तब किसी भील ने हिरणों को पकडा, और तीसरा नारायण स्वयभूति, श्रीविमलनाथ भगवान के दर्शन करके वापिस आ रहा था उसने दोनो हिरणों को खरीद लिये, और जिनमन्दिर के पास रखे। इनको राजभवन से सुन्दर भोजन मिलता, मुनिराजो के दर्शन करते, जिनवाणी, गुरुवाणी को सुनते, इनमें रमण का जीव हिरण वह समाधिमरणकर देव बना, और विनोद का जीव हिरण आर्तध्यान से मरकर तिर्यंच गति में भ्रमण किया। पुनः जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे कंपिल्यनगर वहॉ धनदत्त नाम का व्यापारी बाईसकरोडदीनारो का स्वामी हुआ। चारटाक स्वर्ण की एक दीनार होती हैं। उस वणिक के वारुणीनाम की स्त्री उसके गर्भ में रमण का जीव आया जो हिरण से देवहुआ था। वह वहाँ से चयकर भूषणनाम का पुत्र हुआ, निमित ज्ञानी ने कहा, कि तुम्हारा यह पुत्र, जरूर दीक्षा धारण करेगा। यह सुनकर पिता को चिंता हुई, और पुत्रको घरसे बाहर नहीं निकलने देता, घर मे ही रखता, पिताको पुत्रसे महाप्रेम था, इसीलिये सभी भोग सुखसामग्री घर में ही रखता। यह भूषण सुन्दर

स्त्रियों सहित घर में ही सुखों को भोगता, राजाओं से भी अधिक भोग सामग्री, इनके पास वह उसी में लीन रहता, उसको कोई चिन्ता नहीं, इनके पिता ने सैकडों मनोरथों से, ऐसा गुणवान पुत्र पाया, एक ही पुत्र, पूर्वजन्म के राग से, इसभव में पिता को पुत्र का विशेष प्रेम था, पिता तो विनोद का जीव और पुत्र रमण का जीव, पहले दोनों भाई थे, इस जन्म में पिता पुत्र हुये, ससार की विचित्र गति है, संसार का चारित्र स्वप्न मे राज्य समान असार जानना, एक समय धनदत्त का पुत्र भूषण प्रातःसमय देवो का आगमन और दुदुभीध्वनी को सुन वैराग्य को प्राप्त हुआ, यह स्वभाव से ही कोमल धर्ममे लीन, महाहर्षित होकर दोनों हाथजोड नमस्कार करताहुआ, श्रीधरकेवली की वन्दना के लिये शीघ्र ही जा रहा था, सो सिढीयों से उतरते समय सर्प ने काट लिया, वह मरकर, चौथे स्वर्ग मे देव हुआ, वहाँ से चयकर पुष्करद्वीप मे चन्द्रादित्य नगर मे राजा प्रकाशयश, उनकी रानी माधवी, उसके जगद्युत नाम का पुत्र हुआ, राज्यलक्ष्मी को भोगते हुये भी, संसार से उदास राज कार्य में मन नहीं लगता, तब मंत्रियों ने कहा हे राजन्! यह राज्य आपके कुल परम्परा से चला आ रहा है। इसका पालन करो, आपके राज्य में प्रजा सुखी होगी, मन्त्रियो के आग्रह के कारण यह राज्य करता है, राज्य में रहता हुआ भी, साधुओ की सेवा, आहारदानादि क्रियाओ में तत्पर रहता था। मुनि दान के प्रभाव से देवकुरु भोगभूमि मे जन्म लिया। वहाँ से मरकर दूसरे स्वर्ग मे देव हुआ, दोसागर दोपल्य देवो के सुख भोगकर, वहाँ से चयकर जम्बूद्वीप के पश्चिमविदेहक्षेत्र में अचलनाम के चक्रवर्ती उनकी रत्नारानी के अभिराम नाम का पुत्र हुआ। वह महागुणवान, रूपवान, अतिसुन्दर उनको देखने से सभी लोग प्रसन्न होते थे। वह बालपन से ही विषयो से विरक्त, जिनदीक्षा लेना चाहता है, और पिता चाहता कि पुत्र घर में रहे। चक्रवर्ती ने तीनहजार राजकुमारियो से राजकुमार अभिराम का विवाह कराया। वे राजकुमारियॉ पति के मनको मोहित करने के लिए हावभाव रस एवं शृंगारादि से अनेक राग भरी क्रियायें करें, परन्तु यह अभिराम विषयसुखको विषसमान जानता हुआ, केवल मुनिबनने की इच्छा, परन्तु पिता चक्रवर्ती उसे घर से निकलने नहीं देता। अभिराम महा भाग्यशाली, महागुणवान, शीलवान, महात्यागी, रानियो से राग नहीं, वह रानियॉ मधुर मधुर वाणी से तरह तरह के वचन कहकर रागी करना चाहती है, परन्तु इनको ससार की माया विषसमान लगती है। यह

शातमनसे, पिता की आज्ञा से, उदास होकर घर मे ही तीनहजार रानियो के मध्य में रहता हुआ भी, तीव्र असिधारारूप ब्रह्मचर्यव्रत का पालनकरता है।

अतः रानियों के बीच में रहना, शीलव्रत का पालनकरना, उनसे ससर्ग नहीं करना उसका नाम असिधाराव्रत है। अमूल्य वस्त्र आभूषण हार मुकुटादि पहनते है, फिर भी उनसे राग नहीं। सिहासन पर बैठकर भी प्रतिसमय रानियो को जिनधर्म की प्रशंसा का ही उपदेश देते हैं। तीनलोक मे जिनधर्म समान और कोई धर्म नहीं। यह जीव अनादिकाल से ससार मे भ्रमण करता है, तब कोई पुण्यकर्म के उदय से मनुष्य जीवन प्राप्त होता है। यह ससार का स्वरूप जानता हुआ भी कौन मनुष्य विषयरूपी विषको पीयेगा। या संसाररूपी कुए में गिरेगा, अथवा मणिकी इच्छा से कौन नागके मस्तक को स्पर्श करेगा, यह काम भोग नाशवान उसमे ज्ञानी कैसे राग करे। एक जिनधर्म का अनुराग ही महाप्रशंसा योग है, अथवा मोक्षसुख का कारण है। ससारी जीवो का जीवन अत्यंत चचल है, इनमे क्या स्थिरता है? जिनका मन वश में है उनको राज्य एव इन्द्रियो के विषय भोगों से क्या मतलब है? इत्यादि धर्म का उपदेश सुनकर सभी रानियॉ विषयरूपी कामभोगों से मन को दूरकर अनेक नियमो का पालन करनेलगीं। यह अभिराम ब्रह्मचर्य व्रत मे दृढ और रानियो को भी ब्रह्मचर्य मे दृढकिया। इस राजकुमार अभिराम को अपनेशरीर से भी राग नहीं एकउपवास या दो तीनादि अनेक उपवासो से कर्मो की निर्जरा करने लगा, तप से शरीर का शोषण किया, मन और इन्द्रियो को जीतने में समर्थ, यह सम्यग्दृष्टि निश्चल मनसे महाधीरवीर चौसठहजारवर्ष तक दुर्धरतप किया, पुन· समाधि मरणकर णमोकारमत्र का स्मरण करतेहुये शरीर का त्यागकर छठ्ठे स्वर्ग मे महाऋद्धि का धारी देवहुआ, और भूषण के भव मे इसका पिता धनदत्त सेठ था विनोद ब्राह्मण का जीव, वह मोह के कारण, अनेक कुयोनियों मे भ्रमणकर, जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे, पोदनपुरनगर उसमे अग्निमुख ब्राह्मण, उसके शकना स्त्री उसके मृदुमति नाम का पुत्र हुआ। नाम तो मृदुमति, परन्तु मन अतिकठोर दुष्ट, जुआ खेलने वाला, अनेक व्यसनो से पूर्ण दुराचारी, सो लोगों को ठुकराने से माता पिता ने घर से निकाल दिया, वह मृदुमति पृथ्वीपर भ्रमण करता हुआ पोदनपुर गया, प्यास की वेदना से किसी के घरपानी पीनेगया, वहॉ एक ब्राह्मणी रोती हुई इसको ठडा पानी पिलाया, पानी पीने के पश्चात् संतुष्ट होकर ब्राह्मणी से पूछा, तुम क्यों रो रही हो। तब

ब्राह्मणी ने कहा, तेरे ही जैसा आकार वाला मेरे भी पुत्र था, मैंने क्रोध करके उसको घर से निकाल दिया, उसको भ्रमण करते हुये तुमने कहीं देखा हो तो बताओ, वह तुम्हारे जैसा ही है। तब मृदुमति रोता हुआ कहने लगा, हे माता! तू रोये मत, वह मैं ही हूँ, उसने कहा कि मुझे गये बहुत समय हो चुका, इसलिये तुमने पहचाना नहीं। तुम विश्वास करो, मै तुम्हारा ही पुत्र हूँ, तब वह अपना पुत्र जान, उसको रख लिया, मोह के योग से स्तनों से दूध झरा, यह मृदुमति रूपवान, स्त्रीयो के मन को चुरानेवाला, धूर्तो का शिरोमणि जुवा मे चतुर, अनेक कलाओ को जाननेवाला, कामी भोगी, एक बसन्तमाला वेश्या में आसक्त, और इसके माता पिता ने इसको घर से निकालने के पश्चात, महा लक्ष्मीवान होकर सुखो को भोगते हुये आनन्द से रहे। एक दिन मृदुमती शशांकनगर के राजमहल में चोरी करने गया। सो राजा नन्दिवर्धन शशांकमुख स्वामी के मुख से धर्मोपदेश सुन, वैराग्य को प्राप्त होकर अपनी रानी से कहा, हे देवी! मैने मोक्षसुख को प्राप्त करानेवाला मुनि के मुख से, धर्मोपदेश सुना, ससार के भोग नरकनिगोद के दुख देनेवाले हैं। इसलिये मै दिगम्बरी दीक्षा धारण करूँगा, तुम शोक मतकरना, राजा अपनी रानी को कह रहे थे, तब मृदुमति चोर ने यह वचन सुनकर अपने मन मे सोचने लगा कि देखो यह राजा राजऋद्धि छोडकर दीक्षा लेने जा रहा है, और मैं पापी चोर दूसरे के धन को चुराकर लाता हूँ, और अपनी आजीविका चलाता हूँ, धिक्कार है मेरेजीवनको। ऐसा विचारकर निर्मलमन से ससार शरीर भोगे से विरक्तहोकर चन्द्रमुख मुनिराज के पास परिग्रह का त्यागकर जिनदीक्षा को धारणकिया। शास्त्रप्रमाण महादुर्धर तपस्याकर क्षमा सहित प्रासुक आहार करते थे। दुर्गगिरी के शिखरपर एक गुणनिधि नाम के मुनिराज चारमहीने के उपवास कर योग स्थापना की, वे मुनिराज सुर असुर देव एवं मनुष्यो से पूज्य महाऋद्धिधारी चारण मुनिराज थे, उन्होने चातुर्मास पूर्णकर आकाशमार्ग से किसीतरफ विहारकर चले गये, और यह मृदुमति मुनिराज, दुर्गगिरी के पास आलोकनगर मे आहार के लिये आये, चारहाथ पृथ्वी को देखकर चलते थे, नगर के लोगो ने, यह जाना की, ये वे ही मुनिराज हैं, जो चारमहीने के उपवासकर पर्वत पर रहे। ऐसा जानकर, लोगों ने उनकी महाभक्ति पूजाकर, महा पवित्र शुद्ध आहार दिया। नगर के लोगों ने बहुत स्तुति की, मुनिराज ने सोचा की चारमहीने पर्वतपर रहे, इनके भरोसे मेरी अधिक प्रशंसा होरही है। मान के कारण

मुनिराज ने मौन रखा, लोगों से यह नहीं कहा कि, मैं और ही हूँ वह मुनिराज दूसरे थे। और गुरु के निकट मायाचार दूर नहीं किया, प्रायश्चित भी नहीं लिया, इसीलिये मायाचारी से तिर्यंचगति का कारण हुआ, बहुत तप किया तप के प्रभाव से छठेस्वर्ग में जहाँ अभिराम का जीव देव था, वहाँ ही यह मृदुमति मुनिराज देवबने। पूर्व जन्म के संयोग से स्वर्ग मे भी दोनों देवों का महास्नेह हुआ, दोनो ही समान ऋद्धि के धारी अनेक देवांगनाओं सहित सागरो पर्यत इन्द्रिय सुखो को भोगा। अभिराम का जीव तो भरत हुआ और मृदुमति का जीव स्वर्ग से चयकर मायाचार के दोष से जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र मे निकुंजनाम के पर्वतपर महागहन शल्यकी नामकेवन में श्यामसुन्दर विशाल शरीर का धारी गजराज हुआ, समुद्रसमान गर्जना इसकी, पवनसमान शीध्रगमन, गजराजों के गुणो से मडित, विजयादि हाथी, उनके वश मे जन्म लिया, ऐरावतसमान हाथी, स्वछंद, सिंह, व्याघ्रादि को मारने वाला, वृक्षो को उखाडने वाला, विद्याधरो के द्वारा भी नहीं पकडा जाये, तो मनुष्यो की क्या बात, विशाल पराक्रमी हाथी को देखकर जंगल के सिंहादि भी भाग जाते हैं। ऐसा प्रबल गजराज वन में पत्तो आदि का भोजन करता, मानसरोवर पर अनेक गजोसहित क्रीडाकरता। कभी गंगा के किनारे, कभी तालाबो के किनारे, कभी सरोवर मे क्रीडा करता। हजारो हथनियों सहित स्वच्छद होकर क्रीडा करता, मेघ समान गर्जता हुआ, एक दिन लकेश्वर ने देखा, विद्या के पराक्रम से उसने उसको धीरे धीरे वश किया, हाथी का त्रैलोक्यमडल नामरखा, जैसे स्वर्ग मे, अनेक अप्सराओ सहित, सागरों पर्यत क्रीडा की, ऐसे हाथी की पर्याय मे हजारो हथनियो से क्रीडा करता रहा। यह कथा देशभूषणकेवली राम लक्ष्मण को कहते हैं, कि यह जीव सर्व योनियों मे राग करता है, निश्चय से, देखे तो चारों गतियो में दुख ही है। अभिराम का जीव भरत और मृदुमति का जीव हाथी। सूर्योदय चन्द्रोदय के जन्म से लेकर अनेक भव के साथी हैं। इसलिये भरत को देख पूर्वभव को यादकर हाथी शांत हुआ, अब भरत भोगों से रहित होकर, मुनिपद धारण करना चाहता है, और वह इसी भव से निर्वाण प्राप्त करेगे। पूर्वभव को यादकर हाथी शातहुआ, श्रीऋषभदेव भगवान के समय, सूर्योदय चन्द्रोदय नाम के दोनो भाई थे, मारीच के कहने से मिथ्यात्व को धारण कर, बहुत कालतक संसार में भ्रमणकिया। अनेकबार त्रस स्थावर पर्याय में जन्म मरण किया। चन्द्रोदय का जीव कुछ भवों के पश्चात् राजा कुलंकर पुन.

कुछभवों के बाद रमण ब्राह्मण, और कई भवो को धारणकर मृग की पर्याय में समाधि मरण किया। वहाँ से देव, देव से भूषण पुनः स्वर्ग वहाँ से जगद्द्युति नाम का राजा, वहाॅ से भोगभूमि पुनः दूसरे स्वर्ग में देव, वहाँ से चयकर विदेहक्षेत्र में चक्रवर्ती का पुत्र अभिराम हुआ, वहाॅ से छठे स्वर्ग में देव, देव से राजाभरत चरमशरीरी हैं। पुनः शरीर नहीं धारण करेंगे, और सूर्योदय का जीव बहुतकाल भ्रमणकर कुलंकर का पुत्र श्रुतिरत हुआ, पुनः अनेक जन्म के बाद विनोद ब्राह्मण हुआ, पुन· अनेक जन्मो के बाद मृग हुआ, पुन कई जन्मोंके बाद भूषण का पिता धनदत्त वणिक हुआ, और कई जन्मों के पश्चात् मृदुमति नाम के मुनि हुये, उन्होने अपनी प्रशंसा सुन राग किया, मायाचार से शल्य को दूर नहीं किया, तप के प्रभाव से छठे स्वर्ग में देव हुआ, देव से चयकर त्रैलोक्यमंडल हाथी हुआ। अब श्रावक के व्रतों को धारणकर देव होगा। यह भी निकट भव्य है। इसप्रकार जीवो की गति आगति को जान, इन्द्रियों के सुख को नश्वर जान, विषयो को छोड ज्ञानी जीव धर्म में रमते हैं। जो प्राणी मनुष्य जन्म को प्राप्तकर जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म नहीं करते वे अनन्तकालतक ससार मे भ्रमण करेगें। आत्म कल्याण से दूर रहेंगे। इसीलिये जिनप्रभु के मुख से निकला दयामयीधर्म मोक्षप्राप्त कराने मे समर्थ है, मोहरूपी अंधकार को दूरकर सूर्य की काति समान मन वचन काय से, जिनधर्म को धारण करो, इससे निर्वाण पद पाओगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराणा भाषा वचनिकामे भरत और हाथी, के पूर्वभव का वर्णन करने वाला पिच्चासिवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-86

भरत और कैकई का दीक्षा ग्रहण करना

अथानंतर श्रीदेशभूषण केवली की, दिव्यवाणी महापवित्र मोहरूपी अंधकार को नाश करनेवाली, ससार से पार कराने वाली, भयानक दुखों को नाशन हारी। उनमें भरत और हाथी के अनेक भवोंका वर्णन सुनकर, राम लक्ष्मणादि सभी भव्यप्राणी आश्चर्य चकित हुये। राजा भरत अविनाशी पदकी प्राप्ति के लिये, एव मुनि बनने की इच्छा से गुरुओं के चरणों मे नमनकर, हाथजोड़ परम वैरागी,

उठकर केवली भगवान को नमस्कारकर महामनोज्ञ भावना से, गुरु के चरणों मे प्रार्थना की हे नाथ! मैं ससार में अनन्त काल भ्रमणकर अनेकयोनियो में महाकष्टों को, सहन करते हुये दुखी हुआ। अब मैं ससार भ्रमण से थक चुका, मुझे मुक्ति प्राप्ति का कारण जो दिगम्बरी दीक्षा वह देओ। ऐसा कहकर केवली की आज्ञाप्रमाण सम्पूर्ण परिग्रह का त्यागकर, अपने हाथो से सिर के बालों, का केशलोच किया, और महाव्रतों को धारणकर जिनदीक्षा लेकर दिगम्बर हुये। तब आकाश में देव धन्य धन्य कहते हुये, कल्पवृक्षो के पुष्पों की वर्षा करने लगे।

हजार से अधिकराजा भरत के स्नेह से राजऋद्धि को छोड़, जिनदीक्षा धारण की। कोई शक्ति हीन थे, वे अणुव्रतों को धारणकर, श्रावक बने, और माता कैकई पुत्र के वैराग्य को सुन ऑसू बहाती हुई, विलाप करने लगी, व्याकुलता से मूर्च्छा को प्राप्त होकर गिर पडी, पुत्र के राग से शरीर मृतक समान शिथिल हो गया। तब चन्दनके जलसे मूर्च्छा को दूर किया, सचेत होनेपर गाय बछडे के बिना, पुकारती है, ऐसे पुकार पुकार कर रोने लगी। हे पुत्र! महाविनयवान, गुणो की खान, तू क्यों जा रहा है, मेरामन शोक के सागर में डूब रहा है। उसे आकर रोको, तेरे समान पुत्र बिना मै दुख के सागर में शोक की भरी कैसे जीवित रहूँगी। हे पुत्र! तूनें यह क्या किया। इस प्रकार रोती हुई माता को राम लक्ष्मण ने समझाया, मधुर वचनो से दिलासा दी हे माता! भरत महाविवेकी ज्ञानवान है। तुम शोक मतकरो, हम क्या तुम्हारे पुत्र नहीं हैं? हम आज्ञाकारी किकर है। कौशल्या, सुमित्रा, सुप्रभा ने बहुत समझाया, तब शोक रहित होकर प्रतिबोध के साथ वैराग्य को प्राप्त हुई। निर्मल परिणामो से अपने अज्ञानता का पश्चाताप करने लगी, धिक्कार है इस स्त्रीपर्याय को, यह स्त्रीपर्याय महादुखों का भडार है, अत्यन्त अशुचि ग्लानिरूपीनगर की नाली समान है। अब ऐसा उपाय करूँ, पुन· आगे कभी भी स्त्री पर्याय को धारण नहीं करना पडे। संसार समुद्र से पार होऊँ, महा वैराग्य सहित पृथ्वीमति आर्यिका के समीप आर्यिका हुई। एक सफेद साडी को धारण किया, सभी परिग्रह को छोड परमसम्यक्त्व सहित सम्पूर्ण आरम्भ का त्याग किया, रानी कैकई के साथ तीनसौ रानियो ने आर्यिका दीक्षा धारण की। गृहस्थ के मोहरूपी कीचड से निकलकर आर्यिका रूपीकमल को विकसित किया। श्रीदेशभूषण केवली का उपदेश सुन अनेक मुनि बने और अनेक आर्यिका हुई। मुनि और आर्यिका के संघ समूह से पृथ्वी ऐसी सुन्दर दिखी जैसे

कमलो से भरा सरोवर हो, अनेक नर नारियों ने तप संयम त्याग नियम व्रतको धारणकर श्रावक श्राविका के व्रतो को पालन करते हुये, सूर्य के प्रकाश समान कुछ भवों के पश्चात्, केवलज्ञानरूपी ज्योतिसे, तीनलोक के पदार्थों का अवलोकन करेंगे। प्रत्येक प्राणीयो को गृहस्थ जीवन में रहते हुये भी गृहस्थ से पृथक् रहे, जैसे—जल से कमल, कीचड में सोना। मानव जीवन का आभूषण, सम्यक्त्व के साथ तप और संयम ही है। तप संयम ही ध्यान की एकाग्रता को प्राप्त कराकर आत्मसुख को प्राप्त करायेगा।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे भरत कैकई का वैराग्यवर्णन करनेवाला छयासिवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व–87

त्रैलोक्यमंडल हाथी का स्वर्ग-गमन और भरत मुनि का निर्वाण गमन

अथानतर त्रैलोक्यमंडल हाथी ने, प्रशात मन से, केवली के निकट श्रावक के व्रतों को धारण किया। सम्यक्दर्शन सहित सुज्ञानी शुभ क्रिया मे, तत्पर धर्म मे लीन, पुण्य की भावनाकर तपस्या करने लगा। पन्द्रहदिन के उपवास, महीने के उपवास का पारणा, सूखे पत्तो से करता, तालाब एव सरोवर का पानी प्रासुक करके ही पीता, वह हाथी ससार से भयभीत लोगो से पूज्य विशुद्ध परिणामो से पृथ्वीपर गमन करता। कभी पक्ष एव मासो उपवास का पारणा करने के लिये नगर मे जाता, तो श्रावक उसे अति भक्तिपूर्वक शुद्धअन्न जल से पारणा कराते। वैराग्यरूपी खूटे से बंधा शरीर को कृष करताहुआ, महातप करनेलगा। पुनः यम नियमरूपी अकुश के साथ महाउग्र तप को करनेवाला महाहाथी, धीरे धीरे चारो प्रकार के आहार का त्यागकर, अन्त समय में सल्लेखना धारण कर, शरीर छोड छठे स्वर्ग में देव हुआ। अनेक देवागनाओं सहित दिव्यहार कुंडल एवं आभूषणो से मंडित, पुण्य के प्रभाव से देवगति के सुख भोगता रहा। छठे स्वर्ग से ही आया था और छठे में ही पुन गया। परम्परा से मोक्ष जायेगा। भरत महामुनि महातप के

धारी निर्ग्रंथगुरु शरीर की ममता रहित, महाधीर वीर जहाँ संध्या हुई, वहाँ ही बैठे रहते, दिगम्बर साधु को, एक स्थान नहीं रहना, पवन समान असंङ्गी, पृथ्वीसमान क्षमा के धारी, जल समान निर्मल, अग्नि समान कर्म काष्ठ को भस्म करने वाले, चारों आराधनाओं में लीन, तेरह प्रकार के चारित्र को पालन करतेहुये विहार करनेलगे। निर्ममत्व स्नेह एवं रागरहित सिंहसमाननिर्भय, समुद्रसमानगम्भीर, सुमेरूसमान निश्चल, यथाजात रूप के धारी, सत्य का कवच पहने, क्षमा रूपीखड्क से बाईस परिषहों को जीतने वाले, महातपस्वी, शत्रु-मित्र, सुख-दुख, समान, काच-कंचन, महल-श्मशान, समान जानने वाले महा उत्कृष्ट मुनि शास्त्र प्रमाण विहार आहार करते। तपके प्रभाव से अनेक महा ऋद्धियॉ उत्पन्न हुई। सुई समान तीक्ष्ण कांटे पैरो मे लगे तो भी कोई खेद नहीं। शत्रुओं के स्थानों में उपसर्ग सहन करनेकेलिये विहार करनेलगे। तब सयम के प्रभाव से, शुक्लध्यान उत्पन्न हुआ, शुक्लध्यान के बल से मोह का नाशकर ज्ञानावरणी दर्शनावरणी एवं अन्तराय कर्मो को नाशकर केवलज्ञान जो लोकालोक प्रकाश करने वाला है, उसे प्राप्त किया। पुन अघातिया कर्मों का विनाशकर, सिद्धपद को प्राप्त हुये। वहॉ से ससार भ्रमण नहीं। यह कैकई के पुत्र राजाभरत का चरित्र, जो भक्ति से पढते है, पढाते है, सुनते हैं, सुनाते हैं। वे सभी कष्टो से रहित होकर यश बल कीर्ति विभूति आरोग्य पद सहित, स्वर्ग मोक्ष को प्राप्त करते है, यह भरत का परम चारित्र उत्तम श्रेष्ठ गुणो से युक्त, भव्य जीव मन लगाकर पढो सुनो इससे शीघ्र ही सूर्य से भी अधिक केवलज्ञान रूपी ज्योति को प्राप्त करोगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे भरत का निर्वाणगमन वर्णन करनेवाला सत्तासीवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-88

राम लक्ष्मण का राज्याभिषेक

अथानंतर राजा भरत के साथ, जो राजाधीरवीर अपने शरीर से भी निष्पृह हो दिगम्बर दीक्षा धारणकर, आत्मरूपी दुर्लभवस्तु को प्राप्त हुये, उनमे से कुछ

नाम सुनो। सिद्धार्थ, रतिवर्धन, मेघरथ, जाबूनद, शल्य, शशांक, नन्दन, नंद, आनन्द, सुमति, सुचन्द्र, महाबुद्धिसूर्य, इन्द्रध्वज, श्रुतिधर, सुचद, अलंक, शाति, कुदर, सत्यवान, सुमित्र, धर्ममित्र, पूर्णचन्द्र, प्रभाकर, सुदन, शांतिसुख प्रियधर्मा इत्यादि एक हजार से अधिक राजा विशुद्ध कुल में उत्पन्न हुये, हाथी, घोडे, रथ, पयादे, स्वर्ण, रत्न, रणवास, परिवार को छोडकर पचमहाव्रतो को धारणकर मुनिबने। महा तपस्या करके अनेक ऋद्धियों को प्राप्त किया। महामुनि आत्म ध्यान के ध्याता, कोई तो मोक्ष गये, कोई अहमिन्द्र हुये, कोई उत्कृष्ट देव हुये। भरत चक्रवर्ती समान, दशरथ के पुत्र, भरत को दीक्षा लेने के पश्चात्, लक्ष्मण उनके गुणो को याद, करकर महाशोक करनेलगे, और अपना राज्य शून्य मानने लगे, दुखी होकर ऑसू बहाते हुये विराधित की भुजाओ पर हाथरख उसके सहारे बैठेहुये धीरे धीरे कहने लगे वे भरत महाराज गुणो के आभूषण ही थे, अब कहॉ गये, उन्होने यौवन अवस्था मे ही, शरीर से ममता छोडी। इन्द्रसमान राजा हम सब उनके सेवक हमारे रघुवश के, वो तिलक, सम्पूर्ण राज्य वैभव को छोडकर मोक्ष के लिये, महा दुर्धर मुनिधर्म का पालन कैसे करेगे। आपका शरीर तो सुकोमल कैसे परिषह सहेगे, आप महाधन्य है। और श्रीराम महा ज्ञानवान कहने लगे, भरत की महिमा कह नहीं सकते, उनका मन कभी ससार के विषयो मे लीन नहीं हुआ, जो शुद्धबुद्धि है, तो उनकी है, उनका ही जन्म कृतार्थ है। जो विष के भरे अन्न के समान, राज्यलक्ष्मी को छोडकर जिनदीक्षा धारण करते है, वे पूज्य प्रशसायोग्य परमयोगी, उनका वर्णन इन्द्र भी नहीं कर सकते, तो दूसरो की क्या बात, वे राजा दशरथ के पुत्र, कैकई के नन्दन, उनकी महिमा का वर्णन हम भी नहीं कर सकते। इस प्रकार भरत के गुणो का वर्णन करतेहुये, सभी शोकसहित राज सभा मे बेठे, राजा और प्रजा भरत के ही गुणो का महावर्णन बहुतसमय तक करते रहे। पुन श्रीराम और लक्ष्मण दोनो भाई भरत के गुणो के अनुरागी, दुख सहित उठे, सभी राजा अपने अपने स्थान गये। घर घर भरत महाराज की चर्चा होती रही, सभी लोग आश्चर्य से कहने लगे कि अभी उनकी यौवन अवस्था, विशाल राज्य, ऐसे गुणवान भाई, राज्य में सभी सामग्री पूर्ण, ऐसे ही सतोषी पुरुष परिग्रह को छोडकर, मुनि दीक्षा धारणकर, परमपद को प्राप्तकर सकते हैं। इसी प्रकार सभी ही प्रशसाकर खुश भी हो रहे थे, और दुखी भी हो रहे थे। पुन दूसरे दिन सभी राजा विचारकर, श्रीराम के पास आये, नमस्कार कर मधुर

वचनों से विनय पूर्वक प्रार्थना करने लगे, हे नाथ! यदि हम अज्ञानी असमझ है, तो आपके, और बुद्धिमान, समझदार हैं तो भी आपके। हम लोगो पर कृपाकर एक विनती सुनो। हे प्रभो! विद्याधर और भूमिगोचरी हम सभी आपका राज्य अभिषेक करना चाहते है, जैसे स्वर्ग मे इन्द्र का होता हो। हमारा जन्म और नेत्र सफल हो जायेंगे। आपके अभिषेक से पृथ्वीपर सभी को सुख होगा। तब राम कहने लगे कि–तुम लक्ष्मण का राज्य अभिषेक करो, वह पृथ्वी का स्तभ भूधर है, राजाओं के गुरु वासुदेव, राजाओं के राजा, सर्व गुणरूपी ऐश्वर्य के स्वामी, प्रतिसमय मेरे चरणों मे नमन करनेवाले, ऐसे गुणवान महापुरुष को छोडकर मुझे राज्य से क्या मतलब! तब सभी राम की महा प्रशंसाकर, जय जयकार करते हुये, लक्ष्मण के पास पहुँचे, और सब वृतात कहा। तब लक्ष्मण सबको साथ लेकर राम के पास आये। और लक्ष्मण ने हाथजोड नमस्कार कर कहा–हे स्वामी! हे वीर। इस राज्य के स्वामी आप ही हो, मैं तो आपका आज्ञाकारी अनुचर हूँ। तब सम ने कहा, हे वत्स–हे भाई! तुम चक्र के धारी नारायण हो इसलिये राज्य अभिषेक तुम्हारा ही योग्य है। इत्यादि चर्चा से राम लक्ष्मण दोनो का राज्य अभिषेक करने की तैयारी की। पुनः मेघ की ध्वनी समान बाजे, नगाडे, ढोल, मृदग, वीणा, झालर, दुदुभी बाजे, झाझ, मजीरे इत्यादि बाजे बजे, अनेकप्रकार के गीत नृत्य हुये, याचको को मनवाच्छित दान दिया, सभी लोग अति प्रसन्न हो रहे थे। श्रीराम लक्ष्मण दोनो भाईयो को एकसाथ एकसिहासन पर बैठाया, स्वर्ण रत्न के कलशोपर कमल के पत्ते रखे, पवित्र प्रासुक जल से भरे, कलशो से विधि पूर्वक अभिषेक किया, दोनो भाईयों के हार, मुकुट, कुडल, बाजूबन्द इत्यादि अमूल्य रत्नमयी आभूषण एवं नये सुन्दर वस्त्र पहनायें, और सुगन्धित पदार्थ शरीर पर लेपन किये। विद्याधर भूमिगोचरी और तीनों खंड के देव, सभी जय जयकार करनेलगे। यह बलभद्र, श्रीराम, हल मूसल के धारी, और यह वासुदेव श्रीलक्ष्मण चक्र के धारी, जयवन्त हो। दोनो राजाओं का अभिषेक करने के उपरान्त, विद्याधरों ने बडे उत्साह से प्रसन्नता पूर्वक, महासती महारानी सीता और महारानी विशल्या का अभिषेक करवाया। राम की रानी सीता, लक्ष्मण की रानी विशल्या उनका अभिषेक गाजे बाजे गीत नृत्यादि से विधिपूर्वक हुआ। विभीषण को लंका का राज्य दिया। सुग्रीव को किहकधापुर का राज्य दिया। हनुमान को श्रीनगर और हनुरुहद्वीप का राज्य दिया। विराधित को नागलोक समान अलकापुरी

का राज्य दिया। नल नील को किहकंधूपुर का राज्य दिया। और भामडल को वैताड्य की दक्षिण श्रेणी में रथनूपुर दिया, एवं सम्पूर्ण विद्याधरों का अधिपति बनाया। रत्नजटी को देवोपनीत नगर दिया और भी सभी राजाओं को यथा योग्य सबको स्थान दिया। अपने पुण्य के उदय से राम लक्ष्मण द्वारा सबको ही राज्य प्राप्त हुआ, राम की आज्ञा से सभी राज्य करने लगे [जो भव्यजीव पुण्य के प्रभाव से, ससार का महाफल प्राप्तहुआ, जानकर, धर्म कार्य करते हैं, वे मनुष्य सूर्य से अधिक, केवलज्ञान की ज्योति प्राप्त करते हैं। महापुरुष पूर्व पुण्य साथ में लाते है, जो यहा महाविभूति प्राप्त करते हैं, और यहा पुण्यानुबंधी पुण्यकर, स्वर्ग के सुख भोग, अन्त में निर्वाण पद को प्राप्त करते हैं।]

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम लक्ष्मण का राज्याभिषेकवर्णन करनेवाला अट्ठासीवा पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-89

शुत्रुघ्न का, राजा मधु को जीतने के लिये मथुरा पर आक्रमण

अथानंतर राम लक्ष्मण महाप्रेम पूर्वक, भाई शत्रुघ्न से कहते है, तुमको जो अच्छा लगे, उस देश का राज्य करो, अगर तुम आधी अयोध्या चाहते हो, तो आधी अयोध्या ले लो, या राजगृह, पोदनपुर, पोड्सुन्दर नगर, इत्यादि सैकडो राजधानी हैं, उसमें जो अच्छी वह तुम्हारी। तब शुत्रुघ्न ने कहा, कि मुझे मथुरा का राज्य दो, तब राम ने कहा—हे भाई! वहाँ राजा मधु का राज्य है। वह रावण का जवाई है, युद्ध में अनेक राजाओ को जीतने वाला, उसको चमरेन्द्र ने त्रिशूल रत्न दिया है, वह देवों के लिये भी कठिन है, उसकी चिन्ता हमारे भी, निरन्तर बनी रहती है। वह राजा मधु हरिवशियों के कुल का दीपक है। उसका पुत्र लवणार्णव, वह विद्याधरों से भी नहीं जीता जा सकता। पिता पुत्र दोनों महाशूरवीर हैं, इसीलिये मथुरा को छोड और जहाँ का राज्य चाहो वहाँ का राज्य ले लो। तब शत्रुघ्न ने कहा, बहुत कहने से क्या, मुझे तो मथुरा का ही राज्य दे दो। मैं राजा मधु को, मधुमक्खी के छाते की तरह, मधुको रणसंग्राम में नहीं तोड दूं, तो मैं दशरथ का पुत्र शुत्रुघ्न नहीं। जैसे सिंह के समूह को अष्टापद नष्टकर देता है,

ऐसे ही मधु राजा को कटकसहित चूर नहीं डालूं, तो मैं तुम्हारा भाई नहीं। मैं मधु को मारूँ नहीं तो मै सुप्रभा का पुत्र नहीं। इसप्रकार प्रचंड भावों सहित शत्रुघ्न कहनेलगा, तब सम्पूर्ण विद्याधरों के अधिपति आश्चर्य को प्राप्त हुये। और शुत्रुघ्न की प्रशंसा करने लगे। शत्रुघ्न मथुरा जाने के लिये तैयार हुआ, तब श्रीराम कहने लगे हे भाई! मैं एक याचना करता हूँ, तुम मुझे दक्षिणा दो। तब शत्रुघ्न ने कहॉ, सबको देने वाले आपही हैं, सभी आपसे याचना करते है, आप याचना करो ऐसी क्या वस्तु हैं? मेरे प्राणो के स्वामी भी आपही हो, तो अन्य वस्तु की क्या बात। एक मधु से युद्ध तो मैं नहीं छोडूगा, शेष आप जो कहोंगे वही मैं करूँगा। तब श्रीराम ने कहॉ, हे भाई! हे वत्स! तुम मधुसे युद्धतो करोगे। परन्तु जिससमय उसकेहाथ मे, त्रिशूलरत्न नहीं हो उससमय करना। तब शत्रुघ्न ने कहॉ, जो आप आज्ञा देगे, वही मैं करूगा। ऐसा कहकर भगवान की पूजाकर, णमोकार मंत्र का जाप्य, एव सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार कर भोजनशाला में जाकर भोजन किया। फिर माता सुप्रभा के पास, आकर आज्ञा मागी। तब माताने स्नेह से शत्रुघ्न के मस्तकपर हाथ रखकर कहा हे पुत्र! अभी तक तू रण संग्राम में कभी भी शत्रुओं से हारकर नहीं आया है, अब भी हारकर नहीं आयेगा। तू रण सग्राम मे जीतकर आयेगा। तब मै स्वर्ण रत्न एव कमल के पुष्पो सहित, जिनेन्द्र भगवान की पूजा कराऊँगी, वे भगवान तीनलोक में मंगल को करने वाले है। जिनराज महा मगल स्वरूप हैं, देव मनुष्य तिर्यचादि सौ इन्द्रो द्वारा नमस्कार करने योग्य है, राग द्वेष से रहित है। ऐसे वीतराग प्रभु तेरा मगल करेंगे। उन परमेश्वर पुरुषोत्तम अरहंतभगवान ने, मोहरूपी शत्रु को जीता है। वे भगवान तुझे कल्याण के दायक होगे। सर्वज्ञ त्रिकालदर्शी स्वयंबुद्ध भगवान उनके प्रसाद से, तुम्हारी विजय होगी। जो केवलज्ञान से लोक अलोक को हथेली पर रखे आवले की तरह देखते हैं, ऐसे हितोपदेशी प्रभु तुझे महा मंगल रूप करेगें। हे बालक! आठो कर्मों से रहित, सिद्धपरमेष्ठी भगवान, अष्टगुणादि अनन्त गुणो सहित, लोक के शिखर पर विराजमान हैं, वे सिद्ध प्रभु तुझे तेरे कार्य को सिद्ध करेंगे। हे शुत्रुघ्न! आचार्य परमेष्ठी भव्यजीवों के परम आधार तेरे सभी विध्न हरेगें। जो कमलसमान अलिप्त एवं सूर्यसमान अज्ञानरूपी अधंकार को दूर करनेवाले, भूमिसमान क्षमावान, सुमेरूसमान अचल, समुद्र समान गम्भीर, आकाश समान अखंड्, इत्यादि अनेक गुणों से सहित सूरि परमेश्वर, तेरे मनोरथ पूर्ण करेंगे। और उपाध्याय जिनशासन

के पारगामी, तुझे कल्याण के कर्त्ता होंगे। दुष्ट कर्मरूपी शत्रुओं को जीतने वाले, महा शूरवीर बारहप्रकार के तप से, जो निर्वाण को चाहते हैं, वे साधु परमेष्ठी तुझे शत्रुओं को जीतने के लिये, महाशक्ति देगें। इस प्रकार विघ्नो को दूर करने वाली एवं मंगल कार्य को करने वाली, माताओं ने बहुत बहुत आशीष दी। तब शत्रुघ्न ने माताओं के आशीर्वाद को, मस्तक पर धारणकर, नमस्कार किया, और युद्ध के लिए बाहर निकला। अनेक वाहनो पर बैठकर, अनेक राजा साथ चले। राम लक्ष्मण को, भाई से विशेष प्रेम, सो बहुत दूर तक भाई के साथ साथ गये। तब भाई शत्रुघ्न विनति कर कहने लगे, हे पूज्य पुरुषोत्तम! आप पुन. लौटकर, अयोध्या जाओ, मेरी चिन्ता मत करो, मै आपके आशीर्वाद से, शत्रुओं को अवश्य ही जीतूंगा। तब लक्ष्मण ने समुद्रावर्त नाम का धनुष दिया, महाप्रज्वलित है मुख जिसका, और पवन समान शीघ्र चलने वाले बाण दिये। रामने कृतान्तवक्र को साथ भेजा। आप लक्ष्मण सहित श्रीराम पुन. अयोध्या मे आये। परन्तु भाई की चिन्ता विशेष रही।

अथानंतर शुत्रुघ्न महाधीर वीर बडीसेनासहित मथुरा की तरफ गया, यमुना नदी के किनारे डेरे डाले, और मत्री महा बुद्धिमान, स्वामी के प्रति प्रगाढ भक्ति, सभी विचार विमर्श करने लगे, कि देखो राजा शत्रुघ्न की इच्छा, मधुराजा को जीतने की हुई है, यह व्यवहार रहित केवल अभिमान के कारण ही प्रवृत्ति हुई है। मधु ने पहले राजा मांधाताको रणमें जीता था, वह राजामधु देव और विद्याधरों से भी नहीं जीता जा सकता, उसे ये शत्रुघ्न कैसे जीतेगे? राजा मधु सागर समान, उसमें राजा शत्रुघ्न भुजाओं से तिरना चाहता है, सो कैसे तिरेगा। ऐसे वचन मत्रियों के सुनकर, क्रतान्तवक्र कहने लगा, तुम साहस छोडकर ऐसे कायरता के, वचन क्यो कहते हो? यद्यपि वह राजामधु, चमरेन्द्र देव के द्वारा अमोल त्रिशूलरत्न दिया हुआ है, उससे मानी हो रहा है। तो भी राजामधु को शुत्रुघ्न अवश्य ही जीतेगा। जैसे बलवान हाथी अपनी सूड से वृक्षोंको उखाडता है, फिर भी उसे सिह जीतता है। यह शुत्रुघ्न महा बलवान शूरवीर महापंडित, लक्ष्मीवान है, और उसके भाई राम लक्ष्मण सहायता करने वाले हैं, हम सब भी उसके साथ है, अनेक बडे बडे राजा उसके सहयोगी हैं। इसलिये यह शत्रुघ्न अवश्य ही शत्रु को जीतेगा। जब ये वचन क्रतान्त वक्र ने कहे, तब सभी प्रसन्न हुये। पहले ही मंत्रियो ने मथुरा में गुप्तचरो को भेजा था, वे आकर सभी वृत्तान्त

शत्रुघ्न से, कहने लगे हे देव! मथुरानगर के पूर्वदिशाकीओर महामनोज्ञ उपवन है। वहाँ रणवास एवं रानियोंसहित, राजा मधु क्रीडा करने गया है। राजा के जयन्ति नामकी पटरानी हैं, उस सहित वनमें क्रीडाकर रहा है। जैसे स्पर्शन इन्द्रिय के वश में हुआ हाथी बंधन को प्राप्त होता है। ऐसे राजा, रानीपर मोहित होकर कामरूपी विषयों में फसा है। राजा महाकामी है, आज छह दिन हो गये, सब राज्य कार्य को छोडकर, प्रमाद के वशीभूत होकर, कामरूपी वनमें ठहरा है। कामांध, मूर्खराजा तुम्हारे आगमन को नहीं जानता है। और आपने उसको जीतने की इच्छा की है, वह उसको मालूम नहीं है। सभी मंत्रियो ने उसे बहुत समझाया, परन्तु वह किसी की बात नहीं सुनता है। जैसे अज्ञानी रोगीजीव वैद्य की औषधी को ग्रहण नहीं करता है। इस समय मथुरा का राज्य, आपके हाथ में आसकता है, अगर कदाचित् राजा मधु, पुन: मथुरा में आ गया तो उसको जीतना अतिदुर्लभ है। यह वचन गुप्तचरों के मुख से सुनकर, शुत्रुघ्न कार्य में चतुर, उसी समय बलवान योद्धाओ के साथ दौडकर, मथुरा में अर्धरात्रि के समय सभी लोग प्रमादी होकर सो रहे थे। और नगरी राजा के बिना खाली थी, तब शुत्रुघ्न उस नगर में जाकर घुस गया। जैसे योगी, तपस्वी साधु कर्मों को नाशकर सिद्धपुरी मे प्रवेश करते हैं। ऐसे शुत्रुघ्न ने दरबाजे को तोडकर, मथुरानगरी में प्रवेश किया। मथुरा महामनोज्ञ नगरी है, बंदी जनो के शब्द हुये, कि राजा दशरथ का पुत्र शुत्रुघ्न जयवन्त हो। बार बार इन शब्दको सुनकर, नगर के लोग परचक्र को आया जान, महाव्याकुल हुये, जैसे लंका मे अंगद के प्रवेश से लोग व्याकुल हुये थे, ऐसे मथुरा के लोगों को आकुलता हुई। कोई कमजोर कायर स्त्री उसके गर्भपात हो गया, कोई महाशूर वीर शोरगुल के शब्दो को सुनकर शीघ्रता से, सिंहकीतरह उठे। शुत्रुघ्न राजमहल में गया, वहाँ आयुधशाला, अपने हाथ में कर ली। नगरी के लोग स्त्री बालकादि जो डरने लगे थे, उनको महा मधुरवाणी से सन्तोष देकर कहा, कि यह श्रीराम का राज्य है। यहाँ किसीको कुछभी दुख नहीं होगा। तब नगरी के लोग भयसे रहित हुये। और मथुरा में शत्रुघ्नको आया सुनकर, राजा मधु महाक्रोधित होकर, उपवन से नगर में आया वहाँ मथुरापुरी में शत्रुघ्न के सुभटों की रक्षा से, राजामधु प्रवेश नहीं कर सका। जैसे मुनिके हृदयमें मोह प्रवेश नहीं कर सकता। अनेक प्रकार के उपायों से भी, मधुराजा प्रवेश नहीं कर सका। और त्रिशूलरत्न भी, उसके पास नहीं था, उसे भी

आयुधशाला में छोडकर, उपवन में गया था। त्रिशूल रहित होनेपर भी, महाअभिमानी राजामधु ने शुत्रुघ्न से समझौता नहीं किया। और युद्ध के लिये तैयार हुआ। तब शत्रुघ्न के योद्धा भी, युद्ध के लिये निकले, दोनों में परस्पर महायुद्ध हुआ। रथोपर, घोडोपर, हाथीपर बैठे योद्धा परस्पर में युद्ध करने लगे। अनेक प्रकार के शस्त्रों सहित महासमर्थवान होकर सभी युद्ध करने लगे। उस समय मधु की सेना के गर्व को, नहीं सहन करता हुआ, क्रतान्तवक्र सेनापति ने मधु की सेना में, प्रवेशकर क्रीडा करने लगा। जैसे स्वयंभू उद्यान में इन्द्र क्रीडा करे। तब राजा मधु का पुत्र राजकुमार लवणार्णव शुत्रुघ्न को देख, युद्ध करने आया। अपने बाणों से कृतान्तवक्र को ढक दिया, कृतान्तवक्र भी, आशीविष समान बाणों से, राजकुमार को छेदने लगा। धरती ओर आकाश बाणों से भर दिया, दोनों महायोद्धा सिंह समान बलवान, हाथीपर बैठे क्रोध सहित युद्ध करनेलगे। कृतान्तवक्र ने लवणार्णव के वक्षस्थलपर बाण चलाया, उसका कवच तोड दिया। तब लवणार्णव ने कृतान्तवक्र पर तोमरजाति के शस्त्र चलाये। गदा, खड्ग, चक्र, इत्यादि अनेक शस्त्रों से परस्पर महायुद्ध करते रहे। बहुत समयतक युद्ध हुआ, कृतान्तवक्र ने लवणार्णव के, महावक्षस्थल पर, बाणों से घाव किया, तब वह पृथ्वीपर गिरा। जैसे स्वर्गों के देव चयकर मध्यलोक में आकर जन्म लेते हैं। ऐसे लवणार्णव राजकुमार, बलशाली पुण्य के क्षय से, मरण को प्राप्त हुआ। तब पुत्रको मरा देख राजा मधु, कृतान्तवक्र पर दौडकर, युद्ध करने आया। तब शुत्रुघ्न ने मधुको आतेही रोका। जैसे नदीके प्रवाहको पर्वत रोके। राजा मधु महाबलवान, पुत्र के मरणका दुखरूपी शोक से, महाक्रोध का भरा युद्ध करने लगा। आशीविष सर्प की दृष्टि समान, मधु की दृष्टि शुत्रुघ्न की सेना के लोग देख नहीं सके। जैसे तेजपवन के योग से, पत्तों के समूह उड जाते है, ऐसे मधुराजा को देख, शत्रुघ्न की सेना भागने लगी। पुनः शुत्रुघ्न को मधुके सामने जाता देख, शुत्रुघ्न की सेना को शांति मिली, शत्रुसे सभी लोग डरते थे, परन्तु अपने स्वामी को प्रबल देख, सब युद्ध के लिये आये। शुत्रुघ्नको आया देख, मधु के योद्धा, कोईभी रणमें ठहर नहीं सके। जैसे जिनशासन के ज्ञाता स्याद्वादी, उनके सन्मुख एकान्त वादी, ठहर नहीं सकते। जो मनुष्य शत्रुघ्न से युद्ध करना चाहते हैं, वह तत्काल मरण को प्राप्त होते हैं, मधु की सेना के लोग, अतिव्याकुल होकर, मधुकी शरण मे आये। मधु महाशक्तिशाली शुत्रुघ्न को सामने आता देख,

शुत्रुघ्न की ध्वजा तोड दी। शत्रुघ्न ने बाणों से, मधु के रथों के घोडों को मारा, तब मधुने क्रोधित होकर दूसरे हाथीपर चढ़कर, शत्रुघ्नपर बाण चलाये, सो शुत्रुघ्न ने सभी बाणों को बीच मे ही काटदिये। तब शत्रुघ्न ने, मधुपर बाणचलाये, बखतर तोडदिये, जैसे अपने घर मेहमान आये, उसका अच्छी तरह आदर सत्कार करे, ऐसे शत्रुघ्न ने रण में राजा मधु का शस्त्रों द्वारा सत्कार किया।

शत्रुघ्न को बलवानजान राजामधु का ससार से विरक्त हो सन्यास धारण करना

अथानंतर राजा मधु महा विवेकी, ज्ञानी शत्रुघ्न को दुर्जय जान, और अपने को त्रिशूलरत्न से रहितजान, एवं पुत्रकी मृत्युको देख, अपनी आयु अल्पजान अथवा मुनिके वचनोंको यादकर, चिन्तवन करने लगे। अहो! जगत का सम्पूर्ण ही आरम्भ, महाहिंसा रूप दुख को देने वाला है। इसलिये उसको शीघ्रता से त्याग करता हूँ। यह क्षणभंगुर ससार का चरित्र उसमें अज्ञानी जीव ही, लीन रहते हैं। इस संसार में धर्म ही प्रशंसा योग्य है, और पापरूप क्रियायें जो अशुभ, वे प्रशंसा योग्य नहीं हैं। महानिंद्य पापकर्म नरक निगोद का कारण है, दुर्लभ मनुष्य जीवन को प्राप्त कर जो धर्म संयम तपमे लीन नहीं होता है, वह पापी अनन्तभव संसार में भ्रमण करता हैं। मेरे जैसे पापी ने, असार संसार को साररूप जाना, क्षणभंगुर शरीर को शाश्वत जाना, आत्मा का हित करने वाला कार्य नहीं किया। प्रमाद के वश होकर रोगसमान यह इन्द्रियो के भोग, अच्छे जानकर मैने भोगे। जब मैं स्वाधीन था, तब मुझे सद्‌बुद्धि नहीं हुई, अब अन्तकाल आया क्या करूँ। घर में आग लगी, तब तालाब खुदवाना किस कामका, जब सर्प ने काटा तब विदेशों से मत्र वादियों को बुलाने से क्या, दूर देशों से औषधी मगायें तो क्या फायदा। इसलिये अब सबचिन्ता छोडकर निराकुल होकर, अपना मन आत्म साधना में लगाऊँ। यह विचारकर, राजा मधु धीर वीर, बाणो से शरीरपर घाव लगे हुये, रक्त बहता हुआ, शरीर में अनेक प्रकार की वेदना से युक्त, होने पर भी, हाथीपर बैठे ही, भाव मुनि हो गये। अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधुओं को, मन, वचन, काय, से मेरा, बारम्बार नमस्कार हो। अरहंत, सिद्ध, साधु तथा केवली भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म ही मंगल है। यही लोक में उत्तम है, इन्हीं का मेरे शरण है। अढ़ाई द्वीप में पन्द्रह कर्मभूमि, उनमें भगवान अरहन्त देव, एवं विद्यमान बीस तीर्थंकर हैं, वे त्रिलोकीनाथ मेरे ह्रदय में विराजमान है, मैं बारम्बार उन्हें नमस्कार करता हूँ। अब मैं जीवन पर्यंत के लिये, सभी पापों की क्रियाओं

का त्याग करता हूँ। मेरे चारो प्रकार के आहार का त्याग, जीवन भर के लिये है। जो मैंने राग, द्वेष, मोह, प्रमाद, अज्ञानता से पूर्व में पाप किये हैं, उनकी मै निन्दा करता हूँ। और सम्पूर्ण परिग्रह का त्याग करता हूँ। अनादि काल से, इस ससाररूपी वनमें, जो मैंने कर्मबंध किये हैं, वह मेरे दुष्कृत मिथ्या हो, मुझे कोई फल मत देओ, अब मैं तत्त्वज्ञान में लगा, तजने योग्य जो रागद्वेषादि उनको मैं छोडता हूँ, और लेने योग्य जो, निजभाव उनको मैं ग्रहण करता हूँ। ज्ञानदर्शन मेरा स्वभाव ही है, वह मेरे से अलग नहीं है। और जो शरीरादि के सम्पूर्ण पर पदार्थ कर्मों के संयोग से, प्राप्त हुये हैं। वे सब मेरे नहीं हैं। मेरी आत्मा से भिन्न हैं। शरीर त्याग के समय, ससारी जीव भूमि का, एवं तृण का संस्तर ग्रहण करते हैं। वह सस्तर यहॉ नहीं है। यह जीव ही पापरूपीबुद्धि से रहित होता है। तब अपने आप ही सांथरा समाधि ग्रहण करता है।

भावार्थ—तीर्थंकर प्रभु ने समाधि तीन प्रकार की बताई है। उसमें उत्तम सल्लेखना बारह वर्ष की कही है, बारह वर्ष में क्रम क्रम से व्रत, उपवास, रसत्याग एव नीरस भोजन, तथा कषायों का शमन, इन्द्रियो का दमन, करते हुये शरीर का शोषण करते हैं। और मध्यम सल्लेखना अपनी शक्ति एव शरीर की शिथिलता को देखकर, अन्तर्मुहूर्त से लेकर बारहवर्ष के अन्दर तक त्याग, सयम, नियम, यम, पूर्वक सल्लेखना ग्रहण करने को कहा है। और जघन्य रूप से यह सल्लेखना अर्न्तुहूर्त के लिये कही है। यह तीनों ही प्रकार की संल्लेखना मोक्ष का कारण है। उत्कृष्ट समाधिमरण करने वाले, एक दो तीनभव में, और जघन्य रूप से समाधि मरण करने वाले को सात आठभव में मोक्ष सुख प्राप्त होता है? इसी प्रकार मरण के पॉच भेद जिनेन्द्र भगवान ने कहें है। पंडित-पडित मरण, पडित-मरण, बाल-पंडित मरण, बाल-मरण, बाल-बाल मरण। पडित-पंडित मरण केवली भगवान ही करते है। पंडित-मरण मुनिराज करते है। बाल-पंडित मरण व्रती संयमी पंचम गुणस्थान वाले जीव करते हैं। बालमरण अविरत सम्यग्दृष्टि श्रावक करते हैं, और बाल-बालमरण मिथ्यादृष्टि जीव करते हैं। बाल-बाल मरण चारो गति के जीवो के होता है। पंडित मरण के तीन भेद कहे हैं, प्रायोपगमन, इंगनिमरण और भक्त प्रत्याख्यान। प्रायोपगमन, समाधि करने वाले मुनिराज अपने शरीर से निष्प्रह होकर दण्डवत या कायोत्सर्ग मुद्रा में रहते हैं। अपने शरीर की सेवा न स्वयं करते हैं और न दूसरों से कराते हैं। इंगनिमरण में अपने शरीर

की स्वयं सेवा करते है, परन्तु दूसरों से नहीं कराते हैं। भक्तप्रत्याख्यान मरण में, अपने शरीर की सेवा, स्वयं भी करते है, और दूसरों से भी, कराते हैं। राजा मधु ने, ऐसा चिन्तवनकर दोनों प्रकार के अन्तरंग बहिरंग परिग्रह का, भावो से त्यागकर, हाथी की पीठपर बैठे ही सिर के बालो का केशलोंच करने लगे। शरीरपर घावों की वेदना होनेपर भी महादुर्धर धैर्य को धारणकर जघन्य रूप से, सल्लेखना स्वीकार कर, शरीर का ममत्व छोड आत्म चिन्तवन करने लगे। संसार के सभी जीवो को, मैं क्षमा करता हूँ, और सभी जीव मुझे क्षमा करे। मैं शत्रु भावो को छोडकर, मित्र भावों को ग्रहण करता हूँ। भावों से मधुराजा महा मुनि बने। परिणामो में अति निर्मलता जागृत हुई। तब मधुराजा को परम शात मुद्रा, एव केशलोच करते देख शुत्रुघ्न ने नमस्कार कर कहाँ हे साधु! मै अपराधी हूँ, मेरे दोषों को क्षमा करना। आकाश मे देवॉगनायें संग्राम देखने आई थी, उन्होने राजा मधुपर, कल्पवृक्षों के पुष्पो से वर्षा की, मधु का वैराग्य देख, देवों को भी आश्चर्य हुआ। पुन राजामधु महाधीर वीर वैरागी, भावमुनि एकक्षण मात्र मे समाधि पूर्वक मरणकर, महासुख का स्थान तीसरा सानतकुमार स्वर्ग मे उत्तम देव हुये। और शत्रुघ्न मधु की स्तुति करता हुआ, मथुरानगरी मे प्रवेश किया। जैसे हस्तिनापुर मे जयकुमार ने प्रवेश किया। गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं। हे राजन्! प्राणियो को इस संसार मे कर्मो के कारण अनेक प्रकार की अवस्थाये प्राप्त होती है, इसलिये उत्तम लोगो को सदा अशुभकर्म को छोडकर, शुभकर्म करना चाहिये। शुभकर्म के प्रभाव से, सूर्य समान कांति को प्राप्त होवेंगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे मधुका युद्ध और वैराग्य एव लवणार्णव का मरणवर्णन करनेवाला नवासीवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-90

मथुरा में असुरेन्द्र कृत उपद्रव से लोगों में व्याकुलता

अथानंतर असुरकुमारों के इन्द, जो चमरेन्द्र महाप्रचड उनका दिया, जो त्रिशूलरत्न राजामधु के पास था, त्रिशूलरत्न के अधिष्ठाता देव, त्रिशूल को लेकर स्वामी चमरेन्द्र के पास गये। और मधु के मरण का सभी वृत्तान्त कहा,

असुरेन्द्र की और मधु राजा की महा मित्रता, सो वह पाताल से निकलकर क्रोध सहित मथुरा में आने के लिये तैयार हुआ, उस समय गरुडेन्द्र, असुरेन्द्र के पास आकर पूछा हे दैत्येन्द्र! आप किस तरफ गमन करने जा रहे हो। तब चमरेन्द्र ने कहा, जिसने मेरे मित्र मधुको मारा है, उसे मैं कष्ट देने जा रहा हूँ। तब गरुडेन्द्र ने कहा, क्या विशल्या की महिमा तुमने नहीं सुनी है? तब चमरेन्द्र ने कहा, वह शक्ति विशल्या की, कुमारी अवस्था में ही थी, अब विशल्या निर्विष भुजंगी समान है, जब तक विशल्या का वासुदेव से विवाह नहीं हुआ था, तब तक ब्रह्मचर्य के प्रभाव से, अतुल एवं अद्‍भुत शक्ति थी। अब वह शक्ति, विशल्या में नहीं है। जो निरतिचार ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करते हैं, उनके गुणो की महिमा कहने में, नहीं आती है। शील के प्रभाव से, देव मनुष्यादि सभी जीव भक्ति करते हैं। जब तक शीलरूपी खड्‍ग को धारण करते हैं, तब तक किसी से जीते नहीं जाते है। शीलव्रत महादुर्जय है। अब विशल्या पतिव्रता है, लेकिन ब्रह्मचारिणी नहीं है। इसलिये उसमें वह शक्ति नहीं। मद्य, मास, मधु, मैथुन, मक्खन ये सब महापाप है। इनको सेवनकरने से आत्मशक्ति जागृत नहीं होती है। जिनका व्रत, शील, नियमरूपी कोट नाश नहीं हुआ है। उनको कोई विघ्न करने मे समर्थ नहीं है, परम मोक्ष का कारण एक अखड ब्रह्मचर्य व्रत है। अब मैं मेरे मित्र के शत्रु के पास जाऊँगा। और आप अपने स्थान जाओ। गुरुद्रेन्द्र से ऐसा कहकर चमरेन्द्र मथुरा में आया, मित्र के मरण से क्रोधित होकर, और मथुरा मे वही उत्सव देखा, जो मधु के समय मे था। तब चमरेन्द्र ने सोचा कि ये लोग महादुष्ट कृतघ्न हैं। देशका स्वामी पुत्र सहित मर गया है, और अन्य राजा आकर बैठा है। फिर भी इनको शोक नहीं, जिसके भुजाओ की छाया प्राप्तकर, बहुत काल तक सुख से रहे। उस राजा मधुकी मृत्यु का, इनको दुख नहीं है, ये महापापी है। इन पापियों का मुख नहीं देखना चाहिये। ऐसा विचारकर मथुरा के लोगो को, एव देश को नाशकरने का उपाय किया। महाक्रोध के आवेश से, चमरेन्द्र महा उपसर्ग करने लगा। अनेक लोगों को, अनेक प्रकार के, रोगों से दुखी किया। प्रलयकाल की अग्नि समान, रोगो को फैलाकर, मनुष्यरूपी वनको, भस्मकरने का, पुरुषार्थ किया। जो जहाँ खडा था, वो वहाँ ही मर गया, और जो बैठा था वह वहाँ बैठा ही मर गया, जो जहाँ सोया था, वह वहाँ ही सोया रह गया। मरी रोग फैलाया। लोगों को रोगो का उपसर्ग देख, देवों के भयसे शत्रुघ्न अयोध्या आया। तब बलभद्र,

नारायण ने भाई को जीतकर शूरवीरता से आया जान, अतिहर्षित हुये। और शुत्रुघ्न की माता सुप्रभा ने भगवान की, अद्भूत पूजा कराई। दुखी जीवों को दया से, और धर्मात्मा जीवों को विनयपूर्वक, अनेक प्रकारका दान दिया। अयोध्या महासुन्दर है ही, रत्न स्वर्ण के मन्दिरों से सहित, देवों की नगरी समान है। कामधेनु समान सभी कामना को पूर्ण करने वाली। तथापि शत्रुघ्न का जीव मथुरा मे अति आसक्त, सो अयोध्या मे अनुरागी नहीं हुआ। जैसे कई दिन सीता बिना, राम उदास रहे, ऐसे शुत्रुघ्न मथुरा बिना अयोध्या में उदास रहा। जीवों को सुन्दर वस्तु का संयोग स्वप्न समान क्षणभंगुर है। परम दाह को उत्पन्न करता है। जैसे जेष्ठ का सूर्य, अधिक आताप को उत्पन्न करता है। अतः संसार की वस्तु में राग नहीं करना आत्म सुख में राग करना, चाहिये।

(इति श्रीरविषेणाचार्य विरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे मथुराके लोगोको चमरेन्द्रकृत उपसर्गका वर्णन करनेवाला नब्बेवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-91

शुत्रुघ्न के पूर्वभव तथा मथुरा में अनेक जन्म धारण करने से अतिअनुराग

अथानंतर राजाश्रेणिक गौतमस्वामी से पूछते है, हे भगवन! किस कारण से शत्रुघ्न ने मथुरा की इच्छा की। अयोध्या से भी अधिक मथुरा का निवास क्यों अच्छा लगा। अनेक राजधानी स्वर्गसमान उनकी इच्छा नहीं करके मथुरा को ही क्यों चाहा। ऐसी मथुरा से ही क्या प्रीति? तब गौतमस्वामी ज्ञानके समुद्र कहनेलगे, हे श्रेणिक! इस शत्रुघ्न ने अनेक भवोंतक मथुरा में जन्म लिया। इसलिये इनको मधुपुरी से अति स्नेह हुआ। यह जीव कर्मों के सम्बन्ध से, अनादि काल तक ससार सागर में रहता है, और अनन्तभवों को धारण करता है। यह शत्रुघ्न का जीव अनन्तभवों तक, भ्रमणकर मथुरा में एक यमनदेव नाम का मनुष्य हुआ, महापापी धर्म से विमुख वह मरकर शूकर, खर, कौवादि के जन्म मरण के पश्चात् बकरा हुआ, वह अग्नि में जलकर मरा। वहॉ से भैंसा बना, वह

जल भरने का बोझा लादता था। वह छह बार भैसा की पर्याय में जन्म मरण किया, पुन: वहॉं से मरकर नीचकुल मे निर्धन मनुष्य हुआ। हे श्रेणिक! महापापी जीव नरक मे जाता है। और पुण्यवान जीव स्वर्ग में देव होता है। पुण्य पाप के मिश्रण से मनुष्य होता है। पुन: यह जीव कुलकर नाम का ब्राह्मण हुआ, रूपवान था लेकिन शीलरहित था, एक समय नगर का राजा दिग्विजय करने के लिये अन्यदेश गया, उनकी ललीतारानी महल के झरोखे में बैठी थी, सो पापिनी इस दुराचारी विप्र को देखकर, मोहित हुई। और ब्राह्मण को महल मे बुलाया। एक आसनपर रानी और ब्राह्मण दोनो रहते थे, उसीसमय राजा दूर से चलकर अचानक आ गया, और उसे महल मे रानी के पास देखा। तब रानी ने मायाचार से कहा, यह भिक्षुक है, फिर भी राजा ने नहीं माना। राजा के किकर ब्राह्मण को पकडकर राजा की आज्ञा से, मारने के लिये नगर के बाहर ले जा रहे थे। तब कल्याण नाम के साधुने देखकर कहा, अगर तू मुनि बनना चाहता है, तो मै तुझे छुडाता हूँ। तब उसने मुनि बनना स्वीकार किया। तब मुनिराज ने उसे किकरो से छुडवा दिया। वह मुनि होकर तपस्या कर स्वर्ग में ऋजुविमान का स्वामी देव हुआ। हे श्रेणिक! धर्म से क्या क्या नहीं होता है। मथुरा मे चन्द्रभद्र राजा उनकी धरा रानी उसके भाई सूर्यदेव, अग्निदेव, यमुनादेव, और आठपुत्र-श्रीमुख, सुमुख, सममुख, इन्द्रमुख, प्रमुख, उग्रमुख, अर्कमुख, परमुख। और चन्द्रभद्र राजा की दूसरी रानी कनकप्रभा उसके कुलधर ब्राह्मणका जीव स्वर्ग में देव था, वह वहॉसे चयकर अचलनामका पुत्र हुआ। वह कलावान, गुणवान, रूपवान, देवकुमारसमान क्रीडा करता था। एक अंकनाम का मनुष्य धर्मकी अनुमोदना से, मर कर श्रावस्तीनगरी मे एक कपनाम का पुरुष, उसकी अगीका नामकी स्त्री उसके अप नाम का पुत्र हुआ महाअविनयी अज्ञानी। तब कंपने अप को घर से निकाल दिया, वह महादुखी होकर जगह जगह भ्रमण करता रहा। और अचलकुमार पिताको प्रिय, अचलकुमार की सोतेली मॉ धरा उसके तीनों भाई और आठो पुत्र, उन्होंने एकान्त मे अचल को मारने का विचार किया, यह बात अचलकुमार की माताको मालुम हुई, तब पुत्र को माता ने घरसे बाहर भेज दिया, वहॉं तिलकवन में अचलकुमार के पैर में काटा लगा, तब वहॉं कंपका पुत्र अप लकडी का बोझा लेकर आ रहा था, अचलकुमार को कांटे से दुखी देख, अपनी लकडी का बोझा नीचे रख, सूई से अचलकुमार का दयापूर्वक काटा निकाला। और वह कांटा

अचलकुमार को दिखाया, तब कुमार अतिप्रसन्न हुआ और अप से कहा कि तू मेरा नाम अचलकुमार याद रखना। और मुझे राजा बना सुने, वहाँ तू मेरे पास आना। इसप्रकार कहकर अपको विदा किया। और राजपुत्र महादुखी होकर कौशम्बी नगरी में आया। महापराक्रमी बाणविद्या के गुरु जो विशिषा आचार्य उन्हें जीतकर प्रतिष्ठा प्राप्त की। तब राजा ने अचलकुमार को नगर में बुलाकर अपनी इन्द्रदत्ता पुत्री से विवाह कराया पुण्य के प्रभाव से राज्य प्राप्त किया। अगादि देशो को जीतकर महाप्रतापी महा सेना से युक्त मथुरा में आया। बडी सेना के साथ नगर के बाहर डेरा डाला, सभी सामन्तों ने सुना कि, यह राजा चन्द्रभद्र का राजपुत्र अचलकुमार है, तब सभी आकर मिले। चन्द्रभद्र राजा अकेला रहगया, तब रानीधारा के भाई सूर्यदेव अग्निदेव, यमुनादेव इनको समझौता करने के लिऐ भेजा। तब ये सभी वहाँ जाकर राजपुत्र अचलकुमारको देख डरकर भाग आये, और धारा के आठों पुत्र भी भाग गये। अचलकुमार की माता आकर पुत्र को ले गई। और पिता से मिलाया। पिता ने इसको अपना राज्य दिया। एक दिन राजा अचलकुमार नटो का नृत्य देखता था उसीसमय अप आया, जिसने वन मे काँटा निकाला था, उसको दरबान ने धक्का देकर बाहर निकाल दिया। तब राजा ने मना किया, और आप को अपने पास बुलाया बहुत कृपा की जो उसकी जन्मभूमि श्रावस्तीनगरी थी वह उसे दी। यह दोनो मित्र साथ ही रहते थे। एक दिन महासपदा सहित क्रीडाकरने उपवन मे गये, वहाँ यशसमुद्र आचार्य को देखकर दोनो मित्र मुनि बने। सम्यग्दृष्टि परम सयम को धारण कर समाधि पूर्वक मरणकर स्वर्ग मे उत्कृष्ट देव बने, वहाँ से चयकर अचलकुमारका जीव, राजा दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न हुआ, अनेक भव के सम्बन्ध से, शत्रुघ्न को मथुरा से अधिक प्रेम हुआ। गौतमस्वामी ने कहा—हे श्रेणिक! जो प्राणी वृक्ष की छाया में आकर बैठता है, उसे उस वृक्ष से भी प्रीति होती है। जो जीव जहाँ अनन्त भवों को धारण किया, वहाँ की क्या बात? संसारी जीवों को ऐसी ही रीति है। यह अप का जीव स्वर्ग से चयकर कृतान्तवक्र सेनापति हुआ। इस प्रकार धर्म के प्रभाव से दोनो मित्र संपदा को प्राप्त हुये। और जो धर्म कार्य नहीं करते हैं, उनको कभीभी सुख नहीं मिलता है। अनेकभव के प्राप्त किये दुखरूपीमल, उनको धोने के लिये धर्मका सेवन करना ही योग्य है। जल के तीर्थों से मनका मैल नहीं धुलता है। धर्म के प्रभावसे शत्रुघ्न सुखी हुआ ऐसा जानकर विवेकी जीव धर्म कार्य मे पुरुषार्थ

करो। धर्मको सुनकर भी जिनकी आत्म कल्याण की रूची नहीं होती, उनको धर्मश्रवण करना ही वृथा है। जैसे नेत्रवान मानव सूर्य के प्रकाश में भी, कुयें में गिरता है। तो उसके नेत्र वृथा है। अतः धर्म ही जीवों का उपकारी है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे शुत्रुघ्नके पूर्वभवका वर्णन करनेवाला इक्याणवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-92

मथुरा में असुरेन्द्रकृत उपद्रव सप्तचारण ऋषीश्वरों के प्रभाव से दूर होना

अथानंतर आकाश में गमन करनेवाले सप्तचारण ऋद्धिधारीसातऋषि, सूर्यसमान ज्योति के धारी, विहार करतेहुये निर्ग्रंथ मुनिराज मथुरा नगरी मे आये। उनके नाम-सुरमन्यु, स्वरमन्यु, श्रीनिचयजी, सर्वसुन्दरजी, जयवानजी, विनयलालस और जयमित्र। ये सभी महाचारित्र के धारी। राजा श्रीनन्दन, राणी धारणी के सुपुत्र। पृथ्वीपर प्रसिद्ध, पिता सहित प्रीतिकर स्वामी को केवलज्ञान हुआ देख, वैराग्यरूपी ज्ञानको प्राप्त हुये। पिता और इन सातो पुत्रों ने केवली प्रीतिक भगवान के निकट मुनि दीक्षा धारण की। और एक महिने का बालक डमर नाम के पुत्र को राज्य दिया। पिता श्रीनन्दन मुनिराज को केवलज्ञान प्राप्त हुआ, ये सातो ही पुत्र महामुनि चारणऋद्धि आदि अनेकऋद्धियो के धारक श्रुतकेवली हुये। वह चातुर्मास के समय मथुरा के वन में बटवृक्ष के नीचे आकर विराजमान हुये। उनके तप के प्रभाव से चमरेन्द्र के द्वारा फैलाया जो मरी रोग, वह दूर हुआ। जैसे ससुर को देख व्यभिचारणी बहु भाग जाती है। मथुरानगरी के लोग सभी निरोगी हुये। बिना बोये सहज ही अनाज उत्पन्न हुआ। सम्पूर्ण रोगो से रहित मथुरापुरी के प्राणी अतिप्रसन्न हुये, जैसे नयी बधु पति को देख प्रसन्न होती है। वह महामुनि रसत्यागादि तप और दो दिन, तीन दिन, पक्ष मासादि के अनेक, उपवासरूपी तप के धारक, वे ऋषिराज उनको चार महीना चातुर्मास मे एक स्थान पर रहना। तब वे सभी मुनिराज चातुर्मास की स्थापना कर, मथुरा के वन में रहे, और चारणऋद्धि के प्रभाव से चाहे जहाँ जाकर नगर, गॉव, जंगल,

देश में आहार करके आते हैं। एक निमिष मात्र में, आकाश के मार्ग से, पोदनपुर विजयपुरादि गाँवों में, उत्तम श्रावक के घर, करपात्र मे भोजन करके आते हैं। सयम की साधना शरीर के निमित्त से होती है, इसलिये साधु महामुनि आर्यिका आदि आहार करते हैं। कर्मों को नाश करने में, पुरुषार्थी ऐसे वे ऋषि एकदिन धीर वीर महा शात भाव के धारी चारहाथप्रमाण पृथ्वी को देख विहार करते हुये, इर्या समिति पूर्वक, आहार के समय, अयोध्या महानगरी मे, शुद्ध भिक्षा को ग्रहण करने के लिये, अर्हदत्त सेठ के घरपर आये। तब अर्हदत्त सेठ ने विचार किया, कि वर्षा काल में मुनिराजो का विहार नहीं होता है। यह मुनिराज चातुर्मास के पहले तो यहॉ आये नहीं, और यहॉ जो जो साधु विराजमान है, गुफाओ मे नदी के किनारो पर, वृक्षो के नीचे शून्य स्थानों मे वन के चैत्यालयो मे, पर्वतों पर, गिरी कन्दरो मे सभी जगह जहॉ जहॉ चातुर्मास में साधु ठहरे है, वहॉ वहॉ मैने सर्व साधूओ की वदना की है। इन मुनिराजो को अब तक मैने यहॉ अयोध्यानगरी मे अथवा आस पास मे कहीं देखे नहीं। ये आचाराग आगमसूत्र की आज्ञासे विपरीत है। इच्छा से विहार करते है। वर्षाकाल मे भी, भ्रमण करते फिरते हैं। जिनआज्ञा से परांगमुख ज्ञान रहित, आचार्यो की आम्नाय से रहित है। अगर जिनआज्ञा के पालक होते तो चातुर्मास मे, विहार क्यो करते। ऐसा अज्ञानता से सोचकर, सेठ बाहर चला गया। और सेठ की पुत्र वधु ने, नवधाभक्ति पूर्वक शुद्ध प्रासुक आहार मुनिराज को दिया। ऋषिराज आहार लेकर भगवान के चैत्यालय मे आये। वहॉ द्युतिभट्टारक मुनिराज विराजमान थे। ये सातो ही ऋषि ऋद्धिके प्रभाव से धरती से, चार अंगुल ऊपर अलिप्त चले आये। और चैत्यालय के अन्दर धरतीपर पैर रखते हुये आये। तब द्युतिभट्टारक आचार्य उठकर खडे हुये, और विनयपूर्वक आदर से, सप्त ऋषिराजों को नमस्कार किया। और द्युतिभट्टारक के, जितने भी शिष्य थे, उन सबने महाऋषियों की वन्दना की। सभी मुनिराजो ने, आपस मे धर्म चर्चा की। पुन. ये सप्त ऋषिराज तो जिनवन्दना कर, आकाशमार्ग से मथुरा गये। इनको जाने के पश्चात्, अर्हदत्तसेठ चैत्यालय मे आये। तब द्युतिभट्टारक आचार्य ने, कहाकि आज सप्तमहाऋषि महायोगीश्वर, चारणऋद्धि के धारी, महामुनिराज यहॉ आये थे, आपने भी उनकी वन्दना की होगी? वे महाश्रेष्ठपुरुष तप के धारी हैं, चातुर्मास के चार महीना मथुरा के वन में निवास किया, और जहॉ इच्छा हो वहॉ ही आहार के निमित्त जाते। आज अयोध्यानगरी में आकर आहार लिया। और चैत्यालय के दर्शन करने आये।

हमारे से धर्म चर्चा की, वे महातपोधन आकाश गमन गामी, शुभनिर्मल परिणामों के धारी, स्वपर कल्याणी मुनिराज पूज्य हैं। हमारे पापो के नाशक कल्याण के कर्ता हैं। तब वह सेठ अर्हदास श्रावकों मे श्रेष्ठ, आचार्य के मुख से, चारणमुनिराज सप्तऋषिराजो की महिमा सुनकर, दुखी होकर, पश्चाताप करने लगा। धिक्कार हैं मुझे, मैं सम्यग्दर्शन से रहित, मैंने वस्तु के स्वरूप को जाना नहीं, मैं अत्याचारी मिथ्यादृष्टि, मेरे समान ओर अधर्मी कौन होगा? वे महामुनि सप्तऋषिराज मेरे घर, आहार करने के लिये आये, और मैने नवधाभक्तिपूर्वक आहार नहीं दिया, जो साधुको देखकर, सम्मान नहीं करते, वन्दना, दर्शन, पूजा नहीं करते, और भक्तिपूर्वक आहारनहीं कराते, वह श्रावक महामिथ्यादृष्टि हैं, मै पापी पापात्मा पाप का भाजन, महानिंद्य, मेरेसमान और कौन अज्ञानी होगा। मै जिनवाणी से विमुख, मेरे पुण्यरूपी अमूल्यरत्न हाथ मे आकर चला गया, अज्ञानता से मैने खो दिया, पुन· ऐसे महारत्न कैसे मुझे प्राप्त होगे। अब मै क्या करूँ। किससे कहूँ, कहॉ जाऊँ। मेरा ही दोष, मैं किनको दोषी बनाऊँ, ऐसा पश्चाताप करते हुये, सोचने लगे कि, अब मै जब तक उन यतिराजो के दर्शन नहीं करूँगा, तब तक मेरे मन को शाति नहीं मिलेगी। आगम मे कहा है कि, चारणमुनिराज चातुर्मास का निवास तो, एक स्थान पर करते है, और आहार अलग अलग गॉव नगरो में करके आ सकते है। चारणऋद्धि के प्रभाव से उन ऋषियो के शरीर से, जीवो को बाधा नहीं होती, अर्थात् जीव मरते नहीं है। कार्तिकशुक्ला पूर्णिमा पास मे आई जान, सेठ अर्हदत्त सम्यग्दृष्टि श्रावक राजासमान विभूति के धारी, अयोध्या से मथुरा नगरी के लिये परिवार सहित सप्तऋषियो के दर्शन पूजा वन्दनाकेलिये चले। मुनिराजो की महिमा को सुनकर अपनी बार बार निन्दा करते हुये, रथ, हाथी, घोडों पर बैठकर बडी सेना सहित, योगीश्वरों की पूजा के लिये शीघ्र ही चले। शुभध्यान मे तत्पर कार्तिकशुक्ला सप्तमी के दिन ऋषियो के चरणो मे जाकर पहुँचे। उत्तम सम्यक्त्व के धारी विधिपूर्वक, महाऋषियों की वन्दना, पूजाकर, मथुरा में शोभा कराई, मथुरा स्वर्ग समान सुन्दर लगी। यह वृतान्त शत्रुघ्न ने सुनकर, शीघ्र ही घोडेपर बैठकर, सप्त ऋषियो के निकट आये। शत्रुघ्न की माता सुप्रभा भी मुनियो की भक्ति के लिये, पुत्र के पीछे आई। शत्रुघ्न ने नमस्कार कर ऋषियों के मुख से धर्मोपदेश सुना। मुनिराज कहने लगे, हे राजन्! यह संसार असार है, वीतराग भगवान का मार्ग ही सार है। श्रावक के

बारह व्रत होते हैं, मुनियो के अठाईस मूलगुण कहे हैं। पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत ये श्रावक के व्रत हैं। और पाचमहाव्रत, पांचसमिति पांचइन्द्रियनिरोध, छह आवश्यक, सात शेषगुण ये अठाईस मूलगुण, साधुओं के होते है। मुनिराज तप की वृद्धि के लिये, शुद्ध प्रासुक सूर्य के प्रकाश मे दिनमे एक बार आहार ग्रहण करते हैं। शरीर की पुष्टी के लिये नहीं। तब शत्रुघ्न ने भक्ति पूर्वक प्रार्थना की, कि हे देव! आपके आने से मथुरानगरी में मरी रोग नष्ट हुआ, रोग, दुर्भिक्ष, विघ्न, उपद्रवादि सब शांत हुये प्रजा के दुख दूर हुये। सब ऋद्धि, सिद्धि, समृद्धि, संपति, आदि से प्रजा सुखी हुई। इसीलिये आप कुछ दिन यहाँ ही विराजमान रहो।

तब यतिराज! मुनिराज! कहने लगे। हे शत्रुघ्न! जिनेन्द्र भगवानकी आज्ञासे अधिक रहना उचित नहीं। यह चतुर्थकाल धर्म के प्रकाश का कारण है, इनमें मुनियोका धर्म भव्यजीव ही धारण करते हैं और जिनआज्ञा का, पालन करते हुये, महा मुनिराज, केवलज्ञान को प्राप्त करते है। मुनिसुव्रतनाथभगवान तो मोक्ष गये, अब नमि, नेमी, पार्श्व, महावीर ये चार तीर्थंकर और पचमकाल जो दुखमाकाल उसमे धर्म की न्युनता होती रहेगी। जिनशासन महान है, फिर भी उस समय पाखडी लोग जिनशासन को छोड निर्दयी, दयाधर्म को लोप करने वाले, हिसा मार्ग मे प्रवृति करेंगे। उस समय शमशान समान गॉव, भूत समान खोटी चेष्टाये, करने वाले महाकुधर्म में प्रवीण, क्रूर, चोर, पाखडी, दुष्टजीव पृथ्वीपर लोगोको दुखी करेंगे, किसान दुखी होगें, प्रजा निर्धन होगी। महाहिसक जीव, अन्य जीवोंका घात करेंगे, निरन्तर हिंसा की वृद्धि होगी, पुत्र माता पिता की आज्ञा से विमुख होगे, और माता पिता का भी वात्सल्य कम होगा। पुत्र स्नेह से रहित होंगे, कलिकाल मे राजा लुटेरे होगे, कोई सुखी नजर नहीं आयेगा। कहने मात्र के जीव सुखी, वे पापी मन से दुर्गति को देने वाली, कुकथाओ से परस्पर पाप उत्पन्न करेगे। हे शत्रुघ्न! कलिकाल में कषायों की वृद्धि जीवो मे विशेष होगी, सम्पूर्ण अतिशय नष्ट होंगे, चारण मुनिराजो का एव देवो का या विद्याधरों का आवागमन नहीं होगा। अज्ञानी लोग नग्न दिगम्बर मुनियों को देख निन्दा करेंगे। मिथ्यादृष्टि अज्ञानीजीव अयोग्यक्रिया को योग्य जानेगे, जैसे पतग दीपक की शिखा में गिरता है, ऐसे अज्ञानी जीव पापरूपी मार्ग में गिरकर दुर्गति के दुखों को भोगेंगे। और जो शांत स्वभावी श्रावक या साधु हैं, उनकी दुष्टजीव निंदा करेंगे। और जो विषयों में रत रहने वाले, भोगों को भोगने वाले हैं, उनकी भक्ति

से पूजा करेंगे। और जो दीन अनाथ जीवो को दया से भोजन नहीं देगा, उसका जीवन वृथा हैं, जैसे पर्वतपर बोया बीज उसको निरन्तर सींचे तो भी अनाज की उत्पत्ति नहीं होती है, ऐसे कुशीलभोगीपुरुषो को भक्ति से विनय पूर्वक दिया हुआ भोजन, कल्याण कराने वाला नहीं है, और जो मुनियों की निंदा एवं अविनय करते है, मिथ्यामार्गी साधु, तापसी, पाखडी, आदि की भक्ति से पूजा करते हैं, वह महापापी होते हैं, ऐसे जीव नरक निगोद के पात्र होते है। वह चंदन के वृक्ष को छोडकर, कांटे के वृक्षको स्वीकार करते है, ऐसा जानकर। हे शत्रुघ्न! तुम दान पूजा श्रावक की क्रियाओं को करते हुये, अपना जीवन कृतार्थ करो, गृहस्थी के लिये, दान और पूजा ही, श्रेष्ठ कल्याणकारी वस्तु है, और सम्पूर्ण मथुरा के लोग धर्म कार्य में लीन रहो, दयाधर्म का पालन करो, सहधर्मियो से, वात्सल्य धारण करो और जिनशासन की प्रभावना करो, एव घर घर मे चैत्यालय बनाकर, जिनप्रतिमा को विराजमान करो, अभिषेक पूजा की क्रिया नित्य ही करो, उससे सब रोगो की शाति होगी, जो जिनधर्म की आराधना नहीं करेगा, और जिनके घर मे, जिनेन्द्र भगवान का, अभिषेक पूजा नहीं होगा, दान नहीं करेगा, उसे अनेक आपत्ति, कष्ट, सकट, रोगादि का उपसर्ग होगा। जैसे मृग को, सिह भक्षण करता है, वैसे ही धर्म कार्य नहीं करने वालो को मरी आदि अनेक भयंकर रोगरूपी सिहभक्षण करेगा। अगूठा प्रमाण ही जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा जिनके घर में विराजमान होगी, उनके घर मरी आदि जो महा भयानक रोग, जैसे डाक्टरो के इलाज से भी ठीक नहीं होने वाले, ऐसे रोगी जीव भी प्रतिदिन भगवान का अभिषेक शान्तिधारा पूजन करेगा, उसके घर में अथवा शरीर मे कभी रोग नहीं रहेगा, उनके सभी रोग ऐसे ही दूर से भाग जायेगे। जैसे गरुड के भय से नागिन भाग जाये। मुनिराजो का यह धर्मोपदेश सुनकर, शत्रुघ्न विनयपूर्वक कहने लगा, कि हे प्रभो! जैसे आपने आज्ञा दी है, वैसा ही सभी लोग धर्मकार्य मे प्रवृति करेगे। मेरे राज्यमे मेरी प्रजाके सभी लोग प्रतिसमय, ऐसी ही धर्म की प्रवृत्ति में लगे रहेगे।

अथानतर ऋषिवर चारणऋद्धिधारी मुनि, आकाश मार्ग से, विहारकर अनेक निर्वाण क्षेत्रो की वंदनाकर, सीताके घर आहार करने आये। कैसे हैं मुनि? तप ही है धन जिनके। सीता ने महाहर्ष पूर्वक श्रद्धादि गुणों से मंडित, शुद्धआहार नवधाभक्तिपूर्वक मुनिराजो को पारणा कराया, मुनिराज आहार लेकर आकाशमार्ग

से, विहार कर गये, शत्रुघ्नने नगरीके अन्दर, और बाहर अनेक जिनमन्दिर बनवाये, घर घर में जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमायें विराजमान करवाई, नगरमें सभीलोगों का रोग उपद्रव शांत हुआ, वन उपवन फल पुष्पो से सुशोभित हुये, बावड़ियाँ सरोवरों में कमल के फूल खिले। कैलाशपर्वत के तट समान जिनमदिर, सुख रूपी जीवन को प्राप्त कराने के लिये बनवाये। किसानादि सभी लोग सम्पदा से भरे, सुख से निवास करने लगे। मन्दिरके शिखर समान ऊँचे ऊँचे अनाजों के ढेर लगे हुये सुशोभित हो रहें हैं। राम के राज्य में देवो समान, सभी प्रजा के लोग, रत्न स्वर्ण से भरी पृथ्वी, एव अतुल विभूति के धारक, धर्म अर्थ काम मे तत्पर, सुखमय जीवन से, समय व्यतीत करते रहे। शत्रुघ्न मथुरा में सुख से राज्य करता है। रामके प्रतापसे अनेक राजाओं पर आज्ञा करता सुशोभित हुआ। जैसे देवो मे वरुण सुशोभित होता है। इस प्रकार मथुरापुरी में ऋद्धिधारी मुनियो के प्रतापसे सभी उपद्रव दूर हुये। जो जीव इस अध्याय को पढता है, सुनता है, वह पुरुष शुभनाम, शुभगोत्र, सातावेदनीय, शुभआयु, का बध करता है। जो साधुओं की भक्ति मे, अनुरागी होते हैं, और साधुओ का समागम चाहते हैं, उनको मन वांच्छित फल की प्राप्ति होती है। जो साधुओं के चरणो को प्राप्तकर, या चरणों मे रहकर, धर्म की आराधना एव गुरु की भक्ति करता है, वह प्राणी सूर्य से भी, अधिक यशकीर्ति की प्राप्ति करता है। गुरुभक्ति ही मोक्षसुख का साधन है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे मथुराका उपसर्गनिवारण वर्णन करनेवाला बानवेवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-93

राम को श्रीदामा और लक्ष्मण को मनोरमा की प्राप्ति

अथानंतर विजयार्धपर्वत की, दक्षिणश्रेणी में, रत्नपुरनगर वहा का राजा रत्नरथ, उनकी रानी पूर्णचन्द्रानना, उसकी पुत्री मनोरमा, का विवाह कराने के लिये राजा व्याकुल होकर, मंत्रियों से कहता है, कि राजकुमारी का विवाह किनसे कराया जाये। इसप्रकार राजाकी चिन्ता से कई दिन बीत गये, एक दिन

राजसभा में, नारद आये, राजा ने उनका बहुत सम्मान किया, और नारदऋषि से, राजा ने, पुत्री के विवाह का वृत्तान्त पूछा, तब नारदऋषि ने कहा राम का भाई लक्ष्मण, नारायण, महासुन्दर है। जगतमे मुख्य, तीनखंड का अधिपति है, तीनखड के सभीराजा चक्रके प्रभावसे, नमस्कार करते है, देव, विद्याधर, किंकर होकर, उनके चरणो में खडे रहते। ऐसे महापुरुष के साथ, आपकी राजकुमारी का विवाह कराया जाये। जब नारद ने, ऐसे कहा, तब रत्नरथ के पुत्र हरिवेग, मनोवेग, वायुवेगादि महामानी प्रलयकाल की अग्निसमान प्रज्वलित होकर कहने लगे, वे हमारे शत्रु है, उनको हम मारना चाहते है, उन्हे हम राजकन्या कैसे देंगे? यह नारद दुराचारी है, इसे यहॉसे निकालो, ऐसे वचन राजपुत्रो के सुनकर, किंकर दौडकर नारदके पास आये, तब नारद आकाशमार्ग से, विहारकर, शीघ्र ही, अयोध्यानगरी में, लक्ष्मण के पास आये। अनेक देशो की चर्चा करने के, पश्चात् रत्नरथकी पुत्रीमनोरमा का चित्र दिखाया। वह राजकुमारी, तीनलोक मे परम सुन्दरी रूपवान, उस चित्रपटको, लक्ष्मणने देखा, और देखते ही मोहित हुआ। यद्यपि महाधीर वीर है, फिर भी राजकुमारी से, मोहित हुआ, मन मे सोचने लगा, कि यह स्त्रीरत्न, मुझे नहीं प्राप्त हो तो मेरा राज्य निष्फल है, और जीवित रहना वृथा है, लक्ष्मण नारदसे कहने लगे हे भगवन्! आपने मेरे गुणोका वर्णन किया, और उन दुष्टो ने आपसे विरोध किया, सो वे पापी, प्रचड, मानी, महाक्षुद्र, दुरात्मा, शुभ कार्य के विचारो से रहित है, मैं उन दुष्टों का मान दूर करूँगा। आप अपना मन शात करो। आपके चरण मेरे सिरपर है। उन दुष्टों को मै आपके चरणो मे गिराऊँगा, ऐसा कहकर विराधित विद्याधर को बुलाया। और कहा कि रत्नपुरनगर का राजा रत्नरथसे, हम युद्ध करने जायेगें। अत· तुम युद्ध की तैयारी शीघ्र ही कराओ। इसलिये सभी विद्याधरो को पत्र लिखकर बुलाओ। रणकी सर्वसेना को तैयार करो। तब विराधितने सबको, पत्र भेजे। सभी राजा महासेना सहित शीघ्रही आये। लक्ष्मण राम सहित, सभी राजा विद्याधर सेनाको साथलेकर रत्नपुर की तरफ चले। वे शीघ्रही रत्नपुर जा पहुँचे। तब रत्नरथ राजा, परसेना समीप आई जान, अपनी समस्त सेना सहित युद्ध के लिये निकले, चक्र, करोत, कुठार, बाण, खडग इत्यादि शस्त्र अस्त्र आयुद्धों से परस्पर महायुद्ध हुआ, अप्सराये आकाश से, युद्ध देख योद्धाओंपर पुष्पवृष्टि करने लगी, लक्ष्मण, परसेना रूपी समुद्र को सुखाने के लिये, बडवानल समान, स्वयं युद्ध

करने लगे, लक्ष्मणके भयसे, रथ, तुरंग, हाथीयो, के धारी बलभद्र, श्रीराम, सुग्रीव, हनुमान, इत्यादि सभी युद्ध करने लगे। ऐसे बलशाली योद्धाओ को देख, विद्याधरों की सेना ऐसी भागी, जैसे वायु से बादल भाग जाय। तब रत्नरथको और उनके पुत्रों को भागते हुये देख, नारदऋषि, परमहर्षित होकर, ताली बजा बजाकर, हंस हंसकर कहते हैं। अरे रत्नरथके पुत्र हो, तुम महादुराचारी, मंदबुद्धि, लक्ष्मण के गुणोंका वर्णन नहीं सहनकर सके, तो अब अपमानित होकर क्यो भाग रहे हो? तब उन्होने कुछ जवाब नहीं दिया। उसी समय मनोरमा राजकुमारी, अनेक सहेलियों सहित, रथपर बैठकर, महाप्रेमसहित, लक्ष्मण के समीप आई, जैसे इन्द्रणी इन्द्र के समीप आये। उसे देख लक्ष्मण शांत हुये। राजकुमारी महारूपवान, गुणवान, महासुन्दर उसको देख, लक्ष्मण का मन प्रसन्न हुआ। तब राजा रत्नरथने, अपने पुत्रो सहित, मानको छोडकर, अनेक प्रकार की भेट लेकर, श्रीराम लक्ष्मण के समीप आये। राजा, देश कालकी मर्यादा को जाननेवाला, राम लक्ष्मण को महाशक्तिशाली देखा। तब नारद सबके बीच में, रत्नरथ को कहने लगे, हे रत्नरथ! अब तेरी क्या शक्ति, तू रत्नरथ है या रजरथ है। बिना प्रयोजन मान करने से, क्या होगा, नारायण बलभद्र से मानकर तू कहाँ जायेगा। और ताली बजाकर रत्नरथके पुत्रोंसे हंस कर कहता है। हे रत्नरथ! के पुत्रों! यह वासुदेव बलभद्र, उनको तुम अपने घर में क्रोधित होकर जैसा मन में आया वैसा ही कहा, अब बलभद्र नारायण के, चरणो में क्यो नमस्कार करते हो, तब वे कहने लगे, हे नारदऋषि। आपका क्रोध भी हमारे लिये सुखको देने वाला हुआ, जो आप हमारे से, क्रोध नहीं करते, तो हमारे को बडे पुरुषों का समागम कैसे होता। ऐसे महापुरुषों की संगति ही, हमें महादुर्लभ है। इस प्रकार कुछ समय तक प्रसन्न होकर चर्चा करते रहे। पुनः सब मिलकर नगर मे गये। श्रीरामचन्द्रजी से, श्रीदामा का विवाह कराया, रतिसमान महारूपवान, उसे प्राप्तकर श्रीराम आनन्द से क्रीडा करने लगे। और लक्ष्मण से मनोरमा का विवाह कराया, वह साक्षात मनोरमा ही है। महापुण्य के प्रभावसे अद्‌भुत अनुपम वस्तु की प्राप्ति होती है। इसलिये हे भव्यजीवों! सूर्य से भी अधिक प्रकाश देने वाला जो वीतराग धर्म का मार्ग, उसे जानकर दयाधर्म की आराधना करो। क्रोध कषाय का त्यागकर, दयाधर्म का पालन करना ही, मानव जीवन का सर्व श्रेष्ठ आभूषण है। अनेक प्रकार के व्रत, संयम, तप, दान, पूजादि सब किया परन्तु जीवों की रक्षा

नहीं की एव दयाधर्म का पालन नहीं किया, तो कुछ भी नहीं किया। जीवों की रक्षासे ही, अपने जीवन की रक्षा होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रामको श्रीदामाका और लक्ष्मणको मनोरमा का लाभ वर्णन करनेवाला तेरानवेवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-94

राम लक्ष्मण के वैभव परिवार आदि का वर्णन

अथानंतर श्री विजयार्धपर्वत के दक्षिणश्रेणी में जितने विद्याधर थे, उन सबको लक्ष्मण ने युद्ध में जीता। वे विद्याधर महाविषधर समान महा क्रोधायमान थे, उन सबको राम लक्ष्मण ने अपने प्रभाव से मानरूपी विष से रहित किये। सभी विद्याधर राम लक्ष्मण के सेवक बनकर चरणो में झुके। उनकी राजधानियॉ देवो की नगरियो के समान, उनके कुछ के नाम सुनो—रविप्रभ, वन्हिप्रभ, कांचनप्रभ, मेघप्रभ, अमृतपुर, लक्ष्मीधरपुर, किन्नरपुर, मेघकूट, चक्रपुर, रत्नपुर, विजयपुर, भद्रपुर इत्यादि बडे बडे नगरों के बडे बडे स्वामी राजा उन सबको राम लक्ष्मण ने वश मे किये। सब पृथ्वी के राजाओं को जीत, सप्तरत्नों सहित लक्ष्मण, उत्तम भोगों को भोगनेवाले नारायणपद को प्राप्त किया। सातरत्नों के नाम—चक्र, शख, धनुष, शक्ति, गदा, खडग, कौस्तुभमणी और राम के चाररत्न-हल, मूसल, रत्नमाला, गदा। इसप्रकार दोनोंभाई भेद भाव से रहित एकमन होकर पृथ्वीका राज्य करते हैं। जब श्रेणिकराजा ने गौतमस्वामी से पूछा—हे भगवान्! मैंने आपके उपदेश से राम लक्ष्मण की महिमा का वर्णन विधिपूर्वक सुना। अब मैं लव अंकुश का जन्म और लक्ष्मण के पुत्रों का वर्णन सुनना चाहता हूँ सो आप कहो, तब गौतमगणधर कहने लगे—हे राजन्! सुनो राम लक्ष्मण जगत में महान श्रेष्ठप्रधानपुरुष निष्कंटक निडर होकर राज्य भोगते रहे। उनके दिन, पक्ष, मास, वर्ष, महासुख से व्यतीत होते रहे। उनको उत्तमकुल उत्तमवंश की, बड़े बडे राजाओं की, राजकुमारियॉ देवॉगना समान, ऐसी सोलह हजार लक्ष्मण की रानियाँ थी। उनमें से आठ पटरानी कीर्तिसमान, लक्ष्मीसमान, रतिसमान, गुणवान, शीलवान,

रूपवान अनेक कलाओ में दक्ष महासौम्य, सुन्दर आकृति वाली, उनके नाम सुनो—प्रथम पटरानी राजा द्रोणमेघ की राजपुत्री विशल्या। दूसरी रूपवती उसके समान कोई रूपवान नहीं। तीसरी वनमाला जो वनोंके पुष्पोंकी मालाही है। चौथी कल्याणामाला। पांचवी रतिमाला। छठी जितपद्मा, सातवीं भगवती। और आठवीं मनोरमा। और श्रीराम बलभद्र की रानियाँ आठहजार देवाँगना समान उनमें चार पटरानी जगत मे प्रसिद्ध। उनमें प्रथम पटरानी यशकीर्ति की धारी शीलवती पति की भक्तिमे परमपात्र, आज्ञाकारणी, उपसर्ग विजेता, राजा जनक की राजपुत्री, परमदुलारी, जानकी (सीता), दूसरी प्रभावतिं, तीसरी रतिप्रभा, चौथी श्रीदामा। इन सब रानियो के मध्य में महासती सीता महापवित्र, शुभ लक्षणो से युक्त, अनेक गुणों से मडित, ऐसी प्रिय सुन्दर लगे जैसे ताराओं के मध्य मे चन्द्रमा, और लक्ष्मण के पुत्र अढाईसौ, उनमे कुछ के नाम सुनो—वृषभ, धारण, चन्द्र, सरभ, मकरध्वज, धारण, हरिनाग, श्रीधर, मदन इत्यादि महाप्रसिद्ध शुभगुणों के धारक लोगों के मन के अनुरागी। और विशल्या का पुत्र श्रीधर अयोध्या में ऐसा दिखे जैसे आकाश में चन्द्रमा। और रूपवती का पुत्र पृथ्वीतिलक वह भी पृथ्वीपर प्रसिद्ध। और कल्याणमाला का पुत्र महाकल्याण का भाजन मंगल और पद्मावती का पुत्र विमलप्रभ। वनमाला का पुत्र अर्जुनकुमार। अतिवीर्य की पुत्री रत्नमाला का पुत्र श्रीकेशी। भगवती का पुत्र सत्यकेशी। मनोरमा का पुत्र सुपार्श्वकीर्ति। ये सभी राजकुमार महाबलवान पराक्रम के धारी शस्त्र शास्त्र विद्या में प्रवीण इन सभी भाईयों में, परस्पर अति प्रीति प्रेम वात्सल्य में एक दूसरे के मन में बसे रहे। जैसे स्वर्ग में देव क्रीडा करते हैं, ऐसे यह कुमार अयोध्या मे क्रीडा करते रहे। जो प्राणी पुण्याधिकारी है जिन्होंने पूर्व में पुण्य किया है वह महा शुभ, उनको जन्म से लेकर सम्पूर्ण मनोवांच्छित मनोज्ञ वस्तुये अनायास ही प्राप्त होती हैं। रघुवंशियो मे साढे चार करोड़ कुमार महामनोज्ञ, उत्तम बुद्धि के धारी नगर वन उपवन में देवो समान क्रीड़ाकर महासुखों को भोगते हैं। और राम लक्ष्मण के सोलह हजार मुकुट बंध राजा सूर्य से अधिक प्रभावशाली सेवक हुये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम लक्ष्मणकी ऋद्धिका वर्णन करनेवाला चौरानवेवाँपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-95

सीता को गर्भ धारण करना और जिन पूजा का दौहला होना

अथानंतर राम लक्ष्मण महाआनन्द पूर्वक सुखों को भोगते हुये, अपना समय व्यतीत कर रहे थे। धर्म अर्थ काम ये तीनों पुरुषार्थ मन वांच्छित प्राप्त होते थे। एक समय पटरानी महारानी महासती सीता सुख पूर्वक विमान समान जो सुन्दर महल, उसमें शरद के मेघ समान उज्ज्वल सेजपर शयन कर रही थी। रात्रि के पिछले पहर में, उस कमल नयनी ने दो स्वप्न देखे। पुनः दिव्यबाजों की ध्वनी को सुनकर निंद्रा से जागी। प्रात· काल उठकर स्नानादि कर शृंगार पूर्वक, सहेलियों सहित पति के पास गई। वहाँ जाकर पूछने लगी, हे नाथ! मैंने आज रात्रि के पिछले पहर में, दो स्वप्न देखे। उनका फल क्या है? दो महाबलवान अष्टापद शरद के चन्द्रमा समान उज्ज्वल, और क्षोभ को प्राप्त हुआ जो समुद्र उसके शब्द समान अष्टापद के शब्द, कैलाश के शिखर समान सर्व सुन्दर आभूषणों से सहित मनोहर केश, उज्ज्वल दाढ, ऐसे अष्टापदों ने मेरे मुख मे प्रवेश किया, और पुष्पकविमान के शिखर से महाप्रबल पवनके झोंके से, मै पृथ्वीपर गिरी। तब श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे—हे प्यारी! हे अनुपमसुन्दरी! दो अष्टापदों को मुख में प्रवेश करते देखा उनका फल तेरे एक साथ दो पुत्र होंगें। और पुष्पकविमान से पृथ्वीपर गिरना प्रशस्त नहीं, फिर भी तुम कोई चिन्ता मत करो, दानके प्रभावसे क्रूर ग्रह एवं शत्रु शांत हो जायेगे। बसन्त ऋतुरूपी राजा आया। तिलक जाति के वृक्ष फूले। वह ही उसका कवच, नीमजाति के वृक्ष फूले वही गजराज, और आम, कमल, केशरी, मानों धनुषबाण तरकश खडग इत्यादि बसन्त राजा की सेना ही है। महेन्द्रनामका उद्यान, नन्दनवन समान सुन्दर, फल फूलों से शोभित हस, सारस, चकवा इत्यादि वनके पक्षी मनोहर शब्दरूपी राजा का गुण कीर्तन करते हैं। इत्यादि मनोहर पक्षियों के शब्द सुनकर सभी रागी पुरुषों को राग उत्पन्न होता है। ऐसे बसन्तऋतु के वनकी उपमा का वर्णन कहाँ तक करें। वनकी परम शोभा हो रही थी, उस समय सीता गर्भ के भार से शरीर से कमजोर हुई, तब श्रीरामबलभद्र अपनी प्यारी महारानी से पूछते हैं—हे तीनलोकमे उत्तमसुन्दरी! हे जगतप्रसिद्ध जानकी! तेरे मन में जो अभिलाषा हो, वह मुझे शीघ्र

ही बताओ, मैं तत्काल उसे पूर्ण करूँगा। तब सीता संकोचित हो, हर्ष पूर्वक कहने लगी–हे नाथ! अनेक चैत्यालयों के दर्शन करने की मेरी इच्छा है। भगवान की जिनप्रतिमा पाँचोंवर्ण की लोक में मंगलरूप उनको नमस्कार करने का मेरा मनोरथ है। और स्वर्ण रत्नमयी पुष्पो से, जिनेन्द्र भगवान की पूजा करूँ, यह मेरे मन में महा इच्छा उत्पन्न हुई है। और क्या इच्छा करूँ? यह सीता महा पटरानी के वचन सुनकर, श्रीराम परम हर्षित हुये। फूल गया है मुखकमल उनका राजसभा में विराजमान थे, वहाँ द्वारपाली को बुलाकर आज्ञा दी की, हे दासी! मंत्रियो तक आज्ञा पहुँचाओं, नगर में सम्पूर्ण जिनमन्दिर एवं चैत्यालयो में विशेष प्रभावना करें, और महेन्द्रउद्यान मे जो चैत्यालय है, उनकी अनुपम शोभा करायें। और सभी प्रजा के लोगों को आज्ञा पहुँचाओ की जिनमन्दिर मे विशेषरूप से, भक्तिपूर्वक पूजा प्रभावनादि महाउत्सव करें, तोरण ध्वजा घंटा झालर चंदोवा मनोहर स्वर्ण रत्नमयी एवं वस्त्रों के बनवाकर सजाये। सम्पूर्ण उपकरण दूने दूने चढायें। सभी लोग पृथ्वीपर जिनभगवान की पूजा करें। कैलाशगिरी, सम्मेदशिखर, चम्पापुर, गिरनार, पावापुर, शत्रुंजय मांगीतुगी, गजपंथा, बावनगजाादि निर्वाणक्षेत्रों मे पूजाका विशेष आयोजन कराओ। कल्याणरूप, पुण्य प्राप्त करानेवाला, उत्तम दोहला सीताको उत्पन्न हुआ है। सो पृथ्वीपर प्रत्येक जिनमन्दिरो में जिनचैत्यालयों मे जिनक्षेत्रो मे जिनेन्द्रभगवान की महापूजा की तैयारी शीघ्रता से कराओ। हम सीतासहित शीघ्र ही सभी धर्म क्षेत्रों मे विहार करेगे। यह राम की आज्ञा सुन द्वारपाली ने अपने स्थान पर अन्य को रख कर मत्रियों के पास जाकर राजा श्रीराम की आज्ञा पहुँचाई। मंत्री आदि सभी राजा की आज्ञा प्रमाण अपने अपने किकरो को आज्ञा करने लगे। सभी मदिर एवं चैत्यालयो को सजाया गया, दरवाजों पर कलश स्थापित किये, मोतियों के हारो से दिवाले सजाई, मणियो के चित्र बनाये, महेन्द्र उद्यान की शोभा नन्दनवन की शोभा समान करवाई। शुद्ध मणियों के दर्पण, खंभो पर लगाये, पाँच प्रकार के रत्नों के चूर्ण से, मंडल बनाये, सहस्त्रदल कमल तथा अनेक प्रकार के कमलों से शोभा की, पाँचवर्ण के मणियों के डंडे, उनमें महासुन्दर वस्त्रों की ध्वजा लगाकर मन्दिर के शिखरो पर चढाई। अनेक वादित्रशाला, नृत्यशालाओ की रचना कराई, उससे वह वन ऐसा सुशोभित हुआ मानों नन्दनवन ही है। तब श्रीरामचन्द्र, इन्द्र समान सभी नगर की प्रजा सहित, सम्पूर्ण राजलोग एवं रानियों सहित वन में पधारे। सीता और श्रीराम

गजपर आरूढ हुये, कैसे सुन्दर लगे, जैसे शचि सहित इन्द्र। और लक्ष्मण भी ऋद्धिसहित वन मे गये। अन्य सभी लोग आनन्दसहित वन में गये। सबका भोजन पानी वनमें ही हुआ। जहाँ महामनोज्ञ लताओं के मडप केले के वृक्ष, वहाँ पर रानियाँ ठहरी। और अन्य लोग यथा योग्य वनमें ठहरे। श्रीरामचन्द्रजी हाथी से उतरकर निर्मल जल के भरे सरोवर में क्रीडा करने लगे। जैसे इन्द्र क्षीरसागर में क्रीडा करे। क्रीडा एवं स्नानकर श्रीराम जल से बाहर आये। दिव्य सामग्री से युक्त, विधिपूर्वक महारानी सीता के साथ जिनेन्द्र भगवान की पूजा करने लगे। राम महासुन्दर और वनलक्ष्मी समान रानियाँ उनसे मंडित ऐसे सुहावने लगे मानो मूर्तिवान बसन्त ही है। आठहजाररानियाँ देवाँगना समान उनके मध्य में श्रीराम ताराओं सहित चन्द्रमंडल ही है। अमृत का आहार, सुगन्धित वस्तुओं का लेपन, मनोहरसेज, मनोज्ञआसन, अनेक प्रकार की सुगन्धित मालादि स्पर्श रस गंध वर्ण शब्दादि पांचों इन्द्रियों के विषय, महामनोज्ञ, श्रीरामचन्द्रजी को प्राप्त हुये। जिनमन्दिरों में, भक्ति पूर्वक विधि से पूजा नृत्य किया। पूजा प्रभावना में, श्रीराम का अति अनुराग हुआ। सूर्य से अधिक तेज के धारक राजा, राम, देवाँगना समान सुन्दर रानियो सहित कुछदिन वनमें सुख से रहे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे जिनेन्द्रपूजाका सीताकीअभिलाषा गर्भका दोहला वर्णन करनेवाला पिचानवेवाँपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-96

सीता का लोकापवाद और राम को चिन्ता

अथानंतर प्रजा के लोग, राम के दर्शन की अभिलाषा से वन, में आये। तब बाहर के चौकीदारो ने, लोगो के आनेका वृत्तान्त द्वारपालियों से कहा, तब वे द्वारपाली, अन्दर जाकर राजसभा में, श्रीराजा रामचन्द्रजी से कहने लगी–हे प्रभो! आपके दर्शनों के लिये, प्रजा के लोग आये हैं। और सीता की दाहिनी आँख फड फड करने लगी। तब सीता विचार करने लगी, कि यह आँख मुझे क्या संदेशा कह रही है? कुछ दुख का आगमन बताती है। पहले अशुभकर्म के उदय से समुद्र के मध्य में महादुखों को भोगा। तो भी मेरे दुष्टकर्म सन्तुष्ट नहीं हुये?

क्या ओर भी दुख देना चाहते है। जो इस जीव ने राग द्वेष के योग से कर्म किये हैं, उनका फल ये प्राणी अवश्य ही पाते हैं। किसी के टालने से टलते नहीं हैं। तब सीता चिन्ता करती हुई अन्य रानियों से कहने लगी, मेरी दाहनी आँख फडकने का फल कहो, तब एक अनुमति रानी महा प्रवीण कहने लगी—हे देवी! हो महा पट्टरानी जी! इस जीव ने जो कर्म शुभ अथवा अशुभ उत्पन्न किये हैं, वही इस जीव को अच्छे बुरे फल को देने वाले हैं। कर्म ही को काल कहो, या विधि कहो, तथा ईश्वर कहो, सभी संसारी जीव कर्मों के आधीन हैं। सिद्ध परमेष्ठी भगवान ही कर्मों से रहित हैं। पुनः गुण दोषों की ज्ञाता रानी गुणमाला, सीता को रुदन करती हुई देख, संतोष देकर कहती है, हे पट्टरानी जी! आप पति के लिये सब रानियो में से श्रेष्ठ महारानीहो, आपको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। अथवा और भी अन्य रानियाँ कहने लगी—हो महारानीजी! बहुत विचार करने से क्या, चिन्ता करने से क्या, शाति का उपाय करो, जिनेन्द्र भगवान का अभिषेक और पूजा कराओ एवं किम इच्छित दान दो, जिसकी जो इच्छा हो वही ले जायें, दान पूजा से अशुभ कर्म दूर होते हैं। इसलिये शुभ कार्य कर अशुभकर्म को दूर करो। इस प्रकार कहा तब सीता प्रसन्न हुई, और कहा योग्य है, दान और पूजा अभिषेक ही अशुभकर्म को नष्ट करने वाले है। दानधर्म विघ्नों का नाशक, एवं बैर का नाशक हैं, पुण्य का और यश का मूल कारण है, ऐसा विचारकर, भद्रकलश भडारी को बुलाकर कहा, जब तक मैं प्रसूति नहीं होऊँगी तब तक तुम निरन्तर किमइच्छित दान देना। तब भद्रकलश ने कहा जो आप आज्ञा करोगी वही मैं करूँगा। ऐसा कहकर भडारी गया। और जिन पूजा आदि शुभ क्रियाओं में लीन हुआ। जितने भगवान के चैत्यालय हैं, उनमें अनेक प्रकार के उपकरण बर्तनादि चढाये, और सभी चैत्यालयो में नृत्य गान बाजे आदि बजवायें। भगवान के चारित्र पुराणादि ग्रन्थ जिनमन्दिर मे विराजमान करायें। और दूध दही घृत जल मिष्ठान से भरे कलशों को भगवानजिनेन्द्र के अभिषेक के लिए मन्दिरों में भेजे। सभी खोजाओं में प्रधान जो खोजा, वह सुन्दर वस्त्राआभूषण पहने हाथीपर बैठकर नगर में घोषण करने गये, कि जिसको जो इच्छा है, वही ले जाओ। इस प्रकार दान और पूजा का महान उत्सव मनाया। लोग पूजा दान तपादि में लीन हुये, पापोंको छोडकर पुण्यकार्य में लगे। सीतारानी शांतमनसे धर्मध्यान में अनुरक्त हुई। और राजा श्रीरामचन्द्रजी मंडप में आकर विराजमान हुये। द्वारपाल ने नगर के लोग जो आये थे, उनको राजा श्रीराम से मिलाया। स्वर्ण रत्नों से

निर्मित अद्भुत सभा को देख प्रजा के लोग चकित हो गये। हृदय को आनन्द देने वाले श्रीराम, उनको देखकर नेत्र प्रसन्न हुये। प्रजा के लोग हाथजोड नमस्कार करने लगे शरीर में कंपन मन में भय। तब राम ने कहा–हे प्रजा जनो! आपके आने का कारण कहो। तब विजयसुराजी, मधुमान, वसुलो, काश्यप, पिंगल, कालक्षेम इत्यादि नगर के मुखिया पुरुष एकाग्र मन से, राम के चरणों की और देखने लगे। राजा राम के प्रभाव से कुछ बोल नहीं सके। बहुत समय तक विचार करके कहना चाहते है, फिर भी इनके मुखरूपी मन्दिर से वाणीरूपी वधू नहीं निकली। तब राम ने बहुत शांति देकर कहा, कि तुम किसलिये आये हो, क्या काम है बताओ, इस प्रकार कहने पर भी ये सभी चित्र जैसे खडे रहे, कुछ नहीं बोले। हिरण के बच्चे के समान व्याकुल होकर भय से, ठूंठ जैसे खडे होकर देखते रहे। कुछ समय के पश्चात् उनमें से मुख्य पुरुष विजय चंचल शब्दो से कहता है, हे देव! अभयदान का आशीष दो, तब राम ने कहा तुम किसी भी बात का भय मत करो, तुम्हारे मन में जैसा है वैसा कहो तुम्हारा दुख दूरकर तुमको शांति प्राप्त कराऊँगा। तुम्हारे गुण ही ग्रहण करूँगा अवगुण नहीं। जैसे दूध में से हंस पानी को छोड दूध ही ग्रहण करता है। श्रीराम ने अभय दान दिया। तब महाकष्ट से सोच सोचकर धीरे धीरे, धीमे-धीमे स्वर से विजय हाथजोड नमनकर कहता है। हे नाथ! नरोत्तम! एक विनती सुनो। अब सम्पूर्ण प्रजा, मर्यादा से रहित प्रवृत्ति करती है। यह लोग स्वभाव से ही कुटिल है और एक दृष्टान्त सामने दिखता है, तो खोटे कार्य करने मे क्या भय, जैसे बन्दर सहज ही चंचल है, अगर दर्पण देख ले तो क्या कहना। निर्बल लोगो की यौवन, रूपवान स्त्रियों को पापी बलवान पुरुष, समय देखकर बलात्कार पूर्वक हरण करते हैं, और कोई शीलवान स्त्री दूसरे के घर मे पति वियोग से दुखी हो, तब कोई सहायता देकर अपने घर ले आते है, यह सब धर्म की मर्यादा समाप्त होती जा रही है, इसीलिये ऐसा प्रयत्न करों कि धर्म की रक्षा हो, और प्रजा का हित हो, जैसे भी हो प्रजा के दुखों का नाश हो, ऐसा उपाय करो। इस लोक में आप महान बडे राजा हो, आपके समान और कोई नहीं, आपके द्वारा ही प्रजा की रक्षा नहीं होगी तो कौन करेगा? नदियों के किनारेपर तथा वन, उपवन, कुयें, तालाब, सरोवर, समुद्र के तट पर, गांव गांव में घर-घर मे सभी में, एक यही अपवाद की, कथा हो रही है, कि श्रीराम राजादशरथ के पुत्र, सर्व शास्त्रों के ज्ञाता, उनकी पटरानी महारानी सीता को, रावण हरण कर ले गया, उसे पुन राजा श्रीराम ले आये और घर मे

रखी तो दूसरों का क्या दोष हैं। जो बडे पुरुष करते हैं, वह सब जगत, को प्रमाण हैं, ''यथा राजा तथा प्रजा'' यह रूढी है, जैसी राजा प्रवृति करता हैं, वैसी प्रजा भी प्रवृति करती हैं, इस प्रकार दुष्ट जीव निरांकुश होकर पृथ्वीपर अपवाद करते हैं, उनको दण्ड दो।

हे देव! आप मर्यादा के प्रवर्तन महापुरुषोत्तम हो, एक यही अपवाद आपके राज्य में नहीं होता तो, आपका यह राज्य इन्द्र से भी अधिक है। यह वचन विजय के सुनकर, एकक्षण श्रीरामचन्द्रजी विषादरूप हुये, जैसे किसी ने मुगद्र से मारा हो। मनमें चिता करने लगे, कि यह कहाँ से कष्ट आया। मेरा यशरूपी कमलोंकावन, अपयशरूपी अग्निसे जलने लगा है। मेरी प्यारी महारानी सीता, उसके वियोग का कष्ट मैंने सहन किया, वहीं मेरे कुल को कलंक लगाती है, मैं अयोध्या में सुख के लिये आया था। और सुग्रीव, हनुमान, विभीषण आदि मेरे महा सुभट बडे-बडे राजा, ऐसा मेरा गोत्र, जो सीता के द्वारा दूषित हो रहा है। सीता के लिये, मैंने समुद्र को पारकर रणसग्राम मे, शत्रु को जीता, वह जानकी मेरे कुलरूपी दर्पण को कलुषित करती है। और जो लोग कह रहे है, वह सब सत्य है। दुष्टरावण पापी के घर मे, ठहरी सीता को मै ले आया। और सीतासे मेराअतिप्रेम, उसको क्षणमात्र भी नहीं देखूं, तो मैं उसके वियोग से आकुलित रहता हूँ। वह सीता महापतिव्रता वह मेरे मे ही अनुरक्त है, मै उसे कैसे छोडूं? सीता प्रति समय मेरे ऑखो मे अथवा हृदय मे बसी हुई है, महा गुणवान निर्दोष शीलवान महासती सीता उसे मै कैसे छोडू? अथवा स्त्रीयों के मन की बात कौन जान सकता है। सब दोषों का नायक मनमथ रूपी राग बसा है। धिक्कार है स्त्री के जीवन को, सर्व दोषो की खान, दुखों का कारण, उत्तम कुल के पुरुषों को, स्त्री कीचड समान मलीनता का कारण है। जैसे कीचड में फंसा मनुष्य या पशु निकल नहीं सकता है, ऐसे स्त्री के राग प्रेम कामरूपीकीचड में फंसा प्राणी नहीं निकल सकता, स्त्री सम्पूर्ण बल को नाश करनेवाली है। बुद्धि को भ्रष्ट करती है, निर्वाण सुख में विघ्न करने वाली, ज्ञान का नाश करने वाली है, भव भ्रमण का कारण है, राख से दबी अग्नि के समान जलाने वाली है, देखने मात्र से मनोज्ञ, परन्तु अपवाद का कारण, ऐसी यह सीता उसे मैं प्रजा के दुखों को दूर करने के लिये, छोड दूँ, जैसे सर्प कांचली को छोड़े। फिर भी सीता के लिये मेराहृदय तीव्र स्नेह के वशीभूत है, सो उसे कैसे छोडी जाये। यद्यपि मैं स्थिर हूँ, जानता हूँ, फिर भी यह जानकी मेरी आज्ञा कारणी, मेरे मन के अनुसार कार्य करने वाली, अग्नि की

ज्वाला समान मेरे मन को, संतापित करती है। यह दूर भी रहे, परन्तु मेरे मन को, मोह उत्पन्न कराती है। जैसे चन्द्रमा दूर से ही चन्द्रमुखी कमलों को अथवा रातरानी पुष्पको विकसित करता है। एक तरफ लोक अपवाद का भय, और दूसरी तरफ सीता के महादुर्निवार प्रेम का भय। इस चिन्ता से मैं दुखी होकर, सीता के प्रेमरूपी सागर में गिरा हूँ। और मेरी रानीसीता सभी देवॉगनाओ से भी श्रेष्ठ महापतिव्रता स्त्री शीलरूपणी प्रति समय मेरे मन में वशी है, उसे मैं कैसे तजूँ? और अगर मैं नहीं तजता हूँ, तो मेरे राज्य की अपकीर्ति होती है। इस पृथ्वीपर ससार में मेरे समान कोई दुखी नहीं है। प्रेम और अपवाद का भय दोनों मेरे पीछे लगे है, और इन दोनों की मेरी तीव्र मित्रता। अब मैं अपवादरूपी तीव्र कष्ट को प्राप्त हुआ हूँ, सिह की है ध्वजा जिनके, ऐसे राम को दोनो बातो की, महाचिन्ता से असाता रूपी दुख का कारण हुआ, जैसे जेष्ठ के मध्यान का सूर्य मानवों को तप्तायमान करता है, उसी प्रकार यह स्त्री रूपी राग मानव को सतप्त करता है। इस संसार में राग ही महादुख का कारण है, जब तक राग इस जीव के साथ रहेगा, तब तक संसार रहेगा, राग नाश होनेपर ही मुक्ति प्राप्त होती है, अतः ससारी प्राणी को इस राग की महिमा समझकर त्याग की भावना करनी चाहिये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राम को लोकापवादकी चिन्ताका वर्णन करनेवाला छयानवेवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-97

लोकापवाद के भय से सीता का परित्याग और सीता का वन में विलाप करना

अथानंतर श्रीरामचन्द्रजी मन को कठोर कर द्वारपाल से कहा, कि लक्ष्मण को बुलाकर लाओ। तब द्वारपाल लक्ष्मण के पास गया, और राजा श्रीरामकी आज्ञा प्रमाण कहा, तब लक्ष्मण तुरन्त ही घोडेपर बैठकर राम के निकट आये। हाथजोड नमस्कार कर सिंहासन से नीचे पृथ्वीपर बैठे, राम के चरणों की तरफ दृष्टिकर बैठे रहे। राम उठकर लक्ष्मण को आधे सिहासनपर बैठाया, शत्रुघ्नादि सभी राजा और विराधितादि सभी विद्याधर यथा योग्य स्थानपर बैठे, पुरोहित,

श्रेष्ठि, मंत्री, सेनापति आदि सभी सभा में बैठ हुये थे। तब एकक्षण विश्राम करने के पश्चात् श्रीरामचन्द्र जी ने लक्ष्मण से लोक अपवाद का वृतान्त कहा। लक्ष्मण ने यह बात सुनकर अतिक्रोध से लाल नेत्रकर योद्धाओं को आज्ञा दी कि अभी ही मैं, उन दुर्जनों को नष्ट करने जाऊँगा, पृथ्वी को अपवाद रहित करूँगा, जो असत्य वचन कहकर, महारानी जी सीताको अपवादित कर, कलंकित कहते हैं, उनकी जीभ काट डालूंगा, उपमा रहित जो शीलवान, महासती, महापतिव्रता सीताजी, उनकी जो निंदा करते हैं, उनको मैं मारूँगा, इस प्रकार लक्ष्मण महाक्रोधित हुये ऑखे लाल हो गई। तब श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मण के क्रोध को शात करते हुये, कहा कि हे भाई! यह पृथ्वी समुद्रपर्यन्त, उसकी भगवान श्रीऋषभदेव ने रक्षा की, और भरत चक्रवर्ती ने उसकी प्रतिपालना की। और इच्क्षवाकुवंश के तिलक, बडे-बडे राजा उनकी पीठ, रणसंग्राम में शत्रुओ ने नहीं देखी, ऐसे महापुरुषो के कीर्ति रूपी चांदनी से, यह जगत प्रख्यात है, और अपने इस वंशमें अनेक राजाओ ने, यशको प्राप्त किया। अब मै क्षणभंगुर नाशवान पापरूपी राग के लिये, अपने यशको कैसे कलकित करूॅ। थोडे ही अयशको दूर नहीं करता हूँ, तो वह महावृक्षरूप वृद्धि को प्राप्त होता है। और न्यायवान पुरुषों की एवं यशकी इन्द्रादि देव भी प्रशंसा करते हैं। यह भोग नाशवान है उनसे क्या राग करूॅ। ये भोग, अपयशकीर्तिरूपी अग्नि से, कीर्तिरूपी वन को जलाती हैं। यद्यपि महारानीसीता सतीशीलवती निर्मल है, पवित्र है, फिर भी इसको घर में रखने से मेरा अपवाद दूर नहीं होता है। यह अपवाद शस्त्रादि से नाश नहीं होता है। यह सूर्य कमलों के वनको प्रफुल्लित करने वाला है, अंधकार को नाश करता है, फिर भी रात्रि होते ही सूर्य अस्त हो जाता है। ऐसे ही अपवाद से उत्तम पुरुषो की कांति नाश होती है। इसलिये ऐसे अपवाद को दूर करना चाहिये। हे लक्ष्मण! चन्द्रमा समान हमारा निर्मलगोत्र, अपकीर्ति रूपी मेघोंसे ढका जा रहा है। अब यह अपवाद मेरा नहीं हो यही मेरी इच्छा है। जैसे आग लगते ही जलसे बुझाये बिना, अग्नि बढ़ती ही जाती है। ऐसे अपवादरूपी अग्नि पृथ्वीपर फैली है, उसे दूर किये बिना मिटेगी नहीं। यह तीर्थकर देवो का हमारा कुल महाउज्ज्वल, प्रकाशरूप, प्रख्यात, उसको कलंक नहीं लगे, ऐसा उपाय करूँगा। यह सीता महानिर्दोष शीलवती है, मैं उसे जानता हूँ, फिर भी मै उसे तजूंगा। अपनी कीर्ति मलीन नहीं करूँगा। तब लक्ष्मण ने कहा। कैसा है लक्ष्मण? राम के स्नेह में है

तत्पर, महाबुद्धिवान है। हे देव! सीता महारानीजी को शोक उत्पन्न कराना, या दुखी करना, यह योग्य नहीं, लोग तो मुनियों का भी अपवाद करते है, जिनधर्म का भी अपवाद करते हैं। तो क्या लोक अपवाद से धर्म छोड देगें? ऐसे ही लोक अपवाद मात्र से ही जानकीजी को कैसे छोडे। महासती सीताजी सब सतियों के मस्तकपर विराजमान है। वह किसी भी प्रकार से निंदा के योग्य नहीं है। और पापी जीव शीलवान प्राणियो की निंदा करते है, तो क्या, इनके कहने से, शीलवानो को दोष लगता है? वे तो निर्दोष ही है। ये लोग अज्ञानी, अविवेकी, आगमज्ञान से रहित है, स्वयं दोषीहै, वह चन्द्रमा को भी कलकित श्यामरूप देखते है। परन्तु चन्द्रमा श्वेत ही है, श्याम नहीं। ऐसे ही लोगो को अपवाद करने से, निष्कलकियो को कलक नहीं लगता है, जो शील से पूर्ण है, उनको अपना आत्मा ही साक्षी है, दूसरे जीवो से कोई प्रयोजन नहीं। नीच पापी जीवोके अपवाद से, पंडित ज्ञानवान विवेकी पुरुष क्रोधित नहीं होते है। जैसे श्वान के भौकने से गजेन्द्र क्रोध नहीं करते है। ससार के लोग विचित्र है, दूसरो के दोषो को कहने मे आसक्त है, सो इन दुष्टो का स्वय ही निग्रह होगा। जैसे कोई अज्ञानी जीव, पर्वत को उखाडकर, चन्द्रमा की ओर फेककर, मारना चाहता है, वह सहज ही, अपने आप मरण को प्राप्त होते है। जो पापी दुष्ट जीव दूसरेके गुणो को, सहन नहीं कर सकता, और प्रतिसमय दूसरे की निन्दा और अपनी प्रशंसा करता है। वह पापकर्मी निश्चय से, नरक निगोदादि दुर्गतियो मे, जन्म लेता है। लक्ष्मण ने धर्मरूपी मधुर वचनो को कहा, तब श्रीरामचन्द्रजी कहने लगे।

हे भाई लक्ष्मण नारायण! तुम जो कह रहे हो, वह सब सत्य ही है। तुम्हारा मन राग द्वेष से रहित, महा मध्यस्थ बुद्धिमान शोभायमान है। परन्तु जो शुद्ध न्यायमार्गी मनुष्य है, वे लोक विरुद्ध कार्य को छोडते है। जिसकी दशो दिशाओ मे अपयश कीर्तिरूपी दवानल की अग्नि प्रज्वलित है, उसको जगत मे कहाँ सुख है। और उसका जीवन क्या? अनर्थ को करने वाला जो अर्थ उससे क्या? और विष सहित औषधि से क्या? और जो बलवान होकर भी जीवो की रक्षा नहीं करता, एव जो शरण में आये उसका पालन नहीं करता, तो उसके बल से क्या? और जिससे आत्म कल्याण नहीं होता ऐसे आचरण से क्या? चारित्र वही है जो आत्मा का हित कराये। जो आत्मवादी आत्मा को नहीं जाने, तो उसके ज्ञान से क्या? और जिसकी कीर्तिरूपी वधु अपवादरूप बलवान है, तो उसका जन्म

सफल नहीं, ऐसे जीवन से तो मरना अच्छा। लोक अपवाद की बात तो दूर ही रहो, परन्तु मुझे यह महादोष है, कि जो परपुरुष के द्वारा हरि सीताको मैं पुन. घर मे लाया। राक्षस के भवन में, महाउद्यान वहॉ सीता बहुत दिन तक रही, और रावण ने दूतियो को भेजकर, मनवांच्छित प्रार्थनायें की, और समीप आकर दुष्ट दृष्टि से देखा, एवं मनमें जो आया वैसा ही वचन कहा। ऐसी सीताको मैं घरमें लेकर आया, इसके समान और लज्जा क्या? मूर्खों से क्या क्या नहीं होता? इस ससारकी मायारूपी रागमें, मैं ही मूर्ख हुआ। इस प्रकार कहकर, श्रीरामचन्द्र जी ने आज्ञा दी की शीघ्र ही कृतान्तवक्र सेनापति को बुलाओ। यद्यपि दो बालको के गर्भ सहित सीता है, तो भी उसे तत्काल ही मेरे घरसे निकालो, यह आदेश दिया। तब लक्ष्मण हाथजोड नमस्कार कर प्रार्थना करने लगा—हेदेव! सीता को छोडना योग्य नहीं, यह राजा जनककी पुत्री, राजदुलारी, महा शीलवती, राजरानी, जिनधर्मिणी, कोमल शरीर, भोली, सदा सुखिया, अकेली वन में कहॉ जायेगी? गर्भ के भार सहित, परम खेदको प्राप्त होगी। विदेहा की राजपुत्री को, आपके छोडने से किसकी शरण में जायेगी। और आपने खोटी दृष्टि से देखने को कहा—तो देखने मात्र से क्या दोष होता है। जैसे जिनराज के सामने चढाया हुआ द्रव्य निर्माल्य होता है, उसे सभी देखते हैं, परन्तु देखने से दोष नहीं। अभक्ष वस्तुओं को ऑखो से देखते है, परन्तु देखने से दोष नहीं, स्वीकार करने से दोष है। इसलिये हे नाथ! मेरेपर प्रसन्न होओ और मेरी विनती स्वीकार करो। महानिर्दोष सती सीताजी, आपमें ही एकाग्र मन है उनका, उन्हे मत तजो। तब श्रीराम अत्यन्त विरक्त होकर, क्रोध के आवेश मे आये, और क्रोध पूर्वक कहने लगे—लक्ष्मण अब तुम कुछ मत कहना, मैंने यह अवश्य ही निश्चय किया है, कि शुभ हो अथवा अशुभ, अच्छा हो या बुरा, निमानुष वन जहॉ मनुष्य का नाम नहीं सुनते है, वहॉ दूसरो की सहायता से रहित, अकेली महारानी को वन में छोडूंगा। अपने कर्मों के योग से मरे या जीवे। एकक्षण मात्र भी मेरे देश मे अथवा नगर मे या किसीके मन्दिरमे नहीं रहेगी। वह मेरी अपकीर्ति को कराने वाली है। कृतान्तवक्र को बुलाया, वह चार घोडों के रथपर बैठकर बडी सेना सहित राजमार्ग होकर आया। उसके ऊपर छत्र फिर रहे, धनुष चढाये, बखतर पहने। इस प्रकार कृतान्तवक्र को आता देख, नगर के नर नारी अनेक प्रकार की बाते करने लगे। आज यह सेनापति शीघ्र ही दौडकर जा रहा है, सो किसकी विदाई

होगी। आज यह किसपर क्रोधित हुआ है। आज किसी का कुछ बिगडने वाला है। कालसमान महाभयंकर शस्त्रों के समूह के मध्य में चला जा रहा है। सो आज न जाने किनपर क्रोधित हुआ है। इस प्रकार नगरके नर नारी चर्चाकर रहे हैं। और सेनापति बलदेव श्रीरामचन्द्रजी के पास आया, स्वामीको शीश झुकाया नमस्कार कर, कहने लगा—हे देव! जो आपकी आज्ञा होगी वही मैं करूँगा।

तब रामने कहा—हे कृतान्तवक्र सेनापति! पटरानी महारानी सीताजी को शीघ्र ही ले जाओ और मार्ग मे जिनमन्दिरों का दर्शन, सम्मेदशिखर आदि निर्वाणक्षेत्रों के, और मार्गके चैत्यालयो के सभी जगह दर्शन कराकर उसकी इच्छा पूर्णकर, सिंहनाद नामकी अटवी जहॉ मनुष्यो का आवागमन एव नाम नहीं, वहॉ पर अकेली को छोड कर चले आओ, तब कृतान्तवक्र ने कहा—हे राजन्! जो आपकी आज्ञा होगी, वैसा ही करूँगा उसमें कुछ भी शका नहीं करना। कृतान्तवक्र ने जानकी के पास जाकर कहा—हे माता! उठो रथ मे बैठो। चैत्यालयो मे जिनबिम्बों के दर्शन करने की जो अभिलाषा है, वह पूर्ण करो। इस प्रकार सेनापति ने, मधुर स्वरो से, कहकर महारानी जी को प्रसन्न किया। तब सीता जाकर रथपर बैठी, रथ पर चढते समय भगवान को नमस्कार किया, और यह कहा—कि चतुर्विधि संघ जयवन्त हो। श्रीरामचन्द्रजी महाजिनधर्मी उत्तम धर्माचरण मे तत्पर वे जयन्त हो। मेरे कारण से किसी का भी अविनय हुआ हो तो जिनधर्म के अधिष्ठित देव क्षमा करना। और सखियॉ दासियॉ साथ चलने लगी, तब उनसे कहा—तुम सुख से यहॉ रहो, मैं शीघ्र ही जिनचैत्यालयों के दर्शन करके आऊँगी। इसप्रकार सखियो से कहा—और सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार कर सीताप्रसन्न होकर रथपर चढी। रत्नस्वर्ण से निर्मित जो रथ उसपर बैठी सीता मानो विमान में बैठी देवॉगना ही हो। उस रथको कृतान्तवक्र ने ऐसा शीघ्र चलाया जैसा भरत चक्रवर्ती का चलाया बाण चले। चलते समय सीताजी को अनेक अपशकुन हुये। सूखे वृक्षपर कौवा बैठा हुआ, विरसशब्द करता रहा, बार बार मस्तक धुनता रहा, और सन्मुख ही महाशोक से भरी सिरके बालबिखरे रुदन करती हुई स्त्री देखी, इत्यादि अनेकों अपशकुन हुये। फिर भी सीता जिनभक्ति में विशेष अनुरागिणी एकाग्र मनकर चली गई। अपशकुनो के प्रति ध्यान नहीं दिया। पहाड, पर्वत, गिरी, गुफा, अनेक वन उपवनको लांघकर, रथ शीघ्र ही दूर चला गया। गरुडसमानवेग ऐसे घोडोसहित सूर्यके रथसमान रथ शीघ्र ही चला। मनोरथ

समान वह रथ उसपर बैठी राजा रामकी महारानी, इन्द्राणी समान सुन्दर लगी। कृतान्तवक्र सारथी ने मार्ग में सीता को, नाना प्रकार की भूमिपर वस्तुयें, ग्राम, नगर, वन, उपवन, कमल फूले हुये सरोवर, अनेक वृक्ष, दिखाये। कहीं कहीं भयानक सघन वृक्षों से वनमें अंधकार हो रहा है। जैसे अंधेरी रात्रि में, बादलों के समूह में, महा अंधकार होने से कुछ नजर नहीं आता, और कहीं कहीं दूर दूर वृक्ष हैं, जैसे पचमकाल में भरत ऐरावतक्षेत्रो की पृथ्वीपर, विरले ही सज्जन पुरुष होते है। कहीं वन में पतझड हो रही है, तो पत्ते पुष्प फलादि से, रहित वन, जैसे आभूषण एवं सुन्दर वस्त्रों की ज्योति से रहित स्त्री ऐसा वन है। और कहीं वनमे, सुन्दर मधुर आमादि के वृक्षोंपर लताये लगी है, मानों चपल वेश्या ही हो। कोई वृक्ष दवानल की अग्नि से जल रहे हैं, उनकी शोभा नहीं, जैसे क्रोधरूपी अग्निसे जला मन सुशोभित नहीं होता है। और कहीं पवन के झोखे से पत्ते हिलते हैं, मानो बसन्तऋतु के आने से, वन पतिरूपी नारी आनन्द से नृत्य करती है। और कहीं भीलो के शब्दों से मृग दूर भाग रहे हैं। पक्षी उड रहे हैं। कहीं वन की नदियो में पानी अल्प अल्प बहता है। जैसे संताप से भरी वियोगिनी नारियों के ऑसुओ से भरे नेत्र। कहीं कहीं पक्षियों के मनोहर शब्द, कहीं कहीं झरनोके शब्द गूंज रहे हैं। मानो बसन्तऋतु मे राजाकी स्तुति ही कररहे हैं। कहीं वनमे वृक्ष फल फूलो से झुक रहे हैं। जैसे सज्जन पुरुष दातार। और कहीं वायु के झोकों से वृक्षो की शाखायें, पत्ते फल फूल हिलते, उस समय पुष्प गिरते, मानों पुष्प वृष्टि ही करते हैं। इस प्रकार का वन अनेकक्रूर जीवों से भरा, उसे देखती हुई सीता चली जा रही है। राम में मन लगा है सीता का, मधुर शब्दों को सुनकर सोचने लगी, मानों रामके यहॉ दुंदुभी बाजे ही बज रहे है। वनमे अनेक वस्तुओंको देख, उनको रामके सुख रूपी ही मानती रही। इस प्रकार चिन्तवन करती सीता आगे गगा को देखने लगी। गंगा के मध्य में अनेक जलचर जीव मीन मगरादि विचरण कर रहे हैं, उनके भ्रमण करने से गगा में लहरे उठ रही है, मानो कमल कम्पायमान हो रहे हैं। पवन समान वेग के धारी अश्व रथको लेकर नदी से पार हुये, जैसे साधू संसार समुद्र से पार होते। नदी के किनारेपर जाकर सेनापति मेरु समान उसका मन अचल है। फिर भी दयाके कारण महादुख सहित विचारको प्राप्त हुआ, महादुखी होकर कुछ कह नहीं सका। ऑखों से ऑसुओं की धारायें बह चली। रथ को रोक ऊँचे ऊँचे स्वरों से रुदन करने लगा, शरीर शिथिल हो गया, मनकी ज्योति चली गई, तब सीता महासती कहने लगी।

हे कृतान्तवक्र! तू क्यो महा दुखियो की तरह रो रहा है। आज जिनेन्द्र भगवान की वन्दना का उत्सव का दिन, तुम हर्षके समय में क्यों विषाद कर रहे हो। इस भयानक निर्जन वन में क्यो रोते हो। तब कृतान्तवक्र रोते हुये यथावत् वृतान्त कहने लगा। जो वचन विषसमान, अग्निसमान, शस्त्र समान हैं। हे माता! हे महारानी जी! दुर्जन पुरुषों के कहने से, श्रीरामचन्द्रजी ने अपकीर्ति के भयसे, जो आपका प्रेम नहीं तजा जाये, उसे तजकर चैत्यालयोंके दर्शनों की आपको अभिलाषा हुई थी, वह आपको चैत्यालय और निर्वाणक्षेत्रो के दर्शन कराकर भयानक वनमें छोडने का आदेश दिया है। हे देवी! जैसे यति, मुनि, साधु रागकी परिणति को त्यागते हैं, ऐसे रामने आपको त्यागी है। और लक्ष्मण नारायण ने जो कहने की हद् थी, वह बहुत कुछ कहा कुछ कमी नहीं रखी, आपके लिये न्याय रूप वचन कहे परन्तु रामने हट नहीं छोडी। हे स्वामिनी! राम आपसे निराग हुये, अब आपको धर्म ही शरण है। इस संसार मे, न माता, न पिता, न भ्राता, न कुटुम्ब कोई किसी का नहीं है। सब अपने-अपने स्वार्थ के हैं, एक धर्म ही जीव को सहायता करने वाला है। अब आपको यह सिह, मृग, व्याध्र, गजादि जीवोंसे भरा हुआ वनही आश्रय है। यह वचन कृतान्तवक्र के सुनकर, सीता वज्रपात की मारी जैसी हो गई। जैसे किसीने वज्रपात से, मारा हो। हृदय मे दुख की वेदना से, मूर्च्छित होकर गिर पडी। पुन· कुछ समय के पश्चात् सचेत होकर, गद्-गद् वाणी से कहने लगी। शीघ्र ही मुझे मेरे प्राणनाथ से मिलाओ। तब सेनापति कृतान्तवक्र ने कहा—हे माता! नगरी बहुत दूर रही और श्रीराम का दर्शन बहुत दूर। तब अश्रुपात रूपी जल की धारा से मुखकमल का प्रच्छाल करती हुई कहने लगी—हे सेनापति! तुम मेरे वचन, मेरेस्वामी श्रीरामचन्द्रजी से कहना, कि मुझे छोडने का, विषाद दुख आप नहीं करना, परम धैर्यता पूर्वक सदा प्रजा की रक्षा करना, जैसे पिता पुत्रकी रक्षा करता, आप महा न्यायवंत राजा हो, समस्त कला विधाओ के पारगामी ज्ञाता हो, राजा के लिये प्रजा ही आनन्द का कारण है। राजा वही जो प्रजा उनको शरद की पूर्णिमा समान चाहे, और यह संसार असार है, महा भयकर दुखरूप है। जिस सम्यग्दर्शन से, भव्यजीव संसार से मुक्त होते हैं, वह आपको आराधना करने योग्य है। आप राज्य से, अधिक सम्यग्दर्शन को कल्याणकारी सुख दाई जानना। यह राज्य तो विनाशीक है, दुख को देने वाला

है, जो पापी अभव्य जीव दूसरो की निंदा करते हैं, सो उनकी निंदा के भय से—हे पुरुषोत्तम! आप सम्यग्दर्शन को कभी भी नहीं छोडना। यह सम्यग्दर्शन प्राप्त करना अत्यन्त दुर्लभ है। जैसे हाथ में आया अमूल्यरत्न समुद्र में डाल दे तो, पुनः प्राप्त होना कठिन है। यह अमृतफल, संसाररूपी समुद्र में डाला तो पुनः कैसे प्राप्त होगा। जैसे अमृतफल, बालक के हाथ से डाल दिया, फिर पश्चाताप करे, ऐसे सम्यग्दर्शन से रहित हुआ जीव, संसार में भ्रमण करते हैं। इसजगत के प्राणी महादुर्निवार हैं, उनका मुख बंद करने मे कौन समर्थ है। जिसके मन में जो आये, वही कहते हैं। इसलिये इन जगत के प्राणियों की बात सुनकर जो योग्य हो, वैसा करना। हे गुणभूषण! संसार के जीवों की बात धारण नहीं करना, दान एवं वात्सल्य से प्रजा जनो को प्रसन्न रखना, निर्मल परिणामों से, मित्रोंको वश करना। साधु एवं आर्यिकाये आहार के लिये आयें तो, उनको प्रासुक शुद्ध अन्न जल से, नवधा भक्तिपूर्वक निरन्तर आहारदेना। चतुर्विधि संघ की सेवा करना, मन वचन काय से मुनियों को प्रणाम पूजन अर्चना आदिकर शुभ पुण्य कर्म प्राप्त करना। और क्रोधको-क्षमासे, मानको-मार्दवसे, मायाको-सरलतासे, लोभको-संतोषसे जीतना, आप सभी शास्त्रों के ज्ञाता हो, हम आपको उपदेश देने मे समर्थ नहीं हैं। हम तो स्त्रियॉ है, आपकी कृपा के योग से, कभी कोई हंसी मजाककर अविनय भरा शब्द कहा हो तो क्षमा करना। ऐसा कहकर रथ से उतरी और तृण, पाषाण, कंकर, पत्थर, काटो से भरी जो पृथ्वी, उसपर मूर्च्छा खाकर गिर पडी, जानकी भूमि में पडी, ऐसी दिखी मानो रत्नो की राशी ही पडी हो। कृतान्तवक्र सीताको मूर्च्छित देख, महादुखी हुआ, और मनमें चिन्तवन करने लगा। हाय-हाय, यह महा भयानक वन दुष्ट जीवों से भरा, यहॉं जो महाधीर शूरवीर हो उनको भी जीने की आशा नहीं, तो यह महारानीजी कैसे जीवित रहेगी, इनके प्राण बचना कठिन है। इन महासती माताको अकेली वनमें छोडकर, मै जा रहा हूँ। मेरे समान और निर्दयी कौन होगा। मुझे कहीं भी किसी प्रकार से, शांति नहीं है। एकतरफ स्वामीकी आज्ञा, और एकतरफ ऐसी निर्दयता, मे पापी दुखरूपी सागर के भंवरमें पडा हूँ। धिक्कार है पर की सेवा को, जगत में महानिंद्य पराधीनता, जो स्वामी कहे वैसा ही करना पडता है। जैसे यंत्र को यंत्री बजाये ऐसा ही बजता है, इसीलिये दूसरों की सेवा करने वाला सेवक, यत्र के समान है। चाकर से

कूकर भला, जो स्वाधीन होकर अपनी आजीविका पूर्ण करते हैं। जैसे-पिशाच के वश हुआ पुरुष, जैसे वह कहलाता है वैसा ही कहता है। ऐसे ही नरेन्द्र के वश हुआ नर जो आज्ञा करते वही करना पडता है। नौकर क्या नहीं करता और क्या नहीं कहता। धिक्कार है किंकर के जीवन को। दूसरों की सेवा करना तेज रहित होना है। जैसे निर्माल्य वस्तु निंद्य है, ऐसे ही किंकरपना निंद्य है। धिक धिक पराधीनता को, दूसरों का किकंर परतंत्र होकर दूसरों के प्राण हरता है। कभी भी, नौकर का जन्म नहीं होना। दूसरो की नौकरी करना, कठपुतली के समान है, जैसे स्वामी नचाता है, वैसी नाचती है। जैसे विमान दूसरों के आधीन होता है, जो जैसा चलाता है वैसा चलना पडता है, रोके तो रूकना पडता है, ऊँचा चलाये तो ऊँचा चढना पडता है, नीचे चलाये तो नीचे उतरना पडता है। धिक्कार है पराधीन जीवन को, धिक्कार है किकर को। मैं दूसरों की नौकरी से परवश हुआ हूँ, इसलिये ऐसे पापकर्म करना पडता है। इस निर्दोष महासती पतिव्रता सीताको अकेली भयानक वन में, मैं छोडकर जा रहा हूँ।

हे श्रेणिक! जैसे कोई धर्मको छोडता है, वैसे कृतान्वक्र सीता को वन में छोडकर, अयोध्या की तरफ दुखी होकर चला। कृतान्तवक्र को जाने के, बहुत समय पश्चात् सीताकी मूर्च्छा दूर हुई, तब महा दुख की भरी मृगी के, समान आक्रन्दन पूर्वक रोती हुई विलाप करने लगी। सीता के रोने से मानो जंगल की सभी वनस्पति रोने लगी। स्वतः स्वभाव महारमणीक सीता के स्वर उनसे विलाप करती हुई, महाशोक से भरी कहने लगी—हाय कमल नयन राम नरोत्तम मेरी रक्षा करो, मेरे से कुछ कहो, और आप तो निरन्तर उत्तम क्रिया के धारक महागुणवान शात चित्त हो, आपका इसमें लेश मात्र भी दोष नहीं है, आपतो पुरुषोत्तम हो, मैंने पूर्वभव मे जो अशुभ कर्म किये हैं, उनके फल प्राप्त हुये हैं। जैसा करना वैसा भोगना, क्या करें भरतार, और क्या करें पुत्र, तथा माता पिता परिवार, क्या करे, अपने कर्म अपने ही उदय में आते है, उन्हें अवश्य ही भोगना है। मैं मंद भागिनी पूर्व जन्म में अशुभ कर्म किये हैं, उनके फल से इस निर्जन वनमें महादुख को प्राप्त हुई हूँ, मैंने पूर्वभव में किसी का अपवाद किया होगा, दूसरों की निंदा की होगी, उसके पाप से यह कष्ट पाया है। तथा पूर्वभव में मैंने गुरुओं के समीप व्रत लेकर छोडा होगा, वृत भंग किया होगा, उसका फल पाया है। अथवा विष फल

समान जो दुर्वचनों से किसीका मैंने अपमान किया होगा, उससे यह फल पाये हैं। अथवा मैने पूर्वभव मे, कमलों के वनमें चकवा चकवी का युगल का वियोग कराया होगा, इसलिये मुझे मेरे स्वामी का वियोग हुआ। अथवा हंस-हंसनी एवं कबूतर कबूतरी आदि पक्षियों के युगल का बिछोह कराया होगा अथवा अच्छे स्थान से उठाकर बुरे स्थान पर बैठाया होगा। अथवा बांधे होगें, मारे होगें, भगाये होगे, उसके पाप से, मुझे अकथनीक फल प्राप्त हुआ है। या मैने पशुओ के एवं मनुष्यों के युगलों का बिछोह कराया होगा। इसलिये मुझे भी मेरे प्राण नाथ से, अलग होना पडा, अथवा ज्ञानी जीवो की या मुनि आर्यिका की निंदा की होगी, अथवा दान पूजा में विघ्न किया होगा, पर उपकार मे अन्तराय किया होगा, किसी गावको वनको जलाया होगा, स्त्री बालक पशु इत्यादि अनेक जीवों को मारने का हिंसादि महान पाप किया होगा। उन पापो के फल से, यह दुख मुझे प्राप्त हुआ होगा। बिना छना पानी पीया, रात्रि में भोजन किया, घुना अनाज खाया, अभक्ष का भक्षण किया, नहीं करने योग्य कार्य किये होगे, उनका यह फल है।

राजा श्रीरामचन्द्रजी बलभदकी मै पटरानी महारानी स्वर्ग समान महलों की निवासिनी, हजारों दासियाँ मेरी सेवा करने वाली, अब मैं पाप कर्मके उदय से, निर्जन वनमे दुखरूपी सागरमें डूबी, कैसे रहूँगी। मैं रत्न स्वर्ण के महलों में, महारमणीक वस्त्रों से, सुशोभित सुन्दर सेजपर शयन करने वाली, यहाँपर कंकर पत्थर एव कांटो की भूमिपर, कहाँ पडी हूँ, सम्पूर्ण सामग्री सहित महारमणीक वीणा बांसुरी मृदग आदि के मधुर वाणी को सुनती हुई, सुखरूपी निंद्रा को लेने वाली, मैं कैसे इन पशुओ के भयकर शब्दों को सुनकर भयानक वनमें अकेली शयन करूंगी। रामदेवकी प्यारीपटरानी अपयश रूपी दावानल अग्निसे जली, महादुखी अकेली पापों के कष्टका कारण जो यह वन, यहाँ अनेक जाति के जीव, नुकीले तृण, कंकर, पत्थर, कांटों से, भरी यह पृथ्वी इसमे मैं कैसे शयन करूँगी। ऐसे दुखरूपी अवस्था को प्राप्त करके भी, मेरे प्राण नहीं निकल रहे हैं। तो ये प्राण ही मेरे वज्र के है। अहो-पहाड जैसा यह वज्रमयी अपवाद, उसमें मैं फंसी हूँ फिर भी मेरे ह्रदय के, सौ टुकडे नहीं हो रहे हैं। सो यह मेरा ह्रदय वज्र का है। क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, किसको क्या कहूँ, किसके आश्रय से रहूँ। हे गुणसमुद्रराम! हे मेरे स्वामी! हे मेरे प्राणों के आधार! मुझे आपने क्यों तजी, हे महाभक्तलक्ष्मण!

हे महाबलशाली मेरे देवर! मेरी सहायता क्यों नहीं की। हे पिताजनक। हे माताविदेही! यह क्या हुआ? अहो विद्याधरो के स्वामी भामडल! मेरे ऐसे पापकर्म का उदय, मेरे सहित मेरे स्वामी ने परमविभूति सहित जिनेन्द्र भगवान के दर्शन पूजा का विचार किया था, सो अब मुझे इस वनमें निकाली। हे भगवान्! मैंने पूर्वभव में अज्ञानता के वश होकर, मुनि आर्यिकाओ की निदा की होगी, देव शास्त्र गुरु की अवहेलना की होगी, अथवा दान देने में अन्तराय किया होगा, जिनधर्म जिनआगम की प्रभावना नहीं की होगी, महापुरुषों का अपवाद किया होगा, इन सबका फल यह महाअपवाद रूप देश निकाले का दुख मुझे प्राप्त हुआ है। हे श्रेणिक! इस प्रकार सीता महासती रोती हुई, आक्रदन पूर्वक विलाप करती है, उसी समय राजावज्रजंघ, पुंडरीकपुरकास्वामी, हाथी पकडने के लिये वन में आया था, वह हाथी पकडकर बडी विभूति सहित वापिस अपने नगर में जा रहा था, उसकी सेना के पयादे शूरवीर कटारी आदि नाना प्रकार के शस्त्रो को कमर में बाधकर आये, सो सीता के रुदन के शब्दों को सुनकर सशय एव भय को प्राप्त हुये, एकपैर भी आगे नहीं जा सके। अश्वो के सवार भी रुदन को सुनकर, खडे हो गये उनको यह शका हुई की, इस वनमे, अनेक दुष्ट जीव भरे है। फिर भी यह यहॉ सुन्दर स्त्रीके रुदन का शब्द कहॉ से आ रहा है? मृग, साप, रीछ, सिंह, व्याघ्र चीता, गेडा, शार्दूल, अष्टापद, गजादि भयकर विकराल पशु इस वन में है, और यह चन्द्रकलासमान महामनोज्ञ स्वरसे कौन रुदनकर रही है। यह कोई देवांगना सौधर्म स्वर्ग से पृथ्वीपर आई है। या कोई चक्रवर्ती की महा पटरानी या कोई किन्नरी अथवा शचि इन्द्राणी है, ऐसा विचार कर सेना के लोग आश्चर्य को प्राप्त होकर खडे रहे। और यह सेना समुद्र समान जिसमें तुरंग ही मगर है, पयादे ही मीन हैं, हाथी ही ग्रह है। समुद्र भी गर्जना करता है, तो यह सेना भी गर्जना कर रही है। समुद्र भी विशाल होता है तो यह सेना भी महा विशाल है। समुद्र में लहरे उठती है, सेना मे सूर्य समान शस्त्रों की लहरें उठ रही है। समुद्र भी भयकर है तो यह सेना भी भयकर है। सो राजा की सम्पूर्ण सेना वहॉ एकाग्र मन से खडी हो गई।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे सीताका वनमे विलाप करनेवाला सत्तानवेवॉपर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-98

वन में वज्रजंघ का आगमन और सीता को आश्वासन

अथानंतर जैसी महाविद्या से गंगा रूकी रहे, ऐसी सेना को रूकी देख राजावज्रजंघ समीपवर्ती पुरुषोंसे पूछने लगे कि सेना को रूकने का क्या कारण है, तब उन्होंने लोगों से जानकर राजपुत्री के समाचार कहें। उससे पहले राजा ने भी रुदन की ध्वनी सुनी थी, सुनकर कहने लगा, जिनका यह रुदन का शब्द सुनते हैं, वह कौन हैं? तब कोई आगे जाकर पूछने लगे—हे देवी! तुम कौन हो? इस भयानक निर्जन वन में, क्यों रुदन करती हो। तुम्हारे समान अन्य कोई नारी नहीं है। यह क्रूर सिंहादि जीवों से भरा, संघनवृक्षों के अंधकार से इस वनमें देव और विद्याधरों का भी आवागमन नहीं है, इस वन का नाम सुनते ही मनुष्य डर कर भाग जाते हैं, यह जंगल कंकर पत्थर कांटों से भरा जिसमें सर्प बिच्छू, अजगर, कानखजूरा, मधुमक्खियाँ, चीटियाँ, प्रत्येक स्थानपर विचरण कर रहे हैं, उसमें तुम अकेली कैसे रह रही हो। आप महारूपवान महारानी जैसी लगती हो, या आप कोई देवी हो, या नागकुमारी हो, अथवा कोई उत्तम नारीहो, तुम महाकल्याण रूपिणी, शुभ शरीर की धारी, गुणवान, रूपवान तुम्हारे शब्दों से, एवं तुम्हारे शरीर से ही ज्ञात हो रहा है, कि आप कोई महा गुणवान नारी हो। आपको यह शोक करना उचित नहीं, हमको यह बडा कौतुक है, कि तुम अकेली इस भयानक जंगल मे बैठकर क्यों रो रही हो। तब सीता शस्त्रों के धारी पुरुषों को देखकर भयभीत हुई। शरीर में कम्पन होने लगा। भय से अपने आभूषण निकालकर शस्त्रधारी पुरुषों को देने लगी, तब वे सेना के लोग स्वामी के भय से यह कहने लगे—हे देवी! तुम क्यों डरती हो, शोक को छोडो, धीरता को धारण करो! यह आभूषण हमको क्यों दे रही हो, आपके ये रत्नमयी अमूल्य आभूषण आपके ही रहें, ये आपको ही योग्य हैं। हे माता! तुम भयभीत क्यों हो रही हो, विश्वास करो, यह राजा वज्रजंघ पृथ्वीपर प्रसिद्ध, महाश्रेष्ठ, नरोत्तम, राजनीति से युक्त है, सम्यग्दर्शन रूपी रत्नों के आभूषणों से सुशोभित हैं। कैसाहै सम्यग्दर्शन? जिसके समान और कोई रत्न नहीं। अविनाशी, अमूल्य, किसीके द्वारा हरा नहीं जाता, मोक्षरूपी सुख को देने वाला। शंकादि दोषों से रहित, सुमेरू समान

अचल है। हे माता! जो सम्यग्दर्शन सहित हैं, ऐसे राजा के गुणों का वर्णन हम कहाँ तक करे। यह राजा जिनधर्म के रहस्य को जानने वाला, शरणागत, प्रतिपालक है, पर उपकार में महाप्रवीण, महादयावान, महापवित्र, निर्मल आत्मा, प्रजाके पिता समान रक्षक, महा दातार, जीवों की रक्षा करने वाला, अहिंसा धर्म का अनुयाई, दीन, अनाथ, दुर्बल, योगी, प्राणियों को माता के समान पालन करते हैं। शुभ कार्य को करने वाले, शास्त्र-शस्त्र के विद्या के अभ्यासी, परधन के त्यागी, परस्त्री को माता बहिन बेटी के समान मानने वाले। अन्यायमार्ग को गहरे कूये मे अजगर समान जानते है, धर्म में अनुरागी, ससार के भ्रमण से भयभीत, सत्यवादी, जितेन्द्रिय हैं। राजा वज्रजघ के सम्पूर्ण गुणों का, जो मुख से वर्णन करना चाहते हैं, वह अपनी भुजाओं से समुद्र तिरना चाहते हैं। सेना के लोग सीता से, यह बात कह रहे थे, उसी समय राजा वज्रजंघ स्वयं आये। हाथी से उतरकर बहुत विनय सहित पवित्रमन से, आकर सीता से कहने लगे—हे बहिन! यह वज्र समान कठोर चित्त, महाअज्ञानी कौन है, जो तुम्हें ऐसे भयानक वन में छोडी है, तुमको छोडते समय, उनका हृदय क्या नहीं फटा जा रहा था—हे पुण्यरूपिणी! तुम अपने दुख का कारण कहो, विश्वास करो, भयमत करो, और गर्भ का दुखमत करो, तब महासती सीता शोक से महादुखी होकर रुदन करने लगी, तब राजा ने बहुत सन्तोष दिया, धैर्य बंधाया, मधुर शब्दो से बार बार कहा—हे बहिन! शोक मत करो, जो वृतान्त है वह कहो, तब यह सीता ऑखो में ऑसु बहाती हुई गद् गद् वाणी से कहने लगी।

हे राजन्! मै मंद भागिनी, मेरी कथा अत्यन्त महादीर्घ है, यदि आपको सुनने का समय है और सुनना चाहते हो तो, मन लगाकर सुनो। मै राजा जनक की राजपुत्री, विद्याधरों का स्वामी भामडल उनकी बहिन, राजा दशरथ के राज पुत्र श्रीराम उनकी वधू, सीता मेरानाम, मैं राजारामकी रानी, राजा दशरथ ने रानी कैकई को वरदान दिया था, इसलिये भरत को राज्य देकर, राजा वैराग्य से पूर्ण होकर दीक्षा धारण की। और श्रीराम लक्ष्मण वनमें गये, तब मैं पति के संघ वनमे रही। रावण कपट पूर्वक मुझे हरकर ले गया, ग्यारहवें दिन मैंने पतिके समाचार सुनकर भोजन किया, श्रीराम मेरे स्वामी, राजा सुग्रीव के घरमें रहे, पुनः अनेक राजा विद्याधरो सहित आकाश के मार्ग होकर समुद्र को पार करके लंका में आये, रावण को जीत, मुझे लेकर आये। और राज्यरूपी कीचड से, निकलकर भरत ने

तो वैरागी होकर दीक्षा ले ली, भरत मुनिराज कर्मरूपी कालिमा से, रहित होकर मोक्ष धाम को प्राप्त हुये। और कैकई शोकरूपी अग्निसे, जल रही थी, पुनः वीतराग का मार्ग कल्याणकारी जानकर आर्यिका होकर महातप से स्त्री लिंगका छेदकर स्वर्ग में देव हुई। पुनः मनुष्य होकर मोक्ष प्राप्त करेगी। बलभद्र राजाश्रीराम, नारायणलक्ष्मण, अयोध्या में इन्द्र समान राज्य करते हैं। वहाँ के दुर्जनलोग निशंक होकर अपवाद करने लगे कि, रावण सीताको हर कर ले गया, पुनः रामने लाकर घर में रखी, राम महा विवेकी धर्मशास्त्र के ज्ञाता, न्यायवान, मर्यादा पुरुषोत्तम ऐसा कार्य क्यों करते हैं, जो कार्य राजा करतें हैं वैसा ही प्रजा करती है। सभी लोग मर्यादा रहित होने लगे, और कहने लगे कि राजा श्रीराम के घर में यह रीति है, तो हमको क्या दोष, और मै गर्भ से युक्त यह चिन्तवन करती थी, कि जिनराज के चैत्यालयों की अर्चना करूँगी, और भरतार भी मुझे साथ ले जाकर निर्वाणक्षेत्र, अतिशयक्षेत्र सिद्धक्षेत्र उनकी यात्रा वंदना पूजा स्तुति करने के लिए तैयार हुये थे। मुझे बार बार कहते थे कि पहले तो हम कैलाशपर्वत पर जाकर श्रीऋषभदेव भगवान के निर्वाणक्षेत्र की वदना करेगे। पुनः ओर भी सभी निर्वाणक्षेत्रों की वदना करके अयोध्या में, ऋषभ देवादि तीर्थकरों की जन्म कल्याण भूमि है सो अयोध्या की यात्रा करेगे। और जितने भगवान के जहाँ जहाँ चैत्यालय है, वहाँ वहाँ वंदना, एव दर्शन करेंगे। कम्पिलानगरी में भगवान विमलनाथ के दर्शन करेंगे। और रत्नपुरी में, भगवान धर्मनाथ की वंदना करेगें। कैसेहैं धर्मनाथ? जीवो को धर्मके स्वरूप का उपदेश देते है। पुन. श्रावस्तिनगरी में संभवनाथ का, चम्पापुर में भगवान वासुपूज्य का, काकन्दिपुर में भगवान पुष्पदन्त का, चन्द्रपुरी में भगवान चन्द्रप्रभु का, कौशम्बि नगरी में प्रद्मप्रभु भगवान का, भद्रपुरी में शीतलनाथ का, मिथिला में मल्लिनाथ के, वाराणसी मे सुपार्श्वनाथ का, भेलुपुर में पार्श्वनाथ का, सिंहपुरी में श्रेयांसनाथ का, हस्तिनापुर में शांतिनाथ कुन्थुनाथ अरहनाथ की, वंदना स्तुति पूजा करेंगे। और हे देवी! राजगृही कुशाग्रनगर में, श्रीमुनिसुव्रतनाथ के दर्शन करेगें, जिनका तीर्थकाल अब चल रहा है, और भी भगवानके अतिशयक्षेत्र महापवित्र पृथ्वीपर प्रसिद्ध हैं, वहाँ भी पूजा करेंगे, भगवान के चैत्यालय सुर असुर गन्धर्व मनुष्य तिर्यचदेवादि से पूज्य नमस्कार करने योग्य है। उन सबकी हम वंदना करेंगे। और पुष्पकविमान में बैठकर सुमेरुपर्वत के चैत्यालयों की वंदना करेंगे। भद्रशालवन नन्दनवन सौमनसवन

और पांडुक वन जहाँ जिनेन्द्रभगवान है वहाँ पूजा अर्चना करेंगे। अढाईद्वीप में जितने चैत्यालय हैं, उन सब क्षेत्रोंकी वंदनाकर हम अयोध्या में आयेंगे।

हे प्रिये! भाव सहित अर्हन्त भगवान को एकबार भी नमस्कार करते हैं, तो अनेक जन्मों के किये हुये पाप नष्ट हो जाते है। हे महारानीजी! धन्य तुम्हारा भाग्य जो गर्भ अवस्था में, तेरे जिनवंदना की इच्छा हुई, मेरे भी मन में यह इच्छा है, तेरे सहित जिनमन्दिरो के दर्शन करूँ। हे जानकी! पहले भोगभूमि मे धर्मकी प्रवृति नहीं थी, लोग असमझ थे, तब भगवान ऋषभदेवने, भव्यजीवों को मोक्षमार्ग का उपदेश दिया था। भव्य किसे कहते हैं? जिनको संसार भ्रमणका भय होता, एवं रत्नत्रय की साधना करके मोक्ष प्राप्तकर सकता है, वह भव्य हैं। कैसेहैं भगवान ऋषभदेव? प्रजाके पति, जगतमे श्रेष्ठ तीनलोक के जीवों द्वारा पूज्य हैं। अतिशयो सहित वे भगवान भव्यजीवो को जीवादि सप्ततत्वो का उपदेश देते हैं। अनेक भव्यजीवों को संसार से पार कराते हुये स्वय भी निर्वाणपद को प्राप्त करते हैं। सम्यक्त्वादि आठगुणों से मंडित, सिद्ध होते हैं। उनके चैत्यालय स्वर्ण रत्नो के भरत चक्रवर्ती ने, कैलाशपर्वत पर निर्मित कराये और उनमें पाँचसौ धनुष की रत्नो की प्रतिमाये सूर्य से भी अधिक तेजवाली जिनबिम्ब मंदिरमें विराजमान कराये। अभी भी देव विद्याधर गधर्व किन्नरादि पूजा करते हैं, वहाँ अप्सरायें नृत्य करती हैं, वीतराग प्रभु स्वयंभू, निर्मल, त्रैलोक्य पूज्य, अनतरूप अनंतज्ञान से विराजमान, परमात्मा सिद्ध, शिव, आदिनाथ, ऋषभदेव भगवान उनकी कैलाशपर्वतपर हम जाकर वंदना पूजा करेंगे। वह दिन कब होगा, इस प्रकार मेरे से बार बार कहते थे। उसी समय नगर के लोग एकत्रित होकर आये, और लोक अपवाद की महा कठोर बात मेरे स्वामी श्रीराम से कही, तब मेरे नाथ आगम के ज्ञाता, विचार के कर्त्ता, मनमें यह सोचने लगे कि यह लोग स्वभाव से ही महावक्र है, अन्य किसीउपाय से लोग अपवाद मिटने वाला नहीं हैं, इसलिये लोक अपवाद से प्रियजन को तजना, त्यागना ही अच्छा हैं, या मरना अच्छा है, ऐसा विचारकर मेरे पति महाप्रवीण उन्होने लोक अपवाद के भय से, मुझे महाअरण्य वन में तजी, मैं दोषरहित, शीलवान हूँ, मेरे पति मुझे अच्छी तरह जानते हैं, मेरे देवर लक्ष्मण ने बहुत कुछ कहा, परन्तु मेरे स्वामी ने नहीं मानी। मेरे ऐसा ही कर्मका उदय है। जिन्होने उत्तम क्षत्रिय कुल में जन्म लिया और सर्व शास्त्रों के ज्ञाता हैं, उनकी यही रीति है जो किसीसे नहीं डरते, एक लोक अपवाद से डरते हैं। यह अपने

निकालने का वृतान्त कहकर बहुत रुदन करने लगी। शोकरूपी अग्निसे जल रहा है, उसका मन! सीता को रुदन करती एवं शरीर से धूल मिट्टी लगी हुई देख, और राजा रामकी महारानी जानकर महादुखी, दीन, देखकर राजा वज्रजंघ उत्तम धर्मको जाननेवाले महाउद्वेग को प्राप्त हुये। और सीता को जनककी पुत्री जान, समीप आकर बहुत आदर से संतोष दिया। और कहने लगे, हे शुभमते! तुम जिनशासन में प्रवीण हो, शोक से रुदन मत करो, यह आर्तध्यान दुखको बढाने वाला है। हे जानकी! इस लोक की स्थिति तुम जानती हो, तुम महासुज्ञानी, अनित्य, अशरण, एकत्व, अन्यत्व, इत्यादि द्वादश अनुप्रेक्षाओं का चिन्तवन करने वाली, तुम्हारा पति सम्यग्दृष्टि और तुम सम्यक्त्व सहित महाविवेकवान हो। मिथ्यादृष्टि जीवों की तरह बार बार शोक मत करो, तुम तो जिनवाणी की श्रोता, अनेक बार मुनियों के मुख से, या केवली के मुख से, धर्मश्रवण किया है, निरन्तर ज्ञानभाव को धारण करने वाली हो, तुम्हें शोक करना उचित नहीं। अहो! इस ससार मे, भ्रमण करता हुआ इस मूढ अज्ञानी जीवने मोक्षमार्ग को नहीं जाना, इसलिये क्या क्या दुखों को नहीं भोगे। इस जीव को इष्टवियोग, अनिष्टसयोग अनेक बार हुये, अनादिकाल से, भवसागर के मध्य, दुखरूपी भवर मे, यह जीव फंसा हुआ है। इस जीवने तिर्यचयोनि मे जलचर थलचर नभचर पर्याय में शरीर को बार बार धारणकर, शीत, उष्ण, बारिशादि के अनेक दुख भोगे, मनुष्य जीवन में अपवाद, वियोग, रोग, दुख, रुदन, क्लेशादि अनेक पीडाये प्राप्तकर दुखो को भोगा। नरक में शीत, उष्ण, छेदना, भेदना, मारना, काटना, परस्पर घातकरना, महादुर्गंधमय अनेक रोगों के अनेक दुख भोगे। कभी कुतप से एव अकाम निर्जरा से, अल्पऋद्धि का धारी देव हुआ, तो वहॉ भी महाऋद्धिके धारी देवों को देख दुखी हुआ। और मरते समय दुखी होकर आर्तध्यान से मरा, और एकेन्द्रियादि पर्यायों मे जन्म लिया। कभी तपके बलसे इन्द्रसमान देव हुये, तो विषयों मे, अनुरागकर वहॉ दुखी ही हुआ, इसप्रकार चारों गतियों में, भ्रमण करते हुये इस जीव ने भव वन में आधि'व्याधि, संयोग-वियोग, रोग-शोक, जन्म-मृत्यु, दुख-दाह, दरिद्र-हीनता, अनेक इच्छायें, अनेक विकल्प, से संतप्त होकर अनेक दुख प्राप्त किये, अधोलोक, मध्यलोक, उर्ध्वलोक, में ऐसा कोई स्थान नहीं, जहॉ इस जीवने जन्म मरण नहीं किये हों, अपने कर्म के उदय से संसार सागर में भ्रमण करते इस जीव ने मनुष्य जीवन में, स्त्री पर्याय प्राप्तकर, अनेक दुख भोगे।

तुम्हारे पुण्यकर्म के उदय से, राम समान सुन्दर पति मिले। जिनको सदा शुभकर्म के उदय से तुम्हारी जैसी रानी मिली। और पुण्य के उदयसे महासुखों को भोगा। और अशुभकर्म के उदय से दुस्सह दुर्निवार दुख को प्राप्त हुई। लंका में रावण हरकर ले गया, वहाँ पति के समाचार सुने बिना ग्यारह दिन तक भोजन नहीं किया। जब तक पति के दर्शन नहीं हुये तब तक आभूषण सुगंध, लेप, शृगारादि से रहित रही। शत्रु को मारकर राम तुमको लेकर आये। तब पुण्य के उदयसे सुखको प्राप्त हुई। पुनः अशुभ कर्म का उदय आया, तब बिना दोषी गर्भवती को पतिने लोक अपवादके भय से घर से, निकाली। लोक अपवाद रूपी सर्प के काटने से तुम्हारे पति मूर्च्छित हुये। सो बिना समझे तुम्हे भयंकर वन में छोडी। हे देवी! तुम परम उत्कृष्ट पतिव्रता महासती प्रशंसा योग्य हो, तुमको गर्भ अवस्था मे चैत्यालयो के दर्शन करने की इच्छा हुई, अभी भी तुम्हारे पुण्य का ही उदय है, तुम महाशीलवती जिनमति हो, तुम्हारे शील के प्रभाव से इस निर्जनवन मे, हाथी पकडने के लिये, मेरा यहाँ आना हुआ, मैं वज्रजंघ पुडरीकपुर का अधिपति राजा विरदवाह सोमवशी, महाशुभ आचरणके धारी उनकी सुबधु नाम की रानी, उनका मै पुत्र, तुम धर्मके विधान से मेरी बडी बहिन हो, पुंडरीकपुर चलो, शोक छोडो। हे बहिन! शोक करने से कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। पुडरीकपुर मे वहाँ राम तुम्हे ढूंढकर अवश्य ही बुलायेगे। राम भी तुम्हारे वियोग से पश्चाताप कर अतिव्याकुल होंगे। अपने प्रमाद से अमूल्य महागुणवान रत्न को खोया। उसे विवेकी अवश्य ही ढूंढते हैं। इसलिये हे पतिव्रते! नि.सन्देह राम तुम्हे अवश्य ही आदर से बुलायेगे। इस प्रकार महाधर्मात्मा राजा वज्रजघ ने सीता को शाति एव सतोष दिया। तब सीता के मन मे संतोष हुआ। मानो भाई भामडल ही मिला। राजा वज्रजघ की सीता ने अतिप्रशसा की। तुम मेरे उत्तम श्रेष्ठभाई हो, महायशवान शूरवीर, बुद्धिमान, शांतस्वभावी, साधर्मियो के प्रति वात्सल्य करने वाले, महापुरुष हो। गौतमस्वामी कहते है हे श्रेणिक! राजा वज्रजघ अधिगमज सम्यग्दृष्टि, गुरु के उपदेश से सम्यक्त्व प्राप्त किया है, ज्ञानी परमतत्त्व के स्वरूप को जानने वाले, पवित्रआत्मा, साधु समान भाव हैं, राजा वज्रजंघ व्रत गुण शील से, युक्त मोक्षमार्ग के, पुरुषार्थी, ऐसे महापुरुषों के चरित्र, दोषों से रहित, पर उपकारी है। हे वज्रजघ! हे राजन्! तुम मेरे पूर्वभव के भाई होगे। सो इस भवमें सच्चा भाईपना दिखाया। हे भाई! वज्रजंघ मेरा शोक संतापरूपी अंधकारको दूर

करने वाले, सूर्य समान तुम पवित्र आत्मा हो। संसार में कोई जीव ऐसा नहीं है, जिसके साथ नाता रिश्ता नहीं हुआ हो, किसी न किसी भवमें किसी न किसी पर्यायमें, प्रत्येक जीव के साथ, माता, पिता, भाई, बहन, पुत्रादि का रिश्ता प्रत्येक जीव के साथ हुआ है कभी पुण्य के उदय से शत्रु मित्र होता है और पाप के उदय से मित्र शत्रु बन जाता है। इसी प्रकार आप भी मेरे पूर्वभव के कोई मित्र होंगे, जो इस भवमें मेरे संकट के समय में आपने मुझे धर्मकी बहन बनाकर मेरी रक्षा की।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका में सीताको वज्रजघका धैर्यधारण करानेका वर्णन करनेवाला अठानवेवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-99

सीता का वज्रजंघ के साथ जाना और मार्ग में सर्वत्र सन्मान पाना

अथानंतर वजजंघ ने, सीताको बैठनेकेलिये क्षणमात्र मे, अद्भुत पालकी मगाई, उसमें सीता बैठी, पालकी विमानसमान, महामनोज्ञ, सुन्दर, खम्भो में श्रेष्ठ दर्पण जडे हैं, मोतियो की झालर और चमर से सुशोभित है, ऐसी सुन्दर पालकी मे, बैठकर महापतिव्रता सीता सती ऋद्धिसहित महासेना के मध्य में चली जा रही है। आश्चर्य को प्राप्त होती हुई, कर्मो का चिन्तवन करती है। तीनदिन में भयानक जगल को पारकर पुडरीकपुर में पहुॅचे। सम्पूर्ण देश एवं नगर नगर, गॉव गॉव, के लोग महासती सीतामाता के चरणों मे भेंट रखकर प्रणाम करते थे। कैसाहै वंज्रजंघका देश? जगह जगह रत्न स्वर्ण चांदी की खानें, देवों के नगर समान नगर, वन उपवन को देख ससार असार का चिन्तवन करती हुई निर्दोषी सीता जा रही है, नगर के लोग जगह जगह भेंटकर स्तुति करते हैं। हे माता! हे पतिव्रता! हे शिरोमणी! आपके दर्शन करने से, हमारे पापों का नाश होता है, हमारा जीवन कृतार्थ हुआ, बार बार नमनकर अर्धपाद किये। अनेक राजा देवोंसमान आकर अनेक प्रकार की भेट चरणों में, रख बार बार वंदना करते हैं।

इस प्रकार सीता सती कदम कदम पर राजा प्रजाओं से सम्मानित होती हुई जा रही है। वज्रजघ राजा का देश महासुखी महामनोहर, जगह जगह वन उपवनो में, चैत्यालय देख हर्षित हुई प्रसन्न मनसे विचार करती है, जहाँ का राजा धर्मात्मा होता है, वहाँ की प्रजा सुखी होती है। इस प्रकार चलते चलते पुंडरीकपुर के समीप आये। राजा वज्रजंघ की आज्ञासे, नगरकेलोग सीताके आगमनको सुन, सभी सन्मुख आये। राजा के आगमन को सुनकर नगर को सुन्दर सजाया, पृथ्वीपर सुगधित वस्तुयें छिडकी, गली बाजार मोहल्लों में तोरण लगाये दरवाजो पर मंगल कलश विराजमान किये, मदिरों पर ध्वजायें चढाई, घर घर में मगल गीत नृत्य होने लगे। नगर के दरवाजे एव घर घर के दरवाजों पर लोग खडे खडे सीता को देखकर प्रसन्न हो रहे है। नगर के दरवाजों से लेकर राजद्वार तक सीता के दर्शनों के लिये लोग खडे है। नाना प्रकार के बाजों की ध्वनी से दशो दिशाये गूज रही है। शंख बज रहे है, उसी समय सीता ने, नगर मे प्रवेश किया। जैसे लक्ष्मी देवलोक मे प्रवेश करती है। राजा वज्रजघ के राज्य भवन मे ऊँचे ऊँचे विशाल जिनमंदिर हैं। राज लोक की सभी स्त्रियाँ, दासियाँ एव रानियाँ सीताजी के सन्मुख आई। सीता पालकी से उतरकर जिनमन्दिर मे जाकर, जिनेन्द्रभगवान के दर्शनकर, राजभवन की और चली। जैसे भाई भामडल सीता का सम्मान करते हैं, ऐसे राजा वज्रजघ आदर विनय पूर्वक सीता का सम्मान करने लगा। वज्रजंघ के परिवार के सम्पूर्ण लोग, एव राजलोक की सम्पूर्ण रानियाँ विनय भक्ति सहित सीतामाता की सेवा करती हैं। और मनोहर शब्दों से निरन्तर प्रार्थना करती है। हे देवी! हे पूज्य! हे स्वामिनी! हे ईशानने! आप सदा जयवन्त हो। युग युग तक जीवो। आनन्दको प्राप्त होओ। प्रसन्न रहो। सुखी रहो। हमे आज्ञा करो। इस प्रकार स्तुति करती है। और सीता जो आज्ञा करती है, वह सभी शिरोधार्य रूप स्वीकार करती हैं। दास दासियाँ आज्ञा से हर्षित होकर सेवा करती है। सीता के गुणो से, आकर्षित होकर राज दरबार के सभी सेवक लोग सीता के चरणों में खडे ही रहते हैं। सीता के वात्सल्य से राजलोक की, सभी रानियाँ एवं दासियाँ एक क्षण मात्र भी, सीता को अकेली छोडकर जाना नहीं चाहती है। सीता आनन्द से, जैनधर्म की कथायें उपदेश चिन्तवन मनन करती हुई, धर्म कार्य में मन लगाकर रहने लगी। और सामान्त एव राजा लोग भेंट करते हैं, वह जानकी धर्मकार्य एवं दान में लगाती है। यहाँ तो सीता

धर्मकी आराधना करती है एव श्रावक के षट् आवश्यक पालती हुई जिनेन्द्रभगवान की, अष्टद्रव्यों से पूजा, भक्ति करती है। जिनआगम में प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग इन चारों ही अनुयोगों का वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आमनाय और धर्मोपदेश रूप से स्वाध्याय करती, चतुर्विधि संघ आचार्य, उपाध्याय साधु परमेष्ठी एवं आर्यिकायें व क्षुल्लक, क्षुल्लिकाओं की उपासना पूर्वक यथायोग्य वैयावृत्ति करती थी। षट्काय जीवों की रक्षा एवं पॉच इन्द्रिय और मनको वशकरके समय अनुसार रसादि का त्याग करना, जीव मात्र की रक्षा करना, इस प्रकार संयम में लीन रहती थी, बारह प्रकार के तपों में अन्तरग तपकी भावना करती हुई, बहिरंग के तप अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन और कायक्लेशादि अपनी शक्ति प्रमाण तप करती थी। चारो प्रकार के दान-आहारदान, औषधदान, ज्ञानदान, अभयदान सीता नित्य करती थी। चतुर्विधि सघको सप्त गुणों से युक्त, नवधाभक्ति पूर्वक आहारदान देती थी। षट् आवश्यक क्रियाओ का पालन दक्षता पूर्वक करती थी। मानव जीवन को अमूल्य रत्न समान समझकर कमलपुष्पों के समान विकसित करने लगी। सीता के हृदय में ठोस-ठोस कर जीवों के प्रति करुणा भरी हुई थी। दुखी रोगी दीन अनाथ लोगो को दयापूर्वक, भोजन औषधी आदि देती थी। इस प्रकार प्रमाद और चिन्ता को छोडकर अपना उपयोग धर्मध्यान मे लगाती रही। और राजा वज्रजंघ के राजभवन में रानियों के साथ आनन्द पूर्वक रहती थी।

सेनापति को अयोध्या वापिस लौटना और सीता का सन्देश राम से कहना

वह सेनापति कृतान्तवक्र सीताके दुखरूपी अग्निमे जलता हुआ, एव रथ के घोडों की थकान दूरकर श्रीरामचन्द्रजी के पास आया। कृतान्तवक्र को आता देख अनेक राजा सन्मुख आये। कृतांतवक्र ने आकर श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में नमस्कार कर कहाँ, हे प्रभो! आपकी आज्ञा प्रमाण मैं महासती सीता महारानीजीको भयानक वन में अकेली छोडकर आया हूँ, उनके पास गर्भ मात्र ही सहाई हैं। हे देव! वह भयानक वन अति विकराल क्रूर जीवों से भरा भयवान हैं, वहॉ वनमें सघन वृक्षों के समूह अधकार रूप हैं, सिंह और आरणी, भैंसे आपस में सदा युद्ध करते हैं घू-घू विरस शब्द करते हैं, गुफाओं में सिह दहाड मारते है, तो गुफायें गूंज उठती हैं, महाभयंकर लम्बे चौड़े अजगर बोल रहे हैं सांप, बिच्छू, चिंटियॉ, मधुमक्खियाँ प्रतिसमय विचरण करती हैं, ऐसे कालरूपी विकराल वन में, हे प्रभो!

पटरानी सीता ऑखों में ऑसुओं सहित महादीन वदनसे आपको जो कहाँ है वह ध्यान से सुनो-हे मेरे स्वामी! आप आत्म कल्याण करना चाहते हो, तो जैसे मुझे छोडा ऐसे जिनेन्द्रभगवान की भक्ति नहीं छोडना। जैसे लोगों के अपवाद से, आपका मेरे से अति अनुराग था, तो भी आपने मुझे वन में छोडा, ऐसे किसी के कहने से जिनशासन की श्रद्धा नहीं छोडना। लोग बिना विचारे निर्दोषी को दोष लगाते, जैसे मुझे लगाया। आप किसीका न्याय करो तो विचारकर करना। किसी के कहने से किसीको झूठा दोष नहीं लगवाना। और सम्यग्दर्शन से रहित-मिथ्यादृष्टिजीव जिनधर्मरूपी रत्नों का अपवाद करते हैं, सो उनके अपवाद के भय से सम्यग्दर्शन की शुद्धता नहीं छोडना, वीतरागप्रभु का मार्ग हृदयमें दृढता पूर्वक धारण करना। मुझे छोडने का इसभव मे किंचित मात्र दुःख होगा, लेकिन सम्यग्दर्शन को छोडने से जन्म जन्म मे दुख होगा। इस जीवको संसार में रत्न, स्त्री, निधि, वाहन, राज्य, परिवार, धन, वैभव सबही सुलभ है, परन्तु एक सम्यग्दर्शन रत्न ही, महादुर्लभ है। राज्य में पापकर नरक में जाना है, एक उर्ध्वगमन सम्यग्दर्शन के प्रभाव से ही होता है। जिन्होने अपनी आत्मा को सम्यग्दर्शन रूपी आभूषणों से मडित किया, वही कृत कृत हुये। यह शब्द जानकी ने कहे है, उनको सुनकर किसके धर्म की बुद्धि नहीं उत्पन्न होती है, अवश्य होती है। हे स्वामी! एक तो सीता वह स्वभाव से ही कायर और महाभयकर वन मे दुष्ट जीवो के मध्य कैसे जीवित रहेगी। जहाँ महाविषैले भयानक सर्पो के समूह और अल्पजल के सरोवर, तालाब उनमे मत हाथी, एव हिरणे प्यास की वेदना से, वृथा दौडकर व्याकुल होते है, जैसे ससार की माया मे रागी जीव दुखी होते है, चिरमी समान लाल नेत्रों वाले क्रोधित सर्प भुजंग फुकार करते है, जहाँ तीव्र गर्मी की पवन के संचार से क्षणमात्र मे पत्तों के ढेर होते है, वन के शूकरों की सेना से सरोवर का जल अपवित्र मलिन हो रहा है। जहाँ जगह जगह भूमिपर कांटे, गन्ने, सर्पो की बामीया, ककर पत्थरों से पृथ्वी महाकष्टरूप दुख दाई हैं, वहाँ की पृथ्वी सुई से भी ज्यादा नुकीली है, सूखे पत्ते फूलादि पवन से भागे, भागे फिरते हैं, ऐसे महाअरण्यमें, हे देव! जानकी कैसे जीवित रहेगी, मैं ऐसा जानता हूँ कि क्षणमात्र को भी जीवित नहीं रह सकती है।

सीताका सदेश सुनकर रामका विलाप करना और लक्ष्मण का समझाना

हे श्रेणिक! कृतातवक्र सेनापति के यह वचन सुन श्रीराम अतिविषाद करने

लगे। कैसेहैं वचन? सीता के वचनों से, पापियों का मन भी निर्मल कोमल हो जाता हैं। श्रीराम चिन्तवन करने लगे, देखो मैंने अज्ञानी दुष्ट जीवों के कहने से, बहुत विपरीत कार्य किया। कहाँ वह भयंकर वन और कहां वह राजपुत्री! यह चिन्ता करते हुये, मूर्च्छित हो गये। अनेक शीत उपचार करने के बाद सचेत हुये पुनः विलाप करने लगे। हे सीता! निर्मल परिणामों की धारी, मैंने तुम्हें वन में छोडी, फिर भी तुम्हारे मनमें किसी प्रकार का द्वेष नहीं, तुमने हमको धर्म का सम्बोधन किया, हाय निर्मल गुणों कीखान, मुखकी ज्योतिसे चन्द्रमा को जीतने वाली, हे जानकी! मेरे को कम से कम, एकशब्द तो तुम बोलो, तुम जानती हो कि मेरा मन तुम्हारे बिना महादुखी है, अतिकायर हैं। तुम उपमा रहित, शीलव्रत की आभूषण, मेरे प्राणों की प्यारी, मेरे जीवन का आधार, मेरे मनको हरने वाली, मेरे जीवन की साथी, आज्ञाकारिणी मेरे दुख एव कष्टो के समय में आगे-आगे चलने वाली, और सुखों के समय मे मेरे पीछे रहने वाली, मेरे आठहजार रानियों के ऊपर तुम शिरोधार्य पटरानी महारानी हो, हे सीता! पापरहित निर अपराध, मेरे मन की निवासिनी, तुम महलो मे राजभवनों में रहने वाली, हे देवी! वह महाभयकर वन, क्रूर दुष्ट हिंसक जीवो से भरा जंगल, उसमें सभी सामग्री से रहित, कैसे दुःखों को सहन करेगी? हे प्यारी! तू महा विनयवान लज्जावान, गुणवान, रूपवान, उदार मनकी धारी, उपसर्गो को सहने वाली, देव शास्त्र गुरुकी भक्त, धर्मध्यान मे रत रहने वाली, अकेली भयानक वन में कहाँ जायेगी। महाकोमल तेरे चरण तुम कंकर पत्थर पर कैसे चलोगी? और वनके भील महाम्लेच्छ कृत्य अकृत्य के ज्ञान से रहित, ऐसे म्लेच्छ तुझे कहीं ले जायेंगे तो तू पहले के दुख से भी, अधिक दुखी होगी। तू भयानक वन मे मेरे बिना महादुखी होगी। अथवा अंधेरी रात्रि में दुखी होकर, कहीं गिरी पडी होगी, तो हाथियों के नीचे दब गई होगी मर गई होगी उससे बड़ा अनर्थ क्या होगा? और गृद्ध पक्षी, रीछ, सिह, व्याध्र, अष्टापद इत्यादि दुष्ट जीवो से भरा वन, उसमे कैसे निवास करोगी? कैसे कैसे दुखों को तू प्राप्त होगी, उनका वर्णन कौन करेंगा। या अग्नि की ज्वाला से, जल रहा जो वन, उसमें कैसे निवास करेगी। अथवा भीषण उष्ण भरी गर्मी में सूर्य की दुस्सह किरण की धूप गर्मी आताप से बर्फ की तरह पिघल गई होगी, छाया में जाने की भी शक्ति नहीं होगी, कैसे गर्भ अवस्था में अपना जीवन रखेगी, तुम्हारे दुखी होने से, भूख प्यास की वेदना से, गर्भ मे दोनों बालक

दुःखी होंगे। शोभायमान शील को धारण करने वाली, मुझ निर्दयी में, मन लगाकर, वेदना से मर गई होगी। हे भगवान! पहले जैसे रत्नजटी ने आकर मुझे सीता के समाचार कहे थे, ऐसे कोई भी मुझे अब सीता की कुशल बात आकर के बताये। हे प्रिये! पति व्रते! विवेकवती सुख रूपिणी तू कहॉं गई, कहॉं ठहरेगी, क्या करेगी, कहॉं रहेगी? अहो कृतान्तवक्र! कहो, क्या तू सच में ही भयानक वन में छोडकर आ गया है, अगर कहीं अच्छी जगह छोडकर आया हो तो, तेरे मुख से अमृतरूपी वचन निकले। जब श्रीराम ने ऐसा कहा, तब सेनापति ने नीचा मुख किया। प्रभा रहित हो गया, कुछ कहा नहीं मौन से बैठा रहा। तब श्रीरामचन्द्रजी ने जाना की यह सेनापति सत्य ही, सीताको, घनघोर भयानक वन में छोडकर आया है, तब रामचन्द्रजी चिन्ता से मूर्छित होकर गिर पडे। बहुत समय पश्चात् धीरे धीरे मूर्च्छा से रहित हुये, इतने में लक्ष्मण आये, और चिन्ताकर कहने लगे, हे देव! क्यों व्याकुल हुये हो, समता रखो, सतोषधारण करो, पूर्वभव में किये हुये पापो का फल आकर प्राप्त हुआ है। सम्पूर्ण प्रजा के लोग अशुभकर्म के उदय से दुखी हो रहे है। केवल महारानीजी सीताजी को ही दुख नहीं हुआ है, सुख अथवा दुख ये स्वयं ही किसी निमित्त से आकर प्राप्त होते है हे प्रभो! कोई किसी को आकाश मे ले जाता है, अथवा क्रूर जीवों से भरे वनमे डाल देता है, कोई पर्वतपर ले जाता है, ऐसे ही पूर्ण पुण्य से कोई प्राणी की रक्षा होती है, इसी प्रकार सभी प्रजा दुख से तप्तायमान है, ऑसुओ के प्रवाह से मानों ह्दय जल रहा है, दुख से ऑसू झर रहे है। इस प्रकार के वचन कहकर लक्ष्मण भी अत्यंत व्याकुल होकर रुदन करने लगे। जैसे गर्मी से कमल मुरझा जाते है, वैसे ही लक्ष्मण का मुखकमल मुरझा गया। हाय माता! तुम कहॉं गई, दुष्ट पुरुषों के अपवाद रूपी अग्नि से जल रहा है, आपका शरीर, हे माता! गुणरूपी अनुप्रेक्षाओं के चिन्तवन को करने वाली, शीलरूपी पर्वत की पृथ्वी, सौम्य स्वभाव की धारक, राजहंस श्रीराम उनके मन को प्रसन्न करने में मानसरोवर समान, कल्याण रूप क्रियाओ मे प्रवीण, हे श्रेष्ठमाता! आप कहॉं गई! जैसे सूर्य बिना आकाश की शोभा कहॉं? और चन्द्रमा बिना रात्रि की शोभा कहॉं? ऐसे हे माता! आपके बिना अयोध्या की शोभा कहॉं? इस प्रकार लक्ष्मण रुदन करते हुये रामसे कहते हैं, हे देव! सम्पूर्ण नगर वीणा बांसुरी मृदंगादि की ध्वनिसे रहित होकर, केवल शोक रूप रात दिन रुदन की ध्वनि से पूर्ण है। गली गली में, बाजार बाजार में, घर घर में

चौराहे-चौराहे पर, नदियों के तट पर सभी स्थानपर लोग रूदन करते हैं। उनके ऑसुओं की धाराओं से पृथ्वीपर कीचड हो रहा है। मानों अयोध्या में वर्षा काल ही फिर से आया हो। प्रत्येक लोग ऑसू बहाते हुये गद्-गद् वाणी से कष्ट पूर्वक कहते हैं। जानकी प्रत्यक्ष्य नहीं है दूर ही हैं, फिर भी एकाग्र मनसे गुणरूपी कीर्तिके पुष्पसमूह से पूजा करते हैं। वह सीता महापतिव्रता सम्पूर्ण सतियों में शिरोधार्य है। उनको यहाँ बुलाने की सभी की अभिलाषा है, सभी लोगों का, माता ने ऐसा पालन किया है, जैसे माता पुत्र का पालन करे। सभी शोक सहित माता के गुणो को यादकर कर रुदन करते है। पृथ्वीपर ऐसा कोई नहीं है, जो जानकी के जाने का शोक नहीं किया हो। इसलिये हे प्रभो! आप सब बातों में प्रवीण हो, चिन्ता छोडो, चिन्ता से कार्य की सिद्धि नहीं होती। अगर आपका मन प्रसन्न है, तो महारानी जी को ढूंढकर हम ले आयेंगे। उनको पुण्य के प्रभाव से, कोई कष्ट नहीं होगा। आप सतोष धारण करें। ये वचन लक्ष्मण के सुनकर, रामचन्द्रजी को कुछ शाति हुई, तब शोक छोड कर्तव्य कार्य में मन लगाया। भद्रकलश भंडारी को बुलाकर कहा, कि तुम पटरानी सीता जी की आज्ञा प्रमाण, जिस तरह किमइच्छित दान करते थे, वैसे ही दिया करना। सीता के नाम से दान देते रहना। तब भंडारी ने कहा आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। नवमहिनेपर्यन्त किमइच्छित दान बटतारहा। राम के आठहजार रानियॉ, तो भी एकक्षणमात्र भी मनसे सीताको नहीं भूलते थे। सीता सीता यह बार-बार कहते थे। सीता के गुणो से मोहित है, मन उनका, इसीलिये सभी दिशायें सीता रूप ही देखते थे। स्वप्न में भी इस प्रकार देखते थे, कि पर्वतकी गुफामें सीता गिरी पडी है, पृथ्वी के राज्य से मंडित है, ऑखों के ऑसुओं से चातुर्मास कर रखा है। शोक से व्याप्त स्वप्न मे भी सीता को ही देखते थे। राम चिन्तवन करते हैं, कि देखो सीता सुन्दर शुभ लक्षणों को धारण करने वाली। दूर जंगल में है, फिर भी मेरे मन से दूर नहीं है। वह बुद्धिमान शीलवती मेरे हित में प्रतिसमय तत्पर रहने वाली, अब मुझे छोडकर कहाँ गई, इसप्रकार सीता को बार बार याद करते थे। लक्ष्मण के उपदेश से तथा सिद्धान्त के श्रवण से रामचन्द्रजी का शोक कुछ कम हुआ। सन्तोषकर धर्मध्यान में मन लगाया। गौतमस्वामी ने कहा, हे श्रेणिक! वे दोनों भाई महा न्यायवान, अखण्ड प्रीति के धारक, प्रशंसा योग्य, गुणोंके समुद्र, रामके हल मूसल का आयुध, लक्ष्मण के चक्र आयुध, समुद्रपर्यन्त पृथ्वी की रक्षा करते हुये। सौधर्म

ईशान इन्द्र समान, गुणवान, रूपवान, वे दोनों धीर वीर स्वर्ग समान राज्य करने लगे। पुण्य के उदय से सम्पूर्ण प्रणियों को आनन्द देने में चतुर, शुभ चारित्र के धारी, सुखसागर में मग्न सूर्य समान तेजस्वी, पृथ्वीपर प्रकाश करते हुये, सुखों का अनुभव करते रहे। पूर्व में अनेक भवों से दोनो भाई, व्रत, नियम, संयम, के साथ साधुपद को धारणकर, पाप रूपी आस्रवों से छूटकर, तपसे निर्जरा कर महापुण्य को एकत्रित किया। वह पुण्य का फल, इसभव में बलभद्र नारायण के पद में प्राप्त हुआ। वही पुण्य आगे जाके अरहन्त पदको प्राप्त करायेगा।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रामको सीताका शोकवर्णन करनेवाला निन्यानवेवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-100

सीता के युगल पुत्रों की उत्पत्ति और उनके पराक्रम का वर्णन

अथानंतर गौतमस्वामी कहते हैं। हे राजन्! राम लक्ष्मण तो अयोध्या मे बलभद्र नारायणके सुखों को भोगते हैं। अब लव अकुश का वर्णन सुनो। अयोध्याके सभी लोग, सीताके वियोगरूपी शोकसे दुखी होकर, कमजोर हो गये है। और पुडरीकपुर में महासती सीता गर्भके भारसे, कुछ पांडुता को प्राप्त होकर दुर्बल हो गई। मानों सम्पूर्ण प्रजाके लोग महापवित्र उज्ज्वल सीताके गुणोका वर्णन करते है गुणोंकी उज्ज्वलता से श्वेत हो गई है। कुचों की बिटलियॉ श्याम हो गई, सो मानो माता के स्तन पुत्रों को पीनेके लिये दूधके ही कलश है, वह माताने ढक के रखें हैं। और दृष्टि क्षीरसागर समान सफेद अत्यन्त मधुरता रूप हुई, है। सर्वमंगलमय जिनका शरीर, सर्व मंगल का स्थान, जो रत्नमयी प्रांगण उसमे सीता मंद मंद चलती है। चरणों के प्रतिबिम्ब ऐसे सुन्दर लगते, मानों पृथ्वी कमलोंसे सीताकी सेवा ही करती है। रात्रि में चन्द्रमा सीता के भवनपर आये तो ऐसा लगता मानों सफेदछत्र ही है। सुन्दर सेजपर सोती हुई स्वप्न देखती है, कि महागजेन्द्र कमलोंके पुटमे जलभरकर, अभिषेक करते हैं। और बार बार सखियोंके

मुखसे जय जयकार, शब्द सुनकर निंद्रा से उठती है। परिवार के सम्पूर्ण लोग आज्ञा में रहते हैं। क्रीड़ा में भी सीता आज्ञा का भंग नहीं सह सकती। सब आज्ञाकारी हैं, शीघ्र ही आज्ञा प्रमाण कार्य करते हैं, तो भी सभीपर तेजरूप हैं, क्योंकि तेजस्वी पुत्र गर्भ मे है। मणियों के दर्पण निकट हैं, फिर भी सीता खड्ग में मुख देखती है, और वीणा, बांसुरी, मृदंगादि अनेक बाजोंकी ध्वनि हो रही है। वह नहीं रूचती और धनुषको चढानेकी ध्वनि अच्छी लगती है। सिंहको देख जानकी का मन प्रसन्न होता, क्योंकि बालक सिंह समान शूरवीर गर्भ में है। सीताका मस्तक जिनेन्द्रभगवान को छोड़ अन्य किसीके सामने नहीं झुकता है।

अथानंतर नवमहीना पूर्ण हुये, श्रावणशुक्ला पूर्णिमाके दिन, श्रवणनक्षत्र में, वह मंगल कल्याण रूपिणी, शुभलक्षणो से पूर्ण, शरद पूर्णिमा के चन्द्रमा समान है, मुख जिनका, ऐसी श्रीरामकी प्यारीमहारानी ने, सुख पूर्वक युगल पुत्रों को जन्म दिया। पुत्रों के जन्म उत्सव में, पुंडरीकपूर की सम्पूर्ण प्रजा महाहर्षित हुई। मानों नगरी ही नाच उठी है। ढोल नगाडे मृदंग शखादि अनेक प्रकार के बाजे बजने लगे। शखों की ध्वनि हुई, राजावज्रजंघने अतिप्रसन्न होकर, बालकों का महान जन्म उत्सव किया। मनचाही संपदा याचकों को दी, एक का नाम अनंगलवण, दूसरे का नाम मदनाकुश, यह नाम रखे। पुनः ये बालक दूजके चन्द्रमा समान वृद्धिको प्राप्त हुये। माता के हृदय को अतिआनन्द ओर प्रसन्न करने वाले, महाधीर शूरवीरता के अंकुर, दोनो बालक उत्पन्न हुये। सरसो के दाने बालकों की रक्षा के लिये, इनके मस्तकोपर क्षेपण करते हुये, ऐसे लगे मानों प्रतापरूपी अग्निके कणही है। लव अंकुश दोनों राजकुमारों का शरीर तपाये हुये, स्वर्ण समान दैदीप्यमान, ज्योति सहित, अतिसुन्दर रूपवान, उनके नाखून दर्पण समान, बाल अवस्था में अव्यक्त (तोतली) भाषा में बोले तो, सभी लोगों के मनको हरते थे, बालकों का सुन्दर गोरा रूपवान शरीर, इनकी मंद-मंद मुस्कान, एवं मनोज्ञ चंचल छोटे छोटे हाथ-पैर चलते देख, लोगों का मन एवं हृदय मोहित होता था। जैसे पुष्पों की सुगंधी से भ्रमर अनुरागी होते हैं। ऐसेही राजकुमारो का रूप, गुण, सुन्दरता, सबके मनको हरती थी। दोनों राजकुमार महारूपवान, गुणवान, बलवान थे, क्योंकि उनके पिता बलभद्र श्रीराम महासुन्दर रूपवान, गुणवान विवेकवान, ज्ञानवान थे, और माता भी ऐसीही अनुपम गुणोंकी धारी रूपवान सुन्दर थी, माता पिता दोनों सुन्दर पुण्यशाली जीव हैं, तो बालक भी

वैसे ही रूप गुणों की खान होते हैं, लोगों के मनको चुरानेवाले दोनों बालक माता का दूध पीकर वृद्धि सहित पुष्ट हुये। उनका सुन्दर मुख, सफेद दांतो से अतिसुन्दर लगा, मानों हास्य का खजाना ही है। दासी (धाय) की अंगुली पकडकर, स्वर्ण रत्नमयी प्रांगण में धीरे-धीरे पांव रखकर चलते, तब देखने वालों का मन खो जाता था, मन मोहित होता था, दोनों राजकुमार अनेक राजकुमारों के साथ, या बालकों के साथ परस्पर क्रीडा करते, तब ऐसे लगते जैसे अनेक देवों के मध्य इन्द्र हों। दोनो राजपुत्र परस्पर धार्मिक क्रीडायें करते, वह कभी क्रीडा में भी दोनों अलग-अलग नहीं होते, दोनों का महा अटूट परस्पर में प्रेम था। राजमहल में बालक माताके पास क्रीडा रूप खेल करते हुये, माता के मन को प्रसन्न करते थे, कभी मॉं मॉं कर पुकारने लगते, कभी हँसते, कभी रोते इत्यादि अनेक क्रीडाओ को करते हुये कभी माताकी गोदमे बैठजाते तो कभी नीचे बैठते, कभी गलेमे लिपटजाते, कभी चरणोंमें झुक जाते, कभी दोनोभाई एक साथ माताकी गोद में बैठ जाते, कभी दोनो साथ में दोनों हाथोकी अंगुली पकडकर एक साथ चलते, कभी एक भाई गोद में बैठा और दूसरा भाई नीचे बैठा तो गोदी वाला भाई, अपने भाई को साथ में ही मॉं की गोद मे बैठाता, या दोनों नीचे बैठ जाते, दोनों एकसाथ माताके हाथसे खाना खाते, दोनो राजकुमार लव-अकुश आपस में महान प्रेम एवं माताकी महाभक्ति विनय करते, और माता को भी बालकोंपर विशेष अनुराग वात्सल्य था, जानकी ऐसे सुन्दर क्रीडा करने वाले कुमारोंको देखकर सम्पूर्ण दुख भूल गई। कभी बालक चलते हुये गिरजाते, रोते तो माताका मन अतिदुखी होता था। बालक बडे हुये। अतिमनोहर सहजही सुन्दर है नेत्र जिनके, विद्याके पढने योग्य बालक हुये, तब इनके पुण्य के योग से, एक सिद्धार्थ नामके क्षुल्लक, शुद्धात्मा पृथ्वीपर प्रसिद्ध, राजा वज्रजघ के मन्दिरमे आये। वे महाविद्या के प्रभाव से, तीनों समय प्रातःकाल, मध्यान्ह काल, संध्याकालमें सुमेरूपर्वतके चैत्यालयो की वदनाकर आते, साधु समान निर्मल परिणामी, केशलोंच करने में धीरवीर, खंडित वस्त्र मात्र है परिग्रह उनके, अणुव्रतों के धारी, जिनशासनके रहस्य के ज्ञाता, सम्पूर्ण कलाओं के पारगामी, तपस्या से मंडित आहार के लिये भ्रमण करते हुये, जहॉं जानकी ठहरी हुई थी वहाँ आये। सीता महासती, मानों जिनशासन की देवी पद्मावती ही है। उसने क्षुल्लक को देख, विनयपूर्वक आदर से उठकर, सन्मुख जाकर, इच्छाकार कर, उत्तम प्रासुक

शुद्धअन्न जलका आहार कराया। सीता जिनधर्मियो को अपने भाई समान जानती है। वे क्षुल्लक अष्टांग निमत्तज्ञान के ज्ञाता, दोनों राजकुमारों को देखकर, महा प्रसन्न संतुष्ट होकर, सीतासे कहने लगे, हे देवी! तुम सोचमतकरो, चिन्ता नहीं करो, जिसके ऐसे गुणवान सुन्दर राजपुत्र हैं। उन्हें क्या चिन्ता।

अथानंतर यद्यपि क्षुल्लक महा वैरागी हैं, फिरभी दोनों राजकुमारों के अनुराग से, कुछ दिन इनके पास रहे। थोडे ही दिनोंमें लव अंकुश कुमारको शस्त्र और शास्त्र विद्या में निपुण किया। वे कुमार ज्ञान विज्ञान से पूर्ण, सर्वकला के पारगामी गुणों के समूह, दिव्यअस्त्र के चलाने में दक्ष, और शत्रुओं के दिव्यअस्त्र आये उनको निराकरण करने कि विद्या में प्रवीण हुये। महापुण्यके प्रभाव से परमशोभा के धारक विद्यारूपी महा लक्ष्मीवान हुये। मतिज्ञान, श्रुतज्ञान के आवरण दूर हुयें, शिष्य बुद्धिमान हो तो राजाको राज्यकार्य में कोई खेद नहीं। जैसे सूर्य के प्रकाश में नेत्रवान पुरुषों को घट पटादि पदार्थ अच्छी तरह दिखते है। ऐसे गुरु के प्रभाव से बुद्धिमानी जीवों के गुरुभक्तिके प्रभावसे ज्ञान प्राप्ति में कोई परिश्रम नहीं। पुण्यसे ही महागुणों की वृद्धि होती है। बुद्धिमान शिष्यको ज्ञान देकर गुरु कृतार्थ होते है। बुद्धिहीन को ज्ञान देना वृथा है। जैसे सूर्य का प्रकाश धूधूओ को वृथा है। यह दोनोभाई दैदीप्यमान महाप्रतापी सूर्यकी तरह ज्योतिवान उनके सामने कोई देख नहीं सकते है। दोनोभाई चन्द्र सूर्य समान, दोनोमें अग्नि और पवन समान प्रीति, दोनों हिमाचल, विंद्याचल हैं। वज्रवृषभनाराच सहनन, सर्वतेजस्वी, धर्मात्मा महाधर्मके धारी, सभी राजा उनके आज्ञाकारी, तो अन्य लोगों की तो क्या बात, किसीको आज्ञा रहित नहीं देख सकते। अपने पॉवों के नाखूनोंमें भी अपना प्रतिबिम्ब देख नहीं सकते, तो और किनको नमन करेंगें। अपने सिरपर चूडामणि धारण किया है, छत्र फिरते है। सूर्य भी ऊपर होकर निकलता है, तो उसको सहन नहीं कर सकते, तो अन्य की आज्ञा कैसे स्वीकार करें। मेघके धनुषको देख क्रोध करते, तो शत्रु के धनुष की प्रबलता कैसे देख सकते, चित्र के राजा नहीं झुके, तो उनको नहीं सह सकते, तो साक्षात् राजाओ का गर्व कैसे देख सकें। सूर्य नित्य उदय अस्त होता है, उसे अल्प तेजस्वी मानते हैं, और पवन महाबलवान है, परन्तु चंचल है, उसे वे बलवान नहीं मानते। जो चलायमान है वह बलवान कैसे। जो स्थिर अचल है, वही बलवान है। हिमवान पर्वत ऊँचा और स्थिर है, परन्तु उसकी जड कठोर और कांटे सहित है, इसलिये

प्रशंसा योग्य नहीं मानते। समुद्र गम्भीर है, रत्नो की खान है, परन्तु खारेजल और जलचर जीवों से भरा है। शखों से युक्त है, इसलिये समुद्र को भी तुच्छ गिनते है। महागुणों के निधान जितने प्रबल राजा थे, वे भी तेज रहित होकर, इनकी सेवा करने लगे। ये दोनोंभाई महाराजाओं के राजा प्रसन्न मुख से, सदा अमृतरूपी वचन बोलते है। इसीलिये उनकी सब सेवा करते हैं। कोई दुष्ट राजा अपने मान से मलिन हुये, तब उनका चेहरा मुरझा गया। लव अकुश का तेज, ये जबसे जन्म लिया, तबसे इनके साथही उत्पन्न हुआ। महाधीरवीर धनुष के धारक, उनके सब आज्ञाकारी हुये। जैसा लवणकुमार वैसा ही अंकुशकुमार, दोनोंभाईयों में कोई कमी नहीं। पृथ्वीपर सभी लोग ऐसा ही कहते हैं। ये दोनों भाई योवन अवस्था से, महासुन्दर पुण्यशाली पृथ्वीपर प्रसिद्ध सम्पूर्ण लोगो के द्वारा स्तुति करने योग्य है। उनको देखने की सबको अभिलाषा थी, उनके शरीर की रचना पुण्य परमाणुओं से हुई है। उनके दर्शन सुख का कारण है। माता के हृदय को आनन्द के मन्दिर ये कुमार सूर्य समान एव देवकुमार समान, श्रीवत्स लक्षणों से मडित उनका वक्षस्थल, अतिशय पराक्रम के धारी, ससार समुद्र के तट आये चरम शरीरी, परस्पर महाप्रेम के पात्र, धर्ममार्ग मे तत्पर हैं। देव मनुष्यो का मन हरते है।

भावार्थ–जो धर्मात्मा होते है, वह किसी का कुछ नहीं हरते, ये लव अकुश, सीता के नन्दन' राम के पुत्र' लक्ष्मण के भतीजे, कौशल्या के पौत्र' महा धर्मात्मा परधन और परस्त्री तो नहीं हरते, परन्तु दूसरो का मन हरते हैं। इनको देख सबका मन महाप्रसन्न होता। इनका इतना महापुण्य जो इनको देखते ही शत्रु भी मित्र बन जाते। ये गुणों के सरोवर थे। गुणनाम धागे का है, परन्तु धागे मे गांठ होती है। लेकिन इनके मनमे गाठ नहीं। महा निष्कपट है। अपने तेजसे सूर्यको जीतते है, और अपनी कांति से चन्द्रमाको जीततें हैं। पराक्रमसे इन्द्रको, गम्भीरतासे समुद्रको, स्थिरतासे सुमेरूको, क्षमासे पृथ्वीको, शूरवीरता से सिंहको, चालसे हसको जीतते है। जल मे मगर मच्छादि जलचर जीव क्रीडा करते हैं, सिह अष्टापदों से क्रीडा करते करते खेद नहीं गिनते। ये महा सम्यग्दृष्टि निर्मल स्वभावी उदार मना, उनसे कोई युद्ध नहीं कर सकते। युद्ध में महा पुरुषार्थी, जयकुमार, मधुकेटव, इन्द्रजीत मेघनाथ समान योद्धा, जिनमार्गी गुरु सेवा मे लीन, जिनेन्द्र की कथाओं मे प्रवीण। ऐसे पुण्यशाली जीवो का नाम सुनने मात्र

से ही शत्रु भाग जाते है। यह कथा गौतमस्वामी राजाश्रेणिक से कहते हैं। हे राजन्! वे दोनों वीरमहाधीर, गुणरूपी रत्नोके पर्वत, ज्ञानवान, लक्ष्मीवान, शोभाकांति कीर्ति के निवास, मनरूपी हाथीको वशकरने मे अकुश, पृथ्वी के सूर्य, उज्ज्वल उत्तम आचरण के धारक, लवण अंकुश नरपति, अनुपम कार्यको करने वाले, पुंडरीकपुरनगर में मन वांच्छित देवोके समान क्रीडा करते है। महाउत्तम पुरुष उनके निकट आकर, उनका तेज देख, मानव नहीं सूर्य भी लज्जित होता है। जैसे बलभद्र नारायण अयोध्या मे क्रीडा करते है, ऐसे ये लव अकुश दोनों भाई पुडरीकपुर में क्रीडा करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे लवणाकुशका पराक्रमवर्णन करनेवाला एकसौवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-101

लवण और अंकुश का दिग्विजय करना

अथानंतर लवणकुमार एवं अकुशकुमार, अति उदार पुण्य क्रिया में योग्य, सुन्दर रूपवान, गुणवान, विनयवान, राज कार्यमे दक्ष, ऐसे राजकुमारो को देख, राजा वज्रजघ का मन, बहुत प्रसन्न होकर इनके विवाह के लिये विचार करने लगे। तब अपनी लक्ष्मीरानी की राजपुत्री शशीचूला सहित बत्तीस राजकुमारियों का लवणकुमार के साथ विवाह कराने का निश्चय किया, और अकुशकुमारका विवाह भी साथही करना ऐसा सोचकर अंकुश योग्य कन्या पृथ्वीपुरनगर का राजा प्रथु, उनकी रानी अमृतवती, उनकी पुत्री कनकमाला, अपने रूप से लक्ष्मी को जीतने वाली, वह मेरी पुत्री शशीचूला समान है। ऐसा विचारकर पृथु के पास दूत भेजा, दूत महाचतुर पृथ्वीपुर जाकर राजा पृथु से कहा, जब तक दूतने कन्याकी याचना नहीं की, तब तक उसका सम्मान किया। और जब उसने विवाह का वृतान्त कहा, तब वह क्रोधित होकर कहने लगा। तू दूसरों के आधीन है, जो जैसा कहलाता है, वैसा तू कहता है। तुम दूत जलकी धाराके समान हो, तुम्हारे मे बुद्धि नहीं होती, जो ऐसे पाप के वचन कहते हैं, उनका निग्रह करूँगा। परन्तु

तू दूसरों का दूत है, जिस दिशा चलाते हैं वही दिशा चलता है, इसीलिये तू मारने योग्य नहीं है दूत! 1. कुल 2. शील 3. धन 4. रूप 5. समानता 6. बल 7. वय 8. देश 9. विद्या ये नव गुण वर के होते हैं, उनमे प्रथम कुल मुख्य होता है, जिनके कुल का पता ही नहीं है, उनको कन्या कैसे दी जायेगी। इसीलिये ऐसे निर्लज्ज बात कहते हैं। वह राजा नीति से प्रतिकूल है, उनको मेरी राजकुमारी नहीं दूँगा। ऐसा कहकर दूत को विदा किया। दूत ने जाकर राजा वज्रजंघ से सम्पूर्ण बात कही, तब वजजंघ युद्ध के लिए निकलकर आधी दूर गये, और बडे पुरुषो को भेज पुनः पृथुराजा से कन्या की याचना की। तब भी राजा पृथु ने मना किया। राजा वज्रजंघ क्रोधित होकर पृथू का देश उजाडने लगा। देश का रक्षक राजा व्याघ्ररथ, उसे युद्ध मे जीतकर बांध लिया। तब राजा पृथु ने सुनाकी व्याघ्ररथ को राजा वज्रजंघ ने बांध लिया है। और मेरादेश उजाडने आ रहा है। तब पृथु राजा ने अपना मित्र पोदनपुर का पति, उसको सेना सहित बुलाया। तब वज्रजंघ ने पुंडरीकपुर से अपने पुत्रो को बुलाया। पिता की आज्ञासे पुत्र शीघ्र ही चलने को तैयार हुये, नगर मे राजपुत्रों के कूच के नगाडे बजे, तब सामन्त बखतर पहने शस्त्रो को लेकर युद्धकेलिये चलने को तैयार हुये। पुडरीकपुर मे महा कोलाहल हुआ। तब सेना के शब्द सुन, लवण अंकुश निकट में रहने वाले, लोगों से पूछने लगे, यहाँ कोलाहल क्यो हो रहा है। तब किसी ने कहा, राजकुमार अकुश से विवाह के लिये राजा वज्रजघ ने, राजा पृथु से उसकी राजकुमारी की याचना की थी, सो उसने मना किया, तब राजा वज्रजंघ युद्ध के लिये गये, ओर अब अपनी सहायता के लिये, अपने पुत्रो को सेना सहित बुलाया है, इसलिये यह सेनाका कोलाहल हैं। यह समाचार सुनकर, दोनोभाई, लवण अकुश युद्ध मे जाने को तैयार हुये। तब राजा वज्रजघ के पुत्र एव राज्य के सभी लोग इनको मना करने लगे, तो भी ये दोनोंभाई नहीं माने। सीता पुत्रों के वात्सल्य से, मन मे दुखी होकर पुत्रो से कहने लगी—हे बालकों! तुम्हारा अभी युद्ध का समय नहीं, तुम खाने खेलने वाले बालक हो, तब दोनोंभाई कहने लगे—हे माता! आपने यह क्या कहा, बडा हुआ और कायर हुआ तो क्या? यह पृथ्वी योद्धाओं के लिये भोगने योग्य है, अग्नि की चिनगारी छोटी ही हो, परन्तु महावनको जलाकर भस्म करती है, कुमारों ने जब ऐसा कहा, तब माता ने, इनको सुभट जाना, और हर्ष एव शोक से माता के आखों में ऑसू आये। ये दोनो

वीर महाधीर, स्नान भोजनकर, आभूषण कवच पहन, मन वचन काय से, सिद्धों को नमस्कार कर, पुनः माता को प्रणाम किया, दोनोंभाई युद्ध के लिये निकले, तब अच्छे अच्छे शुभ शुभ शकुन हुये। दोनों भाई रथपर बैठ, शस्त्रो सहित पृथुनगर की ओर चले। महासेना सहित धनुषबाण का सहारा लेकर महापराक्रमी पांच दिन मे मामा वज्रजघ के पास पहुँचे। तब राजा पृथु ने शत्रु की सेनाआई जान, स्वयं भी बडीसेना के साथ निकला। राजा पृथु के भाई, मित्र, पुत्र, मामा के पुत्र, सभी ही अगदेश, वगदेश, मगधदेशादि अनेक देशो के बडे बडे राजा, रथ, घोडे, हाथी, प्यादे सहित सभी वज्रजंघ के पास आये। तब वज्रजंघ के सामन्त परसेना के शब्दो को सुन युद्ध के लिये निकले। दोनों सेना सन्मुख हुई। तब लव अंकुश दोनोंभाईयो ने महा उत्साह सहित शत्रु सेना में प्रवेश किया। दोनों महायोद्धा क्रोधित हुये और शत्रु सेना मे क्रीडा करने लगे। जैसे शस्त्ररूपी बिजली की, चमक जिसतरफ चमके, उसीतरफ दोनोंभाई चमक उठते, सभी तरफ मारो मारो करने लगे, उनका पराक्रम शत्रु सहन नहीं कर सके, धनुष पकडकर बाण चलाते, परन्तु दोनोंभाई शत्रुओ को दिखाई नहीं देते। उनके बाणों से अनेक योद्धा, मरकर गिरते वे दिखाई देते। क्रूर बाणों से शत्रु की सेना मे, हाथी घोडे घायल हुये और एक निमिष मात्र मे, पृथु राजा की सेना, भाग गई। जैसे सिंह के आगे हाथी हिरण भाग जाते। कोई डरकर भाग गये कोई मरकर गिर गये, तब उसी समय राजापृथु सहायता से रहित दुखी होकर भागने को तैयार हुआ। तब दोनोंभाई लव अंकुश कहने लगे–हे पृथु! हमारा कुल, शील, अज्ञात, हमारे कुल को, कोई जानते नहीं, उनसे डरकर भागते हुये, तुझे शर्म नहीं आती। तू खडा रह, हमारा कुल, शील तुझे बाणो से बतायेगे, तब राजा पृथु भागते हुये पुनः वापिस आकर हाथजोड नमस्कार कर स्तुति करनेलगे, आप महाधीर वीर बलशाली हो। मै अज्ञानी, मेरा दोष क्षमा करो, मैं मूर्ख अब तक, मैने आपकी महिमाको नहीं जाना था, महाधीर वीरों का कुल इन पराक्रमों से ही, जाना जाता है। कुछ वाणी के कहने से, नहीं जाना जाता है। आप परम धीर वीर महाउत्तमकुल राजवंश में उत्पन्न हुये हो, यह आपका पराक्रम ही कहता है। आप हमारे स्वामी हो। महापुण्य के योग से आपके दर्शन हुये। आप हम सबको, मन वाच्छित सुख देने वाले है, इसप्रकार राजापृथु ने राजकुमार लव अकुशकी महा प्रशंसा की। तब दोनोंभाई नीचे देखने लगे, क्रोध शात हुआ, मन प्रसन्न हुआ।

और राजा वज्रजंघादि सभी राजा, प्रजा, सेना, राजकुमारों के समीप आये। राजा पृथु से परस्पर महाप्रेम हुआ। जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, वह नमस्कार मात्र से ही प्रसन्न होते है। जैसे नदी का बहाब, झुकी हुई बेलो को नहीं उखाडती है, और जो महावृक्ष मान से खडे हैं उनको उखाडकर जमीन मे डाल देती है। राजापृथु राजकुमार लव अंकुश सहित, राजा वज्रजघ को अपने नगरमें लेगये, दोनोंभाई प्रसन्नता से गये। मदनाकुंश से अपनी राजपुत्री कनकमाला का महाविभूति सहित विवाह कराया। एक रात्रि यहॉ पर रहे। फिर दोनोंभाई दिग्विजय करने निकले। सुहत्रादेश, मगधदेश, अगदेश, बगदेश को जीतकर, पोदनपुर के राजा सहित अनेक राजाओं को साथ लेकर लोकाक्षनगर गये। और उस तरफ के अनेक देशो को जीतने के पश्चात कुबेरकान्त, राजा महामानी, उसे दोनोभाईयों ने ऐसा वश किया, जैसे गरुड नागको जीते। प्रतिदिन, इन दोनोंभाईयो की सेना बढती गई। हजारों राजाओं को वश किये। और वे सभी राजा इनकी सेवा करने लगे। फिर लपाक देश गये वहॉ का राजाकरण, अतिप्रबल उसे जीतकर विजयस्थल गये। वहा राजा के सौ भाई उनको देखने मात्र से ही जीते लिया, फिर गंगा नदी को पारकर कैलाशपर्वत की उत्तर दिशा मे गये। वहा के राजा अनेक प्रकार की भेट लेकर आये, और दोनो भाईयो से मिले। जसकुतलदेश, कालागु, नन्दि, नन्दन, सिहल, शलग, अनल, चल, भीम, भूतराव इत्यादि अनेक देशो के राजाओ को वशकर सिन्धु नदी को पार किया। और लवण समुद्र के किनारे पर अनेक राजाओ को झुकाया। अनेक नगर, खेटादि देशो के राजाओ को वश किया। और भीरू देश, यवन, वृषाण, वैद्य, कश्मीर, हिडिब, अवष्ट, बर्बर, पाग्शैल, मोशाल, कुसीनर, सूर्यारक, सनर्त, खश, विन्ध्य, शिखापद, मेखल, शूरसेन, बाह्नील, उलूक, कोशल, गाधार, सावीर, कौवीर, कोहर, अन्धकाल, कलिंग इत्यादि अनेक देशवश किये। कैसेहैंदेश? जिनमे अनेक प्रकार की भाषा और वस्त्रादिक का भिन्न भिन्न पहराव, और अलग अलग गुण अनेकजाति के वृक्ष अनेकपर्वत जिनमें अनेकप्रकार के रत्न स्वर्णादि धन से भरे हुये हैं। कितने ही देशों के राजा, लव अकुश के प्रभाव से, अपने आप आकर झुक गये, कितनो को युद्ध मे जीतकर वश किये, कितने ही राजा डरकर, भाग गये, बडे बडे देशो के राजा अनुराग पूर्वक लव अंकुश के आज्ञाकारी हुये। ये दोनोंभाई पुरुषोत्तम पुण्यशाली पृथ्वी को जीत हजारो राजाओ के, शिरोमणी होकर, सबको साथ

लेकर आये। नाना प्रकार की कथायें, करते सबका मनहरते हुये, वज्रजंघ राजाओं के साथ पुडरीकपुर के समीप आये। अनेक राजाओ से, अनेक प्रकार की भेट लेकर, महाविभूति एव सेना सहित पुडरीकपुर नगर के समीप आते हुये, सीता ने सातवे खडके महलपर चढकर, हर्ष पूर्वक देखा। राजलोक की अनेक रानियॉ सीता सहित सिहासन पर बैठी। दूरसे ही सेना के धूल के पटल उडते देख, सखियों को पूछने लगी की इस दिशा में धूल क्यो उड रही है। तब सखियो ने कहा—हे देवी! यह धूल सेना की है, उनमे अश्व उछलते कूदते हुये आ रहे है। दोनो राजकुमार अनेकदेश विदेश की पृथ्वी को जीतकर आये है। उसी समय बधाई वाले आये। नगर की शोभा अति प्रसन्नता पूर्वक कराई, दरवाजे पर सुन्दर कलश की स्थापना कराई। जैसे श्रीराम लक्ष्मण के आने पर, अयोध्या की शोभा कराई थी, ऐसे ही लव अकुश कुमारो के आने से पुंडरीकपुर की शोभा हुई। जिसदिन महाविभूति से लव अकुश ने प्रवेश किया, उसदिन नगर के लोगो को, जो हर्ष हुआ वह कहने मे नहीं आता, दोनो पुत्र कृतकृत्य, उनको देखकर सीता आनन्द के सागर मे लीन हो गई, दोनो वीरो ने आकर हाथजोड माताको नमस्कार किया, सेनाकी रजसे शरीर लिप्त है, ऐसे अपने राजकुमारों को सीता ने हृदय से लगाकर, मस्तक पर हाथ रखा। माता के आनन्द का वर्णन उस समय कौन कर सकता है। पुण्यवान जीवो को ही ऐसे बलशाली, आज्ञाकारी पुत्र प्राप्त होते है। पुण्यवान जीवो के ही चरणो में शत्रु अपने आप आकर झुकते हैं। पुण्य से ही जीवो की कीर्ति जगत मे फैलती है। ऐसी पुण्यवती माता को हर्षितकर, दोनों राजकुमार चाद सूर्य समान लोक मे यशरूपी कीर्ति का प्रकाश करने लगे। ऐसे लव अकुश राजकुमार मामा के साथ राज्य का अनुशासन करते हुये, माता को सन्तुष्ट करते रहे। माता भी अपने महाबलशाली पुत्रो को देखकर अति आनन्द को प्राप्त होती है। इस अध्याय को पढने या सुनने से महा पुण्य प्राप्त होता है। और उनको ऐसे बलशाली पुत्रों माता पिता बनने का सुयोग प्राप्त होता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे लवणाकुश का दिग्विजय वर्णन करनेवाला एकसौएकवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-102

लव अंकुश का राम लक्ष्मण के साथ युद्ध

अथानंतर ये दोनों उत्तम पुरुष परम ऐश्वर्य के धारक प्रबल, राजाओं पर, आज्ञा करते हुये सुख से रहते थे। एक दिन नारद ने कृतान्तवक्र से पूछा, कि तुम सीता को कहॉ छोडकर आये हो। तब कृतान्तवक्र ने कहा कि सिंहनाद अटवी में छोडकर आया हूँ। यह सुनकर नारद महादुखी व्याकुल होकर, सीता को सिंहनाद अटवी में ढूंढने लगे, ढूंढते ढूढते दोनों राजकुमारों को एक नगर में क्रीडा करते हुये देखे। तब नारद इनके निकट आये। राजकुमारों ने उठकर, इनका बहुत सन्मान किया। नारद इनको विनयकरते देख, अति हर्षित हुये, और अशीर्वाद दिया, जैसे—राम लक्ष्मण नरनाथ के लक्ष्मी है, ऐसे तुम्हारे भी होओ। तब ये दोनो भाई, पूछने लगे कि, हे देव! राम लक्ष्मण कौन हैं और कौन से कुल में उत्पन्न हुये है। उनमे क्या-क्या और कौन-कौन से गुण है। कैसा उनका आचरण है? तब नारद एक क्षण, मौन होकर, पुन. कहने लगे—हे दोनो राजकुमारों! कोई मनुष्य अपनी भुजाओं से, पर्वत उठायें अथवा समुद्र तिरे, तो भी राम लक्ष्मण के गुणो का वर्णन नहीं कर सकते। अनेक मुखो से दीर्घकाल तक उनके गुणोका वर्णनकरे, तो भी राम लक्ष्मण के पूर्ण गुणोको नहीं कह सकते। परन्तु तुम्हारे कहने से, मै किंचित्मात्र उनके गुणो का वर्णन करता हूँ, उनके गुण पुण्य को बढाने वाले हैं। अयोध्यानगरी मे, दुराचार रूप ईन्धन को भस्म करने में, अग्नि समान इक्ष्वाकुवंश मे चन्द्रमा समान, महातेजरूप सूर्य समान सम्पूर्ण पृथ्वीपर राज्य करने वाले राजा दशरथ थे। वे पुरुष पर्वत समान, उनमे से कीर्ति रूपी नदी निकली, वह सम्पूर्ण जगत को आनन्द देती हुई, समुद्रपर्यंत विस्तार रूप फैली, उन दशरथ राजा के राज्य कार्य मे धुरन्धर चार पुत्र महा गुणवान हुये। बडे राम, दूसरे लक्ष्मण, तीसरे भरत, चौथे शत्रुघ्न। उनमें राम महामनोहर सर्व शास्त्रो के ज्ञाता, पृथ्वीपर प्रसिद्ध, वह छोटे भाई लक्ष्मण एवं सीता सहित पिता की आज्ञा पालने के लिये, अयोध्या को छोड पृथ्वीपर विहार करते करते दण्डक वन में, प्रवेश करने लगे। दण्डक वन का स्थान महा विषम। वहॉं विद्याधरो का भी आना जाना नहीं, खरदूषणके साथ युद्ध हुआ रावण ने सिंहनाद किया,

उसको सुनकर लक्ष्मण की सहायता के लिये राम गये, पीछे से सीता को रावण हर कर ले गया, तब राम से सुग्रीव, हनुमान, विराधितादि अनेक विद्याधर आकर मिले। राम के गुण रूपी अनुराग से, वश हुआ है हृदय उनका, वे सभी विद्याधरों को साथ लेकर राम लका में गये, रावण को जीत सीता को लेकर अयोध्या आये। स्वर्गपुरी समान अयोध्या को विद्याधरों ने बनाया, वहाँ राम लक्ष्मण पुरुषोत्तम मागेन्द्र समान सुख से राज्य करते हैं। राम को तुमने अब तक कैसे नहीं जाना। जिनके लक्ष्मण जैसा भाई, उनके हाथ में सुदर्शनचक्र का आयुध, एक एक रत्न की हजार हजार देव सेवा करते, ऐसे सात रत्न लक्ष्मण के और चार रत्न राम के। उन्होंने प्रजा के हित के लिये, महासती जानकी को तजी। उन रामको सम्पूर्ण लोक जानते हैं। ऐसा कोई पृथ्वीपर मानव नहीं, जो कि राम को नहीं जानते हो। इस पृथ्वी की क्या बात? स्वर्ग में देव एवं इन्द्र भी राम के गुणो का वर्णन करते हैं। तब अंकुश ने कहा—हे प्रभो! राम ने जानकी को क्यों छोडा, यह वृतान्त में सुनना चाहता हूँ, तब सीता के गुणों में है धर्मानुराग जिनका, ऐसे नारद ऑखो में ऑसू बहाते हुये कहने लगे—हे राजकुमारों! वह सीता सती उनका जन्म उत्तम कुलमें हुआ। महा पतिव्रता, शीलवान, गुणवान, आगमज्ञान मे प्रवीण, श्रावक की क्रियाओं में लीन, राम के आठहजार रानियॉ, उनकी शिरोमणी पटरानी सीता, लक्ष्मी, कीर्ति, धृति, लज्जा, उनको पवित्रता से जीतकर साक्षात जिनवाणी समान है। कोई पूर्वोपार्जित पाप कर्म के उदय से, अज्ञानी जीव महासती सीताजी का लोक अपवाद करने लगे—इसीलिये श्रीराम ने दुखी होकर निर्जन वन में छोडी। दुर्जन लोगो के शब्दों से तप्तायमान, वह सतीसीता महाकष्ट को प्राप्त हुई। महाकोमल शरीर, उसमें अल्प कष्ट भी सहन नहीं कर सकती, तो महा भीमवन में अनेक दुष्ट जीवों से भरा उनमें सीता कैसे जीवित रहेगी। मालतीपुष्प की माला दीपक की गर्मी से मुरझा जाती है, तो दावानल की अग्नि को कैसे सहन कर सकती है। दुष्ट जीवो की जीभ सर्प समान निरअपराधी जीवों को क्यों डसती है। पुण्यशाली जीवों की निन्दा करते हुये, दुष्ट जीवों के जीभ के सौ टुकड़े क्यों नहीं होते हैं? वह महासती पतिव्रता, सतियों में शिरोमणी, धर्मशील में दक्षादि अनेक गुणों से प्रशंसा करने योग्य, अत्यन्त निर्मल परिणामी महासती, उनकी जो निन्दा करते हैं, उनको इसभव एव परभव में महा कष्ट भोगना पडेगा। ऐसा कहकर सीता के दुखरूपी शोकसे दुखीहोकर नारदऋषि

मौन धारण कर लिया, विशेष कुछ बोल नही सके। यह सुनकर अंकुशकुमार बोले, हे स्वामिन्! भयकर वनमें रामने सीता को छोडा वह अच्छा नहीं किया, यह कुलवानों की रीति नहीं है। लोक अपवाद दूर करने के अनेक उपाय है। ऐसा अविवेक का कार्य ज्ञानवान लोग क्यों करते है। अकुशने तो यही कहा, परन्तु अनगलवण बोला यहॉ से अयोध्या कितनी दूर है, तब नारद ने कहा, यहॉ से अयोध्या एकसौसाठ योजन है (लगभग 2000 किलो मीटर) जहॉ श्रीराम विराजमान है। तब लव अंकुश दोनो राजकुमार बोले हम राम लक्ष्मण से युद्ध करने जायेगें। इस पृथ्वीपर ऐसा कौन है, जिनकी हमारे आगे इतनी प्रबलता, नारद से दोनोभाईयों ने ऐसा कहा। और राजा वज्रजघ से कहा हे मामा! सूह्यदेश, अंगदेश, सिन्धुदेश, कलिगदेश इत्यादि अनेकदेशो के राजाओ को आज्ञा पत्र भेजो, संग्राम का पूर्ण संरजाम सहित शीघ्र ही आये। हमारा अयोध्या की तरफ कूच है। हाथी मदोन्मत्त, वायु समान घोडे, रण सग्राम मे विख्यात योद्धा, जो कभी सग्राम मे पीठ नहीं दिखाते है, उनको साथ ले लो। सब शस्त्र सभालो, कवच की मरम्मत कराओ। युद्ध के नगाडे ढोल बजाओ। शखों के शब्द कराओ, सभी सेना को युद्ध का विचार प्रगट कराओ। इस प्रकार आज्ञा देकर दोनो वीर, मन मे युद्ध का निश्चय करबैठे, मानो दोनो भाई इन्द्र ही है। देवों के समान, देशो के राजा उनको एकत्रित करने को तैयार हुये। तब राम लक्ष्मणपर कुमारो का, युद्ध सुन सीता रोने लगी। सीता के समीप नारदऋषि को क्षुल्लक सिद्धार्थ कहने लगे—यह अशोभन कार्य तुमने क्यो कराया? रण मे युद्ध करने का उत्साह जिनमें ऐसे तुम, पिता और पुत्रो में क्यो विरोध का कार्य किया, अब किसी भी तरह यह विरोध दूर करो, कुटुम्ब मे भेद करना उचित नहीं, तब नारद ने कहा, मैने तो ऐसा कुछ जाना नहीं। इन्होने विनय किया तो मैने आशीष दी, कि तुम राम लक्ष्मण जैसे हो। यह सुनकर लव अकुश ने पूछा कि राम लक्ष्मण कौन हैं? तब मैने यह सब वृतान्त कहा। अब भी तुम भय मतकरो, सब अच्छाही होगा। अपना मन निश्चल करो।

लव अकुश राजकुमारो ने सुना, की माता रुदन कर रही है, तब दोनों पुत्र माता के पास आकर कहने लगे। हे माता! आप रुदन क्यो करती हो, वह कारण हमे बताओ, आपकी आज्ञा का पालन कौन नहीं करता है, आपको खोटे वचन किसने कहे, उन दुष्टों को हम दड देते हे। ऐसा कौन है जो सर्प की जीभपर

क्रीडा करते हैं। ऐसा कौन मनुष्य और देव है, जो आपको कष्ट देवे अथवा सतायें। हे माता! तुम्हारे पर किसने क्रोध किया, जिसने तुम्हारे पर क्रोध किया, उसकी आयु का अन्त आया है। हमारे पर कृपाकर आप आपने दुख का कारण कहो। इसप्रकार पुत्रो ने माता से विनती की। तब माता दुख की वेदना से ऑसू निकालती हुयी कहने लगी—हे मेरे पुत्रो! मेरेपर किसी ने भी क्रोध नहीं किया, नहीं मुझे किसी ने दुख दिया, नहीं मुझे किसी ने सताया। तुम्हारे पिता से युद्ध का आरम्भ सुन, मैं दुखी होकर रो रही हूॅ। गौतमस्वामी कहते हैं—हे श्रेणिक! तब ये दोनो राजकुमार लव-अकुश अपनी माता से पूछते हैं, कि हे मॉ! हमारे पिता कौन है? तब सीता ने आदि से लेकर, अन्त तक, सब वृतान्त कहा। राम का वश, और अपना वश, विवाह का वृतान्त, और वन का गमन, रावण द्वारा अपना हरण और पुन आगमन जो नारद ने वृतान्त कहा था, वह सभी विस्तार पूर्वक सीता ने, अपने पुत्रो से कहा—कुछ भी छिपाकर नहीं रखा। और कहा—जब तुम गर्भ मे आये, तब से ही तुम्हारे पिताजी ने, लोक अपवाद के भय से, मुझे सिहनाद अटवी मे छोडी, वहॉ भयानक वन मे, मै रो रही थी, वहॉ राजा वज्रजंघ हाथी पकडकर आ रहा था, तब मुझे रोती हुई देख, वह महाधर्मात्मा शीलवान श्रावक, मुझे बडी बहिन का आदर कर अपने घर लाया। और अति सन्मान से मुझे यहॉ रखा, मैने भी भाई भामडल के समान, राजा वज्रजघ का घर जाना, तुम्हारा यहॉ सम्मान हुआ। हे पुत्रो! तुम श्रीराम के पुत्र हो, राम महाराजाधिराज हिमाचल पर्वत से लेकर, समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का राज्य करते है। उनके लक्ष्मण जैसा भाई, महा बलवान, संग्राम में निपुण है। न जाने मेरे स्वामी की अशुभ बात सुनु, अथवा तुम्हारी या मेरे देवर की, इसीलिये दुखी मन से आर्त्तध्यान पूर्वक रो रही हूॅ, ओर कोई कारण नहीं। यह सुनकर दोनों पुत्र प्रसन्न हुये। और माता से कहने लगे—हे माता! हमारे पिता महाधनुष धारी, लोक मे श्रेष्ठ, लक्ष्मीवान, विशाल कीर्ति के धारक हैं। उन्होंने अनेक अद्‌भुत कार्य किये, हैं। परन्तु आपको वन में छोडा, वह अच्छा नहीं किया, इसलिये हम शीघ्र ही, जाकर पिता ओर चाचा का मान भग करेंगे, आप विषाद मत करो, दुखी मत हो, चिन्ता नहीं करो। तब सीता ने कहा—हे पुत्रो! हे राजकुमारों! वे तुम्हारे गुरुजन है, उनसे विरोध करना योग्य नहीं, तुम अपना मन शांत करो, महाभक्ति पूर्वक जाकर विनय सहित, पिता एवं चाचा को प्रणाम करो, यही नीति का मार्ग है। तब पुत्र कहने लगे—हे माता! हमारे

पिताजी शत्रु भाव को प्राप्त हुये हैं, हम कैसे जाकर उनको प्रणाम करें, और दीनता के वचन हम कैसे कहें। हे माता! हम तो आपके पुत्र हैं, इसीलिये रणसंग्राम में हमारा मरण हो जाये तो हो जाये। परन्तु हम जैसे योद्धाओं से कायर शब्द तो नहीं कह सकते हैं। ऐसे शब्द पुत्रो के सुन सीता मौन लेकर बैठी। परन्तु मन मे चिन्ता बहुत है, दोनोंकुमारों ने स्नानकर भगवान की पूजा की, मगल पाठ पढा, सिद्धों को नमस्कार कर माता को शांति, संतोष, दिलासा, देकर विनय पूर्वक प्रणाम कर माँ का आशीष ले, महामंगल रूप हाथीपर बैठे। मानो चाद सूर्य गिरी के शिखर पर बैठे।

अयोध्या नगरी में राम लक्ष्मण के ऊपर युद्ध के लिये चले। जैसे राम लक्ष्मण लंका पर चले थे। इनका कूच सुन हजारो योद्धा पुडरीकपुर से निकले। सभी योद्धा अपने अपने सैनिकों को बुलाते जा रहे हैं। वो जाने मेरी अच्छी दिखे, वो जाने मेरी अच्छी दिखे। महा कटक सहित नित्य ही एक योजन (तेरह किलो मीटर) प्रमाण चलते है। पृथ्वी की रक्षा करते हुये चलें जा रहे हैं। किसी का कुछ बिगाडते नहीं। दोनो राजकुमारों का प्रभाव आगे आगे बढता जा रहा है। मार्ग मे राजा लोग आकर के अनेक प्रकार की भेट चढाकर मिलते है। दसहजार कर्मचारी कुदालादि लेकर आगे आगे ऊँची नीची जमीन को बराबर करते हुये चले जा रहे है। हाथी, ऊट, भैसा, बैल, घोडा, खच्चर, खजाने को भरकर ले जा रहे है। आगे आगे मंत्री चल रहे हैं, प्यादे हिरणो के समान उछल उछल कर चल रहे है। तुरग पवन समान तेजी से चल रहे है। शखो की ध्वनी हो रही है। हाथी घटों की ध्वनी से अपनी गरजना करते चले जा रहे हैं। हाथियो पर, सेना चढी। महावतो ने हाथियो को इसी प्रकार सिखाया है जो अपनी सेना और पर सेना के शब्द पहचानते है। कोई घोडो पर, कोई रथो पर, कोई प्यादे से, अपनी अपनी वाहनो पर, गर्व से भरे चले जा रहे है। वो जाने मे आगे चलूं, वो जाने मे आगे चलू। शयन, आसन, पान, सुपारी, सुन्दर वस्त्र, पौष्टिक भोजन, सुगंधित सामग्री मन प्रसन्न की देते जा रहे है। उससे सेना के सभी लोग बहुत सुखी एवं प्रसन्न है। किसी को किसी प्रकार का कोई दुख नहीं। कदम कदम पर कुमारों की आज्ञा से अच्छे अच्छे मनुष्यो को अनेक प्रकार की वस्तुयें देते हैं। उनको यही कार्य सौपा है। वे बहुत सावधानी पूर्वक करते हैं। अनेक प्रकार के भोजन, जल, मिष्ठान, नमकीन, दूध, दही, घी अनेक प्रकार के रस तरह तरह के भोजन की

वस्तुयें, आदर पूर्वक देते हैं। सम्पूर्ण सेना में कोई भी दुखी नहीं भूख, प्यास, मलिन वस्त्र फटेकपडे आदि से कोई चिन्तित दिखाई नहीं देता है। सेनारूपी समुद्र में नर नारी अमूल्य आभूषण, अनुपम सुन्दर, वस्त्र से महा रूपवान सुन्दर हर्षित दिखते हैं। इसप्रकार महाविभूति सहित सीता के पुत्र चलते चलते अयोध्यादेश के समीप आये। जैसे स्वर्ग मे इन्द्र आते हैं। उन देशों में गेहूँ, जौं, चावलादि फल फूल रहे हैं। और गन्ने के खेत जगह जगह भरे हुये हैं, पृथ्वी अन्न जल एवं धन से पूर्ण है। वहाँ नदी के किनारे पर, अनेक मुनिराज तपस्या एवं ध्यान करते हैं। उस देश में पास पास छोटे छोटे गॉव है, वह नगर ऐसा दिखता मानों स्वर्गपुरी है। राजकुमार लव अंकुश ऐसी नगरी की शोभा देखते देखते आये, किसी को भी किसी प्रकार का दुख नहीं हुआ। चलते चलते दोनोंभाई अयोध्या के समीप आकर दूर से ही महासुन्दर अयोध्यापुरी को देख, राजा वज्रजंघ से पूछते हैं, हे मामा! यह महाज्योति स्वरूप कौनसी नगरी है। तब वज्रजंघ राजा ने अच्छी तरह देख, मन में निश्चयकर कहा हे राजकुमार! स्वर्ग समान यह अयोध्यानगरी है। अयोध्या के चारों तरफ स्वर्णमई कोट अतिसुन्दर, उसकी ज्योति चमक रही है। इस नगरी मे आपके पिता, बलदेव स्वामी श्रीरामचन्द्रजी विराजमान है। उनके भाई नारायण लक्ष्मण और छोटा भाई शत्रुघ्न सहित विराजमान हैं। इस प्रकार मामा वज्रजंघ ने कहा। दोनोंकुमार शूरवीरता की कथा करते हुये आकर सुख से पहुँचे। कटक और अयोध्या के बीच सरयुनदी का अन्तर रहा, दोनों भाईयों के, ऐसी इच्छा कि शीघ्र ही नदी को पारकर नगरी ले ले। जैसे मुनि शीघ्र ही, मुक्तिपुरी को जाना चाहते हैं। मोक्ष की इच्छारूपी नदी मुनि को यथाख्यात चारित्र नहीं होने देती। आशारूपी नदी से तिरेंगें, तभी मुनियो को मुक्ति होती है। ऐसे ही सरयु नदी के कारण अयोध्या नगरी में शीघ्र ही प्रवेश नहीं कर सके। जैसे नन्दन वनमें देवोके समूह आते हैं। ऐसे सेना नदी के उपवन मे आकर ठहरी।

अथानंतर परसेना निकट आई सुन, राम लक्ष्मण आश्चर्य को प्राप्त हुये, दोनोंभाई परस्पर कहने लगे, कोई युद्ध करने के लिये हमारे निकट आये हैं, वे मरना चाहते हैं। वासुदेव ने विराधित को आज्ञा दी कि युद्ध के लिये शीघ्र ही, सेना एकत्रित करो। ढील नहीं करो, जिन विद्याधरों के हाथी, बैल, सिंहादि की ध्वजयें हैं, उनकी सेना को शीघ्र ही बुलाओ। तब विराधित ने कहा, आपकी आज्ञा प्रमाण करूँगा, उसी समय सुग्रीवादि अनेक राजाओं के पास दूत भेजे, सभी

राजालोग दूत को देखते ही बडी सेना सहित अयोध्या आये। और भामंडल भी आये, जब भामंडल को अत्यन्त आकुलता से आते देखा, तब शीघ्र ही सिद्धार्थ क्षुल्लक और नारद जाकर भामंडल से कहने लगे। यह महापतिव्रता सीता के पुत्र हैं। सीता पुंडरीकपुर मे है। तब भामंडल यह बात सुनकर बहुत दुखी हुआ, और कुमारों को अयोध्या आनेपर महा आश्चर्य को प्राप्त हुआ, इनका प्रभाव सुन अति हर्षित हुआ। मन के वेग समान जो विमान उसपर बैठकर परिवार सहित पुंडरीकपुर गया। और बहिन सीता से मिला। सीता भामडल को देख, राग पूर्वक ऑसू बहाती हुई, दुख से विलाप करने लगी। और अपने घर से निकालने का एवं पुडरीकपुर आने का सभी वृतान्त कहा। तब भामडल ने अपनी बहिन को सतोष देकर कहनेलगा, हे बहिन! तुम्हारे पुण्य के प्रभाव से सब अच्छा ही होगा। आपके पापकर्म के साथ साथ पुण्य का उदय भी चलरहा है। पापकर्म के उदय से लोक अपवाद हुआ, आपको निर्दोष जानते हुये भी, राज्य की, प्रजा की व धर्म की रक्षा एवं शाति के लिये श्रीरामचन्द्रजी को यह कार्य करना पडा, जो आपको घर से निकाली, पाप के साथ महापुण्य का उदय आपका था, सो जगल में ही राजा वज्रजघ ने आकर धर्म की बडी बहिन बनाकर अपने घर लाये। यहॉ आपको मान सम्मान पूर्ण प्राप्त हुआ, यह आपके पुण्य का ही कारण हैं। और दोनो राजकुमार लवअकुश अयोध्या गये, सो अच्छा नहीं किया। जाकर बलभद्र नारायण को क्रोध उत्पन्न कराना, राम लक्ष्मण दोनों भाई पुरुषोत्तम महा बलवान, देवो से भी नहीं जीते जाये, ऐसे महायोद्धा है। इसीलिये कुमारो के एव उनके युद्ध नहीं हो, ऐसा कोई उपाय करे, सो तुम भी चलो। तब सीता पुत्रो की बधुओ को साथ लेकर भामडल के विमान मे बैठकर चली। राम लक्ष्मण क्रोध से युक्त होकर हाथी, घोडे, देव, विद्याधरो सहित समुद्र समान सेना को लेकर अयोध्या से बाहर निकले। भाई शत्रुघ्न भी राम के साथ चले। और कृतान्तवक्र सेनापति सबसे आगे हुआ। देवों के विमानसमान रथ मे अति प्रतापी सेनापति कृतान्तवक्र, धनुष चढाकर बाण लेकर अतुल बलशाली, महाज्योतिवान, सेना को लेकर चल रहा है। उसकी श्याम ध्वजा शत्रुओं से देखी नहीं जाती। कृतान्तवक्र के पीछे सिहविक्रय, सिहोदर, बालिखिल्य, वज्रकर्ण इत्यादि पॉच हजार नरपति कृतान्तवक्र सेनापति के साथ आगे आगे चले। अनेक रघुवंशी कुमारो ने अनेक शत्रुओं को देखकर युद्ध का उत्साह जगा। सेना के सभी लोग स्वामी भक्ति में लीन

महाबलवान धरती को कम्पाते हुये, कोई रथ, हाथी, घोडे, प्यादे, आदि वाहनो पर बैठे, युद्ध के लिये निकले। तब लव अंकुशकुमार ने परसेना का शब्द सुन, युद्ध के लिये वज्रजंघादि सेना के सभी लोगों को आज्ञा दी। प्रलयकाल की अग्नि समान महाप्रचड अंगदेश, बंगदेश, नेपाल, बरबर, पौड्र, मगध, कलिगादि अनेक देशों के राजा रत्नांक को आदि लेकर ग्यारहहजार राजा युद्ध के लिये निकले, दोनों सेनाओ का महासंग्राम के समय, देवों को अति आश्चर्य उत्पन्न हुआ। और परस्पर एक दूसरे की सेना के लोग कहने लगे, क्या देख रहे हो, प्रथम प्रहार क्यो नहीं करते, मेरा मन तुम्हारे पर प्रथम् प्रहार करने का नहीं है। इसलिये तुम ही प्रथम प्रहार करो। कोई कहता है, एक कदम आगे आओ, तब शस्त्र चलाओ, कोई अत्यन्त पास आ गये, तब कहते है, खंजर और कटारी हाथ मे लो ज्यादा निकट होनेपर बाण का असर नहीं होता है, कोई डरपोक को देखकर कहते है, तू क्यो काप रहा है, मै तुझे नहीं मारूँगा, तू भाग जा, दूसरा महायोद्धा खडा है, उससे युद्ध करने दे, कोई कहता है, तू वृथा बकवास क्यों करता है, तू आगे आ तेरे रण की भूख भगाऊँ। इस प्रकार परस्पर योद्धाओ की गरजना हो रही है। तलवार लेकर भूमिगोचरी विद्याधर सभी आये, भामडल पवनवेग वीरमृगांक इत्यादि बडे बडेराजा, बडीसेनासहित महारण मे प्रवीण, लव अंकुश के समाचार सुन युद्ध से हट गये अथवा दूर खडे हो गये। सब बातो मे प्रवीण राम के भक्त हनुमान वह भी सीता महारानी के पुत्र जान युद्ध से हटकर दूर खडे रहे। और आकाश मे विमान के शिखरपर बैठी पटरानी जानकी को देख सभी विद्याधर राजा हाथजोड शीश नमाकर प्रणामकर मध्यस्थ हो गये। सीता दोनों सेनाओं को देखकर अतिदुखी हुई, चिन्ता से शरीर मे कपन हुई। राम के सिंह की ध्वजा, लक्ष्मण के गरुड की ध्वजा, और लव अंकुश के सामान्य ध्वजा, लव अंकुश राम लक्ष्मण से युद्ध करने लगे। लवणकुमार ने आते ही राम की ध्वजा छेदी, धनुष तोडा तब राम हसकर दूसरा धनुष ले रहे, उतने में लवने रामका रथ तोड दिया, तब राम दूसरे रथ पर चढे, प्रचंड पराक्रम के धारी क्रोध से भोंहे चढाकर ग्रीष्मऋतु के सूर्य समान तेज, जैसे चमरेन्द्र पर इन्द्र जाये ऐसे गये। तब जानकी का नन्दन लवणकुमार युद्ध का सन्मान करने के लिये, राम के सन्मुख आये, राम के और लवण के परस्पर महायुद्ध हुआ। राम ने लवण के और लवण ने राम के शस्त्र धनुष तोडे। जैसा युद्ध राम ओर लवणकुमार का हुआ, ऐसा ही लक्ष्मण

ओर अंकुश कुमार का हुआ। इस प्रकार परस्पर दोनों युगल और योद्धा लड़े। किन्हीं योद्धाओं ने शत्रु पक्षी योद्धा का कवच टूटा, फटा, कटा, देखकर दया पूर्वक मौन ले लिया। कोई हाथी के दात रूपी सेजपर रण युद्ध से थककर, सुख से नींद लेने लगे। कोई सामन्त बाण चलाना भूल गया, तो प्रतिपक्षियों को कहने लगा, आप बाण पुनः चलाओ तब वह शर्मिंदा होकर बाण नहीं चलाया। कोई शस्त्र रहित योद्धा को देख आप भी शस्त्रों को छोड भुजाओं से युद्ध करने लगे। बडे बडे योद्धा रण संग्राम में मरते रहे परन्तु पीठ नहीं दिखाई। युद्ध स्थल में रुधिर का कीचड हो रहा है रथों के पहिये डूब रहे हैं। सारथी शीघ्र रथ नहीं चला सकते। परस्पर शस्त्रों की रगड से अग्नि के चिनगारे निकल रहे हैं। यह युद्ध महा भयकर हुआ, जहाँ सामत अपना जीवन देकर यशरूपी रत्न खरीदते है, वहाँ मूर्च्छित पर कोई घाव नहीं करते, और निर्बल पर घात नहीं करते, अपने जीवन की आशा छोडकर समुद्र समान गर्जनाकर युद्ध करते रहे।

भावार्थ—नहीं वह सेना हटी, न वह सेना हटी, परस्पर कोई एक दूसरे से कम नहीं थे। कैसेहैयोद्धा? स्वामी में परम भक्ति स्वामी ने जीवन यापन दिया, तो उसके बदले यह अपना जीवन देना चाहते हैं, प्रचड रण की इच्छा जिनके सूर्य समान तेज को धारणकर संग्राम के धुरधर हुये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे लवण—अकुश का लक्ष्मणसे युद्ध वर्णन करनेवाला एकसौ दोवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-103

राम लक्ष्मण का लवण-अंकुश के साथ परिचय

अथानंतर गौतमस्वामी कहते हैं। हे श्रेणिक! अब आगे जो वृतान्त हुआ वह तुम सुनो। अनगलवणके तो सारथी राजा वज्रजंघ, और मदनांकुश के सारथी राजा पृथु। लक्ष्मण के सारथी विराधित और राम के सारथी कृतान्तवक्र। रामने वज्रावृर्त धनुष को चढाकर कृतान्तवक्र से कहने लगे अब तुम शीघ्र ही, शत्रुओ पर रथ चलाओ, ढील नहीं करो तब उसने कहा, हे देव! देखो यह घोडे नरवीर के बाणों से जर जर हो रहे हैं। इन घोडो में तेज नहीं, जैसे सो रहे हैं। यह तुरंग

खून की धाराओ से धरती को रंग रहे है, मानों अपना अनुराग स्वामी को दिखाते हैं। मेरी भुजाये इनके बाणों से छिंद भिंद हो गई है, बखतर टूट गया है। तब श्रीराम कहने लगे, मेरा भी धनुष, युद्ध क्रिया से रहित, ऐसा हो गया है जैसे चित्र का बना धनुष हो और मूसलादि देवों पुनीत सभी शस्त्र।कुछ कार्य नहीं कर रहे हैं। मूसल हल अमोघ शस्त्र जिनकी एक एक हजार देव रक्षा करते हैं, वे सभी शिथिल हो गये हैं। शस्त्रों की सामर्थ नहीं रही, जो शत्रु पर चलें। गौतमस्वामी कहते हैं, हे श्रेणिक! जैसे अनंगलवण के आगे राम के शस्त्र निरर्थक हुये ऐसे ही मदनाकुश के आगे लक्ष्मण के शस्त्र भी कार्य रहित हुये। लवअंकुश ये दोनों भाई तो जानते हैं, कि ये हमारे पिता और चाचा हैं। इसलिये ये तो इनके शरीर को बचाकर बाणादि शस्त्र को चलाते हैं, और राम लक्ष्मण इनको शत्रु जानकर शस्त्र चलाते हैं। लक्ष्मण ने दिव्य अस्त्र इन पर चलाये, परन्तु वह निरर्थक हुये। तब शैल सामान्य चक्र खडगादि चलाये, तब अंकुश ने वज्रदंड से लक्ष्मण के शस्त्रों को रोक दिया, राम के चलाये आयुध लवणकुमार ने रोके। लवण ने राम की तरफ शैल चलाया और अंकुश ने लक्ष्मण पर चलाया। वह ऐसे निपुणता से चले, सो दोनो को मर्म की जगह पर नहीं लगे, सामान्य चोट लगी। तब लक्ष्मण की ऑखें फिर गई, विराधित ने अयोध्या की तरफ रथ को घुमाया, तब लक्ष्मण ने सचेत होकर कहा हे विराधित! तेने यह क्या किया, मेरा रथ क्यों घुमाया, अब पुनः शत्रु के सन्मुख चलो, रण में पीठ नहीं दिखाना, जो शूरवीर है, उनको शत्रु के सामने मरना अच्छा है, परन्तु पीठ देना मरने के बराबर है। शूरवीरो को योग्य नहीं, मैं राजा दशरथ का पुत्र राम का भाई वासुदेव पृथ्वीपर प्रसिद्ध, मै संग्राम मे पीठ कैसे दिखाऊँ। लक्ष्मण ने ऐसा कहा तब विराधित ने रथ को पुनः युद्ध के लिये सामने लाये। लक्ष्मण और मदनांकुश के महायुद्ध हुआ, लक्ष्मण ने क्रोध करके महाभयंकर चक्र हाथ में लिया, अग्नि के स्फूलिगे समान चक्र, जो ऑखो से देखा नहीं जाये, वह चक्र अंकुश पर चलाया, तब चक्र अंकुश के पास जाकर प्रभाव रहित हो गया, और पुनः लक्ष्मण के हाथ में आया, पुन· लक्ष्मण ने चलाया तब वह पुनः लौट आया। इसप्रकार बार बार चक्र को चलाया, तो चक्र लौटकर बार बार वापिस आया। पुनः अंकुश ने धनुष हाथ में लिया, तब अंकुश को महातेज रूप देख, लक्ष्मण पक्ष के सभी योद्धा आश्चर्य चकित हुये। और कहने लगे यह महापराक्रमी अर्धचक्री उत्पन्न हुये हैं, लक्ष्मण ने कोटिशीला उठाई, मुनि

के वचन और जिनशासन का कथन विपरीत अन्यरूप कैसे होगा? और लक्ष्मण भी मन मे जानने लगे कि ये बलभद्र नारायण उत्पन्न हुये अति लज्जावान होकर लक्ष्मण युद्ध की क्रिया से शिथिल हुये।

अथानंतर लक्ष्मण को शिथिल देख सिद्धार्थ, नारद के कहने से लक्ष्मण के पास आकर कहने लगे, हे लक्ष्मण! वासुदेव तुम ही हो, जिनशासन के वचन, सुमेरू से भी अतिनिश्चल है, अरिहंत भगवान की वाणी कभी असत्य नहीं होती है। यह दोनों राजकुमार महारानी जानकी के पुत्र हैं। गर्भ में थे, जब जानकी को वन में छोडी थी, यह आपके कुलके पुत्र है, इसलिये इनपर चक्रादि शस्त्र नहीं चलते हैं। तब लक्ष्मण ने दोनो राज कुमारों का वृतान्त सुन, प्रसन्न होकर हाथों से हथियार डाल दिये, कवच निकाल कर फेंक दिया, सीता के दुख से दुखी होकर रोने लगे। रामचन्द्र जी शस्त्रों को डाल कवच उतारते हुये पुत्रों के मोह से मूर्च्छित हुये, चन्दनादि शीतल जल के छींटे लगाये तब राम की मूर्च्छा दूर हुई। तब स्नेह सहित पुत्रों के पास चले, राजकुमार लव अंकुश दोनों पुत्रों ने रथ से उतरकर हाथजोड शीश नमाकर पिताजी के चरणों में गिरकर नमस्कार किया। तब श्रीराम ने स्नेह से, पश्चाताप पूर्वक मनसे, अपने पुत्रो को हृदय से लगाकर विलाप करते हुये ऑखो से ऑसू निकलते रहे, जैसे मेघ बरसे। राम कहते हैं। हे मेरे अगज! हे पुत्रो! हे राजकुमारो! मैं मन्द बुद्धि तुम गर्भ में थे, तब मैने तुम्हारे सहित तुम्हारी मॉ सीता को भयकर वन में अकेली छोडी, तुम्हारी मॉ निर्दोष है, मैं जानता था, फिर भी लोकअपवाद एवं कुल, वश, राज्य की रक्षा। प्रजा के मुह को बंदकरने के लिये मुझे ऐसा कार्य करना पडा। हे पुत्रो! मैंने कोई महापुण्य किया होगा, जो तुम्हारे समान बलवान, गुणवान, रूपवान, पुत्र प्राप्त हुये। तुम अपनी माता के गर्भ मे थे, तब तुमने भयंकर वन मे महाकष्ट सहन किये होगे। तुम्हारी माता निर्दोष सत्यवती सम्यग्दृष्टि तुम्हें सुन्दर शिक्षा देने वाली है, मै जानता हूँ। हे वत्स! यह राजा वज्रजंघ वन मे नहीं आता, तो तुम्हारा मुख रूपी चन्द्रमा मैं कैसे देखता। हे बालको! इन अमोघ दिव्यशस्त्रों से तुम नहीं मारे गये, यह पुण्य के उदय से देवो ने सहायता की। हे मेरे प्यारे पुत्रों! मेरे बाणों से बींधे तुम अगर रणक्षेत्र में गिरते, तो न जानें जानकी क्या करती, सब दुखों में, घर से निकालने का महादुख है, तुम्हारी माता महागुणवती, व्रतवती, रूपवती, विनयवनी मेरी आज्ञाकारणी, पतिव्रता उसे मैंने वन में छोड़ी, तुम्हारे जैसे पुत्र

गर्भ में थे, मैंने यह कार्य बिना सोचे समझे किया। अगर कदाचित् युद्ध में तुम्हारा कुछ हो जाता, तो मैं निश्चय से जानता हूँ, कि शोक से दुखी होकर, महारानी जानकी तुम्हारी माँ जीवित नहीं रहती। इस प्रकार राम विलाप करते हुये महादुखी हुये। पुनः दोनों राजपुत्रों ने विनय पूर्वक चाचा लक्ष्मण को हाथजोड प्रणाम किया, लक्ष्मण सीता के शोक से दुखी होकर आँसू बहाते हुये, स्नेह से भरे, दोनों कुमारों को हृदय से लगाया। शत्रुघ्नादि सभी सीता के पुत्रों का नाम सुनकर पास आये, राजकुमारों ने सभी का यथा योग्य विनय किया, और हृदय से लगाकर मिले, परस्पर सबको आपस में महाप्रेम हुआ, दोनों सेना के सभी लोग प्रेम पूर्वक परस्पर मिले। क्योंकि जब स्वामी को प्रेम होता है, तब प्रजा को भी होता है, सीता पुत्रों की महिमा एवं बल को देख महा प्रसन्न होकर, कहने में नहीं आये, ऐसे आनन्द को प्राप्त होकर पुनः विमान मार्ग से पुंडरीकपुर गई। और भामंडल विमान से उतरकर स्नेह वात्सल्य से ओतप्रोत होकर झरणों के समान आँखो से पानी बहाते हुये भांनजो से मिलें एवं अति प्रसन्न हुये। प्रीति से भरा हनुमान लव अंकुश को बार बार कहने लगा, अच्छा हुआ, अच्छा हुआ। विभीषण सुग्रीव विराधितादि सभी राजा राजकुमारों को वात्सल्य पूर्वक परस्पर मिलकर कुशल मंगल पूछा। भूमिगोचरी विद्याधर सभी मिले, वहाँ देवों का आगमन हुआ, सभी को प्रसन्नता हुई। बलदेव श्रीरामचन्द्रजी पुत्रों को प्राप्तकर, आल्हाद पूर्वक वात्सल्य से ओतप्रोत होकर प्रेम से अति आनन्द को प्राप्त हुये। सम्पूर्ण पृथ्वी के राज्य से भी रामचन्द्रजी पुत्रों का लाभ अधिक मानते हैं। श्रीरामचन्द्रजी को जो हर्ष हुआ, उनका वर्णन कौन कर सकता है? विद्याधरियाँ एवं अप्सरायें आकाश में नृत्य करने लगी, और भूमिगोचरियों की स्त्रियाँ पृथ्वीपर नृत्य करने लगी, लक्ष्मण अपने आपको कृतार्थ मानने लगे, जैसे तीनलोक को जीत लिया है। हर्ष से फूले नहीं समा रहें है। श्रीराम मन मे जानने लगे कि मैं सगर चक्रवर्ती के समान हूँ, और लव-अंकुश दोनों राजकुमार भीम भगीरथ के समान है। श्रीराम, राजावज्रजंघ से अति प्रीति करनेलगे और कहा, आप, मेरे भामंडल के समान हो, अयोध्यानगरी तो पहले से ही स्वर्गपुरी समान थी परन्तु राजपुत्रो के आने से विशेष रूप से सजाई गई, जैसे सुन्दर स्त्री, सहज ही सुन्दर है, परन्तु शृंगार करने से विशेष सुन्दर होती है। श्रीराम लक्ष्मण सहित दोनों राजकुमारों को साथ लेकर सूर्य की ज्योति समान जो पुष्पकविमान उसमें विराजमान हुये। कल्पवृक्षसमान

ज्योति जिनकी राम लक्ष्मण और दोनों राजकुमार अमूल्य आभूषण पहने ऐसे सुन्दर लगे, जैसे सुमेरू के शिखरपर बिजली की चमक ठहरी।

भावार्थ—विमान तो सुमेरू का शिखर हुआ, लक्ष्मण महामेघ का स्वरूप हुआ, और राम तथा राम के पुत्र लव-अंकुश विद्युत समान हुये। ऐसे विमान में बैठकर नगर के बाहर उद्यान में जिनमन्दिर के दर्शनों के लिये चले। नगर के कोटपर जगह जगह ध्वजायें फहराई हैं, उनको देखते हुये धीरे धीरे जा रहे हैं उनके साथ अनेक राजा, कोई हाथी, घोडे, रथ पर बैठकर या पैदल पैदल चले, इस प्रकार सभी जा रहे हैं। धनुषबाण इत्यादि अनेकशस्त्र एव ध्वजा छत्रादि से सूर्य की किरणें भी दिखाई नहीं देती है। अनेकों स्त्रियाँ खिडकियों में बैठकर देखती है, लव अकुश को देखने का सबको बहुत कौतुहल है। नेत्ररूपी पात्रों से लव अंकुश के सुन्दर रूप का अवलोकन रूपी अमृत का पान करते हैं, तो भी प्यास नहीं शात हो रही है। एकाग्र मन से ध्यान पूर्वक इनको देख रही है। और नगर में नर नारियों की ऐसी भीड हुई कि किसीको वस्त्र आभूषणाों का भी ध्यान नहीं रहा। स्त्रियाँ परस्पर में एक दूसरे को कहती है, हे माता थोडा मुह इधर करो, मुझे भी राजकुमारों को देखने दो, हे सखी! तू तो बहुत देर से देख रही है, अब मुझे देखने दे। अपना मस्तक नीचा करो तब हमे दिखेगें, क्यों ऊँची ऊँची होकर देख रही है थोडी नीचे झुककर बैठजा मुझे भी देखने दे, तेरे सिर के केश बिखर रहे है, उन्हे अच्छे कर, कोई कहती है, तू एक जगह खडी नहीं रह सकती है क्या मुझे मारेगी? तू नहीं देखती है क्या? यह गर्भवती स्त्री खडी है, दुखी हो रही है। तू आगे जाके देख, मुझे यहाँ से देखने दे, कोई कहती है, तू खडी हो जा मुझे बैठने दे कोई कहती है, छोटे बच्चे को ऊँचा करके दिखा, तब कोई कहती है, बच्चे को नीचा करो, हमें नहीं दिखता है बच्चा क्या देखेगा? यह दोनों रामदेव के कुमार रामदेव के समीप बैठे है। कोई पूछते है इनमें लवणकुमार कौन और अंकुशकुमार कौन है? यह तो दोनो एक समान दिखते हैं। तब कोई कहते हैं, लालवस्त्रपहने लवणकुमार हैं, और हरेवस्त्र पहने अकुशकुमार हैं। अहो धन्य है! सीता महासती पुण्यवती उनने ऐसे पुत्र उत्पन्न किये। कोई कहते हैं, धन्य है, वह स्त्री सीता, जो ऐसे बलदेव पति मिले। अनेक स्त्रियाँ परस्पर इसी प्रकार कहती रही। किसी के गले का हार टूट गया, मोती बिखर गये, मानों राजकुमारों पर पुष्पवृष्टि करते हैं। किसी के भी नेत्रों की पलक तक भी बद नहीं हुई, राम की सवारी बहुत दूर तक

चली गई, फिर भी लोग उसी तरफ देखते रहे। नगर के नर नारी जगह जगह पर दोनों राजकुमारों के ऊपर पुष्प, रत्न, स्वर्णादि की वर्षा करते रहे, श्रीराम अति प्रसन्न होते हुये, पुत्रों सहित वन के चैत्यालयों में दर्शनकर अपने राज मन्दिर में बडी धूम धाम से आये, अपने प्यारे पुत्रों का आगमन रूपी महाउत्साह उसका वर्णन कहाँ तक करें। पुण्य रूपी सूर्य के प्रकाश से मनरूपी कमल खिले हैं। वही पुण्यवान जीव अद्‌भुत सुखों को प्राप्त करते हैं, पुण्य से ही पिता पुत्रादि परिवारों का मिलन होता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्‌मपुराण भाषावचनिका मे राम–लक्ष्मण से लव–अकुश का मिलन वर्णन करनेवाला एकसौतीनवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-104

राम को सीता की शील-परिक्षार्थ अग्निकुण्ड में प्रवेश की आज्ञा

अथानंतर विभीषण, सुग्रीव, हनुमान सब मिलकर राम से विनती करने लगे–हे नाथ! हे भगवन्! हमारेपर कृपा करो, हमारी विनती स्वीकार करो, जानकी आपके बिना बहुत दुखी है, इसलिये जानकी को यहॉ बुलाने की आज्ञा करो। तब राम दीर्घ श्वास लेकर, एकक्षण पश्चात् विचारकर बोले मैं महारानी सीता को शीलदोष रहित निर्दोष जानता हूँ, वह उत्तम निर्मल मन की धारी है, परन्तु लोक अपवाद के कारण घर से निकाली है, अब मैं उसे कैसे बुलाऊँ? इसलिये प्रजा के लोगों का सन्देह दूरकर जानकी आये, तो हमारा और उसका सहवास होगा, नहीं तो कैसे होगा? इसलिये सम्पूर्ण देशों के राजाओ को बुलाओ, सभी विद्याधर ओर भूमिगोचरी आयें, सबके सामने सीता शपथ लेकर शुद्ध होकर मेरे घर में प्रवेश करे, जैसे शची इन्द्राणी इन्द्र के घर में प्रवेश करें। तब सबने कहा, हे नाथ! जो आप आज्ञा आदेश करोंगे, वही सबको प्रमाण होगा। उसीसमय सभी देशों के राजाओं को बुलायें, बाल, वृद्ध, स्त्री परिवार सहित अयोध्या नगरी मे आये। सूर्य को कभी नहीं देखे, घर में ही रहें, वैसी नारियॉ भी आई। और

लोगो की क्या बात? जो वृद्ध सभी बातों को जानने वाले, देश के प्रमुख लोगादि सभी देश नगर से लोग आये, कोई रथों पर, अश्वो पर, पालकी पर अथवा अपने अपने वाहनोंपर बैठकर बडी उत्सुकता पूर्वक आये। विद्याधर आकाश मार्ग से विमानो में बैठकर आये और भूमिगोचरी सभी पृथ्वी मार्ग से आये। राम की आज्ञा से अधिकारी लोगो ने नगर के बाहर सभी लोगों के रहने के लिये वस्त्रों के भवन बनाये। उन भवनो मे खिडकियॉ आदि सभी साधन सुख प्राप्त कराने वाले थे, नर नर साथ में और नारियॉ नारियॉ साथ में रूके। सभी पुरुष यथायोग्य बैठे, सबको शपथ देखने की अभिलाषा लगी हैं, जितने भी लोग आये थे उनका पूर्ण साधन आवास निवास भोजनादि की सुविधाये थी, राज्य के अधिकारियों ने पूर्ण व्यवस्था कर रखी थी सबको भोजन, वस्त्र, पान, सुपारी, आभूषण वगैरह सभी वस्तुये राजदरबार से आती थी।

श्रीराम की आज्ञासे भामडल, विभीषण, हनुमान, सुग्रीव, विराधित रत्नजटी आदि बडे बडे राजा विमान मे बैठकर आकाश मार्ग से ऑख की पलक मात्र मे पुण्डरीकपुर पहुँच गये। सम्पूर्ण सेना को नगर के बाहर छोडकर कुछ लोगो को साथ लेकर, जहॉ जानकी पटरानी विराजमान थी वहॉ आये। जय जयकार करते हुये पुष्पादि भेट चरणों मे चढाकर प्रणाम किया, और अति विनय सहित आंगन मे बैठे। तब सीता ऑखो में ऑसू बहाती हुई, अपनी निंदा करने लगी। दुष्ट पुरुषो के अपवाद से दावानल अग्नि समान, मेरा ह्रदय जल रहा, उसे क्षीरसागर के जल से छीटें लगाये, तो भी मेरा शरीर शीतल नहीं होगा। तब सभी बडे बडे राजा कहने लगे, हे देवी भगवती, सौम्ये, अब शोक छोडो, अपना मन शान्त करो, इस पृथ्वीपर ऐसा कौन प्राणी है, जो आपका अपवाद करे, ऐसा कौन जो पृथ्वी को चलायमान करे, और कौन अग्नि की शिखा को पीये। अथवा सुमेरूपर्वत को उठाने का पुरुषार्थ करे, ऐसा कोई मानव नहीं। आपके गुणरूपी रत्नोका पर्वत कोई चलायमान नहीं कर सकते, और आप समान महा सतियो का, अपवाद करते उनकी जिह्वा के हजार टुकडे क्यो नहीं होते। हम अपने सेवक लोगों को भेजकर जो कोई भरतक्षेत्र में आपका अपवाद करेंगे, उन दुष्टो को हम दण्ड देगे। और जो विनयवान आपके गुणों के अनुरागी हैं, उनके महलों मे हम रत्नवृष्टि करेंगे। और यह पुष्पकविमान श्रीरामचन्द्रजी ने भेजा हैं, उसमें प्रसन्न होकर बैठो, ओर आनन्द पूर्वक अयोध्या के लिये गमन करो। सभी देश नगर, ओर श्रीराम बलदेव का राजभवन, आपके बिना सुन्दर नहीं लगता हैं, जैसे चंद्र

बिना आकाश की, एवं दीपक बिना मंदिर की, या शाखा बिना वृक्ष की, शोभा नहीं। हे राजा जनक की राजपुत्री! राजा रामचन्द्रजी की महारानी! आज आप चन्द्रमा समान राम का मुख देखो। हे पंडिते पतिव्रते! आपको अवश्य ही आपके पति की आज्ञा आदेश का पालन करना हैं। जब ऐसा कहा, तब सीता मुख्य सहेलियो को लेकर, पुष्पकविमान मे बैठकर शीघ्र ही संध्या के समय आयी, सूर्य अस्त हो गया, तब महेन्द्रोदय उद्यान में, रात्रि पूर्ण की। पहले श्रीराम सहित यहॉ आती थी, तब उस वनको सुन्दर देखती थी, लेकिन अब रामकेबिना वह मनोहर उद्यान भी अच्छा नहीं लगा। सूर्य उदय हुआ, कमल खिले, जैसे राजा के सेवक पृथ्वीपर विचरण करते है, ऐसे सूर्य कि किरणें पृथ्वीपर फैलीं। तब सीता उत्तम नारियों सहित श्रीरामचन्द्रजी के समीप चली। हाथीपर बैठकर भी मन की उदासी से शरीर की ज्योति मंद हुई, तो भी निर्मल परिणामों को धारण करने वाली, सीता अपनी सहेलियो सहित ऐसी दिखे, जैसे चन्द्रमा ताराओं सहित। सभा के सभी लोग विनय सहित सीता को देख वन्दना करने लगे। सीता पाप से रहित, धीरज की धारी, सम्यग्दृष्टि राम की रमा, सभा में आई। राम समुद्र समान क्षोभ को प्राप्त हुये। प्रजा के लोग सीता के जाने से विषाद को प्राप्त हुये थे, और कुमारो का प्रभाव देख आश्चर्य चकित हुये, सीता के आने से हर्ष के भरे फूलें नहीं समा रहे है। सभी लोग कहते हैं—हे माता सदा जयवन्त हो! फलों फूलो। धन्य ये रूप, धन्य यह धीरता, धन्य यह सत्य, धन्य यह ज्योति, धन्य है यह भाव, धन्य है निर्मलता, धन्य है, यह गम्भीरता! ऐसे वचन सम्पूर्ण नर नारियों के मुख से निकले, आकाश में विद्याधर भूमिगोचरी, कौतुक से, अपलक रूप सीता के दर्शन करने लगे। और परस्पर कहते हैं, हे प्रभो! हमारे पुण्य के उदय से जनक सुता पुनः आई। कोई राम की तरफ देख रहे हैं जैसे इन्द्र की ओर देव देखें, कोई राम के समीप बैठे, लव अंकुश को देख परस्पर कहते हैं, ये दोनों राजकुमार राम के समान ही है। कोई लक्ष्मण की ओर देखते हैं। कोई शत्रुघ्न की ओर, कोई भामंडल की ओर, कोई हनुमान, विभीषण, विराधित, सुग्रीव की ओर देखते हैं। बीच बीच में आश्चर्य चकित होकर सीता की तरफ बार बार देखते हैं।

अथानंतर जानकी ने जाकर रामको देखा और अपने आपको वियोग का अन्तिम क्षण मानने लगी। जब सीता सभा में आई, तब लक्ष्मण अर्धदेकर नमस्कार करने लगे, और सभी राजाओं ने प्रणाम किया, सीता शीघ्रता से निकट आने लगी, तब राघव यद्यपि शांत हैं, फिर भी क्रोधित होकर मन में विचारने

लगे, कि मैंने सीता को विषम भयानक वन में छोडी थी, फिर भी मेरे मन को हरने वाली, पुन. वापिस आई, देखो यह महा ढीठ है, मैंने छोडी तो भी मेरे से यह अनुराग नहीं छोडती है। सीता राम के मन की उदासी जान, महासती उदास मन होकर विचारने लगी, की मेरे वियोग का अन्त अभी नहीं आया है, मेरा मनरूपी जहाज वियोगरूपी समुद्र के किनारे पर, आकर फटना चाहता है। ऐसी चिन्ता से व्याकुल हुई, पैर के अंगूठे से पृथ्वी कुचरने लगी। बलदेव के समीप, भामडल की बहिन ऐसी सुन्दर लगे, जैसे इन्द्र के आगे लक्ष्मी। तब श्रीराम बोले, हे सीते! मेरे आगे क्यो खडी है, तू दूर खडी रह। मैं तुझे देखने का अनुरागी नहीं, मेरी ऑख मध्यान के सूर्य को एवं आशीविष सर्प को देख सकती हैं, परन्तु तेरे शरीर को नहीं देख सकती। तू बहुत महीनों तक दशमुख के उद्यान मे रही, अब तुझे मेरे महल मे रखना, मुझे कैसे उचित होगा? तब जानकी बोली आपका मन महादया रहित है, आपने महा पडित होकर भी अज्ञानी लोगों की तरह मेरा तिरस्कार किया। वह क्या उचित था? मुझ गर्भवती को जिनदर्शन की अभिलाषा उत्पन्न हुई थी, सो आपने कुटिलता पूर्वक मायाचारी से यात्रा का नाम लेकर, विषम भयानक वन मे मुझे छोडी, यह क्या उचित था। अगर मेरा कुमरण होता, और नरक तिर्यंचादि कुगतियो मे जन्म लेती, तो आपको इसमे क्या सिद्ध होता? अगर आपके मन में मुझे छोडने की ही इच्छा थी, तो किन्हीं आर्यिकाओं के पास छोडते। जो अनाथ दीन दरिद्री कुटुम्ब रहित महादुखी हैं, उनको दुख दूर करने का उपाय एक जिनशासन का शरण ही है। इनके समान और दूसरा कोई नहीं? हे पद्मनाभी! हे बलदेव! आपने करने में तो कुछ कमी नहीं रखी। अब मेरे पर प्रसन्न होओ। आप जो आज्ञा दोगें वही मैं करूँगी। यह कहकर दुख की भरी महा वेदना से रोने लगी। तब श्रीराम बोले—हे जानकी! मै जानता हूँ तुम्हारा शील निर्दोष है, तुम निष्पाप अणुव्रतो को धारण करने वाली, सम्यग्दृष्टि जिनशासन की ज्ञाता, मेरी आज्ञाकारणी हो, तुम्हारे भावों की विशुद्धता मैं अच्छी तरह जानता हूँ। परन्तु इस जगत के प्राणी कुटिल स्वभावी हैं, इन्होंने बिना प्रयोजन, तेरा अपवाद किया, सो इनका सन्देह दूर हो, इनके मन मे जैसा विश्वास हो, ऐसा कार्य करो। तब सीता सतीने कहा—हे नाथ! आप जो आज्ञा करो, वही मेरे को प्रमाण है। जगत में जितने प्रकार के दिव्य शपथ है, वह सब करके पृथ्वी के लोगो का सन्देह दूर करूँ, हे स्वामिन्! हे प्राणनाथ! विषों में महाविष, कालकूट है, जिसको सूंघकर आशीविष सर्प भी मर जाते हैं। वह मैं पीऊँ अथवा अग्नि की

भयंकर विषम महा प्रज्वलित ज्वालाओं मे मैं प्रवेश करूँ, उसके अलावा और भी आप जो आज्ञा देओ वही मै करूँ, तब एक क्षण विचारकर श्रीरामचन्द्रजी बोले–अग्नि कुंड में प्रवेश करो? सीता महाहर्षित होकर, प्रसन्न मुख, एवं प्रसन्न मन से कहने लगी, यही मुझे प्रमाण है, मैं इसे स्वीकार करती हूँ। तब नारदऋषि मन मे सोचने लगे, कि यह तो महासती है, परन्तु अग्नि का क्या विश्वास, इसने मृत्यु को चाहा है। और भामंडल, हनुमानादि बडे बडे राजा महाशोक से दुखी हुये। राजकुमार लव अंकुश माता को, अग्नि मे प्रवेश करने का निश्चय जान, महादुखी होकर, व्याकुल हुये। सिद्धार्थ क्षुल्लक दोनों भुजायें ऊँचीकर कहने लगे–हे राम! देवों से भी सीता के शील की महिमा का वर्णन नहीं कहा जा सकता, तो मनुष्य क्या कहेगे, कदाचित् सुमेरूपर्वत पाताल में प्रवेश कर जाये, और सम्पूर्ण समुद्र सूख जाये, तो भी सीता का शीलव्रत चलायमान नहीं हो सकता, कदाचित् चन्द्रमा की किरणे उष्ण हो जाये, अथवा सूर्य की किरणें शीतल हो जाये, तो भी सीता को शीलव्रत मे दूषण नहीं लग सकता है। मैं विद्याबल से, पंचमेरू एवं अकृत्रिम कृत्रिम चैत्यालय जो शाश्वत है, वहाँ प्रतिदिन जिनवंदना करता हूँ–हे पद्मनाभी! सीता के व्रत की महिमा, जगह जगह मुनियों के मुख से सुनी है, इसलिये आप महा विचक्षण समझदार हो, यह महासती पतिव्रता सीताजी को अग्नि प्रवेश की आज्ञा मत करो। और आकाश मे विद्याधर, पृथ्वीपर भूमिगोचरी, प्रजा के सभी लोग यही कहने लगे, हे देव! प्रसन्न हो सौम्यता भजो, क्षमा करो, शांति लाओ, हे नाथ! अग्नि समान कठोर मन मत करो, सीता महासती है, सीता अन्यथा नहीं जो महापुरुषो की रानियाँ होती है, वह कभी भी विकार को प्राप्त नहीं होती है, सभी प्रजा के लोग यही कहते हुये, महादुखी होकर आँखों से मोटी मोटी आँसुओ की बूदे गिराते रहे। तब श्रीराम ने कहा, तुम ऐसे दयावान हो तो पहले अपवाद क्यो उठाया। राम ने कर्मचारी सेवकों को आज्ञा दी, कि तीनसौहाथ बराबर, चौकोर गड्डा खोदो, और सूखी लकडी, चन्दन, कृष्णागुरु आदि से भरो, और अग्नि की ज्वालायें प्रज्वलित करो। साक्षात मृत्यु का कुंड तैयार करो। तब सेवको ने आज्ञा प्रमाण कुदाली से खोदकर अग्निकुंड तैयार किया। और उसी रात्रि मे महेन्द्र उदय उद्यान में, सकलभूषण मुनिराज को, पूर्व बैर के योग से, महारौद्र विद्युतवक्र, नाम की राक्षसी ने उपसर्ग किया, वे मुनिराज उपसर्गों को जीतकर केवलज्ञान को प्राप्त हुये।

सकल भूषण केवली के पूर्वभव और वैर का कारण

गौतमस्वामी से राजा श्रेणिक ने पूछा हे प्रभो! मुनिराज और राक्षसी के पूर्वभव का बैर क्या था? तब गौतमस्वामी कहते हैं हे श्रेणिक! सुनो विजयार्द्ध पर्वत के उत्तरश्रेणी में गुंजनाम का नगर वह सिहविक्रम नाम की रानी उनके पुत्र सकलभूषण उनकी रानियॉ आठसौ, उनमे मुख्य रानी किरणमण्डला उसने एक दिन अपनी सौत के कहने से अपने मामा के पुत्र हेमशिखा का चित्र बनाया, सकलभूषण ने वह चित्र देख क्रोध किया। तब सभी रानियो ने कहा, यह हमने बनवाया है, इनका कोई दोष नहीं, तब सकलभूषण क्रोधछोड प्रसन्न हुआ। एक दिन किरणमंडला पतिव्रता पति सहित सोई थी, तब नींद मे हेमशिखा ऐसा मुह से निकला, सो यह तो निर्दोष, इसका पति सकलभूषण, रानीपर क्रोधकर वैरागी बन मुनि दीक्षा ले ली। और रानी किरणमडला भी आर्यिका हुई, परन्तु पति से द्वेष, कि मुझे झूठा दोष लगाया, वह मरकर विद्युतवक्र नामकी राक्षसी हुई। पूर्व बैर के कारण, सकलभूषण मुनिराज, जब आहार के लिये जाते हैं, तब यह अन्तराय करती है, कभी हाथियो के बधनो को तोडकर गाव मे उपद्रव कराती है। कभी अग्निलगा देती, कभी धूल की वर्षा करती, कभी अश्व का कभी बैल का रूप बनाकर सामने आती, कभी मार्ग मे काटे बिखेर देती, इस प्रकार यह राक्षसी मुनिपर उपसर्ग करती, एक दिन सकलभूषण मुनिराज, कायोत्सर्ग मुद्रा मे, ध्यान से खडे थे, तब इसने शोर मचाया कि यह चोर है, तब इसका शोर सुनकर दुष्ट लोगों ने, इन्हें पकड कर अपमान किया, पुनः उत्तम पुरुषो ने, मुनिराज को छुडवाया। एक दिन मुनिराज आहार करके जा रहे थे, तब वह पापिनी राक्षसी ने किसी स्त्री के गले का हार लेकर मुनिराज के गले में डाल दिया, और शोर मचाया कि यह मुनि चोर है, हार लेकर जा रहा है, तब लोगो ने आकर मुनिराज पर, उपसर्ग किया, तब धर्मात्मा लोगों ने, मुनिराज का उपसर्ग दूर किया। इसप्रकार वह राक्षसी क्रोध पूर्वक दया रहित, पूर्व बैर विरोध के कारण, मुनिराज पर उपसर्ग करती थी, गई रात्रि को मुनिराज महेन्द्रोदय उद्यान में ध्यान अवस्था मे खडे थे, तब राक्षसी ने रौद्रउपसर्ग किया, व्यन्तर, हाथी, सिंह, व्याध्र, सर्प, दिखाये और रूपवान नारियॉ दिखाई एवं भी भिन्न भिन्न कई प्रकार के उपसर्ग किये, परन्तु मुनिराज ध्यान से विचलित नहीं हुये। भयकर उपसर्ग होने पर भी, मुनिराज ध्यान में एकाग्र रूप लीन रहे, तब उन्होंने चारघातिया कर्मों का नाशकर, केवलज्ञान को प्राप्त किया। केवली भगवान की पूजा एवं दर्शनो के

लिये इन्द्रादि देव कल्पवासी, भवनवासी, ब्यन्तरवासी ज्योतिषी देव अपने अपने बाहनों पर बैठकर आये, हाथी, घोडा, सिंहादि की विक्रिया देवों की ही माया है, तिर्यंच नहीं। आकाश मार्ग से महाविभूति सहित सभी दिशाओ में प्रकाश करते हुये मुकुट हार कुंडल अनेक आभूषणों को पहनकर सकलभूषण केवली के दर्शन करने के लिये अयोध्या की तरफ आये। महेन्द्रोदय उद्यान मे विराजमान हैं, केवलीभगवान उनके दर्शनों की इच्छा से पृथ्वी की शोभा देखते हुये आकाश से नीचे उतरे, और सीता की शील परीक्षा के लिये अग्निकुड तैयार हो रहा था, उसको देखकर, एक मेघकेतु नाम का देव, इन्द्र से कहने लगा, हे देवेन्द्र! हे नाथ! सीता महासती के ऊपर उपसर्ग आया है, यह महासती सीता श्राविका महापतिव्रता, शीलवान, अति निर्मल परिणामी धर्मात्मा है, इसके ऊपर ऐसा उपसर्ग क्यों हो रहा है? तब इन्द्र ने आज्ञा दी, कि हे मेघ केतु! मैं सकलभूषण केवली के दर्शन के लिये जा रहा हूँ, और तुम महासती का उपसर्ग दूर करना। इसप्रकार आज्ञा देकर इन्द्र तो महेन्द्रोदय नाम के उद्यान में केवलीभगवान के दर्शनों के लिये गये। और मेघकेतुदेव सीता के अग्नि कुंड के ऊपर आकर आकाश में अपने विमान में बैठा। वह देव आकाश मे सूर्य समान, दैदीप्यमान श्रीरामकी और देखता रहा राम महासुन्दर सब जीवो के मन को हरने वाले हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे सकलभूषणकेवली के दर्शनकरने देवोका आगमन वर्णन करनेवाला एकसौचारवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-105

सीता का अग्निकुंड में प्रवेश और शील की महिमा से अग्नि का सरोवररूप परिणत होना

अथानंतर श्रीराम उस अग्निकुंड को देखकर दुखरूपी वेदना से, व्याकुल होकर मन में चिन्ता करने लगे, कि अब मैं इस अपनी महारानी सीता को कहाँ देखूँगा। यह जानकी महागुणोंकीखान, रूपवान, अनेक कलाओं की पारगामी, गम्भीर, जिनशासन की आज्ञाकारणी, शीलरूपी वस्त्रों से मंडित, व्रतरूपी मालती

की मालासमान सुगन्धित, कोमल शरीर, अग्नि के स्पर्श मात्र से ही जलकर भस्म हो जायेगी। यह सीता राजा जनक के घर में जन्म नहीं लेती तो अच्छा था, यह लोक अपवाद, और अग्नि में मरण तो नहीं होता, इसके बिना मुझे क्षणमात्र भी सुख नहीं, सीता सहित वन मे रहना मुझे अच्छा है, लेकिन इसके बिना मुझे स्वर्ग का सुख भी अच्छा नहीं। यह शीलवान परम श्राविका है, इसे मरण का भय नहीं, इह लोक, परलोक, मरण, वेदना, अकस्मात, अरक्षक और चोर यह सात भयों से रहित इसके सम्यग्दर्शन दृढ है। यह अग्नि में निश्चित ही प्रवेश करेगी। और मै इसको रोकूँ तो लोग मुझे अज्ञानी कहेंगे, सभी लोग मुझे कह रहे थे, सीता महासती है, इसे अग्निकुंड मे प्रवेश नहीं कराओ, तब मैंने नहीं. मानी। और क्षुल्लक सिद्धार्थ हाथ ऊँचे कर करके बार बार कह रहे थे, तब भी मैंने उनकी नहीं सुनी, अब वे सब चुप हो रहे है, तब में कौन सा बहाना करके मेरीप्राणप्रिया को, अग्निकुंड मे प्रवेश करने से कैसे रोकूं। अथवा जिसकी जिस तरह मृत्यु होनी होगी उसकी उसी तरह मृत्यु होगी, उसको कोई टाल नहीं सकता। फिर भी इसका वियोग मेरे से सहन नहीं होगा। मैं क्या करूँ, अब कैसे रोकूँ मेरे मन की बात किससे कहूँ, मेरे मन की बात जाननेवाली जानकी ही थी। मैंने इसे इतना बडा कठोरदड दिया, फिर भी सीता कभी भी आक्रोश रूप नहीं हुई। अब ऐसी गम्भीर सीता लोकअपवाद एवं मेरे वियोगरूपी दुख से दुखी होकर अग्नि में प्रवेश करके मर जायेगी, इसप्रकार राम चिन्ता करते है। और अग्नि कुड मे अग्नि की भयकर ज्वालाये प्रज्वलित हुई, सम्पूर्ण नर नारियों के ऑखो मे ऑसुओ के प्रवाह चले, अग्नि की धुऑ से चारो ओर अधकार हो गया। मानो बादल आकाश मे फैल गये हों, आकाश कोकिल स्वरूप श्याम हो गया, अग्नि की धूऑ से सूर्य ढक गया, जैसे मानों सीता का उपसर्ग देख नहीं सका, सो दया से छिप गया, ऐसी भयकर अग्नि प्रज्वलित हुई। जिसकी बहुत दूर दूर तक ज्वालाये फैली, मानों अनेक सूर्य का प्रकाश हुआ हो, आकाश में प्रलय काल की संन्ध्या फूली। अग्नि की चिनगारियॉ दशों दिशाओं मे फैली, जैसे आकाश में सभी दिशायें स्वर्ण रूप हो गई। तब महासती, पतिव्रता, शीलवान, दृढवान सीता उठी, अत्यन्त निश्चल मन होकर, कायोत्सर्ग करके, अपने ह्रदय में श्रीऋषभादि चौबीस तीर्थंकर विराजमान है, उनकी स्तुतिकर अरिहंत सिद्धपरमेष्ठि, आदि पंचपरमेष्ठी को नमस्कार कर, श्री मुनिसुव्रतनाथ हरिवंश के तिलक बीसवें तीर्थंकर जिनके

तीर्थकाल में इन्होंने जन्म लिया है, उनका ध्यानकर, सभी प्राणियों के हितकारी आचार्य परमेष्ठी को प्रणाम कर, संसार के सभी जीव, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक सभी जीवों से, एवं रामचन्द्रादि सभी राजा महाराजाओं से अथवा प्रजा के सभी लोगों से, तथा राजभवन में सभी लोगों से, क्षमाभाव करके जानकी कहने लगी, मन से, वचन से, काय से स्वप्न मे भी, राम के बिना अन्यपुरुष की मैंने कभी भी इच्छा नहीं की। अगर में झूठ कहती हूँ, तो यह अग्नि की ज्वालाये क्षणमात्र मे मुझे जलाकर भस्म करना, मेरे पतिव्रता भावों में अशुद्धता हो, श्रीराम को छोडकर अन्य पुरुष की मन से भी, या स्वप्न मे भी अभिलाषा की हो, तो हे अग्नि की ज्वलायें! मुझे जलाकर भस्म करना। अगर मै मिथ्यादर्शनी पापिनी व्यभीचारणी हूँ, तो, इस अग्नि मे मेरा शरीर जलकर भस्म हो जाये। और जो मै महासती पतिव्रता अणुव्रतो को धारण करने वाली श्राविका हूँ, तो हे अग्नि की ज्वालायें! मुझे भस्म नहीं करना। ऐसा कहकर णमोकार मंत्र का जापकर, सीता सती ने अग्निकुंड मे प्रवेश किया। तब सीता के शीलव्रत के प्रभाव से, जो अग्नि थी, वह स्फटिकमणी समान निर्मल शीतल जल हो गया। मानो धरती को भेदकर पाताल से, गंगारूपी सरोवर निकला, जल में कमल खिल रहे हैं, भ्रमर गूंज रहे है, अग्नि की सम्पूर्ण सामग्री नष्ट हो गयी, न ईधन, न चिनगारी, उस जल में नदी के समान झाग उठने लगे, एवं गोल गम्भीर महा भयंकर भ्रमर उठने लगे, मृदग की ध्वनि समान जल मे आवाज होने लगी, और कुड का जल उछलकर पहले घुटने तक आया, पुनः कमर तक आया, कुछ ही क्षणों मे छाती तक आया, तब भूमिगोचरी डरने लगे, और आकाश में बैठे, विमानों में से, विद्याधर भी देखकर डरने लगे, कि न जाने क्या होगा पुनः थोडे ही समय में जल लोगो के कण्ठ तक आया, तब ज्यादा डरने लगे, और सिर के ऊपर पानी आया, तब लोग महा भयभीत होकर बालकों को उठाकर प्रार्थना करने लगे, हे देवी! हे लक्ष्मी! हे सरस्वती! हे कल्याणरूपिणी! हे धर्म धुरंधरे! हे मान्ये! हे प्राणी दयारूपिणी! हमारी रक्षा करो, हे महासाध्वी! मुनि समान निर्मल मन को धारण करने वाली, हे माता! दया करो, बचाओ बचाओं, प्रसन्न हो, रक्षा करो। जब सभी लोगों के मुंह से, ऐसे करुणारूपी दुख के वचन निकले, तब महासती सीता के पतिव्रता रूपी दयासे जल रूका, लोगों की रक्षा हुई। जल में अनेक जाति के स्थान स्थान पर कमल खिले, जल सौम्यता को प्राप्त हुआ, जो भयकर शब्द एवं भंवर उठे थे, वे सब

शांत हुये, जो जल उछल रहा था, वह कुंड रूपी वधू अपने तरगो रूपी हाथों से, माता के चरण युगल स्पर्श करती है। कैसेहैंचरण युगल? कमल के गर्भ से भी अति कोमल, एव नखों की ज्योति से भी सुन्दर है। जल में कमलों की सुगन्ध से भ्रमर गूंज रहे है जैसे मानो सगीत ही कर रहे हैं। और चकवा, हंसादि के मनोहर शब्द हो रहे हैं। अग्निकुंड की महाशोभा हुई, मणियों एवं स्वर्ण की सीढियाँ बन गई, उनको जल की तरगो का स्पर्श हो रहा है। सरोवर के तट मरकतमणि से निर्मित होकर सुन्दर लग रहे हैं।

ऐसे सरोवर के मध्य मे, एकसहस्रदल का कमल कोमल, विमल, विस्तीर्ण, प्रफुल्लित, महाशुभ उसके मध्य में देवों ने सिंहासन की रचना की, रत्नों की किरणों से मंडित, चंद्रमंडल समान निर्मल, उसमें देवांगनाओं ने सीता सती को विराजमान किया, और देवियॉ सीता की सेवा करने लगी। महासती सीता सिहासन पर बैठी, निर्मल मन मे संसार के क्षणभंगुर सुखों का चिन्तवन करती हुई, अद्भूत अनुपमरूप से शची समान दिख रही थी। अनेक देव चरणों मे पुष्पांजलि चढाकर धन्य धन्य करने लगे, आकाश मे कल्पवृक्षो के पुष्पों की वर्षा होने लगी, नाना प्रकार के दुंदुभी बाजे बजने लगे, गुजजाति के एवं मृदंग, ढोल, दमामा, नादि, काहल तुरही करनालादि अनेक जाती के बाजे बजने लगे। वीणा, शंख, तात, झांझ, मजीरा, झालरी आदि सम्पूर्ण बाजे देवोपुनीत बजे। विद्याधरों के समूह नृत्य करने लगे, और देव जय जयकार करने लगे—श्रीमत जनक राजा की राजपुत्री परम उदयकी धारी, श्रीमत् बलदेव राजारामकी महारानी अत्यत जयवंत हो, अहो निर्मल शील पवित्र मन आश्चर्य कारी, महासती परम गम्भीर, गुणों का भंडार, सम्यग्दृष्टि ऐसे शब्द सभी दिशाओं में देव कहने लगे, हे माता! धन्य है आपका अटूट शील, धन्य है, आपकी गम्भीरता, धैर्यता प्रशम, संवेग, आस्तिक्य और अनुकंपा की धारी, आप धन्य हो धन्य हो। तब दोनों राजकुमार लव अंकुश अकृत्रिम हैं, माता का हित, प्रेम, वात्सल्य, राग जिनका, वह जल में तिरकर महाप्रेम के भरे, राग से माता के समीप आये। दोनों पुत्र माता के दोनों तरफ खडे हो गये। माता को नमस्कार किया, तब माता ने दोनों के सिरपर अपना हाथ रखा। रामचन्द्रजी ने मिथिलापुरी के राजा की पुत्री मैथिली कहो—सीता उसे कमलवासिनी लक्ष्मीसमान देख, महाअनुराग प्रेमपूर्वक सीता के पास गये। कैसीहै सीता? जैसे स्वर्णकी मूर्ति, अग्नि में शुद्ध हुई, अग्नि में तपकर उसका

शरीर शुद्ध हुआ है। श्रीराम कहते हैं–हे देवी! कल्याण स्वरूप उत्तम जीवों से पूज्य, महा अद्‌भूत अनुपमशील व्रतों की धारी, शरद पूर्णिमा के चंद्रमा समान है, मुख तुम्हारा, ऐसी तुम हमारे पर प्रसन्न होओ। अब मै कभी भी ऐसा विरुद्ध कार्य नहीं करूँगा, जिससे तुमको दुख होगा। हे शील शिरोमणी! मेरा अपराध क्षमा करो, मेरे आठ हजार रानियाँ है। उन सबकी तुम सिरताज शिरोमणि हो। मुझे जो आज्ञा करोगी, वही मैं करूँगा। हे महासती! मैं लोक अपवाद के भय से, अज्ञानी होकर तुमको कष्ट दिया, वह क्षमा करो। और हे प्राणप्रिये! इस पृथ्वीपर, मेरे सहित, जहाँ इच्छा हो वहाँ ही विहार करो, यह पृथ्वी अनेक वन उपवन गिरियों से सहित हैं, देव विद्याधरों से सहित, सम्पूर्ण जगत के जीवो से आदर पूर्वक मान सम्मान से पूज्य होती हुई, मेरे साथ इस लोक में स्वर्ग समान सुखरूपी भोगो को भोगना, सूर्य समान यह पुष्पकविमान, उसमें मेरे साथ बैठकर सुमेरुपर्वत के, एवं अढाईद्वीप में जहॉ कृत्रिम-अकृत्रिम जिन चैत्यालय हैं, वहाँ जिनेन्द्र भगवान का दर्शन पूजन करना। और जिन जिन स्थानों में तेरी जहॉ जहाँ इच्छा हो, वहाँ ही क्रीडा करना। हे कांते! तुम जो कहोगी वही मैं करूँगा, तुम्हारा कहना हर समय करूँगा, देवांगना समान वह विद्याधरीयाँ उनके सहित तुम, हे बुद्धिमती ऐश्वर्य सुख को प्राप्त करो। तेरी जो अभिलाषा होगी, वह तत्काल सिद्ध होगी। मैं विवेक रहित दोष के सागर में मग्न, तेरे समीप आया, सो हे साध्वी अब प्रसन्न हो। हमको क्षमा करो।

अथानंतर जानकी बोली हे राजन्! आपका कुछ दोष नहीं और प्रजा के लोगों का भी दोष नहीं, मेरे पूर्व उपार्जित अशुभ कर्म के उदय से यह दुख हुआ है, मेरा किसीपर क्रोध नहीं, आप क्यों दुखी होकर विषाद करते हो, हे बलदेव! आपके प्रसाद से आपके यहॉ स्वर्ग समान सुखरूपी भोगों को भोगा। अब यह इच्छा है कि ऐसा उपाय करूँ जिससे स्त्री लिंग का छेद हो जाये। पुनः किसी भी योनि में या किसी भी गति में स्त्री पर्याय को धारण नहीं करना पडे, यह स्त्री पर्याय, महादुख दाई है। यह महाक्षुद्र नाशवान भयंकर इन्द्रियों के भोग, अज्ञानी जीव ही इनका सेवन करते हैं। उनसे हमें क्या प्रयोजन? यह क्षणभंगुर भोग नरक निगोद में ले जाने वाले हैं। मैंने अनन्त जन्म तक चौरासीलाख योनियों में दुखों को भोगा। बार बार जन्म, मरण, आधि, व्याधि, उपाधियों, के अनेक दुख सहन किये। इस जीव को चारों ही गतियों में दुख ही दुख प्राप्त हुये। लेश मात्र भी

कहीं सुख प्राप्त नहीं हुआ। इन्द्रियो का सुख भोगते समय अच्छा लगता है, वही सुख पुनः कुछ समय के पश्चात् दुखरूप होकर कटु फल देता है। इस जीव ने किन किन योनियों में कैसे कैसे कर्म किये, उनका फल जब उदय में आता है, तब विरस रूप होकर भोगना पडता है। नहीं चाहते हुये भी कर्मों के फल अवश्य ही भोगना पडता है। इस जीव ने अज्ञान अवस्था में राग द्वेष मोह एवं प्रमाद के कारण हंस हस के कर्मो का बध किया, वही कर्म फल, जब उदय में आता है तब रो रोकर भोगना पडता है। ससार मे कौन किसका है। पुत्र, पति, परिवार सब अपने अपने स्वार्थ के हैं। सब मोह जाल में फंसाकर संसार में भ्रमण करातें है। मैंने अनन्त जन्म तक मनुष्य तिर्यच नरक निगोदादि अनेक योनियों में दुखों को सहन किया। अब इन सम्पूर्ण दुखो की निवृत्ति के लिये, मै जिन आज्ञा प्रमाण आर्यिका दीक्षा धारण करूँगी। मेरे द्वारा हास्य विनोद से भी, एवं मन वचन काय से भी, आपका अविनय हुआ हो तो आप मुझे क्षमा करना। ऐसा कहकर नवीन अशोकवृक्ष के पत्तों समान अपने हाथों से, सिरके केशों को उखाडकर, श्रीरामचन्द्रजी के समीप डाल दिये, वह केश इन्द्रनीलमणी समान श्याम, चिकने, पतले, वक्र, लम्बे, महामृदु, महामनोहर ऐसे केशों को देखकर श्रीराम मोहित होकर, मूर्च्छित होने से, पृथ्वीपर गिर पडे। जब तक श्रीरामचन्द्रजी की मूर्च्छा को सभी लोग दूर करने में लगे, तब तक सीता महासती पतिव्रता अग्नि मे तपकर, शुद्ध हुई शीलवान ऐसी जानकी, पृथ्वीमती आर्यिका के पास जाकर आर्यिका दीक्षा धारण की। एक साडी मात्र परिग्रह उसके पास शेष सभी परिग्रह का त्यागकर आर्यिका के व्रतों को ग्रहण किया, महापवित्रता सहित परम वैराग्य से दीक्षा को धारण किया। आर्यिका व्रतों से शोभायमान जगत मे पूज्य हुई। रामचन्द्रजी मूर्च्छित हो गये थे, तब उनको मुक्ता फल मलयागिरी चन्दन के जल से छीटे लगाकर ताड़ के पखो से हवाकर मूर्च्छा को दूर किया। तब श्रीरामचन्द्रजी ने मूर्च्छा दूर होने के पश्चात् दशों दिशाओं की ओर देखा। सो सीता को नहीं देखकर, हृदय शून्य हो गया। दुखरूपी शोक एवं विषाद सहित हाथीपर बैठकर, सीता की ओर चले, सिरपर छत्र फिरते हैं चमर ढुरते हैं, जैसे देवों सहित इन्द्र चले वैसे अनेक राजाओं सहित बलदेव राम चले। क्रोध से कहने लगे, अपने प्यारे लोगों का मरण हो जाये तो अच्छा परन्तु वियोग अच्छा नहीं, देवों ने सीता की रक्षा की यह तो अच्छा किया, परन्तु उसने हमको छोडने का कार्य किया सो अच्छा नहीं किया।

अब मेरी महारानी को यह देव नहीं देवें तो मेरे और देवों के युद्ध होगा। यह देव न्यायवान होकर मेरी स्त्री को हरते हैं, यह देवो का कार्य अच्छा नहीं है। इसप्रकार रामचन्द्रजी दुखी मन से, सीताको यादकर रो रहे हैं। लक्ष्मण समझाते है, फिर भी समाधान नहीं हो रहा है। और क्रोध सहित श्रीरामचन्द्रजी सकलभूषण केवलीकी गंधकुटीकी तरफ चले दूर से केवली की गंधकुटी को देखी, केवलीभगवान सिंहासनपर विराजमान, अनेक सूर्य की ज्योति को जीतनेवाले केवलज्ञान ऋद्धि सहित पापों को नाश करने में साक्षात अग्नि स्वरूप कर्मों से रहित केवलज्ञान के तेज से परमज्योति स्वरूप जिनराजकेवली दिखाई दिये, इन्द्रादि सभी देव सेवा करते हैं, दिव्यध्वनि खिरती हैं, धर्म का उपदेश हो रहा हैं, श्रीराम गंधकुटी को देखकर शांतचित हो हाथी से उतर प्रभु के समीप आये, तीन प्रदक्षिणा देकर हाथ जोड नमस्कार किया। केवलीभगवान के शरीर की ज्योति रूप किरणे, श्रीराम पर आकर गिरी, तो राम अति प्रकाश रूप हुये। भावों से नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में बैठे। और चारो प्रकार के देव अनेक आभूषण पहने, ऐसे लगे जैसे केवलीरूपी सूर्य की किरणें हैं। राजाओं के राजा श्रीरामचन्द्रजी केवली के निकट ऐसे लगे, जैसे सुमेरूपर्वत के निकट कल्पवृक्ष ही है। और लक्ष्मण नरेन्द्र, मुकुट, कुडल, हारादि से बिजली समान श्याम घटारूप दिखाई दिये। और शत्रुघ्न शत्रुओं को जीतने वाले जैसे कुबेर ही है। और लव अंकुश दोनो वीर महाधीर महासुन्दर गुण शौभाग्य के स्थान सीता के दोनो पुत्र चांद सूर्य समान है, और सीता आर्यिका आभूषणों से रहित, एक साडी मात्र परिग्रह, ऐसी लगे जैसे सूर्य की मूर्ति शांति को प्राप्त हुई हो। मनुष्य और देव सभी विनय सहित धर्मश्रवण की अभिलाषा से भूमि में बैठे। वहाँ एक अभयघोष नाम के मुनिराज, सभी मुनियों में श्रेष्ठ सन्देहरूप आताप की शांति के लिये, केवली को पूछने लगे, हे सर्वज्ञदेव! ज्ञानरूप शुद्ध आत्मतत्व का स्वरूप अच्छी तरह जानने से मुनिराजों को केवलज्ञान होता है, उसका वर्णन कहो। तब सकलभूषण केवली, योगीश्वरों के ईश्वर, कर्मों के क्षय का कारण तत्व का उपदेश दिव्यध्वनी से कहने लगे। हे श्रेणिक! केवलीभगवान ने जो उपदेश दिया, उसका रहस्य मैं तुमको कहता हूँ। जैसे समुद्र मे से एक बूंद कोई ले ऐसे केवली की वाणी अति अथाह समुद्र समान, उसके अनुसार संक्षेप में मैं व्याख्यान करता हूँ सो सुनो।

हे भव्यजीवों! आत्मतत्व, जो अपना स्वरूप, वही सम्यग्दर्शनज्ञान आनन्दरूप

और अर्मूतीक, चिद्रूप, लोकप्रमाण, असंख्यप्रदेशी, अतींद्रिय, अखंड, अव्याबाध, निराकार, निर्मल, निरंजन, पर वस्तुओं से रहित, निज गुण, पर्याय, स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभाव से अस्तित्व रूप हैं, उसका ज्ञान निकट भव्यजीवों को ही होता हैं, शरीरादि पर वस्तुयें असार हैं, आत्म तत्त्व ही सार हैं, वह अध्यात्म विद्या से ही प्राप्त होता हैं। वह सबको देखने वाला, जानने वाला अनुभव दृष्टि से देखा जाता है, और आत्मज्ञान से जाना जाता हैं, जड पदार्थ, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ज्ञेय रूप है, ज्ञाता नहीं हैं और अनतअलोकाकाश के मध्य में असंख्यातवें भाग प्रमाण लोकाकाश है, उसमे अधोलोक मध्यलोक उर्ध्वलोक ये तीनलोक है। इनमें सुमेरूपर्वत की नींव एकहजार योजन, उसके नीचे सातराजु मे अधोलोक हैं, उसमें सूक्ष्म स्थावर जीव तो सभी जगह पाये जाते हैं, और बादर स्थावर पृथ्वी आदि के आधाररूप हैं, वहॉ विकलत्रय पचेन्द्रिय, तिर्यंच और मनुष्य जीव नहीं होते हैं, खरभाग, पकभाग में, भवनवासी देव तथा व्यन्तरो का निवास है, उनके नीचे सात नरक हैं। उनके नाम घमा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मधवा, माधवी। एव सातों नरकों की पृथ्वीयो के नाम रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा एवं महातम प्रभा। ये सातों ही पृथ्वीयॉ महा दुखरूप अंधकारमय हैं। चार नरकों मे तो महाउष्ण रूप गर्मी का दु·ख है, और पॉंचवे नरक के ऊपर के तीन भागों में गर्मी है और नीचे के दो भाग मे शीत है और छठे नरक में शीत है परन्तु सातवे नरक में महाशीत की वेदना है। जहॉं उष्णता है वहॉ महा भयानक रूप उष्णता की वेदना है, वहॉ नरकों में इतनी उष्णता होती है जो सुमेरूपर्वत के बराबर लोहे का गोला भी उस नरक में डाल दिया जाये तो पिघलकर पानी हो जाता है। और शीत के स्थानो में डाल दिया जाये तो जमकर पर्वत के समान बन जाता है। नरकों की पृथ्वी महादुस्सह और दुर्गम है वहॉ पीप और खून का कीचड महादुर्गन्ध मय है जैसे श्वान, सर्प, बिल्ली, गधा, घोडा, ऊॅंट तथा मनुष्य इनका मृतक शरीर सड जाये, उसकी दुर्गन्ध से भी असख्यात गुणी विशेष दुर्गन्ध है। अनेक प्रकार के दुख एवं रोगों का कारण है। वहॉ महाप्रचंड पवन विकराल चलती है, जिससे भयंकर शब्द गूंजता है। जो जीव विषय कषाय सहित कामी, क्रोधी, पंचेन्द्रिय विषयों के लोलूपी हैं, ऐसे भोगी जीव नरक मे गिरते हैं। जो जीवो की हिंसा करते है, झूठ बोलते हैं, चोरी करते हैं, पर स्त्री का सेवन करते हैं, परिग्रह रखकर महाआरम्भ करते हैं, वे मनुष्य पाप

बंध के कारण नरक में जन्म लेते हैं। हिंसा के दो भेद है—द्रव्यहिंसा, भावहिंसा। मन में रागद्वेष के भाव होना अथवा किसी को मारने का चिन्तवन करना भाव हिंसा है। एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्यत चारों गतियों के जीव, एवं सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, सैनी, असैनी, किसीभी जीवका घात अर्थात् प्राणों का नाश करना द्रव्यहिंसा है। पर जीवो को दुख देना काटना, सताना, मारना, पीटना, डांटना, आंगोपांग काटना, फॉसी लगाना, बाण चलाना, तलवार से काटना, बन्दूक चलाना, चाकू कटारी आदि से मारना, सांकलादि से बांधना, यह सभी कार्य करना हिंसा है। हिंसा के चार भेद और भी कहे है उद्योगी, आरम्भी, विरोधी, संकल्पी। उद्योगी हिंसा बिना प्रयोजन कार्य करना, प्रयोजन में भी देख शोध कर नहीं करना उद्योगी हिंसा है। आरम्भी हिंसा—आवश्यकता से ज्यादा कार्य करना आरम्भी हिंसा है। जैसे बिना प्रयोजन गैस जलाना, पानी डालना, पखाचलाना, बिजली जलाना, झाडू लगाना, वस्त्रधोना, शरीर का शृंगार करना, कूटना, पीसना, खोदनादि आरम्भी हिंसा है। विरोधी हिंसा—किसी से झगडा करना, कषाय भाव रखना, मुकदमादि करना। संकल्पी हिंसा-किसी जीव को मारने आदि का या किसी का बुरा चिन्तवन करना संकल्पी हिंसा है, जैसे मैं इसे मारूँगा। जो मनुष्य जीवन को प्राप्तकर, निरन्तर पंचेन्द्रिय के भोगों में आसक्त रहते हैं, उनको प्रतीसमय, रात दिन खाने पीने की ही चिन्ता रहती है एवं कार्य भी वैसा ही करते हैं। जैसे—बिल्ली और छिपकली आदि। जिनका मन चंचल है जैसे बंदर, वैसे चंचल पापी जीव प्रचंडकर्म को करनेवाले नरक में जाते हैं। जो पाप करते हैं, कराते हैं, एवं पाप की अनुमोदना करते हैं, वे आर्त्त, रौद्रध्यानी जीव नरक के पात्र हैं। नारकी ही नारकी जीवों को वज्रमयी भयंकर अग्नि के कुड में डालते हैं, अग्नि की दाह से जलते हुये रोते हैं, पुकारते हैं, और जब अग्निकुंड से निकलते हैं, तब वैतरणी नदी की ओर, शीतल जल की, इच्छा से, जाते हैं, तो वहाँ का जल महाक्षार दुर्गन्ध युक्त उसके स्पर्श से ही शरीर जल जाता है, एवं शरीर में जलन उत्पन्न होती है। वह नदी कीडों से भरी महा दुखमय है, वे कीडे नारकी जीवों के शरीर को नोच नोच कर खाते हैं। वह वैक्रियशरीर ही नारकी जीवों को दुख का भाजन है, आयु पर्यन्त अनेक प्रकार के दुखों को प्रतिसमय भोगना पडता है। नरकों में नारकी जीवों की उत्कृष्ट आयु पहले नरक में एक सागर की, दूसरे में तीन सागर की, तीसरे में सात सागर

की, चौथे में दस सागर की पाँचवे मे सत्तरह सागर की, छठे में बाईस सागर की एवं सातवें नरक में तैतीस सागर की होती है। नरकों में नारकी जीव अपनी आयु पूर्ण करके ही मरते हैं, वहाँ अकाल मरण नहीं होता है। वैतरणी नदी के दुख से डरकर शरीर में जलन की वेदना को शांत करने के लिये, वन में सेमरवृक्ष के नीचे जाकर बैठते हैं, तब वहाँ पर खडग, बाण, बरछी, कटारी, स्वरूप उस वृक्ष के पत्ते तलवार की धार के समान पवन के द्वारा शरीरपर गिरते हैं, उससे शरीर के टुकडे टुकड हो जाते हैं, उस वेदना से दुखी होकर पछाड खाकर पृथ्वीपर गिरते हैं। उन नारकियों को कभी कुभीपाक रूपी गरम तेल मे पकाते हैं, कभी सिर नीचे, पैर ऊँचे बाधकर लटकाते है, मुगद्रों से मारते हैं, कुल्हाडी से काटते हैं, करोत से चीरते हैं, यंत्रों में पेलते हैं, छेदन भेदन करते हैं, नारकी जीव महा दीन होकर प्यास की वेदना से पीने के लिये पानी माँगते हैं, तब नारकी जीव ताबाँ आदि गला गलाकर गरम गरम पिलाते है, तब वे कहते हैं, हमे प्यास नहीं है हमारा पीछा छोड दो, हमें पानी नहीं पीना है। तब जबरन कर उनको पछाडकर संडासियों से मुंह फाड फाडकर, मार मारकर पानी पिलाते हैं। जिससे कंठ हृदय जल जाता है, उदर फट जाता है, तीसरे नरक तक परस्पर एव असुरकुमार देव कृत दुख हैं, और चौथे नरक से सातवें नरक तक परस्पर नारकी ही, उन नारकियों को दुख देते हैं, वहाँ पर असुरकुमार देवों का आगमन नहीं है। उन नरकों में, पहले से, दूसरे मे, दूसरे से तीसरे में इत्यादि नीचे नीचे नरकों में विशेष विशेष दुख हैं। सातवे नरक में सबसे ज्यादा दुखो की वेदना हैं। नारकी जीवों को पूर्वभव की याद आती है, तब असुरकुमार विशेष याद दिलाकर दुखी करते है, और कहते हैं, कि तुमने अच्छे गुरुओं के उपदेश को छोडकर एव नियम वृत संयम को छोडकर कुगुरु, कुदेव, कुशास्त्र की भक्ति से, मांस को निर्दोष मानते रहें, और मद्य मांस मधु का सेवन करने वाले, कुदेव, कुगुरुओं की पूजा भक्ति करते रहे। इसलिये नरक में जन्म लिया है। जो कुदेव हैं एवं कुगुरु है वे परिवार पत्नि सहित रहते हैं, शस्त्र साथ में रखते हैं, खोटे तप से धर्म मानते हैं, हिंसा से धर्म एव पुण्य मानते हैं, पंचाग्नि तप करते हैं, बली मांगते है। गांजा शराब पीते है, स्त्री का सेवन करते है, पशु एवं नर यज्ञ करते हैं, ऐसे कुगुरु एवं कुदेव की सेवा पत्थर की नौका के समान है, ऐसे जीव भव भव में नरक में जन्म लेते हैं, क्योंकि वे गुरु स्वयं परिग्रह एवं विषय लंपटी होने के कारण स्वयं नरक

में जाते हैं, और शिष्यों को भी नरक में ले जाते है। नारकी जीव भूख की वेदना से दुखी होकर, खाने की इच्छा करते हैं, तब दूसरे नारकी इनके ही शरीर को काट काटकर मांस रूप इनके ही मुख में जबरन देते है, अथवा लोहा या तांबा का गोला गरम गरम करके पछाड पछाडकर संडासियों से मुँह फाड फाडकर छातीपर पैर रखकर जबरन उनके मुख मे डालते हैं। शराब पीने वाले जीवो को नरकों मे मार मारकर गरम गरम तांबा एवं शीशा पिलाते हैं। पर स्त्री सेवन करने वाले पापी जीवों को गरम गरम लोहे की पुतलियो से चिपकाते हैं। परदारा सेवन के समय जो जीव फूलो की सेजों पर सोते हैं, उनको यहाँ काटो की सेजपर सुलाते हैं। और स्वप्न की मायाजाल समान असार जो राज्य उसे प्राप्तकर गर्व एवं अनीती करते हैं, उनको लोहे के कीलो पर बैठाकर मुगद्रो से मारते हैं। तब नारकी दुखी होकर विलाप करते हुये रोते हैं। इत्यादि पापी जीवों को नरक के दुख भोगने पडते हैं। उनका वर्णन कहाँ तक करें एक क्षणमात्र भी नारकी जीवों को शांति नहीं है। सागरों की आयु पर्यन्त तिल के बराबर भी भोजन नहीं मिलता है, और बूंद मात्र भी पीने के लिये पानी नहीं मिलता है। केवल मारने काटने का ही भोजन पानी है। इसीलिये यह असहनीय दुख पाप के फल हैं, उनको जानकर अधर्मरूपी पाप को छोडो। वह कुधर्म तो पाप कर्म ही है। मधु, मांसादि अभक्ष, भक्षण, अन्याय, वचन, दुराचार, रात्रि भोजन, वेश्या गमन, परस्त्री सेवन, परपुरुष सेवन, स्वामीद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात, कृतघ्नता, लपटता, गाँव जलाना, वन जलाना, परधन हरण करना, धरोहर रखी वस्तु हडपना, निन्दा करना, प्राण घात, बहुत आरम्भ, बहुत परिग्रह, निर्दयता, कूलेश्या, रौद्रध्यान, झूठ बोलना, कृपणता, कठोरता, दुर्जनता, मायाचार, निर्माल्य वस्तु ग्रहण करना, माता पिता एवं गुरुओं का अविनय करना, बाल, वृद्ध, स्त्री, दीन अनाथ को दुखी करना इत्यादि ये सभी अशुभ कार्य नरक के कारण है।

इन सबको छोड़कर शांत भाव से जिनेन्द्रशासन को ग्रहण करो, जिससे आत्मा का कल्याण होगा। संसार में छह काय के जीव होते हैं। पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय एवं त्रसकाय। इन जीवों की रक्षा करना, दया धर्म का पालन करना। जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छहद्रव्य हैं। साततत्त्व, नव पदार्थ, पंच अस्तिकाय इनकी श्रद्धा करना। चौदह गुणस्थान का स्वरूप और सप्तभंग वाणी का स्वरूप अच्छी तरह केवलीभगवान

की आज्ञा प्रमाण हृदय में धारण करो। 1. स्यात्अस्ति, 2. स्यात्नास्ति, 3. स्यात्अस्तिनास्ति, 4. स्यात् अवक्तव्य, 5. स्यात्अस्तिअवक्तव्य, 6. स्यात् नास्ति अवक्तव्य, 7. स्यात् अस्तिनास्ति अवक्तव्य, ये सप्त भंग हैं। वस्तु के एक देश अंग का कथन करना नय है। वस्तु के सर्व अंग का कथन करना प्रमाण है। नाम स्थापना, द्रव्य और भाव ये चार निक्षेप हैं। एकेन्द्रिय जीवों के दो भेद, सूक्ष्म और बादर, पंचेन्द्रिय जीवों के दो भेद सैनी असैनी, एवं विकलत्रय के तीन भेद दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय ये सात भेद जीवों के होते है। ये सात ही पर्याप्त एवं सात ही अपर्याप्त ये चौदह जीव समास होते हैं। और जीव के दो भेद, एक संसारी, दूसरे मोक्ष। संसारी जीवों के दो भेद, एक भव्य और दूसरा अभव्य। जो रत्नत्रय की साधना कर मोक्ष प्राप्त करते हैं, वे भव्य जीव होते हैं, जो कभी भी मोक्ष प्राप्त नहीं करेगे, वह अभव्य जीव है। भव्य जीव के तीन भेद है—पहला निकटभव्य, दूसरा दूरभव्य, तीसरा दूरान्दूरभव्य! उसी भव मे या तीनभव लेकर मोक्ष जाता है, वह निकटभव्य है। सात आठभव, बतीसभव, या उनचासभव, मे मोक्ष जाता है, वह दूरभव्य हैं। जो जीव हमेशा नित्यनिगोद मे रहता है, न कभी निकला और न कभी निकलेगा, वह जीव दूरान्दूरभव्य कहलाता है। जीव का निजस्वभाव ही उपयोग है, उसके दो भेद है, एक ज्ञान, दूसरा दर्शन। ज्ञान सम्पूर्ण पदार्थ को एक साथ जानता है और दर्शन सम्पूर्ण पदार्थ को एक साथ देखता है। ज्ञानके आठभेद है मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अविधज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान, कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान। और दर्शन के चारभेद, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, और केवलदर्शन। और जिनके एक स्पर्शनइन्द्री ही हो उसे स्थावर कहते हैं उनके 5 भेद, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति। त्रस के चारभेद—दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय, चारइन्द्रिय और पंचेन्द्रिय। जिनके स्पर्शन और रसना हो वे दो इन्द्रिय, जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण हो वे तीन इन्द्रिय, जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, हो वे चारइन्द्रिय, और जिनके स्पर्शन रसना घ्राण चक्षु और कर्ण हो वह पचेन्द्रिय। एकेन्द्रिय से लेकर चारइन्द्रिय तक सभी जीव असैनी एवं समूर्च्छन होते हैं। पंचन्द्रिय जीवों मे कोई जीव समूर्च्छन होते हैं, कोई गर्भज होते हैं और कोई उत्पाद जन्म वाले होते हैं। इनमें से कोई जीव सैनी, कोई असैनी होते हैं। जिनके मन होता है, वे सैनी हैं और जिनके मन नहीं होता है वह असैनी होते हैं। जो गर्भ से जन्म लेते हैं वे गर्भज जन्म हैं और जो

गर्भ के बिना उत्पन्न होते हैं वह समूर्च्छन जन्म हैं और जो उत्पाद शय्यापर जन्म लेते हैं, वह उत्पाद जन्म वाले हैं। गर्भजन्म के तीन भेद है जरायुज अंडज, पोतज। जो जीव माता पिता के संयोग से गर्भ में आकर जर सहित गर्भ से बाहर निकलते है, वह जरायुज जन्म है, जैसे गाय, भैंस, मनुष्यादि। और जिनका अंडों के द्वारा जन्म होता है उसे अंडज जन्म कहते हैं, जैसे—पक्षी, चिडिया, कबूतरादि। और जर के बिना जो जन्म लेते है, वह पोतज जन्म है, जैसे—सिंहादि। देव नारकियो का उपपाद जन्म होता है। वे माता पिता के संयोग बिना ही पुण्य पाप के उदय से जन्म लेते है, देवो का उत्पाद शय्या से जन्म होता हैं एवं नारकी जीवो का बिलो से जन्म होता है। देवों का जन्म पुण्य के उदय से होता हैं तथा नारकियो का जन्म पाप के उदय से होता हैं। और मनुष्यों का जन्म पुण्य पाप के मिश्र से होता है, एव मायाचार से तिर्यच गति में जन्म होता है। देव नारकी मनुष्य जीवो को छोडकर, शेष जीव तिर्यंचगति के हैं। जीवों की चौरासी लाख योनियाँ होती है, उनके भेद सुनो। पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, नित्यनिगोद, इतरनगोद इनकी सात सात लाख योनियॉ है। ये सभी ब्यालीस लाख योनियॉ हुई। और प्रत्येक वनस्पति दसलाख ये कुल बावनलाख भेद स्थावर जीवों की योनियों के होते हैं। और दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय जीव, इनकी दो दो लाख योनि कुल छहलाख योनि के भेद विकलत्रय के हुये। पचेन्द्रिय तिर्यच के भेद चारलाख योनि। सभी तिर्यचों की योनियॉ बासठलाख हुई। देव एवं नारकियों के चार चार लाख योनियॉ है। और मनुष्य की चौदहलाख योनियॉ है। इस प्रकार ये सभी चौरासीलाख योनियॉ महादुख रूप ही है। इनसे रहित सिद्ध परमेष्ठी ही सुख स्वरूप है। संसारी जीव सभी शरीर सहित हैं, और सिद्ध परमेष्ठी शरीर रहित निराकार है। शरीर के पॉच भेद हैं, औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस, कार्माण। उनमें से तैजस कार्माण शरीर अनादिकाल से, सभी जीवों के साथ लगे हुये है। उनको नाशकर महा मुनिराज ही सिद्धपद को प्राप्त करते हैं। औदारिक से असंख्यात गुणी अधिक वर्गणा वैक्रियक शरीर की, वैक्रियक से असंख्यात गुणी वर्गणा आहारक शरीर की है, और आहारक से अनन्त गुणी, वर्गणायें तैजस शरीर की, और तैजस शरीर से अनन्त गुणी वर्गाणायें कार्माण शरीर की है। जिस समय संसारी जीव शरीर को छोडकर मरण के समय दूसरी गति में जन्म लेता हैं, उस समय अनाहारक होता हैं। एक

गति से दूसरी गति मे जाते हुये, जीव को जितना समय लगता हैं, उतने समय तक जीव अनाहारक होता हैं। एक गति से दूसरी गति में, जाने के लिये एक समय दो समय या तीन समय लगता हैं। उस समय तैजस एवं कार्माण यह दो शरीर पाये जाते हैं। बिना शरीर के जीव केवल सिद्धपरमेष्ठी ही होते हैं। उनके अलावा संसारी जीव शरीर से रहित नहीं होता हैं, प्रत्येक संसारी जीव को चारों गतियों में जन्म मरण के समय तैजस कार्माण शरीर साथ मे रहता ही हैं। जो जीव जिस समय घातिया अघातिया दोनों प्रकार के कर्म क्षय करके सिद्धपद को प्राप्त करते है, तब तैजस और कार्माण शरीर का क्षय करते हैं। जीवों का शरीर औदारिक से वैक्रियक सूक्ष्म, और वैक्रियक से आहारक सूक्ष्म, आहारक से तैजस सूक्ष्म और तैजस से कार्माण सूक्ष्म है। सभी मनुष्य एवं तिर्यंचों को औदारिक शरीर होता हैं, देव नारकियों के वैक्रियक शरीर होता है। आहारक ऋद्धिधारी मुनिराज को शंका दूर करने के लिए मस्तक से आहारक पुतला निकलकर केवली के निकट जाकर शंका दूर कर पुन. आकर मस्तक में प्रवेश करता है, एक जीव को एक समय मे एक साथ ज्यादा से ज्यादा चार शरीर होते हैं, तीन शरीर तो प्रत्येक जीव के होते हैं। मनुष्य तिर्यंचों के औदारिक, तैजस, कार्माण ये तीन शरीर, देव नारकियो के वैक्रियक, तैजस, कार्माण ये तीन शरीर, सबके होते है। इनमे से कार्माण एव तैजस शरीर तो दिखाई नहीं देता हैं। परन्तु तैजस शरीर किसी मुनिराज को लब्धिरूप से भी होता है। उसके दो भेद हैं एक शुभ तैजस, दूसरा अशुभतैजस। शुभ तैजस जीवों को दुखी देख दाहिने कंधे से निकलकर लोगो को दुख दूर करता है। और अशुभ तैजस कषाय से बाये कधे से निकलकर लोगों को अग्नि से भस्म कर स्वय भी जलकर मर जाते है। कोई मुनिराज को वैक्रियक ऋद्धि प्रगट हुई हो तब शरीर को सूक्ष्म स्थूल बनाते हैं। उन मुनिराजो के एक साथ चार शरीर पाये जाते हैं। एक काल में एक साथ पाचो शरीर किसी भी मुनिराज को नहीं होते हैं।

अथानतर मध्यलोक में जम्बूद्वीपादि असंख्यात द्वीप, लवणादि असंख्यात समुद्र शुभ शुभ नाम वाले हैं। वह दूने दूने विस्तार वाले हैं। जम्बूद्वीप थाली के आकार वाला है, शेष द्वीप, समुद्र, चूडी के आकार वाले हैं। सब के मध्य में जम्बूद्वीप है, और जम्बूद्वीप के मध्य में, सुमेरूपर्वत एक लाख योजन ऊँचा है, चालीस योजन की चूलिका है। पहला जम्बूद्वीप एक लाख योजन विस्तार वाला

है। तीनलाख से कुछ अधिक परीधि है? जम्बूद्वीप में देवारण्य, भूतारण्य दो वेदी है यहाँ देवों का निवास है, छह कुलाचल पर्वत हैं, वे पर्वत पूर्व से पश्चिम समुद्र तक लम्बे हैं। उनके नाम हिमवन, महाहिमवन, निषद्य, नील, रूक्मि, शिखरणी, ये पर्वत समुद्र के जल को स्पर्श करते हैं। उन पर्वतोंपर तालाब, तालाबों में कमल कमलों पर षट् कुमारियाँ श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी ये देवीयाँ है। जम्बूद्वीप में सात क्षेत्र हैं, उनके नाम भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक् हैरण्यवत, ऐरावत। उन कुलाचल पर्वतों से गंगा सिन्धु आदि चौदह नदियाँ निकलती हैं। आदि से तीन, अन्त से तीन, और मध्य के चारों पर्वतों से दो दो नदियाँ निकलती हैं, जम्बूद्वीप से लवणसमुद दूना है, वह लवणसमुद्र दो लाख योजन का है। उस लवणसमुद्र से दूना, दूसरा द्वीप धातकीखण्ड है, धातकीखंड के मध्य में इष्वाकारपर्वत दोनों तरफ गिरा हुआ है, उससे उसके दो खंड हो जाते है। इसलिये उस घातकीखण्डद्वीप में दो सुमेरूपर्वत और बारह कुलाचलपर्वत हैं एंव चौदहक्षेत्र हैं। जम्बूद्वीप में एकभरत एकऐरावत, धातकीखण्ड में दोभरत दोऐरावत। यहाँ जम्बूद्वीप में हिमवनादि छहपर्वत, धातकीखंड ओर पुष्करार्ध में हिमवनादि दो दो पर्वत, इस प्रकार सभी वस्तुयें दूनी दूनी विस्तार पूर्वक है। धातकीखंड से कालोदधिसमुद्र दूना है वह आठलाख योजन का है। और तीसरा पुष्करार्ध द्वीप आधा है क्योंकि आधे पुष्करार्ध के मध्य में मानुषोत्तरपर्वत है, इन अढाईद्वीपों में ही, मनुष्य रहते हैं, ढाईद्वीप के बाहर मनुष्य नहीं होते है एवं मनुष्यो का आना जाना भी नहीं हैं। आधे पुष्पकरार्ध में भी इष्वाकारपर्वत गिरने से दो खण्ड हो जाते हैं। उनमें भी दो मेरू, बारह कुलाचल, चौदह क्षेत्रादि सब धातकीखंडद्वीप के समान जानना चाहिये। ढ़ाईद्वीप में, कुल पॉचमेरू, तीस कुलाचल, पांच भरत, पांच ऐरावत, पांच विदेह, कुल एकसौसाठ विजयार्ध पर्वत एवं एकसौसाठ विदेहक्षेत्र एवं पांचभरत, पांचऐरावत सर्व एकसौसत्तर कर्मभूमि है। एक एक क्षेत्र मे छह छह खंड होते हैं, उनमें पॉच पाँच मलेच्छखंड एवं एक एक आर्यखंड हैं। और आर्यखंड़ में ही धर्म की प्रवृत्ति है। मलेच्छखंड में धर्म नहीं है। भरत, ऐरावत और विदेहक्षेत्र में कर्मभूमि की रचना है। विदेहक्षेत्रों में शाश्वत् कर्मभूमि ही है। भरत, ऐरावतक्षेत्रों में अठारह कोड़ा कोडी सागर तक भोगभूमि की रचना, एवं दो कोड़ा कोड़ी में कर्मभूमि की रचना है। देवकुरू, उत्तरकुरू में शाश्वत उत्कृष्ट भोगभूमि है, उनमें तीन तीन पल्य की आयु, तीन कोश (9 किलो मीटर) का

शरीर, तीन दिन के पश्चात् अल्प आहार है। पाँच मेरु सम्बन्धि पांच देवकुरु पाँच ही उत्तरकुरु है। पॉच हरिक्षेत्र पांच रम्यकक्षेत्र में मध्यम भोगभूमि उनमें दो पल्य की आयु दो कोश (16 किलो मीटर) का शरीर दो दिन पश्चात् आहार यह पांच मेरु सम्बन्धि दस मध्यम भोगभूमि है। और हैमवत हैरण्यवत यह जघन्य भोगभूमि उनमें एक पल्य की आयु एक कोश (3 किलो मीटर) का शरीर, एक दिन के पश्चात् आहार, ये पाँच मेरु सम्बन्धी दश जघन्य भोगभूमि है इस प्रकार ढाईद्वीप में तीस भोगभूमि है। पांच भरत, पाच ऐरावत, और पांच विदेह में ये पन्द्रह कर्मभूमि इनमें धर्म की प्रवृति होती है एवं मोक्ष प्राप्त होता है। मानुषोत्तरपर्वत के आगे मनुष्य नहीं वहाँ देव व तिर्यच ही है। और लवणसमुद्र, कालोदधिसमुद्र और अन्त का स्वयंभूरमणसमुद्र इन तीनो में जलचर जीव पाये जाते हैं। शेष असंख्यात समुद्रों में जलचर जीव नहीं होते हैं। विकलत्रय जीव ढाईद्वीप में एव स्वयंभूरमणद्वीप के मध्य में नागेन्द्रपर्वत (स्वयभूरंमण पर्वत) है, उस पर्वत के आगे आधे स्वयंभूरमण द्वीप मे और स्वयंभूरमण समुद्र मे भी विकलत्रय जीव होते हैं। मानुषोत्तर पर्वत से लेकर नागेन्द्रपर्वत तक सभी द्वीपों में जघन्य भोगिभूमि की रचना है, वहाँ के तिर्यंचों की एक पल्य की आयु है। सूक्ष्म, स्थावर, जीव तीनलोक मे सभी जगह पायें जाते हैं। बादर स्थावर जीव सभी जगह नहीं, क्योकि ये आधार पूर्वक रहते हैं। एक राजु विस्तार वाला मध्यलोक है। इस मध्यलोक मे आठप्रकार के व्यन्तर, दसप्रकार के भवनवासीयो के निवास है। और चित्रापृथ्वी से सातसौ नब्बे योजन ऊपर ज्योतिषी देवों के विमान हैं। सबसे प्रथम ताराओं के विमान है, उससे दस योजन ऊपर जानेपर सूर्य का विमान है, उससे अस्सी योजन ऊपर चन्द्रमा का विमान है, उससे चारयोजन ऊपर नक्षत्रों के विमान है, उससे चारयोजन ऊपर बुद्ध का, फिर तीनयोजन ऊपर शुक्र का, उससे तीनयोजन ऊपर वृहस्पति का, उससे तीनयोजन ऊपर मगल का, उससे तीनयोजन ऊपर शनि का विमान है। ज्योतिषी देवों का सुमेरुपर्वत से ग्यारह सौ इक्कीस योजन दूर से गमन होता है। जम्बूद्वीप में दो सूर्य दो चन्द्रमा हैं। लवणसमुद्र में चारसूर्य चारचन्द्रमा, धातकीखंड में बारहसूर्य बारहचन्द्रमा, कालोदधिसमुद्र में ब्यालीस सूर्य ब्यालीस चन्द्रमों, एवं पुष्करार्ध मे बहत्तर सूर्य बहत्तर चन्द्रमा है, इस प्रकार मनुष्य लोक में एक सौ बत्तीस सूर्य और एकसौबत्तीस चन्द्रमा होते हैं। इनमें चन्द्रमा इन्द्र हैं और सूर्य प्रतीन्द है। एक चन्द्रमा का परिवार, एकसूर्य, अठाईसनक्षत्र, अठासीग्रह,

छयासठहजार, नौसोपचहत्तर कोडाकोडीतारे हैं। एक सूर्य एक चन्द्रमा, जम्बूद्वीप की प्रदक्षिणा दोदिन, दोरात्रि में पूरी करता है। इनका भ्रमणक्षेत्र जम्बूद्वीप में एकसौअस्सी योजन और लवण समुद्र में तीनसौतीस योजन है। सूर्य के भ्रमण करने की गलियाँ एकसौचौरासी है। चन्द्रमा की पन्द्रह गलियाँ है। चन्द्रदेव की आयु एकपल्य और एकलाख वर्ष की। सूर्यदेव की आयु एकपल्य और एकहजारवर्ष की है। मनुष्य लोक में रात दिन का भेद ज्योतिषी देवों के गति आधार पर ही होता है। ढाईद्वीप में सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतिषी देव, पंच मेरू की नित्य प्रदक्षिणा करते हैं। ध्रुव तारादि कोई कोई ज्योतिषी देव स्थिर भी है। ढाईद्वीप के बाहर अख्यातद्वीप समुद्रों में ज्योतिषी देवों के विमान स्थिर ही है। सुमेरूपर्वत के ऊपर स्वर्ग लोक है। स्वर्गों के नाम सौधर्म, ईशान, सनतकुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लातव, कापिष्ट, शुक्र, महाशुक्र, सतार, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण, अच्युत ये सौलह स्वर्ग है इनमे कल्पवासी देव एवं देवियॉ हैं। सौलह स्वर्ग के ऊपर नवग्रैवेयक, इनके ऊपर नवअनुदिश विमान, इनके ऊपर पंचोत्तर, विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित एव सर्वार्थसिद्धि विमान है। ये सभी अहमिन्द्र देवो के स्थान है। सोलहस्वर्ग के ऊपर देवॉगनाये नहीं होती, एवं कोई स्वामी कोई सेवक नहीं, सभी देव, समान ऋद्धियो के धारी हैं। वे अपने स्थान को छोडकर कहीं विहार नहीं करते। ब्रह्मनाम के पाचवें स्वर्ग के अन्त मे लोकांन्तिक देव होते हैं, उनके देवॉगनाये नहीं होती है। वे देवऋषि है, भगवान के तप कल्याणक में वैराग्य की अनुमोदना करने के लिये मध्यलोक मे आते है। उर्ध्वलोक मे देव रहते है, एवं पाचो स्थावर जीव होते है। हे श्रेणिक! यह तीनलोक का वर्णन जो केवलीभगवान ने कहा, उसको सक्षेप रूप जानना। तीनलोक का शिखर सिद्धलोक है, उसके समान सुखदायक, दैदीप्यमान अन्य कोई क्षेत्र नहीं है। वहाँ कर्मों से रहित अनन्त सिद्ध परमेष्ठी विराजमान है। वह अष्टम पृथ्वी इषद्प्राग्भार नाम से प्रसिद्ध है। आठो पृथ्वीयों के नाम–नरक 1, भवनवासी 2, मनुष्य 3, ज्योतिषी 4, स्वर्गवासी 5, ग्रैवेयक 6, अनुत्तर 7, मोक्ष 8 ये आठ पृथिवी हैं। जो शुद्धोपयोग के फल से सिद्ध हुये उनकी महिमा कहाँ तक कहें। ऐसे सिद्ध प्रभु जन्म मरण से रहित है। अनुपम सुखों के भोगी, अनन्तशक्ति के धारी, सम्पूर्ण कर्मों से रहित, सर्व सुख को देने वाले ज्ञाता दृष्टा हैं। यह वर्णन सुन रामचन्द्रजी सकलभूषण केवली से पूछने लगे–हे प्रभो! आठों कर्मो से रहित,

आठमूलगुणादि अनन्त गुणो सहित सिद्ध परमेष्ठि राग द्वेष से रहित हैं। ऐसे सिद्ध परमेष्ठी को दुख तो कुछ भी नहीं है, परन्तु सुख कैसा है

तब केवलीभगवान ने दिव्यध्वनी में कहा, तीनलोक में सुख लेशमात्र भी नहीं, दुख ही है, अज्ञानीजीव इन्द्रियरूपी विषय भोगों को सुख मानते हैं। वह सुख क्षणभगुर है। आठों कर्मो से बधे जीव पराधीन है, तब तक उनको सुख नहीं। जैसे स्वर्ण लोहे से मिला है तो सोने की चमक नष्ट हो जाती है। ऐसे आत्मा की शक्ति कर्मो के योग से दब जाति है। इसीलिये ससारी प्राणी सुख को छोड दुख को भोगते हैं। संसारी प्राणी जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, आधि, व्याधि, उपाधि, से महादुखी हैं। मानव को तन मन और धन का दुख है। तिर्यंच और नारकी जीवों को तन ओर मन का दुख है तथा देवों को मानसिक दुख है अन्य देवों की महाऋद्धियों को देखकर मन से महादुखी होते है। इस संसार मे सुख क्या है, ये इन्द्रिय जनित विषयसुख इन्द्र धरणेन्द्र एवं चक्रवर्ती आदि को शहद की लपेटी खड्ग की धार समान है। सिद्धो में मन इन्द्रिय और शरीर नहीं केवल अविनाशी, निराबाध, निरुपम, स्वभाविक, आत्म सुख है। उनका वर्णन नहीं कर सकते हैं। जैसे निन्द्रा रहित पुरुष को सोने से क्या, निरोगी को औषधि से क्या, ऐसे ही वीतराग कृतार्थ सिद्ध भगवान उनको इन्द्रिय सुखों से क्या, दीपक को सूर्य चन्द्र से क्या, जो निर्भय जिनके शत्रु नहीं उनको शस्त्रों से क्या? जो सबके अन्तर्यामी सबको देखते जानते हैं, जिनको कुछ करना नहीं, सम्पूर्ण कार्य से कृत्य-कृत्य होकर सिद्ध हुये हैं। किसी वस्तु की इच्छा नहीं, ऐसे सिद्धप्रभु सुखी हैं। इच्छायें मन से होती हैं, जिसके मन नहीं तो इच्छा क्या, परमअनन्तस्वरूप क्षुधा तृषादि बाधा से रहित तीर्थंकरदेव जो सुख की इच्छा करते हैं, उसकी महिमा कहाँ तक कहे, अहमिन्द्र, इन्द्र, नागेन्द्र, नरेन्द्र, चक्रवर्ती आदि निरन्तर उसी पद का ध्यान करते है। लोकान्तिक देव भी सिद्ध सुख के अभिलाषी हैं। यद्यपि सिद्धपद का सुख उपमा रहित केवली गम्य हैं। फिर भी तुमको ज्ञान प्राप्त कराने के लिये, सिद्धो के सुख का कुछ वर्णन करता हूँ। भूत, भविष्यत, वर्तमान, तीनकाल के तीर्थंकरो का सुख चक्रवर्ती, का सुख, उत्तम भोगभूमि के मनुष्यों के तीनोंकालों का सुख, इन्द्र अहमिन्द्रादि समस्त देवों का सुख, भूत, भविष्यत, वर्तमान, काल के सुख को एकत्रित करो, उससे अनन्तगुणा सुख सिद्धों के एकसमय के सुख के बराबर नहीं है। यह सिद्धों का सुख निराकुल, निर्मल, अव्याबाध, अखंड,

अतीन्द्रिय अविनाशी है। और देव मनुष्यों का सुख इन्द्रिय जनित आकुलता रूप विनाशीक है। एक दृष्टान्त सुनो—मनुष्यों-से राजा सुखी, राजा से-चक्रवर्ती सुखी, चक्रवर्ती-से व्यन्तरदेव सुखी, व्यन्तरदेवों से-ज्योतिषी देव सुखी, ज्योतिषीदेवों से—भवनवासी सुखी, भवनवासी से-कल्पवासी सुखी, कल्पवासी से-नवग्रैवेयक के देव सुखी, नवग्रैवेयक, से-नवअनुदिशके देव सुखी, अनुदिश से-पंच अनुत्तर वाले देख सुखी, पाँच अनुत्तरों में भी सर्वार्थसिद्धि के देवों के समान सुख नहीं। सर्वार्थसिद्धि के अहमिन्द्रों को तैंतीससागर तकका जो सुख है उससे अनन्तानन्त गुणा सुख सिद्धपरमेष्ठी को एक समय का है। अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्तसुख अनन्तवीर्य यह आत्मा का निजस्वरूप सुख सिद्धों में है। संसारी जीवों के दर्शन, ज्ञान, सुख, वीर्य, कर्मों के क्षायोपशम से बाह्य पदार्थ के निमित्त से कुछ प्राप्त होते हैं। यह संसारी जीवों के विषयसुख व्याधिरूप, विकल्परूप, मोह का कारण है। अतः इसमें सुख नहीं है, जैसे फोडा राध रुधिर से भरकर खुला है, तो उसमें क्या सुख है। सिद्ध भगवान गति, आगति से रहित सम्पूर्ण लोक के शिखरपर विराजमान है, उनके सुख समान दुसरा कोई सुख नहीं। उनका दर्शन और ज्ञान लोकालोक को देखता और जानता हैं, उनके समान सूर्य कहाँ, सूर्य तो उदय अस्त होता है, सभी जगह प्रकाश नहीं करता है, परन्तु सिद्धपरमेष्ठी हथेली में रखे आँवले की तरह सम्पूर्ण वस्तुओ को देखते जानते हैं, क्षद्‌मस्थ पुरुषों का ज्ञान उनके समान नहीं, यद्यपि अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, मुनिराज द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, की मर्यादा को लेकर रूपी पदार्थ को जानते है। और जीवों के असंख्यात जन्मों को जानते हैं फिर भी अरुपीपदार्थ एवं अनन्तकाल को नहीं जानते, केवलीभगवान ही सब जानते हैं। केवलज्ञान केवलदर्शन के समान और कोई न जानता है और न देखता है। सिद्धों का ज्ञान अनन्त है दर्शन भी अनन्त है। और संसारी जीवों को अल्पज्ञान, अल्पदर्शन है। सिद्धों के अनन्तसुख, अनन्तवीर्य और संसारी जीवों के अल्पसुख अल्पवीर्य है। यह निश्चय से जानो, की सिद्धों के सुख की महिमा केवलज्ञानी ही जानते हैं चारज्ञान के धारी मुनिराज भी पूर्णरूप से नहीं जानते हैं। यह सिद्धपद अभव्यजीवों को प्राप्त नहीं होता है। निकट भव्यजीव ही सिद्धपद को प्राप्त करते हैं। अभव्यजीव अनन्त काल तक कायक्लेशादि अनेक तप करें, तो भी सिद्धपद नहीं प्राप्त करता। अनादिकाल से अज्ञान द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति अभव्य को नहीं होती। मुक्तिरूपी स्त्री के

मिलन की इच्छा से, तत्पर जो भव्यजीव कुछ दिन संसार में रहते हैं, लेकिन संसार से लिप्त नहीं होते। तप करके ही मोक्ष के अभिलाषी होते हैं। जिन जीवों मे सिद्ध होने की शक्ति नहीं, वे अभव्य होते हैं। और जो सिद्ध होने की क्षमता रखते हैं वे भव्य हैं। केवलीभगवान कहते हैं, हे रघुनन्दन! जिनशासन के बिना और कोई मोक्ष का उपाय नहीं, बिना सम्यक्व कर्मों का क्षय नहीं होता है। अज्ञानी जीव कोटि भवों में, जिन कर्मों को नाश करते हैं, वह ज्ञानी जीव तीन गुप्तियों सहित एक मुहूर्त मे कर्मों का नाश करते हैं। सिद्ध भगवान परमात्मा प्रसिद्ध हैं। सभी संसारी जीव उनको जानते हैं, कि वे सिद्ध भगवान है। केवली के बिना उनको कोई प्रत्यक्ष देख व जान नहीं सकते हैं, केवलज्ञानी ही सिद्धों को देखते जानते हैं। मिथ्यात्व का मार्ग संसार का कारण है। इस जीव ने अनन्त भवों तक मिथ्यात्व को धारण किया। तुम निकट भव्य हो, परमार्थ कि प्राप्ति के लिये, जिनशासन की अखंड श्रद्धा करो। हे श्रेणिक! यह वचन सकलभूषण केवली के सुन, श्रीरामचन्द्रजी प्रणामकर प्रार्थना करने लगे, हे नाथ! इस ससाररूपी समुद्र से मुझे भी पार उतारो। हे भगवान! यह प्राणी किन उपायो से संसार भ्रमण से छूट सकता है।

तब केवलीभगवान ने कहा, हे राम बलभद्र! सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र ही मोक्ष का मार्ग है। यह जिनशासन मे कहा है। तत्वों के अर्थ का जैसा का तैसा श्रद्धान करना सम्यदर्शन है। तत्त्व अनन्तगुण पर्यायरूप है। उसके दो भेद हैं, एक चेतन, दूसरा अचेतन, जीव चेतन है, शेष सभी तत्व अचेतन है। और सम्यग्दर्शन दो प्रकार से उत्पन्न होता है। एक निसर्गज और दूसरा अधिगमज। जो स्वभाव से उत्पन्न हो, वह निसर्गज है, और गुरु के उपदेश से उत्पन्न हो वह अधिगमज है। सम्यक्दृष्टि जीव जिनधर्म में लीन रहते हैं। सम्यक्त्व के पॉच अतिचार है। जिनधर्म मे सन्देह करना शका है, भोगों की अति अभिलाषा करना कांक्षा है। मुनिराजो के शरीर को देख ग्लानी करना निर्विचिकित्सा है, मिथ्यादृष्टि जीवों की मन से प्रशसा करना, अन्य दृष्टि प्रशंसा है, और वचन से मिथ्यादृष्टि जीवो की स्तुति करना संस्तवन है। ये पॉचों ही सम्यग्दर्शन में दोष उत्पन्न करते हैं। और मैत्री, प्रमोद, कारुण्य, माध्यस्थ ये चार भावना हैं। अथवा अनित्यादि बारह भावना तथा प्रशम, संवेग, अनुकंपा, आस्तिक्य और शंकादि दोष से रहित जिनप्रतिमा, जिनमन्दिर, जिनशास्त्र, मुनिराज की भक्ति इनसे सम्यग्दर्शन

निर्मल होता है। सर्वज्ञ का कहा हुआ वचन प्रमाण जानना, ज्ञान की निर्मलता का कारण है। तेरहप्रकार के चारित्र को निर्दोष पालन करना वह चारित्र है। पांचों इन्द्रिय ओर मन वचन काय का निरोध करना और सर्व पाप क्रियाओं का त्याग करना वह भी चारित्र है। त्रस स्थावर जीवों की पूर्ण रूप से दया करना, अपने समान सभी को जानना वह भी चारित्र है। और सुननेवाले के मन और कानों को आनन्दकारी स्निग्ध मधुर अर्थ सहित कल्याणकारी हित मित प्रिय वचन बोलना। एवं मन वचन काय से परधन का त्याग करना, किसी की बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण नहीं करना, एवं किसी को नहीं देना। श्रावक का दिया हुआ आहार मात्र लेना वह चारित्र है। और जो देवों से पूज्य महादुर्धर ब्रह्मचर्य व्रत उसका पालन करना वह भी चारित्र है। मोक्ष मार्ग को रोकने वाली, जो परिग्रह की अभिलाषा, उसका त्याग करना, वही चारित्र है। मुनिराजों ने जो धर्म बताया है, कि एक देश चारित्र के धारी अणुव्रती श्रावक नित्य ही साधुओं को अर्थात् चतुर्विधी संघ को श्रद्धा भक्ति आदि गुणों से सहित नवधाभक्ति पूर्वक आहार देता है, वह अणुव्रत चारित्र है। जीवन पर्यन्त के लिये पॉचों पापो का त्याग करना यम है, और मर्यादा रूप व्रत तप को धारण करना नियम है। वैराग्य, विनय, विवेक, ज्ञान, मन इन्द्रियों का निरोध, ध्यान, इत्यादि धर्म का आचरण करना एक देश चारित्र है। अनेक गुणों सहित जिनेन्द्र भगवान का कहा हुआ चारित्र परम धाम का कारण कल्याण की प्राप्ति के लिये ग्रहण करना चाहिये। जो सम्यग्दृष्टि जीव जिनआगम की श्रद्धा करता, एव पर निंदा नहीं करता, अपनी अशुभ क्रियाओ को छोडकर संसारी प्राणियों से नहीं बने, ऐसा दुर्धर कठोर तप एव संयम का साधन ऐसा दुर्लभ चारित्र उसको धारण करने में समर्थ होता है। जहाँ दयागुण नहीं वहॉं चारित्र नहीं। चरित्र बिना संसार से निवृति नहीं। जहॉं दया, क्षमा, दान, ज्ञान, वैराग्य, तप, संयम नहीं वहाँ धर्म नहीं। विषय कषाय का त्याग करना वही धर्म है, कषायों का शमन करना समता है, और इन्द्रियो का दमन करना परम शांतभाव का निरोध है। आते हुये कर्मो कां रोकना ही संवर है। जहाँ ये नहीं वहाँ चारित्र नहीं। जो पापी जीव हिंसा करते हैं, झूठ बोलते हैं, चोरी करते हैं, परस्त्री सेवन करते हैं, परिग्रह को रखकर आरम्भ करते हैं, उनके धर्म नहीं। जो धर्म के निमित्त से हिंसा करते हैं, वे अधर्मी पापी अधोगति के पात्र हैं। जो अज्ञानी जीव जिनदीक्षा लेकर आरम्भ करते हैं, वे साधु नहीं, साधु का धर्म आरम्भ परिग्रह से

रहित है। परिग्रह धारक को मुक्ति नहीं, जो हिंसा में धर्म जानकर छहकायिक जीवों की हिंसा करते हैं, वे पापी हैं, हिंसा में धर्म नहीं, हिंसा करने वाले जीवों को इसभव व परभव में सुख नहीं मिलता है, और मोक्ष सुख भी प्राप्त नहीं हो सकता। जो सुख एवं धर्म के लिये जीवों को मारते हैं, वह बिना प्रयोजन पाप करते हैं, जीव हिंसा से धर्म नहीं होता। जो गांव, नगर, खेत में आसक्त हैं, गाय भैंस रखते हैं, मारते हैं, बांधते हैं, काटते हैं, जलाते हैं उनको वैराग्य कहां। जो लेन देन का व्यापार करते हैं, सोना, चादी, धन, रूपया पैसा रखते हैं, उनको मुक्ति नहीं प्राप्त होती है। जिनदीक्षा आरम्भ परिग्रह रहित महादुर्लभ है, जो जिन दीक्षा धारणकर संसार का कार्य करते हैं, वह दीर्घ काल तक संसार में भ्रमण करेंगे। जो साधु होकर शरीर शृंगार के लिये सुगन्धित तेलादि की मालिश करते हैं। एव शरीर संस्कार करते हैं, पुष्पादिक सुगन्धित पदार्थों को सूंघते हैं। सुगध तेल इतरादि से सजाते है, दीपक जलाते, धूप खेते वे साधु नहीं। मोक्ष मार्ग मे ये सभी क्रिया विपरीत है। अपनी इच्छा एव स्वार्थ से कहते हैं कि हिंसा में दोष नहीं वे महामूर्ख हैं। उनको शास्त्र का ज्ञान एव चारित्र नहीं। जो मिथ्यादृष्टि तप करते गांव मे एक रात्रि रहते नगर में पांच रात्रि रहते और अपनी भुजायें प्रतिसमय ऊँची रखते, महीने महीने के उपवास करते, वन में विहार करते, मौन रखते, परिग्रह रहित रहते, फिर भी जीवो पर दया नहीं, पापी मायाचारी दुष्टीजीव सम्यक्त्व के बिना धर्मरूपी रत्नत्रय की साधना नहीं कर सकते, वह मोक्ष नहीं जा सकते हैं। अनेक कष्टों को सहन करते, फिर भी सम्क्त्व के बिना ज्ञान चारित्र कार्यकारी नहीं अर्थात् उससे मुक्ति नहीं मिलती है। जो धर्म का बहानाकर पर्वत से गिरते, अग्नि में जलते, जल में डूबते, धरती में घुस जाते इत्यादि कार्यों से कुमरण कर कुगति मे जन्म लेते हैं, जो पाप कर्मी मैथुन की इच्छा से आर्त्त रौद्रध्यान के द्वारा गलत उपाय करता है, वह नरक निगोद मे जाता है। मिथ्यादृष्टि जीव कदाचित् दान देता है, तप करता है वह पुण्य कर्म के उदय से मनुष्य और देवगति के सुखों को भोगता है परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य एवं देव नहीं होता। सम्यग्दृष्टि जीवों के फल से असंख्यातवें भाग प्रमाण भी फल नहीं मिलता। सम्यग्दृष्टि जीव चौथे गुणस्थान वाला अव्रती है फिर भी देव शास्त्र गुरु की श्रद्धा भक्ति से सम्यग्दर्शन के कारण देवलोक में उत्तमदेवपद को प्राप्त करते हैं, मिथ्यादृष्टि कुलिंगी महातप करके भी देवों के आज्ञाकारी हीन देव होते हैं। पुनः ससार मे भ्रमण करते हैं। और सम्यग्दृष्टि भव धारण करते तो उत्तम मनुष्य

होकर, आठभव मनुष्य के, एवं सातभव देवो के, इस प्रकार पन्द्रह भव मे, पचम मोक्ष गति को प्राप्त करते हैं। वीतराग सर्वज्ञ देव ने मोक्ष का मार्ग स्पष्ट दिखाया है, परन्तु विषय अभिलाषी जीव स्वीकार नहीं करते हैं। इच्छा रूपी फांसी से बंधे, मोक्ष के वश तृष्णा के कारण पापरूपी जंजीरों से जकडे, कुगति रूपी जेल में जाकर गिरते हैं। स्पर्शन, रसनादि इन्द्रियो के लंपटी दुख को ही सुख मानते हैं, यह जगत के जीव जिनधर्म की शरण के बिना दुख ही भोगते हैं। इन्द्रियो के सुख की चाहना रखते हैं फिर भी नहीं मिलता, और मृत्यु से डरते हैं, तो भी मृत्यु छोडती नहीं। सभी कामनायें निष्फल होती है। निष्फल कामनाओं के वश होकर, जीव केवल दुखी ही होता है, उस दुख को दूर करने का कोई अन्य उपाय नहीं, आशा एवं शंकाओं को छोडना यही सुख का उपाय होगा। अज्ञानी मूर्ख जीव आशाओं से भोगो का भोग करना चाहता है, और धर्म में मन नहीं लगाता। अति दुखरूपी अग्नि से जलकर महा आरम्भ मे उद्यम करता है फिर भी कुछ धन प्राप्त नहीं होता, उलटा अपना धन नष्ट करता हैं। प्रत्येक संसारी प्राणी पाप कर्म के उदय से मन वांच्छित धन को प्राप्त नहीं कर सकता, उलटा अनर्थ कार्य करके स्वयं का धन पापों से विनाश करता है। मैंने यह किया, यह मैं करता हूँ और आगे यह मै करूँगा ऐसा विचार करते करते ही मरकर दुर्गति मे जाता है। ये चारों ही गतियॉ दुखरूप कुगति है, एक पचमगति मोक्ष ही सुगति है। जहॉ से पुन· जन्म मरण नहीं। संसारी प्राणियों के लिये मृत्यु यह सोचती नहीं कि इसने क्या किया और क्या शेष रह गया है। वह तो बाल्यअवस्था से लेकर कालअवस्था तक कभी भी कालरूपी मुख में मृत्यु दबा लेती है। जैसे सिह मृग को कभी भी आकर खा लेता है। अहो! यह अज्ञानी जीव अहित में हित की इच्छा करता है। और दुख के कार्यों में सुख की वांच्छा करता है। अनित्य को नित्य मानता है, अशरण में शरण मानता हैं, यह मिथ्यात्व रूपी अज्ञान का दोष है। यह मनुष्यरूपी हाथी, मायारूपी गड्ढे में गिरकर, दुखरूपी बंधनों से बंधता है। विषरूपी मांस का लोभी, मछली की तरह संकल्परूपी जालमें फंसता है। यह मनुष्य बैल की तरह कुटुम्बरूपी कीचड़ में फंसकर दुखी होता है। जैसे बेडियों से बंधा मनुष्य अंधे कुये में गिरा, उसका निकलना महा कठिन है, ऐसे मोह, प्रेम, स्नेह, रागरूपी फांसी से बंधा, ससाररूपी अंधे कुये में गिरा अज्ञानी जीव उसका संसार से निकलना महाकठिन है। कोई निकटभव्य जिनवाणी रूपी रस्सी को ग्रहण करता है, और श्रीगुरु खेंचने

वाले है तो वह उस अंध कुये से निकल सकता है। और अभव्यजीव जिन आज्ञारूपी आनन्द का कारण आत्मज्ञान, उसको पाने मे समर्थ नहीं है। जिनराज का निकट मार्ग निकट भव्यजीव ही प्राप्त करते हैं। और अभव्यजीव कर्मरूपी कलंक से दुखरूपी ससार चक्र में भ्रमण करते हैं। हे श्रेणिक! भगवान सकलभूषण केवली ने अपनी वाणी में यह कहा, तब श्रीरामचन्द्रजी हाथ जोड शीश झुका कर कहने लगे हे भगवन्! मैं कौन उपायो से ससाररूपी भ्रमण से छुटूं। मैं सम्पूर्ण रानियाँ एवं पृथ्वी का राज्य छोडने में समर्थ हूँ। परन्तु भाई लक्ष्मण के प्रेमरूपी राग को छोडने मे समर्थ नहीं हूँ। स्नेहरूपी समुद्रों की लहरों में डूब रहा हूँ। आप धर्मोपदेश रूपी हाथो के अवलम्बन से मुझे निकालो। हे करुणानिधान! मेरी रक्षा करो। तब भगवान केवली ने कहा, हे राम! तुम शोक नहीं करो, तुम बलदेव हो कुछ दिन वासुदेव भाई लक्ष्मण सहित, इन्द्र की तरह इस पृथ्वी का राज्य करो, पश्चात् जिनेश्वर के व्रतो को धारणकर निश्चय से केवलज्ञान को प्राप्त करोगे। ये केवली के वचन सुनकर श्रीरामचन्द्रजी मन मे हर्ष से पुलकित हो गये। नयनकमल खिल गये, वदनकमल खिल उठा, परम धैर्य सहित आनन्दित हुये। श्रीरामचन्द्रजी को केवली के मुख से चरम शरीरी तद्भव मोक्षगामी जानकर, सुर असुर मनुष्य इन्द्र चक्रवर्ती आदि सभी ही प्रशसाकर महाप्रेम भक्ति करने लगे। ऐसे केवली के वचन सुनकर ससारी प्राणी व्रतों को धारणकर सूर्य समान केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे रामको केवलीके मुखसे धर्मश्रवण करनेवाला एकसौ पॉचवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-106

राम, लक्ष्मण, सीता, रावण आदि के पूर्व भव

अथानंतर विद्याधरों का श्रेष्ठराजा विभीषण, रावण का भाई, सुन्दर रूपवान शरीर का धारी, राम की भक्ति ही उसके आभूषण है, उसने दोनों हाथजोड प्रणामकर केवली से पूछा, हे देवाधिदेव! श्रीरामचन्द्रजी ने पूर्वभव में क्या पुण्य कार्य किया जिससे ऐसी अद्भुत अनुपम महिमा प्राप्त हुई और इनकी महारानी

पतिव्रता महासती सीता को दण्डक वन से रावण क्यों हरकर ले गया। धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों का ज्ञाता भोक्ता कृत्य अकृत्य को जानने वाला धर्म अधर्म को पहिचानने वाला गुणों से सम्पन्न फिर भी क्यो मोह के वश होकर परस्त्री की अभिलाषा से मरण को प्राप्त हुआ? और लक्ष्मण ने उसे संग्राम में मारा, रावण ऐसा महाबलवान, विद्याधरों का महेश्वर अनेक अद्भुत कार्य को करने वाला, ऐसे कैसे मरण को प्राप्त हुआ? तब केवली भगवान अनेक जन्मों की कथा विभीषण को कहने लगे, हे लंकेश्वर! राम लक्ष्मण दोनों अनेक भवों के भाई हैं। रावण के जीव से लक्ष्मण के जीव का बहुत भवों से बैर है सो सुनो—जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एकनगर, वहॉं नयदत्त नाम का व्यापारी, अल्पधन का स्वामी, उसकी सुनन्दा स्त्री उनके धनदत्त नाम का पुत्र, वह राम का जीव, और दूसरा वसुदत्त वह लक्ष्मण का जीव, और एक यज्ञबली नाम का ब्राह्मण, वसुदत्त का मित्र वह तेरा जीव (विभीषण) और उसी ही नगर में एक और व्यापारी सागरदत्त उसकी स्त्री रत्नप्रभा, उनकी पुत्री गुणवती वह सीता का जीव। और गुणवती का छोटा भाई गुणवान वह भामंडल का जीव, और गुणवती का रूप योवन कलाओं मे दक्ष देख पिता का अभिप्राय जान भाई गुणवान ने बहिन की सगाई धनदत्त से की। और उसीनगर मे एक महाधनवान व्यापारी श्रीकांत वह रावण का जीव, जो निरन्तर गुणवती से विवाह करने की इच्छा रखता था। और गुणवती का भाई लोभी सो धनदत्त को अल्प धनवान जानकर और श्रीकांत को महा धनवान देखकर उससे विवाह कराने के लिये तैयार हुआ। सो यह वृतान्त यज्ञवली ब्राह्मण ने वसुदत्त से कहा कि तेरे बडे भाई की जो सगाई हुई वह गुणवती, उसका भाई गुणवान, श्रीकांत को धनवान जानकर अपनी बहिन का विवाह उससे कराना चाहता है, तब वसुदत्त ने यह समाचार सुनकर श्रीकात को मारने के लिये तलवार लेकर रात्रि के अंधेरे मे श्याम वस्त्र पहनकर धीरे धीरे पैरो को रखता हुआ श्रीकान्त के घर पहुँचा श्रीकान्त असावधानी पूर्वक बैठा हुआ था, तब वसुदत्त ने खड्ग से उसे मारा, तब श्रीकांत ने भी मरते मरते वसुदत्त को तलवार से मारा। वे दोनों मरकर विंद्याचल के वन में हिरण हुये। नगर के दुर्जन लोगों ने, गुणवती का धनदत्त से विवाह नहीं करने दिया, क्योकि धनदत्त के भाई ने अपराध किया, दुर्जन लोग बिना कारण से क्रोध करते है, तो यह एक बहाना मिल गया। तब धनदत्त अपने भाई का मरण एवं अपना अपमान अलाभ जान महादुखी होकर घर से निकल विदेश चला गया। वह गुणवती कन्या धनदत्त से विवाह नहीं करानेपर

महादुखी हुई। और अन्य किसी से भी विवाह नहीं किया। वह गुणवती मुनियों की निंदा एवं जैन धर्म की अश्रद्धा मिथ्यात्व के कारण पाप कर्मों को करती हुई आर्त्तध्यान पूर्वक मरकर जिस वन में श्रीकांत और वसुदत्त दोनो हिरण हुये थे, उसी वन में गुणवती हिरणी हुई। पूर्व बैर के कारण इसी हिरणी के लिये दोनों मृग परस्पर लडकर मरे, उसी वन मे शूकर हुये, पुनः हाथी, भैसा, बैल, बंदर, गेंडा, श्याल, कुत्ता भेड इत्यादि अनेक तिर्यंच पर्यायो में जन्म धारण किया, और वह गुणवती का जीव उसी जाति की तिर्यंचनी होती रही, ये दोनों उसी के निमित्त से लडकर मरते रहे। जल एव थल के जीव होकर जन्म मरण करते रहे। और धनदत्त मार्ग की थकान से दुखी होकर एक दिन सूर्य अस्त के समय मुनिराजों की शरण में गया। वह भोला सीधा साधा कुछ नहीं जानता, फिर भी प्यास की वेदना से व्याकुल होकर साधुओं से कहने लगा कि मैं तृषा की वेदना से महादुखी हूँ, मुझे जल पिलाओ, आप महा धर्मात्मा हो, तब मुनिराज तो कुछ नहीं बोले, उनके समीप कोई जिनधर्मी श्रावक मधुर शब्दों से, धनदत्त को सतोष से समझाने लगा कहा कि—हे मित्र! रात्रि को अमृत भी नहीं पीना तो जल की क्या बात, जिस समय ऑखों से कुछ दिखता नहीं, सूक्ष्म जीव भी नहीं दिखते, उस समय हे बालक! यदि तू, भूख प्यास की वेदना से महादुखी व्याकुल क्यो न हो, फिर भी रात्रि में भोजन पानी ग्रहण नहीं करना। रात्रि मे भोजन करने से मांस का दोष लगता है, इसलिये तू रात्रि में अन्न जल ग्रहण करने का त्यागकर। जिससे तेरा आत्म कल्याण होगा और तू भवसागर से पार हो जायेगा। यह उपदेश सुन धनदत्त शात चित्त हुआ, शक्ति नहीं थी, इसलिये साधु नहीं हो सका, फिर भी गुरु भक्ति एवं श्रद्धा से अणुव्रती श्रावक हुआ। और अन्त समय मे समाधिमरण कर प्रथम सौधर्म स्वर्ग में बडी ऋद्धि का धारी देव हुआ। मुकुट, हार, भुजबधन, देवो पुनीत वस्त्र आभूषणो से सुसज्जित पूर्व पुण्य के उदय से देवागनाओ आदि के सुखो को भोगता है। पुन. स्वर्ग से चयकर महापुर नगर मे मेरू नाम का सेठ उनकी धारणी स्त्री उसके पद्मरूची नाम का पुत्र हुआ और उसी नगर में राजा छत्रच्छाय, रानी श्रीदत्ता गुणों की भंडार थी, सो एक दिन सेठ का पुत्र पद्मरूची अपने घोडेपर चढकर आया, तब एक बैल को मरते हुये देखा, तब पद्मरूची ने तुरंग से उत्तरकर महादया से आद्र होकर बैल के कानों में णमोकार मत्र सुनाया। णमोकार मंत्र को सुनते सुनते प्राणों को छोड़कर रानी श्रीदत्ता के गर्भ में आकर जन्म लिया। राजा छत्रच्छाय के पुत्र नहीं था इसलिये

पुत्र के जन्म से अति हर्षित होकर नगर को सजाया, बहुत धन के द्वारा अति महासुन्दर उत्सव किया, बाजो की ध्वनि से दशो दिशायें गूंज उठी, यह बालक पूर्व पुण्य के प्रभाव से, अपने पूर्व भवोंको जातिस्मरण से जानने लगा। वह बैल के भव का शीत, उष्ण, वध, बधन, छेदन, भेदन भूख प्यासादि महादुख एवं मरने का भय और णमोकार मंत्र सुनने के प्रभावसे मरकर मैं राजकुमार हुआ। इस प्रकार वह पूर्वभवों का स्मरणकर, बालक अवस्था में ही, महाविवेकी ज्ञानवान हुआ। जब यौवन अवस्था हुई तब एक दिन विहार करता हुआ, बैल के मरण स्थान के पास गया। तब अपना पूर्वभव याद करके, वह वृषभध्वज कुमार हाथी से उतरकर पूर्व जन्म की मरण भूमि को देख दुखी हुआ, अपने मरण को सुधारने वाला, णमोकार मंत्र को सुनाने वाला कौन था, उसको जानने के लिये, उसी जगह एक कैलाशपर्वत समान ऊँचा सुन्दर चैत्यालय बनाया। और चैत्यालय के दरवाजे पर, एक बैल की मूर्ति उसके निकट बैठा एक पुरुष णमोकार मंत्र सुना रहा है, ऐसा एक चित्र बनवाया। और उसके पास एक पुरुष को बैठाया। और उस से कहा कि जो कोई मानव इसे आकर देखे, तो मुझे आकर समाचार देना। एक दिन मेरूसेठ का पुत्र पद्मरूची दर्शन करने के लिये मन्दिर में आया, मन्दिर को देख दर्शनकर, अति हर्षित होकर वापिस जा रहा था, तब वह बैल के चित्र को देखकर मन में सोचने लगा, कि बैल को णमोकार मत्र मैंने सुनाये थे, वह खडा खडा उस चित्र को देख रहा था, जो पुरुष रखवाली के लिये बैठे थे, उसने जाकर राजकुमार से कहा, सो सुनते ही राजकुमार महाऋद्धि सहित हाथीपर बैठकर शीघ्र ही अपने जन्म को सुधारने वाले परममित्र से मिलने आये। हाथी से उतरकर जिनमन्दिर मे गये। दर्शन कर बाहर आये और पद्मरुची को बैल की ओर देखते हुये देखा, तब राजकुमार ने पद्मरूची से पूछा, कि आप बैल के चित्र की ओर क्या देख रहे हो? तब पद्मरूची ने कहा, एक समय मरते हुये बैल को, णमोकार मंत्र मैंने सुनाया था, तो वह मरकर कहाँ जन्म लिया, यह जानने की मेरी इच्छा है। तब वृषभध्वज बोले वह बैल का जीव मैं हूँ। ऐसा कहकर राजपुत्र चरणों मे गिर गया। और पद्मरूची की स्तुति करने लगा, जैसे शिष्य गुरु की स्तुति करता है। वह राजकुमार कहने लगा, मैं पशु महाअज्ञानी अविवेकी मरण के कष्ट से दुखी था, सो आप मेरे महामित्र णमोकारमंत्र को सुनाने वाले, अन्त में समाधिमरण कराने में कारण हुये, आप परम दयालु, परभव को सुधारने में आपने महामंत्र मुझे दिया, उससे मैं राजकुमार हुआ। जैसा

उपकार माता, पिता, भाई, बहन, राजा, मित्र, कुटुम्ब, परिवार, कोई नहीं करता ऐसा आपने किया। जो आपने णमोकार महामत्र सुनाया, उसके समान तीनलोक मे अन्य कोई मत्र नहीं, और आपके समान कोई उपकारी नहीं। उसके बदले में मैं आपको क्या दूँ, मै आपका बहुत ऋणी हूँ। आपके प्रति मेरी बहुत भक्ति है, आप जो आज्ञा दो, वह मै करने के लिये तैयार हूँ। हे पुरुषोत्तम! आप आज्ञा प्रदानकर मुझे आपका भक्त बनाओ, यह सम्पूर्ण राज्य आप ले लो, मैं आपका भक्त हूँ, यह मेरा शरीर आपके लिये है। आपकी इच्छा हो वैसी सेवा कराओ, इस प्रकार वृषभध्वज ने कहा तब पद्मरूची और राजकुमार के आपस मे महाप्रेम हुआ, दोनो सम्यग्दृष्टि श्रावक के व्रतो का पालन करने लगे, जगह जगह भगवान के बडे बडे चैत्यालय बनवाकर जिनबिम्ब विराजमान किये। पुनः समाधिमरण कर वृषभध्वज पुण्य कर्म के उदय से दूसरे स्वर्ग मे देव हुये, वहाँ देवागनाओ के साथ क्रीडा करने लगे। और पद्मरूची सेठ भी समाधिमरण कर पद्मरूची का जीव पश्चिम विदेह में विजयार्ध पर्वत वहाँ नद्यावर्त नगर, वहाँ का राजा नन्दीश्वर, उनकी रानी कनकप्रभा, उनके नयनानन्द नाम के पुत्र हुये। वहाँ विद्याधरो के चक्रवर्ती की सम्पदा को भोगा। पुनः महामुनि बनकर महाधोर तप किया और समाधिमरण कर चौथे स्वर्ग में देव हुये। वहाँ से पुनः चयकर सुमेरू पर्वत के पूर्व दिशा के पूर्वविदेह में क्षेमपुरी नगरी, राजा विपुलवाहन रानी पद्मावती उनके श्रीचन्द्र नाम के पुत्र हुये। वहाँ स्वर्ग समान सुखो के भोग भोगे। उनके पुण्य के प्रभाव से दिन दूनी राज्य की वृद्धि होती रही, अटूट भडार भर गये, समुद्र पर्यत पृथ्वी को वश किया। इन्द्राणी समान रानियो के साथ सुख भोगे। हजारों वर्ष राज्य किया।

एक दिन महासघ सहित तीन गुप्तियो के धारी समाधिगुप्ति योगीश्वर नगर के बाहर उद्यान मे आकर विराजमान हुये। तब नगर के लोग वंदना करने गये। महा स्तुति करते हुये बाजों की ध्वनी के साथ नृत्य करते हुये जा रहे थे। तब श्रीचन्द्र राजा समीप के लोगों से पूछने लगे, कि यह बाजो की ध्वनी एवं गीत नृत्य की आवाज कहाँ से आ रही है। और क्या कारण है। तब मंत्रियों ने पता लगाकर कहा कि हे राजन! नगर के बाहर उद्यान में दिगम्बर साधु आये हैं, उनके दर्शनो के लिये नगर के लोग जा रहे हैं। यह समाचार सुन राजा हर्ष से प्रसन्न होकर सात कदम आगे चलकर नमस्कार किया, और सम्पूर्ण राज्य लोग एव परिवार सहित मुनिराजो के दर्शन करने चले। वीतरागी मुनिराज को देखकर

राजा ने नमस्कार किया और महाविनय सहित पृथ्वी पर बैठे। भव्यजीवो को मोक्षमार्ग दर्शाने वाले ऐसे परमऋषि के दर्शनो से राजा को महाहर्ष उत्पन्न हुआ। वे महा मुनिराज तपस्वी धर्मशास्त्र के ज्ञाता परम शात गम्भीर लोगो को तत्वज्ञान का उपदेश देने लगे। धर्म दो प्रकार का होता है, एक मुनिधर्म दूसरा श्रावक धर्म। संसार समुद्र से पार करनेवाले धर्म को कहा, और प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग इन चारो अनुयोगो का स्वरूप बताया। प्रथमानुयोग मे शलाकादि महापुरुषो का कथन, करणानुयोग मे तीनलोक एव कर्मो का कथन, चरणानुयोग मे मुनिधर्म एव श्रावकधर्म के आचार विचारादि धर्मो का कथन, द्रव्यानुयोग मे छहद्रव्य, साततत्त्व, नौपदार्थ, पचास्तिकायादि का उपदेश दिया है। कैसेहै मुनिराज? वक्ताओं मे श्रेष्ठ, आक्षेपणी कथा जिनमार्ग का प्रकाश करनेवाली, विक्षेपणी मे मिथ्यात्व का खडन और सवेदनी मे धर्म का अनुराग, निर्वेदनी मे वैराग्य का वर्णन, इस प्रकार चारो कथाओ का वर्णन किया। इस ससार सागर मे कर्मके योगसे भ्रमण करता हुआ, यह जीव महाकष्ट से मोक्ष मार्ग को प्राप्त होता है। ससार के ठाठ बाठ सब विनाशीक हैं। जैसे सन्ध्या की लालिमा एव जल के बुद बुदा तथा जल की लहरें या बिजली की चमक और इन्द्रधनुष के समान निसार क्षणभगुर असार है। इस प्रकार जगत का सुख नाशवान जानना। ससार मे कोई सार नहीं, नरक तिर्यचगति तो दुखरूप ही है। देव मनुष्य गति मे यह प्राणी सुख मानते है परन्तु वह सुख नहीं दुख ही है। यह सब सुखाभास है। जिस सुख से तृप्ति नहीं वह ही दुख है। जो महेन्द्र स्वर्ग के भोगो से भी तृप्त नहीं हुआ, तो मनुष्यभव के क्षणभंगुर भोगो से कैसे तृप्ति होगी। यह मनुष्यभव भोगो के योग्य नहीं वैराग्य के योग्य है। इसी प्रकार से दुर्लभ मनुष्य जन्म को प्राप्त किया, जैसे दरिद्री धन को प्राप्तकर विषय भोगों मे लोभी होकर बिना प्रयोजन धन को मोह के कारण नष्ट करता है। जैसे सूखे ईन्धनों से अग्नि को कहाँ तृप्ति है, और नदियो के जल से समुद्र को कहाँ तृप्ति है। ऐसे ही विषय भोगों से जीवन में कभी तृप्ति नहीं होती। फिर भी अज्ञानी जीव विषयों को अच्छा मानता है। सूर्य तो दिन में गर्मी से दुखी करता है और काम की वासना रात दिन प्राणियों को दुखी करती है, सूर्य की गर्मी को दूर करने के अनेक उपाय हैं, परन्तु काम की इच्छा को दूर करने का एक उपाय विवेक ज्ञानही है। जन्म जरा मरण का दुख संसार में महाभयंकर है, उनका चिन्तवन करने से ही महादुख होता है। यह कर्मरूपी जगत का ठाठ, यंत्र समान खाली, भरा होकर ऊपर नीचे घूमता

रहता है, यह शरीर महा दुर्गन्ध मय नाशवान है। मोहकर्म के योग से जीवों को शरीर से राग है। मनुष्य भव के सुखों को असार जानकर, बडे कुल में उत्पन्न हुये, पुरुष विषयों से विरक्त होकर, जिनदीक्षा धारणकर, उत्साह रूपी कवच पहने, विषयरूपी तुरंगपर बैठकर, ध्यानरूपी खड्ग के द्वारा, कर्मरूपी शत्रुओं को नाशकर, निर्वाणरूपी नगर का राज्य करते है। शरीर आत्मा दोनों भिन्न भिन्न हैं, ऐसा चिन्तवन कर शरीर का राग छोड, हे मनुष्यों! धर्म धारण करो। धर्म समान और कोई श्रेष्ठ नहीं। धर्म मे मुनिधर्म श्रेष्ठ है। मुनियो के सुख दुख दोनों समान, राग द्वेष रहित महा पुरुष है वे परम शुक्ल ध्यानरूपी अग्नि से, कर्म रूपीवन, जो दुखरूपी दुष्टो से भरा है, उसको नाश करते हैं।

यह मुनिराज का धर्मोपदेश सुन राजा श्रीचन्द्र वैराग्य को प्राप्त हुआ, ध्वजकान्ति पुत्र को राज्य देकर विषय सुखो को छोड समाधिगुप्त मुनिराज के पास मुनिदीक्षा धारण की। सम्यक्त्व की भावना सहित तीनों योग जो मन वचन काय की शुद्धता पूर्वक, पाचसमिति तीनगुप्तियो सहित राग द्वेष रहित, रत्नत्रयरूपी आभूषणो से युक्त, उत्तम क्षमादि दसलक्षण धर्मो से मडित, जिनशासन के अनुरागी, सम्पूर्ण अग पूर्वांग के पाठक, पांच महाव्रत के धारक, जीवो के दयालु, सप्तभय से रहित, बाईस परीषह को सहन करने वाले, दो उपवास, तीन उपवास, पन्द्रह उपवास एक मासादि अनेक उपवासो से कर्म निर्जरा करने वाले, दिन मे एकबार शुद्ध आहार लेने वाले ध्यान अध्ययन मे तत्पर, अतीन्द्रिय, निर्ममत्व, भोगों की इच्छाओं के त्यागी, निंदान बधन से रहित, महाशात, जिनशासन मे रत, यतियों के आचारो मे लीन, बालके अग्र भाग बराबर भी जिनके पास परिग्रह नहीं, स्नान के त्यागी, दिगम्बर, संसार की मायाजाल से रहित, गॉव में वनमें एक रात्रि, नगरके वनमे पॉच रात्रि, गिरी, गुफा शिखर, नदियो के तट, उद्यान इत्यादि प्रशस्त स्थान में निवास करने वाले कायोत्सर्ग के धारी, शरीर से निर्ममत्व, मौनी, तपस्वी, पडित इत्यादि महागुणो से पूर्ण कर्म पींजरो को जर जरकर समाधिपूर्वक मरणकर श्रीचन्द्र मुनि (रामचन्द्र का जीव) पाचवें स्वर्ग मे इन्द्र हुये। वहॉ लक्ष्मी कीर्ति कांति प्रताप के धारक देवों के चूडामणि, तीनलोक में प्रसिद्ध ऋद्धियों सहित महासुखो को भोगने लगे। नन्दनादि वनो मे सौधर्मादि इन्द्र भी इनकी सम्पदा को देखते रहते थे। इनको देखने की सभी देवो की इच्छा बनी रहती, महासुन्दर विमान, मणियों की झालरों से युक्त, स्वर्ण समान, उसमें बैठकर विहार करते, दिव्य देवांगनाओं सहित महासुख पूर्वक

काल व्यतीत करने लगे, श्रीचन्द्र का जीव ब्रह्मेन्द्र उसकी महिमा, हे विभीषण! हम भी वचनों से नहीं कर सकते, यह केवलज्ञान गम्य है। यह जिनमार्ग अमूल्य परमरत्न उपमा रहित, तीनलोक मे श्रेष्ठ है। फिर भी अज्ञानी प्राणी उसके मूल्य को नहीं जानते। देव, गुरु और धर्म, इनकी महिमा को जानकर भी, मूर्ख मिथ्या अभिमान से, गर्वित होकर धर्म से वंचित रहता है। जो अज्ञानी इस लोक के सुखों में अनुरागी हुआ है। वह बालक समान अविवेकी अज्ञानी है। जैसे बालक बिना समझे अभक्ष का भक्षण करता हैं, और विष भी पी लेता है, ऐसे ही अज्ञानी अयोग्य क्रिया का आचरण करते हैं, जो विषयों के अनुरागी हैं, वह अपना ही बुरा करते हैं। जीवों के कर्म बंध होता है, ऐसा सबको ज्ञान नहीं, कोई महा भाग्यशाली ही ज्ञान प्राप्त करते है, कोई ज्ञानी होनेपर भी वस्तुओं की अभिलाषा से, अज्ञानी अज्ञान दशा को प्राप्त होते हैं। कोई खोटे कार्य करने वाले संसारी जीव उसी में ही रुचि करते हैं, वे महादोष से भरे हैं। जिनमें विषय कषाय की बहुलता है, उन्हे जिनशासन को छोडकर अन्य कोई दुख से छुडाने मे समर्थ नहीं। इसीलिये हे विभीषण! तुम आनन्द पूर्वक एकाग्र मन से जिनेन्द्रदेव की अर्चना करो, इसप्रकार धनदत्त का जीव (रामचन्द्र जी) मनुष्य से देव, देव से मनुष्य होकर नवमें भव मे श्रीरामचन्द्र हुये। सो तुम सुनो—पहले भव मे धनदत्त 1, दूसरे भव मे पहलेस्वर्ग के देव 2, तीसरे भव मे पद्मरूची सेठ 3, चौथेभव मे दूसरेस्वर्ग के देव 4, पॉचवेभव में नयनानन्द राजा 5, छठेभव मे चौथेस्वर्ग मे देव 6, सातवेभव में श्रीचन्द्रराजा 7, आठवेंभव मे पॉचवेंस्वर्ग मे इन्द्र 8, नवमे भवमें श्रीरामचन्द्रजी, आगे मोक्ष यह तो श्रीरामचन्द्रजी के भव कहे। अब हे लंकेश्वर! वसुदत्तदि का वृतान्त सुनो कर्मों की गति विचित्र है। उस कर्म के योग से मृणालकुड नगर वहॉ राजा विजयसेन, रानी रत्न चूला उनके वज्रकबु नाम का राजपुत्र, हेमवती रानी उनके शभु नाम का राजकुमार पृथ्वीपर प्रसिद्ध यह श्रीकांत (रावण) का जीव। और वसुदत्त का जीव राजा का पुरोहित श्रीभूति (लक्ष्मण का जीव) जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि उनकी स्त्री सरस्वती उसकी वेदवती नाम की पुत्री हुई, वह गुणवती (सीता का जीव) का जीव, पूर्व भव में सम्यक्त्व के बिना अनेक तिर्यंच योनियों में भ्रमणकर साधुओ की निंदा के दोष से गंगा के तटपर मरकर हथनी हुई, एक दिन कीचड में फंस गई, तब वह मरणासन होकर मंद मंद श्वास लेने लगी, उसी समय एक तरंग नाम का विद्याधर महा दयावान उसने हथनी के कान में णमोकार मंत्र सुनाया, वह णमोकार मंत्र के प्रभाव से एवं विद्याधर ने कुछ नियम व्रत दिये थे उनके

प्रभाव से हथनी मरकर श्रीभूति पुरोहित के वेदवती नाम की पुत्री हुई। एक दिन मुनिराज आहार करने के लिये आये, वह मुनिराज को देखकर हंसने लगी। तब उसके पिताने मना किया, जब यह शांत होकर श्राविका हुई। यह वेदवती महा रूपवान थी, इसीलिये अनेक राजाओं के पुत्र इससे विवाह करने की अभिलाषा करते थे, और राजा विजयसेना का पोता शंभु (रावण का जीव) वह उससे विशेष अनुरागी था। वेदवती का पिता श्रीभूति पुरोहित महाजिनधर्मी उसने यह प्रतिज्ञा की, जो मिथ्यादृष्टि कुबेर समान धनवान भी हो तो भी मैं अपनी पुत्री का उससे विवाह नहीं कराऊँगा। तब शभुकुमार ने रात्रि मे वेदवती के पिता पुरोहित को मारा, वह पुरोहित मरकर जिनधर्म के कारण स्वर्ग में देव हुआ। और शंभु राजकुमार पापी, वेदवती साक्षात देवी समान उसकी इच्छा नहीं होते हुये भी बलात्कार कर विवाह के लिये तैयार हुआ, वेदवती को बिलकुल अभिलाषा नहीं, तब शंभु कामरूपी अग्नि से जलता हुआ दुराचारी पापी ने, जबरन से कन्या को पकड आलिंगनकर मुख चूंमा, मैथुन किया, तब वेदवती का हृदय एव शरीर कांपने लगा, अपने शील के घात से, एव पिता के मरण से परम दुखी होकर, महा क्रोध से नेत्रों को लाल करती हुई, कहने लगी हे पापी! हे अधम! हे दुराचारी! तूने मेरे पिता को मारकर मेरे से बलात्कार कर विषय सेवन किया। सो हे नीच! मै तेरे मरण का कारण बनूंगी, अथवा मेरे द्वारा तेरा मरण होगा, मेरे पिता को तूने मारा यह बडा अनर्थ किया, मैं अपने पिता के मनोरथो को कभी भी नष्ट नहीं करूँगी। मिथ्यादृष्टि के सेवन से तो मरना अच्छा, ऐसा कहकर वेदवती श्रीभूति की कन्या, हरिकान्ता आर्यिका के समीप आर्यिका के व्रतों को धारणकर परम दुर्धर तप करने लगी। केशलोच किये महातप से रुधिर मांसादि सूख गये, शरीर शिथिल हो गया, अन्त मे समाधि मरणकर पॉचवे स्वर्ग मे जन्म लिया, पुण्य के उदय से स्वर्ग के सुखों को प्राप्त किया। और शंभु संसार में अनीति के कारण निंदा का पात्र हुआ, और कुटुंब परिवार धन से भी रहित हुआ। पागल वत् क्रियायें करने लगा, जिनधर्म से विपरीत होकर साधुओं को देख हंसी निंदा करता, मद्य, मांस, मधु को खाता, पाप क्रिया में प्रतिसमय तत्पर उन अशुभ पाप कर्मो के उदय से नरक तिर्यच गतियों के दुखों को भोगता रहा।

अथानंतर कुछ पाप कर्मो का उपशम होने से कुशध्वज ब्राह्मण, उसके सावित्री स्त्री, उनके प्रभासकुन्द नाम का पुत्र हुआ, जिनधर्म का उपदेश प्राप्तकर विचित्र मुनिराज के निकट मुनि दीक्षा प्राप्त की। काम, क्रोध, मद, मत्सर को दूर

किया, आरम्भ परिग्रह से दूर हुये, निर्विकार तप से दयावान, निष्पृहि, जितेन्द्रिय, पक्ष मास उपवास करते, जहाँ सूर्य अस्त हो जाता, वहाँ ही वन में बैठ जाते, मूलगुण, उत्तरगुणों के पालक, बाईस परिषह को सहन करने वाले, गर्मी में पर्वतोंपर, वर्षाकाल में वृक्षों के नीचे, शीतकाल में नदी सरोवर के तटपर निवास करते। इसप्रकार अनेक प्रकार से उत्तम तपस्या करते करते सम्मेद शिखर महातीर्थक्षेत्र की वन्दना के लिये गये, वह निर्वाणक्षेत्र अनन्तानन्त मुनिराजो सहित बीस तीर्थकरों की निर्वाण भूमि, पापों की नाशक, वहाँ कनकप्रभ विद्याधर की विभूति को आकाश में देखकर मुनिराज ने निदान किया अगर जिनधर्म के तपकी महिमा सत्य है तो मेरे इस तपके प्रभाव से, मैं भी ऐसी विभूति प्राप्त करूँ। यह कथा केवली भगवान ने विभीषण से कहा, देखो जीवों की अज्ञानता अथवा मूर्खता, जो तीनलोक मे मुल्य नहीं ऐसा अमुल्य तपरूपी रत्न, भोगरूपी मुट्ठीभर सब्जी के लिये बेच दिया, कर्म के कारण जीवो की विपरीत बुद्धि होती है। निदान बध करने के पश्चात् दुखी होकर विषम कठोर कठोर महातपों को कर समाधिमरण से तीसरे स्वर्ग में देव हुआ, वहाँ से चयकर, भोगों में मन लगाने से राजा रत्नश्रवा रानी केकसी उनके रावण नाम का पुत्र हुआ, लंका में महाविभूति प्राप्त की, तीनखड की सम्पूर्ण पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुआ। और धनदत्त का जीव रात्रिभोजन का त्यागकर सुरनर गतियों के सुखो को भोग श्रीचन्द्रराजा होकर पाचवें स्वर्ग में दशसागर के सुखो को भोग बलदेव श्रीराम हुये। रूपवान, बलवान, विभूति से इन्द्र समान महामनोहर चन्द्रमा समान, उज्ज्वल यश के धारक, सन्तोषी, गम्भीर न्यायवान, मर्यादा पुरुषोत्तम, श्रीपद्म (राम) पृथ्वीपर प्रसिद्ध हुये। और वासुदत्त का जीव लक्ष्मीसमान वासुदेव हुआ, उसके भव सुनो। वसुदत्त 1, मृग 2, शूकर 3, हस्ति 4, महीष 5, वृषभ 6, बन्दर 7, चीता 8, ल्याली 9, भेड 10, जलचर थलचर के अनेकभव 11, श्री भूति पुरोहित 12, देवराजा 13, पुनर्वसुविद्याधर 14, तीसरेस्वर्ग में देव 15, वासुदेव 16, मेघा 17, कुटुंबीका पुत्र 18, देव 19, व्यापारी 20, भोगभूमि 21, देव 22, चक्रवर्ती का पुत्र 23, पुनः कई उत्तमभवों को धारणकर पुष्करार्ध के विदेहक्षेत्र में तीर्थंकर और चक्रवर्ती यह दो पद के धारी होकर मोक्ष प्राप्त करेंगे। अब आगे दशानन (रावण) के भव सुनो। श्रीकान्त 1, मृग 2, शूकर 3, गज 4, महीष 5, बैल 6, बन्दर 7, चीता 8, ल्याली 9, भेड 10, जलचर थलचर के अनेक भव 11, शंबु 12, प्रभास कुंद 13, तीसरेस्वर्ग में देव 14, दशमुख 15, बालुका पृथ्वी 16, कुटुंबीपुत्र 17, देव 18, व्यापारी 19, भोगभूमि 20, देव 21,

चक्रीपुत्र 22 पुन: कुछ उत्तम भवों को धारण कर भरत क्षेत्र मे जिनराज तीर्थंकर होकर मोक्ष प्राप्त करेंगे। अब जानकी के भव सुनो गुणवती 1, मृगी 2, शूकरी 3, हथनी 4, महिषी 5, गाय 6, बन्दरी 7, चीती 8, श्यालनी 9, भेडनी 10, जलचर थलचर के अनेक भव 11, चित्तोत्तसवा 12, पुरोहित की पुत्री वेदवती 13, पॉचवेस्वर्ग मे देवी अमृतवती 14, बलदेव की पटरानी सीता 15, सोलहवें स्वर्ग में प्रतीन्द्र 16, चक्रवर्ती 17, अहमिन्द्र 18, रावण का जीव जब तीर्थंकर होगा, तब यह सीता का जीव उसके प्रथम गणधरदेव होकर मोक्ष प्राप्त करेगी। भगवान सकलभूषण केवली विभीषण से कहते है, कि श्रीकान्त का जीव कुछ भवों में शंबू, प्रभासकुंद होकर क्रम क्रम से रावण हुआ उसने भरतक्षेत्र के तीनखंड में राज्य किया। और गुणवती का जीव शिवभूति की पुत्री होकर आगे सीता हुई। राजा जनक की राजपुत्री, श्रीरामचन्द्रजी की पटरानी, विनयवान, रूपवान, गुणवान, शीलवान, पतिव्रताओ मे महासती मुख्य हुई, जैसे इन्द्र के शचि, चन्द्र के रोहणी, रवि के रेणा, चक्रवर्ती के सुभद्रा ऐसे राम की महारानी सीता। और गुणवती का भाई गुणवान, वह भामडल हुआ, श्रीराम का मित्र जनक राजा की रानी विदेहा के गर्भ मे युगल भामडल और सीता दोनो का साथ मे जन्म हुआ, और यज्ञबली ब्राह्मण का जीव विभीषण हुआ, और बैल का जीव णमोकार मत्रके प्रभावसे स्वर्ग एव मनुष्यगति के सुखो को भोगकर यह सुग्रीव कपिध्वज हुआ। भामंडल सुग्रीव और तुम पूर्वभव के प्रेमसे महापुण्यशाली श्रीराम उनके मित्र हुये, यह कथा सुन विभीषण बाली के भव पूछने लगे। तब केवलीभगवान ने कहा, हे विभीषण! तुम सुनो, राग द्वेषादि दुःखों के समूह से भरा, यह महासंसार सागररूपी ये चारों गतियॉ, उसमे मै भ्रमण करता हुआ वह जीव, मध्यलोक के वृन्दावन में एक कालेरा नाम का मृग हुआ, उसी वन मे साधु स्वाध्याय कर रहे थे उनके शब्दों को मृग ने मरते समय सुनकर ऐरावत क्षेत्र मे दित्तनाम का पुत्र हुआ। वह जिनपूजा मे लीन, भगवान का भक्त, अणुव्रतों सहित समाधिमरण कर, दूसरेस्वर्ग में देव हुआ। वहॉ से चयकर जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में विजयावती नगरी उसके पास एक मत्तकोकिलागॉव उसका स्वामी कातिशोक, स्त्री रत्नांगिनी, उनके स्वयंप्रभ नाम का पुत्र, महा सुन्दर धर्मात्मा हुआ। वह जिनधर्म में निपुण संयत नाम के मुनि होकर, हजारो वर्ष अनेक प्रकार के महातप किये, तप के प्रभाव से अनेक ऋद्धियॉ उत्पन्न हुई। पुनः ममता को छोड उपशमश्रेणी चढ शुक्लध्यान का पहला पाया, प्रथक्त्ववितर्क उसके प्रभाव से सर्वार्थसिद्धि गये, वहॉ तैतीससागर

अहमिन्द्रपद के सुखों को भोगकर राजा सूर्यरज उनके बाली नाम का राजपुत्र हुआ, वह महागुणवान, जब रावण युद्ध करने आया तब जीव दया के लिये, राजा बाली ने युद्ध नहीं किया, सुग्रीव को राज्य देकर स्वयं दिगम्बर मुनि हुये। बाली मुनिराज कैलाशपर्वत पर ध्यान कर रहे थे, और रावण विमान में बैठकर आ रहा था, ऋद्धिधारी मुनिराज के प्रभाव से विमान रूक गया। तब रावण ने विमान को नीचे उतारकर क्रोध से कैलाशपर्वत को उठाने लगा, बाली मुनिराज ने जिनमन्दिर एवं जीवो की रक्षा के लिये जिनप्रभु की भक्ति से अपने पैरका अंगूठा हलका सा दबाया, तब रावण दबकर रोने लगा। उसी समय उनकी रानियो ने साधु की स्तुति की, मुनिराज ने अपना पैर उठा लिया, रावण बाहर आकर गुरु एवं भगवान की भक्तिकर अपने स्थानपर गया। और बाली मुनिराज गुरु के निकट प्रायश्चित लेकर तपस्या पूर्वक क्षपकश्रेणी चढ कर्मों को नाशकर, तीर्थक्षेत्र कैलाशपर्वत से निर्वाणपद को प्राप्त किया। वसुदत्त और श्रीकान्त को गुणवती के कारण महाशत्रुता उत्पन्न हुई थी। अनेक भवो तक दोनो परस्पर लड लड कर मरते रहे। और गुणवती के भव से तथा वेदवती के भव से रावण के जीव की अभिलाषा मैथुन सेवन की होती थी, उसी कारण से इस भव में रावण ने सीता का हरण किया, और वेदवती का पिता श्रीभूति सम्यग्दृष्टि उत्तम ब्राह्मण उसको वेदवती के लिये शत्रु ने मारा और मरकर स्वर्ग में गया, वहाँ से चयकर प्रतिष्ठित नगर मे पुनर्वसु विद्याधर हुआ, तप से निदानकर तीसरे स्वर्ग मे देव हुआ, वहाँ से आकर श्रीराम का लघुभ्राता महास्नेहवंत प्रेमवान लक्ष्मण हुआ, पूर्वभव की शत्रुता के कारण रावण को मारा। वेदवती ने पूर्व में कहा था कि मैं तेरे मरण का कारण बनूंगी। इसीलिये सीता रावण के मरण का कारण बनी, जो जिसको मारता है, वह उससे मारा जाता है। जो जिसकी रक्षा करता है वह उसके द्वारा रक्षा का पात्र होता है। तीनखड की लक्ष्मी रावण के पास और समुद्रपर्यंत पृथ्वी का अधिपति महाशूरवीर पराक्रमी बलवान वह सीता के कारण लक्ष्मण के द्वारा मारा गया। यह कर्मों का महादोष है, लक्ष्मण तीनखंड का अधिपति समुद्रपर्यंत पृथ्वी का राज्य किया, कर्मों के उदय से, कमजोर से बलवान और बलवान से कमजोर हो जाता है। मारने वाला मर जाता है और मरने वाला मारा जाता है। संसारी जीवों की यही गति है। कर्मों के उदय से कभी स्वर्ग के सुख, कभी नरक के दुख भोगते हैं। जैसे कोई महास्वाद रूपी अनाज में विष मिलाकर भोजन को खराब करता है, ऐसे अज्ञानीजीव उग्र महातप को भी भोग विषयों की अभिलाषा

से तप को नष्ट करता है। जैसे कोई कल्पवृक्ष को काटकर कोदुं के चावल की खेती करें, और विष के वृक्ष को, अमृतरूपी रस से सींचन करे, राख के लिये रत्नों के ढेर को जलाये,और कोयलों के लिये मलयागिरी चन्दन को जलाये, ऐसे निदान बंधकर तप को यह अज्ञानी जीव दूषित करते हैं।

इस संसार में सभी दोषों की खान नारियॉ है, उसके लिये अज्ञानी जीव क्या क्या कुकर्म नहीं करते हैं, अर्थात् सभी करते है? इस जीव ने जो कर्म उत्पन्न किये हैं, उसका फल अवश्य भोगना पडता है। कर्मो को दूसरा कोई दूर करने में समर्थ नहीं। जो धर्म में रूचि रखते हैं, पुनः धर्म को छोड कर अधर्म कार्य करते हैं, वे कुगति में जन्म लेते हैं। उनकी भूल एवं अज्ञानता का वर्णन कहॉ तक करें। जो साधु होकर मद, मत्सर, ईर्षा, क्रोध, पापादि करते हैं, उनको महातप से भी मुक्ति नहीं प्राप्त होती है। जिनको शाति, सयम, तप, त्याग नहीं, उस दुर्जन मिथ्यादृष्टि को संसार से पार होने का उपाय क्या है। ससार की झूठी माया में चक्रवर्ती आदि महा पुरुष भी फंसते हैं, तो छोटे मनुष्य की क्या बात, इस संसार मे परम दुख का कारण जीवो के साथ शत्रुता है। वह ज्ञानी विवेकी पुरुष नहीं करते है। जिनको आत्म कल्याण करने की इच्छा है। वह पाप करनेवाले शब्दों को कभी नहीं कहते हैं। गुणवती के भव मे मुनिराज का अपवाद किया था और वेदवती के भव में एक मंडलीकागॉव वहॉ सुदर्शननाम के मुनिराज वन मे आये थे, गॉव के लोग मुनिराज के दर्शनकर अपने घर गये, और मुनिराज की बहिन सुदर्शना नाम की आर्यिका मुनिराज के निकट बैठकर धर्म चर्चाकर रही थी, उस समय वेदवती ने देखकर गाव के लोगों से मुनिराज की निदा की और कहा कि मैंने मुनिराज को अकेली आर्यिका के पास बैठे देखे। तब किसी अज्ञानी लोगो ने इसकी बात मानी और कोई बुद्धिमान लोगो ने यह बात नहीं मानी, परन्तु गॉव में मुनिराज का अपवाद हुआ। झूठे दोषो की चर्चा चली, तब मुनिराज ने नियम किया कि यह झूठा अपवाद हमारा दूर होगा, तो आहार करेंगे, नहीं तो आहार नहीं करेगे। तब नगर के देवताओं ने वेदवती से सम्पूर्ण सभी गॉव के लोगों को कहलवाया कि मैंने यह मुनिराज का झूठा अपवाद किया है, यह मुनिराज और आर्यिका दोनों गृहस्थ जीवन के भाई बहन हैं। और मुनिराज के चरणों में जाकर वेदवती ने बार बार क्षमा याचना की, कि हे प्रभो! मैं पापीनी ने आपका झूठा अपवाद किया, आप मुझे क्षमा करे। इसप्रकार मुनि की निंदा एव झूठे अपवाद के कारण सीता का झूठा अपवाद हुआ। और मुनि से क्षमा मांगी

उससे सीता का अपवाद दूर हुआ। इसलिये जो तुम जिनधर्मी हो तो, कभी भी किसी की निंदा नहीं करना। अगर किसी में सच्चा दोष भी, है, तो भी ज्ञानी जीव अपने मुख से नहीं कहते हैं। और कोई कहता है तो उसे भी मना करते हैं। हमेशा दूसरे के दोषों को ढकना और अपने गुणों को ढकना। जो कोई दूसरों की निंदा करते हैं, वह अनन्तकाल तक संसार के दुखो को भोगते है, सम्यग्दर्शन रूपी रत्न उसका यही गुण है कि दूसरे के अवगुणों को किसी से नहीं कहे, अगर किसी के सच्चे दोषों को भी कहता है, तो वह महाअपराधी है अर्थात् दंडनीय है। अज्ञान एवं इर्षापूर्वक दूसरे के दोषों को प्रगट करता है, उसके समान अन्य कोई पापी नहीं। अपने दोषो को गुरु के निकट कहना, और दूसरे के दोषों को छिपाना, किसी की निंदा नहीं करना, वह जिनधर्मी सम्यग्दृष्टि कहलाता है।

यह केवली भगवान की परम अमूल्य अनुपम वाणी सुनकर, सुर असुर मनुष्य सभी आनन्द को प्राप्त हुये। बैर भाव के दोषो को सुनकर सभी सभा के लोग महादुखो से भयभीत होकर, संसार से डरकर शत्रुता छोडने लगे, अर्थात् क्षमा भाव को धारण करने लगे। मुनि तो सभी जीवों को क्षमा करते हैं, प्रतिसमय शुभभावों को धारण करते है। चारों प्रकार के देव क्षमा को प्राप्तकर शत्रुता को छोडने लगे, अनेक राजाओं को वैराग्य हुआ, मुनि दीक्षा लेकर आत्म कल्याण किया और कई राजाओं ने अणुव्रतों को धारण कर उत्तम श्रावक बने। जो मिथ्यादृष्टि थे वे सम्यग्दृष्टि बने। सभी लोग कर्मो को विचित्र जानकर संसार के दुखों से डरने लगे। धिक्कार इस जगत की माया जंजाल को, सब ऐसे कहने लगे। हाथजोड़ शीश नमाकर केवलीभगवान को नमस्कार कर, सुर असुर मनुष्य सब ही विभीषण की प्रशंसा करने लगे, कि आपके निमित्त से हमने केवली भगवान की वाणी द्वारा उत्तम महापुरुषों के चारित्र को सुना, आप धन्य हो। पुनः देवेन्द्र, नागेन्द्र, नरेन्द्र सभी ही आनन्द से भरे अपने अपने परिवार सहित सर्वज्ञदेव की स्तुति करने लगे, हे भगवान्! पुरुषोत्तम, यह तीनलोक आपके द्वारा शोभनीय है, इसीलिये आपका नाम सकलभूषण सत्य है। आपकी केवलज्ञान केवलदर्शन रूपी निज विभूति तीनलोक को जीतने वाली है। और अनन्त चतुष्टय रूपी लक्ष्मी तीनलोक का तिलक है। यह संसारी जीव अनादि काल से कर्मों के वश होकर महादुख के सागर में गिर रहे हैं। आप अनाथों के नाथ दीन बंधु करुणा निधान, जीवों को जिनराज का पद देओ। हे केवली भगवान! हम भव वन के मृग हैं, जन्म जरा मरण रोग शोक वियोग आधि व्याधि अनेक प्रकार के दुखों

को भोगते हुये अशुभ कर्मरूपी जाल में फंसे हैं, इसीलिये संसार के मोह जाल से छूटना अति कठिन हैं, आप ही छुडाने में समर्थ हो, हमको भी सद् बुद्धि दो, जिससे कर्मों का नाश हो हे नाथ! यह विषय वासनारूपी गहन वन में हम अज्ञानी जीव निजपुरी का मार्ग भूल रहे हैं। आप जगत के दीपक हो, हमको भी शिवपुरी का पंथ दर्शाओं, और जो आत्म बोधरूपी शांत भाव के प्यासे हैं, उनकी आप प्यास बुझाने वाले महा सरोवर हो, कर्मरूपी वनको जलाने में साक्षात दावानल अग्निरूप हो। विकल्प जालरूपी बर्फ से कम्पायमान जो जीव हैं उनकी शीत वेदना को दूर करने मे आप साक्षात सूर्य समान हो। हे सर्वज्ञदेव! सर्व भूतेश्वर, जिनेश्वर! आपकी स्तुति करने के लिये चार ज्ञान के धारक गणधर देव भी समर्थ नहीं है, तो और कौन होगा। हे प्रभो! आप सूर्य समान हो आपको हम बारम्बार नमस्कार करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितपद्मपुराण भाषावचनिका मे राम–लक्ष्मण विभीषण सुग्रीव सीता भामडल के पूर्वभव का वर्णन करनेवाला एकसौछहवॉ पर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-107

कृतान्तवक्र सेनापति का जिन-दीक्षा लेना

अथानंतर केवली भगवान के वचन सुन, संसार भ्रमण का महादुख,उससे डर कर जिनदीक्षा की अभिलाषा से रामचन्द्र का सेनापति कृतान्तवक्र श्रीराम से विनती करने लगा, हे देव! मैं इस असार संसार में अनादि काल से मिथ्यात्व के कारण भ्रमण करता हुआ महादुखी हुआ। अब मुझे मुनिव्रत धारण करने की इच्छा है, तब श्रीराम कहने लगे, जिन दीक्षा अति कठिन है, तू जगत का स्नेह छोड, कैसे दीक्षा धारण करेगा, महा शीत उष्ण भूख प्यासादि जो बाईस परिषह, कैसे सहन करेगा, दुर्जन लोगो के कटु वचन कांटों समान कैसे सहन करेगा, और अभी तक तूने कभी भी दुखों को सहन नहीं किया है। कोमल कर्णिका के समान तेरा शरीर, तू कैसे विषम ककरीली भूमि में शयन करेगा, गहनवन में कैसे रात्रि व्यतीत करेगा? उग्र उग्र तप कैसे करेगा, और पक्ष मास के उपवासों का पारणा दोषों को टाल कर दूसरे के घर में नीरस भोजन कैसे करेगा, तू महा तेजस्वी

शत्रुओं की सेना के शब्द नहीं सहन कर सकता था, तो अब कैसे नीच पुरुषों के उपसर्ग करने पर कैसे सहन करेगा, तब कृतान्तवक्र बोला, हे देव! जब मैं आपके स्नेह रूपी अमृत को ही छोडने को समर्थ हुआ हूं, तो मुझे और क्या कठिन है, जब तक मृत्युरूपी वज्र से यह शरीर न छिदे उससे पहले, मैं महा दुखरूपी यह भव वन अंधकार रूप, उससे मैं निकलना चाहता हूँ। जो आग से जलते हुये घर से निकलता है उसे दयावान पुरुष नहीं रोकते हैं। यह संसार के सुख क्षण भगुर असार महानिंद्य हैं, इनको छोडकर आत्मा का हित करूँगा। अवश्य इष्ट का वियोग होगा, इस शरीर के योग से सभी दुख हैं, इसलिये पुनः यह शरीर प्राप्त न हो ऐसा उपाय करूँगा। यह वचन कृतान्तवक्र के सुन श्रीराम के आँखों में आँसू आये, धीरे धीरे मोह को दबा कर कहने लगे, हे कृतान्तवक्र! मेरे जैसी विभूति को छोडकर तू संयमरूपी तप के लिये सन्मुख हुआ है, तुझे धन्य हो, अगर कदाचित् इस जन्म से तुझे मोक्ष नहीं हो और देव बनो तो संकट के समय से आकर मुझे संबोधन करना। हे मित्र! अगर तू मेरा उपकार जानता है, तो देवगति में जाकर मुझे भूल नहीं जाना। तब कृतान्तवक्र ने नमस्कार कर कहा, हे देव! जो आपकी आज्ञा होगी ऐसा मैं करूँगा। ऐसा कहकर अपने शरीर पर से सम्पूर्ण आभूषण उतारकर फेंक दिये, और सकलभूषण केवली को प्रणाम कर अन्तर एवं बाहर के परिग्रह को छोडकर कृतान्तवक्र ने मुनिव्रत को धारण किया। जो कृतान्तवक्र था, वह सौम्यवक्र हुआ। कृतान्तवक्र के साथ अनेक महाराजाओ ने वैराग्य धारण कर जिनधर्म की रुचि पूर्वक निर्ग्रन्थ व्रत को धारण किया। कोई श्रावको के व्रतो का पालन करने लगे, किसी को सम्यक्त्व प्राप्त हुआ। सभा के सभी जीव अपनी अपनी शक्ति अनुसार व्रतों को ग्रहणकर सकलभूषण केवलीभगवान को नमस्कार कर सुर असुर मनुष्यादि अपने अपने स्थान गये। कमल समान नेत्रों के धारी महापुरुष श्रीरामचन्द्रजी बलभद्र सकलभूषण स्वामी एवं सम्पूर्ण साधुओं को नमस्कार कर महाविनय सहित महासती महातपस्वी आर्यिकाओं मे श्रेष्ठ शिरोमणी आर्यिका सीताजी के पास आये। कैसीहै सीता आर्यिका? महा निर्मल, तपरूपी तेज को धारण करने वाली, जैसे घृत की आहुति से अग्नि की शिखा जाज्वल्य मान होती है, ऐसी सीता पापों को जलाने में साक्षात अग्नि स्वरूप है, आर्यिकाओं के मध्य में बैठी देखी। जैसे ताराओं के मध्य में दैदीप्यमान चन्द्रमा, आर्यिका के व्रतों को धारणकर अत्यन्त निश्चल एकाग्र मन से तप में लीन है। सम्पूर्ण वस्त्र

आभूषणों का त्यागकर दिया है, फिर भी श्री ही धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, लज्जा इनकी शीरोमणि ही है। श्वेत वस्त्र को धारणकर ऐसी लगे, जैसे मंद पवन से उठती लहरों के फैन, ऐसी पवित्र नदी ही है। और जैसे निर्मल शरद पूर्णिमा की चांदनी समान सुन्दर आर्यिका रूपी किरणो को प्रफुल्लित करने वाली दिखती है महा वैराग्य सहित मुक्तिवान जिनशासन की देवता ही है। महा गम्भीर, परम शांत, प्रसन्न मुख, सम्पूर्ण वस्त्राभूषण एवं श्रृंगार का त्याग करके भी लक्ष्मी समान रूपवान ऐसी सीता को देख आश्चर्यचकित होकर रामचन्द्रजी कल्पवृक्ष समान कुछ समय निश्चल एकाग्र मन होकर खडे खडे देखते रहे। पुनः जैसे शरद की मेघ माला के समीप कंचन गिरी सुन्दर लगे ऐसे श्रीराम आर्यिकाओं के समीप सुन्दर लगे, श्रीराम मन मे चिन्ता करते हैं कि देखो यह साक्षात चन्द्रकिरण समान भव्य जीवों को प्रफुल्लित करती है। महा आश्चर्य है कि महासती सीता अति कायर स्वभाव मेघ के शब्दों से डरती, सो अब महातपस्विनी भयंकर वन में कैसे भय को प्राप्त नहीं होगी। नितम्ब के भार से धीरे धीरे गमन करने वाली, महा कोमल, शरीर, तप से सूख जायेगी, कहॉ यह कोमल सुन्दर शरीर और कहाँ यह दुर्धर जिनराज के मार्ग का तप, यह सदा मन वांच्छित मनोहर आहार को करने वाली अब कैसे यथालाभ भिक्षा से, समय व्यतीत करेगी। यह पुण्याधिकारिणी रात्रि मे स्वर्ग के विमान समान सुन्दर महलों में कोमल सेजपर सोने वाली, और बीन बांसुरी मृदंगादि के मंगल वीणा के शब्दों से नींद लेती, वह अब भयकर वन में कैसे कंकर पत्थरो में एवं चींटी मच्छरों आदि जानवरों के बीच में कैसे रात्रि पूर्ण करेगी। वन में डाभ की तीक्षणता एवं सिंह व्याघ्रादि से डरने का भय। देखो मेरी भूल मैं अज्ञानी मूढ लोगों के अपवाद से, मैंने महासती पतिव्रता शीलवती सुन्दरी मधुर भाषिणी घरसे निकाली, इस प्रकार चिन्ता से दुखी होकर श्रीराम सोचने लगे।

फिर केवली के वचनों को यादकर सन्तोष को धारण कर धैर्यता पूर्वक आसुओं को पोछ शोक रहित होकर महाविनय सहित सीता आर्यिका को नमस्कार किया। लक्ष्मण भी दुखी मन होकर विनय सहित हाथजोड नमस्कार कर राम सहित सीता की स्तुति करने लगे। हे भगवती! तू धन्य है! महासती पुज्य वन्दनीय है। स्वच्छ एव सुन्दर है। तेरा मन, जैसे धरती, सुमेरूपर्वत को धारण करती है, ऐसा तुमने जिनराज का धर्म धारण किया। तुमने जिन वचनरूपी अमृत को

पिया, उससे आप भवरोग को दूर करोगी, सम्यक्त्व, ज्ञान चारित्ररूपी जहाज में बैठकर, संसाररूपी समुद्र को पार करोगी, जो पतिव्रता निर्मल परिणामी है, उनकी यही चर्या है। अपना जीवन सुधारकर दोनों कुल एवं दोनों वंश को उज्ज्वल करें। आपने आत्म कल्याण का मार्ग पवित्र मन से प्राप्त किया। हे उत्तम! कठिन नियमों का पालन करने वाली, जगत में श्रेष्ठ! हमारे से जो कोई अपराध हुआ है, वह आप क्षमा करना। ससारी जीवों के परिणाम अज्ञानी अविवेक रूप होते हैं। सो तुमने जिन मार्ग को अगीकार किया, संसार की मायाजाल को अनित्य जाना और परम जैनधर्म आनन्द रूप साधु पद जीवों को कठिन एवं दुर्लभ है, सो आपने ग्रहण किया। अज्ञानता से हमारे द्वारा जो कष्ट हुये, उन्हें आप क्षमा करना, इस प्रकार राम लक्ष्मण दोनो भाई जानकी माता की स्तुतिकर लव अंकुश को आगे करके अनेक विद्याधर बडे बडे राजाओं सहित अयोध्या नगरी मे प्रवेश करने चले। जैसे देवो सहित इन्द्र अमरावती में प्रवेश करे। और सम्पूर्ण रानियॉ अनेक प्रकार के वाहनो पर बैठकर परिवार सहित नगर में प्रवेश करने लगी। राम को नगर मे प्रवेश करते देख अपने अपने मन्दिर महल भवनों में बैठी स्त्रीयॉ परस्पर चर्चा करने लगी यह श्री राजा रामचन्द्रजी महा शूरवीर हैं, शुद्ध हैं, पवित्र है मन उनका महा विवेकी। मूर्ख लोगों के अपवाद से ऐसी महा पतिव्रता महासती महारानी पटरानी को अपने हाथो से ही खोई। तब कोई कहने लगी जो निर्मल कुल मे जन्म लिया शूरवीर क्षत्रिय हैं उनकी यही रीति है, किसी भी प्रकार से कुल को कलंक नहीं लगाते। लोगो के सन्देह को दूर करने के लिये श्रीबलदेव राजारामने अपनी प्रिय रानी को दिव्य अग्नि में प्रवेश कराया वह महापवित्र निर्मल आत्मादिव्य अग्नि मे तप कर सच्ची होकर लोगो के सन्देह को दूरकर जिनव्रत की आर्यिका दीक्षा को धारण किया। तब कोई कहती है–हे सखी! जानकी बिना, राजा राम कैसे दिखते है जैसे–बिना चादनी के चाद और बिना दीप्ति का सूर्य। तब किसी ने कहा श्रीराम तो अपने आपही महाज्योतिवान है, इनकी ज्योति पराधीन नहीं। तब कोई स्त्री पुन कहने लगी, सीता का मन वज्ररूप है, इसीलिये पुरुषोत्तम बलभद्र पति को छोडकर आर्यिका दीक्षा धारण की। तब किसी ने कहा–धन्य है सीता महासती जो कीचडरूपी गृहस्थ जीवन को छोडकर आत्म कल्याण किया। तब कोई कहने लगी, ऐसे महासुन्दर रूपवान कोमल दोनों राजकुमार महाधीर वीर लव-अकुश को कैसे छोडे होगे, स्त्री का प्रेम

पति से छूटे परन्तु अपने जाये पुत्रो को नहीं छोड सकती है। तब कोई कहने लगी—यह दोनों राजकुमार परम प्रतापी हैं इनका माता क्या करेगी, इनकी सहायता करने वाला इनका पुण्य ही है। सभी जीव अपने अपने कर्मों के आधीन हैं। इस प्रकार नगर की नर नारी बाते करते रहे। महासती सीता के कष्टों का एव दुखों का वर्णन पढकर सुनकर ससारी जीवों को अपने कष्ट संकट रोगों को सहन करने की शक्ति अपने आप में जागृत होती है। जानकी की कथा किसको आनन्द कारिणी नहीं होगी? यह सब राम के दर्शनों की अभिलाषा से राजा राम को देखते देखते तृप्त नहीं हुये। कोई लक्ष्मण की ओर देखकर कहते हैं, यह नरोत्तम नारायण लक्ष्मीवान अपने प्रताप से पृथ्वी को वश किया है, ये चक्र के धारक, उत्तम राज्य लक्ष्मी के स्वामी लक्ष्मण शत्रुओ की स्त्रीयों को विधवा करने वाले, श्रीराम के आज्ञाकारी है। इस प्रकार दोनों भाई राम लक्ष्मण लोगों के प्रंशसा के पात्र अपने राज्य भवन में प्रवेश किया। जैसे इन्द्र स्वर्ग मे प्रवेश करें यह बलदेव श्रीरामका चरित्र जो निरतर धारण करते, पढते, पढाते, सुनते, सुनाते और उनके गुणों का वर्णन करते, उनके आचरण को अपने हृदय मे उतारते वह अविनाशी लक्ष्मी को प्राप्त करते है। एव ससार मे सूर्य समान सभी मनोवांछित फल को प्राप्त करते हैं।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे कृतान्तवक्र के वैराग्य का वर्णन करनेवाला एकसौ सातवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-108

लवण अंकुश के पूर्वभव का वर्णन

अथानंतर राजा श्रेणिक ने गौतमस्वामी के मुख से श्रीरामचन्द्रजी के चारित्र को सुनकर मन में सोचने लगे की, सीता ने लव अंकुश दोनों अपने पुत्र राजकुमारों का मोह छोडा, तब वह दोनों ने माता के वियोग को कैसे सहन किया होगा, ऐसे पराक्रम के धारी, पुण्यशाली, उनको भी, इष्टवियोग, अनिष्टसंयोग होता है, तो दूसरों की क्या बात, यह विचारकर गणधरदेव से पूछा—हे प्रभो! मैंने

आपकी दिव्यवाणी से राम लक्ष्मण के चरित्र को सुना, अब लव अंकुश का चरित्र सुनना चाहता हूँ। तब इन्द्रभूति गणधर कहने लगे, हे राजन! काकन्दी नगरी में राजा रतिवर्धन रानी सुदर्शना उनके दो पुत्र, पहला प्रियंकर, दूसरा हितंकर। और मंत्री सर्वगुप्त राज्य लक्ष्मी का धुरन्धर, वह अन्यायी, स्वामी द्रोही, राजा को मारने का उपाय करने लगा। सर्वगुप्त की स्त्री विजयावती पापिनी वह राजा से भोग करना चाहती है, और राजा शीलवान, परस्त्री का त्यागी, उसकी माया जाल में नहीं फंसा, तब इसने राजा से कहा कि मत्री आपको मारना चाहते है। तब राजा ने इसकी बात को नहीं माना, और अपना पति मंत्री सर्वगुप्त को जाकर कहा कि राजा तुम्हें मारकर मुझे हरण करना चाहते है। तब दुष्टमंत्री ने सभी रक्षक सामन्तों को राजा से अलग कर दिये। राजा शयन कक्ष में सो रहा था, तब मंत्री ने राजा को मारने के लिये रात्रि के समय शयनकक्ष में अग्नि लगा दी, राजा रतिवर्धन प्रतिसमय सावधान रहता था, उसने महल में गुप्त सुरंग बनवा रखी थी तब वह सुरग के मार्ग से, दोनों पुत्र एवं रानी सहित निकल कर, काशी का राजा कश्यप, उग्रवशी, राजा रतिवर्धन का आज्ञाकारी सेवक उसके नगर मे राजा गुप्त रूप से चले। इधर सर्वगुप्त मंत्री राजा रतिवर्धन के सिहासन पर बैठकर सबको आज्ञा देने लगा। और राजा कश्यप के पास भी पत्र लिखकर दूत भेजा कि तुम आकर मुझे प्रणाम करो, और मेरी आज्ञा स्वीकार करो। तब कश्यप ने कहा, हे दूत! सर्वगुप्त! स्वामी द्रोही है वह दुर्गति के दुखों को भोगेगा, स्वामीद्रोही का नाम नहीं लेना, तो उसकी सेवा एव आज्ञा स्वीकार कैसे करें, उसने राजा को दोनों पुत्र एव रानी सहित सबको अग्नि में जलाया है। वह स्वामीघात, स्त्रीघात और बालकघात इन महादोषो को उसने किया है। इसलिये इस पापी की आज्ञा का पालन कैसे करना, इसका मुख नहीं देखना, सब लोगों के सामने, उसका सिर काटूँगा, और अपने स्वामी का बदला लूंगा। ऐसा कहकर दूत को पुनः भेज दिया, दूत ने जाकर सर्वगुप्त को जैसा का तैसा बताया, तब सर्वगुप्त अनेक राजाओ को साथ लेकर महासेना सहित कश्यप के साथ युद्ध करने को आया। आते ही कश्यप का देश घेर लिया, काशी के चारों तरफ सेना ने डेरा जमाया। फिर भी कश्यप को सन्धि करने की इच्छा नहीं, युद्ध करने का ही निश्चय किया। राजा रतिवर्धन रात्रि में काशी के वन में आये, और एक द्वारपाल को कश्यप के पास भेजा, और द्वारपाल ने राजा कश्यप के पास जाकर

राजा रतिवर्धन के आने का समाचार कहा। यह सुनकर राजा कश्यप बहुत प्रसन्न हुआ और कहा, महाराज कहॉ है, महाराज कहॉ है, यह बार बार कहने लगा। तब द्वारपाल ने कहॉ कि महाराज वन मे विराजमान है। तब यह धर्मात्मा स्वामी भक्त प्रसन्न होकर परिवार सहित राजा के पास गया, राजा की आरती पूजा कर नमस्कार करके चरणो में गिर गया और विनतीकर जय जयकार के साथ नगर मे लेकर आये, नगर को सजाया और नगर मे लोगों से प्रशसा हुई की यह राजा रतिवर्धन किसी से नहीं जीता जाये ऐसा राजा रतिवर्धन जयवत हो, राजा कश्यप ने अपने स्वामी के आने का महा उत्सव किया। और सब सेना के सामंतो को कहलवाया कि हमारे स्वामी विद्यमान है और तुम स्वामीद्रोही से मिलकर स्वामी से युद्ध करोगे यह क्या तुम्हारा कार्य उचित है, तब सभी योद्धा सर्वगुप्त को छोडकर अपने स्वामी राजा रतिवर्धन के पास आये। और युद्ध मे सर्वगुप्त को पकड लिया एव काकंदी नगरी का राज्य पुन रतिवर्धन का हुआ, और राजा तो जीवित है ऐसा सुनकर सबको बहुत खुशी हुई। और महा जन्मोत्सव मनाया, दान दिया, सामतो का सम्मान किया, भगवान की विशेष पूजा करवायी, कश्यप राजा का बहुत सम्मान किया। बहुत बधायी देकर घर के लिये विदाई ली। वह राजा कश्यप काशी नगरी मे लोकपाल समान राज्य करने लगा। और सर्वगुप्त लोक निंदा के कारण मरण समान हुआ, कोई भी उसका मुख देखना नहीं चाहता, तब सर्वगुप्त ने अपनी स्त्री विजयावती का दोष बताया कि इसने मेरे और राजा के मन मे भेद प्राप्त कराया। यह वृतान्त सुन विजयावती अपने पति से द्वेष करने लगी, और सोचा कि, मै न तो राजा की हुई और न पति की रही। मिथ्या तप करके राक्षसी हुई।

राजा रतिवर्धन ने संसार शरीर भोगों से उदास होकर सुभानुस्वामी के निकट मुनिव्रत की धारण किया। और वह राक्षसी रतिवर्धन मुनिराज पर उपसर्ग करने लगी। मुनिराज ने शुद्धोपयोग एव शुक्लध्यान से केवलज्ञान को प्राप्त किया। प्रियंकर, हितंकर दोनों राजकुमार पहले इसीनगर में दामदेव विप्रके श्यामली स्त्री उसके सुदेव वसुदेव नाम के दो पुत्र हुये। वसुदेव की स्त्री विश्वा और सुदेव की स्त्री प्रीयगु इनका गृहस्थ जीवन सुख रूप था। श्रीतिलक मुनिराज को इन्होंने आहारदान दिया। उस आहार दान के प्रभाव से दोनों भाईयो ने स्त्रीयों सहित उत्तरकुरु भोगभूमि मे जन्म लिया। तीनपल्य की आयु भोगकर अन्त

में मरणकर दूसरे स्वर्ग में देव हुये, वहाँ से चयकर सम्यग्दर्शन ज्ञान से मडित पापों को नाश करने वाले प्रियंकर हितंकर हुये। मुनि होकर दोनों ग्रैवेयक मे गये। वहाँ से चयकर लव अंकुश हुये। महाभव्य तद्भव मोक्ष गामी। और राजा रतिवर्धन की रानी सुदर्शना प्रियंकर हितंकर की माता का पुत्रों में महा अनुराग था। वह पति और पुत्रों के वियोग से आर्त्तध्यान से मरकर अनेक योनियों में भ्रमण करने के पश्चात् किसी जन्म में पुण्य उत्पन्न किया जिससे यह सिद्धार्थ क्षुल्लक हुआ। धर्म में अनुरागी सर्व विद्याओं में दक्ष, वह पूर्वभव के स्नेह से लव अंकुश को पढाया। और ऐसी निपुण शिक्षा दी, जो देवों से भी जीते नहीं जाते। यह कथा गौतमस्वामी ने राजाश्रेणिक से कही। और कहा कि हे नृप यह संसार असार है, इस जीव के कौन कौन माता पिता नहीं हुये। संसार के सभी सम्बन्ध झूठे हैं, एक धर्म का ही सम्बन्ध सत्य है इसीलिये विवेकी जीवों को धर्म का ही प्रयत्न करना चाहिये। जिससे ससार के दुखों से छुटेगे। सम्पूर्ण कर्म महा दुख दायक दुख को बढाने वाले उनको छोडकर जिनराज का कहा हुआ तप उसको धारणकर सूर्यकी कान्तिको जीतकर साधु मुक्तिपुरी को जाते है,

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे लवअकुश के पूर्वभव का वर्णन करनेवाला एकसौअठवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-109

सीता का महाउग्र तपश्चरण करना और समाधिमरण कर स्वर्ग जाना

अथानंतर महासती सीता, पति, पुत्र एव राज्य वैभव को छोडकर, कहाँ कहाँ तप किया वह सुनों, कैसी है सीता? जिसकी लोक में यशकीर्ति प्रसिद्ध हुई, जिस समय सीता हुई वह श्रीमुनिसुव्रतनाथ स्वामी का समय था। वह बीसवेंतीर्थंकर महा शोभायमान भव भ्रमण को दूर कराने वाले, जैसा अरहनाथ और मल्लिनाथ का समय था वैसा ही मुनिसुव्रतनाथ का समय। उसमें सकलभूषण केवली लोकालोक को जानने वाले पृथ्वीपर विहार करते हैं। अनेक जीवों ने महाव्रत एवं

अणुव्रतों को धारण किया, सम्पूर्ण अयोध्या के लोग जिनधर्म में निपुण विधिपूर्वक गृहस्थ जीवन का धर्म पालन करने लगे। सम्पूर्ण प्रजा सकलभूषण केवली की वाणी मे श्रद्धावान, जैसे सभी राजा चक्रवर्ती की आज्ञा का पालन करते है। ऐसे भगवान धर्मचक्री उनकी आज्ञा भव्यजीव पालते हैं। राम का राज्य महा धर्म की वृद्धि करने वाला उद्योत रूप। उस समय बहुत लोग विवेकी साधु सेवा में तत्पर थे, देखो सती सीता अपनी मनोज्ञता, सुन्दरता से देवांगनाओ के रूप को जीतती हुई, तप से ऐसी हो गई, जैसे जली हुई माधुरी लता ही है। महा वैराग्य से पूर्ण अशुभ भावों से रहित, स्त्री पर्याय की बार बार निंदा करती हुई, महातप करने लगी, धूल से केश मलिन हो रहे है, स्नान एव शरीर के संस्कार से रहित महातप सहित अनेक संकटों को सहन करने में तत्पर, पसीने से घूल मिट्टी आकर चिपक रही है, उससे शरीर मलीन हो रहा है। बेला-तेला पक्ष मासादि अनेक उपवासों से शरीर को क्षीण किया, दोषो को टालकर शास्त्र प्रमाण पारणा करती थी, शील व्रत गुणों मे विशेष अनुरागिणी आत्मज्ञान से अत्यन्त परिणाम निर्मल शात हुये हैं। मन और इन्द्रियो को वशकर ऐसा महाउग्र तप किया, वह ओरो से भी नहीं बनता। मास और रुधिर से रहित शरीर उसका, अस्थि ओर नसो का जाल प्रगट दिखने लगा, जैसे काठ की पुतली ही है। सूखी नदी के समान दिखने लगी, चारहाथ प्रमाण पृथ्वी को देखकर चलती, महा दयावान शात मुद्रा, प्रशान्त वदन, गम्भीर तप का कारण जो शरीर उसकी शाति के लिये, विधिपूर्वक भिक्षा वृत्ति से आहार करती। ऐसा महातप किया कि शरीर का रूपरग ओर ही हो गया। अपना पराया कोई किसी को नहीं जानती। ऐसी यह सीता उसे ऐसा तप करती देख सम्पूर्ण आर्यिकाये महासती सीता आर्यिका की ही कथा करती कहती कि हमने सीता आर्यिका का ही ऐसा तप देखा जो कोई नहीं कर सकता, यह तप सबके लिये दुर्लभ है। सभी आर्यिकाओं पर यह सीता मुख्य आर्यिका श्रेष्ठ शिरोमणी हुई। इस प्रकार बासठ वर्ष तक सीता ने महा तप किया। और तैतीस दिन आयु के शेष रहे, तब अनशन व्रत को धारणकर परम आराधना आराधकर, समाधि पूर्वक मरणकर शरीर को छोड अच्युत स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुई।

शम्बु और प्रद्युम्न कुमार के पूर्वभव

गौतमस्वामी कहते है—हे श्रेणिक! जिनधर्म की महिमा देखो यह प्राणी स्त्री पर्याय मे उत्पन्न होकर तप के प्रभाव से देवों का स्वामी सीता का जीव अच्युत

स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ। वहाँ मणियो की कांति से प्रकाश किया है, आकाश मे ऐसे विमान में उत्पन्न हुई। मणि कंचनादि महाद्रव्यों सहित परम अद्भुत सुमेरू के शिखर समान ऊँचा है, वहाँ पर ऋद्धियों से सम्पन्न प्रतीन्द्र हुआ। हजारों देवॉगनायें उसके नेत्रो का आश्रय, जैसे ताराओ के मध्य चन्द्रमा लगे, ऐसे प्रतीन्द्र सुन्दर लगा। और भगवान की पूजा करता मध्यलोक मे आकर तीर्थों की यात्रा, साधुओं की सेवा करता, और तीर्थंकरों के समोशरण में गणधरों के मुख से धर्मश्रवण करता, यह सुन गौतमस्वामी से राजा श्रेणिक ने पूछा—हे प्रभो! सीता का जीव सोलहवें स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ, उस समय वहाँ इन्द्र कौन था, तब गौतमस्वामी ने कहा, उस समय वहाँ राजा मधु का जीव इन्द्र था, उसके निकट सीता का जीव प्रतीन्द्र हुआ। वह मधु का जीव नेमिनाथभगवान के समय अच्युतेन्द्रपद से चयकर वासुदेव कृष्ण की रानी रूकमणी उनके प्रद्युमन नाम का पुत्र हुआ, और उसका भाई कैटभ जाम्बूवती, श्रीकृष्ण की रानी, उसके शम्बू नाम का पुत्र हुआ। तब श्रेणिकने गौतमस्वामी से विनती की कि—हे प्रभो! मैं आपके वचनरूपी अमृतको पीता पीता तृप्त नहीं हुआ जैसे लोभी जीव धन से तृप्त नहीं होता। इसलिये मुझे मधु और उसके भाई कैटभ का चरित्र कहो। तब गणधरदेव ने कहा, एक मगधदेश सम्पूर्ण धान्यो सहित वहाँ धर्म अर्थ काम मोक्ष के साधन अनेक पुरुषों को प्राप्त हुये है। भगवान के सुन्दर चैत्यालय है, अनेक नगर ग्राम सहित वह देश सुशोभित वहाँ नदियों के तटपर पर्वतोपर वनमे जगह जगह साधुओ के सघ विराजमान है, राजा नित्य उन साधुओं के दर्शन करता था। उस देश मे एक शालीनाम का गाव नगरसमान विशाल, वहाँ एक सोमदेव ब्राह्मण अग्निला ब्राह्मणी, उसके अग्निभूति, वायुभूति पुत्र वे दोनों भाई लौकिक शास्त्रो मे प्रवीण, पठन, पाठन, दान, प्रतिग्रह मे चतुर, कुल ओर विद्या के अभिमान से मानी होकर मन मे ऐसा जानता कि हमारे से कोई अधिक ज्ञानी नहीं है। जैन धर्म से रहित, रोग समान इन्द्रियो के भोगो को अच्छा जानता। एक दिन यहाँ नन्धिवर्धनस्वामी अनेक मुनिराजों सहित वन में आकर विराजमान हुये। बडे आचार्य अवधिज्ञान से सम्पूर्ण मूर्तिक पदार्थो को जानते, वह मुनियों का आगमन सुन गॉव के सभी लोग दर्शन करने आये, और अग्निभूति एवं वायुभूति ने किसी से पूछा यह सभी लोग कहाँ जा रहे हैं। तब उन्होंने कहा यहाँ वन में नन्धिवर्धन मुनिराज आये हैं, उनके दर्शनों को सभी लोग जा रहे हैं। यह सुनकर दोनों भाई क्रोधित हुये। और कहने लगे कि हम वादविवाद कर

साधुओं को जीतेगें, तब इनके माता पिता ने मना किया तुम साधुओं से विवाद नहीं करो, फिर भी इन्होंने नहीं मानी। और साधुओं से विवाद करने गये। तब इनको आचार्य श्री के निकट जाते देख, एक सात्विक मुनिराज अवधिज्ञानी इनको पूछने लगे, तुम कहॉ जा रहे हो तब दोनो भाईयों ने कहा कि तुम्हारे गुरु के पास जाकर उनसे वाद विवाद कर जीतेंगें। तब सात्विक मुनिराज ने कहा, कि हमारे से चर्चा करो। तब ये क्रोध पूर्वक मुनिराज के पास बैठे और कहा कि तू कहॉ से आया है तब मुनिराज ने कहा कि—तुम कहॉ से आये हो, तब वे क्रोध से कहने लगे, तूमने यह क्या पूछा, हम तो इसी गॉव से आये हैं। कोई शास्त्र की चर्चा करो। तब मुनिराज ने कहा कि यह तो हम जानते है, कि आप शालीगांव से आये हो और तुम्हारे पिता का नाम सोमदेव, माता का नाम अग्निला और तुम दोनो अग्निभूति वायुभूति ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुये हो। परन्तु हम तुम्हारे से यह पूछते हैं, कि अनादिकाल से भ्रमण करते हुये अब इस जन्म मे कौनसी गति से निकलकर आ रहे हो तब इन दोनों भाइयो ने कहा कि यह पूर्वभव की बात को कौन जानेगा तब मुनिराज ने कहा हम जानते हैं तुम सुनो पूर्व भव मे तुम दोनो भाई इसी गांव के पास वन मे श्याल थे। और इसी गाव में एक बहुत दिन का बासी पामर पितहड ब्राह्मण वह खेत मे सूर्य अस्त समय भूख से व्याकुल नाडी आदि उपकरण वहीं छोडकर घर आ गया, अंजनपर्वत के समान काले काले बादलों की गडगडाहट एव बिजलियों की कडकडाहट और भयंकर मेघ वर्षा, सात दिन तक झडीरूप से बरसती रही, इसी से वह पामर वन मे नहीं आया, वहॉ पर वे दोनो श्याल भूख से व्याकुल होकर, अंधेरी रात्रि में भोजन के लिये भ्रमणकर रहे थे, तब पामर के खेत मे गीली नाडी कीचड से लगी देखी, भूख के कारण उस नाडी का भक्षण किया, उससे पेट में भयकर दर्द हुआ, और दोनों मर गये। अकाम निर्जरा से तुम सोमदेव के पुत्र हुये। और सात दिन पश्चात पामर खेत में आया, तब वहाँ उसको जातिस्मरण हुआ, तभी इसने मौन ले लिया, कि मैं किनको क्या कहूँ कि इस भव का पिता तो मेरा पूर्वभव का पुत्र और माता पूर्वभव की पुत्र वधु, इसलिये नहीं बोलना ही अच्छा है। वह पामर का जीव मौन लेकर यहाँ ही बैठा है, ऐसा कहकर मुनिराज पामर के जीव से बोले, कि तुम पुत्र के पुत्र हुये वह आश्चर्य नहीं है, संसार का ऐसा ही चरित्र हैं, जैसे नृत्यकार अनेक प्रकार के रूप बनाते एवं नृत्य करते

ऐसे यह जीव अनेक पर्याय मे अनेक भेष बनाकर नाचते हैं, राजा से रंक और रंक से राजा होता हैं, स्वामी से नौकर, नौकर से स्वामी, पिता से पुत्र, पुत्र से पिता, माता से पत्नी, पत्नी से माता इस प्रकार यह संसार मशीनवत् चलता रहता है। ऐसा संसारी जीवों का स्वरूप जानकर, हे बालक! अब तुम मौन छोडो और इस जन्म के पिता है, उसको पिता और माता को माता कहो, पूर्वभव का क्या व्यवहार करना।

यह वचन मुनिराज के सुनकर वह ब्राह्मण प्रसन्न होकर मुनिराज की तीन प्रदक्षिणा लगाकर नमस्कार कर गुरु के चरणो मे गिर गया। जैसे पवन से वृक्ष गिर पडे, और मुनिराज से विनती करने लगा हे प्रभो! आप सर्वज्ञ हो, तीनलोक की बात को जानते हो, इस संसार सागर मे मै डूब रहा हूँ, आप मुझे दया कर निकालो। मुझे ज्ञान दो, मेरे मन की बात आपने सब जानी, अब मुझे दीक्षा दो, ऐसा कहकर सम्पूर्ण परिवार का त्यागकर मुनिव्रत को ग्रहण किया। यह पामर का चरित्र सुन अनेक लोग मुनि बने, कोई श्रावक बने, और इन दोनो भाईयों की पूर्वभव की चमडी लोग लेकर आये, वह इन्होने देखी, लोगों ने हसकर कहा कि पूर्वभव में यह मास भक्षण करने वाले श्याल थे, और अब दोनों भाई मूर्ख जो मुनिराजों से विवाद करने आये। ये महामुनि तपस्वी शुद्धभाव, सबके गुरु, अहिंसा महाव्रत के धारी, इनके समान और कोई नहीं है, यह महामुनि, महाव्रत रूपी दिगम्बर दीक्षा के धारी, क्षमारूपी यज्ञोपवीत पहने, ध्यानरूपी अग्नि से हवन करने वाले, महाशांत परिणामी, मुक्ति के साधन में लीन, सम्पूर्ण आरम्भ परिग्रह से रहित, महातपस्वी है। अगर बनावटी कोई अपने मुह से कहता है, हम ब्राह्मण हैं, परन्तु क्रिया नहीं करता, जैसे कोई मनुष्य इस लोक मे सिह या देव कहलाता, परन्तु वह सिंह और देव नहीं। ऐसे यह नाम मात्र का ब्राह्मण, परन्तु इसमें ब्राह्मण की कोई क्रिया नहीं। मुनिराज धन्य है, परम संयमी, महाक्षमावान, जितेन्द्रिय, आत्मा में रमण करनेवाले निश्चय से ये ही ब्राह्मण हैं। ये साधु महाभद्र परिणामी भगवानके भक्त, महातपस्वी, यतिराज, धीरवीर, मूलगुण, उत्तरगुणो के पालक। इनको ही परिव्राजक कहते हैं, क्योकि वे संसार को छोडकर मुक्ति को प्राप्त होते हैं। ये निर्ग्रन्थ गुरु अज्ञान अंधकार को दूर करने वाले, तप से कर्मो की निर्जरा करते हैं। राग द्वेषादि को क्षीणकर महाक्षमावान पापों के नाशक, इसलिये इनको क्षपक भी कहते हैं। यह संयमी कषाय रहित शरीर से निर्मोह दिगम्बर योगीश्वर

ज्ञानी ध्यानी पंडित निष्पृह, ऐसे संत ही सदा पूज्य नमस्कार करने योग्य हैं। ये निर्वाण की साधना करते हैं, इसलिये इनको साधु कहते है। पंचाचार-दर्शनाचार, ज्ञानाचार, तपाचार, वीर्याचार, चारित्रचार इनका स्वयं आचरण पालन करते अथवा दूसरों को आचरण में लगाते एव पालन कराते। इसलिये इनको आचार्य कहते हैं। और जो गृहस्थ थे उन्होंने घर का त्याग किया इसलिये अनगारी हुये। शुद्धभिक्षाको ग्रहण करनेवाले, इसलिये उनको भिक्षुक कहते हैं। कायक्लेश तपकर अशुभ कर्म को छोड, ध्यान करनेवाले, तप करते हुये खेद नहीं मानते इसलिये श्रमण कहलाते। आत्म स्वरूप को प्रत्यक्ष अनुभव में लाते इसलिये मुनि कहलाते। रागद्वेषादि रोगों को दूर करने का प्रयत्न करते एवं कराते हैं इसलिये उन्हे यति कहते हैं। इस प्रकार लोगो ने साधुओं की स्तुति की। और ये दोनो भाई अग्निभूति, वायूभूति साधुओ के निंदा करते हुये घर गये। और पापी रात्रि में मुनिराजों को मारने के लिये वन मे आये। वे सात्विक मुनिराज, अपरिग्रही, सघ को छोडकर अकेले श्मशान भूमि मे पवित्र स्थानपर कायोत्सर्ग मुद्रा मे ध्यान करते थे। वह वन रीछ, व्याघ्र, सिहादि दुष्ट जीवों से भरा हुआ है। राक्षस भूत पिशाचों से भरा नागो का निवास है, भयंकर अधकार रूप वहॉ शुद्ध शिला, जीव जन्तु रहित उसपर ध्यान करते हुये खडे मुनिराजको उन दोनो पापियो ने देखा। दोनो भाई खड्ग निकाल कर क्रोधित होकर कहने लगे, जब तो तुझे लोगो ने बचाया, अब यहॉ कौन बचायेगा, हम पंडित पृथ्वीपर प्रसिद्ध श्रेष्ठ प्रत्यक्ष देवता, और तू निर्लज्ज हमको श्याल कहता है, ऐसा कहकर दोनो होठ डसते हुये दया रहित क्रोध पूर्वक मुनिराज को मारने के लिये तैयार हुये। तब वन का रक्षकदेव जो यक्ष, उसने देखकर मन मे सोचा कि देखो यह ऐसे निर्दोष ध्यानी साधु, शरीर से निर्ममत्व, उनको मारने के लिये ये आये है। तब यक्ष ने इन दोनो भाईयो को कील दिया, इससे ये जैसे के वैसे खडे रह गये। चलना फिरना नहीं कर सके। प्रातः काल सब लोगो ने आकर देखा तो यह दोनो मुनि के दोनों तरफ किले हुये खडे है, एव इनके हाथो मे नगी तलवार है। ऐसा देखकर सभी लोग इनको धिक्कार धिक्कार करने लगे। यह दुराचारी पापी अन्यायी मुनिराज को मारने के लिये आये इनके समान और कोई पापी नहीं। और ये दोनों अग्निभूति वायुभूति सोचने लगे कि यह सब धर्म का प्रभाव है। हम पापी थे इसीलिये बलात्कार कीले गये। हमको यहॉ स्थावर समान कर दिये। अब इस सकट से बचें तो श्रावक के व्रतों को धारण करेगें। तभी

उसी समय इनके माता पिता आये और बार बार मुनिराज को नमस्कार कर विनती करनेलगे हे देव! यह मेरे कपूत पुत्र हैं। इन्होंने बहुत बुरा कार्य किया, आप दयालु हो इसलिये इन्हें जीवन दान दो। तब साधु बोले हमारे किसी से भी क्रोध नहीं, हमारे सभी प्राणी मित्र हैं। तभी यक्ष देव क्रोध से बोला कि, जो प्राणी साधुओ की निंदा एवं उपसर्ग करेंगे, वे दंड के पात्र होगे। जैसे स्वच्छ दर्पण में टेढा मुखकर देखेगा, तो स्वयं का ही मुख टेढा दिखेगा। ऐसे साधुओ को जैसे भावों से देखते हैं, वैसा ही फल प्राप्त करते हैं। जो मुनियों की हंसी करते, वह बहुत दिन तक रोते रहेंगे, और जो मुनिराज का बध करते, वह अनेक जन्म तक कुमरण करेगें, द्वेष करने वाले पाप उत्पन्न कर भव भव तक दुख भोगेंगें, जैसा कर्म करेंगें वैसा फल पायेंगे। यक्ष कहते हैं, हे विप्र! तेरे पुत्रों के दोषो से उनको मैने कीले हैं। विद्या के मान से गर्वित मायाचारी दुराचारी संयमियों के घातक हैं। ऐसा यक्ष ने कहा तब सोमदेव ब्राह्मण हाथजोड साधुराज की स्तुति करता हुआ रोने लगा। परम दयालु मुनिराज यक्ष से कहते हैं। हे रक्षक यक्षदेव! यह बाल बुद्धि है इनका अपराध तुम क्षमा करो। आप जिनशासन के रक्षक हो जिनधर्म की प्रभावना करते हो, इसीलिये मेरे कहने से इन्हे आप क्षमा करो। तब यक्ष ने मुनिराज के कहने से इन दोनों भाईयों को छोडा, तब दोनों भाईयों ने मुनिराज की प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया, और कहा कि साधुओं के व्रतो को धारण करने मे हम असमर्थ है, इसीलिये सम्यक्त्व सहित श्रावक के व्रतों को धारणकर जिनधर्मपर दृढ श्रद्धा की। और इनके माता पिताओं ने व्रत लेकर छोड दिया, वे अव्रत के कारण मरकर पहले नरक में गये और वे दोनों पुत्र अग्निभूति वायुभूति जिन श्रद्धानी हिंसा का त्यागकर समाधिमरण पूर्वक मरकर पहले स्वर्ग में देव हुये। वहाँ से चयकर अयोध्या नगर में समुद्रसेठ उनके धारणी सेठानी इनके ये दो पुत्र एकपूर्णभद्र दूसरा काचनभद्र यहाँ भी श्रावक के व्रत धारणकर मरे और पहले स्वर्ग में गये। और ब्राह्मण के भव के इनके माता पिता नरक गये थे, वे नरक से निकलकर, चाडाल और कुत्ता हुये। पूर्णभद्र एवं कांचनभद्र के उपदेश से जिनधर्म की आराधना करते हुये समाधिमरण कर सोमदेव का जीव चांडाल से नन्दीश्वरद्वीप का अधिपति देव हुआ, और माता अग्निला का जीव कुत्ता से मरकर अयोध्या के राजा की पुत्री होकर उस देव के उपदेश से ब्रह्मचर्य व्रत धारणकर आर्यिका हुई समाधि पूर्वक मरणकर उत्तम गति को प्राप्त हुई, वे दोनों परम्परा से मोक्ष जायेंगे।

अर्थात्–पूर्णभद्र कांचनभद्र का जीव पहले स्वर्ग से चयकर अयोध्या का राजाहेम, रानीअमरावती उनके मधुकेटभ नाम के पुत्र जगत में प्रसिद्ध हुये। उनको कोई जीत नहीं सकते, महाप्रबल रूपवान उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी को वश किया, सभी राजा इनके आज्ञाकारी हुये। भीमनाम का एक राजा अपने बल के गर्व से इनकी आज्ञा नहीं पालता। और एक वीरसेन राजा वटपूर्व का स्वामी मधुकेटभ का आज्ञाकारी सेवक, उसने मधुकेटभ को पत्र लिखा हे प्रभो! भीमराजा ने मेरा देश नाश किया। तब राजा मधु क्रोध पूर्वक बड़ी सेना सहित राजा भीम से युद्ध करने गया, सो मार्ग में वटपुर जाकर उद्यान में ठहरा, राजा वीरसेन ने सन्मुख जाकर भक्ति से आदर सत्कार कर मेहमान गिरी की, उसकी रानी चन्द्राभा रूपवान सुन्दर उसके हाथ से मूर्ख वीरसेन राजा ने राजा मधु की आरती कराई और उसी के हाथ से भोजन कराया, चन्द्राभा ने अपने पति राजा वीरसेन से बहुत कहा कि अपने घर में जो सुन्दर वस्तु है उसे राजा को नहीं दिखाओ। फिर भी उसने नहीं माना, राजा मधु चन्द्राभा को देख मोहित हुआ, मन में सोचने लगा कि इसके साथ वन में रहना अच्छा, परन्तु इसके बिना पृथ्वी का राज्य भी अच्छा नहीं, तब सभी मत्रियों ने समझाया कि अभी यह बात करोगे तो, आपका कार्य सिद्ध नहीं होगा, और राज्य से भ्रष्ट होना पडेगा। मंत्रियों के समझाने से राजा वीरसेन को साथ में लेकर भीम से युद्ध करने गया। उसे युद्ध में जीतकर वश किया और भी अनेक राजाओं को वश में किया। पुनः अयोध्या में आकर चन्द्राभा को लेने का उपाय सोचने लगा, सभी राजाओं को बसन्तऋतु की क्रीडा करने के लिये रानियो सहित बुलाया, और राजा वीरसेन को भी चन्द्राभा सहित बुलाया। तब भी चन्द्राभा ने कहा मुझे मत ले चलो, फिर भी नहीं माना उसको साथ ले गया। राजा ने एक महीने तक वन में क्रीडा की और जितने राजा आये थे, उनको रानियों सहित सम्मान कर विदा किये। राजा वीरसेन को कुछ दिन पश्चात् अति मान सम्मान कर विदा किया, और कहा कि चन्द्राभा के लिये अद्‌भुत अमूल्य आभूषण बनवाये हैं, वे अभी तैयार नहीं हुये हैं, इसीलिये इनको बाद मे विदा करेगे। वह राजा भोला सीधा साधारण उसकी मायाजाल को कुछ समझ नहीं पाया, और रानी को यहाँ छोड घर चला गया। वीरसेन के जाने के पश्चात् राजा मधु ने चन्द्राभा को अपने महल में बुलाकर, सुन्दर घडो के जल से अभिषेक कर, पटरानी का पद दिया। सभी रानियों मे मुख्य हुई। राजा मधु भोगों में अंधा होकर, चन्द्राभा को रख, अपने

आपको इन्द्र समान मानने लगा। वीरसेन ने सुना की चन्द्राभा को मधु ने रखली, तब वह पागल होकर इधर उधर भ्रमण करता हुआ, मडव तापस का शिष्य होकर पंचाग्नि तप करने लगा, और एक दिन राजा मधु न्याय के आसन पर बैठा था, वहाँ पर परस्त्री रत का न्याय सामने आया, न्याय मे बहुत समय लगा, पुन. अपने राजभवन में गये, तब चन्द्राभा ने हंसकर कहा कि हे महाराज! आज बहुत समय क्यो लगाया, तब राजा मधु ने कहा कि हे प्रिये! आज एक परस्त्री रत का न्याय करना पड़ा इसीलिये देर लगी। तब चन्द्राभा ने हंसी से कहा जो परस्त्री सेवन करता हो उसका बहुत सम्मान करना चाहिये। तब राजा ने क्रोध पूर्वक कहा, तुम यह क्या कह रही हो, जो दुष्ट व्यभिचारी हैं, उनका निग्रह करना उनको दण्ड देना, जो परस्त्री को स्पर्श करते हैं, बातचीत करते हैं, वे पापी हैं और जो परस्त्री का सेवन ही करते हैं उनकी क्या बात, जो ऐसे कर्म करते उनको महादण्ड देकर नगर से निकालते, जो अन्याय मार्गी महा पापी वह राजाओं के द्वारा दण्ड योग्य हैं, उनका सम्मान कहाँ, तब रानी चन्द्राभा ने राजा से कहा हे नृपराज! यह परदारा सेवन महादोष है, तो आप अपने आपको दण्ड क्यो नहीं देते हो, आप भी परस्त्री सेवन करते हो, तो दूसरो का क्या दोष, जैसा राजा वैसी प्रजा! जहॉ राजा ही हिंसक व्यभिचारी होता है वहॉ न्याय कैसा, इसलिये चुप होकर के रहो, जिस जल से बीज उत्पन्न होता है, और जगत के प्राणी जीवित रहते हैं। वह जल ही जला कर मारे तो शीतल करने वाला कौन? ऐसे उलहाना के कठोर शब्द चन्द्राभा के सुनकर राजा कहने लगा हे देवी! जो तुम कह रही हो वह सत्य है, बार बार चन्द्राभा की प्रशंसा कर कहा मैं पापी! लक्ष्मी के गर्व से गर्वित होकर विषयरूपी कीचड में फंसा। अब इन दोषों से कैसे छूटू। राजा ऐसा विचार करता है। उसी समय अयोध्या के सहस्रामवन में महासंघ सहित सिंहपाल नाम के मुनिराज आये, राजा ने सुनकर रणवास एवं प्रजा सहित मुनिराज के दर्शनों के लिये गये। तीन प्रदक्षिणा देकर विनय पूर्वक प्रणामकर भूमिपर बैठ गये। मुनिराज का धर्मोपदेश सुनकर भोगों से विरक्त होकर वैराग्य सहित राजा ने मुनिपद को धारण किया। रानी चन्द्राभा रूप से अद्वितीय सम्पूर्ण राज्य वैभव को छोड आर्यिका हुई। दुर्गति के दुखों के भय से संयम को धारण किया। और मधु का भाई कैटभ भी राज्य को नाशवान जान महाव्रतों को धारणकर मुनि बने, दोनों भाई महा तपस्वी मुनिराज पृथ्वीपर विहार करने लगे। मधु राजा का पुत्र कुलवर्धन अयोध्या का राज्य करने लगा एवं

प्रजा के प्रेम का पात्र हुआ। राजा मधु मुनिराज सैकडों वर्ष तक व्रतों का पालनकर दर्शन ज्ञान चारित्र तप ये चारों आराधनाओ को आराधकर समाधि मरण करके सोलवे अच्युत स्वर्ग में अच्युतेन्द्र इन्द्र हुये और कैटभमुनि समाधि पूर्वक मरणकर पन्द्रहवे आरण स्वर्ग मे आरणेन्द्र इन्द्र बने। गौतमस्वामी कहते हैं हे श्रेणिक! यह जिनशासन का प्रभाव देखो जो ऐसे अनाचारी जीव भी अनाचार का त्याग करके स्वर्ग मे इन्द्र पद पाते हैं, अथवा इन्द्रपद का क्या आश्चर्य, जिनधर्म के प्रभाव से मोक्ष भी प्राप्त करते हैं। मधु का जीव सोलहवें स्वर्ग मे इन्द्र था, उसके समीप सीता का जीव प्रतीन्द्र हुआ, और मधु का जीव स्वर्ग से चयकर श्रीकृष्णजी की रानी रुक्मणी के प्रद्युमन नाम का पुत्र कामदेव होकर मोक्ष प्राप्त किया और कैटभ का जीव कृष्णजी की रानी जाम्बूवती के शम्बूकुमार पुत्र होकर परम धाम को प्राप्त किया, यह मधु का वर्णन तुझे कहा, अब हे श्रेणिक! बुद्धिमानो के मन को प्रिय, ऐसे लक्ष्मण के आठ पुत्र महा धीर वीर उनका चरित्र पापो का नाश करने वाला है इसलिये मन लगाकर तुम सुनो। जो इसको सुनता एवं पढता है वह सूर्य समान तेज को प्राप्तकर यशकीर्ति को फैलाता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे राजामधु का वैराग्यवर्णन करनेवाला एकसौनौवॉं पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-110

लक्ष्मण के आठों कुमारों का विरक्त होकर दीक्षा लेना और निर्वाण प्राप्त करना

अथानंतर कांचनस्थान नगर का राजा काचनरथ रानी शतहदा उनकी दो राजपुत्री रूपवान सुन्दर उनके स्वयवर मण्डप के लिये, अनेक राजा, विद्याधर, भूमिगोचरी आदि उनके राजकुमारो को राजा ने पत्र लिखकर दूत को भेज शीघ्र ही बुलाये। पहले दूतों को अयोध्या भेजा, पत्र मे लिखकर दिया कि मेरी राजपुत्रियों का स्वयवर हैं इसीलिये आप कृपा करके राजकुमारों को शीघ्र भेजो। तब राम लक्ष्मण ने प्रसन्न होकर महाविभूति सहित सभी राजपुत्रों को भेजे। लव

अकुश को आगे कर परस्पर महा प्रेम के भरे सभी भाई काचनपुर चले, विमानो में बैठकर अनेक विद्याधरो के साथ रूपलक्ष्मी से देवो समान आकाश मार्ग से होकर बडी सेना सहित आकाश मे पृथ्वी को देखते हुये कांचनपुर पहुँचे, वहाँ दोनों श्रेणियो के विद्याधरों के राजकुमार भी आये थे। सभी यथा योग्य बैठे। जैसे इन्द्र की सभा मे अनेक आभूषण पहने इन्द्र ही बैठे, वे दोनो राजकुमारियॉ मंदाकिनी और चन्द्रवक्त्रा, मंगल स्नानकर आभूषण पहन, रथ पर बैठकर निकली जैसे साक्षात लक्ष्मी ही है। महागुणो से पूर्ण, खोजा, उनके साथ, वह राजकुमारों के देश कुल सम्पत्ति गुण नामादि सब बताकर कहते है कि ये सभी राजकुमार तुम्हारे लिये आये है। उनमे कोई वानरध्वज कोई सिहध्वज, वृषभध्वज, गजध्वज इत्यादि अनेक पराक्रमी राजकुमार हैं इनमें तेरी जो इच्छा हो उनको माला पहनाओ, तब वह सबको देखती हुई आगे चली, तो राजकुमार सभी सोचने लगे, यह महारूपवान हमने कभी ऐसी कन्याँ नहीं देखी, यह देवो के रूप को जीतने वाली, क्या मालुम किसको माला पहनायेगी, सभी राजकुमार उन राजकुमारियों की अभिलाषा करने लगे। दोनो श्रेष्ठ गुणवान, रूपवान, राजकुमारी लव अकुश को देखकर मोहित हुई। मंदाकिनी राजकुमारी ने लवण कुमार के गले मे माला पहनाई और चन्द्रवक्त्रा ने अकुश के कंठ मे माला पहनाई। तब सभी राजकुमारों के मनरूपी पक्षी, तनरूपी पींजरे से उड गये, और जो श्रेष्ठ राजकुमार गुणवान थे, उन्होने अति प्रशंसा की, कि इन दोनो राजकुमारियो ने राजा रामचन्द्रजी के दोनो रूपवान गुणवान पुत्रों को माला पहनाई, यह अच्छा किया, ये कन्याये इनके ही योग्य है, इस प्रकार सज्जन पुरुष एवं कुमारो ने कहा। जो गुणवान हैं उनके मन से गुणों की बात निकलती है।

अथानंतर लक्ष्मण की विशल्यादि आठ पटरानियो के आठ राजपुत्र महासुन्दर उदार मन शूरवीर पृथ्वीपर प्रसिद्ध इन्द्र समान अपने अढाई सो भाईयों सहित महाप्रीति पूर्वक प्रेम से रहते हैं। जैसे ताराओं में ग्रह। उन आठ कुमारो को छोडकर सभी ही भाई राम के पुत्रोपर क्रोधित होकर कहते है, हम नारायण के पुत्र कांतिकारी, कलाओ में दक्ष, लक्ष्मीवान सेनावान गुणवान, कौनसे गुण हमारे मे नहीं हैं, जो इन कुमारियो ने हमको माला नहीं पहनाई, और सीता के पुत्रो को पहनाई, ऐसा विचारकर क्रोधित हुये, तब आठों बडे भाईयों ने इनको समझाकर

शात किया, जैसे मंत्रो से सर्प वश करे। तब सभी भाई लव अंकुश से प्रसन्न हुये, और मन मे सोचने लगे कि इन कन्याओ ने हमारे बाबा के बेटे बडे भाईयों को माला पहनाई तब यह हमारी भावज माता समान है। यह स्त्री पर्याय महानिन्द्य है। स्त्रीयो की अभिलाषा अज्ञानी पुरुष करते हैं, स्त्रीयॉ स्वभाव से ही कुटिल होती हैं। इनके लिये क्यो विकार करना, जिनको आत्म कल्याण करना हो वे स्त्रीयों से राग नहीं करते हैं। ऐसा विचार कर सब शांत हुये, पहले सभी युद्ध के लिये तैयार हुये थे, रण के बाजे बजवाने लगे थे। जैसे इन्द्र की विभूति देख छोटे देव अभिलाषी होते हैं, एंसे ये सभी राजकुमार स्वयवर मंडप मे राजकुमारियों के अभिलाषी हुये थे। वह सभी बडे भाई के उपदेश से सतोषी हुये। और उन आठों भाईयो को वैराग्य उत्पन्न हुआ। वे आठों भाई चिन्तवन करते है, कि यह जगत के जीव कर्मों के योग से अनेक रूप है, विनश्वर है, जैसे जीवो की होनहार होती है वैसा ही होता है। जिसको जो प्राप्त होना होगा, वह अवश्य होगा, कोई दूर नहीं कर सकता, और लक्ष्मण की रानियों के पुत्र हसकर कहने लगे, कि हे भाईयों! स्त्री क्या चीज है, स्त्रीयो से प्रेम करना महा मूर्खता है। ज्ञानियो को हसी आती है, अज्ञानी कामी पुरुष क्या जानते हैं, जो अनुराग करते है। इन दोनो भाईयों ने रानी पाई, तो क्या बडी वस्तु पाई जो जिनेश्वरी दीक्षा लेते है, वे महाधन्य है, केला के वृक्ष समान असार, काम भोग आत्मा के शत्रु, उनके वश होकर राग द्वेष करना महामूर्खता है। विवेकी लोगो को शोक नहीं करना, ये सभी संसारी जीव कर्मो के वश ससार जाल मे फंसते है, ऐसा कार्य नहीं करते जिससे कर्मो का नाश होता हो। कोई ज्ञानवान विवेकी ही करते, वे सिद्धपद को प्राप्त होते हैं, इस गहन ससार रूपी वन मे ये प्राणी निज नगर का मार्ग भूल रहा है। ऐसा करो जिससे भव दुख से रहित हो। हे भाईयो यह कर्मभूमि आर्यक्षेत्र मनुष्यजीवन, उत्तमकुल हमने प्राप्त किया, जो इतने दिन ऐसे ही नष्टकर दिये, अब वीतराग का धर्म धारणकर, मनुष्य जीवन को सफल करो। एक दिन मैं बालपन में पिताजी की गोद मे बैठा हुआ था, तब वे पुरुषोत्तम सम्पूर्ण राजाओं को उपदेश देते थे। वे वस्तु के स्वरूप को समझाते थे, तब मैंने भी रुचि पूर्वक सुना, चारों गतियो मे मनुष्य गति दुर्लभ है। मनुष्य भव प्राप्तकर आत्म हित नहीं करते, तो वे ससार में ठगे हुये जानो। दान पूर्वक मिथ्यादृष्टि जीव भोगभूमि जाते हैं, और

सम्यग्दृष्टि जीव दान देने से एवं तप करने से स्वर्ग जाते हैं और परमपरा से मोक्ष जाते हैं। शुद्धोपयोग रूप आत्मज्ञान से, यह जीव इसी भव से मोक्ष प्राप्त करते हैं। और हिंसादि पापों से दुर्गति में जाते है, जो तप नहीं करते वह भव वन में भटकते हैं, एवं बार बार संसार के संकट पाते हैं। ऐसा चिन्तवन कर ये आठों कुमार शूरवीर वैराग्य को प्राप्त हुये। संसार के दुखो से डरे। शीघ्र ही पिता के पास गये प्रणामकर विनय से खडे होकर महा मधुर शब्दों से हाथ जोडकर कहने लगे, हे पिताजी! हमारी विनती सुनो हम जिन दीक्षा लेना चाहते हैं। आप आज्ञा दो। यह संसार बिजली के चमत्कार समान अस्थिर है, हमको अविनाशी नगर में जाते हुये आप विघ्न मत करो, आप दयालु हो, महा पुण्य से हमको वैराग्य रूपी ज्ञान प्राप्त हुआ है। अब ऐसा उपाय करें जिससे भव से पार हो जाये। यह काम भोग आशीविष सर्प के फण समान भयकर है। पर इन दुखों के कारणों को हम दूर से ही छोडना चाहते हैं। इस जीव के कोई माता पिता पुत्र परिवार नहीं इसका कोई सहायक नहीं, यह सदा कर्म के आधीन भव वन में भ्रमण करता है। इस जीव के साथ कौन कौन से जीव सम्बन्धी नहीं हुये हैं। हे तात! हमारे से आपका अत्यन्त वात्सल्य, और माताओ का महाप्रेम है, हमने आपके कारण बहुत दिनों तक संसार के सुखों को भोगा है। कभी न कभी एक दिन आपका हमारा वियोग होगा। इस में शका नहीं, इस जीव ने अनेक भोग भोगे, परन्तु तृप्त नहीं हुआ, ये भोग ही रोग समान है। इनमे अज्ञानी जीव फसता है। यह शरीर ही अपना नहीं, इसीलिये आत्मा का कार्य नहीं छोडना, यही विवेकवानों का कार्य है। यह शरीर तो हमको अवश्य छोडेगा। हम इससे प्रीति प्रेम भाव क्यों नहीं छोडे, यह बात पुत्रों की सुनकर लक्ष्मण परम राग स्नेह प्रेम वात्सल्य से दुखी होकर इनको ह्रदय से लगाकर मस्तक चूम बार बार इनकी तरफ देखते हुये और गद् गद् वाणी से कहने लगे।

हे पुत्रों! यह कैलाश के शिखर समान हजारों कंचन के स्तंभ समान महल, उनमें निवास करो, अनेक प्रकार के रत्नो से निर्मित आगन, महा सुन्दर सर्व साधनों सहित, अनेक प्रकार की सुगूंधी सहित, निर्मल दर्पणवत मन मोहक महलों में निवास करो, देवों समान राज्य में सुख पूर्वक क्रीडा करो, और तुम्हारी रानियॉ देवांगना समान दिव्य रूपवान, पूर्णिमा के चन्द्रमा समान उनका शरीर सुन्दर,

वीणा बासुरी मृदगादि बजाने मे दक्ष, महास्वर सुन्दर मधुर गीत नृत्य मे निपुण, जिनेन्द्र भगवान की कथा में विशेष अनुरागी, पतिव्रता पवित्र उनके सहित वन उपवन गिरी पर्वतोपर नदियों के तटपरादि अनेक मनोज्ञ स्थानोंपर देवो समान क्रीडाकर सुख से रहो। हे मेरेपुत्रों! ऐसे मनोहर सुखों को छोडकर जिनदीक्षा लेकर कैसे वन में कंकर पत्थरों मे निवास करोगे। मैं और तुम्हारी मातायें राग प्रेम से भरे शोक से महा दुखी होंगे, हमारे जीवन को सुख रूप करने वाले तुम ही हो, इसीलिये हमारे को दुखी करके तुमको जाना योग्य नहीं हैं, अभी कुछ दिन पृथ्वी का राज्य करो। तब सभी राजकुमार मोह, राग, प्रेम, स्नेह रहित, ससार में भय रूप, इन्द्रिय सुखों की इच्छा से रहित, उदार वैरागी आत्म ध्यान मे लगा है मन उनका, एक क्षण पश्चात् बोले, हे पिताजी। इस ससार मे हमारे माता पिता अनत हुये, यही स्नेह राग का बंधन नरक का कारण है, यह घर रूपी पिंजरा, पापारम्भ के कारण दुखों को बढाता है, फिर भी मूर्ख प्राणी उसी में राग करता हैं। परन्तु ज्ञानी जीव पापों से दूर रहते है। कभी भी शरीर एव मन को दुख नहीं हो, ऐसा ही उपाय निश्चय से करेगे। जो आत्म कल्याण नहीं करते, वे आत्मघाती हैं। अगर कोई घर का त्याग नहीं करके भी, मन मे ऐसा जाने कि मै निर्दोष हूँ, मुझे पाप नहीं लगता, वह महापापी है, जैसे सफेद वस्त्र शरीर के सयोग से शीघ्र ही मैले होते हैं, ऐसे घर के संयोग से गृहस्थ का मन मैला ही रहता है, इस गृहस्थाश्रम मे रह कर निरतर हिंसा आरम्भादि पाप क्रियाये करते ही है, इसीलिये सज्जन पुरुषो ने गृहस्थाश्रम छोडा है, और आपने हमारे से कहा कि कुछ दिन राज्य भोगो, सो आप ज्ञानवान होकर हमारे को गृहस्थ रूपी गड्ढे मे डालते हो, जगत के जीव विषयो की अभिलाषा से हर दम आर्त्तध्यान से दुखी हैं। जो काम सेवन करते है, वे अज्ञानी जीव आशीविष सर्प से क्रीडा करते हैं, तो कैसे जीवित रहेगे, यह प्राणी मछली समान गृहरूपी तालाब में रहते, विषयरूपी मांसके अभिलाषी, रोगरूपी लोहेके आंकडे के योग से, कालरूपी धीवरके जाल में फंसते है। भगवान श्री तीर्थकरदेव, तीनलोक के ईश्वर, सुर नर विद्याधरों से वन्दित, यह उपदेश देते हैं, कि यह जगत के जीव अपने अपने किये हुये कर्मों के वश मे है। जो जगत को छोडेगा, वही कर्मों का नाश करेगा। इसीलिये हो नारायण। हो पिता जी। हमारे इष्ट सयोग के लोभ से पूर्णता कभी नहीं होगी। यह इष्ट संयोग

बिजली के चमक समान चचल है, जो ज्ञानवान है वह इनका अनुराग नहीं करते, निश्चय से शरीर एव शरीर से सम्बन्धियो का वियोग होगा। इनसे क्या प्रीति करना। यह महा दुखदाई ससार, उसमें क्या निवास करना और यह मेरा प्यारा है, ऐसी बुद्धि जीवो के अज्ञान से होती है। यह जीव सदा अकेला ही संसार में भ्रमण करता है। गति गति मे एव योनि योनियो मे भटकता हुआ महादुखी है। हे पुज्य पिताजी! हम ससार सागर मे झकोला खाते हुये महादुखी हुये। कैसाहै ससार सागर। मिथ्याज्ञान रूपी दुख देने वाला महासागर उसमे मोह रूपी मगरमच्छ, शोक सताप रूपी सीडियो सहित, दुर्जय रूप नदियो से भरा है। दुख रूपी लहरें आधि व्याधि उपाधि से युक्त है। कुभाव रूपी पाताल कुंड है। क्रोधादि भावो से विकल्परूपी तरंगे उठ रही है, ममत्वरूपी पवन से दुर्गतिरूपी वासनायें उछल रही हैं। यह संसार रूपी समुद्र खारे जल से भरा है। इष्टवियोग अनिष्ट सयोगरूपी जो बडवानल अग्नि है ऐसे भव सागर मे हम अनादि काल से जलते आ रहे है। नाना योनियो मे भ्रमण करते अति कष्ट से मनुष्य जीवन उत्तम कुल पाया है। इसीलिये अब ऐसा उपाय करें जो पुन भव भ्रमण नहीं करना पड़े। सबसे मोह छोडकर आठो कुमार महाशूरवीर गृहस्थ जीवन की जेल से निकलें, उन महाभाग्यशाली कुमारों को, ऐसी वैराग्य बुद्धि उत्पन्न हुई, जो तीनखड का राज्य क्षणभगुर जानकर छोड दिया। वह वैरागी महेन्द्रोदय उद्यान मे जाकर महाबल मुनिराज के निकट दिगम्बर मुनि बने। सर्व आरम्भ रहित अन्तर बाहर परिग्रह के त्यागी, इर्या समिति पूर्वक विहार करने लगे, महा क्षमावान इन्द्रियो को वश करने वाले परम योगी महाध्यानी बारह प्रकार के तपो द्वारा कर्मो का नाशकर, आत्म योग से शुभ अशुभ भावो को दूरकर, क्षीणकषाय होकर केवलज्ञान प्राप्त किया। पुनः अघाति कर्मों को नाशकर अनन्तसुख रूपी सिद्धपद को प्राप्त हुये। जगत के जजाल प्रपच से छूटे। गौतमगणधर कहते है। हे श्रेणिक! यह आठों कुमारों का मंगल रूप चारित्र जो विनयवान भक्ति से पढते पढाते सुनते सुनाते उनके सम्पूर्ण पाप क्षय हो जाते हैं, और सूर्य समान केवलज्ञान को प्राप्त करते है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे लक्ष्मण के आठो कुमारो का वैराग्यवर्णन करने वाला एकसौदशवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-111

भामंडल का विद्युत्पात से मरण

अथानंतर भगवान महावीर जिनेन्द्र के प्रथम गणधर मुनियो में मुख्य ऐसे गौतमऋषि राजाश्रेणिक से भामंडल का चरित्र कहने लगे हे श्रेणिक! विद्याधरों का वैभव वह ही कुटिल स्त्री, विषय वासनारूपी मिथ्या सुख, उनके अनुराग में भामडल मधुमक्खी समान आसक्त हुआ, मन में सोचता रहा कि मै दिगम्बर दीक्षा धारण करूँगा। तो मेरी स्त्रीयो का सौभाग्य रूपी कमलो का वन सूख जायेगा, ये मेरे से आसक्त है, इनके वियोग से मेरे प्राणों का वियोग होगा, मैंने अपने प्राण सुख से पाले हैं। कुछ दिन राज्य सुखो को और भोग लू, पुन अन्त समय मे कल्याण करने वाला तप करूँगा। यह काम भोग दुर्निवार है, इनसे जो पाप होगा, वह ध्यानरूपी अग्नि से क्षणमात्र में जलाकर नाश करूँगा। इसीलिये और कुछ दिन राज्य करूँ। बडी सेना सहित जो मेरे शत्रु है, उनको राज्य रहित करूँगा। और दक्षिण उत्तर श्रेणी में अपनी आज्ञा चलाऊँगा, सभी राजाओं को वशकर उनको मेरे आज्ञाकारी करूँगा। और सुमेरू पर्वतादि पर्वतो मे, मरकतमणि आदि रत्नो की शिलाओं पर रानियो सहित क्रीडा करूँगा। इत्यादि मन के मनोरथ करता हुआ, भामडल सैकडो वर्ष एक दिन के समान समाप्त किया, यह किया यह करूँगा ऐसा सोचता हुआ, आयु का अन्त समय नहीं जाना। एक दिन महल के ऊपर सातवे खड मे सुन्दर सेजपर सोया हुआ था, वहॉ बिजली गिरी तत्काल भामडल मरण को प्राप्त हुआ। मनुष्य अनेक प्रकार के विचार करते है। परन्तु आत्म कल्याण का उपाय नहीं करते। विषयो की इच्छा से मानव, क्षणमात्र भी सुख नहीं पाते है, मृत्यु सिरपर घूमती है, उसका ज्ञान नहीं, क्षण भगुर सुख के लिये अज्ञानी आत्म हित नहीं करते। विषय वासनाओ मे लीन होकर अनेक प्रकार की इच्छायें करते हैं, वह इच्छायें कर्म बंध का कारण है। धन यौवन जीवन सभी अस्थिर है। इनको अस्थिर जानकर परिग्रह का त्यागकर आत्म कल्याण करने के भाव करते है, वह ससार मे भ्रमण नहीं करते, विषयों की अभिलाषा करने वाले जीव, जीवन मे कष्ट सहते, हजारों शास्त्र पढते, फिर भी वैराग्य नहीं हुआ तो क्या, एक ही शास्त्र का, एक ही पेज पढ कर के शांति एवं वैराग्य हुआ तो वह

प्रशसा योग्य है। धर्म करने की इच्छा तो करते है, परन्तु धर्म का कार्य नहीं करते तो कल्याण कैसे होगा। जैसे पखकटा पक्षी उडकर आकाश मे जाना चाहता हैं, परन्तु जा नहीं सकता है, जो मनुष्य मोक्षमार्ग का पुरुषार्थ नहीं करते, वह निर्वाणपद को नहीं प्राप्त करते। बिना पुरुषार्थ से सिद्धपद प्राप्त होता तो क्यो मनुष्य मुनिव्रत को धारण करते। इसलिये गुरु की कल्याणकारी वाणी हृदय मे धारण कर धर्मका पुरुषार्थ करो, तो कभी भी दुखी नहीं होगें। जो गृहस्थ अपने दरवाजे पर आये हुये साधु की भक्ति नहीं करता, आहारादि नहीं देता, वैयावृत्ति नहीं करता, वह अज्ञानी अविवेकी कैसे ससार के एव मोक्ष के सुखो को प्राप्त करेगा। गुरु के वचन सुनकर धर्म धारण नहीं करता वह ससार से नहीं छूटता। जो प्रमादी अशुभ पुरुषार्थ कर अपनी आयु वृथा नष्ट करता है, जैसे हथेली मे आया रत्न खोता है। ऐसा जानकर। ससार के लौकिक कार्य को निष्फल जान दुखरूपी इन्द्रियो के सुखो को छोडकर आगे के भव को सुधारने के लिये जिनशासन की श्रद्धा करना। भामंडल मरकर पात्र दान के प्रभाव से उत्तम भोगभूमि मे गया।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे भामडल का मरणवर्णन करनेवाला एकसौग्यारहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-112

हनुमान का संसार देह और भोगों से विरक्त होना

अथानंतर राम लक्ष्मण परस्पर महाप्रेम से प्रजा के पिता समान परम हितकारी, उनके राज्य में सुख पूर्वक समय व्यतीत होता रहा। बलभद्र नारायण की विभूति से राज्य करते हुये वे पुरुषोत्तम पृथ्वीपर क्रीडा करते, प्रसन्नता पूर्वक आनंदित रहते थे। इनके सुखो का वर्णन कहॉ तक करे, बसन्तऋतु में सुगन्धित वायु बहती, कोयल बोलती, वनस्पतियॉ खिलती, उस समय सभी लोग काम से उन्मत्त होकर हर्ष के भरे श्रृंगार एवं क्रीडा करते। तब मुनिराज भयकर वन मे आकर आत्म ध्यान करते। उस ऋतु मे राम लक्ष्मण रणवास एव प्रजा के

लोगो सहित रमणीक मनोज्ञ वन उपवन में अनेक प्रकार की रंगक्रीडा, जलक्रीडा, वनक्रीडा करते हुये प्रसन्न रहते थे। गर्मी की ऋतु में नदियों में पानी सूख जाता, अग्नि समान तपन होती, उस समय महामुनि पर्वतोंपर सूर्य के सन्मुख कायोत्सर्ग मुद्रा मे ध्यान करते थे, उस ऋतु में राम लक्ष्मण धारामडपमहल मे अथवा रमणीक वनो में और अनेक जल यत्र, चंदन, कपूरादि शीतल सुगन्धित सामग्रियो के बीच सुख से रहते थे। चमर ढुरते, पंखो की हवा करते, स्फटिकमणी की शिला पर बैठे, चदन से चर्चित जल से भीजे ऐसे कमलो के पुष्पों के निकट बैठे, शीतल जल मे लवग इलयाची कपूर इत्यादि महा सुगन्ध द्रव्यो का जलपान करते थे, लताओ के मडप के नीचे सुन्दर कथा करते वीण बासुरी सारगादि की मधुर ध्वनी सुनते, सुन्दर स्त्रीयो सहित उष्णऋतु को भी शीतऋतु समान साधनकर सुख से भोग करते हुये पूर्ण रहते थे। और वर्षाऋतु मे योगीश्वर वृक्ष के नीचे ध्यानकर महातप से अशुभ कर्मो का क्षय करते, बिजली चमकती, बादल गरजते, मेघ घनघोर आकर अंधकार करते, मयूर बोलते, नदियॉ, जल से भरी वहती हुई किनारे तोडकर बाहर आती है। उस ऋतु मे दोनो भाई, सुमेरू समान ऊँचे रत्नमयी मणियो से निर्मित महल, मे महाश्रेष्ठ अनुपम अमूल्य रगीले वस्त्र पहन कर, केशर कपूर कष्णागुरुादि से शरीर को सजाकर रानियो सहित इन्द्र समान क्रीडा करते हुये आनन्द लेते। और शरदऋतु मे मुनिराज वन पर्वत सरोवर नदियो के तटपर बैठकर आत्मा का ध्यानकर कर्मो की निर्जरा करते, उपसर्ग परिषह सहन करते हुये, ध्यान मे लीन रहते। उस ऋतु मे राम लक्ष्मण रानियॉ एव परिवार सहित, चादनी समान वस्त्र आभूषण पहनकर सरिता सरोवर के तटपर क्रीडा करते, शीतऋतु मे ऋषि मुनि यति अनगार साधु धर्मध्यान एव शुक्ल ध्यान की आराधना करने के लिये रात्रि मे नदी तालाबो के तटपर एव जहॉ अति शीत बर्फ बरसे जहॉ ठडी हवा चले वहॉ निश्चल होकर एकाग्र मन से शुक्लध्यान की आराधना मे लीन होते, महा प्रचड शीत से वृक्ष जल जाते, सूर्य का तेज मद हो जाता, ऐसी ऋतु में राम लक्ष्मण राजभवनों के अन्दर, चौबारो मे बैठे मनवाच्छित विलास भोग करते, रानियो सहित वीणा मृदग बासुरी आदि की ध्वनि अमृत समान सुनकर मन को प्रसन्न करते हुये, दोनो वीर महाधीर देवो समान, उनकी रानियॉ देवॉगना समान, वाणी से जीती है वीणा की ध्वनी जिसने, महापतिव्रता पुण्य के प्रभाव से सुख पूर्वक शीतकाल पूर्ण करते थे।

अद्‌भुत भोगो की सम्पदा लक्ष्मी सहित वे पुरुषोत्तम प्रजा को आनन्द देने वाले दोनों भाई सुख से भोगों को भोगते थे।

अथानंतर गौतमस्वामी कहते है—हे श्रेणिक! अब तुम हनुमान का वर्णन सुनों। पवन का पुत्र, अंजना का नंदन, कामदेव, हनुमान (श्री शैल) कर्णकुडल नगर मे पुण्य के प्रभाव से देवों समान सुख भोगते, हजारों विद्याधर आज्ञाकारी सेवा करते, श्रेष्ठ क्रिया करते, अपनी रानियो सहित परिवार को साथ लेकर, अपनी इच्छा प्रमाण पृथ्वीपर विहार करते विमान मे बैठकर ऋद्धि वैभव सहित सुन्दर वन उपवनों मे देवों समान क्रीडा करते। जब बसतऋतु का समय आया, कामी जीवों को वासना का कारण, प्रिया प्रीतम के प्रेम को बढाने वाली, सुगंधित पवन चलती है, ऐसे समय मे अजना का राजकुमार जिनेन्द्र की भक्ति मे लीन हर्ष पूर्वक हजारो रानियो सहित सुमेरूपर्वत की वंदना करने चले। हजारो विद्याधर साथ में क्रीडा करते हुये लक्ष्मी का भोग करते निकले। वन मे शीतल मंद पवन, पुष्प फलो सहित वृक्ष, वहाँ देवागना क्रीडा करती, कुलाचल पर्वतोपर सरोवर, मनोहर वन, पशु पक्षियो के युगल विचरण करते, रत्न ज्योति रूप पर्वत वहाँ नदी जल से भरी सुन्दर वापिकायें (कुये) रत्नो की सीढियाँ तटपर बडे बडे वृक्ष, सरोवर तालाबों के तटो पर क्रीडा करने के सुन्दर महल, जिनराज प्रभु के मदिर पापों को नाश करने वाले थे। ऐसे समय मे पवन पुत्र कामदेव राजा हनुमान परिवार सहित अकृत्रिम चैत्यालयो के दर्शनकर विमान में बैठकर रानियों को पृथ्वी की शोभा दिखाते, हुये प्रसन्नता से रानियों से कहते हैं—हे प्रिये! सुमेरूपर्वत पर जिनमन्दिर स्वर्णमयी, जिनके शिखर महा मनोहर सूर्य समान दैदीप्यमान दिखते है, सुमेरूपर्वत के तल पर भद्रशाल वन है, सुमेरू की कटिमेखला से घेरे हुये है। रत्नों की शिलाये है। सुमेरू के शिखर में पांडुक वन है, वहाँ जिनेश्वर देव का जन्मोत्सव मनाते हैं। इन चारों ही वनों मे चार चार चैत्यालय है। वहाँ निरन्तर देव देवियों का आवागमन होता है, यक्ष किन्नर गंधर्वों के संगीत नाद होते हैं। अप्सराये नृत्य करती है, अनेक मगल द्रव्यो सहित भगवान के अकृत्रिम चैत्यालय अनादि निधन हैं, हे प्रिये! पाडुकवन मे जिनमन्दिर को देखकर मन हरा जाता है, निर्धूम अग्नि समान, उगते सूर्य समान, स्वर्ण रूप दिखते हैं। उत्तम रत्न एवं मोतियो कि मालायें जैसे जल के बुद बुदा ही है। घंटा, झांझा, मजीरा, मृदंग, चवरों से सुशोभित हैं, चारो तरफ कोट ऊँचे

दरवाजे, परम विभूति से विराजमान अनेक रंगो की ध्वजाये फहराती हुई, ऐसे अकृत्रिम चैत्यालयो की शोभा का वर्णन कहॉ तक करे, सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादि देव भी नहीं कर सकते। पाडुकवन के चैत्यालय जैसे सुमेरूपर्वत के मुकुट ही है। महामनोज्ञ सम्पूर्ण पापो के नाशक है।

इस प्रकार पटरानियो से हनुमान जिनमन्दिरो की प्रशंसा करते हुये मन्दिर के समीप आये,विमान से उतर कर हर्षित हो तीन प्रदक्षिणा दी, वहॉ श्री भगवान के अकृत्रिम प्रतिबिम्ब सर्व अतिशय से युक्त मंगल द्रव्यो से सुशोभित है। ऐसे जिनबिम्बों को हनुमान श्रीकामदेव ने रानियो सहित हाथजोड नमस्कार किया। जिनेन्द्र के दर्शनकर महा आनन्दित हुये, विद्याधरी रानियॉ परम भक्ति सहित महापवित्र कुल मे उत्पन्न हुई देवागना समान, अनुराग से भक्ति पूर्वक देवाधिदेव की पूजा की, महापवित्र पद्मसरोवर का जल महासुगन्धित चदन, मुक्ताफल के अक्षत, स्वर्ण रजत पद्मरागमणि तथा चन्द्रकान्तमणि एव कल्पवृक्षो के पुष्प, अमृतरूपी नैवेद्य, महाज्योति रूप रत्नों के दीपक, मलयागिरी चन्दनादि महासुगन्ध दशों दिशाओ मे फैल रही, अगुरु चन्दनादि महापवित्र द्रव्यो से बनी धूप, महापवित्र कल्पवृक्षो के अमृतमयी फलादि सभी अष्टद्रव्य महामनोहर लेकर, रत्नो के चूर्ण से मंडल बनाकर पतिदेव सहित भगवान की पूजा करने लगी। हनुमान रानियो सहित भगवान की पूजा करते ऐसे लगे, जैसे सौधर्म इन्द। कैसे है हनुमान? जनेऊ एव सर्व आभूषण अमूल्य महीन वस्त्र पहने। महापवित्र पापो से रहित उनके मुकुट मे बदर का चिन्ह, गुणवान रूपवान अति सुन्दर है। ऐसे हनुमान ने भगवान की भक्ति बाजो की ध्वनी से पापों का नाश करने वाली, नृत्य गान पूर्वक पूजा की एवं स्तुति करते हुये को इन्द्र की अप्सराओ ने देखा, वह इनकी अति प्रशसा करने लगी। भक्ति मे महाप्रवीण ऐसा हनुमान वीणा लेकर जिनराज के यश कीर्तन करने लगे। जो शुद्धमन से जिनेन्द्र की पूजा का अनुरागी है, उनको कुछ भी दुर्लभ नहीं, उनका दर्शन मगल रूप है, उन जीवों ने अपना जन्म सफल किया, मनुष्य जीवन को प्राप्तकर श्रावक के व्रतों को धारणकर जिनदेव में दृढ श्रृद्धाकर अपना कल्याण करते उनका जन्म सफल है, हनुमान ने पूजा स्तुति वन्दना कर वीणा बजाकर मधुरध्वनी से स्तुति की, भगवान के दर्शन करते करते मन की तृप्ति नहीं हुई, यहॉ से जाने का मन नहीं करता, फिर भी चैत्यालयो मे ज्यादा नहीं रहना, मुझे कोई असादना नहीं लगे, इसलिये

जिनराज के चरण हृदय मे धार मन्दिर से बाहर निकले। हजारो स्त्रीयों सहित विमान मे बैठ सुमेरूपर्वत की प्रदक्षिणा दी, श्रीशैल (हनुमान) सुमेरू की प्रदक्षिणा देकर चैत्यालयों में दर्शनकर भरतक्षेत्र की ओर चले। तब मार्ग में सूर्य अस्त हो गया। हनुमान ने विमान से नीचे उतरकर एक सुर दुन्दुभी नाम का पर्वत वहाँ सेना सहित रात्रि व्यतीत की, कमलादि अनेक सुगन्धित पुष्पो से स्पर्शकर पवन आई उससे सेना के लोग सुख पूर्वक जिनेन्द्रदेव की कथा करते हुये बैठे। रात्रि में आकाश से ज्योतिमान एक तारा टूटता हुआ हनुमानजी ने देखा। देखकर मन में चिन्तवन करने लगे हाय हाय इस असार ससार वन मे देव भी काल के वश होते है, ऐसा कोई जीव नहीं जो मरण को प्राप्त नहीं होता हो। बिजली की चमक और जल की लहरें जैसे नाशवान क्षणभगुर है, ऐसे यह शरीर भोग सब नाशवान है। इस ससार मे इस जीव ने अनन्त भवों तक दुख ही दुख भोगे। यह जीव विषयो के सुख को ही सुख मानते है, वह सुख नहीं दुख ही है। पराधीन इन्द्रियों के विषय क्षणभंगुर है। मोह की महिमा अनन्त काल तक जीव को ससार में भ्रमण कराती है। अनन्त अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कालतक भ्रमणकर मनुष्यभव कभी कोई प्राप्त करते है, वह धर्म के साधन नहीं करते, वह विनाशीक सुखो में आसक्त होकर, महा सकटो को प्राप्त करते हैं। यह जीव राग द्वेष के वश होकर वीतराग भाव को नहीं जानता, यह इन्द्रिय रूपी चंचल घोडा कुमार्ग मे ले जाकर इस जीव को नरक निगोद मे पटक देता है। जैसे मृग मीन पक्षी लोभ के वश से जाल मे फसते है, ऐसे यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमार्ग को प्राप्त किये बिना, अज्ञान के वश विषयरूपी जाल मे फसते हैं। आशीविष सर्प समान यह मन एव इन्द्रिय इनके विषयो मे रमते है, वे मूर्ख दुखरूपी अग्नि मे जलते हैं। जैसे कोई एक दिन राज्य कर बहुत दिन दुखी होते है। ऐसे मूर्ख जीव कुछ दिन विषयो के सुख को भोग अनन्तकाल पर्यन्त निगोद के दुख भोगते है। जो विषय सुख के अभिलाषी है वे दुखों के अधिकारी हैं। नरक निगोद के मूल यह विषय उनको ज्ञानी जीव नहीं चाहते हैं। मोहरूपी ठग से ठगाकर जो आत्म कल्याण नहीं करते, वे महा कष्ट को प्राप्त होते हैं। जो पूर्वभव मे धर्म किया, तो मनुष्य भव पाया, धर्म का आदर नहीं करते वह, जैसे धन ठगाकर दुखी होते वैसे दुखी होगे। और देवों के भोगो को भोगकर यह जीव मरकर देव से एकेन्द्रिय होता है। इस जीव के पाप ही

दरवाजे, परम विभूति से विराजमान अनेक रगो की ध्वजायें फहराती हुई, ऐसे अकृत्रिम चैत्यालयो की शोभा का वर्णन कहाँ तक करे, सम्पूर्ण वर्णन इन्द्रादि देव भी नहीं कर सकते। पाडुकवन के चैत्यालय जैसे सुमेरूपर्वत के मुकुट ही है। महामनोज्ञ सम्पूर्ण पापो के नाशक है।

इस प्रकार पटरानियो से हनुमान जिनमन्दिरो की प्रशसा करते हुये मन्दिर के समीप आये,विमान से उतर कर हर्षित हो तीन प्रदक्षिणा दी, वहाँ श्री भगवान के अकृत्रिम प्रतिबिम्ब सर्व अतिशय से युक्त मगल द्रव्यों से सुशोभित है। ऐसे जिनबिम्बो को हनुमान श्रीकामदेव ने रानियो सहित हाथजोड नमस्कार किया। जिनेन्द्र के दर्शनकर महा आनन्दित हुये, विद्याधरी रानियाँ परम भक्ति सहित महापवित्र कुल मे उत्पन्न हुई देवागना समान, अनुराग से भक्ति पूर्वक देवाधिदेव की पूजा की, महापवित्र पद्मसरोवर का जल महासुगन्धित चदन, मुक्ताफल के अक्षत, स्वर्ण रजत पद्मरागमणि तथा चन्द्रकान्तमणि एव कल्पवृक्षो के पुष्प, अमृतरूपी नैवेद्य, महाज्योति रूप रत्नो के दीपक, मलयागिरी चन्दनादि महासुगन्ध दशो दिशाओं मे फैल रही, अगुरु चन्दनादि महापवित्र द्रव्यो से बनी धूप, महापवित्र कल्पवृक्षों के अमृतमयी फलादि सभी अष्टद्रव्य महामनोहर लेकर, रत्नो के चूर्ण से मडल बनाकर पतिदेव सहित भगवान की पूजा करने लगी। हनुमान रानियो सहित भगवान की पूजा करते ऐसे लगे, जैसे सौधर्म इन्द्र। कैसे है हनुमान? जनेऊ एव सर्व आभूषण अमूल्य महीन वस्त्र पहने। महापवित्र पापो से रहित उनके मुकुट मे बदर का चिन्ह, गुणवान रूपवान अति सुन्दर है। ऐसे हनुमान ने भगवान की भक्ति बाजो की ध्वनी से पापो का नाश करने वाली, नृत्य गान पूर्वक पूजा की एवं स्तुति करते हुये को इन्द्र की अप्सराओ ने देखा, वह इनकी अति प्रशसा करने लगी। भक्ति में महाप्रवीण ऐसा हनुमान वीणा लेकर जिनराज के यश कीर्तन करने लगे। जो शुद्धमन से जिनेन्द्र की पूजा का अनुरागी है, उनको कुछ भी दुर्लभ नहीं, उनका दर्शन मगल रूप है, उन जीवों ने अपना जन्म सफल किया, मनुष्य जीवन को प्राप्तकर श्रावक के व्रतों को धारणकर जिनदेव मे दृढ श्रृद्धाकर अपना कल्याण करते उनका जन्म सफल है, हनुमान ने पूजा स्तुति वन्दना कर वीणा बजाकर मधुरध्वनी से स्तुति की, भगवान के दर्शन करते करते मन की तृप्ति नहीं हुई, यहाँ से जाने का मन नहीं करता, फिर भी चैत्यालयों मे ज्यादा नहीं रहना, मुझे कोई असादना नहीं लगे, इसलिये

जिनराज के चरण हृदय में धार मन्दिर से बाहर निकले। हजारो स्त्रीयो सहित विमान मे बैठ सुमेरूपर्वत की प्रदक्षिणा दी, श्रीशैल (हनुमान) सुमेरू की प्रदक्षिणा देकर चैत्यालयों मे दर्शनकर भरतक्षेत्र की ओर चले। तब मार्ग में सूर्य अस्त हो गया। हनुमान ने विमान से नीचे उतरकर एक सुर दुन्दुभी नाम का पर्वत वहाँ सेना सहित रात्रि व्यतीत की, कमलादि अनेक सुगन्धित पुष्पो से स्पर्शकर पवन आई उससे सेना के लोग सुख पूर्वक जिनेन्द्रदेव की कथा करते हुये बैठे। रात्रि में आकाश से ज्योतिमान एक तारा टूटता हुआ हनुमानजी ने देखा। देखकर मन में चिन्तवन करने लगे हाय हाय इस असार ससार वन में देव भी काल के वश होते हैं, ऐसा कोई जीव नहीं जो मरण को प्राप्त नहीं होता हो। बिजली की चमक और जल की लहरे जैसे नाशवान क्षणभगुर है, ऐसे यह शरीर भोग सब नाशवान है। इस ससार मे इस जीव ने अनन्त भवो तक दुख ही दुख भोगे। यह जीव विषयो के सुख को ही सुख मानते है, वह सुख नहीं दुख ही है। पराधीन इन्द्रियो के विषय क्षणभंगुर है। मोह की महिमा अनन्त काल तक जीव को संसार मे भ्रमण कराती है। अनन्त अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कालतक भ्रमणकर मनुष्यभव कभी कोई प्राप्त करते है, वह धर्म के साधन नहीं करते, वह विनाशीक सुखों में आसक्त होकर, महा संकटो को प्राप्त करते हैं। यह जीव राग द्वेष के वश होकर वीतराग भाव को नहीं जानता, यह इन्द्रिय रूपी चचल घोडा कुमार्ग मे ले जाकर इस जीव को नरक निगोद में पटक देता है। जैसे मृग मीन पक्षी लोभ के वश से जाल मे फसते है, ऐसे यह कामी क्रोधी लोभी जीव जिनमार्ग को प्राप्त किये बिना, अज्ञान के वश विषयरूपी जाल में फसते हैं। आशीविष सर्प समान यह मन एव इन्द्रिय इनके विषयो में रमते हैं, वे मूर्ख दुखरूपी अग्नि मे जलते हैं। जैसे कोई एक दिन राज्य कर बहुत दिन दुखी होते है। ऐसे मूर्ख जीव कुछ दिन विषयो के सुख को भोग अनन्तकाल पर्यन्त निगोद के दुख भोगते है। जो विषय सुख के अभिलाषी हैं वे दुखो के अधिकारी हैं। नरक निगोद के मूल यह विषय उनको ज्ञानी जीव नहीं चाहते हैं। मोहरूपी ठग से ठगाकर जो आत्म कल्याण नहीं करते, वे महा कष्ट को प्राप्त होते हैं। जो पूर्वभव में धर्म किया, तो मनुष्य भव पाया, धर्म का आदर नहीं करते वह, जैसे धन ठगाकर दुखी होते वैसे दुखी होगे। और देवों के भोगों को भोगकर यह जीव मरकर देव से एकेन्द्रिय होता है। इस जीव के पाप ही

शत्रु है पुण्य ही मित्र है। और कोई शत्रु मित्र नहीं। यह भोग ही पाप के मूल हैं, इनसे तृप्ति नहीं होगी। इनका अवश्य ही वियोग होगा, भोग शाश्वत नहीं रहते। इसीलिये मै इसराज्य को एवं रानियो को तथा परिवार प्रिय जन, प्रजा उन सबको छोडकर तप करूँगा। अगर तप नहीं करूँ तो अतृप्त हुआ, सुभौम चक्रवर्ती की तरह मरकर दुर्गति मे जाऊँगा। और यह मेरी रानियॉ सुन्दर सर्व मनोरथो को पूर्ण करने वाली पतिव्रता गुणों सहित है, उनको मैं अब तक अज्ञानता से छोड नहीं सका, वह मेरी अपनी भूल को कहॉ तक उलाहना दूँ। अथवा किसको दोष दू। देखो मै सागरों पर्यत स्वर्ग मे अनेक देवॉगनाओं सहित सुख भोगे। देव से मनुष्य होकर इस क्षेत्र में सुन्दर रानियो सहित भोग किया परन्तु तृप्त नहीं हुआ। जैसे ईधन से अग्नि तृप्त नहीं होती और नदियों से समुद्र तृप्त नहीं होता, ऐसे यह प्राणी विषय भोगो से तृप्त नहीं होता। मैने जन्म जन्म मे महादुख भोगे, रे मन! अब तो तू शात हो जा, क्यो व्याकुल हो रहा है। क्या तूने भयकर नरको के दुख नहीं भोगे नहीं सुने, वहॉ रौद्रध्यानी हिसक जीव जन्म लेते हैं, उन नरको मे महातीव्र वेदना असिपत्र वन, वैतरनी नदी, दुखदाई पृथ्वी, हे मन! तू नरक के दुखो से नहीं डरता, राग द्वेष कर्म कलक को तप से नहीं नाश करता है, मेरे इतने दिन ऐसे ही वृथा चले गये, विषय रूपी कुये में गिरा अपने आत्मा को भव पिंजरा से निकाल नहीं सका। अनादि क्राल से ससार मे दुखी होकर जन्म मरण किया, अब अनादि से लगे कर्मो को आत्मा से छुडाऊँ। हनुमानजी ने ऐसा निश्चयकर ससार शरीर भोगो से उदास हुये। जिनशासन के रहस्य को यथार्थ जाना, जैसे सूर्य मेघ पटल से रहित तेज रूप दिखता, ऐसे मोह पटल से रहित श्रीशैल (हनुमान) दिखाई दिये। जिस मार्ग से जिनेन्द्र भगवान सिद्धपद को पधारे, उसी मार्ग से कामदेव हनुमान राम के भक्त अंजनाके सुत पवनके पुत्र चलने को तैयार हुये।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापदमपुराण भाषावचनिका मे हनुमान का वैराग्य चिन्तवनवर्णन करनेवाला एकसौ बारहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-113

कामदेव हनुमान का दीक्षा लेना और उग्र तपकर निर्वाण प्राप्त करना

अथानंतर रात्रि पूर्ण हुई, सूर्य का उदय हुआ, जैसे साधु मोक्ष मार्ग का प्रकाश करते। हनुमान जगत को असार जान, भोगो से विरक्त होकर वैराग्य सहित मंत्रियो से कहने लगे, जैसे भरत चक्रवर्ती पहले तप करने के लिये वन में गये ऐसे हम जायेंगे। तब मंत्री प्रेम से महादुखी होकर, नाथ से विनती करने लगे, हे देव! हमको अनाथ नहीं करो, प्रसन्न हो, हम आपके भक्त है हमारा प्रतिपालन करो। तब हनुमानजी ने कहा, अगर आप निश्चय से मेरे आज्ञाकारी हो, फिर भी अहित के कारण हो, हित के कारण नहीं, जो ससार समुद्र से निकला उन्हे पुनः समुद्र मे गिराये तो मित्र कैसा। वह तो निश्चय से शत्रु ही है, जब इस जीव ने नरक मे महादुख भोगे, तब माता पिता, भाई बहन, मित्र, स्त्री कोई भी रक्षा करने वाला नहीं हुआ, यह दुर्लभ मनुष्य पर्याय और जिनशासन का ज्ञान प्राप्तकर बुद्धिमानी जीवो को प्रमाद करना उचित नहीं। जैसे राज्य के भोगों से मेरे अप्रीति हुई, ऐसे तुम्हारे से हुई,यह कर्मरूपी ठाठ भोग सुख नाशवान हैं, निःसन्देह हमारा तुम्हारा वियोग जरूर होगा जहाँ सयोग है, वहाँ वियोग अवश्य है, सुर नर इन्द्रादि सब ससारी जीव अपने अपने कर्मो के आधीन है, आयु पूर्ण होकर ही मरण हो, ऐसा मनुष्य पर्याय में कोई निश्चित नहीं, न जाने कब मरण हो जाये। मैने सागरों पर्यंत अनेकों भव तक देवो मे सुखो को भोगा, फिर भी तृप्त नहीं हुआ। जैसे ईधन से अग्नि तृप्त नहीं होती। गति जाति शरीर इनका कारण नाम कर्म है, जिससे यह जीव गतियो मे भ्रमण करता है, यह मोह बलवान हैं, जिससे यह शरीर उत्पन्न हुआ है, वह शाश्वत नहीं रहेगा, नाश होगा यह ससार के भोग ये सभी नष्ट होने वाले हैं, इसमे जो प्राणी मोह करता है, वह भव सकट मे फंसता है। उनको छोड़कर, मैं जन्म जरा मृत्यु रहित जो उत्कृष्ट सिद्धपद उसको प्राप्त करना चाहता हूँ, यह बात हनुमान ने मंत्रियो से कही, तब रणवास में रानियो ने सुना, सुनकर सभी रानियाँ दुखी होकर वियोग के कारण रोने लगी, तब ज्ञानवान लोगो ने उन्हें समझा कर सतोष दिया, हनुमान निश्चल विरक्त मन से

अपने बडे पुत्र को राज्य दिया और सभी को यथा योग्य विभूति देकर, रत्नों से निर्मित देवो समान अपना राज्य भवन, उसे छोडकर निकले, स्वर्ण रत्नमयी दैदीप्यमान पालकी में बैठकर चैत्यवान नाम के वन में गये। वहाँ नगर के लोग हनुमानजी की पालकी को देखकर रोने लगे। पालकी पर ध्वजायें फहराती चमरदि मोतियो की झालरो से सजाई गई। उस पालकी मैं बैठकर हनुमान वन में आये वहाँ धर्मरत्न नाम के योगीराज, धर्मरूपी रत्नों की राशी के स्वामी उनके दर्शनमात्र से पाप नष्ट होते हैं, ऐसे संत चारणऋषि अनेक ऋद्धियों सहित विराजमान थे। आकाश मे गमन करने वाले, ऐसे मुनिराज को दूर से देख, हनुमान पालकी से उतरे, महाभक्ति सहित हाथजोड नमस्कार कर विनती करने लगे हे नाथ! मैं शरीरादि पर द्रव्यों से निर्ममत्व हुआ, यह परमेश्वरी दीक्षा आप मुझे कृपाकर दो। तब मुनिराज कहने लगे। हे भव्य! तुमने अच्छा विचार किया, जो उत्तम पुरुष हैं, उनको जिन दीक्षा लेना चाहिये। यह जगत असार है, शरीर नाशवान है, भोग रोगों का घर है, शीघ्र ही आत्म कल्याण करो। अब अविनश्वर पद प्राप्त करने की परम कल्याणकारी बुद्धि तुम्हारी उत्पन्न हुई है। यह ज्ञान विवेकी जीवों को ही होता है। ऐसी आज्ञा मुनिराज की प्राप्तकर, पद्मासन से बैठ नमस्कार कर मुकुट कुडल हारादि सर्व आभूषण निकलकर डाल दिये। जगत से राग छोड, रानियों का बधन तोड, मोह ममता से मुख मोड, विष समान विषय सुख को छोड, वैराग्यरूप दीपक की शिखा से, रागरूपी अन्धकार दूरकर, शरीर को नाशवान जान, अपने कोमल हाथो से, सिर के बालों का केशलोच करने लगे। सम्पूर्ण परिग्रह से रहित होकर मोक्ष लक्ष्मी के लिये तैयार हो महाव्रतो को धारणकर असयम को दूर किया। कामदेव हनुमान के साथ साढेसातसौ बडे बडे राजा विद्याधर विद्युतगति सहित हनुमान के परम मित्र अपने पुत्रों को राज्य देकर अठाईस मूल गुणों को धारणकर महामुनि योगीन्द्र पद को प्राप्त किया, हनुमान की रानियॉ एवं सभी राजाओ की रानियॉ पहले तो वियोगरूपी अग्नि से दुखी होकर रोने लगी, फिर वैराग्य को प्राप्त होकर बंधुमती आर्यिका के पास जाकर भक्ति सहित नमस्कार कर आर्यिका व्रत को धारण किया। वे महाबुद्धिमान, शीलवान, गुणवान, ससार भ्रमण के भय से आभूषणादि परिग्रह का त्यागकर स्त्री पर्याय का उत्तम पद प्राप्तकर एक सफेद साडी को धारण किया, शील ही है आभूषण उनका, राजविभूति का त्यागकर मोक्ष मार्ग में लगी। और हनुमानजी

महाबुद्धिमान तपोधन महापुरुष संसार से विरक्त हो पांचमहाव्रत पाच समिती तीनगुप्ति को धार, शैल कहो पर्वत उससे भी अधिक श्रीशैल कहो हनुमान, राजा पवन के पुत्र, अजना के प्यारे बेटे नन्दन, चारित्र मे दृढ अचल हुये, उनका निर्मल यश इन्द्रादि देव गाते, अथवा बार बार स्तुतिकर वन्दना अर्चा पूजा करते। ऐसे सर्वज्ञ वीतराग देव का कहा हुआ धर्म आपने धारण किया। आप भव से पार होंगे। वे हनुमान महामुनि, सूर्य समान तेजस्वी जिनदेव का धर्म धारणकर ध्यानरूपी अग्नि से, अष्टकर्म की सम्पूर्ण प्रकृति रूप ईधन उनको नाशकर तुगीगिरी के शिखर से सिद्धपद को प्राप्त किया। केवलज्ञान केवलदर्शनादि अनन्त गुणों सहित सदा सिद्ध लोक में रहेंगे। यह हनुमान जी का चरित्र हमारे कर्मों को नाश कराने मे कारण होवे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे हनुमान का निर्वाणगमन वर्णन करनेवाला एकसौतेरहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-114

इन्द्र का धर्मोपदेश और श्रीरामचन्द्र के स्नेह की चर्चा

अथानंतर श्रीराजा रामचन्द्रजी सिहासन पर विराजमान थे। लक्ष्मण के आठो पुत्रों का एवं हनुमान का मुनिव्रत धारण करना, मनुष्यो के मुख से सुनकर हसे और कहने लगे, इन्होने मनुष्य भव के क्या सुख भोगे ये सभी छोटी अवस्था मे ही ऐसे भोगों को छोडकर योग धारण किया, वह बडा आश्चर्य है, देखो ऐसे मनोहर काम भोग को छोडकर विरक्त भावो से बैठे हुये तपस्या करते हुये ध्यान मे लीन हैं। धन्य है उनको, इस प्रकार कहा, यद्यपि श्रीराम सम्यग्दृष्टि ज्ञानी हैं, फिर भी चारित्रमोह के वश से इस जगत के ससार रूपी भोगो मे रहते है। संसार के अल्प सुखों को भोगते हुये, राम लक्ष्मण न्याय सहित राज्य करते हैं। एक दिन महाज्योति का धारक सौधर्मइन्द्र परमऋद्धि सहित महाधैर्य एवं गम्भीरता रूपी अलकार धारण कर सामान्य जाति के देव जो गुरु समान और लोकपाल जाति के देव, देशपाल समान, त्रायस्त्रिशत देव मंत्री समान, अन्य सम्पूर्ण देवो सहित इन्द्र अपने आसन पर बैठे। अद्भुत रत्नमयी सिंहासन उसपर सुखसे बिराजमान

जैसे सुमेरूपर्वत पर जिनराज चन्द्र सूर्य की ज्योति को जीते ऐसे रत्नों के आभूषण, जल की तरंग समान निर्मलप्रभा युक्त हार पहने, सुन्दर शरीर, नेत्रो को आनन्द देने वाले मुकुट, कुंडल, केयूर, भुजबंधादि दिव्य आभूषण पहने देवों सहित सभा में बैठे, जैसे नक्षत्रों सहित चन्द्रमा। अपने मनुष्य लोक में चन्द्रमा नक्षत्र अच्छे दिखते हैं, इसीलिये चन्द्रमा सूर्य नक्षत्रो का दृष्टान्त देते हैं। सूर्य चन्द्रमादि ज्योतिषी देव है। उनसे स्वर्गो के देवों की ज्योति अधिक है। और सभी देवों से इन्द्र की ज्योति अधिक है। अपने तेज से दशों दिशाओं में प्रकाश करते हुये सिंहासन पर बैठे। इन्द्र के इन्द्रासन का और सभा का वर्णन सैकडों मनुष्य अगर अपनी जिह्वा से करे तो भी नहीं कर सकते। सभा मे इन्द्र के निकट लोकपाल सभी देवो में मुख्य है। स्वर्ग से चयकर मुनिवन मुक्ति प्राप्त करेगे। सोलहस्वर्ग के बारहइन्द्र हैं, एक एक इन्द्रके चार चार लोकपाल एकभवतारी है। इन्द्रों में सौधर्मइन्द्र, सनतकुमार, लान्तवेन्द्र शतारेन्द्र आनत आरणेन्द्र ये छह एकभवतारी है। एकभवतारी का अर्थ इन्द्र से मनुष्य बनकर मोक्ष जायेगे, और शचि इन्द्राणी, पंचम स्वर्ग के लोकांन्तिक देव तथा सर्वार्थसिद्धि के अहमिन्द्र देव मनुष्य होकर मोक्ष जायेगे। सौधर्मइन्द्र अपनी सभा मे अपने समस्त देवो सहित बैठे, और लोकपालादि अपने अपने स्थानों पर बैठे। वे सौधर्मइन्द्र शास्त्रो का व्याख्यान करने लगे। सभी देव भक्ति से सुन रहे थे। वहाँ प्रसंग प्राप्तकर यह कथन किया, अहो देव! तुम अपने भावरूपी पुष्प निरंतर महाभक्ति सहित अर्हंतदेव को चढाओ, अर्हतदेव जगत के नाथ है, सम्पूर्ण दोषो को नाश करने मे दावानल समान है, तीनलोक में, अकृत्रिम जिनचैत्यालयो के दर्शन करने से मिथ्यात्व का खड, खड होता है। ऐसे अकृत्रिम चैत्यालय कहाँ कहाँ है। चित्रापृथ्वी के नीचे अधोलोक मे सातकरोड बहत्तरलाख अकृत्रिम जिनचैत्यालय है। मध्यलोक में चारसौ अट्ठावन अकृत्रिम जिनचैत्यालय है। उनकी सख्या-पाच सुमेरूपर्वत के-अस्सी। गजदन्तों के-बीस। जम्बू शालमली वृक्षों के-दस। विजयार्ध पर्वत के-एकसौसत्तर। वक्षार पर्वतो के-अस्सी। कुलाचलों के-तीस। इष्वाकार के-चार, मानुषोत्तर पर्वत के चार। नन्दीश्वरद्वीप के बावन। रूचकगिरी पर्वत के-चार। और कुडलगिरी पर्वत के-चार इस प्रकार सभी अकृत्रिम चैत्यालय मध्यलोक में है। उर्ध्वलोक मे चौरासीलाख सत्तानवेंहजार तेईस अकृत्रिम चैत्यालय हैं। उनकी सख्या-सौधर्म स्वर्ग मे-बत्तीसलाख। ऐशान स्वर्ग में अट्ठाईस लाख। सनतकुमार

स्वर्ग में बारहलाख। माहेन्द्रस्वर्ग में आठलाख। ब्रह्म बह्मोतर स्वर्ग में चारलाख। लांतव-कापिष्ठ स्वर्ग में पचास हजार। शुक्र-महाशुक्र स्वर्ग में चालीसहजार। शतार-सहस्रार स्वर्ग में छहहजार। आनत-प्राणत, आरण-अच्युत स्वर्ग में सातसौ। अधोग्रैवेयक में एकसौग्यारह। मध्यम ग्रैवेयक मे एकसौसात। उर्ध्वग्रैवेयक में इक्कानवें। अनुदिश के-नौ। और अनुत्तर विमानो मे पांच। जिनअकृत्रिम चैत्यालय हैं, ये अकृत्रिम चैत्यालय अनादि निधन है किसी के द्वारा बनाये हुये नहीं हैं, कभी भी विनाश को प्राप्त नहीं होंगें। इन अकृत्रिम चैत्यालयों में रत्नमयी 108-108 प्रतिमायें होती है, और 108-108 ही गर्भगृह होते है, उन गर्भगृहों में आठ आठ मंगल द्रव्य होते हैं एवं एक एक मंगल द्रव्य भी 108-108 होते हैं। जिनचैत्य एवं जिनचैत्यालयों की वदना करने से सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है, एवं परम्परा से मोक्ष जाते हैं।

वीतराग प्रभु ही भव्य जीवों को ससार से पार कराने मे समर्थ हैं। कैसे है भगवान? उनके जन्म कल्याणक में इन्द्रादि देव सुमेरूपर्वत पर ले जाकर क्षीरसागर के जल से प्रभु का एकहजारआठ कलशों से अभिषेक करते हैं, धर्म अर्थ काम और मोक्ष ये चारो पुरुषार्थ करते हुये जिनेन्द्रदेव पृथ्वीरूपी स्त्री को छोडकर सिद्धरूपी वनिता को प्राप्त किया। संसारी जीव अनाथ होकर मोह रूपी अंधकार में फंसे है, वे जिनप्रभु के दर्शन से स्वर्ग एवं मनुष्य लोक में जन्म लेकर संसार से पार होते हैं। जिनेन्द्र भगवान अरहत, स्वयभू, स्वयंप्रभु, सुगत, महादेव, हिरण्यगर्भ, ईश्वर, महेश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, विमल, धर्मचक्री, प्रभु, विभु, परमेश्वर, परम ज्योति, परमात्मा, तीर्थंकर, कृत्यकृत्य इत्यादि अनेक नामों से आपके गुणों का वर्णन करते हैं। इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती भी भक्ति से महास्तुति करते हैं, जिनराज की भक्ति से जीव कर्मो से छूटकर परम धाम को प्राप्त होता है। जैसा जीव का स्वभाव है, वैसा वहाँ रहता है। जो स्मरण करते है, उनके पाप नष्ट हो जाते हैं। वे भगवान पुराण पुरुषोत्तम आनन्द के कारण कल्याण के कर्त्ता, उनके तुम सब भक्त बनो, अगर अपना कल्याण चाहते हो, तो अपने हृदय में जिनेन्द्र प्रभु को विराजमान करो। यह जीव अनादि निधन है, कर्मों के कारण भव वन में भटकता है। सभी जन्मों में मनुष्य जन्म दुर्लभ है, उसको पाकर जो भूल करते हैं उनको धिक्कार है, चतुर्गति भ्रमण रूपी समुद्र मे पुनः कब पार होवेंगे। जो अरहंत का ध्यान नहीं करते जिनेन्द्रप्रभु के नाम का जाप नहीं करते, धिक्कार है उनको,

जो मनुष्य देह पाकर जिनेन्द्रप्रभु के कहा हुआ व्रत धारण नहीं करते वह पापी अनेक योनियों में जन्म मरण करते हैं। कभी मिथ्यातप से भवनत्रिक देव बनता है, वहॉ से मरकर स्थावर योनि में जाकर महाकष्ट भोगता है। यह जीव कुमार्ग के आश्रय से, मोह के वश होकर इन्द्रों के इन्द्र-जिनेन्द्रदेव उनका कहा हुआ धर्म नहीं मानते, जिनदीक्षा नहीं धारण करते, उन मंद भागियो को जिन दीक्षा महा दुर्लभ है, कभी कुतप से मिथ्यादृष्टि जीव स्वर्ग में उत्पन्न होते हैं, तो हीनदेव होकर महा ऋद्धिधारी देवों को देख पश्चाताप करते हैं, कि हम मध्यलोक के रत्नद्वीप मे मनुष्य हुये थे, तब अरहंत के मार्ग को नहीं जाना, भगवान की वाणी को नहीं मानकर, अपना कल्याण नहीं किया, मिथ्यातप से कुदेव हुआ। हाय-हाय! धिक्कार उन पापियों को जो कुशास्त्र की रचनाकर मिथ्या उपदेश देकर जीवों को कुमार्ग में भटकाते हैं। मूर्खों को जिन धर्म नहीं सुहाता है, इसीलिये भव भव मे दुखी होते हैं। और नारकी तिर्यंच जीव तो दुखी ही हैं, एवं हीन देव भी दुखी है, महाऋद्धि के धारी देव भी स्वर्ग से चय करते हैं, तब मरण का महादुख होता है। देवो में इष्ट वियोग का महाकष्ट है। बडे देवों की यह दशा, तब छोंटो की क्या बात? मनुष्य पर्याय प्राप्तकर आत्म कल्याण करते, वे धन्य है। इस प्रकार इन्द्र ने कहा पुनः कहने लगा कि ऐसा दिन कब होगा जो मेरी स्वर्ग लोक की आयु पूर्णकर मैं मनुष्य पर्याय प्राप्तकर विषय रूपी शत्रुओं को जीत कर्मों का नाशकर तप के प्रभाव से मुक्ति प्राप्त करूँ। तब एक देव कहने लगा यहॉं स्वर्ग मे तो सब ऐसा ही कहते है, परन्तु मनुष्य पर्याय प्राप्त करने के पश्चात् भूल जाते है। अगर कदाचित् मेरे कहने से आपको विश्वास नहीं हो तो देखो, पचम स्वर्ग का ब्रह्मेन्द्र नाम का इन्द्र अब रामचन्द्र हुये हैं, वह यहॉ तो ऐसे ही कहते थे, परन्तु अब वैराग्य का विचार ही नहीं करते। तब सौधर्मइन्द्र ने कहा सब बंधनों मे स्नेहरूपी राग का बडा बंधन है। जिसके हाथ पैर कंठादि सब कुछ बंधे हो, वह तो छूट जायेगें। परन्तु स्नेहरूपी राग से बंधा प्राणी कैसे छूटे। स्नेह से बंधा जीव तो एक क्षणमात्र भी अलग नहीं हो सकता, रामचन्द्रजी को लक्ष्मण से अति अनुराग है, लक्ष्मण को देखे बिना तृप्ति नहीं, अपने जीव से भी लक्ष्मण को अधिक जानते हैं। एक क्षणमात्र भी लक्ष्मण को नहीं देखते, तो राम का मन आकुल-व्याकुल हो जाता, तब लक्ष्मण को छोडकर कैसे वैराग्य को प्राप्त होते, कर्मों की ऐसी ही विचित्रता है, बुद्धिमान भी राग से मूर्ख हो जाता है। देखो, सुने

हैं अपने सभी पूर्वभव जिसने, ऐसे विवेकी राम भी आत्महित नहीं करते। अहो देव हो! जीवों के राग का महाबन्धन है इस समान दूसरा बंधन कोई नहीं। इसीलिये ज्ञानियों को राग, प्रेम, स्नेह को छोडकर आत्म कल्याण का मार्ग अपनाना चाहिये। इस तरह इन्द्र के मुख का उपदेश, तत्त्व ज्ञानरूप, जिनवर के गुणो में अनुराग से महापवित्र, उपदेश सुनकर, देव मन की विशुद्धता को प्राप्तकर जन्म जरा मरण के भय से मनुष्य भव प्राप्तकर मुक्ति पाने की अभिलाषा करने लगे। ऐसे सूर्य समान मनुष्य भव प्राप्तकर आत्म कल्याण करों।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे इन्द्र का देवो को उपदेशवर्णन करनेवाला एकसौ चौदहवॉं पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-115

लक्ष्मण का मरण और लव-अंकुश का दीक्षा लेना

अथानंतर इन्द्र, सभा से उठे, तब सभी देव भवनवासी, व्यन्तरवासी, ज्योतिषी एवं विमानवासी देव इन्द्र को नमस्कार कर उत्तम निर्मल भावो से अपने अपने स्थान को गये, पहले दूसरे स्वर्ग के कल्पवासी देव भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी देवों को स्वर्ग मे लेकर जाते है। उस सभा मे से स्वर्ग के दो देव रत्नचूल और मृगचूल बलभद्र नारायण के प्रेम की परीक्षा के लिये तैयार हुये। मन में सोचा कि दोनो भाई परस्पर प्रेम से युक्त रहते हैं। जाकर देखें कि उन दोनो की प्रीति कैसी है। राम को लक्ष्मण से इतना स्नेह है, जिसको देखे बिना नहीं रहते। तो राम का मरण सुनकर लक्ष्मण क्या करेंगे? लक्ष्मण शोक से दुखी होकर क्या करेंगे। इसीलिय जाकर एक क्षण देखकर आयेगें। शोक से व्याकुल होकर लक्ष्मण का कैसा मुख हो जायेगा, किनसे क्रोध करेगे, क्या कहेगे, ऐसा विचारकर दोनों दुराचारी देव अयोध्या आये। और राम के महल में विक्रिया द्वारा सम्पूर्ण अन्तपुर की रानियों का रुदन कराया, और ऐसी विक्रिया की, कि द्वारपाल, उमराव, मंत्री, पुरोहितादि सभी नीचा मुखकर लक्ष्मण के पास आये, और राम का मरण कहने लगे, हे नाथ! राम परलोक पधारे, ऐसे वचन सुनकर लक्ष्मण ने हाय यह शब्द भी "आधा" सा कहकर तत्काल ही प्राणो को छोड दिया।

सिंहासन पर बैठे थे सो वचनरूपी वज्रपात के मारे जीव रहित हो गये। आँख की पलक जैसी की तैसी रह गई। जीव निकल गया, शरीर अचेतन रह गया, लक्ष्मण को भाई की, मिथ्या मृत्यु के वचन सुनकर मरा देख, दोनों देव दुखी हुये, लक्ष्मण को जीवित करने में असमर्थ हुये, तब सोचा कि इनकी मृत्यु इसी प्रकार होनी होगी, मन में पश्चात्ाप करते हुये आश्चर्य सहित अपने स्थान गये। लक्ष्मण की वह मनोहर मूर्ति मृतक समान हुई। देव देख नहीं सके, वहाँ खडे नहीं रह सके, उनका पुरुषार्थ निंद्यनीय हुआ है। गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है—हे राजन! बिना विचारे पापी लोग जो कार्य करते, उनको पछताना ही पडता है। देव गये और लक्ष्मण की रानियाँ पति को अचेतन देख प्रसन्न करने का कार्य कर कहती हैं—हे नाथ! किसने आपका मान नहीं किया, हे देव! आप प्रसन्न होओ, आपकी अप्रसन्नता हमारे को दुख का कारण हैं, ऐसा कहकर वे रानियॉं परम राग सहित लक्ष्मण के शरीर से आलिंगन कर चरणो मे गिरी, वे रानियॉं दक्षता पूर्वक कोई वीणा बजाने लगी, कोई मृदग बजाने लगी, कोई पति के गुण मधुर स्वर से कहने लगी, पति को प्रसन्न करने का अनेक उपाय करती, कोई पति का मुख देखती, कोई पति के चरण अपने सिर पर रखती, इत्यादि अनेक चेष्टाचायें की। इस प्रकार रानियों ने पति को प्रसन्न करने के अनेक प्रयत्न किये परन्तु उनके यत्न अचेतन शरीर के लिये निरर्थक हुये। नाथ की यह दशा देख रानियो का मन अति व्याकुल हुआ, सन्देह को प्राप्त होकर सोचती है, कि क्षणमात्र में, यह क्या हुआ, यह सोच भी नहीं सकते, कह भी नहीं सकते, ऐसा खेद का कारण कौनसा उत्पन्न हुआ। ऐसा सोचकर वे मोह की मारी उलट पुलट होने लगी। इन्द्र की इन्द्राणी समान वे रानियॉं दुख से व्याकुल होकर सूख गई, न जाने उनकी सुन्दरता कहॉं चली गई। यह वृतान्त भीतर के लोगो के मुख से सुन श्रीरामचन्द्रजी मत्रियो सहित दुख के भरे भाई के पास आये, और भीतर राजलोक मे गये। लक्ष्मण का मुख प्रात· काल के चन्द्रमा समान मंद ज्योति रूप देखा, जैसे तत्काल का वृक्ष मूल से उखड कर गिरा हो, ऐसे भाई को देखा। मन में विचार करने लगे, कि बिना कारण आज भाई मेरे से क्यों रूठ गया है, यह हमेशा प्रसन्न रहता था, आज क्यों उदास हुआ है। राग से शीघ्र ही भाई के निकट जाकर, लक्ष्मण को उठाकर हृदय से लगा, मस्तक चूमने लगे, हरि को देख हलधर शरीर से लिपट गये। यद्यपि जीने के चिन्ह से रहित लक्ष्मण को

देखा, फिर भी राग के भरे राम, लक्ष्मण को मरा नहीं कहते। गरदन टेढी हो गई, शरीर शीतल हो गया, श्वाच्छोश्वास नहीं, नेत्रों की पलक न खुले न बंद हों, लक्ष्मण की यह दशा देख, राम खेद खिन्न होकर पसीने से भर गये। हे दीनों के नाथ! राम दीन हो गये, बार बार मूर्च्छित होकर गिर पडते, ऑसुओं से भरे नेत्रो से भाई के शरीर को देख, सोचते हैं कि यह महाबली किस कारण से ऐसी अवस्था को प्राप्त हुआ है। यह चिन्ता करते कम्पायमान हो रहा है शरीर उनका, यद्यपि राम सम्पूर्ण विद्याओं के निधान, फिर भी भाई के मोह से विद्यायें भूल गये। भाई लक्ष्मण मूर्च्छित हो गया है, ऐसा जानकर अनेक वैद्य डाक्टर मत्र तत्र जानने वालों को बुलाये, अनेक औषधिया मंगवाई, लेकिन जीवित हो तो प्रयत्न करते, अब क्या करें, क्या कहे, तब सभी नीचे मुखकर बैठे रहे, तब राम उदास निराश होकर चिन्ता करने लगे और बेहोश होकर गिर गये। तब श्रीरामचन्द्रजी को अनेक उपचारो द्वारा बेहोशी को दूर किया। तब श्रीराम भाई के वियोग से महा दुखी विह्वल होकर रोने लगे। ऑसुओं के प्रवाह से राम का मुख ऐसा दिखे, जैसे बारिस की धाराओ से चद्रमा। श्रीरामचन्द्रजी को अत्यन्त विह्वल दुखी रोते हुये देख, राज्य के, नगर के, गॉव के, प्रजा के, सभी लोग रोने लगे, सभी रानियॉ महादुखी होकर ऐसा विलाप कर रोती है जो देखा नहीं जाता हैं, कहती हैं—हे नाथ! पृथ्वी को सुखी करने वाले, हमारे को सुख देने वाले कुछ शब्द बोलो, आपने बिना कारण क्यों मौन पकड रखा है, हमारे से अपराध क्या हुआ? बिना अपराध हमारे को क्यो छोडते हों, आप तो ऐसे दयालु हो, हमारे से अनजाने में गलती हो जाये तो आप क्षमा करते थे। अब भी क्षमा करो।

अथानंतर लक्ष्मण नारायण की मृत्यु को देखकर, लव अंकुश राजकुमार परम विषाद से दुखी होकर विचारने लगे धिक्कार है इस असार संसार को एवं इस क्षणभंगुर शरीर को, जो एक निमिष मात्र में मरण को प्राप्त हुये। यह वासुदेव विद्याधरों से भी नहीं जीता जाता, उनको मृत्यु रूपी काल ने आकर जीता। इसलिये यह नाशवान शरीर एवं नाशवान राज्य संपत्ती भोग उनसे हमारे को क्या सिद्धि होगी? यह विचारकर महारानी सीता के पुत्र लव-अंकुश पुन गर्भ मे आने का भय उनको, इसलिये पिता के चरणों में नमस्कार कर महेन्द्रोदय उद्यान में जाकर अमृतेश्वर मुनिराज के चरणों में महा भाग्यशाली दोनों भाई ने महा मुनिपद को प्राप्त किया। जब दोनों भाइयों ने दीक्षा ली, तब लोग और

विशेष आकुल व्याकुल हुये, कि अब हमारी रक्षा कौन करेगा? श्रीराम राजा तो भाई के मरण का महादुख जो शोकरूपी सागर मे भटक रहे हैं। दोनों पुत्र चले गये, दीक्षा ले ली, वह भी श्रीरामचन्द्रजी को सुधि नहीं चिन्ता नहीं। राजा राम को राज्य से, पुत्रों से, प्रियाओ से, अपने प्राणों से भी अति प्यारे लक्ष्मण है, यह कर्मों की विचित्रता है, इसलिये ऐसी दुख रूप अवस्था होती है, संसार का चरित्र ऐसा देख ज्ञानी जीव वैराग्य को प्राप्त होते हैं, जो उत्तम श्रेष्ठ ज्ञानी मनुष्य हैं, उन्हे बाहर कुछ निमित्त मिलते ही अंतरंग के विकार को दूर कर ज्ञान रूप होकर सूर्य का उदय होता हैं, पूर्व बध कर्मो का क्षयोपशम हो तब जीव को वैराग्य होता है, और मुनि दीक्षा लेकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। गृहस्थ जीवन से मोक्ष नहीं होता है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा—वचनिका मे लक्ष्मण का मरण और लव—अकुश का वैराग्य वर्णन करनेवाला एकसौपन्द्रहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-116

लक्ष्मण की मृत्यु से दुखी होकर श्रीराम का विलाप करना

अथानंतर गौतमस्वामी कहते हैं हे श्रेणिक! लक्ष्मण के मरने से सभी लोग व्याकुल हुये। युग प्रधान जो राम वे महाव्याकुल, सर्व क्रियाओं से रहित होकर, उनको कुछ भी शुध बुध नहीं रही। लक्ष्मण का शरीर स्वभाव से महासुन्दर, कोमल, सुगन्ध सहित था, मरने के पश्चात् भी जैसा का तैसा ही है। श्रीराम लक्ष्मण को एक मिनट भी नहीं छोडते, कभी हृदय से लगा लेते, कभी प्यार करते, कभी चूमते, कभी लेकर बैठ जाते, कभी कंधे पर लेकर चलते, एक क्षण भी किसी का विश्वास नहीं करते, जैसे बालक के हाथ में अमृत आये, वह भी कठिन पकड कर रखे, ऐसे राम महाप्रिय भाई लक्ष्मण को पकड कर रखे। और अनाथ एवं दीन की तरह विलाप करने लगे। हे भाई! यह तुझे क्या योग्य है, जो मुझे छोडकर तुने अकेले ही भागने की कोशिश की मैं तेरा वियोग एक क्षण भी सहन करने में समर्थ नहीं हूँ। यह बात क्या तुम नहीं जानते हो, तुम तो सब बातों में महाप्रवीण हो, मेरे मन की बात जानने मे तुम दक्ष हो, अब मुझे तुम दुख में डालने का काम क्यों कर रहे हो। हे भाई! यह क्या क्रूर पुरुषार्थ किया, जो मेरे बिना जाने, बिना पूछे, कूच

का नगाडा बजा दिया। हे वत्स! हे बालक! एक बार मुझे तेरी अमृतमयी वाणी पिला, तू तो महा विनयवान था, बिना अपराध मेरे से क्यों क्रोध किया, हे नारायण! अभी तक कभी भी मेरे से मान नहीं किया, अब तू कुछ ओर ही हो गया, बता मैंने क्या किया जो तू मेरे से रूठ गया, तू तो हमेशा मेरा विनय करता, मुझे दूर से आते देख खडे हो जाता, मेरे सन्मुख आता, मुझे सिंहासन पर बैठाकर आप भूमि पर बैठता, अब यह तेरी क्या दशा हो गई। मैं अपना सिर तेरे पैरों में रखता हूँ, तो भी तू नहीं बोलता। तेरे चरण कमल चन्द्रकान्त मणि से अधिक ज्योतिवान, जो देव विद्याधर सभी आकर नमस्कार करते हैं, हे देव! अब शीघ्र ही उठो, मेरे पुत्र वन को गये, वे दूर नहीं गये उनको समझाकर वापिस ले आयेगें, और तुम्हारे बिना ये तुम्हारी रानियाँ आर्तध्यान से भरी रोती हुई कलकलाट कर रही हैं। तुम्हारे गुण रूपी पाशों से बंधी पृथ्वीपर लोट पोट हो रही है। उनके हार शीशफूल, चूडामणि आदि आभूषण बिखरकर गिर गये है। वे सभी महाक्रूर, आक्रन्दन पूर्वक रो रही हैं। इनका रोना बद क्यों नहीं करते हो, अब तुम्हारे बिना मैं क्या करूँगा, कहाँ जाऊँगा, ऐसा स्थान नहीं, जहाँ मुझे विश्राम मिले। और यह चक्ररत्न तुम्हारा तुम से ही अनुरक्त है, इसको छोडना तुम को कहाँ उचित है, तुम्हारे वियोग में मुझे अकेला जान, शत्रु दबाते है, अब मै क्या करूँ, मुझे अग्नि नहीं जलाती, विष नहीं मारता, परन्तु तुम्हारा वियोग, मुझे जलाता एवं मारता है। अहो लक्ष्मीधर! क्रोध छोडो, बहुत देर हो गई, तुम धर्मात्मा तीनों काल सामायिक करनेवाले, भगवान की भक्ति पूजा मे निपुण, अब सामायिक पूजा का समय टल गया, अब मुनियो के आहार देने का समय हो गया, उठो चलो, तुम साधुओ के भक्त अब प्रमाद क्यो करते हो अब यह सूर्य भी पश्चिम दिशा को आया, तुम्हारे दर्शनों के लिये सूर्य भी तरस कर जा रहा है। इस प्रकार विलाप कर रोते हुये राम को सम्पूर्ण दिन व्यतीत हुआ। निशा आई तब श्रीराम सुन्दर सेज बिछाकर भाई लक्ष्मण को भुजाओं मे लेकर सोये, किसी का विश्वास नहीं, राम ने सब पुरुषार्थ को छोडा। एक लक्ष्मण मे ही जीव। रात्रि को लक्ष्मण के कान में कहते है, हे देव! अब तो मैं अकेला हूँ, तुम्हारे मन की बात कहो, तुम क्यों ऐसे हो गये, तुम्हारा मुख चन्द्रमा से अधिक मनोहर कातिवान, अब क्यो निराश दिखता है, तुमको क्या चाहिये, सो मैं वह लेकर आऊँ, हे लक्ष्मण! ऐसी क्रिया करना तुम्हे शोभा नहीं देती, जो मन मे हो वह मुख से कहकर मुझे आज्ञा करो, अथवा महारानी सीता तुम्हे याद आई हो, यह पतिव्रता अपने वनवास के समय दुखों में पूर्ण सहायक थी, वह तो अब

परलोक गई, तुम को खेद करना उचित नहीं, हे धीर! विषाद छोडो विद्याधर अपने शत्रु हैं, वह छिद्र देख आये, अब अयोध्या लुट जायेगी, इसलिये जो यत्न करना हो वह करो, हे भाई! तुम किसी से क्रोध भी करते, तब भी ऐसे अप्रसन्न नहीं दिखते, अब क्या हो गया, मेरे पर प्रसन्न होओ, मैं तेरे चरणों में गिरता हूँ। नमस्कार करता हूँ, तुम तो महा विनयवान हो, सम्पूर्ण पृथ्वीपर यह बात प्रसिद्ध है, कि लक्ष्मण राम का आज्ञाकारी है, सदा दोनो का मन एक है। हे राजाओ के राजन्! तुमने प्रजा को अति आनन्दित किया, तुम्हारे राज्य में कोई दुखी नजर नहीं आता, अब मुझे दुखी क्यों कर रहे हो, इस भरतक्षेत्र के तुम नाथ हो, अब प्रजा के लोगो को अनाथकर, गमन करना उचित नहीं। तुमने चक्र से अनेक शत्रुओ के चक्र को जीते, अब कालचक्र का पराभव कैसे सहते हो, तुम्हारा शरीर राज्य लक्ष्मी से जैसा सुन्दर था वैसा ही मूर्च्छित अवस्था मे भी सुन्दर है। हे राजेन्द्र! अब रात्रि गई, सूर्य का उदय हुआ, अब नींद छोडो, आख खोलो, तुम मुनिसुव्रतनाथ के भक्त प्रात. काल का समय क्यो चूकते हो, भगवान वीतराग मोह को नाशकर लोकालोक को जाननेवाला केवलज्ञान प्रगट किया, वे तीनलोक के सूर्य उनकी शरण ग्रहण करो। प्रातः काल हुआ फिर भी मुझे अधकार ही दिखता है, क्योकि मै तेरा मुख प्रसन्न नहीं देख रहा हूँ। इसलिये हे विचक्षणे! अब नींद छोडो जिन पूजाकर सभा में बैठो, प्रजा के लोग तुम्हारे दर्शनों के लिये खडे है, बडा आश्चर्य है, सरोवर मे कमल खिले, परन्तु तुम्हारा मुख कमल क्यो नहीं खिला। ऐसी विपरीत क्रिया मत करो, उठो चलो राज्य मे, मन को लगाओ, हे नारायण! ज्यादा सोने से जिनेन्द्र भगवान की पूजा मे कमी होती है, सम्पूर्ण नगर मे, मगल शब्द नहीं हो रहे है, गीत नृत्य बंद हो गये, दूसरो की क्या बात, जो महा विरक्त मुनिराज हैं, उनको भी तुम्हारी यह बात सुन दुख होता है, तुम जिनधर्म के धारी, सभी साधर्मीजन, तुम्हारी शुभकामना चाहते हैं, वीणा बांसुरी की ध्वनि रहित अयोध्या तुम्हारे वियोग से दुखी हो रही है। पूर्वभव के अशुभ कर्म के उदय से, हम तुम जैसे भाई की अप्रसन्नता देख रहे है। हे मनुष्यो के सूर्य! जैसे युद्ध में शक्ति के घाव से मूर्च्छित हुये थे पुन. उठकर आनन्द से मेरा दुख दूर किया ऐसे ही अब जल्दी से उठकर मेरा दुख दूर करो।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे रामदेव का विलापवर्णन करनेवाला एकसौसोलहवॉ पर्वपूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-117

शोक सन्तप्त राम को विभीषण का सम्बोधन

अथानंतर लक्ष्मण के मरण का वृतान्त सुनकर, विभीषण अपने पुत्रों सहित, एवं विराधित सम्पूर्ण परिवार सहित, और सुग्रीवादि विद्याधरों के अधिपति अपनी अपनी रानियों सहित शीघ्र ही अयोध्या पुरी आये। ऑखों में आँसू भरे, हाथजोड शीश नमाकर राम के समीप आये, महाशोक रूप है मन उनका, अति विषाद के भरे, राम को प्रणाम कर भूमि में बैठे, एक क्षण बैठने के पश्चात् मंद मंद वाणी से विनती करने लगे हे देव! यह शोक महादुर्निवार है, फिर भी आप जिनवाणी के ज्ञाता हो संसार का स्वरूप जानते हो, इसीलिये आप शोक को छोडो, ऐसा कहकर सब चुप हो गये। पुन॰ विभीषण सब बातो में प्रवीण वह कहने लगे, हे महाराज! यह अनादिकाल की रीति है, जिन्होने जन्म लिया वह अवश्य ही मरेंगे, यह ससार की परम्परा है, नारायण को ही नहीं, जन्म का साथी मरण ही है, मृत्यु अवश्य है, किसी से टाली टले नहीं। इस ससार पींजरे में फंसा यह जीव रूपी पक्षी महादुखी हैं, काल के वश हैं, मृत्यु का उपाय नहीं, और सबके उपाय है। यह शरीर नाशवान है, इसीलिये शोक करना वृथा है। जो दक्ष पुरुष हैं, वे आत्म कल्याण का उपाय करते हैं। रोने से मरे, मनुष्य जीवित नहीं होते और बात भी नहीं करते। इसीलिये हे नाथ! शोक मत करो, यह मनुष्य का शरीर तो स्त्री पुरुष के संयोग से उत्पन्न होता है, वह पानी के बुद बुदावत् नष्ट हो जाता है। इसका क्या आश्चर्य! अहमिन्द्र, इन्द्र, लोकपालादि देव, आयु के क्षय होने से स्वर्ग से चय करते हैं, जिनकी सागरो की आयु किसी के मारने से मरते नहीं वह भी आयु के पूर्ण होते ही मरते हैं। तो मनुष्यों की क्या बात। सप्तधातु से बना शरीर, ऐसे शरीर के रहने की क्या आशा? यह प्राणी अपने परिवार की चिन्ता करता है, पर स्वयं क्या अजर अमर है। अपना भी मरण होने वाला है, यह क्यों नहीं सोचता। इनकी ही मृत्यु आई हो और हम अमर रहें तो रोये, जब सबकी ही यहीं दशा है तो रोना क्यों? सभी ही शरीर धारी जीव मृत्यु के आधीन हैं। सिद्ध भगवान के शरीर नहीं इसलिये मरण नहीं। जिस दिन यह शरीर उत्पन्न हुआ, उसी ही दिन से मरण इसके साथ में है। यह संसारी जीवो की रीति है इसीलिये संतोष धारण करो, इष्ट के वियोग का शोक करना वृथा है, शोक कर मर जायें तो भी वह वस्तु

पुनः नहीं आती, इसीलिये शोक क्यों करना, देखो काल तो वज्र दण्डलेकर सिर पर खडा है और संसारी जीव निर्भय होकर बैठे हैं। तीनलोक के नाथ सिद्ध परमेष्ठी उनको छोडकर तीन लोक में कोई मृत्यु से बचा सुना नहीं, सिद्ध प्रभु ही अजर अमर हैं। और शेष सभी जीव जन्म मरण करते हैं। ये संसारी जीव दावानल समान दुखी होकर जलते हैं, सो क्या, आप नहीं देखते हो, संसार मे भ्रमणकर महाकष्ट से मनुष्य शरीर प्राप्तकर वृथा खोते है। काम भोग के अभिलाषी होकर नरक निगोद के दुख भोगतें हैं। कभी व्यवहार धर्म से स्वर्ग में देव भी होते हैं, और आयु के अन्त में वहाँ से भी मरते हैं, जैसे नदी के किनारे वृक्ष कभी भी उखड कर गिर जाते है, ऐसे ही चारों गति के जीवो का शरीर मृत्युरूपी वृक्ष टूटकर गिर जाता है। इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती आदि सभी मरण को प्राप्त होते हैं, पाताल में, भूतल मे, स्वर्ग मे, तीनलोक मे, ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ से मरण नहीं होता हो, छठेकाल के अन्त मे इस भरतक्षेत्र मे प्रलय होगी। पहाड नष्ट हो जायेगे, तो मनुष्यों की क्या बात?

जो भगवान तीर्थकरदेव वज्रवृभषनाराच सहनन समचुरस्रसस्थान के धारी देव एव मनुष्यों से पूज्य जो किसी से भी नहीं जीते जा सकते, उनका भी शरीर अनित्य, वे भी शरीर को छोड सिद्धलोक में निज भाव रूप रहते है। तो दूसरों का शरीर कैसे नित्य होगा, देव मनुष्य तिर्यच नारकियो का शरीर केले के वृक्ष समान असार है। जीव तो शरीर का यत्न करता है और काल प्राणो को हरता है। जैसे बिल के अन्दर गरुड सर्प को ले जाते है, ऐसे शरीर के भीतर जीव को काल ले जाता है। यह प्राणी मरे को रोता है, हे भाई, हाय पुत्र, हाय मित्र इस प्रकार शोक करते हैं, और कालरूपी सर्प सबको निगलता है। यह अज्ञानी झूठी इच्छाये करता है, यह मैं कररहा हूँ, मैंने यह किया, यह मैं करूँगा, ऐसा विचार करते करते मर जाता है, जैसे टूटा जहाज समुद्र के नीचे चला जाता है। मरने वाले के साथ कोई जा सकता नहीं, अगर साथ जा सकता तो इष्ट का वियोग कभी नहीं होता। शरीरादि पर वस्तुओ से राग करते, वह दुख रूपी अग्नि मे प्रवेश करते है, इन जीवो के इस ससार मे इतने परिवार हुये जिनकी कोई संख्या नहीं। जैसे समुद्र के बालु के कणों से भी अधिक जीवों से नाता रिश्ता हुआ है। और निश्चय करके देखें, तो इस जीव के न कोई शत्रु है न कोई मित्र हैं। शत्रु तो राग द्वेषादि हैं, और मित्र ज्ञान दर्शन आदि हैं। और जिनके साथ अनेक

प्रकार से प्यार किया, जिनको अपना जाना वह भी शत्रु हुआ, जिसके स्तनों का दूध पीया, जिससे शरीर का पालन पोषण किया, ऐसी माता को भी दुर्जन लोग मारते हैं। धिक्कार है इस संसार की माया को, जो पहले स्वामी था और बार बार उससे नमस्कार करवाता, वह भी दास हो जाता, तब पैरों की लातों से मारता है। हे प्रभो! मोह की शक्ति देखो, इसके वश होकर यह जीव अपने आपको नहीं जानता, दूसरे को अपना मानता है। जैसे कोई हाथो से काले नाग को पकडता है, वैसे कनक कामिनी को ग्रहण करता है। इस लोकाकाश मे ऐसा कोई स्थान नहीं जहॉ जीव ने जन्म मरण नहीं किया हो। नरक मे अनेक दुख सागरों पर्यंत भोगे। और सुअर कुत्तादि होकर इस जीव ने इतना मल का भोजन किया, जो अनन्त जन्म को देखे तो हजारो विंध्याचल पर्वत की राशि से भी अधिक होगा। और इस अज्ञानी जीव ने क्रोध के वश से दूसरे जीवो को बहुत बार मारा और उन्होंने इनको मारा। एक दूसरों की मार काट की गिनती करना चाहे तो नहीं कर सकते, नरको में दुख पाया, निगोद में जन्म मरण अनतकाल तक किया। ऐसा सुनकर कौन प्राणी मोह करता है अज्ञानी मूर्ख ही मोही होता है, ससार में इस जीव का न कोई अपना है, न कोई दूसरा है। कुछ थोडे समय के विषय सुख उसके लिये क्यो महादुखो को सहन करेगा। यह जीव मोहरूपी पिशाच के वश होकर, ससार वन मे भटकता है। हे श्रेणिक! विभीषण राम से कहते हैं हे प्रभु! यह नारायण लक्ष्मण का मृतक शरीर छोडने योग्य है, अति शोक करना योग्य नहीं। और यह कलेवर हृदय से लगाकर रखना योग्य नहीं। इस प्रकार विद्याधरो का सूर्य जो विभीषण उसने श्रीराजा रामचन्द्रजी से विनती की। परन्तु श्रीरामचन्द्रजी महा विवेकी ज्ञानवान, फिर भी कर्म के योग से मोह के वश हो रहे, जानते हुये भी बलभद्र-नारायण के राग से श्रीराम लक्ष्मण के शरीर को नहीं छोडते, जैसे विनयवान शिष्य गुरु की आज्ञा नहीं छोडते, जैसे सूर्य का उदय अंधकार को नष्ट किये बिना नहीं रहता। ऐसे मोहकर्म भी रागी जीवको राग से दूर नहीं होने देता। ऐसे श्रीराम लक्ष्मण के राग को दूर नहीं कर रहे है। यही मोह का मूल कारण है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे लक्ष्मणका वियोग रामका विलाप और विभीषण का ससाररूप वर्णन करनेवाला एकसौसत्तरहवा पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-118

देवों द्वारा संबोधने पर राम का शोक रहित होना और लक्ष्मण के शरीर का दाह संस्कार करना

अथानंतर सुग्रीवादि सभी राजा, रामचन्द्रजी बलदेव से विनती करते है, हे स्वामिन्! अब वासुदेव के शरीर का दाह सस्कार करो। तब श्रीरामचन्द्रजी को यह शब्द बहुत अनिष्ट लगे और क्रोधकर कहने लगे, तुम अपने माता, पिता, पुत्र, पौत्रादि सबका दाह संस्कार करो। मेरे भाई का दाह सस्कार क्यों करें। तुम पापियों के मित्र बंधु कुटुबादि सब मरे, मेरा भाई क्यो मरे। उठो लक्ष्मण इन दुष्ट लोगों को छोडकर दूसरी जगह चले। जहॉ इन पापियों के कठोर शब्द नहीं सुनने पडें, ऐसा कहकर भाई को हृदय से लगाकर कंधेपर रख चले। विभीषण सुग्रीवादि अनेक राजा इनके साथ पीछे पीछे चले जा रहे है। राम एक मिनिट का भी किसी का विश्वास नहीं करते, भाई को कधे पर लेकर फिरते हैं। जैसे बालक के हाथ में विषफल हो, और कोई छुडाना चाहते, पर बालक नहीं छोडता, वैसे रामचन्द्रजी लक्ष्मण के शरीर को नहीं छोडते। श्रीराम बलदेव के आखो मे ऑसू बह रहे हैं, मन बहुत दुखी हो रहा है, धर्म कर्म सब भूल गये हैं, भाई से बार बार कहते है, हे भाई! अब उठो, बहुत देर हो गई, ऐसे क्या सोते हो, अब स्नानके समय हो गया, स्नान कर सिहासन पर बैठो, ऐसा कहकर लक्ष्मण के मृतक शरीर को स्नान के सिहासन पर बैठाया, और मोह से भरे राम मणिस्वर्ण के कलशों से स्नान कराया, मुकुटादि सर्व आभूषण पहनाये, भोजन की तैयारी कराई, सेवक लोगो से कहा कि रत्न स्वर्ण के पात्रो मे अनेक प्रकार का सुन्दर मिष्ठ स्वादिष्ठ भोजन लाओ, उससे भाई का शरीर पुष्ठ होगा, सुन्दर दाल भात फुलका नाना प्रकार के व्यंजन शीघ्र ही लाओ, आज्ञा प्राप्त करते ही सभी सेवक भोजन की सामग्री लेकर आये, तब रघुनाथ स्वय अपने हाथों से लक्ष्मण के मुख मे ग्रास देने लगे, सो लक्ष्मण ने ग्रहण नहीं किया, जैसे अभव्य जीव जिनेन्द्र भगवान का उपदेश ग्रहण नहीं करते, तब राम ने कहा, तूने मेरे से क्रोध किया, परन्तु आहार से क्या क्रोध, आहार तो करो, मेसे मत बोलो, जैसे जिनवाणी अमृत समान है, परन्तु विषय अभिलाषी संसारी जीवो को नहीं रुचती, वैसे यह

अमृत रूप आहार लक्ष्मण के मृतक शरीर को नहीं रूचता। पुनः रामचन्द्रजी कहते हैं—हे लक्ष्मीधर! भोजन नहीं करते तो कम से कम दूधादि पीने की वस्तुयें है वह तो पी लो, ऐसा कहकर भाई को दूधादि पिलाते तो वह क्या पीते है, नहीं पीते। यह कथा गौतमस्वामी श्रेणिक से कहते हैं, वह ज्ञानवान विद्वान पंडित विवेकी राम स्नेह राग के कारण, जैसे जीवित मनुष्य की सेवा करते, वैसे मरे हुये भाई की सेवा करते रहें। और नाना प्रकार के मनोहर गीत वीणा बांसुरी आदि बजवाते रहें, तो लक्ष्मण के मृतक शरीर को क्या, देखो ये मरे हुये भी लक्ष्मण राम के साथ को नहीं छोडते हैं। फिर भी श्रीराम भाईलक्ष्मण को कभी चंदन लगाते, कभी तेल फुलेल इतर लगाते, कभी हाथों मे उठा लेते, कभी हृदय से लगा लेते, कभी मुंहपर हाथ फेरते, कभी प्यार करते और कहते, हे लक्ष्मण! यह क्या हुआ तू तो कभी ऐसा नहीं सोचता, अब क्या सोच-चिन्ता करता है, या तूझे किसी निंद्रा देवी ने आकर घेर लिया है, इतना सोचना भी अच्छा नहीं, अब उठो, इस प्रकार स्नेह रूप ग्रह से ग्रसित बलदेव अनेक चेष्टाये भाई के लिये कर रहे हैं। पृथ्वीपर सभी जगह गांव गांव, नगर नगर में यह प्रगट हुआ, कि तीन खंड के अधिपति राजा नारायण लक्ष्मण मरे, और लव अंकुश राजकुमार दोनों भाई मुनि बने, श्रीराम मोह के कारण अज्ञानी हो रहे हैं। तब शत्रु क्षोभ को प्राप्त हुये, शम्बू का भाई सुन्दर उसका पुत्र नदन उसने, इन्द्रजीत के पुत्र वज्रमाली के पास आकर कहा, मेरे बाबा और दादा दोनो को लक्ष्मण ने मारे थे। इसलिये हमारा रघुवशियों से बैर है, हमारा पाताल लंका का राज्य लेकर विराधित को दिया, और वानर वंशियों का शिरोमणी सुग्रीव स्वामी द्रोही होकर राम से मिला, तब राम समुद्र पारकर लंका में आये, एवं राक्षस द्वीप को उजाडा, राम को सीता का अति दुख, वह लंका लेने के अभिलाषी हुये। और सिंहवाहनी, गरुडवाहिनी दो महाविद्या राम लक्ष्मण को प्राप्त हुई, उससे इन्द्रजीत और कुंभकरण को बंदी बना डाला, लक्ष्मण के हाथ में चक्ररत्न आया, उससे हमारे लंका के स्वामी रावण को मारे। अब काल चक्र से लक्ष्मण मरा, और वानर वंशियों का पक्ष टूटा। वानरवशी लक्ष्मण के बल से उन्मत्त हो रहे थे, अब क्या करेगें। ये निर्बल हुये, और राम को ग्यारह पक्ष हो चुके बारहवॉ पक्ष लग गया है, वह भाई के मोह से पागल हो रहा है। भाई के मृतक शरीर को लेकर घूम रहा है। ऐसा मोह किसको होगा, यद्यपि राम समान योद्धा इस पृथ्वीपर और कोई नहीं, वह हल मूसल के धारक,

अद्वितीय मल्ल है। फिर भी भाई के शोकरूपी कीचड में फसकर निकलने में समर्थ नहीं, इसलिये अब राम से बैर का बदला लेने का समय है। राम के भाई लक्ष्मण ने हमारे वंश के बहुत लोगो को मारे। सुन्दरके पुत्रने, वज्रमाली से ऐसा कहा और क्रोध से मंत्रियों को युद्ध की आज्ञा देकर रण भेरी बजाई, सेना इकट्ठीकर सुन्दर का पुत्र नंदन और वज्रमाली भारी सेना के साथ अयोध्या की तरफ आये। सेना को लेकर पहले तो सुग्रीव को मार अथवा पकडकर उसका देश ले ले, पुनः राम से लडेगे। यह विचार दोनों ने किया। रघुवंशियों के सेवको ने, यह समाचार सुनकर सब विद्याधर रामचन्द्र जी के निकट अयोध्या मे आये, और तीन खड के सभी राजा प्रजा राम के आज्ञाकारी थे, वे सभी आये। ऐसी भीड इकट्ठी आई, जैसे लव अकुश के आनेपर हुई थी। शत्रुओ की सेना अयोध्या के पास आई सुनकर रामचन्द्रजी लक्ष्मण को कधे पर लेकर धनुषबाण हाथ मे सभाल, विद्याधरो को साथ लेकर बाहर निकले। उस समय कृतान्तवक्र का जीव और जटायु पक्षी का जीव, चौथे स्वर्ग मे देव हुये थे, उनके आसन कम्पायमान हुये, तब कृतान्तवक्र का जीव स्वामी, और जटायु पक्षी का जीव आज्ञाकारी देव, वह कृतान्तवक्र का जीव जटायु के जीव से कहने लगा, हे मित्र! आज तुम क्रोधित क्यों हो रहे हो? तब वह कहने लगा, पूर्वभव मे जब मे गृद्धपक्षी था, तब रामने मुझे प्यारे पुत्र की तरह मेरा पालन पोषण किया, और जिनधर्म का उपदेश देकर मरते समय णमोकार मंत्र सुनाया, उससे मैं देव हुआ, अब वहतो भाई लक्ष्मण के शोक से दुखी हैं, और शत्रु की सेना उनसे युद्ध करने आई है। तब कृतान्तवक्र का जीव जो देव था, उसने अविधिज्ञान से जानकर कहा, हे मित्र! राम मेरे पूर्वभव मे स्वामी थे, मैं उनका सेनापति कृतान्तवक्र था, उन्होने मुझे बहुत प्यार दिया, भाई पुत्रों से भी अधिक जाना, और मेरे उनके वचन थे, कि जब आप पर सकट आयेगा, तब मैं आपके पास आऊँगा, ऐसा कहकर दोनों देव सुन्दर आभूषण पहने चौथे स्वर्ग से विमान में बैठे अयोध्या आये, कृतान्तवक्र के जीवने जटायु के जीव से कहा, तुम तो शत्रुओ की सेना की तरफ जाकर उनकी बुद्धि हरो, और मैं रघुनाथ के पास जाऊँ। तब जटायु का जीव शत्रुओं की तरफ गया कामदेव का रूप बनाकर उनको मोहित किया, उनको ऐसी माया दिखाई, कि अयोध्या के आगे पीछे दुर्गम पहाड है, अयोध्या अपार है यह किसी से जीती नहीं जायेगी, यह कौशलपुरी सुभटो से भरी है, चारों तरफ कोट आकाश को छू

रहे हैं, नगर के बाहर भीतर देव विद्याधर भरें हैं। हमने नहीं जाना की यह नगरी महादुर्लभ है, धरती में देखों या आकाश में देखो, सभी जगह देव और विद्याधर ही दिखाई दे रहें हैं। अब कैसे हमारे प्राण बचें, अब कैसे जीवित रहकर घर जायेंगे, जहाँ श्रीरामदेव विराजमान हैं, वह नगरी हमारे से कैसे ली जायेगीं, ऐसी विक्रिया शक्ति विद्याधरों में कहॉ है हमने बिना विचारे यह काम किया, अब भागकर जायें तो कौन से रास्ते से भागे, मार्ग ही नहीं दिखता है, इस प्रकार परस्पर बात करते हुये कांपने लगे, शत्रुओं की सेना आकुल व्याकुल हुई, तब जटायु के जीव देव ने विक्रिया से उनको दक्षिण की ओर भागने का मार्ग दिखाया। तब वे सभी विद्याधर प्राणों की आशा छोड भागते हुये निकले, आगे जाकर इन्द्रजीत के पुत्र ने सोचा कि हम राजा विभीषण को क्या उत्तर देंगे, और लोगों को क्या मुह दिखायेंगे।

ऐसा विचारकर लज्जित होकर, सुन्दर के पुत्र चारो रत्नजीत सहित एवं विद्याधरों सहित, इन्द्रजीत के पुत्र वज्रमाली रतिवेग मुनिराज के निकट मुनि बने। तब यह जटायु का जीव देव उन साधुओं के दर्शनकर अपना सम्पूर्ण वृतान्त कहकर क्षमा मागकर अयोध्या मे आये। जहॉ राम भाई के शोक से बालक जैसी चेष्टायें करते थे, उनको सबोधन के लिये, वे दोनो देव अनेक क्रियाये करने लगे। कृतान्तवक्र का जीव सूखे वृक्ष को सींचने लगा, और जटायु का जीव मरे बैलों के युगल से हल चलाने लगा। तथा शिलापर बीज बोने लगे, यह भी दृष्टात राम के मन में नहीं आया, पुन कृतान्तक्र का जीव राम के आगे घी के लिये जल को विलोने लगा। और जटायु का जीव तैल के लिये बालु रेत को धानी मे पेलने लगा। फिर भी रामको प्रतिबोध नहीं हुआ, और भी इसी प्रकार अनेक कार्य देवो ने किये। तब राम ने पूछा, तुम महामूर्ख हो सूखे वृक्ष को सींचते हो तो क्या, मरे बैलों से हल चलाते हो तो क्या, शिला पर बीज बोते वह क्यों, और जल का मंथन एवं बालु का पेलना इत्यादि कार्य तुमने क्यो किये, तब वे दोनों देव कहने लगे, तुम भाई के मृतक शरीर को लेकर फिरते हो तो उससे क्या? यह वचन सुनकर श्रीराम लक्ष्मण को हृदय से लगाकर पृथ्वी के पति क्रोध से कहने लगे, हे अज्ञानियों! मेरा भाई पुरुषोत्तम नारायण तीनखड का स्वामी उसे अमगल के वचन क्यों कहते हो, ऐसे शब्द कहोगे तो तुम्हारे को दोष लगेगा। इस प्रकार कृतान्तवक्र के जीव से रामका विवाद हो रहा था, उसी समय जटायु का जीव

मरे मनुष्य का कलेवर लेकर रामके सामने आया, उसे देखकर राम बोले मरे मनुष्य का कलेवर कंधे पर लेकर क्यों फिरते हो, तब देवों ने कहा, आप महाप्रवीण होकर भी प्राण रहित लक्ष्मण के शरीर को क्यों लेकर फिरते हो। दूसरों के अणुमात्र भी दोष देखते हो, और अपना मेरू प्रमाण दोषों को नहीं देखते हो, समान वालों को, समान वालों से ही प्रीति होती है। आपको मूढ देख हमारे को अधिक प्रीति हुई है। हम बिना प्रयोजन के कार्य करने वाले, उनमें आप महामूर्ख हैं, उनमें हम उन्मत्त लोगों की ध्वजा लेकर फिरते हैं। और आपको अति उन्मत्त देख आप के निकट आये हैं। इस प्रकार उन दोनों मित्रों के वचन सुन, आठवें बलभद्र श्रीरामचन्द्रजी, मोह रहित हुये, शास्त्रों की वाणी यादकर एवं गुरुओं के वचन चिन्तवन कर, श्रीराम सचेत अर्थात् प्रतिबोध को प्राप्त हुये। जैसे सूर्य बादलो से निकलकर अपनी किरणो से ज्योतिवान दिखता है, ऐसे भरतक्षेत्र का पति श्रीराम बलभद्र वही हुये भानु, वह मोहरूपी बादलो से निकलकर ज्ञानरूपी किरणो से ज्योति मान हुये। जैसे शरदऋतु में काले बादलों से रहित निर्मल दिखता है, ऐसे रामका मन शोकरूप कीचड से रहित निर्मल हुआ, राम सम्पूर्ण शास्त्रो मे प्रवीण अमृत समान, जिनेन्द्रप्रभुके वचनो को यादकर खेद रहित हुये, धीरता के अवलम्बन से, ऐसे सुशोभित लगे, जैसे भगवान का जन्माभिषेक मे सुमेरूपर्वत सुशोभित लगे। अब महाशोक रूपी कलुषता से रहित राम का मन विकसित होकर प्रसन्न हुआ, जैसे कोई रात्रि के अधकार मे मार्ग भूल गया, और सूर्य के उदय होते ही मार्ग मिला तो प्रसन्न हो गया, भूख की वेदना से पीडित जीवको मन वांच्छित भोजन खाने को मिले तो आनिन्दत हो जाता है। जैसे कोई समुद्र से पार होने का अभिलाषी जहाज को पाकर खुशी होता है। प्यास से दुखी प्राणी सरोवर को देख सुखी होता है। रोगी जीव औषधी को पाकर अत्यन्त आनन्द को प्राप्त होता है। कोई अपने देश जाना चाहे, साथी को देख हर्षित होता है। जैसे जेल से छूटकर मानव सुखी होता है वैसे ही रामचन्द्रजी प्रतिबोध से प्रसन्न हुये। ज्ञान से प्रफुल्लित हुआ है हृदय कमल जिनका, ऐसी परम कांति को धारणकर, अपने आपको संसार के अंधकूप से निकला जान अतिहर्षित हो सोचने लगे, कि मैंने नया जन्म पाया। श्रीराम चिन्तवन करनेलगे अहो ओसकी बूंद समान, यह मनुष्य जीवन अतिचंचल है, यह क्षणमात्र मे नाशको प्राप्त हो जाता है, चारों गतियों में भ्रमण करता हुआ, महा

कष्टसे मनुष्यगति प्राप्त की, इसको मैंने वृथा ही खो दिया। किनके भाई, किनके पुत्र, किनका परिवार, किसका धन, किसकी स्त्री, इस ससार में इस जीव के अनेक परिवार हुये, उनमें एक ज्ञान ही दुर्लभ है। इस प्रकार श्रीराम ज्ञानको प्राप्त हुये, तब वे दोनों देव अपनी देवमाया दूरकर लोगों को आश्चर्य करनेवाली स्वर्ग की विभूति दिखाने लगे, शीतल मंद सुगन्ध पवन चली, आकाश मे देवों के विमान ही विमान हो गये, देवॉगना नृत्य करने लगी, वीणा बासुरी आदि बजने लगे, वे दोनो देव, बलदेव रामसे पूछने लगे, कि आपने इतने दिन राज्य किया, उसमें आपने क्या सुख पाया, तब राम कहने लगे, राज्य मे कहॉ सुख है।

इस राज्य को छोडकर जो मुनि बने वे सुखी है। और मै आपको पूछता हूँ कि आप महा सौम्यवदन रूपवान कौन हो, और किस कारण मेरे से इतना प्रेम दर्शाया? तब जटायु का जीव कहने लगा, हे प्रभो! मैं वह गृद्धपक्षी था, आपने जब मुनिराजो को आहार दिया, वहॉ में गुरुओ के उपदेश से सयम धारण किया था, फिर आपने मुझे अपने पास रखा पुत्र की तरह मेरा पालन किया, लक्ष्मण और सीता मेरेपर अधिक कृपा करते, सीताको रावण हरकर ले गया, उस दिन मैंने रावण से युद्धकर मरणासन्न हुआ तब आपने आकर णमोकर महामंत्र सुनाया और धर्मोपदेश दिया, मै आपकी कृपा से णमोकार मंत्र के प्रभाव से चौथे स्वर्ग मे देव हुआ, मै स्वर्ग के भोगो मे मोहित हुआ, इसीलिये अभी तक आपके निकट नहीं आया, अब अवधिज्ञान से जाना, आपको लक्ष्मण के वियोग से दुखी देख आप के निकट आया हूँ। कृतान्तवक्र के जीव ने कहा कि हे नाथ! मैं कृतान्तवक्र आपका सेनापति था, आपने मुझे पुत्र एवं भाई समान जाना, और वैराग्य के समय आपको मुझे आज्ञा की थी, कि अगर देव होओं तो आकर कष्ट के समय हमारी रक्षा करना, अब आपको लक्ष्मण के मरण की चिन्ता युक्त जान हम आपके पास आये। तब राम दोनो देवो से कहने लगे, आप मेरे परममित्र हो, महा प्रभाव के धारक, चौथे स्वर्ग के महाऋद्धि धारक देव, मुझे संबोधन करने के लिये आये, आपको यही योग्य है। ऐसा कहकर राम लक्ष्मण के शोक से रहित होकर, लक्ष्मण के शरीर का सरयू नदी के किनारे पर दाह सस्कार किया। श्रीराम आत्मस्वभाव के ज्ञाता, धर्म की मर्यादा को पालने के लिये, भाई शत्रुघ्न से कहने लगे, हे शत्रुघ्न! मैं मुनिव्रत को धारणकर सिद्धपद को प्राप्त होना चाहता हूँ और तू पृथ्वी का राज्यकर, प्रजा का पालन करना। तब शत्रुघ्न कहने लगे, हे देव! मैं

भोगों का अभिलाषी नहीं, जिसको राग होगा, वह राज्य करेगा, मैं आपके साथ जिनराज के व्रत धारण करूँगा और कर्मों का नाश करूँगा। अन्य कोई मेरी अभिलाषा नहीं है। मनुष्यो के शत्रु जो, काम भोग मित्र परिवार बंधु, इनसे कौन तृप्त हुआ, अर्थात् कोई भी तृप्त नहीं हुआ, इसलिये इन सबका त्याग करना ही जीव को कल्याण कारी है। ऐसे श्रीरामचन्द्रजी के अन्तरग में ज्ञानरूपी सूर्य का प्रकाश हुआ तब रागरूपी महा अन्धकार पलायमान हो गया।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिकामे लक्ष्मणकी दग्धक्रिया एव मित्रदेवो का आगम वर्णनकरनेवाला एकसौअठारहवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-119

श्रीराम ने सुव्रतस्वामीके पास जाकर दीक्षा ली

अथानंतर श्रीरामचन्द्रजी शत्रुघ्न के वैराग्यरूपी वचन सुन, उसको राज्य एवं परिवार से विरक्त जान, एक क्षण विचारकर, अनग लवण के पुत्र को राज्य दिया, वह पिता के समान गुणो की खान, कुल की परम्परा को धारण करने वाला, समस्त प्रजा के लोग नमस्कार करते है, वह राज्य करता हुआ, प्रजा का अनुरागी हुआ, महा प्रभावशाली राम समान पृथ्वीपर आज्ञा करता रहा। और विभीषण लका का राज्य अपने पुत्र सुभूषण को देकर वैरागी हुआ, और सुग्रीव वैरागी होकर अपना राज्य अगद को देकर संसार शरीर भोगों से विरक्त हुआ। राम के ये सभी मित्र राम के साथ ही भवसागर से पार होने के लिये तैयार हुये। राजा दशरथ के पुत्र श्रीराम, भरतचक्रवर्ती की तरह राज्य का बोझा छोड दिया। कैसेहै राम? विष मिला हुआ भोजन के समान विषय सुखों को जानने वाले, कुलटा स्त्री समान सम्पूर्ण विभूति को जानने वाले। कल्याण का कारण मुनियों को धारण करने योग्य, सौ इन्द्रों से पूज्य, श्रीमुनिसुव्रतनाथ भगवान का कहा हुआ मार्ग, उसे हृदय में धारण किया, जन्म मरण के भय से कम्पित हुआ है हृदय जिनका, रागादि कर्म नाश करने की है इच्छा जिनकी, महा वैराग्य रूप परिणाम, क्रोधादि भावों से रहित, जैसे बादलों से रहित सूर्य चमके, ऐसे

राम ज्योतिरूप दिखाई दिये। मन मे मुनिव्रत धारण करने की तीव्र इच्छा है, उसी समय अर्हदास सेठ आये, उनसे श्रीराम चतुर्विधी संघ की कुशल मंगल पूछने लगे। तब सेठ ने कहा, हे देव! आपके कष्ट से मुनियों का मन भी दुख रूप हुआ, यह बातकर ही रहे थे कि उसी समय यह समाचार आये कि, श्रीमुनिसुव्रतनाथ के वंश मे उत्पन्न हुये, चारणऋद्धि धारी, श्रीसुव्रतस्वामी महाव्रतों के धारी, काम क्रोध को नाश करने वाले पधारे। यह सुनकर श्रीराम महा आनन्द से रोमाचित हो गये, नेत्र कमल फूल गये, अनेक विद्याधर भूमिगोचरी राजाओ सहित जैसे प्रथम बलभद्र विजय, स्वर्णकुंभ स्वामीके पास जाकर मुनि बने, ऐसे श्रीआठवें बलभद्र श्रीरामचन्द्रजी मुनि बनने के लिये, सुव्रतमुनिराज के निकट गये। वे मुनिराज महागुणों के धारी, अनेक शिष्यो के स्वामी, उनके चरणो मे जाकर प्रदक्षिणा देकर हाथजोड शीश झुकाय नमस्कार किया, साक्षात मुक्ति के कारण महामुनिराज उनके दर्शनकर अमृत के सागर मे मग्न हुये, परम श्रद्धा भक्ति विनय वैराग्य पूर्वक मुनिराज से श्रीरामचन्द्रजी ने जिनेन्द्र भगवान की दीक्षा प्राप्ति के लिये विनती की हे योगीश्वरो के इन्द्र! मै ससार के प्रपच से विरक्त हुआ, आपकी शरण को गृहण करना चाहता हूँ। आपके प्रसाद से योगीश्वरों के मार्ग में विचरण करना चाहता हूँ। इसप्रकार श्रीरामचन्द्रजी ने गुरु से प्रार्थना की। कैसेहै राम? सम्पूर्ण रागद्वेषादि कलक को धो दिया है जिन्होंने, तब मुनिराज कहने लगे—हे नरेन्द्र! आप इस बात के योग्य ही है। इस संसार में क्या सार पदार्थ है, इनको छोडकर तुम मुनि धर्मरूपी समुद्र में अवगाहन करो, यह जिनराज का मार्ग, अनादिसिद्ध बाधारहित अविनाशी सुख को देने वाला है। उसको आपके जैसे बुद्धिमान ही धारण करते हैं। ऐसा मुनिराज ने कहा, तब राम संसार से विरक्त, महा प्रवीण। जैसे सूर्य सुमेरू की प्रदक्षिणा करे, वैसे रामचन्द्रजी मुनिराज की प्रदक्षिणा करने लगे, महाज्ञान उत्पन्न हुआ है। वैराग्य रूपी वस्त्र पहने, कर्मो को नाश करने के लिये, कमर कसकर तैयार हुये, आशारूपी बंधनों को तोड, स्नेहरूपी पिंजरे को जलाकर, स्त्रीरूपी बधनों से छूट, हार, कुंडल, केयूर, करधनी भुजबंधादि सर्व आभूषणो को निकालकर, तत्काल ही वस्त्रों का त्याग किया, परम तत्वज्ञान में लगा है मन उनका, वस्त्र आभूषण ऐसे छोडे जैसे जीव शरीर को छोडे। अपने महाकोमल कोमल हाथों

से केशलोंच किया। शील के मन्दिर अष्टम बलभद्र समस्त परिग्रह को छोडकर, ऐसे निर्लिप्त हुये, जैसे राहु से रहित सूर्य। पंच महाव्रत धारणकर, पंच समितियों का पालन करते हुये, तीन गुप्ति रूपी गढ़ में, पद्मासन से विराजमान हुये। मनवचनकायदंड, को दूर करने वाले, छहकायिक जीवों के मित्र, सप्तभय रहित, आठकर्मों के रिपु, नव कोटी से ब्रह्मचर्य व्रत के पालक, दशधर्म के धारी, श्रीवत्सलक्ष्ण से सुशोभित है, उर स्थल जिनका, गुणों के आभूषण, सम्पूर्ण दोषों से रहित, आत्मरूपी तत्वज्ञान में दृढ, श्रीरामचन्द्रजी महामुनि हुये। देवों ने पंचाश्चर्य की वृष्टि की। सुन्दर दुंदुभी बाजे बजे, और कृतान्तवक्र का जीव एव जटायु का जीव इन दोनों देवों ने परम उत्सव मनाया। जब पृथ्वी के पति श्रीराम पृथ्वी को छोडकर निकले, तब भूमिगोचरी एव विद्याधर सभी राजा आश्चर्य चकित हुये, और सोचने लगे, कि ऐसी महाविभूति, ऐसे महारत्न, इस प्रताप के प्रभाव को छोडकर श्रीरामदेव मुनि हुये तो हमारे घर मे क्या परिग्रह है, जिसके लोभ से हम घर में रहें, व्रतों के बिना इतने दिन हमने ऐसे ही खो दिये। ऐसा विचारकर अनेक राजा गृहरूपी बधनो से निकले। रागद्वेष रूपी शत्रुओं को नाश कर सर्व परिग्रह का त्यागकर भाई शत्रुघ्न महामुनि हुये। और विभीषण, सुग्रीव, नल, नील, चन्द्रनख, विराधित इत्यादि अनेक राजा मुनि बने, विद्याधर राजा सर्व विद्याओं का त्यागकर ब्रह्मविद्या को प्राप्त हुये। कई मुनिराजों को चारण ऋद्धि उत्पन्न हुई। इस प्रकार श्रीरामचन्द्रजी को वैराग्य होकर, दीक्षा लेने से उनके साथ सौलहहजार कुछ अधिक महीपति राजाओं ने मुनि दीक्षा धारण की और सताईस हजार रानियों ने श्रीमतिअर्यिका के समीप आर्यिका दीक्षा धारण की।

अथानंतर श्रीराम महाऋषिराज महामुनिराज ने, गुरु की आज्ञा लेकर अकेले विहार किया। सम्पूर्ण विकल्पों को छोडकर पर्वतों पर पहाडों की गुफाओं मे, विषम वनों मे, जहाँ क्रूर जीव विचरण करते हैं, वहाँ श्रीराम महामुनि जिनकल्पी होकर ध्यान करने लगे। अवधिज्ञान प्राप्त हुआ उससे परमाणु पर्यंत जगत के मूर्तिक सभी पदार्थों को देखने लगे। लक्ष्मण के अनेक भवों को जानने लगे, फिर भी कोई मोह नहीं, इसीलिये श्रीरामचन्द्रजी महामुनि का मन, ममता रूपी राग को नहीं प्राप्त हुआ। अब श्रीरामचन्द्रजी की आयु का वर्णन सुनो—कुमार काल 100 सौ वर्ष, मंडलीक पद तीनसौ (300) वर्ष, दिग्विजय चालीस (40)

वर्ष, और ग्यारह हजार पॉचसौ साठ 11560 वर्ष पर्यन्त तीनखंड का राज्यकर पुनः मुनि बने। लक्ष्मण का मरण इसी तरह था, देवों का दोष नहीं था, और भाई के मरण निमित्त से श्रीराम को वैराग्य प्राप्ति का उदय था। अवधिज्ञान के कारण से रामने अपने अनेक भवो को जाना। महाधैर्यवान व्रत शील के मानों पहाड ही हैं। शुक्ल लेश्या सहित, महा गंभीर गुणों के सागर, मोक्ष लक्ष्मी मे तत्पर शुद्धोपयोग के मार्ग में लीन हैं। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकादि सभी श्रोताओं से कहते हैं। जैसे श्रीरामचन्द्र जिनेन्द्र भगवान के मार्ग में लगे, ऐसे तुम भी लगो। अपनी शक्ति प्रमाण महाभक्ति से जिनशासन में तत्पर रहो। जिनराम के अक्षररूपी महारत्नों को प्राप्त करों, हे प्राणियों! अशुभ कार्य पापरूपी आचरण को छोडो, दुराचार महादुख देने वाला हैं, दुख देने वाला, परिग्रह से आत्मा मोहित हो रही हैं, कुगुरु कुदेव कुधर्म की पाखंडता से यह मन, प्राणियों का मलिन हो रहा है, वह जीव कल्याण के मार्ग को छोडकर जन्म से अन्धे, मानव की तरह कुपथ के मार्ग में प्रवृति करते हैं, जो कोई मूर्ख साधु, साधुधर्म के मार्ग को नहीं जानते है, एवं त्रिशूल, धनुष, चिमटादि उपकरणों को निर्दोष जानकर अपने पास रखते है, वे साधु साधु नहीं, कुमार्गी हैं। वह कुलिंग को धारणकर उसी का आचरण करते है, वे पत्थर की नॉव के समान हैं, उनको मोक्ष नहीं होगा, मिथ्यात्व के पोषण से भव भव मे भ्रमण करना पडता है। जिनके पास परिग्रह नहीं किन्ही से याचना नहीं करते, वे निर्ग्रंथऋषि उत्तम गुणों से युक्त, मुनि ही पूज्य हैं। ऐसे महाबली श्रीराम बलदेव के वैराग्य का वर्णन सुन, ससार से विरक्त होओ, जिससे ससार रूपी सूर्य की, उष्ण किरणो का आताप, जो दुख रूप है, उसको प्राप्त नहीं करोगे। श्रीरामचन्द्रजी के वैराग्य का वर्णन शुभ भावों से पढने पढाने, सुनने सुनाने से, संसार के सभी कष्ट नाश होकर शान्ति की प्राप्ति होती है एव क्रम से अनन्तसुख की प्राप्ति होती है।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे श्रीरामका वैराग्यवर्णन करनेवाला एकसौउन्नीसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-120

श्रीराम मुनि आहार-निमित्त नगर में आगमन और अन्तराय होने के कारण वन में वापिस गमन

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते है हे भव्योत्तम! श्रीरामचन्द्रजी महाऋषिराज के अनेक गुण, इन्द्र भी अपने मुखरूपी वचनों से कहने मे समर्थ नहीं है, वे महा मुनीश्वर जगत के त्यागी महाधीर वीर पांच उपवास की प्रतिज्ञा पूर्ण करके ईर्यासमिति पूर्वक आहारचर्या के लिये नन्दस्थली नगर में आये। निकलते हुये सूर्य समान, दीप्तिवान, जैसे चलते हुये पहाड ही हैं। स्फटिकमणि समान, शुद्ध हृदय उनका, वे पुरुषोत्तम, जैसे मूर्तिवान धर्म ही है, मानो तीनलोक का आनन्द एकत्रित कर रामकी मूर्ति ही उत्पन्न हुई हो, महा कान्तिके प्रभावसे पृथ्वी को पवित्र करते हुये नगर मे प्रवेश करने लगे, उनके रूपको देखकर नगर के सभी लोग आकर्षित होकर परस्पर बताने लगे, अहो देखो, यह अनुपम अद्‌भुत ऐसा आकार सुन्दर शरीर जगत मे, दुर्लभ कभी भी देखने मे नहीं आया, ये कोई महापुरुष महा सुन्दर अपूर्व नर दोनों भुजाये लटकायें आ रहे हे। धन्य यह धैर्य, धन्य यह पराक्रम, धन्य यह रूप, धन्य यह कान्ति धन्य है दीप्ति, धन्य है शाति, धन्य यह निर्मलता, धन्य यह निर्ममत्वता यह कोई मनोहर पुराण पुरुष है, इनके समान और कोई नहीं। चार हाथ जमीन देख, जीव रक्षा करते हुये, शांत मुद्रा से, जैन के यतिऋषि चले आ रहे हैं। ऐसा किनका महा भाग्य होगा, जिनके घर यह महापुण्य अधिकारी आहार कर किनको पवित्र करेंगे। उनके बडे भाग्य, जिनके घर पर आहार लेगे। यह इन्द्र समान रघुकुल के तिलक पराक्रमी शील के पहाड श्रीरामचन्द्र पुरुषोत्तम है। इनके दर्शन करने से नेत्र सफल होंगे, मन निर्मल होगा, जन्म पवित्र होगा, शरीर धारण करने का यही फल है, जो चारित्र का पालन करे। इस प्रकार नगर के लोग राम मुनीश्वर के दर्शनकर आश्चर्य को प्राप्त हुये। नगर मे तपस्वी साधु को पडगाहन की सुन्दर ध्वनी हुई। श्रीराम महामुनि ने नगर मे प्रवेश किया, सम्पूर्ण गली गली एव मार्ग मार्ग स्त्री पुरुषों से भर गया, नर नारियों ने अपने अपने घरो मे पवित्र प्रासुक शुद्ध भोजन बनाकर रखा, और द्वारापेक्षण करने के लिये पवित्र वस्त्र पहन मंगल कलश जलसे भरा

हाथ में लेकर नमस्कार कर कहते हैं। हे स्वामी! अत्र तिष्ठो तिष्ठो आहार जल शुद्ध है। इस प्रकार पडगाहन करते हुये, मन मे फूला नहीं समा रहे थे, और हर्ष पूर्वक कहते हैं। हे मुनिन्द्र! जयवन्त होवो, हे पुण्य के पहाड आपके तपकी वृद्धि हो, आप धर्मके विरद हो, ऐसे मधुर वाणी से दशो दिशाये गूज उठी, घर घर में लोग परस्पर चर्चा करते है, स्वर्णपात्र मे दूध, दही, ईक्षुरस, दाल भात, खीर, पुआ, पापडी शीघ्र ही तैयार करो, मिश्री मोदक इलायची मेवादि से युक्त, शीतल जल, सुन्दर पूडी, श्रीखंडादि अनेक प्रकार के भोजन तैयार रखो। इस प्रकार नर नारियो की चर्चा से नगर, शब्द रूप हो गया, महा खुशी से भरे जन मानव अपने बालको को भी नहीं देख रहे है। मार्ग में लोग दौड दौडकर जा रहे है, किसी के धक्के से कोई गिर रहे है, ऐसे दौड धाम की कोलाहल से, हाथी बधनों को तोड नगर मे दौडने लगे, हाथी के कपोलो से मद झरने से मार्ग मे जलका प्रवाह हो गया, हाथीयो के भय से घोडे खाना छोड बधनों को तोड भागते भागते हींसने लगे, हाथी घोडो के भागने से लोग व्याकुल हुये, तब दान मे तत्पर राजा कोलाहल शब्दो को सुन राजभवन के ऊपर खडे होकर दूर से मुनिराज के रूप को देखकर मोहित हुये, राजा को मुनि भक्ति मे राग विशेष, परन्तु विवेक नहीं, अनेक सामन्त लोगों को आज्ञा देकर कहा कि दिगम्बर मुनिराज पधारे है, सो तुम जाकर प्रणाम करके, बहुत भक्ति विनय पूर्वक विनती कर आहार के लिये लेकर आओ। वह सामन्त भी मूर्ख, जो जाकर चरणो में गिर कहने लगे हे प्रभो! आप राजा के घर भोजन करो, वहाँ महापवित्र स्वादिष्ट सुन्दर भोजन है सामान्य लोगो के घर रूखा नीरस भोजन का आहार, आपको लेने योग्य नहीं है। और नगर के लोगों को मना किया कि तुम क्या आहार देना जानते हो, तुम्हारे घरों मे साधु के योग्य भोजन क्या मिलेगा? यह वचन सुनकर महा मुनिराज अपने को अन्तराय जान नगर से निकल वन मे गये। तब सभी लोग व्याकुल हुये। वे महापुरुष जिनआज्ञा के प्रतिपालक आचाराग सूत्र प्रमाण है, आचरण उनका, आहार के लिये नगर मे आये और अन्तराय जानकर नगर से वापिस वन मे गये। चिद्रूप ध्यान मे मग्न कायोत्सर्ग से बैठे, वे अद्भुत अद्वितीय सूर्य समान मुनिराज, मन एवं नेत्रो को प्यारा लगे ऐसा रूप उनका, नगर से बिना आहार किये चले गये, तब सभी लोग दुखी होकर खेद खिन्न हुये। क्योकि नवधाभक्ति के बिना साधु की आहारचर्या नहीं होती है, साधु छयालीस दोषो को टालकर

अन्तराय रहित बिना याचना के निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं। साधू का आहार रत्नत्रय की साधना के लिये होता है न कि शरीर की पुष्टि के लिये। ऐसे महातपस्वी जिनसाधु, एवं चतुर्विधी संघ को भक्ति पूर्वक निज हाथों से द्रव्य क्षेत्र काल भावकी शुद्धता पूर्वक, कुल, जाति, वंश की परम्परा के अनुसार विनयादि सात गुणो से युक्त श्रावकको आहार दान देकर अतिशय पुण्य प्राप्तकर, सूर्य समान यश को प्राप्त करे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचित महापद्मपुराणा भाषा वचनिका मे राममुनि का आहारके लिये नगर मे आगमन पुन लोगो के अविवेकसे अन्तरायजान वनमे जानेका वर्णन करनेवाला एकसौबीसवॉपर्व पूर्णहुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-121

श्रीराम के वनचर्या का अविग्रह वन में आहार का योग

अथानंतर श्रीराम मुनियो मे श्रेष्ठ पुनः पाच उपवास का नियम किया और यह नियम लिया कि वन मे कोई श्रावक शुद्ध आहार देगा तो करेगे, नगर मे आहार को नहीं जायेंगे, इस प्रकार कान्तारचर्या की प्रतिज्ञा की। एक राजा प्रतिनन्द उनको दुष्ट तुरंग लेकर भाग गया, और वह लोगो की दृष्टि से बहुत दूर चला गया। तब राजा की पटरानी प्रभवा अति चिन्ता करती हुई, शीघ्रगमन करने वाले घोडेपर बैठकर अनेक सुभटो को साथ ले, राजा के पीछे चली। और राजा को तुरग हरकर ले गया, वह वन मे सरोवर के कीचड मे फस गया, इसीलिये आगे नहीं जा सका, उतने समय में रानी भी वहॉ पहुंच गई। रानी को देख राजा रानी के पास आये। तब रानी राजा को प्रेम के वचन कहने लगी, हे महाराज! अगर यह अश्व आपको हरकर, यहॉ नहीं लाता तो, यह नन्दनवन एवं मानसरोवर कहॉ देखने को मिलता। तब राजा ने कहा, हे रानी! यह वन यात्रा आपके आने से सफल हुई। इस प्रकार राजा रानी परस्पर प्रेम से युक्त स्नेह की बातेंकर सभी सामन्तों एव सखियों सहित सरोवर के किनारे बैठे, पुनः अनेक प्रकार की जल क्रीडाकर दोनों भोजन के लिये तैयार हुये। उस समय श्रीराम महामुनि कान्तारचर्या को करने वाले आहार के लिये इस तरफ आये, साधुके आहार की क्रिया मे प्रवीण

राजा मुनिराज को देख प्रसन्नता पूर्वक रानी सहित सन्मुख जाकर नमस्कार कर पड़गाहन करने लगे हे भगवान् अत्र अत्र तिष्ठो तिष्ठो आहार जल शुद्ध है। प्रासुक जल से राजा ने मुनिराज के चरणो का पाद पक्षालकर, नवधा भक्ति सहित, सात गुणो से युक्त श्रीराम मुनिराजको महापवित्र शुद्ध आहार दिया, स्वर्ण पात्र में लेकर महापात्र, जो ऋषि मुनिराज उनके कोमल करपात्र में शुद्ध भोजन का आहार कराया। मुनिराज का निरंतराय आहार हुआ। तब देव हर्षित होकर पंचाश्चर्य करने लगे। और श्रीराम अक्षीणमहाऋद्धि के धारी, सो उस दिन रसोई का भोजन अक्षीण अटूट हो गया। पंचाश्चर्य के नाम-पांचरग के रत्नोंकी वर्षा, महासुगन्धित कल्पवृक्षो के पुष्पों की वर्षा, शीतल मंद सुगध पवन, दुंदुभिनाद, जय जय शब्द, धन्य यह दान, धन्य यह पात्र, धन्य यह दाता, धन्य यह विधी, अच्छा हुआ, अच्छा हुआ, नन्दो, विरदो, फलो, फूलो, इस प्रकार की वाणी आकाश मे देव करने लगे। नवधा भक्ति के नाम पडगाहन, उच्चासन, पादपक्षाल गन्दोदक मस्तक पर लगाना, पूजा करना, नमस्कार करना, मन शुद्ध, वचन शुद्ध, काय शुद्धि, आहार जल शुद्ध है भोजन ग्रहण कीजिये। दाता के सात गुण—श्रद्धा, भक्ति, शक्ति, निर्लोभता, दया, क्षमा, विज्ञान। वह राजा प्रतिनंदी, मुनि दान से देवो द्वारा पूज्य हुआ। सम्यक्त्व सहित निर्मल परिणामी श्रावक के व्रतो को धारण किया हुआ, पृथ्वीपर महा प्रभावी प्रसिद्ध हुआ। बहुत यश कीर्ति जगत में फैली। और पंचाश्चर्य में कई प्रकार के रत्नो की वर्षा हुई, इसलिये सभी दिशाओ में प्रकाश हुआ। एव पृथ्वीपर लोगों की दरिद्रता दूर हुई, राजा, रानी सहित, महा विनयवान भक्ति से नमन करता हुआ, महा मुनि को विधी पूर्वक निरतराय आहार देकर प्रबोध को प्राप्त हुये। अपना मनुष्य जन्म सफल जानने लगे। और राम महायोगी तप के लिये एकात स्थान मे रहे। बारह प्रकार तप को करने वाले, तपऋद्धि से अद्वितीय पृथ्वी मे अद्वितीय सूर्य समान विहारकर परीषहों को सहनकर तप मे लीन, ध्यान की एकाग्रता से कर्मो की निर्जरा करने में तत्पर रहे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषा वचनिका मे राममुनिराज को निरतराय आहारवर्णन करनेवाला एकसौइक्कीसवा पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-122

सीता का जीव स्वर्ग से आकर रामको मोहित करने के लिये उपसर्ग करना और राम को केवलज्ञान की प्राप्ति

अथानंतर गौतमस्वामी राजा श्रेणिक से कहते हैं, हे श्रेणिक! वे आत्माराम महामुनि, बलदेव स्वामी जिनके राग द्वेष शात हुये हैं, ऐसे महान तपस्वी, अन्य किसी से नहीं बन सके, ऐसा महातप करने लगे। महा भयकर वन मे विहार करते हुये भी पाच महाव्रत, पांच समिति, तीन गुप्तियों का पालन करते हुये, शास्त्रों के ज्ञाता, महा जितेन्द्रिय, ज्ञान ध्यान तप में लीन, अनेक ऋद्धियाँ उत्पन्न हुई, परन्तु ऋद्धियों की खबर नहीं, महाविरक्त, निर्विकार, बाईस परिषहों को जीतने वाले, आपके तपके प्रभाव से, वनके सिह, व्याघ्र, मृगादि जंगली जानवर आपके दर्शन करने के लिये एवं धर्मोपदेश सुनने के लिये, पास मे आकर बैठे, जीवो का जाति विरोधी बैर मिट गया, राममुनिराज को शांत स्वरूप देख, सभी पशु शात होकर मुनिराज की तरफ निरखते हुये बैठे। श्रीराम महाव्रती महाऋद्धियो के धारी, चिदानन्द स्वरूपी, सर्व इच्छाओ से रहित, कर्मो को नाश करने मे प्रयत्नशील, निर्मलशिला पर पद्मासन से बैठ आत्मध्यान मे प्रवेश किया, जैसे रवि मेघमाला मे प्रवेश करें, वे राम प्रभु! सुमेरू समान अचल, मन की एकाग्रता से पवित्र स्थानपर, कायोत्सर्ग मुद्रा मे, निज स्वरूप का ध्यान करते, कभी विहार करते, तब ईर्या समिति पूर्वक चार हाथ प्रमाण पृथ्वी देखकर चलते, जीवो की रक्षा करते, देव देवागनाओ से पूज्य, वे आत्मज्ञानी जिनआज्ञा के धारी जैन के योगी, ऐसा तप किया जो पचम काल में किसी के चिन्तवन मे भी नहीं आता। एक दिन विहार करते हुये श्रीराम योगीराज कोटिशिला पर आये, जो लक्ष्मण ने णमोकार मंत्र जपकर उठाई थी, वहाँ श्रीराम ऋषिराज कोटिशिला पर ध्यान करने बैठे, कर्मो को नाश करने के लिये अथवा क्षपकश्रेणी चढने का है मन उनका ऐसे ध्यान मे लीन हो गये। जो बाहर के वातावरण मे उनका कुछ भी उपयोग नहीं रहा।

अथानतर अच्युतस्वर्ग के प्रतींद्र, सीता का जीव स्वयंप्रभ देव ने अवधिज्ञान से जाना कि रामका और अपना परम स्नेह, अपने अनेक भव, और जिनशासन की महिमा तथा श्रीराम का मुनि होना और कोटिशिलापर ध्यान करने बैठना, ये

सभी जाना पुनः मन मे विचार किया कि वे श्रीराम मध्यलोक के जम्बूद्वीप मे अयोध्या नगरी आदि तीनखंड के राजा, मनुष्यो के इन्द्र पृथ्वीके आभूषण मनुष्य लोक में मेरे पति थे, मैं उनकी महारानी सीता थी, देखो कर्मों की विचित्रता, मैंने तो तप व्रत के प्रभाव से सौलहवें स्वर्ग में इन्द्रपद को प्राप्त किया, और लक्ष्मण-रामका भाई प्राणों से भी प्यारा वह तो परलोक गया, राम अकेले रह गये, जगत की रक्षा करने वाले दोनो भाई बलभद्र नारायण कर्मो के उदय से बिछुडे, श्रीराम कमलसमान नेत्रो के धारी शोभायमान हल मूसल के धारक बलदेव महाबली वे वासुदेव के वियोग से जिनेन्द्रदेव की दीक्षा धारण की। राज्य अवस्था में तो शस्त्रो से बाहर के सर्व शत्रुओं को जीते, और अब मुनि बनके मन और इन्द्रिय रूपी शत्रुओं को जीतते हैं। अब शुक्लध्यान के योग से कर्म शत्रुओ को जीतते है। ऐसा हो कि मेरी देवमाया से श्रीराम मुनिराज का कुछ मन मोहित हो जाये, तो वे मुनि शुद्धोपयोग से च्युत होकर शुभोपयोग मे आकर समाधि पूर्वक मरणकर यहॉ हमारे अच्युत स्वर्ग मे आये, तो मेरे और इनके महा प्रेम होगा, मै और वे पंचमेरू नन्दीश्वरद्वीपादि के, चैत्यालयो की यात्रा करेगे और बाईस सागर पर्यत दोनो साथ मे रहेगे, मित्रता बढायें और दोनों मिलकर लक्ष्मण को देखें, ऐसा विचारकर सीता का जीव प्रतीन्द्र जहॉ राममुनि ध्यानारूढ थे, वहॉ आया। मुनिराज को ध्यान से च्युत करने के लिये देवमाया रची, बसन्तऋतु जैसा समय वनमे फैलाया, नाना प्रकार के फूल खिले, सुगन्ध वायु बहने लगी, पक्षी मनोहर शब्द बोलने लगे, कोयल, मैना, सूवादि की मधुर ध्वनी हो रही है। काम के बाण जो पुष्प उनकी महक फैल रही है। कर्णकार जाति के वृक्ष खिले उससे वन पीत स्वर्ण मय हो गया है। जैसे बसन्तरूपी राजा पीले वस्त्र पहनकर क्रीडा कर रहा है। मौलश्री के पुष्प की वर्षा हो रही है। ऐसी बसन्तऋतु की लीला से स्वयप्रभ प्रतीन्द्र जानकी का रूप बनाकर राम मुनिराज के समीप आया, वहॉ भयंकर मनोहर वन जहॉ और कोई मनुष्य नहीं, अनेक वृक्ष सभी ऋतुओ के खिल रहे हैं, उस समय, योगीश्वर रामके समीप, सीता सुन्दरी कहने लगी, हे नाथ! पृथ्वीपर भ्रमण करते, कोई पुण्य के योग से आपको देखे, वियोगरूप लहर का भरा जो प्रेमरूपी समुद्र उसमे मैं डूब रही हूँ, सो आप मुझे रोको, इस प्रकार अनेक राग के भरे हुये वचन कहे, परन्तु मुनिराज अकम्प, अचल, वह सीताका जीव मोह के उदय से कभी दाहिने, कभी बाये, घूमता रहा, काम रूपी ज्वर के योग से मोहित है मन उसका, महासुन्दर, इस प्रकार कहने लगी हे देव! मैंने बिना

विचारे, आपकी आज्ञाके बिना दीक्षा ली, मुझे सभी विद्याधरों की रानियो ने बहकाया, अब मेरा मन आपमें लगा हुआ है, इस दीक्षा से क्या प्रयोजन, यह दीक्षा अत्यन्त वृद्ध लोगों को लेने योग्य है। कहॉ यह यौवन अवस्था और कहॉ यह कठिन व्रत तप? महा कोमल फूल दावानल अग्नि की ज्वाला को कैसे सहन कर सके। हजारों विद्याधरो की राज्य कन्याये, आपसे विवाह करना चाहती है, मुझे आगे करके साथ मे लेकर आई है, और कहती है कि तुम्हारे आश्रय से हम बलदेव से विवाह करेंगी। और हजारो दिव्य कन्याये कई प्रकार के अमूल्य आभूषण पहने, राज हसनी समान चलती हुई, प्रतीन्द्र की विक्रिया से मुनिराज के समीप आई, कोयल से भी मधुर मीठी सुरीली आवाज से बोल रही है, जैसे मानो साक्षात मीठे दिव्यगीत सुनाती हुई, वीणा बासुरी बजाने लगी। घुघराले काले काले केश, बिजली समान चमक, कोमल पतली कमर, कठोर अति उन्नत स्तन, सुन्दर शृगारकर, रग बिरगे दिव्यमयी वस्त्र पहन नृत्य करती हुई मंद मंद मुस्कान से मुनिराज के चारो तरफ घूमती फिरती हुई बैठी, और प्रार्थना करने लगी हे देव! हे स्वामिन! हमारी रक्षा करो। कोई पूछती है हे देव! यह कौनसी वनस्पति है, तब कोई माध्वीलता के पुष्प की तरफ अपना हाथ ऊँचाकर, अपना शरीर दिखाने लगी, कभी मिलकर के नृत्य करती हुई रास लीला करने लगी, कोई जल क्रीडा करने लगी। इस प्रकार अनेक क्रीडाओ द्वारा मुनिके मनको डिगाने का पुरुषार्थ किया। सो हे श्रेणिक! जैसे पवनसे सुमेरूपर्वत नहीं हिलता ऐसे श्रीरामचन्द्र मुनिराज का मन चलायमान नहीं हुआ। आत्मस्वरूप के अनुभवी राम मुनिराज विशुद्ध आत्मा जिनकी परिषहरूपी वज्रपात से चलायमान नहीं हुये। उसी समय मुनिराज क्षपकश्रेणी चढकर शुक्लध्यान के प्रथम पाये मे प्रवेश किया, श्रीरामचन्द्रजी का भाव आत्मध्यान में लगा, अत्यन्त निर्मलता से प्रतीन्द्र की माया का जोर मुनिराजपर नहीं चला। अज्ञानी जीव अनेक उपाय करते है, परन्तु ज्ञानी पुरुषो का मन चलायमान नहीं होता, यह श्रीरामऋषि आत्म स्वरूप में ऐसे दृढ हुये, जो किसी भी प्रकार से उनका मन चचल नहीं हुआ, सीता का जीव प्रतीन्द्र ने अपनी देवो पुनीत मायाजाल से मुनीश्वर श्रीराम योगी को ध्यान से डिगाने के अनेक प्रयत्न किये, परन्तु कुछ भी उपाय काम नहीं किया। वे भगवान महापुरुषोत्तम अनादि काल के कर्मों की वर्गणा को नष्ट करने में तत्पर रहे, शुक्लध्यान का पहला पाया प्रथक्त्ववितर्कध्यान की एकाग्रता से मोहकर्म का नाशकर बारहवे गुणस्थान मे चढे। वहॉ शुक्लध्यान का दूसरा पाया एकत्ववितर्कध्यान से ज्ञानावरणी

दर्शनावरणी और अन्तराय कर्म का नाश किया माघशुक्ला द्वादशी की पिछली रात्रि में केवलज्ञान को प्राप्त हुये। केवलज्ञान मे सर्व द्रव्य की सम्पूर्ण पर्याय, ज्ञानरूपी दर्पण में लोक अलोक के सभी पदार्थो को देखने लगे। तब इन्द्रादि देवों के आसन कम्पायमान हुये, अवधिज्ञान से भगवान रामको केवलज्ञान उत्पन्न हुआ ऐसा जानकर केवलज्ञान कल्याणक की पूजा करने के लिये महाविभूति सहित चतुर्निकायिक देवों के साथ महा श्रद्धा सहित सभी इन्द्र मध्यलोक मे आये। घातिया कर्मों को नाश करने वाले अरहन्त परमेष्ठि उनको चारण मुनि और चारोप्रकार के देव एवं मनुष्य तिर्यंच सभी सौइन्द्रों ने प्रणाम किया। वे भगवान छत्र चमर सिहासन भांमडलादि से सुशोभित तीनलोक के प्राणियों के द्वारा पूज्य सयोगकेवलीभगवान उनकी गंधकुटि की रचना देवो ने की, उसी समय दिव्यध्वनि से रामचन्द्रजी जो आठवें बलभद्र महायोगी पुरुषोत्तम भगवान, की वाणी खिरने लगी। सभी श्रोतागण धर्मश्रवण करते हुये बार बार भगवान की स्तुति करने लगे। सीता का जीव स्वयंप्रभ प्रतीन्द्र केवलीभगवान की पूजाकर तीन प्रदक्षिणा देकर बार बार क्षमा याचना करने लगा हे भगवन! मैं अज्ञानी हूँ मैंने राग वश जो दोष किये है उन्हे आप क्षमा करो। गौतमस्वामी कहते हैं, हे श्रेणिक! वे भगवान बलदेव गंधकुटिरूपी बहिरग लक्ष्मी और अनन्त चतुष्टयरूपी अन्तरग लक्ष्मी सहित आनन्द स्वरूप हैं। उन केवलीभगवान की इन्द्रादि देव हर्षित होकर अनादि रीति प्रमाण पूजा स्तुतिकर विनती की। तब सूर्य समान केवलीभगवान ने वहाँ से विहार किया, सभी देव भी उनके साथ विहारकर चलने लगे।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे श्रीराम को केवलज्ञानकी उत्पत्ति का वर्णन करनेवाला एकसौबाईसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

卐 卐 卐 卐 卐

पर्व-123

सीता के जीव का नरक में जाकर लक्ष्मण और रावण को संबोधना

अथानंतर सीता का जीव प्रतीन्द्र लक्ष्मण के गुणों को यादकर लक्ष्मण का जीव जहाँ था वहाँ और खरदूषण का पुत्र शंबू असुरकुमार जाति का देव था, वहाँ जाकर सम्यक्त्व ग्रहण कराया। वह असुरदेव तीसरे नरक तक नारकी जीवों को

दुख देता था, हिंसानन्दि रौद्रध्यान मे तत्पर, पापी नारकी जीवों को परस्पर लडाता था, पापकर्म के उदय से जीव अधोगति में जाता है, वहाँ तीसरे नरक तक तो असुरकुमार देव लडाते हैं, आगे असुरकुमार देव नहीं जाते, परन्तु नारकी जीव ही वहाँ परस्पर लडते हैं। नरकों में किसी को अग्निकुंड मे डालते हैं, तब वे जोर जोर से रोते हुये चिल्लाते हैं, किसी को काटों वाले ऊंचे शालमली वृक्षों पर चढा चढाकर घसीटते हैं। किसी को लोहमयी मुगदरों से मार मारकर कूटते हैं। और जो मांस आहारी पापी जीव उनको उन्हीं का मांस काट काटकर खिलाते है। और लोहे का गरम गरम गोला मार मारकर मुख में देते हैं। कोई मार खा खाकर जमीन में लोट पोट हो रहे हैं। वहॉ मायामयी श्वान, बिल्ली, सिंह, व्याध, दुष्टपक्षी, भक्षण करते है, वहॉ तिर्यंच नहीं नारकी ही विक्रिया से बनते हैं। किसी को शूलीपर चढाते हैं, किसी को वज्र से मारते है, किसी को गरम गरम तांबा गलाकर पिलाते है, और कहते है, तूने पूर्वभव मे यह मद्य मास मधु का भक्षण किया उसका ही फल है। किसीको लकडी से बाधकर करोत से चीरते हैं, किसीको कुठार से फाडते हैं, यत्रो में पेलते है, आखो को फोडते है, जीभ को काटते है, दातों को तोडते है, इत्यादि नारकी ही नारकी जीवो को अनेक प्रकार के दुख देते है। वहॉ अवधिज्ञान से प्रतीन्द, नारकी जीवो को दुखी देख, शबू को समझाने के लिये तीसरे नरक की पृथ्वीपर गये। वहॉ असुरकुमार जाति के देव जो क्रीडा करते थे, वे प्रतीन्द्र के रूपको देख डर गये, तब प्रतीन्द्र ने शबू से कहा, अरे पापी निर्दयी तू यह क्या कर रहा है, क्यों इन दुखी जीवो को दुख देता है, हे नीचदेव! क्रूर कर्म छोडो, क्षमा धारण करो, यह अनर्थ कार्य करने से तुमको क्या मिलेगा, नारकी जीवो के दुखको सुनकर, देखकर, महाभय उत्पन्न होता है, तू प्रत्यक्ष ही नारकी जीवों को दुख देता है, तुझे दया नहीं आती। प्रतीन्द्र के मुख से इन शब्दो को सुनकर शम्बू शात हुआ। दूसरे नारकी प्रतीन्द्र को देख डरकर रोते हुये भागने लगे। तब प्रतीन्द्र ने कहा हे नारकी जीवो! मेरे से मत डरो, जिन पापो से नरक में आये हो, उन पापों से डरो। तब नारकी सोचने लगे कि हमने हिंसा, झूठ, चोरी, परस्त्रीसेवन एव आरम्भ परिग्रह में रत होकर रौद्रध्यानी हुये, उसका यह फल है, भोगो मे आसक्त होकर क्रोध पूर्वक अनेक कुकर्म किये, उससे ऐसा दुख हमको भोगना पड रहा है। देखो यह स्वर्ग के देव पुण्य के उदय से सुखों को भोगने के लिये विमानों में बैठ जहाँ इच्छा हो

वहाँ जाते हैं। शम्बू का जीव असुरकुमार उसके परिणाम निर्मल हुये। फिर रावण के जीव ने, प्रतीन्द्र से पूछा, आप कौन हो? तब इन्द्र ने सब वृत्तान्त कहा मैं सीता का जीव, तप के प्रभाव से, सौलहवें स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुआ, और श्रीरामचन्द्र महामुनि होकर घातिया कर्मों को नाशकर केवली हुये। अपनी दिव्यवाणी से जगत के जीवों को संसार से पार कराते हैं। ऐसे केवलीभगवान भरतक्षेत्र में है। अघातिया कर्मों का नाशकर परम धाम पधारेंगें, और तुम विषय वासनाओं में लिप्त होकर विषम दुख देने वाली भूमि जो नरक, वहाँ आकर पडे हो। अहो रावण! अभी भी तुम सचेत होवो, ज्ञानको प्राप्त करो। तब रावण का जीव प्रतिबोध को प्राप्त हुआ, अपने स्वरूप का ज्ञान उत्पन्न हुआ। पापकर्म को बुरा जान, मन में सोचने लगा, मैंने मनुष्य भव को प्राप्तकर, अणुव्रत, महाव्रतों को धारण नहीं किया, इसलिये इन नरको के दुखो को भोग रहा हूँ। हाय हाय मैंने यह क्या किया। जो आपको महादुख दिया। यह मोह की ही महिमा है, जो जीव अपनी आत्मा का हित नहीं कर सकता। हे देव! आप धन्य हो, विषय की वासना को छोडकर जिनवचनरूपी अमृतको पीकर देवो के नाथ हुये हो। तब प्रतीन्द्र ने दयापूर्वक कहा, तुम भय मत करो, चलो हमारे स्थानपर, ऐसा कहकर रावण का जीव जो नारकी उसको उठाने के लिये तैयार हुआ, तब रावण का जीव जो नारकी, उसके शरीर के परमाणु बिखर गये, जैसे अग्निसे मक्खन पिघल जाता है। किसीभी उपाय से नारकी जीव को ले जाने मे समर्थ नहीं हुआ, जैसे दर्पण मे छाया पकडी नहीं जाती। तब रावण के जीव ने कहा, हे प्रभो! आप दयालु हो आपको दया आती है, परन्तु इस जीवने पूर्व में जो पापकर्म किये हैं, उनका फल अवश्य ही भोगना है। विषयरूपी मास का लोभी मरकर दुर्गति मे जाता है, और आयु पर्यन्त दुखों को भोगता है। यह जीव कर्मों के आधीन है। इसका देव भी क्या कर सकते हैं। हमने अज्ञानता के कारण अशुभ कर्म किये, इसका फल भोग रहे हैं। आप उनको छुडा नहीं सकते। इसीलिये कृपा करके ऐसा उपदेश दो जिससे पुनः दुर्गति के दुखों को नहीं पाऊँ। हे दयानिधे! आप परम उपकारी हो। तब देवने कहा, परम सुख का मूल कारण सम्यग्दर्शनसम्यक्ज्ञान है, यही जिनशासन का रहस्य है, अविवेकी लोगों को अगम्य है, वह तीनलोक में प्रसिद्ध हैं। आत्मा अमूर्तिक सिद्ध समान है, उसे सम्पूर्ण परद्रव्यों से भिन्न जानों, जिनधर्म मे निश्चय से सम्यग्दर्शन ही कर्मों को नाश करने वाला शुद्ध पवित्र परमार्थ का मूल कहा

है, उसे जीव ने आज तक नहीं प्राप्त किया, इसीलिये अनन्त भवो को ग्रहण किया, यह सम्यग्दर्शन, अभव्य जीवों को नहीं प्राप्त होता, सम्यक्त्व ही जीव को कल्याण कराने वाला, जगत में दुर्लभ है, अगर तू आत्म कल्याण करना चाहता है, तो सम्यक्त्व को धारण करो, जिससे मोक्ष होगा। सम्यक्त्व के बिना कभी किसीको मोक्ष हुआ नहीं, और होगा नहीं। सम्यक्त्व से ही सिद्ध होते हैं। अरहंत भगवान ने जीवादि नौ पदार्थ कहे हैं, उनकी श्रद्धा करना ही सम्यग्दर्शन है। इत्यादि धर्मोपदेश से रावण के जीव को प्रतीन्द्र ने सम्यक्त्व ग्रहण कराया। प्रतीन्द्र सोचने लगा कि देखो, रावण के भव मे इसकी क्या ज्योति थी, महासुन्दर एवं प्रभावशाली शरीर था, अब कैसा शरीर, जैसा जला हुआ वन, इस रावण को देख सम्पूर्ण लोग आश्चर्य को प्राप्त होते थे, वह ज्योति कहॉ गई। प्रतीन्द्र ने कहा, कर्मभूमि में तुम मनुष्य थे, वहॉ इन्द्रिय सुख के कारण दुराचार कार्य किये, इसीलिये यहॉ नरकों मे आये। इस प्रकार प्रतीन्द्र के उपदेश से रावण को सम्यग्दर्शन दृढ हुआ। और मन मे पश्चाताप करने लगा, कि मै कर्मों के उदय से नरक के दुखो को प्राप्त हुआ, इनको भोगकर, यहॉ से निकलकर, मनुष्य जीवन प्राप्तकर, जिनेन्द्र भगवान की शरण को प्राप्त करूँगा। तब प्रतीन्द्र से रावण ने कहा, अहो इन्द्रराज! आपने मेरा महा उपकार किया, मुझे सम्यग्दर्शन ग्रहण कराया, अब आप जाओ, अच्युतस्वर्ग मे धर्म के फल से सुखो को भोग मनुष्य होकर मोक्षपुरी को जावोगे। तब प्रतीन्द्र उसको शाति देकर कर्मो के उदय को सोचते हुये सम्यग्दृष्टि इन्द्र वहॉ से ऊपर आये, अरहत, सिद्ध, साधु, जिनधर्म की शरण मे तत्पर तीनबार पचमेरू की प्रदक्षिणा देकर चैत्यालयो के दर्शनकर नरक के दुखो से डरकर स्वर्ग में भी भोगो मे रत नहीं हुये। सौलहवें स्वर्ग के देव, छठे नरक तक अवधिज्ञान से देखते हैं। तीसरे नरक मे रावण के जीव को एव शम्बूक का जीव असुरकुमार को धर्मोपदेश देकर सम्यक्त्व प्राप्त कराया। हे श्रेणिक! श्रेष्ठजीव सदा परका उपकार ही करते हैं। वे प्रतीन्द्र स्वर्ग से भरतक्षेत्र मे केवलीभगवान श्रीराम के दर्शन के लिये आये। अनेक देवो के साथ वस्त्राभूषण हार मुकुट मालाओं को पहनकर वीणा बासुरी मृदंगादि अनेक बाजों की ध्वनी से दशों दिशाये पूर्ण करते हुये, हाथी, घोडे, सिंहादि वाहनों पर एवं शीघ्रगामी विमानोपर बैठ केवली के पास आये। देवों के तिर्यंचादि का वाहन नहीं ये सब देवों की विक्रिया ही है।

अथानंतर केवलीभगवान, श्रीरामको हाथजोड सीस झुकाकर बारम्बार नमस्कार कर सीता का जीव प्रतीन्द्र स्तुति करने लगा, हे ससार के तारक! हे प्रभो! आपने ध्यानरूपी अग्निसे संसाररूपी वनको भस्म किया। हे नाथ! हे मुनीन्द्र! आपने मोहरूपी शत्रु का नाश किया, हे देव! संसार के दुखों से जो डरते हैं, उनके आपही शरण हो, हे सर्वज्ञदेव! कृत्कृत्य, जगतगुरु, अरहंतपद को आपने प्राप्त किया है, हे प्रभो! मेरी रक्षा करो, संसार के भ्रमण से मेरा मन अति व्याकुल है, आप अनादि निधन, जिनशासन का रहस्य जान, प्रबल तप से ससार के दुखो से पार हुये। हे देवाधिदेव! यह आपको कहॉ उचित? जो मुझे भववन मे छोडकर आप अकेले मुक्ति पुरी में पधारो। तब भगवान श्रीराम कहने लगे हे प्रतीन्द्र! तू राग छोड। जो वैराग्य में तत्पर है उनको ही मुक्ति है, रागी जीव संसार में फसते है। जैसे कोई पत्थर को गले मे बाध भुजाओं से नदी तिरना चाहे तो वह, नहीं तिर सकता। ऐसे रागद्वेषरूपी पर्वत से बंधा हुआ जीव चारों गति रूपी नदी नहीं तिर सकते। जो ज्ञान वैराग्य शील सन्तोष के धारी है, वही ससार से तिरते है। जो गुरु के वचनो से आत्मानुभव के मार्ग मे लगते वही संसार से निकलते, और कोई उपाय नहीं। एक वीतराग भाव ही है जो मोक्षपुरी में ले जाते हैं। इस प्रकार श्रीराम केवलीभगवान ने, सीता के जीव प्रतीन्द्र से कहा पुनः प्रतीन्द्र ने पूछा हे नाथ! दशरथादि कहॉ गये, और लव अकुश कहॉ जायेगे? तब भगवान ने कहा, दशरथ, कौशल्या, सुमित्रा, कैकई, सुप्रभा और जनक एव जनक के भाई कनक ये सब तप के प्रभाव से तेरहवें स्वर्ग मे गये है, ये सभी समान ऋद्धि के धारी देव हैं। और लव अंकुश तुम्हारे पुत्र महाभाग्यवान कर्मरूपी रज से रहित होकर निर्वाण पद को इसी भव से प्राप्त करेंगे। इसप्रकार केवली भगवान की ध्वनि सुन, भामंडल के लिये पूछा, हे प्रभो! भामंडल कहॉ गया। तब प्रभु ने कहा, हे प्रतीन्द्र! तेरा भाई रानी सुन्दर मालिनी सहित मुनि दान के प्रभाव से देवकुरु उत्तमभोग भूमिमें तीन पल्य की आयु को भोगने वाले भोगभूमि मे उत्पन्न हुये हैं। उनके दान की बात सुनों-अयोध्या मे एक बहुत बडा धनवान, सेठ कुलपति उसके मकराना नाम की स्त्री उनके पुत्र राजाओं के समान पराक्रमी वह कुलपति सेठ ने सुना कि सीता महारानी को वन मे निकाली है, तब उस सेठ ने सोचा कि वह महा गुणवान, शीलवान, कोमल शरीर, निर्जनवन मे पटरानी सीता कैसे अकेली रहेगी। धिक्कार है इस संसार की माया को ऐसा विचारकर, दयालु होकर

द्युतिभट्टारक मुनिराज के पास मुनि हुये, और उनके दो पुत्र एक अशोक दूसरा तिलक यह भी पिता के साथ मुनि बने। द्युतिभट्टारक तो समाधिमरण कर नवमें ग्रैवेयक में अहमिन्द्र हुये। और यह पिता पुत्र तीनो मुनिराज तम्रचूर्ण नाम के नगर में केवलीभगवान की वन्दना करने के लिये गये, तब मार्ग मे पचास योजन की भयकर अटवी वहॉ चातुर्मास का समय आ गया, तब एक वृक्ष के नीचे तीनो दिगम्बर साधू विराजमान हुये, मानो साक्षात रत्नत्रय ही है। भामंडल इसी मार्ग से निकलकर अयोध्या आ रहा था, तो वहॉ भयकर वन में मुनिराज को देख विचार किया कि यह महा पुरुष जिनसाधु जिनसूत्र की आज्ञा प्रमाण निर्जनवन में विराजमान हैं। चातुर्मास में मुनियों का विहार नहीं होता, अब यह साधु यहॉ जंगल में आहार कहॉ करेगे। तब भामंडल ने विद्या द्वारा जगल मे एक नगर बसाया, सम्पूर्ण सामग्री से पूर्ण वन, उपवन, सरोवर, धान के खेत नगर के भीतर, महा बस्ती, महा सम्पत्तिवान, चार महीने भामडल स्वय परिवार सहित उस नगर में रहकर मुनियों को आहार दान दिया एव वैयावृति की, वह वन ऐसा था, जिसमें जल भी नहीं था, तब भामडल ने अद्‌भुत नगर बसाकर अन्न जल से भरपूर किया। नगर में मुनियो का चातुर्मास कराकर आहार दिया। और दुखी जीवों को दान दिया। सुन्दरमालिनी रानी सहित भामडल ने अनेक बार मुनिराज को निरन्तराय आहार कराया। चातुर्मास पूर्णकर मुनिराज ने विहार किया, और भामंडल अयोध्या आकर पुन अपने स्थान को गये। एक दिन भामडल सुन्दरमालिनी रानी सहित सुख से अपने महल मे शयन कर रहे थे, तब महलपर बिजली गिरी, राजा रानी दोनो मरकर मुनिदान के प्रभाव से सुमेरूपर्वत की दाहिनी ओर देवकुरु भोगभूमि में तीनपल्य की आयु के भोक्ता युगल जन्म लिया, वहॉ दान के प्रभाव से सुख को भोगते है। जो सम्यक्त्व से रहित हैं और दान करते हैं, वे सुपात्र दानके प्रभाव से उत्तम भोगभूमि के उत्तम सुखो को भोगते है। यह पात्र दान महासुख को देने वाला है। यह सब सुन, प्रतीन्द्र ने पुनः पूछा हे नाथ! रावण तीसरे नरक की भूमि से निकलकर कहॉ जन्म लेगा। और मैं स्वर्ग से चयकर कहॉ जन्म लूगा। मेरे एव लक्ष्मण के और रावण के कितने भव बाकी है, वह कहो। तब सर्वज्ञदेव ने कहा हे प्रतीन्द्र सुन, वे दोनों लक्ष्मण और रावण विजयावती नगरी में, सुनन्द नाम का कुटुम्बी, सम्यग्दृष्टि रोहणी नामकी उसकी स्त्री उनके अरहदास और ऋषीदास पुत्र होंगे, महा गुणवान दोनों भाई उत्तम

क्रियाओं को करने वाले श्रावक के व्रतों को धारणकर समाधिपूर्वक मरणकर स्वर्ग में देव होंगे। वहाँ स्वर्ग मे सागरों पर्यत सुखों को भोग स्वर्ग से चयकर पुनः उसीनगर मे बडे कुल में उत्पन्न होंगे, पुन· मुनि दान के पुण्य से हरिक्षेत्र के मध्यम भोगभूमि में युगल जन्म लेंगें। दो पल्य की आयु भोग स्वर्ग जायेगें। पुनः उसीनगर में राजा कुमारकीर्ति रानी लक्ष्मी उनके जयकान्त ओर जयप्रभ नाम के पुत्र होंगे, तपकर सातवे स्वर्ग में देव होंगे। वहाँ महासुखों को भोगेंगे, और तू सौलहवें अच्युत स्वर्ग से चयकर इस भरतक्षेत्र मे रत्नस्थल पुर नगर वहाँ नवनिधि चौदहरत्नों का स्वामी चक्र नामका चक्रवर्ती होगा। वे सातवे स्वर्ग से चयकर तेरे पुत्र होगें, रावण के जीव का नाम इन्द्ररथ और वासुदेव के जीव का नाम मेघरथ, ये दोनो महाधर्मात्मा परस्पर आपस मे उनका महाप्रेम होगा। तेरा उनसे अति स्नेह होगा। रावण ने नीति पूर्वक तीनखंड का अखड राज्य किया, और जो परस्त्री मुझे नहीं चाहे उसका मैं, बलात्कार पूर्वक सेवन नहीं करूँगा, इस प्रतिज्ञा का पालन उसने जीवन पर्यन्त किया। उसके फल से रावण का जीव इन्द्ररथ धर्मात्मा कुछभवो को धारण करने के पश्चात् तीर्थंकर होगा। तीनलोक के जीवों द्वारा पूज्य होगा। और तू चक्रवर्ती, राज्यपद छोडकर मुनिव्रत पालन कर तप के प्रभाव से वैजयन्त पचोत्तर विमान मे अहमिन्द्र देव होगा। वहाँ से चयकर रावण का जीव जब तीर्थकर होगा, तब उसके तुम प्रथम गणधर होकर निर्वाण पद प्राप्त करोगे। यह कथा भगवान श्रीरामकेवली की वाणी से सुनकर प्रतीन्द्र महाहर्षित हुआ। पुन· सर्वज्ञदेव ने कहा—हे प्रतीन्द्र! तेरा चक्रवर्ती पद का दूसरा पुत्र मेघरथ कुछ उत्तम भवो को धारण करने के पश्चात् पुष्करार्धद्वीप के विदेहक्षेत्र मे शतपत्रनगर मे पंचकल्याण के धारी तीर्थकर एवं चक्रवर्ती दो पदको प्राप्तकर, संसार का त्यागकर मुनि बन केवलज्ञान को प्राप्तकर, अनेक भव्यजीवों को संसार से पार कराते हुये स्वयं परमधाम को पधारेगे। ये वासुदेव के भव कहे। और मैं अब सातवर्ष की आयु पूर्णकर मोक्ष जाऊँगा। वहाँ से पुन· आना नहीं वहाँ अनन्त तीर्थंकर गये एवं जायेंगे, अनन्त केवलीभगवान वहाँ पहुँचे, जहाँ ऋषभ भरतादि विराजमान हैं। अविनाशी पुर तीनलोक का शिखर हैं। जहाँ अनन्त सिद्ध भगवान हैं वहाँ मैं भी तिष्ठूँगा। यह वचन सुन प्रतीन्द्र ने, पद्मनाभी श्रीरामचन्द्र सर्वज्ञ वीतराग प्रभु को बार बार नमस्कार किया। और मध्यलोक के सभी तीर्थक्षेत्रों की वन्दना की एवं भगवान के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय और निवार्ण

क्षेत्रो की पूजाकर तथा नन्दीश्वरद्वीप में अजनगिरी, दधिमुख, रतिकर के चैत्यालयो में विधी विधान से अष्टाह्निका की पूजा की। देवाधिदेव श्रीअरहंत सिद्धप्रभु का ध्यान किया और केवली के वचनो को सुन ऐसा निश्चय हुआ, कि मैं केवली हो ही चुका, मेरे अल्प ही भव हैं। और भाई के स्नेह से भोगभूमि में जहाँ भामडल का जीव है, वहाँ उसे देखकर कल्याण का उपदेश दिया। पुन. अपने स्थान सौलहवें स्वर्ग में जाकर हजारो देवाँगनाओं सहित मानसिक भोग उदासीनता पूर्वक भोगता रहा।

श्री रामचन्द्र केवलीभगवान सत्रह हजार वर्ष की आयु और सोलह धनुष (चौसठ हाथ) का ऊँचा शरीर, जन्म जन्म के पापो से रहित होकर सिद्धपद को प्राप्त किया। वे सिद्धप्रभु भव्यजीवों का कल्याण करते हुये, जन्म, जरा, मरणरूपी महा शत्रुओ को जीतकर परमात्मा हुये। जिनशासन मे प्रगट है महिमा जिनकी, जन्म, जरा, मरण का नाशकर अखड अविनाशी परम अतीन्द्रिय सुख को प्राप्त किया। सुर असुर मुनिवरो के स्वामी, जगत के जीवों से पूज्य, दोषो के नाशक पच्चीसवर्ष तप करके मुनिव्रत का पालनकर आत्मध्यान से केवलज्ञान को उत्पन्न किया, आयुपर्यंत केवली अवस्था अरहतपद में भव्यजीवो को दिव्यवाणी से दिव्य उपदेश देकर, तीनलोक का शिखर जो सिद्धालय सिद्धशिला पर सिद्ध बनकर विराजमान हुये। सिद्धपद सम्पूर्ण जीवों का तिलक हैं, राम सिद्ध हुये, आप उन राम सिद्धप्रभु को शीश झुकाकर नमस्कार करो। रामप्रभु! देव, मनुष्य और तिर्यंचादि सभी सौइन्द्रों से एव मुनियो के द्वारा पूज्य है। शुद्ध स्वभावी, संसार वृद्धि के कारण जो राग द्वेष मोहादि से रहित, परम समाधि के कारण हैं, महा मनोहर अपने सिद्धपद से मध्यान सूर्य के तेज को जीता है जिन्होंने, सिद्ध प्रभु जैसी शरद पूर्णिमा के चन्द्रमा की ज्योति नहीं। वे प्रभु सर्व उपमा रहित अनुपम है। आत्म स्वरूप में आरुढ पूर्ण चारित्र से युक्त श्रीराम यतीश्वरों के ईश्वर, ऋषियों में महाऋषि, देवों के अधिपति, प्रतीन्द्र की माया से मोहित नहीं हुये। जीवों के उपकारी, परम ऋद्धिधर, अष्टम बलदेव, पवित्र शरीर से युक्त शोभायमान, अनन्तवीर्य के धारी, अतुल बल, निर्विकार, अठारह दोषों से रहित, अठारह हजार शील के भेदों से पूर्ण, अतिउदार, अतिगम्भीर, ज्ञान के दीपक, तीनलोक में प्रकाश करनेवाले केवली, चौरासीलाख उत्तर गुणों सहित, अष्टकर्मों को नाश करनेवाले, गुणो के सागर, सुमेरूसमान अचल, धर्मके मूल, कषायरूपी शत्रुओं

को नाश करनेवाले, जिनेन्द्रप्रभु के शासन को प्राप्तकर अन्तर आत्मा से परमात्मा हुये। उन्होंने तीनलोक के पूज्य, जो परमेश्वर पद उसे प्राप्त किया, उनकी आप पूजा करो। कर्मरूपी मैल को धो दिया है जिन्होने, एवं केवलज्ञान केवलदर्शन रूपी योगीयों के नाथ, सबके दुख को दूर करने वाले, ऐसे राम सिद्धप्रभु को आप प्रणाम करो।

यह श्री अष्टम बलदेव रामप्रभु का चारित्र महामनोज्ञ सर्व मनोवांछित फल देने वाला जो प्राणी भावो से निरन्तर पढता है पढाता है सुनता है सुनाता है। शंका रहित होकर महाहर्ष पूर्वक श्रीरामचन्द्रजी की कथा का अभ्यास करता है, उनके महा सातिशय पुण्य की वृद्धि होती है। और शत्रु खड्ग हाथ मे लेकर मारने के लिये आया हो तो वह शांत हो जाता हैं, इस ग्रंथ के पढने सुनने से, धर्म के अभिलाषी इष्टधर्म को प्राप्त करते है। यश के अभिलाषी यश को पाते है। राज्य भ्रष्ट हुये हो और पुन· राज्य प्राप्त करने की कामना हो तो राज्य प्राप्त करते है, इसमे कोई सन्देह नहीं। इष्टसयोग का अभिलाषी इष्टसयोग प्राप्त करता है, धनका अभिलाषी धन पाता है। जीतने का अभिलाषी जीतकर आता है। स्त्री की अभिलाषी सुन्दर स्त्री प्राप्त करता है। लाभका अभिलाषी लाभको प्राप्त करता है। पुत्र का अभिलाषी पुत्र पाता है, सुख का अभिलाषी सुख पाता है। किसीका पति विदेश गया हो और उसको आने की आकुलता हो तो वह सुख पूर्वक घर आता है। जिसके मन मे जो भी अभिलाषा हो वह सभी ही सिद्ध होती है। रोगी के सभी रोग शांत होंते है। गॉव के, नगर के, वन के, जल के सभी देव प्रसन्न होते हैं। और नवग्रहो की बाधा नहीं होती, क्रूर ग्रह शात हो जाते। और जो पाप चिन्तवन में नहीं आते, वे सभी नष्ट हो जाते। भगवान श्रीरामप्रभु का पुराण पढने से, पढाने से एवं सुनने सुनाने से सम्पूर्ण विघ्न, सकट, शत्रु, व्याधियॉ, उपसर्ग, महारोग, आदि सर्व् दुख क्षय हो जाते है, और जितने मन के मनोरथ है, वे सब श्रीराम कथा के प्रसाद से प्राप्त होते है। और वीतराग भाव दृढ होता है। उससे हजारों भव के किये हुये पापों को प्राणी दूर करता है। कष्ट रूपी समुद्र से पार होकर शीघ्र ही सिद्धपद प्राप्त करते हैं। यह ग्रन्थ महापवित्र है, जीवो को वैराग्य एवं समाधिमरण कराने में कारण है। अनेक जन्मों में किये हुये पाप जो दुख के कारण हैं, वे राम के जाप से ही सभी नष्ट होते है। इस ग्रंथ मे व्याख्यान सहित बड़े बडे महापुरुषों की कथायें भव्यजीवों के मनरूपी कमलों को प्रफुलित करने

वाला है। सम्पूर्ण लोगों द्वारा नमस्कार करने योग्य है। श्री वर्द्धमान भगवान ने गौतमगणधर से कहा और गौतमस्वामी ने राजा श्रेणिक से कहा इसी प्रकार केवली एवं श्रुतकेवली कहने लगे। श्री रामचन्द्रजी का चरित्र साधुओं की समाधिमरण के वृद्धि का कारण सर्व उत्तम महामगल रूप मुनिराजों की परम्परा से प्रगट होता रहा, सुन्दर शब्दों में समीचीन अर्थ सहित, अद्‌भुत इन्द्रगुरु मुनिराज उनके शिष्य दिवाकरसेन, उनके शिष्य लक्ष्मणसेन, उनके शिष्य रविषेण, उन्होंने जिनेन्द्र प्रभु के आज्ञानुसार कहा, यह श्रीरामप्रभु का पुराण सम्यग्दर्शन एव वैराग्य की सिद्धि का कारण महाकल्याण का कर्त्ता, निर्मलज्ञान को देने वाला, विचक्षण सभी भव्यजीवो को पढने सुनने योग्य है। अतुल, पराक्रमी, अद्‌भुत आचरण के धारक, महाशुभ कार्य करनेवाले जो दशरथ के नन्दन, कौशल्या के सुपुत्र, उनकी महिमा का वर्णन कहॉतक कहे। इस ग्रन्थ में बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण उनका विस्ताररूप महाचारित्र है। जो इसमे उपयोग लगाकर पढते है, तो सभी अकल्याण रूपी पापो को छोडकर मुक्तिपुरी को अपनी करते है। ससारी जीव विषयो की इच्छा से अपना कल्याण नहीं करते है। पचेन्द्रियो के विषय कभी भी किसीको शाति देने वाले नहीं है। देखो विद्याधरो का अधिपति रावण परस्त्री की अभिलाषा से नरको के दुखो को प्राप्त हुआ। काम की वाच्छा से मारा गया। ऐसे महापुरुषो की यह दशा है, तो अन्य प्राणी विषय वासना से कैसे सुख प्राप्त करेंगे? रावण हजारों स्त्रीयों को सेवन करनेवाला तो भी भोगो से तृप्त नहीं हुआ, और परस्त्री की इच्छा से विनाशको प्राप्त हुआ। इन कुव्यसनो से जीव कैसे सुखी होता है। जो पापी परस्त्री का सेवन करता है, वह इस भव में कष्ट एव परभव मे नरक के कष्टो को भोगता है। और श्रीरामचन्द्र महाशीलवान परस्त्रीयों से विमुख, जिनशासन के भक्त, धर्मानुरागी वे बहुत काल तक राज्य को भोग, ससार को असार जान, वीतराग मार्ग को धारणकर परमपद को प्राप्त हुये। और भी जो वीतराग मार्ग मे चलेगे, वे शीघ्र ही शिवपुर पहुँचेगे। इसीलिये भव्यजीवो जिनमार्ग की श्रद्धा भक्ति से अपनी शक्ति प्रमाण व्रतो का आचरण करो। जिनको पूर्ण शक्ति हो तो मुनि बनो और अल्प शक्ति हो तो अणुव्रत के धारी श्रावक बनो। यह जीव धर्म के फल से स्वर्ग मोक्ष के सुख प्राप्त करते हैं। और पापके फलसे नरक निगोद में जाते हैं। यह निसन्देह जानों अनादिकाल की यही रीति है। धर्म सुख देने वाला है और अधर्म दुख देने वाला है। पाप और पुण्य क्या है उसे हृदय में धारण करो। जितने

धर्म के भेद हैं, उनमें सम्यक्त्व मुख्य है। और जितने पाप के भेद हैं, उनमें मिथ्यात्व मुख्य है। वह मिथ्यात्व कुगुरु कुदेव कुधर्म की आराधना, एवं अतत्त्व की श्रद्धा, अन्य जीवो को दुखी करना, क्रोध, मान, माया, लोभ की तीव्रता, एवं पंचेन्द्रियों के विषय, सप्तव्यसन का सेवन और मित्र, द्रोह, कृतघ्न, विश्वासघात, अभक्ष का भक्षण, कटुवचन, हिंसादि पाप के अनेक भेद हैं, उन सबका त्याग करना। दया पालना, सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, शील पालना, काम भोग की इच्छा छोडना, शास्त्र पढना, देव दर्शन करना, गुरु की आज्ञा पालना, किसी को कटुवचन नहीं कहना, गर्व, प्रपच, मान नहीं करना, शांत भाव रखना, पर उपकार करना, परस्त्री, परधन, परपुरुष की इच्छा नहीं करना, बहुत आरम्भ एवं बहुत परीग्रह का त्याग करना, दान देना, तप करना, दूसरों के दुखों को दूर करना इत्यादि अनेक पुण्य कार्यो को करना। हे भव्यजीवो! सुख देने वाला कार्य शुभ है, दुख देने वाला कार्य अशुभ है। दरिद्र, दुख, रोग, पीडा, वेदना, अपमान, दुर्गति यह सब अशुभ के उदय का फल है। और सुख, सम्पत्ति, सुगति आदि सब शुभ का फल है। शुभ अशुभ ही सुख दुख का कारण है। और कोई देव, दानव, मानव, सुख दुख को देने वाला नहीं। सभी अपने अपने कर्मो का फल भोगते हैं। सब जीवो से मित्रता करना, किसी से बैर नहीं करना, किसी को दुख नहीं देना, सभी जीव सुखी हो, ऐसा कार्य करना एव ऐसी भावना करना। अशुभ से रहित होकर शुद्धपद प्राप्त करना। बहुत कहने से क्या, इस पुराण को पढकर सुनकर शुद्ध सिद्धपद के मार्ग मे आरुढ होना। कर्मो को नाशकर आनन्द स्वरूप रहना। हे ज्ञानियो! परमपद का उपाय निश्चय से जिनशासन मे ही कहा है। उन्हे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो। उससे भव समुद्र से पार होओगे। यह शास्त्र जीवों को कल्याण कराने वाला, सूर्य समान सम्पूर्ण पदार्थों का प्रकाशक है। इसे पढकर सुनकर परम आनन्द स्वरूप में मग्न हो। संसार असार है, जिनधर्म सार है, मुनिधर्म से सिद्धपद को पाते है। सिद्धपद समान और पदार्थ नहीं। जब श्री भगवान तीनलोक के सूर्य वर्द्धमान देवाधिदेव सिद्धलोक को पधारे, तब चतुर्थकाल के तीनवर्ष साढे आठ महीना शेष थे, भगवान को मोक्ष जाने के पश्चात, पंचमकाल मे तीनकेवली और पाच श्रुतकेवली हुये, वहाँ तक तो पुराण पूर्ण रहा, जैसे भगवान ने गौतमगणधर से कहा, गौतम स्वामी ने श्रेणिक से कहा, वैसा ही श्रुत केवली ने कहा, श्रीमहावीरप्रभु के पश्चात् बासठवर्ष तक केवलज्ञान रहा,

और केवलीभगवान के पश्चात् सौवर्ष तक श्रुतकेवली रहे, पंचम श्रुतकेवली श्रीभद्रबाहु स्वामी, उनके पश्चात् कालदोष से ज्ञान घटता गया, तब पुराण का विस्तार कम होता गया, श्रीभगवान महावीरस्वामी को मुक्ति गये, बारह सौ साढे तीनवर्ष हुये तब रविषेणाचार्य ने अठारह हजार अनुष्टुप श्लोकों में व्याख्यान किया।

यह आठवे बलभद्र श्रीरामचन्द्रजी का सुचरित्र, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र का कारण केवली श्रुतकेवली द्वारा कहा हुआ, सदा पृथ्वीपर प्रकाशित करो, जिनशासन के रक्षक देव, जिनभक्ति मे परायण, जिनधर्मी जीवों की सेवा रक्षा करते हैं, जो जिनमार्ग के भक्त हैं, उनकी रक्षा के लिये सभी सम्यग्दृष्टि देव आते हैं, अनेक तरह से सेवा रक्षा करते हैं, महा आदर भक्ति सहित, सभी उपायो के द्वारा संकट रोग, उपसर्ग आने पर भक्तो की रक्षा करते है, अनादि काल से सम्यग्दृष्टि देवो की यह ही रीति है। जैन शास्त्र अनादि है किसी के द्वारा किया हुआ नहीं है, व्यंजन स्वरादि सब अनादि काल से सिद्ध है, रविषेणाचार्य कहते है, मैंने कुछ नहीं किया है। शब्द अर्थ अकृत्रिम हैं। अलकार छंदादि को, आगम निर्मल मन से अच्छी तरह जानना। इस ग्रथ में धर्म अर्थ काम मोक्ष चारो पुरुषार्थ है। अठारह हजार तेईस श्लोक प्रमाण पद्मपुराण सस्कृत ग्रथ है, इस पर यह भाषा हुई, श्री दौलतराम जी कृत ढुढारी भाषा से, हिन्दी भाषा का अनुवाद आर्यिका चन्द्रदक्षमती माताजी द्वारा हुआ वह जयवत होवे, जिनधर्म की वृद्धि हो, राजा प्रजा सभी जीव सुखी हो। सूर्य समान केवलज्ञान को प्राप्तकर सिद्धपद का शाश्वत सुख प्राप्त करो और हमे भी केवलज्ञान शीघ्र ही प्राप्त हो।

(इति श्रीरविषेणाचार्यविरचितमहापद्मपुराण भाषावचनिका मे श्रीराम भगवानको मोक्षप्राप्ति का वर्णन करनेवाला एकसौतेईसवॉ पर्व पूर्ण हुआ)

इति श्री पद्मपुराण भाषा समाप्त
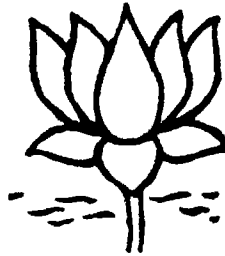
भाषाकार का परिचय

चौपाई

जम्बूद्वीप सदा शुभथान। भरतक्षेत्र ता माहिं प्रमाण।
उसमें आरजखंड पुनीत। वसैं ताहिमें लोक विनीत।।१।।
तिनके मध्यु ढुंढार जु देश। निवसैं जैनी लोक विशेष।
नगर सवाई जयपुर महा। तासकी उपमा जाय न कहा।।२।।
राज्य करै माधव नृप जहा। कामदार जैनी जन तहां।
ठौर ठौर जिन मदिर बने। पूजैं तिनकूं भविजन घने।।३।।
बसें महाजन नाना जाति। सेवैं जिनमारग बहु न्यति।।
रायमल्ल साधरर्मी एक। जाके घट मे स्वपर विवेक।।४।।
दयावत गुणवत सुजान। पर उपकारी परम निधान।।
दौलतराम सु ताको मित्र। तासो भाष्यों वचन पवित्र।
पद्मपुराण महाशुभ ग्रन्थ। तामे लोकशिखरको पन्थ।
भाषारूप होय जो येह। बहुजन बांच करै अति नेह।।६।।
ताके वचन हियेमे धार। भाषा कीनी मति अनुसार।।
रविषेणाचारज-कृत सार। जाहि पढै बुद्धजन गुणधार।।७।।
जिनधर्मनिकी आज्ञा लेय। जिनशासनमांहीं चित देय।।
आनदसुतने भाषा करी। नदो विरदो अति रस भरी।।८।।
सुखी होहु राजा अर लोक। मिटो सबनिके दुख अरु शोक।
वरतो सदा मगलाचार। उतरो बहुजन भवजल पार।।६।।
सम्वत अष्टादश शत जान। ता ऊपर तेईस बखान (१८२३)
शुक्लपक्ष नवमी शनिवार। माघमास रोहिणी ऋख सार।।१०।।
भूल चूक इसमे जो हुई, बुद्धिमान सुधारो सही।
मन शुभ योग करन सुजान, पर उपकारी इसको मान।।
श्रवण मास पचमी सार, शुक्ल पक्ष का है रविवार।
हिन्दी भाषा मधुर सुजान, ढूढारी की है यह मान।।
रोग शोक सकट मिट जाये, पढकर पुण्य मोक्ष फल पाय।
''चन्द्र दक्ष'' का हो शुभ ज्ञान, झट पट होवे केवलज्ञान।।

दोहा

ता दिन सम्पूरण भयो, यहै ग्रन्थ सुखदाय।
चतुरसघ मंगल करो, बढै धर्म्म जिनराय।।११।।
या श्रीरामपुराणके छद अनूपम जान।
सहस वीस द्वय पांचसौ भाषा ग्रथ समान।।१२।।

इति श्री पद्मपुराण भाषा समाप्त